कुर्आन का पैग़ाम

तफ़्सीर फ़ारूक़ी

कुर्आन मजीद की आसान हिन्दी तफ़्सीर या व्याख्या

भाग-1

सन्देश

मुफ़क्किरे इस्लाम ह़ज़रत मौलाना सय्यद

अबुल ह़सन अ़ली ह़सनी नदवी (अ़ली मियाँ) (रह़०)

अनुवाद एवं व्याख्या
मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी (आचार्य)
(अध्यक्ष, जमअ़ीयत पयामे अम्न, लखनऊ)

जमअ़ीयत पयामे अम्न
नदवा रोड, डालीगंज, लखनऊ

नाम- तफ़्सीर फ़ारुक़ी (क़ुर्आन मजीद की आसान हिन्दी तफ़्सीर या व्याख्या)
अनुवाद और व्याख्या- मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी (आचार्य)
कम्पोज़ीटर- इरफ़ान अहमद
संस्करण- तीसरा संस्करण
पुस्तक संख्या- 3000
वर्ष- 2016
हदिया (मूल्य)- 500
प्रकाशक- जमअ़ीयत पयामे अम्न

Name **Tafseer Farooqui**
Writer **Mufti Mohd-Sarwar Farooqui Nadwi** (Acharya)
S. No. **3000**
Publisher– **Jamiat Payam-e-Amn**
Nadwa Road, Daliganj, Lucknow (U.P.) India-20
Website– **www.islamicjpamn.com**
Mobile– **0091– 9919042879, 9984490150**
E–Mail– **maktaba.pyameamnlko@gmail.com,**

मिलने के पते

1. मजलिसे तहक़ीक़ात व नशरियाते इस्लाम, नद्वतुल उ़लमा, पोस्ट बाक्स नं० 119 (लखनऊ) (0522–2741529)
2. न्यू सिलवर बुक एजेन्सी, 14, मुहम्मद अ़ली रोड, भिन्डी बाज़ार, मुम्बई (0522–2741539)
3. अल् फ़ुरक़ान बुक डिपो, नज़ीराबाद-31 (लखनऊ) (9936635816)
4. सुब्हानिया बुक डिपो, नया मुहल्ला, जबलपुर, (मध्य प्रदेश) (9424708020)
5. सत्य फ़ाउन्डेशन 182 ग्रीन लैण्ड कैम्पस, पोखरपुर, (कानपुर) (9935044343)
6. मकतबः शबाब जदीद, नदवा रोड, (लखनऊ) (9198621671)

إِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا الذِّكْرَ وَإِنَّا لَهُ لَحَافِظُونَ

इस (तफ़्सीर फ़ारुक़ी भाग-1) में शुरु से अर्थात सूरः फ़ातिहा पारा एक से सूरः आले इमरान आयत नं० 37 और पारा नं० 3 तक की तफ़्सीर है। इस के आगे भाग-2 में है।

पवित्र क़ुर्आन को पाक साफ़ (वुज़ू करके) शुद्ध होकर आदर के साथ अ़मल की नियत से ध्यानपूर्वक पढ़ें और सही उच्चारण का भी ख़्याल रखें।

क़ुर्आन के व्याख्या की शुरुआ़त पेज नं० 38 से 549 तक है। पेज नं० 15 से 36 तक संक्षिप्त सन्देश फिर आख़िर में पेज नं० 550 से 581 तक उ़लमा की मुकम्मल तस्दीक़ात व सन्देश भी सम्मिलित हैं।

इस तफ़्सीर के शुरु में विश्व प्रसिद्ध उ़लमा के संक्षिप्त सन्देश जैसे-ह़ज़रत मौलाना सय्यद अबुल हसन अली ह़सनी नदवी (रह०) व मौलाना सय्यद मुह़म्मद राबेअ़ हसनी नदवी, मौलाना अबुल् क़ासिम नोअ़मानी क़ासमी, मौलाना मुह़म्मद सालिम क़ासमी देवबन्दी, मौलाना सय्यद अरशद मदनी, मौलाना मुह़म्मद सईदी मज़ाहिरी, मौलाना सईदुर्रहमान आज़मी नदवी, मौलाना ख़ालिद सैफुल्लाह रह़मानी, मौलाना वाज़ेह रशीद नदवी, मौलाना फुज़ैलुर्रह़मान हिलाल उ़स्मानी, मौलाना ज़करिया नदवी, मौलाना शम्सुल हक़ नदवी, मुफ़्ती अ़तीक़ अह़मद क़ासमी, मौलाना ख़ालिद साह़ब ग़ाज़ीपुरी, मौलाना अब्दुल क़ादिर मज़ाहिरी, मौलाना अ़ब्दुल्लाह ह़सनी नदवी (रह़०) मौलाना नियाज़ अहमद नदवी, मौलाना मुहीबउल्लाह क़ासमी मद्दज़िल्लहुल् आ़ली आदि की तस्दीक़ के साथ अनुवादक के प्राक्कथन में क़ुर्आन का संक्षिप्त परिचय भी दिया गया है।

दो शब्द

बिस्मिल्लाहिर्रह़्मानिर्रह़ीम

यह अनुवाद एवं व्याख्या मशहूर दाअ़ी-ए-इस्लाम मुफ़स्सिरे क़ुर्आन 'ह़ज़रत मौलाना मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी साह़ब' के ज़रिये तैयार किया गया है जो हिन्दी, उर्दू, संस्कृत व अ़रबी भाषाओं का अच्छा ज्ञान रखते हैं, वह इस्लामी उ़लूम (धर्मशास्त्र) में आ़लिम, फ़ाज़िल और मुफ़्ती हैं, जो 200 से अधिक किताबों के लेखक हैं जिनका क़ुर्आन का हिन्दी तर्जुमा सबसे पहले "क़ुर्आन का पैग़ाम" (क़ुर्आन मजीद का आसान अनुवाद) के नाम से प्रकाशित हुआ जिसे लोगों ने बहुत पसन्द किया, उसके अब तक 24 एडीशन छप चुके हैं। जो इस की मक़्बूलियत की दलील है और यह तफ़्सीर जो इससे पहले पाँच भागों में दो बार प्रकाशित हो चुकी है। उसी को कुछ थोड़े से बदलाव के साथ पढ़ने वालों की आसानी के लिए अब सात भागों में प्रकाशित की जा रही है। जिसे हर तब्क़े के लोगों ने पसन्द किया है इसलिए कि हर रोज़ एक सबक़ पढ़ने में आसानी होती है, इसीलिए लोग घरों और मस्जिदों में पढ़ रहे हैं। इस के तर्जुमः व तफ़्सीर की मुख्य विशेषता इस तरह़ हैः-

अनुवाद की विशेषता-

इस तफ़्सीर के तजुर्मे में 'मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी साह़ब' का वह मक़्बूल तर्जुमः है जिसकी भाषा बहुत सरल आ़म बोलचाल की है इसको मुस्लिम हो या ग़ैर मुस्लिम, कम पढ़ा हो या ज़्यादा, हर वर्ग आसानी से समझ लेता है।

तफ़्सीर की विशेषता-

(1) यह तफ़्सीर विशेष रूप से ग़ैर मुस्लिमों को सामने रखते हुए मुसलमानों की आ़म बोलचाल की भाषा में लिखी गई है, ताकि हर तब्क़े के लोग इस से फ़ायदा उठा सकें।

(2) तफ़्सीर में ह़दीस और मोअ़तबर (अथैन्टिक) उलमा की तफ़्सीरों से ही फ़ायदा उठाया गया है।

(3) इस में रोज़ (प्रतिदिन) पढ़ने के ह़िसाब से लगभग दस-दस आयतों का तर्जुमः फिर अलग-अलग आयतों की तफ़्सीर बयान की गई है।

(4) इस में पहले पूरी सूरः का खुलासा (संक्षेप) और उसके विषय, फिर लगभग दस-दस आयतों का तर्जुमः उसके बाद हर आयत की अलग-अलग तफ़्सीर, जिसमें सबसे पहले उस आयत का शाने नुज़ूल (नाज़िल होने के वक़्त की ह़ालत) फिर उस आयत से सम्बन्धित ह़दीस और मोअ़तबर उ़लमा की तफ़्सीर की रौशनी में तफ़्सीर, फिर मसायल, एह़काम और साइंसी तह़क़ीक़ के साथ ग़ैर मुस्लिमों के अ़क़ायद व सवालों का बेहतर तरीक़े से जवाब और उस से मुतअ़ल्लिक़ फ़ज़ायल जो सह़ी ह़दीसों से साबित है ज़िक्र किया गया है।

नोटः- इस तरह यह एक मुफीद तोहफ़ा तमाम इन्सानों की रहनुमाई के लिए पेश किया जाता है जिस पर मशहूर उ़लमा जैसे- ह़ज़रत मौलाना सय्यद अबुल हसन अली ह़सनी नदवी (रह०) व मौलाना सय्यद मुह़म्मद राबेअ़ हसनी नदवी, मौलाना अबुल् क़ासिम नोअ़मानी क़ासमी, मौलाना मुह़म्मद सालिम क़ासमी देवबन्दी, मौलाना सय्यद अरशद मदनी, मौलाना मुह़म्मद सईदी मज़ाहिरी, मौलाना सईदुर्रहमान आज़मी नदवी, मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रह़मानी, मौलाना वाज़ेह रशीद नदवी, मौलाना फ़ुज़ैलुर्रह़मान हिलाल उ़स्मानी, मौलाना ज़करिया नदवी, मौलाना शम्सुल हक़ नदवी, मुफ़्ती अ़तीक़ अह़मद क़ासमी, मौलाना ख़ालिद साह़ब ग़ाज़ीपुरी, मौलाना अब्दुल क़ादिर मज़ाहिरी, मौलाना अ़ब्दुल्लाह ह़सनी नदवी (रह़०) मौलाना नियाज़ अहमद नदवी, मौलाना मुहीबउल्लाह क़ासमी मद्दज़िल्लहुल् आ़ली आदि की तस्दीक़ के प्रमाणित सन्देश भी मौजूद हैं।

25 अगस्त 2016 — प्रकाशक

विषय सूची

विषय	पृष्ठ सं०

मुफ़क्किरे इस्लाम, 'हज़रत मौलाना सय्यद अबुल हसन अ़ली नदवी' (रह़०) के क़लम से 15
प्रख़्यात विश्व विद्वानों का इस तफ़्सीर पर संक्षिप्त लेख जैसे 17

हज़रत मौलाना सय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०) व मौलाना सय्यद मुहम्मद राबेअ़ हसनी नदवी, मौलाना अबुल् क़ासिम नोअ़मानी क़ासमी, मौलाना मुहम्मद सालिम क़ासमी देवबन्दी, मौलाना सय्यद अरशद मदनी, मौलाना मुहम्मद सईदी मज़ाहिरी, मौलाना सईदुर्रहमान आज़्मी नदवी, मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रह़मानी, मौलाना वाज़ेह रशीद नदवी, मौलाना फ़ुज़ैलुर्रहमान हिलाल उ़स्मानी, मौलाना ज़करिया नदवी, मौलाना शम्सुल हक़ नदवी, मुफ़्ती अ़तीक़ अहमद क़ासमी, मौलाना ख़ालिद साहब ग़ाज़ीपुरी, मौलाना अब्दुल क़ादिर मज़ाहिरी, मौलाना अ़ब्दुल्लाह हसनी नदवी (रह़०) मौलाना नियाज़ अहमद नदवी, मौलाना मुहीबउल्लाह क़ासमी मद्दज़िल्लहुलू आ़ली।

प्राक्कथन 23
पवित्र क़ुर्आन पढ़ने से पहले कुछ विशेष बातें 36

भाग-1
सूरः फ़ातिह़ा की व्याख्या

विषय	पृष्ठ सं०
अऊज़ुबिल्लाह की फ़ज़ीलत	39
अलुइस्तिआ़ज़ः की व्याख्या	39
इस्तिआ़ज़ः या तअ़व्वुज़	40
इस्तिआ़ज़ः या तअ़व्वुज़ पढ़ने का फ़ायदा	40
इब्लीस का तख़्त	41
जिन्नात	41
इब्लीस का इन्कार	41
बस्मला अर्थात बिस्मिल्लाह का परिचय	43
यह किस सूरह की आयत है	43
बस्मला की फ़ज़ीलत	45
बस्मला या बिस्मिल्लाह की व्याख्या	46
शब्द 'अल्लाह' कैसे बना	46
रह़मान	47
रह़ीम	48
अल्लाह के नाम पर ईमान	49
हर काम की शुरुआ़त	49
बिस्मिल्लाह पर एतिराज़ करने वालों का जवाब	49
मसायल	50
सूरः फ़ातिह़ः का परिचय	51
सूरः फ़ातिह़ः के नाम	51
सूरः फ़ातिह़ः की फ़ज़ीलत	51
सूरः फ़ातिह़ः पढ़ कर दम करना	52
सूरः फ़ातिह़ः और सूरः बक़रः की आख़िरी आयतें	52
सूरः फ़ातिह़ः का अनुवाद	55
सूरः फ़ातिह़ः की व्याख्या	55
अल्लाह का अनुवाद	57
शब्द ईश्वर	57
शब्द भगवान	58
मुख़्तलिफ़ आ़लम	59
उ़लमा व मशायख़	59
राजा की मिसाल	60
क्या अल्लाह दयावान नहीं?	60
न्याय दया के विरुद्ध नहीं	61
दीन का अर्थ	62
अस्ल मालिक कौन	62
क़ियामत का दिन	62
क़ुर्आन का जवाब	62
कर्मों का फल और आवागमन	63

विषय	पृष्ठ सं०
अ़िबादत का अर्थ	64
अ़िबादत की क़िस्में	64
अल्लाह का कोई साझीदार नहीं	64
मदद के लिए पुकारना	66
तौहीद की तीन क़िस्में	66
हिदायत का अर्थ	68
हिदायत की पहली क़िस्म	69
दूसरी क़िस्म	70
तीसरी क़िस्म	70
सीधा रास्ता	71
आमीन	73
पूरी सूरः का ख़ुलासा	74

भाग-2
सूरः बक़रः की व्याख्या

विषय	पृष्ठ सं०
सूरः बक़रः का संक्षिप्त परिचय	77
सूरः के नाज़िल होने का ज़माना	77
इस सूरः के नाज़िल होने के वक़्त की हालत	78
इस सूरः के विषय	78
सूरः बक़रः की फ़ज़ीलत	80
सूरः बक़रः की व्याख्या *(आयत नं० 1 से 10)*	81
हुरूफ़े मुक़त्तआ़त	82
हुरूफ़े मुक़त्तआ़त के माने	82
अल्लाह के नाम	82
अल्लाह की क़सम	82
क़ौमों की मुद्दत	82
शार्ट हैंड यानी अलिफ़ से अल्लाह	83
कोड वर्ड	83
अल्लाह के ख़ास इस्रार (राज़)	83
चैलेन्ज	83
ख़ुलासा	84
ज़ालिका का अर्थ	84
अल् किताब	84
मुत्तक़ी	85
ग़लत फ़हमी	85
ईमान की परिभाषा	86
ग़ैब का अर्थ	86
ईमान और इस्लाम में अन्तर	86
नमाज़ क़ायम करना	87
अल्लाह की राह में ख़र्च करना	87
हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) आख़िरी नबी	88
कलामे इलाही	88
इस्लाम के बुनयादी अ़क़ीदे	89
आख़िरत पर ईमान	89
तमाम धर्मों में आख़िरत का अ़क़ीदा	89
हिन्दूमत और आख़िरत	89
बुद्धमत और आख़िरत (परलोकवाद)	90
ईसाई मत और आख़िरत (परलोकवाद)	90
जैन धर्म और आख़िरत	90
सिख धर्म और आख़िरत का आवागमन	91
आख़िरत (परलोक) के सम्बन्ध में विभिन्न मत-मतान्तर	92
पुनर्जन्म और आवागमनीय सिद्धान्त	92
क़ुर्आन की धारणा	92
काफ़िरों की गुमराही	93
कुफ़्र किसे कहते हैं?	94
हठधर्मी काफ़िर	94
हक़ के दाख़िल होने के रास्ते	95
क्या अल्लाह ने मुहर लगाई है?	95
मुनाफ़िक़ किसे कहते हैं?	96
निफ़ाक़ की क़िस्में	97
मदीना के यहूदियों से सुलह़	97
मुनाफ़िक़ों की चालबाज़ी	98
दिलों का मर्ज़	98
अनुवाद *(आयत नं० 11 से 20 तक)*	101
व्याख्या *(आयत नं० 11 से 20 तक)*	102
मुनाफ़िक़ों का फ़साद	102
मुनाफ़िक़ों का ईमान	103
हिदायत के बदले गुमराही	103
मुनाफ़िक़ों की दो मिसालें	103
दूसरी मिसाल	105

विषय	पृष्ठ सं०
अनुवाद *(आयत नं० 21 से 29 तक)*	106
व्याख्या *(आयत नं० 21 से 29 तक)*	106
तौहीद और दअ़वत	107
अ़िबादत	107
ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के रसूल होने की दलील	108
क़ुर्आन जैसा कलाम	109
ईमान वालों को जन्नत की ख़ुशख़बरी	110
जन्नत	110
जन्नत का ह़ाल	110
काफ़िरों का एतिराज़	111
अल्लाह से किया हुआ वादा	112
फ़ासिक़ों का अ़मल	112
मुनाफ़िक़ की पहचान	113
रिश्तेदारों के साथ बद्सुलूकी	113
ज़मीन व आसमान की पैदाइश	114
अनुवाद *(आयत नं० 30 से 39 तक)*	115
व्याख्या *(आयत नं० 30 से 39 तक)*	116
ह़ज़रत आदम (अ़लै०) की पैदाइश	116
फ़रिश्तों का ह़ज़रत आदम (अ़लै०) के लिए सज्दः	117
सज्दः तअ़ज़ीमी (सम्मानीय) का हुक्म	117
अ़िबादत का सज्दः	118
इब्लीस	118
अल्लाह जमाल पसन्द करता है	119
घमण्ड का नतीजा	119
ह़ज़रत आदम (अ़लै०) की जन्नत	120
ह़ज़रत आदम (अ़लै०) व हव्वा का बहकाना	121
शैतान का बहकाना	122
ह़ज़रत आदम (अ़लै०) की तौबः	122
जन्नत से दुनिया में	123
ह़ज़रत आदम और मूसा	123
आदम कहाँ उतरे थे?	125
हिदायत क़ुबूल करने वालों के लिए इनआ़म	125
अनुवाद *(आयत नं० 40 से 50 तक)*	126
व्याख्या *(आयत नं० 40 से 50 तक)*	127
बनी इस्राईल	127
ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की नस्लें	127
ह़ज़रत मूसा (अ़लै०)	127
बनी इस्राईल का मिस्र से निकलना	127
चालीस साल 'तीह़' की घाटी में	128
मदीना में यहूदियों का इतिह़ास	128
यहूद, औ़स व ख़ज़रज	129
औ़स व ख़ज़रज का इस्लाम	129
यहूदियों का इन्कार	129
अ़हद (प्रतीज्ञा)	130
क़ुर्आन पर ईमान	130
यहूद की आ़दत	131
यहूदी उ़लमा	131
नमाज़ और ज़कात	131
सज्दः और रुकूअ़	132
रसूलुल्लाह (सल्ल०) की पेशीनगोई	132
बुरे अ़मल की सज़ा	133
बेअ़मल नसीह़त कर सकता है	133
नसीह़त के लिए कैसी परहेज़गारी हो	134
बनी इस्राईल के इनआ़मात	135
कोई किसी की मदद न करेगा	135
मिस्र के बादशाह का लक़ब फ़िरऔ़न	136
बनी इस्राईल और फ़िरऔ़न	137
आशूरा का रोज़ः	137
अनुवाद *(आयत नं० 51 से 60)*	138
व्याख्या *(आयत नं० 51 से 60)*	139
ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) का तूर पर जाना	139
सामरी का बछड़ा बनाना	139
बछड़े का अन्जाम	139
बनी इस्राईल की तौबः	140
बनी इस्राईल का सवाल	141
मैदान-ए-तीह में बनी इस्राईल का मन्न व सल्वा	141
मन्न व सल्वा	142
बनी इस्राईल की ज़रुरतें	142
बस्ती में अदब के साथ दाख़िल होने का हुक्म	143
'बैतुल् मक़्दिस' का दाख़िला	143
पत्थर से पानी के स्रोत	144
अनुवाद *(आयत नं० 61 से 71 तक)*	145
व्याख्या *(आयत नं० 61 से 71 तक)*	146
बनी इस्राईल का प्याज़ लहसुन	146
यहूद का अर्थ	147

विषय	पृष्ठ सं०
अन्नसारा	148
अस्साबिईन	148
बनी इस्राईल का अ़हद	149
सनीचर के दिन का शिकार	149
बन्दर और सुअर	150
उम्मते मुह़म्मदिया में भी मस्ख़ होगा	150
लोग शराब को ह़लाल कर लेंगे	150
बक़रः का मतलब	151
अनुवाद *(आयत नं० 72 से 82 तक)*	153
व्याख्या *(आयत नं० 72 से 82 तक)*	154
यहूदियों की सख़्ती	154
यहूदियों का ह़ाल	155
मुनाफ़िक़ों और अहले किताब का ह़ाल	156
यहूदी अ़वाम	156
यहूदी उ़लमा और दुनिया परस्ती	157
यहूदी अपने को अल्लाह का लाडला कहते थे	158
अनुवाद *(आयत नं० 83 से 87 तक)*	160
व्याख्या *(आयत नं० 83 से 87 तक)*	161
वालिदैन के साथ ह़ुस्ने सुलूक	161
मिस्कीनों के साथ सुलूक	161
सबसे अच्छा अ़मल	161
अ़हद का ख़याल	162
यहूदियों के क़बीले	163
रुहूल् क़ुदुस	164
अनुवाद *(आयत नं० 88 से 96 तक)*	165
व्याख्या *(आयत नं० 88 से 96 तक)*	166
यहूदियों की हठधर्मी	166
आख़िरी नबी का इन्तिज़ार	167
'ज़ैद बिन सोअ़ना' का इस्लाम	168
क़र्ज़ की अदाएगी का मुताल्बा	168
क़ुबूलियत का एलान	169
अल्लाह की किताब	169
यहूदियों का जवाब	170
तौरेत पर कैसा ईमान है	171
यहूदियों से अ़हद	171
बछड़े की मुह़ब्बत	172
मौत की तमन्ना	172
ज़िन्दग़ी की नेअ़मत	173

विषय	पृष्ठ सं०
अल्लाह से मिलने की तमन्ना	174
अनुवाद *(आयत नं० 97 से 103 तक)*	175
व्याख्या *(आयत नं० 97 से 103 तक)*	176
यहूदी उ़लमा के सवालात	177
पहला जवाब	177
दूसरा जवाब	177
तीसरा जवाब	177
चौथा जवाब	178
'जिब्रईल' से दुश्मनी	178
'जिब्रईल' का दुश्मन	178
आयात बय्यिनात का इन्कार	179
वादे की ख़िलाफ़वर्ज़ी	180
रसूलुल्लाह (सल्ल०) से सवाल	181
जादू का सबब (कारण)	181
'बाबुल' का जादू और 'हारूत' व 'मारूत'	182
जादू का प्रभाव	183
इब्लीस का तख़्त	183
जादू का प्रभाव अल्लाह के ह़ुक्म से	183
जादू कैसे होता है	184
जादू की क़िस्में	184
जादू का असर	185
मोअ़जिज़ः और सह़र (जादू) में अन्तर	186
नुबूव्वत का दावा करने वाले	186
करामात	186
करामत और जादू में अन्तर	186
जादू के कलिमात	187
जादूगरों की ह़ालत	188
तीन तरह़ के लोग	188
जादूगर की सज़ा	189
शैतान को राज़ी करने की सूरतें	189
कुफ़्र एतिक़ादी	189
जादूगर का ह़ुक्म	189
सर जुदा करने के बाद	190
तफ़्सीर क़ुर्तुबी	190
'हारूत' व 'मारूत'	190
अनुवाद *(आयत नं० 104 से 113 तक)*	192
व्याख्या *(आयत नं० 104 से 113 तक)*	193
शब्द 'राअ़िना' और यहूद की शरारत	193

विषय	पृष्ठ सं०
मज़ाक़ न उड़ाया जाए	194
अच्छे नाम रखना चाहिए	194
यहूदियों का ह़सद	195
एह़काम की तब्दीली	195
'नस्ख़' का मतलब	196
'मन्सूख़' होने की सूरतें	196
दूसरी सूरत	196
तीसरी सूरत	196
आयत के नाज़िल होने की मुख़्तलिफ़ सूरतें	197
बेजा सवालात	199
सब्र व सलाह	200
आयत के नाज़िल होने की वजह	201
यहूद की दुश्मनी	202
अनुवाद *(आयत नं० 114 से 121 तक)*	203
व्याख्या *(आयत नं० 114 से 121 तक)*	204
मस्जिदों में ज़िक्र से रोकना	204
मस्जिद को आबाद करने का मतलब	204
अल्लाह का वादा	206
'वह' किसी दिशा में मौजूद नहीं	206
अल्लाह हर दिशा में है	207
इस्तिक़्बाल-ए-क़िब्ला	208
दिशा की ह़िक्मत	209
अल्लाह तआ़ला के लिए औलाद	210
इस्लाम में ज़ोर ज़बरदस्ती नहीं	212
यहूद और नसारा राज़ी नहीं हो सकते	213
मालिक को राज़ी करने की फ़िक्र	213
अनुवाद *(आयत नं० 122 से 129 तक)*	215
व्याख्या *(आयत नं० 122 से 129 तक)*	216
ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की इमामत	218
कअ़बः शरीफ़ अम्न की जगह है	220
अम्न की जगह	220
मक़ामे इब्राहीम	221
मक़ामे इब्राहीम की तारीख़	222
बैतुल्लाह को पाक करने का हुक्म	222
तवाफ़ का सवाब	223
मस्जिदे ह़राम में नमाज़ का सवाब	223
ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की दुआ़	223
मक्का में दुनिया भर के फल	224

विषय	पृष्ठ सं०
मदीना मुनव्वरह के लिए मुह़म्मद (सल्ल०) की दुआ़	225
कअ़बः शरीफ़ की तअ़मीर	225
कअ़बः की तारीख़	226
इस्लाम और मुस्लिम	227
ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की नस्ल	228
आप (सल्ल०) की सिफ़ात	229
अनुवाद *(आयत नं० 130 से 138)*	230
व्याख्या *(आयत नं० 130 से 138)*	232
इस्लाम के माने	232
दीन का नाम	234
ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) का रखा हुआ नाम	234
दीन का नाम इस्लाम	234
दीने इस्लाम के अलावा कोई दीन क़ुबूल नहीं	235
बेटों की वसीयत	235
नस्ली गर्व	236
ईसाई बनाने का तरीक़ा	241
अनुवाद *(आयत नं० 139 से 141)*	243
व्याख्या *(आयत नं० 139 से 141)*	243
(पारा-2) अनुवाद *(आयत नं० 142 से 147)*	246
व्याख्या *(आयत नं० 142 से 147)*	247
क़िब्ला की तब्दीली	247
उम्मते वस्त (संतुलित उम्मत)	249
क़ियामत के दिन गवाही	250
बैतुल्लाह की तरफ़ नमाज़	251
अनुवाद *(आयत नं० 148 से 157)*	255
व्याख्या *(आयत नं० 148 से 157)*	256
अल्लाह का ज़िक्र	257
नमाज़ और सब्र के ज़रिये मदद	258
शहीद का दर्जा	259
शहीद के गुनाह माफ़ हो जाते हैं मगर क़र्ज़ नहीं	260
शहीद की चार क़िस्में	261
दुनिया का इम्तिह़ान	262
दुनिया की तक्लीफ़	262
मुसीबतों में सब्र	263
सब्र की ह़क़ीक़त	263
किसी के इन्तिक़ाल पर रोना पीटना	265
अनुवाद *(आयत नं० 158 से 167)*	267
व्याख्या *(आयत नं० 158 से 167)*	268

विषय	पृष्ठ सं०
अनुवाद *(आयत नं० 168 से 176)*	275
व्याख्या *(आयत नं० 168 से 176)*	276
ह़राम खाने का वबाल	277
ह़राम कमाई की चन्द सूरतें	278
ह़राम माल का वबाल	279
ह़राम जानवरों का ज़िक्र	279
जान बचाने की सूरत में ह़राम चीज़ें	280
अनुवाद *(आयत नं० 177 से 182)*	282
व्याख्या *(आयत नं० 177 से 182)*	283
क़िब्ला की तब्दीली	283
माल के ख़र्च करने का ज़िक्र	283
क़िसास (ख़ून का बदला) में इन्साफ़ करने का हुक्म	284
क़त्ल के बदले क़त्ल	285
एक के बदले केवल एक क़त्ल किया जाएगा	285
क़िसास (बदला) लेने का अधिकार	285
क़ानून 'क़िसास' रह़मत है	287
क़िसास एक इन्साफ़ है	287
क़िसास या दियत माफ़ करना हुकूमत	288
माँ-बाप और रिश्तेदारों के लिए माल	288
वसीयत की क़िस्में	288
क़रीबी रिश्तेदारों के लिए वसीयत	289
मय्यित के माल की तक़्सीम	289
फ़र्ज़ की वसीयत	290
गुनाह की वसीयत	290
वसीयत में देर न करे	290
ग़लत वसीयत के बदले में गुनाह नहीं	291
अनुवाद *(आयत नं० 183 से 187)*	292
व्याख्या *(आयत नं० 183 से 187)*	293
रोज़ः का हुक्म	293
रोज़ः की फ़र्ज़ीयत	293
रोज़ः में तब्दीली	293
रोज़ः में रिआ़यत	294
रोज़ः में तर्ग़ीब	294
रमज़ान के रोज़ों में सहूलत	295
क़ुर्आन तमाम इन्सानों के लिए हिदायत है	296
अल् फ़ुर्क़ान	296
रमज़ान का एहतिराम	296

विषय	पृष्ठ सं०
दुआ़	298
दुआ़ की क़ुबूलियत का तरीक़ा	298
दुआ़ मुसीबतों के टालने का ज़रिया है	299
दुआ़ मोमिन का हथियार है	299
दुआ़ वाला हलाक नहीं होता	299
दुआ़ की क़ुबूलियत के अवक़ात	299
सोने से पहले रोज़े में खाने-पीने की इजाज़त	300
सोने के बाद खाने की इजाज़त	300
एतिकाफ़	301
अनुवाद *(आयत नं० 188 से 196)*	302
व्याख्या *(आयत नं० 188 से 196)*	303
ह़राम किसी के कहने से ह़लाल नहीं होता	304
ह़राम माल की शक्लें	304
चाँद के ज़रिये तारीख़	304
अल्लाह की राह में क़िताल करने का हुक्म	306
जिहाद का अर्थ	307
ज़ुल्म व ज़्यादती की इजाज़त नहीं	307
जंग पर जाने वालों के लिए	308
फ़ित्ना करना क़त्ल से ज़्यादा सख़्त है	308
क़िताल	308
क़िताल कब तक होना चाहिए	309
क़िताल करने में नियत	309
फ़ित्नों को दबाने के लिए जंग करना	309
जो मुश्रिक ज़ुल्म का रास्ता छोड़ दें	310
जिहाद की आयतों पर आपत्ति	311
दंगे फ़साद	311
पवित्र क़ुर्आन में युद्ध का आदेश	312
मज़लूम का ह़क़	313
ह़क़ीक़त	313
जिहाद कब और किससे	314
काफ़िरों को कहाँ और कब क़त्ल करो	315
क़त्ल का कारण	315
अत्याचार की एक झलक	315
आप (सल्ल०) के जान के दुश्मन	316
ज़्यादती क्या है	316
रक्तपात	317
कअ़बः की मर्यादा	317
युद्ध का परित्याग	317

विषय	पृष्ठ सं०
बाधा को दूर करने के लिए	317
विचारणीय प्रश्न	317
मृत्यु दण्ड	318
मुसलमान बनने के लिए दिल से राज़ी होना है	318
एक आवश्यक स्पष्टीकरण	318
जिहाद पर आक्षेप	319
जिहाद का आदेश शत्रुओं के साथ	319
विधर्मियों से युद्ध	319
फ़ित्ना की व्याख्या	320
युद्ध की परिस्थितयाँ	320
ईश्वरीय मार्ग के लिए युद्ध	320
युद्ध	320
युद्ध सम्बन्धी सीमाओं का पालन अनिवार्य	321
मुश्रिकीन की ज़्यादती का सवाब	321
अल्लाह तआ़ला मुत्तक़ियों के साथ है	322
अपने को हलाकत में डालने की मुमानिअ़त	323
जिहाद की अहमियत और ज़रुरत	324
सिफ़ते एह़सान अख़्तियार करने का हुक्म	324
ह़ज व उ़मरा पूरा न करा सके तो	326
क़ुर्बानी के जानवर का हुक्म	326
फ़िद्या की मिक्दार	327
‘उ़मरह’ की क़ुर्बानी के मसायल	328
ह़ज की तीन क़िस्में	328
‘इफ़राद’, ‘तमत्तोअ़’ और ‘क़िरान’	329
अनुवाद *(आयत नं० 197 से 207)*	333
व्याख्या *(आयत नं० 197 से 207)*	334
ह़ज का महीना	334
ह़ज में तिजारत	335
अ़रफ़ात और मुज़्दल्फ़ा का क़ियाम	337
ह़ज के पाँच दिन	337
अ़िबादत अल्लाह का हुक्म है	338
ह़ज के बाद	339
इस्तिग़फ़ार और कसरते ज़िक्र	339
दुनिया व आख़िरत के लिए दुआ़	340
अय्यामे तशरीक में तक्बीर का हुक्म	341
फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद तक्बीर वाजिब है	341
रमि-जिमार का हुक्म	341
कंकरियों के मारने का वक़्त	341
जमरह	342
13 ज़िलु़ह़िज्जा को रमि छोड़ देना वाजिब है	343
मोमिनों की सिफ़ात	343
अनुवाद *(आयत नं० 208 से 215)*	345
व्याख्या *(आयत नं० 208 से 215)*	346
इस्लाम में पूरे-पूरे दाख़िल होने का हुक्म	346
हर शख़्स इस्लाम के अह़काम का पाबन्द है	346
मुस्लिम हुकूमतें	347
ह़क़ क़ुबूल न करने पर वअ़ीद	348
काफ़िरों की दुनियावी ज़िन्दग़ी	352
यहूद व नसारा के इख़्तिलाफ़ात	352
मोमिनों की आज़माइश	352
अल्लाह की राह में ख़र्च	352
अनुवाद *(आयत नं० 216 से 221)*	353
व्याख्या *(आयत नं० 216 से 221)*	354
जिहाद फ़र्ज़ है	354
तमाम मुसलमानों की शिरकत ज़रुरी नहीं	355
माँ-बाप की ख़िद्मत से जिहाद का सवाब	355
आम जिहाद का हुक्म	355
क़र्ज़ अदा करने की ताकीद	356
जिहाद नापसंद न होना चाहिए	356
हुरमत के चार महीने	357
मुरतद का हुक्म	360
मुरतद की सज़ा	360
अल्लाह की रह़मत	360
जिहाद	361
जिहाद की तीन क़िस्में	362
ख़्वाहिशात का मुक़ाबिला	362
शराब और जुए की मुमानियत	363
पहला क़दम	363
शराब के नुक़्सानात	364
शराब को मुकम्मल रोकने का सबब	364
शराब की हुरमत	365
शराब के सेवन से पैदा होने वाली बीमारियों की संक्षिप्त सूची	367
पाचन क्रिया पर प्रभाव	370
रक्त संचरण पर प्रभाव	371
सामाजिक प्रभाव	371

विषय	पृष्ठ सं०
यतीम के विषय में हुक्म	373
यतामा	373
यतीमों का माल शामिल रखना दुरुस्त है	374
मुसलमान मर्दों का निकाह़ काफ़िर औ़रतों से	375
मुसलमान मर्द का काफ़िरा औ़रत से निकाह़	376
मुसलमान औ़रत का निकाह़ काफ़िर मर्द	376
अनुवाद *(आयत नं० 222 से 229)*	378
व्याख्या *(आयत नं० 222 से 229)*	379
हैज़ किसे कहते हैं?	381
खेत की मिसाल	382
'ईला' और क़सम	383
क़सम खाने के बाद	383
क़सम के मसायल	385
बेख़याली की क़सम	386
ईला का तरीक़ा	386
हिन्दू मज़हब का हाल	388
ईला का हुक्म	388
तलाक़ के बाद इद्दत	389
इद्दत की क़िस्में	390
औ़रतों के हुक़ूक़ मर्दों पर	391
मर्दों के हुक़ूक़ औ़रतों पर	391
दो तलाक़ देने का तरीक़ा	393
सारांश	394
ख़ुलअ़ का तरीक़ा	395
ख़ुलअ़ से सम्बन्धित कुछ मसायल	396
अनुवाद *(आयत नं० 230 से 234)*	397
व्याख्या *(आयत नं० 230 से 234)*	398
इद्दत में तलाक़ का हुक्म	398
पहले शौहर के साथ दोबारा निकाह़ की शर्तें	399
तलाक़ अह़सन	400
तलाक़ देने की ह़ालत	401
तलाक़ ख़ूबी के साथ हो	402
तम्बीह और ताकीद के लिए तीन हुक्म	403
मज़ाक़ में तलाक़	403
दूध पिलाने का हक़	408
दूध पिलाने की मुद्दत	408
इन आयत के शरई मसायल	409
बच्चे के ख़र्च की ज़िम्मेदारी	410
वफ़ात की मुद्दत	411
इद्दत से मुतअ़ल्लिक़ चन्द ज़रूरी मसायल	413
अनुवाद *(आयत नं० 235 से 242)*	415
व्याख्या *(आयत नं० 235 से 242)*	416
निकाह़ का पैग़ाम	416
महेर की मिक़्दार	418
इस आयत से सम्बन्धित मसायल	419
अनुवाद *(आयत नं० 243 से 248)*	426
व्याख्या *(आयत नं० 243 से 248)*	427
अ़मालका का क़ब्ज़ा	428
तालूत और जालूत	428
अनुवाद *(आयत नं० 249 से 252)*	430
व्याख्या *(आयत नं० 249 से 252)*	431
(पारा-3) अनुवाद *(आयत नं० 253 से 258)*	433
व्याख्या *(आयत नं० 253 से 258)*	434
पहला शब्द	435
दूसरा शब्द	436
तीसरा शब्द	437
चौथा शब्द	437
पाँचवा शब्द	437
छठा शब्द	438
सातवाँ शब्द	438
आठवाँ शब्द	438
नवाँ शब्द	439
दस्वाँ और आख़िरी शब्द	439
आयतुल् कुर्सी की फ़ज़ीलत	439
इस्लाम क़ुबूल करवाने के लिए ज़बरदस्ती नहीं	441
धर्म में ज़बरदस्ती नहीं	441
एतिराज़	443
अनुवाद *(आयत नं० 259 से 266)*	445
व्याख्या *(आयत नं० 259 से 266)*	446
मरने के बाद दोबारा उठाए जाने की दलील	447
अनुवाद *(आयत नं० 267 से 274)*	451
व्याख्या *(आयत नं० 267 से 274)*	452
अल्लाह के रास्ते में ख़र्च	453
लोगों से सवाल करना	455

विषय पृष्ठ सं०

अनुवाद *(आयत नं० 275 से 282)* 457
व्याख्या *(आयत नं० 275 से 282)* 458
सूद की क़िस्में 459
सूद की शक्लें 459
क़र्ज़ का लेन देन 464
अनुवाद *(आयत नं० 283 से 286)* 466
व्याख्या *(आयत नं० 283 से 286)* 466
ग़िरवी या रेहन रखना 467
फ़ज़ीलत 471

भाग-3
सूरः आले इम्रान की व्याख्या

सूरः आले इम्रान का संक्षिप्त परिचय 475
क़ियामत के दिन काफ़िरों की हालत 475
यहूद की बद् किरदारियाँ 475
कामियाबी का राज़ 476
हज़रत ईसा (अ़लै०) का ज़िक्र 476
हज़रत ईसा (अ़लै०) का आसमान पर उठाया जाना ... 477
यहूद व नसारा को तौहीद की दअ़वत 477
यहूद की नापाक कोशिशें 477
यहूद की चालें और इस्लाम का ग़ालिब आना ... 478
अल्लाह की राह में ख़र्च 479
अहले ईमान को हिदायत 479
दीन की दअ़वत और तब्लीग़ की ज़िम्मेदारी 480
ग़ज़्व-ए-बद्र का ज़िक्र 481
ईमान वालों की सिफ़ात 481
जंगे उहद 481
अल्लाह की मदद 482
मुनाफ़िक़ों का धोखा 483
अल्लाह के रास्ते में ख़र्च 484
यहूदे मदीना की शरारतों का ज़िक्र 484
अल्लाह के क़ुद्रत की निशानियाँ 485
अनुवाद *(आयत नं० 1 से 9)* 486
व्याख्या *(आयत नं० 1 से 9)* 486
नाम की वजह 487
फ़ज़ीलत 487

विषय पृष्ठ सं०

शाने नुज़ूल 487
हज़रत ईसा (अ़लै०) के विषय में दलील 488
हज़रत ईसा (अ़लै०) क्या अल्लाह के बेटे हैं ... 488
हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का जवाब 488
हुरूफ़ मकत्तआ़त 488
ईसाइयों के तीन अ़क़ीदे 491
किताबों का मतलब 491
मुहकमात और मुतशाबिहात का मतलब 492
रासिख़ीन फ़िल् इल्म का तरीक़ा 493
रासिख़ीन फ़िल् इल्म की दुआ़ 494
अनुवाद *(आयत नं० 10 से 18)* 496
व्याख्या *(आयत नं० 10 से 18)* 497
मोमिन व काफ़िर का हाल 497
क़ियामत में कोई चीज़ काम न आएगी 498
ईमान वालों को ग़ल्बा 499
जंगे बद्र का वाक़िया 500
कामियाबी का दारोमदार 501
नसीहत 502
ग़ैबी ताक़त पर यक़ीन 502
दुनिया की मुहब्बतें 503
ज़िन्दगी का मक़्सद 504
जन्नत की नेअ़मतें 504
अनुवाद *(आयत नं० 19 से 27)* 507
व्याख्या *(आयत नं० 19 से 27)* 508
इस्लाम के अलावा कोई दीन पसन्द नहीं 508
धर्मों के नाम 509
इस्लाम का शाब्दिक अर्थ 509
इस्लाम का पारिभाषिक अर्थ 509
इस्लाम धर्म के संस्थापक 510
अल्लाह का पसंदीदा धर्म 511
मुस्लिम का अर्थ और उसकी व्याख्या 511
दुनिया की हर चीज़ 'मुस्लिम' 511
इन्सान और दूसरी चीज़ों में अन्तर 512
इंसान 'मुस्लिम' रहे या इन्कार करे 512
वास्तव में मुस्लिम कौन है 513
अल्लाह की मर्ज़ी क्या है? 513
सबसे पहले इन्सान का धर्म 514
रसूल हर जगह आए 514

विषय — पृष्ठ सं०

अल्लाह के आख़िरी रसूल 514
हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से पहले 515
रसूल इन्सान थे 515
अल्लाह की ओर से एक धर्म आया 516
सैकड़ों धर्म 516
सारे धर्म सच्चे 516
धर्म में ज़बरदस्ती नहीं 517
अल्लाह की मर्ज़ी का रास्ता 517
दुआ का तरीक़ा 519
अनुवाद *(आयत नं० 28 से 37)* 521
व्याख्या *(आयत नं० 28 से 37)* 522
काफ़िरों को राज़दार तो नहीं लेकिन नुक़्सान 522
मोमिनों को छोड़कर दोस्ती 522
इज़्ज़त का देने वाला अल्लाह 523
युद्ध के आदेश के बाद सतर्कता 523
बिना भेद-भाव सत्य के साथ 523
ज़ुल्म की मुख़ालिफ़त 523
दोस्ती उन से नहीं जो ज़ालिम है 524
अम्न पसन्द ग़ैर मुस्लिम 524
अल्लाह और रसूल के दुश्मन 524
ग़ैर मुस्लिमों के साथ इन्साफ़ का हुक्म 525
केवल जंग करने वालों से दुश्मनी 525
पवित्र क़ुर्आन की आयतों का उद्देश्य 526
क़ुर्आन का आदेश तमाम इन्सानों के हित में 526
ज़मीन पर फ़साद न मचाओ 526
अल्लाह फ़साद करने वालों को पसन्द नहीं करता 526
ज़मीन में फ़साद न फैलाओ 526
न ज़मीन पर बड़ाई न फ़साद 527
दुश्मनों से न्याय और इन्साफ़ करने का आदेश 527
बुराई को अच्छे ढंग से दूर करो 527
भले कामों में ग़ैर मुस्लिमों के साथ सहयोग 528
किसी एक इन्सान को क़त्ल करना 528
भलाई के कामों में एक दूसरे से आगे बढ़ो 529
दुनिया इम्तिहान हाल है 530
अच्छा अ़मल किसका 530
देवताओं को बुरा न कहो 531
इन्सानी अधिकार 531
क़ुर्आन के नैतिकतापूर्ण आदेश 532
अपशब्द तक नहीं 532
एकता 532
नेकी के कामों में सहयोग 533
धर्म का प्रचार 533
आरोपों का जवाब 533
विधर्मियों के साथ अच्छा बर्ताव 534
ग़ैर मुस्लिमों की दो क़िस्में 534
अहले किताब से शादी 534
ऊपर की मुख्य आयतों पर आक्षेप 535
क़ुर्आन के आदेश 536
शत्रुओं से मित्रता 536
वेदों के अनुसार दोस्ती 536
मनुस्मृति के अनुसार दोस्ती 537
श्रीमद्‌भागवत गीता 537
श्री कृष्ण और अर्जुन 537
अर्जुन की उदारता 537
श्री कृष्ण जी का उत्तर 538
अर्जुन के उत्तर में श्री कृष्ण जी ने कहा 538
अल्लाह तआ़ला पवित्र क़ुर्आन में फ़रमाता है 539
एक और आयत पर आक्षेप 539
मानव प्रेम की वास्तविकता 539
आर्यवर्त से भिन्न विदेशी 540
भविष्य पुराण के अनुसार म्लेच्छ 540
इस्लामी समानता 541
ग़ैर मुस्लिमों के साथ हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) 541
ग़ैर मुस्लिमों से सन्धियाँ 541
मिस्र की विजय 542
एक दास 542
महत्त्वपूर्ण विभाग युद्ध 543
जुर्जान निवासियों से प्रतिज्ञा पत्र 543
शाम के साथ प्रतिज्ञा 544
सुलह़ हुदैबिया 544
फ़तेह़ मक्का 544
इस्लाम की तलवार 545
इस्लामी शासन में ग़ैर मुस्लिमों के अधिकार 545
ग़ैर मुस्लिमों के साथ सम्बन्ध 545
इस्लामी समाज की हिमायत 545
मरयम की माँ 548
मरयम की पैदाईश 549
उम्मे मरयम की मन्नत 549

सन्देश

विश्व इस्लामी जगत के प्रख्यात विद्वान तथा प्रसिद्ध श्रेष्ठ विचारक (मुफ़क्किरे इस्लाम)

हज़रत मौलाना सय्यद अबुल हसन अ़ली हसनी नदवी (रह०) के शुभ क़लम से-

अल्हम्दुलिल्लाहि रब्बिल् आ़लमीन, वस्सलातु वस्सलामु अ़ला सय्यिदिल्मुर्सलीन, मुहम्मदिन व अ़ला आलिही व अस्हाबिही अजूमअ़ीन

मुसलमानों के ज़िन्दग़ी की तमाम अ़िबादतों में नमाज़ ही वह अहम और बुनियादी रूकून है जिसे दिन में पाँच बार फ़र्ज़ (अनिवार्य) किया गया है। अल्लाह का बन्दा जब अपने पालनहार के सामने बन्दगी के लिए खड़ा होता है तो सबसे पहले उस ज़ात की तअ़रीफ़ और बेशुमार नेअ़मतों का शुक्रिया अदा करता है जो उसके पालनहार ने उस पर किये हैं, यह वह परवरदिगार है जो केवल मुसलमानों का पालने वाला ही नहीं बल्कि तमाम मख़्लूक़ को ज़िन्दगी और रिज़्क़ देने वाला और सबसे ज़्यादा उन पर रहम करने वाला है। उसी ने तमाम मख़्लूक़ को अपनी क़ुदरत से पैदा किया और उसी का हुक्म सब पर जारी होता है।

इस दुनिया की हर चीज़ उसी की मुहताज है,वह एक है उसका कोई साझीदार नहीं,वही सीधी राह दिखाता है। कोई मुसलमान जब भी नमाज़ के लिए खड़ा होता है तो वह सूरः फ़ातिहा को बार-बार पढ़ता और सुनता है कि इसमें पूरे क़ुर्आन मजीद के पैग़ाम की रुह और ख़ुलासा है। इस सूरः के अन्दर तमाम इन्सानी तब्क़ात की ज़रूरतों और ख़्वाहिशों के इख़्तिलाफ़ के बावजूद हर गिरोह और शख़्स की तस्कीन (तसल्ली) का सामान मौजूद है। इस मुख़्तसर सूरः में ज़िन्दगी का पैग़ाम है, उम्मीद और ख़ुशख़बरी है उस इन्सान के लिए जिसको हर तरफ़ से धुत्कारा जाता है, हर तरफ़ से तक्लीफ़ों और आ़ज़्माइशों के तूफ़ान में जो घिरा हुआ है। माल, कुव्वत, मन्सब और सेहत इसका साथ छोड़ देते हैं। महबूबतरीन औलाद भी काम नहीं आती। ऐसा कमज़ोर व मुहताज इन्सान सूरः फ़ातिहा पढ़ कर अपने दिली एहसासात व जज़बात की तर्जुमानी करता है, वह उस रब से मदद माँगता है जो तमाम मख़्लूक़ का पालनहार है। जो रोज़े जज़ा का मालिक है। वही अ़िबादत का हक़्दार है, वही सीधी राह दिखाता है।

जहाँ तक मुसलमानों का तअ़ल्लुक़ है उनके बच्चों और नई नस्ल के लिए और दीनी मर्क़ज़ों के लिए और मदारिस और फ़ायदे उठाने वालों के लिए, क़दीम अर्सा से उर्दू में इस्लाम के मबादी व तअ़लीमात से वाक़िफ़ कराने के लिए बहुत सी किताबें और रिसाले लिखे गये, जिनसे बहुत फ़ायदा पहुँचा। जब तक फ़ारसी का रिवाज था 'माला बुद्दमिन्हु' जैसी किताबें लिखी गईं फिर 'तअ़लीमुल् इस्लाम' के नाम से

कई मुस्तनद उ़ल्मा ने बहुत सी कुतुब व रसायल लिखे जो इब्तिदाई मदारिस में और कम पढ़े लिखे ह़ल्क़ों में रायज और मक़्बूल हैं, और उनसे हज़ारों बल्कि लाखों बच्चों और कम इस्तेअ़दाद के लोगों ने फ़ायदा उठाया, और दीन का इल्म मालूम करने और उन पर चलने का तरीक़ा सिखाया, और मुस्लिम दाई़यान‍े इस्लाम की कोशिश और खुद फ़ित्‌रते सलीम के तक़ाज़ा और हिदायते रब्बानी से हिन्दुस्तान की ग़ैर मुस्लिम आबादी और हमारे हमवतन पड़ोसियों में से हर इलाक़े में बहुत सी जगह सैकड़ों की तअ़दाद में और बहुत सी जगह हज़ारों की तअ़दाद, और बाज़ जगह गाँव के गाँव और इलाक़े में अपने इरादा व अख़्तियार और अपने क़द्रो इन्साफ़ से दीने इस्लाम को क़ुबूल किया।

वक़्त की एक अहम ज़रूरत थी जिसको अ़ज़ीज़ुल क़द्र 'मोलवी मुहम्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी' ने अन्जाम दिया और वक़्त की एक ज़रूरत और दीन की तफ़्हीम व तब्लीग़ व तर्बियत का एक मुतालबा और तक़ाज़ा पूरा किया। इससे पहले बहुत से किताबचे इनके क़लम से हिन्दी में आ चुके हैं जिनसे हमारे ग़ैर मुस्लिम भाईयों को ख़ासतौर से इस्लाम के बारे में मुफ़ीद मालूमात ह़ासिल हुई।

इस बात की बड़ी ज़रूरत है कि आसान हिन्दी ज़बान में ऐसी किताबें बकस्रत तैयार की जाएँ, ताकि इस मुल्क में सदियों से रहने वाले शहरी एक दूसरे के मज़हब,अक़ायद,तहज़ीब व तारीख़ से वाक़िफ़ हों, जिससे ग़लतफ़हमियाँ दूर हों और प्रेम व मुह़ब्बत और भाईचारगी में इज़ाफ़ा हो।

इस में मुसन्निफ़ ने पहले क़ुर्आन मजीद का तआ़र्रुफ़ इख़्तिसार से कराया है और बताया है कि क़ुर्आन ही एक ऐसी मह़फ़ूज़तरीन किताब है जो हर प्रकार की तहरीफ़ व तब्दीली से पाक है। जिसे अल्लाह तआ़ला ने इस क़ुर्आन की हिफ़ाज़त का खुद वादा अपने ज़िम्मे लिया है। मुसन्निफ़ ने इन्सानी ज़िन्दगी से उसका तअ़ल्लुक़, फिर सूरः के तआ़र्रुफ़ के साथ उसके मफ़्हूम और उसकी तशरीह़ की है, उम्मीद है कि यह मुफ़ीद होगा। अल्लाह पाक अ़ज़ीज़ेग्रामी की इस कोशिश को क़ुबूल फ़रमाए।

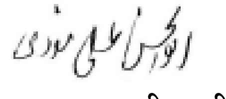

अबुल ह़सन अ़ली नदवी

18 जमादिलू अव्वल **1419** हि०

नोटः- अल्ह़म्दुलिल्लाह क़ुर्आन मजीद के काम को मैंने ह़ज़रत मौलाना सय्यद अबुल ह़सन अ़ली ह़सनी नदवी (रह़०) के मश्वरह से **1996** ई० में ही शुरु कर दिया था और आप की ज़िन्दगी में सूरः फ़ातिह़ा और तीस्वें पारे की तफ़्सीर छप चुकी थी। ऊपर की तह़रीर ह़ज़रत मौलाना ने उसी के मुक़द्दमे में यह दुआ़इया कलिमात तह़रीर फ़रमाये थे, जिसे शुरु में पेश कर दिया गया है और बाक़ी उ़लमा की मुकम्मल तहरीरें आख़िरी भाग में शामिल की गई हैं।

प्रख़्यात विश्व विद्धानों का इस तफ़्सीर पर संक्षिप्त लेख

तमाम तअ़रीफ़ें अल्लाह ही के लिए हैं और दुरुद व सलाम की बारिश हो मोह़सिने आ़ज़म सय्यदना मुह़म्मदुर्रसूलुल्लाह (सल्ल०) पर, जिन्होंने क़ुर्आन मजीद की तअ़लीम दी और अल्लाह की रह़मतें नाज़िल हों तमाम सह़ाब-ए-किराम व आज तक के रावियों और उम्मत के उ़ल्मा-ए-किराम पर जिन्होंने क़ुर्आन करीम की तअ़लीम को अगली नस्ल तक मुन्तक़िल किया।

अल्लाह तआ़ला की मुझ पर बेशुमार नेअ़मतें हैं जिन में सब से बड़ी नेअ़मत यह है कि उस ने क़ुर्आन मजीद को समझने, सीखने, पढ़ने और लिखने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाई।

अल्ह़म्दु लिल्लाह "ह़ज़रत मौलाना सय्यद अबुल ह़सन अ़ली ह़सनी नदवी" (रह़०) के मश्वरे से मैंने 1996 ई० में ही क़ुर्आन मजीद का काम शुरु कर दिया था और लगभग 18 साल से इस काम में मुसलसल मश्ग़ूल रहा।

इस में सबसे पहले सूरः फ़ातिह़ा की तफ़्सीर प्रकाशित की गई, फिर तीस्वें पारे के अलग-अलग सूरतों की तफ़्सीर, फिर तीस्वें पारे की मुकम्मल तफ़्सीर, फिर पूरे क़ुर्आन मजीद का हिन्दी अनुवाद "क़ुर्आन का पैग़ाम" नाम से प्रकाशित हुआ, उसके बाद जैसे-जैसे तफ़्सीर का काम होता रहा, एक-एक भाग "तफ़्सीर फ़ारुक़ी" के नाम से प्रकाशित किया जाता रहा, जिस पर विश्व प्रसिद्ध क़ुर्आनी उलूम के माहिरीन से मुफ़ीद मश्वरे लिये जाते रहे और नाचीज़ की दरख़्वास्त पर वह अपने सन्देश से ह़िम्मत अफ़्ज़ाई भी फ़रमाते रहे।

अब अल्हम्दु लिल्लाह किसी ह़द तक तफ़्सीर का काम सात भागों में छपने जा रहा है, इसलिए हम अपने असातिज़ा व मुह़सिनों के पैग़ामात को जो अलग-अलग भागों पर अलग-अलग तारीख़ों में लिखे गये थे उसे भी शामिल कर रहे हैं, जिस से मुतालअ़ करने वालों को रहनुमाई भी होगी और हमारे सभी मुह़सिनों को उसका अ़ज्र भी मिलेगा।

चूंकि पैग़ामात की सूची लम्बी है इसलिए शुरु में केवल "ह़ज़रत मौलाना सय्यद अबुल ह़सन अली ह़सनी नदवी" (रह़०) के सन्देश को पूरा शामिल करने के बाद हर एक के सन्देश व लेख से कुछ पंक्ति दर्ज की गई है। उस के बाद सभी बुजुर्गों के सन्देश आख़ीर में मुकम्मल तौर से दिये गये हैं जिस से मुतालअ़ करने वाले मुस्तफ़ीद हो सकते हैं।

यहाँ केवल नाम और उनके सन्देश की एक पंक्ति दर्ज की जाती है, जिससे इस की अहमियत का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। जैसे-

(1) इस्लामी जगत के प्रख़्यात विद्वान एवं श्रेष्ठ विचारक ह़ज़रत मौलाना सय्यद मुह़म्मद राबेअ़ ह़सनी नदवी मद्ददज़िल्लहुलूआ़ली के क़लम से-

('नाज़िम,' दारुलू उलूम, नदवतुल उलूमा, लखनऊ, व 'अध्यक्ष,' मुस्लिम पर्सनल ला बोर्ड (इण्डिया)

हमारे अज़ीज़ 'मौलवी मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी साह़ब' जो एक फ़ाज़िल शख़्स और अ़रबी व हिन्दी दोनों से अच्छी वाक़्फ़ियत रखने वाले हैं, मेरे सामने इस वक़्त इन्हीं का हिन्दी तर्जुमः व तफ़्सीर क़ुर्आन है जिसको इन्होंने बड़ी मेह़नत व क़ाबिलियत से तैयार किया है।

उम्मीद है कि सारे मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम भाई जो हिन्दी ज़बान ही के ज़रिये ज़्यादा बेहतर समझ सकते हैं, इस तर्जुमे व तफ़्सीर से सह़ी फ़ायदा उठाएँगे।" मुसलमान ह़ज़रात तो अ़मल करने के लिए और

उसकी रहनुमाई में अपनी ज़िन्दगी संवारने के लिए और ग़ैर मुस्लिम भाई इस्लाम और क़ुर्आन की सही ह़क़ीक़त और तालीमात से वाक़िफ़यत ह़ासिल करने के लिए। मेरी दुआ़ है कि यह तफ़्सीर मुफ़ीद और कामियाब साबित हो।

(2) इस्लामी जगत के प्रख्यात विद्वान ह़ज़रत मौलाना मुफ़्ती अबुल् क़ासिम नोअ़मानी क़ासमी मद्दज़िल्लहुलआ़ली के क़लम से–

(मुहतमिम, दारुल उलूम देवबन्द)

मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी के हिन्दी तर्जुमे पर मुल्क के मुतअ़द्दिद अकाबिर अहले इ़ल्म ने गहरी नज़र से तर्जुमः को देखकर अपनी पसन्दीदग़ी का इज़्हार भी किया है, इसलिए उम्मीद है कि यह तर्जुमः न सिर्फ़ हिन्दीदाँ मुसलमानों के लिए; बल्कि उन बिरादराने वतन के लिए भी "क़ुर्आन के पैग़ाम" को समझने में मदद देगा, जो संजीदा और इन्साफ़ पसन्द हैं और क़ुर्आन पाक के पैग़ाम को समझना चाहते हैं। अल्लाह तआ़ला इन की ख़िद्मत को क़ुबूल फ़रमाए और मज़ीद दीनी ख़िद्मत की तौफ़ीक़ बख़्शे।

(3) इस्लामी जगत के प्रख्यात विद्वान ह़ज़रत मौलाना मुह़म्मद सालिम क़ासमी मद्दज़िल्लहुल् आ़ली के क़लम से–

(मोहतमिम, "दारुल् उलूम वक़्फ़", देवबन्द व उपाध्यक्ष मुस्लिम पर्सनल ला बोर्ड इण्डिया)

"पेशे नज़र तफ़्सीर "क़ुर्आन का पैग़ाम, "तफ़्सीर फ़ारूक़ी" बज़बान हिन्दी और इस तफ़्सीर के ज़रिये दअ़वत "मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी" ने इ़ल्मी ज़ौक़-ए-सलीम, वक़ीअ़ दीनी सलाह़ियत, वसीअ़ मुतअ़ला और उ़लूमे क़ुर्आनी से इस्तिफ़ादह की राह अ़वाम व ख़वास के लिए खोल दी है।

उम्मीद है कि यह तफ़्सीर मुवल्लिफ़ीन, मुसन्निफ़ीन, मुह़क़्क़िक़ीन, मुक़र्रिरीन और मुदर्रिसीन के लिए एक क़ीमती इ़ल्मी तोह़फ़ा साबित होगी"।

(4) प्रख्यात विद्वान ह़ज़रत मौलाना सय्यद अरशद मद्नी मद्दज़िल्लहुल् आ़ली के क़लम से–

(उस्ताज़ ह़दीस, दारुल उ़लूम, देवबन्द व अध्यक्ष- जमअ़ीयतुल् उ़लम-ए-हिन्द भारत)

"अब जबकि हिन्दी भाषा हमारे मुल्क की सरकारी भाषा है और उम्मत का एक बहुत बड़ा तब्क़ा उर्दू से दूर है। इस बात की सख़्त ज़रुरत है कि इस्लामी उ़लूम को हिन्दी भाषा में भी किया जाए।

यह बात क़ाबिले क़द्र है कि "मौलाना मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी साह़ब" ने इस ज़रुरत को मह़सूस किया और ह़ज़रत थानवी (रह़०) के तर्जुमे को सामने रखते हुए हिन्दी भाषा में क़ुर्आन शरीफ़ का तर्जुमः व तफ़्सीर किया है, अगरचे यह फ़क़ीर अपनी मस्रूफ़ियत की वजह से इसको एक-एक शब्द नहीं देख सका, लेकिन ह़ज़रत थानवी (रह़०) के तर्जुमे को सामने रखना इस तर्जुमे व तफ़्सीर की सिक़ाहत (प्रमाण) के लिए काफ़ी है"।

(5) प्रख़्यात विद्वान ह़ज़रत मौलाना मुहम्मद सईदी मज़ाहिरी मद्दज़िल्लहुलू आ़ली के क़लम से-

(नाज़िम व मुतवल्ली मदरसा मज़ाहिरुलू उ़लूम (वक़्फ़) सहारनपुर (यू०पी०) इण्डिया)

"मुझे यह मालूम होकर ख़ुशी हुई कि दारुलू उलूम नद्वतुलू उ़लमा, लखनऊ के एक आ़लिमे दीन "जनाब मौलाना मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी" ग़ैर मुस्लिमों में दअ़वत व तब्लीग़ के लिए कोशाँ और फ़िक्रमन्द हैं, इस सिलूसिले में उन्होंने मुख़्तलिफ़ किताबें और किताबूचे भी मुरत्तब व शाया किये हैं।

इसी तरह़ उन्होंने क़ुर्आन करीम के दअ़वती उस्लूब को मद्देनज़र रखते हुए हिन्दी ज़बान में "तफ़्सीर फ़ारुक़ी" के नाम से बाबरकत सिलूसिला शुरु किया है, जिस का भाग एक मेरे पास बग़र्ज़ तक़रीज़ पहुँची है। अल्लाह तआ़ला मौलाना मोह़रत की इस कोशिश व काविश को शर्फ़ क़ुबूल और मक़ामे क़ुबूलियत अ़ता फ़रमाए"।

(6) प्रख्यात विद्वान तथा श्रेष्ठ साहित्यकार ह़ज़रत मौलाना सअ़ीदुर्रह़मान आज़्मी नदवी मद्दज़िल्लहुलूआ़ली के क़लम से-

(मुहतमिम- दारुलू उलूम नद्वतुल उ़ल्मा, लखनऊ व चान्सलर- इन्टीग्रल यूनिर्वसिटी, लखनऊ)

"हमारे इस मुल्क में हिन्दी ज़बान में क़ुर्आन करीम के तर्जुमे मुख़्तलिफ़ इदारों और शख़्सियात की तरफ़ से शाए (प्रकाशित) हो कर मक़्बूल हो चुके हैं।

"लेकिन अभी तक किसी ऐसे आ़लिमे दीन की तरफ़ से जिसको हिन्दी ज़बान पर पूरी तरह़ उबूर ह़ासिल हो और वह अ़रबी ज़बान की रुह़ को समझ कर हिन्दी ज़बान में मुन्तक़िल करने की भरपूर सलाह़ियत (योग्यता) रखता हो, कोई काम न हो सका था"।

हमें इस बात का एतिराफ़ करने में निहायत ख़ुशी हो रही है कि हमारे ह़लक़-ए-नद्वतुलू उ़लमा की तरफ़ से यहाँ के आ़लिमे दीन 'मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी' जो अ़रबी, उर्दू, हिन्दी के माहिर मायानाज़ अदीब (साहित्यकार) आ़लिम और सह़ाफ़ी (पत्रकार) क़ुर्आन करीम का हिन्दी ज़बान में एक निहायत ही क़ाबिले उसूक़ और अ़रबी ज़बान की रुह़ से क़रीब तर हिन्दी तर्जुमः व तफ़्सीर पेश कर रहे हैं।

(7) प्रख़्यात इस्लामी विश्व विद्वान ह़ज़रत मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रह़मानी मद्दज़िल्लहुल आ़ली के क़लम से-

(नाज़िम अलू मअ़हदुलू आ़ली इस्लामी हैदराबाद व जनरल सेक्रेट्री इस्लामिक फ़िक़्ः अकेडमी, इण्डिया व सेकेट्री आल इण्डिया मुस्लिम पर्सनल ला बोर्ड)

क़ुर्आन को एक पैग़ाम की शक्ल में, दअ़वती उस्लूब और आसान अन्दाज़ में पेश करने की ज़रुरत थी, चुनाँचे मुह़िब्बी फ़िल्लाह जनाब 'मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी' (सदर जमअ़ीयत पयामे अम्न, लखनऊ) ने इसी अन्दाज़ में क़ुर्आन पाक के तर्जुमे व तशरीह़ की कामियाब कोशिश की है।

इस तफ़्सीर में सब से पहले "सूरः का तआ़र्रुफ़" के उ़न्वान (शीर्षक) से हर रुकूअ़ का ख़ुलासा पेश किया है, फिर आयतों के तर्जुमे और हर आयत के मुतअ़ल्लिक़ तफ़्सीर, अस्बाबे नुज़ूल, फ़ज़ीलत, ज़रुरी मसायल और आयत के पैग़ाम को बयान किया गया है। तफ़्सीर के दौरान ह़ज़रत मौलाना मुफ़्ती मुह़म्मद शफ़ीअ़ साह़ब (रह़०) की "मआ़रिफ़ुलू क़ुर्आन" के अ़लावा अस्लाफ़ की मुतअ़द्दिद कुतुब तफ़्सीर से इस्तिफ़ादा

हैं। एक ख़ास बात इस तफ़्सीर की यह है कि हर आयतों के अलग-अलग नम्बर डाल कर आयतों की तशरीह़ की गई है, ताकि लोग थोड़ा-थोड़ा वक़्त निकाल कर आसानी के साथ फ़ायदा उठा सकें और तल्बा व तालिबात भी अलग-अलग सबक़ के तौर पर इसे पढ़ सकें।

(8) ह़ज़रत मौलाना सय्यद वाज़ेह़ रशीद ह़सनी नदवी मद्‌दज़िल्लहुल्‌आली के क़लम से-

(शिक्षा महासचिव (मुअतमद तअ़लीम) दारुल् उलूम, नदवतुल् उलमा, लखनऊ)

'मौलाना मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी साह़ब' जो आ़लिमे दीन होने के साथ-साथ हिन्दी के भी सनद याफ़्ता आ़लिम हैं। मौलाना सरवर साह़ब बहुत सी हिन्दी किताबों के मुसन्निफ़ हैं, और इससे पहले बहुत सी किताबों के तर्जुमे भी कर चुके हैं और अब तफ़्सीर का काम भी पूरा कर चुके हैं। अल्लाह तआ़ला इस कोशिश को क़बूल फ़रमाए और इसको क़ुर्आन फ़हमी का ज़रिया बनाए और हिदायत के मिलने का उनवान बनाए।

(9) ह़ज़रत मौलाना अब्दुल् क़ादिर साह़ब नदवी मज़ाहिरी गुजराती के क़लम से-

(नायब मुहतमिम दारुल उलूम नदवतुल उ़लमा, लखनऊ)

हमारे अ़ज़ीज़े गिरामी 'मुफ़्ती मौलवी मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी साह़ब' ने जो नदवा से सनद याफ़्ता होने के साथ हिन्दी से भी वाक़िफ़ हैं, वाक़िफ़ ही नहीं बल्कि मुसल्सल इस तरह के कामों में लगे रहने की वज़ह से अ़वाम में समझी जाने वाली हिन्दी जो हिन्दुस्तानी ज़बान है उससे भी वाक़िफ़ हैं इन्होंने इस काम को अपने ज़िम्मे लिया है और एक हद तक उसको पाये तक्मील तक पहुँचा कर इस के चार हिस्से शाए भी किया और अब पूरे क़ुर्आन की तफ़्सीर शाया करने जा रहे हैं जिस पर वह मुबारकबाद के मुस्तह़िक़ हैं।

(10) मुफ़स्सिरे क़ुर्आन ह़ज़रत मौलाना मुफ़्ती फ़ुज़ैलुर्रह़मान हिलाल उ़स्मानी मद्‌दज़िल्लहुल् आ़ली के क़लम से-

(रुक्न तासीसी (फ़ाउन्ड मेम्बर) आल इण्डिया मुस्लिम पर्सनल ला बोर्ड व सदर-दारुस्सलाम इस्लामी मर्कज़, मलियर कोटला पंजाब, अल् हिन्द)

यह नाचीज़ "मोह़तरम मौलाना मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी साह़ब" को इस अ़ज़ीम ख़िद्‌मत पर दिली मुबारकबाद पेश करते हुए उम्मीद रखता हूँ कि इन्शाअल्लाह इन की इस ख़िद्‌मत से हिन्दी जानने वाले तब्क़े को ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा पहुँचेगा।

अल्लाह तआ़ला से दुआ़ है कि मौलाना की यह ख़िद्‌मते शर्फ़ क़ुबूलियत ह़ासिल करे।

(11) ह़ज़रत मौलाना सय्यद अब्दुल्लाह ह़सनी नदवी (रह़०) के क़लम से-

(भूतपूर्व सहसम्पादक 'अर्राइद' व उस्तादे ह़दीस, दारूल उलूम नदवतुल उल्मा लखनऊ)

"हिन्दी में तर्जुमें की बहुत कमी थी, अगर तर्जुमें कुछ हुए भी तो उन में क़ुर्आनी तर्जुमें के आदाब का पूरा लिहाज अक्सर तर्जुमे करने वालों ने नहीं रखा, ज़रूरत थी कि कोई अच्छा हिन्दीदाँ जो अ़रबी से भी वाक़िफ़ हो इस काम को अन्जाम देता।

बड़ी खुशी की बात है कि 'दारुल उलूम नदवतुल उलमा' के फ़ाज़िल "मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी

साहब नदवी" ने मौलाना फ़तेह़ मुह़म्मद ख़ाँ साह़ब जालन्धरी के तर्जुमे को सामने रखते हुए हिन्दी में तर्जुमानी की कोशिश की है। अल्लाह तआला इस तर्जुमानी व तफ़्सीर को क़बूल फ़रमाये और तमाम गुमराह लोगों के लिए इसको हिदायत का ज़रिया बनाए"।

(12) ह़ज़रत मौलाना शम्सुल ह़क़ साह़ब नदवी मद्दज़िल्लहुलआली

(प्रधान सम्पादक, तअमीर-ए-ह़यात व उस्ताज़ दारुल उ़लूम, नद्वतुल उ़लमा, लखनऊ)

हमें निहायत ख़ुशी व मसर्रत है कि नद्वतुल उ़ल्मा जिसकी बुनियाद ही इस पर पड़ी थी कि ह़ालात के रुख़ और माह़ौल को सामने रखकर काम किया जाए और उसके फ़ाज़िलों को वक़्त की ज़बान में बात करने का सलीक़ा सिखाया जाए ताकि वह दीन की ख़िद्मत का ह़क़ अदा कर सकें। इसके एक फ़ाज़िल मौलाना मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी ने अच्छी आसान हिन्दी ज़बान में क़ुर्आन करीम का तर्जुमः कर दिया है जो हमारी नई नस्ल के लिए ज़रुरी है और बिरादराने वतन तक, जिसकी रौशनी पहुँचाने का भी ज़रिया है। हमारी दुआ है कि अल्लाह तआला इससे ज़्यादा फ़ायदा पहुँचाए।

(13) ह़ज़रत मौलाना मुह़म्मद ज़करिया नदवी मद्दज़िल्लहुल् आली के क़लम से-

(उस्ताज़ ह़दीस व अ़मीद क़ुल्लियतुश्शरीआ, दारुल उलूम नदवतुल उलमा, लखनऊ)

अल्लाह ने मोह़तरम "मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी" को हिन्दी से वाक़्फ़ियत को इनके लिए इतना मुफ़ीद बना दिया है जिस का अन्दाज़ा करना इनकी किताबों और हिन्दी तर्जुमः क़ुर्आन पाक और हिन्दी "तफ़्सीर फ़ारूक़ी" को पढ़े बग़ैर मुश्किल है। क़ुर्आन मजीद की तफ़्सीर व तर्जुमः का काम ख़ासतौर से हिन्दी में बहुत मुश्किल है। हिन्दी पढ़ने वालों के मज़हब ज़ौक़ व मिज़ाज को सामने रखते हुए यह काम करना जितना ज़रूरी है उतना ही मुश्किल है लेकिन बस तौफ़ीक़ की ज़रूरत है जिस ने मौलाना से इतना बड़ा काम ले लिया है। इसके बहुत अच्छे नतीजे सुनने में आए हैं। अल्लाह तआला मुफ़्ती साह़ब की उ़म्र और काम में बरकत अ़ता फ़रमाये और इनकी मेह़नत और कोशिशों को मज़ीद बार आवर करे।

(14) ह़ज़रत मौलाना मुफ़्ती अ़तीक़ अह़मद क़ासमी मद्दज़िल्लहुल् आली के क़लम से-

(उस्ताज़ फ़िक़ः-दारुल उलूम नदवतुल उ़लमा, लखनऊ व नाज़िम मअ़हदुश्शरीआ, लखनऊ)

हिन्दी ज़बान में इस्लामियात पर काम करने वालों में एक मोअ़तबर नाम जनाब "मौलाना मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी" का है, जो दारुल उलूम नद्वतुल् उ़लूमा के होनहार फ़ाज़िल और हिन्दी ज़बान में बहुत सी किताबों के मुसन्निफ़ हैं, मुतवाज़ेअ़, मिलनसार और धुन के पक्के हैं, इन्होंने क़ुर्आन करीम का हिन्दी तर्जुमः किया है जिस के मुतअ़द्दिद एडीशन शाया कर चुके हैं।

अल्लाह तआ़ला से दुआ़ है कि मौलाना मौसूफ़ की यह दीनी ख़िद्मात अल्लाह की बारगाह में मक़्बूलियत ह़ासिल करें और बन्दगाने ख़ुदा को इन से ज़्यादा से ज़्यादा नफ़ा पहुँचे।

(15) ह़ज़रत मौलाना मुह़म्मद ख़ालिद साह़ब ग़ाज़ीपुरी नदवी मद्दज़िल्लहुल् आ़ली के क़लम से-

(उस्ताज़, ह़दीस, दारुल उलूम नदवतुल उ़लमा, लखनऊ व सदर जमअ़ीयतुल मआ़रिफ़, लखनऊ)

अल्लाह का लाख-लाख एह़सान व करम है कि इस अहम ज़रुरत को पूरा करने के लिए हमारे फ़ाज़िल 'मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी' ने एक मुकम्मल तफ़्सीर बज़बान हिन्दी में बड़ी मेह़नत व लगन से तैयार

की है और हिन्दुस्तानी माहौल को सामने रखते हुए सलफ़-ए-सालिहीन के तरीक़े को पेशे नज़र रखते हुए हिन्दुस्तानी लोगों की ख़िद्मत में एक नादिर व नायाब क़ुर्आनी तोह़फ़ा पेश किया है।

(16) ह़ज़रत मौलाना मुफ़्ती नियाज़ अहमद साह़ब नदवी मद्दज़िल्लहुल् आली-

(उस्ताज़ ह़दीस व फ़िक़ः व वकील कुल्लियतुश्शरीआ अर्थात सदर मुफ़्ती दारुल उलूम नद्वतुल उलमा, लखनऊ)

'मौलाना मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी साह़ब' जो उलूम-ए-शरीआ में माहिर, नदवे के होनहार फ़ाज़िल जिन की क़ुर्आनी उलूम पर अच्छी निगाह है। यह हिन्दू मज़हबी किताबों से भी वाक़िफ़यत रखते हैं और हिन्दू भाईयों के दर्मियान ख़ासतौर से हिन्दी ज़बान को ज़रिया बना कर दअ़वत का काम कर रहे हैं। इससे पहले इनका हिन्दी तर्जुमः क़ुर्आन का पैग़ाम नाम से कई एडीशन छप चुके हैं जो इनके मक़्बूलियत की दलील है।

चूँकि मैं इन्हें लगभग पन्द्रह बीस साल से दअ़वत के कामों में मशगूल देख रहा हूँ जो एक अच्छी फ़िक्र के हामिल हैं और अल्लाह तआ़ला इनके इसी जज़्बे की वजह से इन से बहुत से काम ले रहा है, जिसमें मदारिस, मकातिब और नौजवानों की तर्बियत भी शामिल है।

उम्मीद है कि हिन्दी जानने वालों के लिए यह तफ़ासीर मराज़ेअ़ की हैसियत रखेगी। अल्लाह तआ़ला इस्तिफ़ादे की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए।

(17) ह़ज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहीबुल्लाह क़ासमी मद्दज़िल्लहुल् आली के क़लम से-

(मुबल्लिग़ मदरसः रह़मानिया, दरभंगा, बिहार)

हमें इस बात का एतिराफ़ करने में ख़ुशी हो रही है कि "मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी साह़ब" एक आ़लिमी इदारे दारुल् उलूम नद्वतुल् उ़लमा से फ़ारिग़ होने के साथ संस्कृत और हिन्दी ज़बान से वाक़िफ़ हैं। जो बराबर तमाम इन्सानों को जहन्नम से निकाल कर जन्नत में ले जाने का काम करते हैं, जिसके लिए उन्होंने बड़ी तअ़दाद में इस्लामी लिट्रेचर तैयार किया है, जो एक सह़ाफ़ी और जमअ़ीयत पयामे अम्न के सदर हैं।

जनाब मौलाना 'मुफ़्ती सरवर फ़ारुक़ी नदवी' ने ख़ासतौर से इस मुल्क के हिन्दी तब्क़े वालों की तरफ़ से शुक्रिया के मुस्तह़िक़ हैं, जिन्होंने इन्सानी हिदायत का एक बड़ा तोह़फ़ा तैयार किया है।

(17) मोहतरम जनाब अन्सार अह़मद सिद्दीक़ी साह़ब के क़लम से-

(अध्यक्ष हिन्दी विभाग इस्लामिया डिग्री कालेज, इन्दौर, एम०पी०)

हमारे लिए बड़े गर्व एवं प्रसन्नता की बात है कि हमारे प्रिय मित्र जनाब 'मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी' साह़ब ने हिन्दी भाषा में क़ुर्आन का अनुवाद और व्याख्या करने का बहुत महान प्रयास किया है। अल्लाह तआ़ला इन के इस प्रयास को सफ़ल बनाये यह हमारी दिली दुआ़ है और मुझे आशा ही नहीं बल्कि विश्वास है कि हिन्दी जगत में सभी लोग इससे लाभ उठाएँगे।

नोट- अल्लाह तआ़ला से दुआ़ है कि वह हमारे और हमारी नस्ल और पूरी उम्मत के लिए क़ुर्आन मजीद की तिलावत, ख़िद्मत और इशाअ़त को ज़िन्दगी का मक़्सद बना दे, ज़िन्दगी गुज़ारे तो बस क़ुर्आन और शारेअ़ क़ुर्आन के साये में और मौत आए तो इसी ख़िद्मत को अन्जाम देते हुए।

10 मुहर्रम 1436 हिज्री

मु० सरवर

दारुल् उ़लूम नद्वतुल् उ़ल्मा, लखनऊ, यू०पी०

04–11–2014

प्राक्कथन

अल्लाह तआला ने इंसानों की रहनुमाई के लिए, ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) पर अपना क़लाम नाज़िल किया जिसे कुर्आन के रुप मे जाना जाता है।

कुर्आन का शाब्दिक अर्थ

'कुर्आन', अ़रबी भाषा का शब्द है, जिस का 'फ़ुअ़लान' मस्दर है। कुर्आन का अर्थ होता है- पढ़ना, यह 'मफ़अूल' के माने में है, जिसके माने हैं, 'पढ़ा गया; या अक्षरों और शब्दों को सार्थक क्रम के साथ जोड़ कर ज़बान से अदा करना।

दुनिया में बहुत सी किताबें पढ़ी गई, लेकिन कुर्आन का पढ़ा जाना एक अजीब व-ग़रीब चमत्कार है, कि पूरे चौबीस घंटे में ऐसा कोई सिकेण्ड नहीं गुज़रता जिसमें कहीं न कहीं कुर्आन पढ़ा न जाता हो इससे कुर्आन का नाम कुर्आन होना स्वयं सिद्ध हो जाता है।

कुर्आन एक ऐसा ग्रन्थ है जिसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं, यह इन्सानों को अन्धविश्वास, वहम परस्ती और अपनी गुलामी जैसे भ्रष्ट मार्गों से निकाल कर ईमान व यक़ीन के सीधे और मज़बूत रास्ते पर लाता है।

अल्लाह तआ़ला ने पवित्र कुर्आन में कई स्थान पर इन्सानों को उनकी पैदाइश और उनके अस्ल (मिट्टी और नुत्फ़ा) की ओर मुतवज्जेह कर के बता दिया कि देखो! यह तुम्हारी अस्ल ह़क़ीक़त है, जैसे-

सूरः साफ़्फ़ात आयत नं० 11, सूरः रह़मान आयत नं० 14 , सूरः यासीन आयत नं० 77, और सूरः अ़-ब-स आयत नं० 18-19 में विस्तारपूर्वक मौजूद है।

दूसरी ओर इन्सान को उसके अन्त और अन्जाम के बारे में भी ख़बरदार किया गया है कि तेरी ज़िन्दगी और तमाम गुण (हुस्न खूबसूरती, उच्च कोटि का दिमाग़ और इल्म व फ़न आदि) हमेशा नहीं रहेंगे, बल्कि इन सब को फ़ना हो जाना है और तेरी ज़िन्दगी मौत से बदल जाएगी। जिसका विस्तारपूर्वक उल्लेख सूरः आ़राफ़ आयत नं० 25 व सूरः ताहा आयत नं० 55 में मौजूद है। अल्लाह तआ़ला ने इन्सान को उसकी पैदाइश और उसके अन्त के बारे में अस्ल ह़क़ीक़त का इ़ल्म दे कर उसकी नसीह़त व हिदायत का पूरा सामान कुर्आन के रूप में अ़ता कर दिया।

पवित्र कुर्आन ईश ग्रन्थ है

पवित्र कुर्आन के ईश ग्रन्थ होने में किसी को सन्देह नहीं हो सकता, (यदि कुछ ज्ञान रखता हो) जिसे पवित्र कुर्आन ने स्वयं इस की पुष्टि करते हुए कई स्थान पर खुला चैलेंज दिया है, कि यदि तुम्हारा ख़याल यह हो कि यह कुर्आन अल्लाह की ओर से अवतरित किया हुआ नहीं है, बल्कि किसी बन्दे (मुह़म्मद) का स्वयं, बनाया हुआ कलाम है, तो तुम इसकी एक छोटी सी सूरः के समान सूरः बना कर

लाओ; तो मान लें, कि तुम अपने ख़याल में सही़ और सच्चे हो, लेकिन ऐसा करना तुम्हारे बस में नहीं!

सूरः बक़रः आयत नं० 23–24, व सूरः यूनुस आयत नं० 37–38 की आयतों में क़ुर्आन के मुख़ालिफ़ीन को न केवल चैलेंज दिया गया है बल्कि भरपूर यक़ीन के साथ पहले ही यह एलान कर दिया गया कि मुख़ालिफ़ीन (विरोधी) अपनी पूरी क्षमता (सलाहियत) का प्रयोग करते हुए, तमाम अपने मदद्गारों को भी साथ ले लें, बल्कि पूरी इन्सानी और जिन्न बिरादरी एक साथ मिलकर भी कोशिश कर ले तब भी वह नाकाम ही रहेंगे। पवित्र क़ुर्आन जैसी एक सूरः भी बना कर, क़ियामत तक, नहीं ला सकते!

पवित्र क़ुर्आन संशोधन से पाक है

पवित्र क़ुर्आन पर हमेशा अल्लाह तआ़ला की निगरानी (संरक्षता) का हाथ रहा है इस लिए कि यह केवल मुसलमानों के लिए ही नहीं बल्कि तमाम इन्सानों के लिए नाज़िल किया गया है, जैसा कि स्पष्ट है कि पिछले तमाम ग्रन्थों में से कोई भी ग्रन्थ ऐसा नहीं है जो संशोधन से पाक हो, हर ग्रन्थ में उसके अनुयायियों ने ही बढ़ा घटा दिया यहाँ तक कि अब कोई भी ग्रन्थ, पूरे विश्व में, अपने अस्ली रूप में मौजूद नहीं।

इस प्रकार क़ुर्आन जब से नाज़िल होना शुरू हुआ उसी समय से क़ुर्आन को याद करने और लिखने के साथ इस के उच्चारण को सही अदा करने और इसकी लिपि के सुरक्षा का काम बराबर होता रहा और शुरु से हर ज़माने में लाखों लोग याद करते रहे, यहाँ तक कि आज भी केवल हिन्दुस्तान में पूरा क़ुर्आन याद करने वालों की संख्या लाखों में है जो हर साल रमज़ान शरीफ़ में सुनाते हैं।

इस तरह़ क़ुर्आन एक ऐसा ग्रन्थ है जो चौदह सौ साल गुज़रने के बाद भी पूरी तरह सुरक्षित और पाक है, जैसा कि इतिहास गवाह है और आइन्दा भी कोई इसमें अपनी राय को शामिल नहीं कर सकता है, अतः इसमें किसी भी प्रकार की तब्दीली न पहले कभी हुई, और न ही आइन्दा हो सकती है। इसलिए कि इसके सुरक्षा की ज़िम्मेदारी स्वयं अल्लाह तआ़ला ने ली है। जिसे अल्लाह तआ़ला ने सूरः हिज्र आयत नं० (9) में और सूरः ह़ामीम सज्दः आयत नं० (42) में विस्तारपूर्वक जिक्र किया है।

पवित्र क़ुर्आन की विशेषता, श्रेष्ठता, इसका आदर व सम्मान केवल अल्लाह के इन शब्दों से होता है जिसे स्वयं क़ुर्आन ने सूरः ह़श्र में उदाहरण के ज़रिये स्पष्ट किया है। "कि यदि हम क़ुर्आन को किसी पहाड़ पर नाज़िल करते तो वह भी इसके डर से ज़र्रा-ज़र्रा हो जाता"।

क़ुर्आन का संक्षिप्त परिचय

'क़ुर्आन', रह़मान व रह़ीम (महा दयावान, अतिकृपाशील), की ओर से ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) पर नाज़िल (अवतरित) होने वाली किताब (ग्रन्थ) का नाम है, जिस समय ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की आयु उन्तालीस साल साढ़े तीन माह की थी उसी समय 17 रमज़ान 610 ई० को पहली वह़्य ''इक़रा बिस्मि....नाज़िल हुई। फिर पूरा क़ुर्आन 23 साल तक अर्थात सफ़र 11 हिजरी तक नाज़िल होता रहा,

नाज़िल होने के बाद आप (सल्ल०) १३ वर्ष मक्के में दीन की दअ़वत का काम करते रहे, फिर अल्लाह के आदेश से हिजूरत (देश त्याग) कर के मदीना चले आए, तो जो सूरतें मक्के में क़याम के दौरान नाज़िल हुई उन्हें मक्की कहा जाता है और जो सूरते मदीने में क़याम के दौरान नाज़िल हुई उन्हें मदनी कहा जाता है।

सूरः- पूरा कुर्आन एक लगातार लेख नहीं है बल्कि यह एक सौ चौदह भागों में बटा हुआ है, जो अध्याय के सामान है, जिसे सूरः कहा जाता है।

आयत- सूरः के टुकड़ों और वाक्यों को 'आयत' कहा जाता है।

कुर्आन या 'वह्य' के नाज़िल होने के तरीक़े

अल्लाह तआ़ला अपने रसूलों पर जो किताबें नाज़िल करता है उस के विभिन्न तरीक़े होते हैं, जिसमें से कुर्आन शुरु के चार तरीक़ों पर नाज़िल हुआ।

1- कभी तो फरिश्ता वह्य लेकर आता और एक आवाज़ घंटी जैसी मालूम होती।

2- कभी फरिश्ता इन्सानी रूप अपनाये बिना आ कर रसूलुल्लाह (सल्ल०) के दिल पर आवाज़ के साथ वह्य करता।

3- कभी फ़रिश्ता इन्सानी रूप में आ कर बात चीत करता।

4- अल्लाह ने जागते में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से बात की जैसे शबे मेराज में।

5- अल्लाह सपने की हालत में कभी बात करता हैं।

6- कभी-कभी फ़रिश्ता सपने की हालत में बात करता है।

कुर्आन लिखने का तरीक़ा

जिस वक़्त कुर्आन उतरता था, उसी समय याद करके लिख भी लिया जाता था, जिस में से कुछ मुख्य लिखने वाले सहाबा के नाम इस तरह हैं।

1- हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़(रज़ि०) 2- हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि०) 3- हज़रत उस्माने ग़नी (रज़ि०) 4- हज़रत अ़ली (रज़ि०) 5- हज़रत ज़ैद बिन साबित (रज़ि०) 6- हज़रत उबई बिन कअ़ब (रज़ि०) 7- हज़रत ख़ालिद बिन सईद बिन आ़स (रज़ि०) 8- हज़रत हन्ज़ला बिन रबीउलअसदी (रज़ि०) 9- हज़रत ज़ुबैर बिन अव्वाम (रज़ि०) 10- हज़रत मुआ़विया बिन अ़बी सुफ़्यान (रज़ि०) 11- हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सअ़द (रज़ि०) 12- हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन रवाहा़ (रज़ि०) आदि जैसे बहुत से सहा़बा लिखने के लिए नियुक्त थे।

कुर्आन याद करने का तरीक़ा

कुर्आन जैसे उतरता था वैसे ही हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) सहा़बा को याद भी करा देते थे, जिन

में मुख्य याद करने वाले सहाबा के नाम इस तरह है।

1- हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) 2- हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि०) 3- हज़रत उस्माने ग़नी (रज़ि०) 4- हज़रत अली (रज़ि०) 5- हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) 6- हज़रत इब्ने मसऊद (रज़ि०) 7- हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) 8- हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर (रज़ि०) 9- हज़रत हुज़ैफ़ा (रज़ि०) 10- हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि०) 11- हज़रत आइशा सिद्दीक़ः (रज़ि०) 12- हज़रत उम्मे सलिमः (रज़ि०) 13- हज़रत हफ़्सा (रज़ि०) 14-हज़रत उम्मे सल्मः (रज़ि०) आदि जैसे बहुत से सहाबा सहाबियात पूरे क़ुर्आन को याद कर लेते थे।

क़ुर्आन के शब्दों का उच्चारण

क़ुर्आन जिस तरह़ उतरता था ठीक उसी तरह़ उच्चारण के साथ ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) सिखा भी देते थे, जिन में से मुख्य सह़ाबा यह हैं।

1- ह़ज़रत उस्मान बिन अफ़्फ़ान (रज़ि०) 2- ह़ज़रत अ़ली बिन अबी तालिब (रज़ि०) 3- ह़ज़रत उबई बिन कअ़ब (रज़ि०) 4- ह़ज़रत ज़ैद बिन साबित (रज़ि०) 5- ह़ज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) 6- ह़ज़रत अबूदर्दा (रज़ि०) 7- ह़ज़रत अबू मूसा अश्अ़री (रज़ि०) 8- ह़ज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि०) आदि ह़ज़रात उच्चारण के माहिर थे।

सह़ाबा में सात क़िस्में थीं- जिसमें (1) ह़ज़रत उ़स्मान बिन अफ़्फ़ान (रज़ि०) (2) ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) बिन अबी तालिब (3) ह़ज़रत उबई बिन कअ़ब (रज़ि०) (4) ह़ज़रत ज़ैद (रज़ि०) बिन साबित (5) ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह (रज़ि०) बिन मसऊद (6) ह़ज़रत अबूदर्दा (रज़ि०) (7) ह़ज़रत अबू मूसा अशअ़री (रज़ि०)

क़ुर्आन के व्याख्याकार सह़ाबा

जिस तरह़ याद करने और लिखने, और उच्चारण करने का प्रबन्ध था, उसी तरह़ व्याख्या का भी प्रबन्ध था कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) हर आयतों की व्याख्या भी करके बता देते थे, जिसे यह मुख्य सह़ाबा लिख लेते थे जैसे- (1) ह़ज़रत अबू बक्र (रज़ि०) (2) ह़ज़रत उमर (रज़ि०) (3) ह़ज़रत उस्माने ग़नी (रज़ि०) (4)- ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) (5) ह़ज़रत इब्ने मसअूद (रज़ि०) (6) ह़ज़रत उबई बिन कअ़ब (रज़ि०) (7) ह़ज़रत ज़ैद बिन साबित (रज़ि०) (8) ह़ज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि०) (9) ह़ज़रत अनस बिन मालिक (रज़ि०) आदि ह़ज़रात व्याख्याकार थे।

क़ुर्आन, अर्थात वह्य की लिपि

अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं, ''हमने पैग़म्बरों में से किसी को नहीं भेजा मगर उस की क़ौम की ज़बान में, ताकि उनको अच्छी तरह़ समझा दे'', इस तरह़ क़ुर्आन की लिपि भी अ़रबी है और भाषा भी, ताकि किसी तरह़ का सन्देह न रहे।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के बाद

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर चूँकि कुर्आन उतरता और उसे वह याद करवा देते और लिखवा देते, लेकिन आप (सल्ल०) की वफ़ात के समय तक इस तरह दो दाफ़्तियों के बीच में इकट्ठा नहीं था, अलग-अलग चीज़ों, जैसे चमड़े, पत्ते, आदि पर सूरते लिखी हुई थीं और अक्सर सहाबा को पूरा कुर्आन याद होता था।

सबसे पहले कुर्आन को इस तरह एक जगह जमा करने का खयाल हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि०) के दिल में पैदा हुआ, जबकि उस समय खालीफ़ा हज़रत सिद्दीक़े अकबर (रज़ि०) थे, हज़रत फ़ारूक़े आज़म ने उन से अर्ज़ किया कि कुर्आन के हाफ़िज़ शहीद होते जा रहे हैं और बहुत से 'यमामा' की जंग में शहीद हो गये, इस लिए कुर्आन मजीद के जमा करने का प्रबन्ध किया जाय, तो हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) ने बहुत ग़ौर करने के बाद, हज़रत ज़ैद बिन साबित (रज़ि०) को जमा करने का हुक्म दिया। चूँकि हर साल रमज़ान में नबी करीम (सल्ल०) हज़रत जिब्रईल (अलै०) को सुनाते थे, और इन्तिक़ाल के साल आप (सल्ल०) ने दो बार सुनाया था, जिसमें हज़रत ज़ैद बिन साबित (रज़ि०) शरीक थे।

इस तरह हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) ने पहली बार पूरा कुर्आन जमा करवा दिया, फिर हज़रत फ़ारूक़े आज़म की खिलाफ़त के ज़माने में उस के पढ़ने पढ़ाने की व्यवस्था हुई और सहाबा को दूर-दूर तक सिखाने के लिए भेजा गया।

फिर हज़रत उस्माने ग़नी (रज़ि०) की ख़िलाफ़त के ज़माने में सात नक़लें (प्रतियाँ) करा कर दूर-दूर शहरों में भेज दी गईं। मगर कुछ उच्चारण में मतभेद होने की वजह से केवल एक किरअत (तरीक़े) पर अर्थात मक्का वाली भाषा में ही पढ़ने का हुक्म दिया गया, जिसे अब तक चाहे किसी भी देश का कुर्आन हो उसी तरह लिखा और पढ़ा जाता है, उसमें एक अक्षर की भी तब्दीली नहीं हो सकी।

सूरतों के नाम व नुक़्ते-

सहाबा (रज़ि०) के ज़माने में कुर्आन की सूरतों के नाम, पारों के निशान और नुक्ते (बिन्दु) आदि न थे, बाद में यह 'अब्दुल मलिक' के ज़माने में अबुल अस्वद या हज़रत हसन बसरी (रह०) ने इस में नुक़्ते लगवाए। सूरः और पारों के नाम भी लिख दिए, जिससे पढ़ने में आसानी हो गयी।

इस तरह आज भी उस समय का कुर्आन एक कुस्तुन्तुनिया में, एक तिल्मिस्तान में, एक जामे अज़्हर के कुतुबख़ाना (लाइब्रेरी) मिस्र में, एक बहरैन लाइब्रेरी में, एक 'क़ाहिरा' में, एक 'ताशकंद' में, एक 'इस्तम्बोल' में मौजूद है। जिसमें से 'ताशकंद' और 'इस्तम्बोल' के कुर्आन की फोटो इस तरह हैः-

مصحف عثمانی محفوظ تاشقند — بسم اللہ الرحمٰن الرحیم — مصحف عثمانی محفوظ استنبول

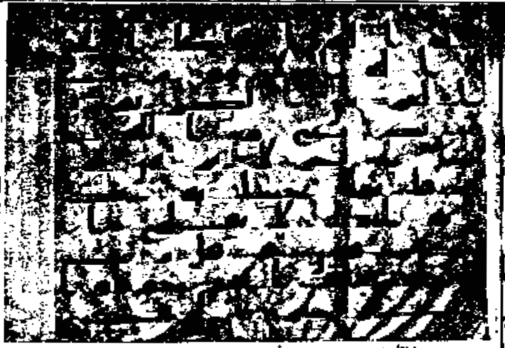

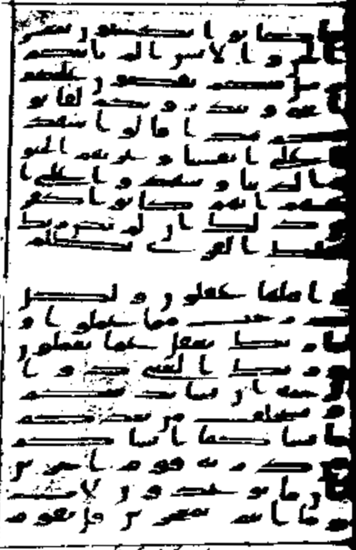

حضرت عثمانؓ کے دور کا ایک نسخہ جو استنبول کے عجائب گھر توپ کاپی میں
بہت قیمتی ہے اسکی بارہ میں عام خیال یہ ہے کہ یہ نسخہ مصحف عثمانی ہے
یعنی ان نسخوں میں سے ہے جسکو حضرت عثمانؓ نے نقل کرا کے بلاد اسلام میں
بھیجا تھا، اسی نسخہ کے ایک صفحہ کا عکس آپکے سامنے ہے یہ بال سے رفیق
محترم مولانا عتیق احمد بھوپالی کے توسط سے ہمیں موصول ہوا ہم ان کی اس
مہربانی کی شکر گذار ہیں

ابن مقلہ متوفی ۳۲۸ کی مستند یادگار

عہد تابعین کے قرآن کا ایک عکس

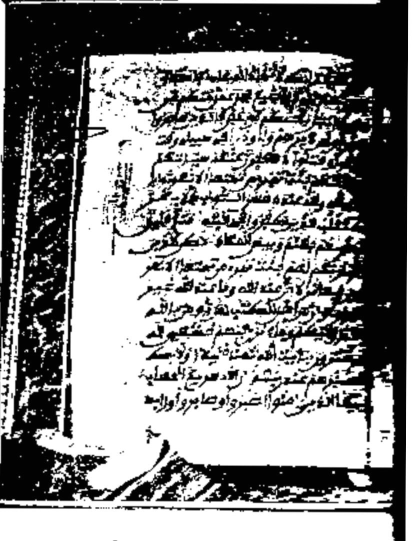

یہ نسخہ عہد تابعین کا ایک مبارک یادگار
ہے فی الحال یہ کتب خانہ دار العلوم
دیو بند میں محفوظ ہے

ماخوذ از ماہنامہ نظام کانپور

अ़रबी से दूसरी भाषा में क़ुर्आन का अनुवाद

हमारे मुल्क में सबसे पहले फारसी में क़ुर्आन का अनुवाद- ह़ज़रत शाह वली-उल्लाह साह़ब देहलवी (रह़०) ने अ़रबी से फ़ारसी में 10 जिलूहिज्ज 1150 हिज्री को शुरु किया और 1151 हिज्री में मुकम्मल किया। फिर उनके बेटे ह़ज़रत शाह अब्दुल् क़ादिर (रह़०) ने 1204 हिज्री में उर्दू भाषा में अनुवाद किया, उस के बाद से आज तक विभिन्न अनुवाद अनेक भाषाओं में होते चले आ रहे हैं।

पवित्र क़ुर्आन का विषय

पवित्र क़ुर्आन इन्सानी ज़िन्दग़ी के हर शोबे (क्षेत्र) में रहनुमाई करता है, जो इन्सान की ज़िन्दग़ी गुज़ारने का एक मात्र विधान है। जैसे अल्लाह पर ईमान या आस्था, ताकि मानव भ्रष्ट अक़ीदे से पाक हो कर एक अल्लाह पर अपनी आस्था जमा ले, अर्थात तौह़ीद (अद्वैतवाद) का विश्वास। उसकी क़ुद्रत व ज्ञान का उल्लेख पैग़म्बर की रिसालत, क़ियामत व अ़िबादात से लेकर अच्छे मामलात, अच्छे अख़्लाक़, सदाचार, व अच्छे आचरण के बाद, ह़लाल व ह़राम के साथ अच्छे कामों और बुरे कामों का अन्जाम तथा इबरतनाक क़िस्से और अच्छे कामों पर उभारने, बुरे कामों से घृणा दिलाने का मुकम्मल बयान है। जिसे अल्लाह तआ़ला ने स्वयं पवित्र क़ुर्आन में इस तरह़ फ़रमाया है;

وَنَزَّلْنَا عَلَيْكَ الْكِتٰبَ تِبْيَانًا لِّكُلِّ شَيْءٍ

"और हमने तुझ पर ऐसी किताब उतारी जिसमें हर चीज़ का बयान है।" **(सूरः नह़्ल आयत नं० 89)**

तफ़्सीर फ़ारुक़ी लिखने की वजह और अपनी बात

तमाम तअ़रीफ़ें उस अल्लाह के लिए हैं जिसने एक कमज़ोर बन्दे को अपने कलाम के ख़िद्मत की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाई, जितना शुक्र अदा किया जाए कम है। अल्ह़म्दुलिल्लाह दारुल् उलूम नद्वतुल् उ़ल्मा से मैंने 1993 ई० में फ़ज़ीलत मुकम्मल की, तअ़लीम के दौरान मेरा लिखने का कोई मिज़ाज न था, लेकिन "ह़ज़रत मौलाना सय्यद अबुल् ह़सन अ़ली ह़सनी नदवी" (रह़०) की मजलिस में शिर्कत की वजह से क़ुर्आन व दअ़वत की अहमियत दिल में बैठती रही, जिसमें एक मर्तबः मौलाना ने फ़रमाया "कि हिन्दी में बहुत काम की ज़रुरत है और अगर कोई ऐसा आदमी हो जो हिन्दू भाईयों की किताबों और संस्कृत से वाक़िफ़ हो तो उससे कह दिया जाए कि तुम बस एक जगह बैठे-बैठे काम करो और उस के लिए ख़ादिम भी दे दिया जाए जो उस को किताबें भी उठा-उठा कर देता रहे और वह सिर्फ़ रिसर्च का काम करे"।

इन शब्दों से मेरे ज़ेहन में हिन्दी व संस्कृत के काम की अहमियत बैठ गई इसलिए कि मैं थोड़ा बहुत इस भाषा से वाक़िफ़ था, उसी वक़्त मैंने इरादा कर लिया कि इन्शाअल्लाह मैं कोशिश करुँगा।

ग़ैर मुस्लिमों में दअ़वत-

सन् 1992 ई० में जब बाबरी मस्जिद शहीद हुई तो ग़ैर मुस्लिमों को दअ़वत न देने का नतीजा

भी ज़ेहन में आया कि अगर हम हिन्दू भाईयों को इस्लाम और मस्जिद की अहमियत को समझाए होते तो शायद आज यह दिन न आता, उस वक़्त मैं नदवा में तब्लीग़ी जमाअ़त के तलूबा का ज़िम्मेदार था और जमाअ़त के कामों में पूरा वक़्त देता था।

सन् 1993 ई० में मेरे वालिद ने एक किताब मुझे पढ़ने के लिए दी और कहा देखो! यह कैसी किताब है, जिस का नाम "अगर अब भी न जागे तो" था, उसको पढ़ने के बाद ग़ैर मुस्लिमों को दअ़वत देने की तरफ़ ज़ेहन मुतवज्जेह हुआ, लेकिन इस किताब में शरअ़ी एतिबार से कुछ इश्काल भी था जिसकी वजह से रामपुर का सफ़र 'मौलाना सज्जाद नोमानी साहब' के साथ हुआ, उसके बाद मौलाना सज्जाद नोमानी साहब के साथ मैं और 'शम्स नवेद उस्मानी साहब' दिल्ली निज़ामुद्दीन मर्कज़ भी गये, दिल्ली मर्कज़ में मौलाना सज्जाद नोमानी और शम्स नवेद उस्मानी साहब दूसरी मन्ज़िल पर मौलाना इनूआ़मुल ह़सन (रह़०) के कमरे में मश्वरा के लिए गये और मैं मौलाना इब्राहीम साह़ब के पास नीचे कमरे में ही बैठा रहा, जिस का ख़ुलासा यह है कि मौलाना "इनूआ़मुल ह़सन साह़ब ह़ज़रत जी रह़०" (अमीर जमाअ़त) दिल्ली मकर्ज़ ने यह राय दी कि "यह काम अच्छा है, बस एक मकर्ज़ से करना मुनासिब नहीं है अलग से किया जा सकता है"। इस राय के बाद मेरा भी इरादा ग़ैर मुस्लिमों में दअ़वत देने का मज़बूत हो गया। फिर लखनऊ में आकर अपने तरीक़े से लोगों को समझाने की कोशिश शुरु हो गयी।

किताब लिखने की शुरुआ़त-

एक बार मैंने एक अहले वतन भाई 'विक्रम कुमार साह़ब' को इस्लाम को समझाने की कोशिश की तो उन्होंने क़ुर्आन के अनुसार ज़िन्दगी गुज़ारने का फ़ैसला कर लिया, मैंने उन्हें नमाज़ की किताब दी कि अब आप नमाज़ सीख कर पढ़ें, लेकिन दूसरे ही दिन आकर उन्होंने पूछा कि तस्मीअ़, तस्बीह और सूरः फ़ातिह़ा क्या चीज़ है? इस का जवाब तो मैंने दे दिया, लेकिन बाद में सोचता रहा कि वाक़ई यह बात तो सही है कि नये आदमी को समझने में दुश्वारी होगी।

मैंने एक साह़ब को बाज़ार "अमीनाबाद" भेजकर कहा, हिन्दी में जितने लेखकों की नमाज़ पर किताब मिलती हो ले आओ, वह कई किताबें लेकर आए लेकिन सब में लगभग उसी तरह़ लिखा हुआ था, तो मैंने नमाज़ की कुछ बातें अपने से लिखकर 'नवमुस्लिम विक्रम साह़ब' को दे दी और फिर धीरे-धीरे नमाज़ से मुतअ़ल्लिक़ चीज़ें 1994 ई० में लिख डालीं।

इस के बाद एक दिन इस का ज़िक्र मैंने "डा० ग़ौस क़ुरैशी साह़ब" से किया, तो उन्होंने कहा इसको मेरी तरफ़ से छपवा दीजिए और लोगों को भी काम आएगी, जबकि उस वक़्त तक मैं छपाई (प्रेस) की दुनिया से नावाक़िफ़ था, मुझे कुछ नहीं मालूम था कैसे किताब छपती है।

इस का ज़िक्र मैंने "ह़ज़रत मौलाना सय्यद अबुल् ह़सन अ़ली ह़सनी नदवी" (रह़०) से किया तो आप ने सराहा और उस छोटे से रिसाले पर हिम्मत दिलाने के लिए मुक़द्दिमा भी लिखा।

इस तरह़ 10–05–1995 ई० में पहली मर्तबः 'आओ नमाज़ की ओर' के नाम से किताब छप गई।

नदवा में मश्ग़ूलियत-

इसी साल "ह़ज़रत मौलाना सय्यद मुह़म्मद राबेअ़ ह़सनी नदवी दामतबरकातहुम" ने मुझे दारुल्

उलूम नद्वतुल उ़लूमा बुलवा भेजा, मैं नदवा आया तो मौलाना ने कहा, 'मजलिस तह़क़ीक़ात' दारुल् उलूम नद्वतुल उ़लूमा में दरख़्वास्त दे दीजिए और कल से आप मजलिस तह़क़ीक़ात, दारुल् उलूम नद्वतुल उ़लूमा, लखनऊ में अपना वक़्त दीजिए।

उसी वक़्त मैंने मेहमान ख़ाना में दरख़्वास्त लिख कर दे दी और दूसरे दिन 22 जून 1995 ई० से मजलिस तह़क़ीक़ात में बहैसियत रफ़ीक़ इल्मी जाना शुरु कर दिया और कुछ दिन के बाद मैंने मौलाना अ़ब्दुल्लाह ह़सनी (रह़०) से कहा कि मैं बिला मुआ़वज़ा ही दीनी ख़िद्मत करना चाहता हूँ। इस पर मौलाना ने कहा अभी जल्दी न करो बाद में देखा जाएगा। इस दौरान कई नव मुस्लिम आए और उनको दो चार किताबें दे देता, लेकिन वह कहते कु़र्आन दीजिए।

कु़र्आन मजीद का तर्जुमः व तफ़्सीर लिखने की वजह–

एक बार मैंने एक नव मुस्लिम को कु़र्आन का तर्जुमः दिया तो वह कई दिन के बाद वापस आए, मैंने पूछा कि क्या आप ने कु़र्आन पढ़ लिया?

उन्होंने कहा, कु़र्आन में तो कहा गया है कि "जहाँ पाओ काफ़िरों को क़त्ल करो" यह बात मेरी समझ में नहीं आई और मैंने बन्द कर के रख दिया, मैंने उन्हें समझाने की कोशिश की और मह़सूस किया कि ऐसा तर्जुमः होना चाहिए जिसमें नये लोगों को समझने में इस तरह़ की कोई दुश्वारी न हो।

बाज़ नव मुस्लिमों ने इस्तिलाह़ी शब्दों को कहा, यह समझ में नहीं आ रहे हैं। जैसे मेम्बर, मेहराब आदि। इन शब्दों को आ़म मुसलमान ख़ूब समझते हैं, लेकिन पढ़े-लिखे ग़ैर मुस्लिम इसे बिल्कुल नहीं समझते।

इसी तरह़ यह बात भी सामने आई कि बाज़ शब्द बहुत कठिन तर्जुमों में इस्तेमाल हुए हैं। जैसे-निस्पृह आदि शब्द तो यह मुसलमानों और कम पढ़े-लिखे लोगों के लिए मुश्किल होते हैं।

सूरः फ़ातिह़ा की तफ़्सीर–

ऊपर की बातों को सामने रखते हुए मैंने इरादा किया कि पहले नमाज़ में पढ़ी जाने वाली सूरः फ़ातिह़ा का तर्जुमः व तफ़्सीर करुँ तो 1996 ई० में इसका ज़िक्र मैंने "मौलाना सय्यद अबुल् ह़सन अ़ली ह़सनी नदवी" (रह़०) से किया और उन्होंने इसे बहुत सराहा, ह़िम्मत दिलाई और मुकम्मल होने के बाद मुक़द्दिमा भी लिखा, जो 02–11–1997 ई० में पहली बार सूरः फ़ातिह़ा की तफ़्सीर "पवित्र कु़र्आन का सन्देश" नाम से प्रकाशित हुई, फिर 1998 ई० में यही सूरः 'सूरः फ़ातिह़ा की तफ़्सीर' के नाम से प्रकाशित हुई।

कु़र्आन का पैग़ाम (अनुवाद) की शुरुआ़त–

आसान तर्जुमः की ज़रुरत के पेशेनज़र मैंने "ह़ज़रत मौलाना सय्यद अबुल ह़सन अ़ली ह़सनी नदवी" (रह़०) से इस का ज़िक्र किया कि अगर पूरे कु़र्आन का तर्जुमः आप की तरफ़ से हो जाए और मैं हिन्दी में बदल दूँ तो बेहतर रहेगा, इस पर ह़ज़रत मौलाना ने फ़रमाया, "यह बहुत नाज़ुक काम है, इसके लिए यकसूई और वक़्त दरकार है"।

इसी तरह़ मैंने "ह़ज़रत मौलाना सय्यद मुह़म्मद राबेअ़ ह़सनी नदवी दामत बरकातहुम" से कहा, आपने भी इसी तरह़ के कुछ शब्द फ़रमाये, फिर मैंने "ह़ज़रत मौलाना अ़ब्दुल्लाह ह़सनी नदवी" (रह़०) से ज़िक्र

किया तो उन्होंने भी वक़्त का उ़ज्र फ़रमाया, लेकिन हिम्मत दिलाई कि यह काम किया जाना चाहिए।

इस तरह़ मैंने कई बड़े उ़लमा से ज़िक्र किया, सभी ने उ़ज्र किया। मुझे भी इस नाज़ुक काम को करने की हिम्मत नहीं हो रही थी कि कोई इस का तर्जुमः कर दे तो मैं उसका हिन्दीकरण कर दूँ।

कभी-कभी जब मैं कई तर्जुमे एक साथ देखता तो हिम्मत और न होती कि क्या करुँ, ख़ैर एक ख़ुसूसी ख़्वाब की रौशनी में दिल को इत्मिनान हुआ और तर्जुमे का काम अल्लाह तआला के भरोसे पर शुरु कर दिया। जिस में मेरी वालिदा की ख़ुसूसी दुआ़ और उन का क़ुर्आन से ख़ुसूसी तअ़ल्लुक़ यानी इस वक़्त उनकी उ़म्र 78 साल की हैं, लेकिन इस साल भी रमज़ान में हर रोज़ कम से कम 26 या 27 पारे पढ़ने का मामूल रहा है यानी पूरे 24 घण्टे में कम से कम 20 घण्टे तो तिलावत का एहतिमाम रहता ही है और इससे पहले तो इस से ज़्यादह का रहता था, उन्होंने और मेरी बहनों ने ख़ुसूसी तआ़उन किया कि मैं तर्जुमा बोलता था और घर की औ़रतें लिखती रहतीं थीं और कभी-कभी कुछ तल्बा भी लिखने में शामिल हो जाते। इस तरह़ क़ुर्आन के मुकम्मल तर्जुमानी का काम सन् 2004 ई० में पूरा हो गया और सन् 2004 ई० में पहली बार "क़ुर्आन का पैग़ाम" नाम से मुकम्मल तर्जुमः क़ुर्आन का पैग़ाम (क़ुर्आन मजीद का आसान अनुवाद) के नाम से प्रकाशित हुआ।

तफ़्सीर फ़ारुक़ी की शुरुआ़त-

तफ़्सीर की शुरुआ़त भी इसी तरह़ हुई कि मैंने एक नव मुस्लिम भाई को कुछ किताबें दी तो वह चन्द दिन में पढ़ डालीं और फिर मैंने क़ुर्आन का तर्जुमः दिया तो पढ़ने के बाद फिर आए और कहा मैंने पूरा क़ुर्आन पढ़ डाला, अब क़ुर्आन की व्याख्या पढ़ने के लिए दीजिए।

इस तरह़ इरादा तो पहले ही से था लेकिन इन बातों की वजह से कुछ जल्दी तफ़्सीर के काम की शुरुआ़त कर दी गई यानी अस्ल तो क़ुर्आन के काम की शुरुआत 1996 ई० में सूरः फ़ातिह़ा से हुई थी, लेकिन तफ़्सीर का काम सूरः बक़रः से बाक़ायदा 2004 ई० से शुरु हुआ और नवम्बर 2014 ई० में 'अल्ह़म्दु लिल्लाह' पाँच भागों में तर्जुमानी की तौफ़ीक़ मिली, उसी को बाद में सात भागों में कर के छापने का शर्फ़ ह़ासिल हुआ।

यह अल्लाह तआ़ला का शुक्र है कि उसने मुझे 18 साल से क़ुर्आन की ख़िद्मत के लिए ख़ुसूसी तौर से मशग़ूल रखा। जिस के साथ दारुल् उलूम नदवतुल् उ़ल्मा की ज़िम्मेदारियाँ और 'जामिया दारे अरक़म' फ़तेह़पुर व जामियादारुत्तौह़ीद लखनऊ और मकातिब व ग़ैर मुस्लिमों में दअ़वती काम के साथ नव मुस्लिमों की तर्बियती ज़िम्मेदारियाँ भी टूटे फूटे अन्दाज़ में अन्जाम पाती रहीं, इन ज़िम्मेदारियों के नतीजे में जो तजुर्बे हुए वह तफ़्सीर के कामों में मदद्ग़ार ही रहे।

नोट- सबसे पहले सूरः फ़ातिह़ा की तफ़्सीर 1997 ई० में "पवित्र क़ुर्आन" के नाम से प्रकाशित हुई, फिर तीस्वें पारे के अलग-अलग सूरतों की तफ़्सीर, फिर तीस्वें पारे की मुकम्मल तफ़्सीर 1999 ई० में "पवित्र क़ुर्आन" के नाम से प्रकाशित हुई। इसी तरह़ पूरे क़ुर्आन का अनुवाद 2004 ई० में "क़ुर्आन का पैग़ाम" नाम से प्रकाशित हुआ। फिर 2004 ई० से 2015 ई० तक पाँच भागों में "तफ़्सीर फ़ारुक़ी"

के नाम से अलग-अलग भागों में तफ़्सीर प्रकाशित होती रही और यह तफ़्सीर का आख़िरी भाग 4 नवम्बर 2014 ई० में प्रकाशित हुआ अर्थात पाँच भागों में मुकम्मल तफ़्सीर प्रकाशित होती रही, लेकिन कुछ दोस्तों का मश्वरा हुआ कि इसे सात भाग में कर दिया जाए तो पढ़ने वालों को आसानी होगी। इस तरह़ यह सात भागों में 2016 ई० से प्रकाशित होने जा रही है।

"तफ़्सीर फ़ारुक़ी" व "क़ुर्आन का पैग़ाम" नाम-

सबसे पहले जब सूरः फ़ातिह़ा प्रकाशित हुई तो उसका नाम "पवित्र क़ुर्आन" रखा गया और फिर तीस्वें पारे का भी नाम "पवित्र क़ुर्आन" रखा। एक मर्तबः मैं एक किताब की दुकान पर किताब लेने गया, वहीं एक साह़ब 'पवित्र क़ुर्आन' नाम देखकर 'पवित्र' शब्द पर नाराज़ हो रहे थे कि मौलाना को क्या हो गया है कि इन्होंने क़ुर्आन के साथ पवित्र (इतना ग़न्दा) शब्द जोड़ दिया और क़ुर्आन की बेअदबी की।

मैंने अपना तआ़रुर्फ़ बताए बिना उनसे बताया कि 'पवित्र' के माने तो 'पाक' होते हैं इसमें अपमान की क्या बात हैं, लेकिन वह किसी तरह़ नहीं समझे।

इस के बाद जब पूरे क़ुर्आन का अनुवाद हो गया तो इसका नाम 'पवित्र क़ुर्आन' के बजाए "क़ुर्आन का पैग़ाम" के नाम से प्रकाशित किया। यह नाम इसलिए रखा कि ह़क़ीक़त में तो क़ुर्आन का तर्जुमः या अनुवाद कोई कर ही नहीं सकता मगर इसके पैग़ाम की तर्जुमानी हो सकती है, इसलिए इसका नाम "क़ुर्आन का पैग़ाम" रख दिया गया।

"तफ़्सीर फ़ारुक़ी" नाम-

तर्जुमे का काम पूरा हो गया तो अल्लाह तआ़ला की तौफ़ीक़ से तफ़्सीर लिखने का काम शुरु किया और जब पहला भाग मुकम्मल हुआ तो सोचा कि इस का नाम "क़ुर्आन का पैग़ाम" ही रखूँ, लेकिन कुछ मुख़्लिस दोस्तों ने जिस में ख़ासतौर से जनाब जावेद अशरफ़ नदवी (मदनी) क़ाबिले ज़िक्र हैं जिन्होंने मश्वरा दिया कि तफ़्सीर का कोई अलग नाम होना चाहिए जिससे लोगों को तर्जुमः और तफ़्सीर मँगाने में आसानी हो।

एक साह़ब ने मश्वरा दिया कि आप का तअ़ल्लुक़ ह़ज़रत उ़मर फ़ारुक़ (रज़ि०) से है और मेरे इ़ल्म के मुताबिक़ तीन ख़ुलफ़-ए-राशिदीन के नाम पर उनकी तरफ़ निस्बत करके तफ़्सीरे हैं। जैसे-तफ़्सीर उ़स्मानी, तफ़्सीर अलवी, तफ़्सीर सिद्दीक़ी, लेकिन ह़ज़रत उ़मर फ़ारुक़ (रज़ि०) की निस्बत से कोई मशहूर तफ़्सीर नहीं है, इसलिए इस का नाम "तफ़्सीर फ़ारुक़ी" रख दीजिए। फिर मैंने कुछ असातिज़ा से भी मश्वरा किया तो सभी ने पसन्द किया। इस तरह़ इसका नाम "तफ़्सीर फ़ारुक़ी" रख दिया गया।

क़ुर्आन का पैग़ाम और तफ़्सीर फ़ारुक़ी की ख़ुसूसियात

सबसे पहले मैं अपने मालिक की ह़म्द (प्रशंसा) बयान करता हूँ जिसने अपने कलाम को मुझ नाचीज़ के ज़रिये लिखने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाई और वालिदा की ख़ुसूसी दुआ़, वरना कलाम (वाणी) इतना पाक और बुलन्द है कि यदि वह तौफ़ीक़ न दे, तो किसी की हिम्मत नहीं कि कोई कुछ लिख सके

फिर कुर्आन का तर्जुमः एवं तफ़्सीर का काम तो हो ही नहीं सकता, बस कुर्आन के माने की तर्जुमानी की जा सकती है, वैसे किसी भी भाषा का दूसरी भाषा में तर्जुमः आसान नहीं होता तो कुर्आन के माने का कैसे आसान होगा। इस लिए कोशिश की गई है कि यह तर्जुमानी कुर्आन के अरबी मफ्हूम से क़रीबतर हो।

कुर्आन का पैग़ाम (अनुवाद) की ख़ुसूसियत-

1- कुर्आन के अनुवाद में आसान से आसान शब्दों का प्रयोग किया गया है ताकि मुस्लिम और गैर मुस्लिम दोनों, एक साथ समझ सकें, अगर कहीं वह शब्द, जो मुसलमानों के यहाँ बहुत प्रयोग होते हैं लेकिन हिन्दू भाई जानते भी नहीं। जैसे रह़मत, मग्फ़िरत आदि तो ऐसे शब्दों की हिन्दी, कोष्ठक में कर दी गई है।

2- इसमें यह भी ध्यान रखा गया है कि जो कुर्आन के शब्द है और उनके स्थान पर दूसरे शब्द भी हैं जैसे- ज़ालिम= अत्याचारी, करीब=समीप, अ़ज़ाब=यातना आदि, तो इस अनुवाद में वही शब्द प्रयोग किये गये हैं जो कुर्आनी होने के साथ समाज में भी बोले जाते हों।

3- अनुवाद में यह भी कोशिश की गई है कि अनुवाद मूल अ़रबी से ज़्यादा से ज़्यादा क़रीब हो, कहीं-कहीं ज़रुरत के अनुसार कोष्ठक में व्याख्या कर दी गई है और उन शब्दों से भी बचने की कोशिश की गई है जो हमारे ज़माने से पहले उचित थे, मगर आज वही शब्द दूसरे अर्थों में प्रयोग होने लगे हैं।

4- अनुवाद में विशेष रूप से मूल अ़रबी कुर्आन, फिर अब तक जितने भी अनुवाद हिन्दी, उर्दू, अ़रबी, इंग्लिश में हुए हैं, सबसे फ़ायदा उठाया गया है।

तफ़्सीर फ़ारुक़ी की ख़ुसूसियात-

यह तफ़्सीर ख़ासतौर पर आ़म मुस्लिम व ग़ैर मुस्लिम लोगों के लिए तैयार की गई है। इसलिए ऐसे शब्द जो अ़वाम की समझ से बाहर हों नहीं लिखे गये और कोशिश इस तरह़ की गई है कि दर्स के तौर पर रोज़ाना एक-एक सबक़ पढ़ा जा सके। तफ़्सीर व तशरीह़ में मोअ़तबर उ़लम-ए-मोह़क़्क़िीन और सलफ़ व सालिह़ीन की तफ़्सीरों से ही फ़ायदा उठाया गया है ।

1- यह सूरः फ़ातिह़ा से लेकर मुकम्मल पाँच पारों की तफ़्सीर है।

2- यह पाँच पारों की तफ़्सीर मुस्लिम व ग़ैर मुस्लिम दोनों को सामने रखते हुए आम भाषा में लिखी गई है ताकि कम पढ़े लिखे लोग भी फ़ायदा उठा सकें।

3- तफ़्सीर में ह़दीस और मोअ़तबर (Authentic) उल़्मा की तफ़्सीरों से फ़ायदा उठाया गया है।

4- इस में रोज़ (प्रतिदिन) पढ़ने के ह़िसाब से लगभग दस-दस आयतों का तर्जुमः फिर हर आयत की अलग-अलग तफ़्सीर बयान की गई है।

5- इस में सबसे पहले पूरी सूरः का खुलासा (संक्षेप) और उसके विषय, फिर लगभग दस-दस आयतों का तर्जुमः उसके बाद हर आयत की अलग-अलग तफ़्सीर जिसमें सबसे पहले उसी आयत का शाने नुज़ूल (नाज़िल होने के वक़्त की ह़ालत) फिर उसी आयत से सम्बन्धित ह़दीस और मोअ़तबर उ़ल्मा की तफ़्सीर की रौशनी में तफ़्सीर, फिर मसायल, एह़काम और उसी आयत से सम्बन्धित नई साइंसी तह़क़ीक़ और ग़ैर मुस्लिमों की तरफ़ से होने वाले सवालों का बेहतर तरीक़े से जवाब के साथ उस

से मुतअ़ल्लिक़ फ़ज़ायल जो सही ह़दीसों से साबित है ज़िक्र किया गया है।

6- इसमें अक्सर आयतों का शाने नुज़ूल ज़िक्र किया गया है ताकि ग़ैर मुस्लिम भाईयों के लिए कुर्आन के समझने में आसानी हो, लेकिन शाने नुज़ूल ज़िक्र करने का यह मतलब नहीं कि वह आयत केवल उसी समय या उन्हीं लोगों के लिए है बल्कि जब भी कहीं उस तरह़ के ह़ालात हों तो वह आयत रहनुमाई करेगी। इसलिए कि कुर्आन क़ियामत तक हर ज़माने के तमाम इन्सानों के लिए है। किसी भी आयत के शाने नुज़ूल (कुर्आन के अवतरित होने का कारण) से यह न समझा जाए कि यह तो केवल उसी ज़माने के लिए है और अब हम से यह बात नहीं कही जा रही है।

अल्लाह तअ़ाला से दुआ़ है कि वह हमारे और हमारी नस्ल के लिए कुर्आन मजीद की तिलावत, ख़िद्मत और दअ़वत को मक़्सदे ज़िन्दग़ी बना दे और मौत तक इन्हीं मश्ग़ूलियात के लिए क़ुबूल फ़रमा कर हमारे तमाम मुह़सिनीन को अज्र अ़ज़ीम अ़ता फ़रमाए।

अब हम अपने मुश्फ़िक़ व मुरब्बी ह़ज़रत मौलाना सय्यद मुह़म्मद राबे ह़सनी नदवी मद्दज़िल्लहुलु अ़ाली के एह़सानमन्द हैं, जिन्होंने अपना क़ीमती समय देकर कहीं-कहीं पढ़वा कर सुना और जहाँ ज़रुरत मह़सूस हुई तस्ह़ीह़ फ़रमाई।

इसी तरह़ हम अज़ीज़ी जनाब तस्नीम अह़मद साह़ब जिन्होंने हर तरह़ का तआ़उन किया और जनाब ख़ालिद साह़ब नदवी व जनाब मुफ़्ती इर्शाद साह़ब नदवी जिन्होंने उ़लमा के सन्देश लिखवाने में खुसूसी तआ़उन फ़रमाया और जनाब इरफ़ान अह़मद साह़ब के जिन्होंने पूरी तफ़्सीर की कम्पोज़िंग दिल लगाकर एहतिमाम से किया और बहुत से उन लोगों के जिन्होंने इस के प्रूफ़ पढ़ने में और छपवाने में तआ़उन किया। जैसे- बिलाल अह़मद साह़ब, अ़ताउल्लाह सिद्दीक़ी साह़ब, नदीम अह़मद साह़ब, डा० राशिद रफ़ीअ साह़ब, जनाब अह़मद साह़ब, डा० नसीम अहमद ख़ाँ साह़ब, डा० ज़फ़र अकबर साह़ब, डा० मु० आसिफ़ साह़ब, मु० सिराज अह़मद साह़ब, डा० मुह़म्मद इमरान साह़ब, मुबारक हुसैन साह़ब और नोअ़मान साह़ब।

इसी तरह़ उन सभी मुह़सिनों के भी शुक्रगुज़ार हैं, जिन्होंने अपने मुफ़ीद मश्वरे से नवाज़ कर हिम्मत अफ़ज़ाई फ़रमाई। जैसे- जनाब क़ारी याक़ूब साह़ब क़ासमी, जनाब अ़ब्दुल ह़मीद साह़ब नदवी, जनाब महबूब अ़ालम साह़ब नदवी, जनाब ख़ालिद फ़ैसल साह़ब नदवी, जनाब अनीस अह़मद साह़ब नदवी। इसी तरह़ जनाब सिद्दीक़ साह़ब, अ़ब्दुल मजीद साह़ब, जनाब फ़रीद साह़ब, जनाब साजिद साह़ब, जनाब अह़मद साह़ब, जनाब फ़ैसल साह़ब, जनाब मुहतशिम साह़ब, जनाब ज़िया अ़ब्दुल्लाह साह़ब, जनाब सलमान साह़ब, जनाब मक्तूम साह़ब, जनाब मास्टर वाजिद अ़ली साह़ब, जनाब अबरार अह़मद साह़ब, जनाब अज़्हर साह़ब, जनाब ह़ाफ़िज़ अबू शहमा साह़ब, जनाब अख़्तर अ़ली साह़ब, जनाब सरताज साह़ब, जनाब इनआ़मउल्लाह साह़ब, जनाब नियाज़ साह़ब व जनाब कलीमुल्लाह साह़ब आदि।

अल्लाह पाक अपनी शान के मुताबिक़ उन सभी ह़ज़रात को जिन्होंने किसी भी तरह़ का तआ़उन किया हो, अज्र अ़ज़ीम अ़ता फ़रमाए और कुर्आन के ख़ादिमों में हिस्सा अ़ता फ़रमा कर कुर्आन की शिक्षानुसार अ़मल करने और सारी इन्सानी बिरादरी तक कुर्आन का पैग़ाम पहुँचाने की मुझे और मेरी नस्ल व पूरी उम्मत को तौफ़ीक़ नसीब फ़रमाए। आमीन

10 मुह़र्रम 1436 हि०
04 नवम्बर 2014 ई०

मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी
दारुलुउलूम नदवतुलु उ़लमा, लखन ऊ

पवित्र क़ुर्आन पढ़ने से पहले कुछ विशेष बातें

पवित्र क़ुर्आन एक ऐसा ग्रन्थ है, जो ह़ज़रत मुह़म्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम पर अल्लाह की ओर से नाज़िल (अवतरित) हुआ। चूँकि यह ग्रन्थ उस बड़े मालिक की ओर से आया है जो तमाम सृष्टि का सृष्टा है। इस लिए इस ग्रन्थ क़ुर्आन को छूने, हाथ लगाने और पढ़ने व सुनने के लिए उसके शान के अनुसार, उसके आदर व सम्मान को भी अल्लाह तआ़ला ही ने बताया है जिसे स्वयं पवित्र क़ुर्आन में इस प्रकार कहा गया है।

अनुवाद- "(इस क़ुर्आन को) नहीं छूते मगर पाक लोग" **(सूरः वाक़िअः 79)** لَّا يَمَسُّهُۥٓ إِلَّا ٱلْمُطَهَّرُونَ

इस प्रकार बिना पाकी (अर्थात बिना पाकी और वुज़ू) के पवित्र क़ुर्आन को छूना जायज़ नहीं और जब पवित्र क़ुर्आन पढ़ा जाए तो उसका आदर यह है कि उसे ख़ामोशी से ध्यानपूर्वक सुना जाए, जिसे क़ुर्आन में इस प्रकार ज़िक्र किया गया है।

وَإِذَا قُرِئَ ٱلْقُرْءَانُ فَٱسْتَمِعُوا۟ لَهُۥ وَأَنصِتُوا۟ لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُونَ

अनुवाद- "और जब क़ुर्आन पढ़ा जाए तो उसकी ओर कान लगाकर सुनो और शांतिपूर्वक सुनो ताकि तुम पर रह़म किया जाए"। **(सूरः अअ़राफ़ 204)**

इसी प्रकार क़ुर्आन पढ़ने का एक अदब यह भी है कि जब क़ुर्आन शुरू करें तो ''अऊ़ज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम'' और ''बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम'' पढ़ें।

''अऊ़ज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम'' के पढ़ने को इस्तिआ़ज़ा या तअ़व्वुज़ कहते हैं जिसका अर्थ होता है ''मैं शैतान मरदूद से अल्लाह की पनाह (शरण) में आता हूँ जिसे अल्लाह ने पवित्र क़ुर्आन के शुरू करने से पहले पढ़ने का हुक्म दिया है।

فَإِذَا قَرَأْتَ ٱلْقُرْءَانَ فَٱسْتَعِذْ بِٱللَّهِ مِنَ ٱلشَّيْطَٰنِ ٱلرَّجِيمِ

अनुवाद- "जब क़ुर्आन पढ़ें तो शैतान मरदूद की दुर्वासना से बचने के लिए अल्लाह की शरण मांगे"। **(सूरः नह़ल 98)**

निष्कर्षः- इस प्रकार निष्कर्ष यह निकला कि पवित्र क़ुर्आन के पाठ(तिलावत) से पहले वुज़ू करके शुद्ध होकर,आदर के साथ अ़मल करने और तमाम इन्सानों तक पहुँचाने की नियत से ध्यानपूर्वक पढ़ें तथा अ़रबी के सही उच्चारण का ख़्याल रखते हुए ''अऊ़ज़ु बिल्लाहि मिनश्शैत़ानिर्रजीम'' (जो सुन्नत है) और ''बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम'' दोनों पढ़ें। फिर तिलावत करते करते अगर नई सूरः शुरू हो तो केवल सूरः बराअ़त (तौबः) के अ़लावा सभी सूरतों में ''बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम'' पढ़ें और हर सूरः के ख़त्म होने के बाद जब नई सूरः शुरू करें तो ''अऊ़ज़ु बिल्लाहि मिनश्शैत़ानिर्रजीम'' न पढ़ें।

यदि तिलावत करते-करते सूरः बराअ़त आ जाए तो उससे पहले बिस्मल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम भी न पढ़ें। और यदि क़ुर्आन की तिलावत सूरः बराअ़त से ही शुरू करें तो ''अऊ़ज़ुबिल्लाहि मिनश्शैत़ानिर्रजीम'' और ''बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम'' दोनों पढ़ें, और जहाँ सज्दः वाली आयत आये वहाँ सज्दः करें।

إِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا الذِّكْرَ وَإِنَّا لَهُ لَحَافِظُونَ

कुर्आन की व्याख्या अगले पेज से शुरू हो रही है

पवित्र कुर्आन को पाक साफ़ (वुज़ू करके) शुद्ध होकर आदर के साथ अ़मल की नियत से ध्यानपूर्वक पढ़ें और सही उच्चारण का भी ख़्याल रखें।

(भाग–1)

सूर–ए–फ़ातिहा

(सूरः नं. 1)

अल् इस्तिआज़ः

"मैं अल्लाह की पनाह माँगता हूँ शैतान मरदूद (दुष्ट) से।" اَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ

अल् इस्तिआज़ः की व्याख्या

क़ुर्आन एक ऐसी किताब है जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर लफ़्ज़न व मअनन (शब्द और अर्थ) दोनों तरह से नाज़िल (अवतरित) हुआ जिसको हाथ लगाने, छूने, पढ़ने और सुनने के लिए उसके शान के अनुसार आदाब (आदर) भी अल्लाह तआला ही ने अपने बन्दों के लिए बताये हैं जैसे क़ुर्आन में कहा गया है-

فَاِذَا قَرَاْتَ الْقُرْاٰنَ فَاسْتَعِذْ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ۝

"जब आप क़ुर्आन पढ़ने लगें तो शैतान मरदूद के शर (बुराई) से अल्लाह की पनाह माँग लिया करें।" (सूरः नहल-98)

وَاِمَّا يَنْزَغَنَّكَ مِنَ الشَّيْطٰنِ نَزْغٌ فَاسْتَعِذْ بِاللّٰهِ ؕ اِنَّهٗ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ۝

और अगर शैतान की ओर से तुम्हारे दिल में किसी तरह का कोई वस्वसा (बुरा ख़याल) पैदा हो तो अल्लाह की पनाह माँगो। बेशक वह सब कुछ सुनता, जानता है। (सूरः अअ़राफ़-200)

इसी तरह सूरः मोमिनून में फ़रमाया-

وَقُلْ رَّبِّ اَعُوْذُبِكَ مِنْ هَمَزٰتِ الشَّيٰطِيْنِ ۝ وَاَعُوْذُ بِكَ رَبِّ اَنْ يَّحْضُرُوْنِ۝

और कह दीजिए, "ऐ मेरे रब! मैं तुझसे पनाह माँगता हूँ शैतान के वस्वसों से।" और ऐ मेरे रब! "मैं तुझसे पनाह माँगता हूँ, इससे कि वह (शैतान) मेरे पास आये।" (सूरः मूमिनून-97,98)

इसी तरह सूरः फ़ुस्सिलत में फ़रमाया-

وَاِمَّا يَنْزَغَنَّكَ مِنَ الشَّيْطٰنِ نَزْغٌ فَاسْتَعِذْ بِاللّٰهِ ؕ اِنَّهٗ هُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ۝

और अगर शैतान की ओर से कोई वस्वसा मालूम हो, तो अल्लाह की पनाह माँगो, बेशक 'वह' सब कुछ सुनने वाला, जानने वाला है। (सूरः फ़ुस्सिलत-36)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) कहा करते थे-

اَللهمَّ اِنِى أعوذُبِكَ مِنَ الشيطان الرجيم من نفخه ونفثه (ابن ماجہ)

हज़रत मुआ़ज़ बिन जबल (रज़ि०) कहते हैं कि दो आदमियों ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास आपस में गाली-गलौज किया। उन में का एक आदमी इतना गुस्सा हुआ कि ऐसा मालूम हो रहा था कि उस की नाक गुस्सा से फट जाएगी। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि मैं एक ऐसा कलिमा जानता हूँ जिसे अगर वह कहे तो उस का गुस्सा ख़त्म हो जाये। मुआ़ज़ ने पूछा कि ऐ अल्लाह के रसूल (सल्ल०), वह

कौन सा कलिमा है तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया यूँ कहे-

"اَللّٰهُمَّ اِنّی أعُوذُبِكَ مِن الشيطان الرجيم"

(अहमद, अबूदाऊद, तिर्मिज़ी, नसई)

इस्तिआ़ज़ः या तअ़व्वुज़-

'इस्तिआ़ज़ः' के माने पनाह चाहना, पनाह मांगना, पनाह में आना और कुर्आन की ज़बान में इस्तिआ़जः ''अऊ़ज़ु बिल्लाहिमिनश्शैतानिर्रजीम'' पढ़ने को कहते हैं। इसी को तअ़व्वुज़ भी कहते हैं।

इस्तिआ़ज़ः या तअ़व्वुज़ पढ़ने का फ़ायदा-

ऊपर की आयत में अल्लाह तआ़ला ने कुर्आन के पढ़ने से पहले इस्तिआ़जः के पढ़ने का हुक्म दिया जिसमें बहुत सी ह़िकमतें हैं, उसमें से एक यह है कि शैतान हमेशा नेकी से दूर करने की कोशिश करता है कि इन्सान को बेहयायी और बुराई के कामों पर उभारे और तिलावते कलाम पाक, जो तमाम नेकियों का सरचश्मा (स्रोत) है, और सबसे ज़्यादा खुदा से क़रीब करने वाली इबादत है। उसके पढ़ने से पहले बन्दा गोया कि यह कहता है कि या अल्लाह! मुझमें तो इतनी ताक़त नहीं कि अपने ज़ोर से शैतान का मुक़ाबला कर सकूँ और उस पर ग़ालिब रह सकूँ इसलिए मैं आपका सहारा लेता हूँ। आप ही की मदद मेरी कूव्वत है, आप ही की हिफ़ाज़त मेरी ढ़ाल है अगर आपने मुझे अपने फ़ज़्ल व रह़मत के दामन में जगह न दी, तो मैं तिलावते कुर्आन जैसी अहम (महत्वपूर्ण) इबादत नहीं कर सकता।

इस तरह़ यह भी मालूम हुआ कि तिलावते कुर्आन के अलावा भी किसी नेकी का इरादा करें तो शैतान के वस्वसों से बचने के लिए 'इस्तिआ़जः' के अल्फ़ाज़ (शब्द) पढ़ लिया करें।

इसीलिए ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को भी बार-बार इस्तिआ़जः का हुक्म हुआ।

وَقُلْ رَّبِّ أَعُوْذُبِكَ مِنْ هَمَزٰتِ الشَّيٰطِيْنِ ۙ وَأَعُوْذُ بِكَ رَبِّ أَنْ يَّحْضُرُوْنِ ۝

(सूरः मूमिनून 97, 98)

(''ऐ नबी सल्ल० आप) कह दीजिए कि ऐ परवरदिगार! मैं तुझ से पनाह माँगता हूँ, शैतानों के वस्वसों से और ऐ परवरदिगार! मैं तुझसे पनाह माँगता हूँ ताकि वह शैतान मेरे पास न आये। फिर रसूलुल्लाहि (सल्ल०) को "इस्तिआ़जः" का हुक्म हुआ और ''कुल अऊ़ज़ु बिरब्बिल् फ़लक़ और कुल अ़ऊज़ुबिरब्बिन्नासि'' में शैतान, जिन्न और इन्सान दोनों का ज़िक्र किया जैसा कि इस आयत से पता चलता है।

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنَا لِكُلِّ نَبِيٍّ عَدُوًّا شَيٰطِيْنَ الْاِنْسِ وَالْجِنِّ يُوْحِيْ بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ زُخْرُفَ الْقَوْلِ غُرُوْرًا

अनुवाद-

''और हमने हर नबी के दुश्मन बहुत से पैदा किये कुछ इन्सान और कुछ जिन्नात, जिनमें से कुछ एक दूसरे को चिकनी चुपड़ी बातों का वस्वसा डालते रहते थे ताकि धोखा में डाल दें।'' (सूरः अनआ़म 112)

इब्लीस का तख़्त-

'हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह (रज़ि०)' से रिवायत है कि रसूलुल्लाहि (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया-

''इब्लीस का तख्त समुद्र में है, वह हर रोज़ लश्कर (फ़ौज) की टुकड़ियाँ भेजता रहता है, ताकि वह लोगों को फ़ित्ना में डाले। जो जितना ज़्यादा लोगों में फ़ित्ना फैलाता है उतना ही ज़्यादा इब्लीस के नज़दीक उसका मर्तबा बुलन्द (ऊँचा) होता है।" **(मुस्नद अहमद)**

शैतान से मुराद यही 'इब्लीस' है। लेकिन अ़रबी में शैतान के माने 'बातिल या दूर होने या हलाक होने' के हैं और अ़रबी ज़बान में हर बुरा काम और बुराई शैतान है, चाहे वह जिन्नातों में से हो, इन्सानों में से हो या चौपायों में से हो।''

जिन्नात

अल्लाह तआ़ला ने एक मख़्लूक़ (सृष्टि) पैदा की है जिस का ज़िक्र क़ुर्आन में जिन्नात के नाम से किया गया है, जो इसी शरीअ़ते मुहम्मदी के मानने वाले हैं उनमें मौत व पैदाइश होती है और उनमें भी नेक व बद् (अच्छे व बुरे) काफ़िर व मुस्लिम होते हैं।

इब्लीस का इन्कार-

जब अल्लाह ने हज़रत आदम (अलै०) को पैदा किया तो मिट्टी से उनका जिस्म (शरीर) तैयार किया और उसमें रुह फूँक कर तमाम फ़रिश्तों को हुक्म दिया कि आदम को सज्दः करें तो सभी फ़रिश्तों ने सज्दः किया, लेकिन इब्लीस, जिन्न ने, जो अपने इल्म व इबादत की वजह से फ़रिश्तों में शामिल कर लिया गया था। उसने 'घमण्ड' में आकर साफ़ इन्कार कर दिया, तो अल्लाह ने उसे मरदूद (ज़लील) कह कर निकल जाने का हुक्म दिया। जिस पर उसने एक गुज़ारिश की कि मुझको क़ियामत तक मुहलत (मौक़ा) दे दीजिए और मेरी ज़िन्दगी को लम्बी कर दीजिए।

इस गुज़ारिश के मान लेने के बाद कहने लगा कि जब आपने मुझको मरदूद कर ही दिया है तो मैं भी आदम की औलादों को सीधे रास्ते से रोकूँगा और उन्हें गुमराह करने की कोशिश करूँगा। इस पर अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया-

"जो भी औलादे आदम में से 'मेरे' रास्ते को छोड़ कर तेरी पैरवी करेगा उन सबको तेरे साथ ही जहन्नम (नर्क) में झोंक दूँगा।"

इसीलिए क़ुर्आन के पढ़ने से पहले यह कहना चाहिए "मैं अल्लाह तआ़ला की पनाह लेता हूँ शैतान मरदूद से" इसलिए कि अल्लाह के सिवा शैतान से कोई नहीं बचा सकता।

'तअ़व्वुज़' पढ़ना क़ुर्आन मजीद की तिलावत के साथ ख़ास है। इसके अ़लावा दूसरे कामों के शुरु में केवल 'बिस्मिल्लाह' पढ़ी जाएगी, 'तअ़व्वुज़' का पढ़ना सुन्नत नहीं। **(आलमगीरी, बाब राबेअ़)**

इस तरह़ 'इमाम अबू ह़नीफ़ा' और 'इमाम शाफ़अ़ी' (रह़०) के नज़्दीक **'अऊ़ज़ू बिल्लाहि**

मिनश्शैतानिर्रजीम’ ही पढ़ना चाहिए।

राय-

‘इमाम औज़ाअ़ी’ और ‘ह़ज़रत सुफ़्यान सौरी’ के नज़्दीक यह **أعوذُ باالله مِنَ الشيطان الرجيم اِنَّ الله هُو السَّميعُ العليم** पढ़ना अफ़्ज़ल है और कुछ ह़ज़रात कहते हैं कि तिलावत के बाद **أعوذُ باالله** ‘अऊज़ू बिल्लाहि’ पढ़ना चाहिए।

इस तरह़ जम्हूर के नज़्दीक नमाज़ में **أعوذُ باالله** ‘अऊजु बिल्लाहि’ और **بسم الله** ‘बिस्मिल्लाह’ दोनों पढ़ना सुन्नत है।

क़ुर्आन की तिलावत शुरु करने के वक़्त **‘अऊज़ू बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम’** और फिर **‘बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम’** पढ़ना सुन्नत है और तिलावत के दर्मियान में भी सूरः बराअ़त के अ़लावा हर सूरः के शुरु में **बिस्मिल्लाह** पढ़ना सुन्नत है। हाँ, अगर तिलावत सूरः बराअ़त से शुरु की जाये तो **‘अऊजु बिल्लाह’** और **‘बिस्मिल्लाह’** दोनों पढ़ना चाहिए और तिलावत के दर्मियान अगर ‘सूरः बराअत’ आ जाए तो **‘बिस्मिल्लाह’** नहीं पढ़ना चाहिए।

बस्मला अर्थात बिस्मिल्लाह का संक्षिप्त परिचय

अनुवाद- بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

"अल्लाह के नाम से शुरु करता हूँ जो बड़ा मेहरबान, निहायत रह़म करने वाला (असीम कृपालु महादयालु) है।"

'बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम' के पढ़ने को 'बस्मला' अर्थात बिस्मिल्लाह कहते हैं।

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के समय में मुश्रिक (बहुदेववादी) अपने कामों को बुतों, अर्थात अल्लाह को छोड़ कर किसी दूसरे देवी देवताओं के नाम से शुरु किया करते थे, इसलिए इस यक़ीन को मिटाने के लिए क़ुर्आन में यह सबसे पहले आयत आई जो क़ुर्आन का ही एक भाग और सूरः नम्ल का जुज़ है, यह सूरः तौबः के सिवा हर सूरः के शुरु में लिखी जाती है इसी लिए मुफ़स्सिरीन (टीकाकारों) का इस में इख़्तिलाफ़ है कि यह आयत तमाम सूरतों का जुज़ (अंश) है या नहीं। इमाम अबू ह़नीफ़ा (रह़०) कहते हैं कि यह एक अलग आयत है जो सूरतों के बीच में अन्तर ज़ाहिर करने के लिए रखी गयी है।

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) हर काम 'बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम' पढ़ कर ही शुरु करते थे, इसलिए कि बिस्मिल्लाह से बढ़ कर अमन देने वाली और कौन सी चीज़ हो सकती है! कि 'उस अल्लाह के नाम से शुरु किया जा रहा है जो बहुत रह़म करने वाला है।

यह किस सूरह की आयत है- بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

सह़ाबा (रज़ि०) ने ह़ज़रत उ़स्मान (रज़ि०) के ज़माने में जो मुसहफ़ (क़ुर्आन) तैयार किया था उस मुसहफ़ में सूरह बराअत के अ़लावह तमाम सूरतों के शुरु में बिस्मिल्लाह लिखी गई। उस मुसहफ़ (किताब) में कोई भी ऐसी चीज़ नहीं लिखी गई जो क़ुर्आन करीम का ह़िस्सा नहीं थी। उस मुसहक़ में न सूरतों के नाम लिखे गये न आयतों की तअ़दाद लिखी गई और न आमीन लिखा गया, ताकि कोई व्यक्ति ग़ैर क़ुर्आन को क़ुर्आन न समझ ले। इन तमाम एह़तियात के बावजूद बिस्मिल्लाह सिर्फ़ एक सूरह के अ़लावा तमाम सूरतों के शुरु में लिखी गई। जिनकी तअ़दाद 113 हैं।

यह इस बात की दलील है कि बिस्मिल्लाह सूरह 'नम्ल' की एक आयत का ह़िस्सा होने के अ़लावह एक मुस्तक़िल आयत है। जो रसूल (सल्ल०) या हर सूरह के शुरु करने से पहले उतरा करती थी और इसी के ज़रिये आप (सल्ल०) जाने जाते थे कि एक सूरह ख़त्म हो गई अब दूसरी सूरह शुरु होने वाली है। जैसा कि इस ह़दीस से मालूम होता है।

ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूल (सल्ल०) एक सूरः का मुकम्मल (पूर्ण) होना और दूसरी सूरह का शुरु होना उस वक़्त तक नहीं जानते थे जब तक بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ नये सिरे से नाज़िल नहीं होती थी। **(अबू दाऊद, ह़ाकिम)**

इससे यह बात साबित हो गई कि بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ कुर्आन करीम की एक आयत है।

कुछ लोगों के नज़्दीक सूरह बराअत के अ़लावा यह हर सूरह की एक आयत है। 'इमाम मालिक' (रह़०) और 'इमाम अबू ह़नीफ़ा' (रह़०) कहते हैं कि यह न 'सूरह फ़ातिह़ा' की आयत है, न ही किसी दूसरी सूरह की।

इस इख़्तिलाफ़ (मतभेद) की वजह से जहरी नमाज़ों (तेज़ आवाज़ वाली) में सूरह फ़ातिह़ा से पहले 'बिस्मिल्लाह' को बुलन्द आवाज़ से पढ़ने के बारे में उलमा का इख़्तिलाफ़ है। जो ह़ज़रात यह समझते हैं कि यह सूरह फ़ातिह़ा की एक आयत नहीं है।

और वह लोग जो यह समझते हैं कि यह एक मुस्तक़िल (स्थायी) आयत है, किसी सूरह की आयत नहीं वह कहते हैं कि जहरी नमाज़ों में **'बिस्मिल्लाह'** आहिस्ता पढ़ी जाएगी।

और जो लोग यह समझते हैं कि यह 'सूरह बरात' के अ़लावा हर सूरह की आयत है। उनमें 'इमाम शाफ़ई' इसे जहरी नमाज़ों में 'सूरह फ़ातिह़ा' और हर सूरह के पहले बुलन्द आवाज़ से पढ़ने के क़ायल हैं, लेकिन ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन, अह़मद बिन हम्बल, सुफ़्यान सौरी वग़ैरह की राय है कि नमाज़ में 'बिस्मिल्लाह' बुलन्द आवाज़ से नहीं पढ़ी जाएगी।

इन लोगों ने 'इमाम मुस्लिम' की ह़ज़रत आ़ईशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत की हुई ह़दीस को दलील बनाया है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) नमाज़ में क़िरत 'अल्ह़म्दु लिल्लाहि रब्बिल आ़लमीन' से शुरु करते थे।

इसी तरह़ 'बुख़ारी व मुस्लिम' में 'ह़ज़रत अनस बिन मालिक' (रज़ि०) से रिवायत की हुई ह़दीस को दलील माना है कि मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) अबूबक्र, उ़मर, उ़स्मान (रज़ि०) के पीछे नमाज़ पढ़ी। यह ह़ज़रात 'अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल आ़लमीन' से शुरु करते थे।

1- 'बिस्मिल्लाह' चूंकि 'सूरः नम्ल' की आयत है और दो सूरतों में अन्तर करने के लिए क़ुर्आन में एक अलग से आयत के रूप में इसको शामिल किया गया है, इसलिए दूसरी आयतों की तरह़ इसको बिना वुज़ू के छूना जायज़ नहीं और न नापाकी की ह़ालत में इसको पढ़ना जायज़ होगा।
2- नमाज़ की पहली रकअ़तों में **'अऊज़ुबिल्लाहि'** के बाद **'बिस्मिल्लाह'** पढ़ना सुन्नत है, मगर इसमें इख़्तिलाफ़ है कि आहिस्ता पढ़नी चाहिए या आवाज़ से। 'इमाम अबू ह़नीफ़ा' की नज़्दीक आहिस्ता पढ़ना बेहतर है, मगर दूसरी रकअ़तों में 'बिस्मिल्लाह' के पढ़ने पर सब का इत्तिफ़ाक़ (सहमति) है और बाज़ रिवायात में सभी रकअ़तों के शुरु में 'बिस्मिल्लाह' पढ़ने को वाजिब कहा गया है।

नमाज़ में सूरह फ़ातिह़ा के बाद सूरह के शुरु में 'बिस्मिल्लाह' पढ़ना रसूलुल्लाह (सल्ल०) और ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन से साबित नहीं है। शेख़ैन का मस्ला यही है, मगर 'इमाम मुह़म्मद', सिर्री (ख़ामोशी वाली) नमाज़ों में सूरह के शुरु में 'बिस्मिल्लाह' पढ़ने को बेहतर फ़रमाते हैं और कुछ रिवायात में 'इमाम अबू ह़नीफ़ा' (रह़०) की तरफ़ भी इसकी निस्बत की गई है और इसको अफ़्ज़ल (बेहतर) कहा गया है और पढ़ना तो किसी के नज़्दीक मकरुह (कराहियत) नहीं है।

'बस्मला' अर्थात बिस्मिल्लाह की फ़ज़ीलत-

क़ुर्आन की कई आयतों और सही ह़दीसों से मालूम होता है कि एक मुसलमान की ज़िन्दगी में **'बिस्मिल्लाह'** की बड़ी अहमियत है और कोई भी काम करने से पहले वह कहेगा। ख़ैर व बरकत और अल्लाह की मदद व हिफ़ाज़त का ज़रिया है।

"मुस्नद अह़मद की रिवायत है कि **'बिस्मिल्लाह'** कहने से शैतान ज़लील हो जाता है, यहाँ तक कि 'मक्खी' की तरह़ ह़क़ीर (तुच्छ) बन जाता है।"

इसीलिए खाने-पीने, जानवर ज़ब्ह करने, बीवी से हमबिस्तरी (सम्भोग) करने, वुज़ू करने, बैतुलख़ला में दाख़िल होने और दूसरे तमाम कामों के करने से पहले **'बिस्मिल्लाह'** कहना मुस्तह़ब (बेहतर) है।

'मुस्लिम' की एक रिवायत में है कि जिस खाने पर 'बिस्मिल्लाह' नहीं पढ़ी जाती, उसमें शैतान का ह़िस्सा होता है। **(मुस्लिम)**

'ह़ज़रत अ़ली' (रज़ि०) से रिवायत है कि बैतुल ख़ला में जाते वक़्त بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ पढ़ने से जिन्नात व शैतान की नज़र उसके सतर तक नहीं जाती। **(तिर्मिज़ी)**

'अबूदाऊद' की रिवायत है कि रसूल (सल्ल०) की खाना की मजलिस में किसी सह़ाबी ने बग़ैर 'बिस्मिल्लाह' किये खाना शुरु कर दिया। आख़िर में जब याद आया तो **'बिस्मिल्लाहि अव्वलुहु व आखिरूहु'** कहा तो रसूलुल्लाह (सल्ल०) को यह देखकर हंसी आ गई और फ़रमाया कि शैतान ने जो कुछ खाया इनके 'बिस्मिल्लाह' पढ़ते ही खड़े होकर सब क़य (उलटी) कर दिया। **(अबूदाऊद)**

ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया जब तुममें से कोई अपनी बीवी से हम्बिस्तरी (सम्भोग) का इरादा करे तो यह पढ़े-

بِسْمِ اللّٰهِ اَللّٰهُمَّ جَنِّبْنَا الشَّيْطٰنَ وَجَنِّبِ الشَّيْطٰنَ ما رَزَقْتَنَا

यानी "ऐ अल्लाह हमें और जो हमें तू दे उसे शैतान से बचाना।" **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

'मुस्नद अह़मद' की रिवायत है कि रसूल (सल्ल०) की सवारी पर आपके पीछे जो सह़ाबी सवार थे। उनका बयान है कि रसूल (सल्ल०) की ऊँटनी ज़रा सी फिसली तो मैंने कहा शैतान का बुरा हो। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया यह न कहो, इससे शैतान फूलता है और ख़याल करता है कि यानी उसने अपनी ताक़त से गिराया है, 'बिस्मिल्लाह' कहने से वह मक्खी की तरह़ ज़लील व पस्त हो जाता है। **(मुस्नद अह़मद)**

'इमाम फ़ख़रुद्दीन राज़ी' (रह़०) लिखते हैं कि क़ुर्आन पिछली तमाम आसमानी किताबों का निचोड़ और ख़ुलासा है और पूरे क़ुर्आन का ख़ुलासा सूरह फ़ातिह़ा है और सूरह फ़ातिह़ा का ख़ुलासा **'बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम'** में मौजूद है और इससे भी ज़्यादा कमाल यह है कि पूरे **'बिस्मिल्लाह'** का ख़ुलासा **'बिस्मिल्लाह'** के शुरु हर्फ़ **'बा'** में मौजूद है और वह इस तरह कि **'बा'** के माने हैं मिलाना, क़रीब करना। इस तरह़ ग़ौर किया जाये तो तमाम क़ुर्आन का मक़्सद भट्के हुए इन्सानों को अल्लाह से मिलाना और उससे क़रीब करना है।

“बस्मला” या बिस्मिल्लाह की व्याख्या

बِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

‘अल्लाह के नाम से शुरु करता हूँ जो बड़ा मेहरबान निहायत रह़म करने वाला (महादयालु अतिकृपाशील) है।’

بِسْمِ اللّٰهِ में तीन शब्द है।

(1) ब (2) इस्म (3) अल्लाह

शब्द **‘ब’** के बहुत से माने हैं। उन में से यहाँ तीन माने बेहतर हो सकते हैं। (1) मुसाह़िबत के यानी अल्लाह के नाम के साथ (2) इस्तिअ़ानत के यानी अल्लाह के नाम की मदद के साथ (3) तबर्रुक के यानी अल्लाह के नाम की बरकत से जिसमें तमाम सिफ़ात मौजूद हैं, यह उसका सबसे बड़ा नाम है। हिन्दी में अल्लाह का अनुवाद कुछ लोगों ने ‘मनमोहन’ के नाम से करने की कोशिश की है, मगर इस का तर्जुमः मुम्किन नहीं।

इस तरह़ यहाँ बेहतर है कि इस का तअ़ल्लुक़ फ़ेअ़ल (Verb) अ़ाम मुक़द्दर (मौजूद) से किया जाए और उस को उस के बाद मुकद्दर माना जाये ताकि अ़ाम फ़ायदा हो और शब्द अल्लाह शुरु में रहे। उसूल की वजह से **‘ब’** पहले आ गई है और वह रस्मुलख़त के उसूल के मुताबिक़ ‘अलिफ़’ के साथ मिला कर लिखी जानी चाहिए थी यानी **باسم الله** मगर ‘मुस्ह़फ़ उस्मानी’ में यह रिअ़ायत थी कि ‘हम्जः’ को हज्फ़ (Silent) कर के **ب** (ब) को **س** (सीन) के साथ मिला दिया जिसे **اسم** (संज्ञा) का जुज़ (भाग) बना दिया ताकि मुम्किन ह़द तक **اسم** नाम अल्लाह से शुरु किया जा सके।

इस के ख़िलाफ़ कि आयत اِقْرَاْ بِاسْمِ رَبِّكَ के कि वहाँ **ب** (ब) को ‘सीन’ के साथ नहीं मिलाया गया बल्कि ‘अलिफ़’ के साथ लिखा गया है।

‘ह़ाफ़िज़ इब्ने कसीर’ ने लिखा है कि आदमी जब कोई काम शुरु करना चाहे तो वह शुरु करते वक़्त नियत करे कि मैं इस काम की शुरुआ़त अल्लाह के नाम से करता हूँ।

‘बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम’ में अल्लाह के नामों में से तीन ख़ास नामों का ज़िक्र है यानी यह तीन शब्द विशेष रूप से आये हैं- 1. अल्लाह 2. रह़मान 3. रह़ीम।

1. शब्द ‘अल्लाह’ कैसे बना- اللّٰهِ

शब्द ‘अल्लाह’ इस्मज़ात (Proper Noun) है, अर्थात इस कायनात (Universe) के पैदा करने वाले और चलाने वाले का ही नाम ‘अल्लाह’ है इसके सिवा तमाम नाम जैसे- रह़मान, रह़ीम, करीम, सत्तार आदि, जो उसकी सिफ़त (गुण) बताते हैं- वह इस्म सिफ़त (Proper Adjective) कहलाते हैं।

इस्मज़ात (Proper Noun) अल्लाह, इलाह से बना है जिसके शाब्दिक माने ‘मअ़बूद’ के आते हैं, यह ‘अलिफ़’, ‘लाम’, और ‘ह’ के धातु से बना है। कल्दानी (भाषा) और सुर्यानी (भाषा) का ‘अलाहिया’,

इब्रानी (Hebrew) भाषा का 'उलूह' और अरबी का 'इलाह' इसी से बना है।

बेशक यह 'इलाह' है जो 'अलिफ़' और 'लाम' अक्षरों के बढ़ा देने से {जो किसी जातिवाचक नाम को व्यक्तिवाचक) (Common Noun को Proper Noun) बनाने के लिए बढ़ाया जाता है} अल्लाह हो गया और इस प्रयोग ने अल्लाह नाम को उस सत्ता के लिए ख़ास (विशेष) कर दिया जो तमाम कायनात (ब्रहमाण्ड) का ख़ालिक़ (सृष्टा) है। इसमें मुफ़स्सिरीन (टीकाकारों) का इख़्तिलाफ़ (मतभेद) है, मगर ख़ुलासा यह निकलता है कि अल्लाह का 'व्यक्ति वाचक' नाम 'इलाह' है जिसका अर्थ है मअ़बूद, उपास्य, पूज्य। इस इलाह शब्द पर 'अलिफ़' और 'लाम' बढ़ा कर 'अल्लाह' कर देने का मतलब यह है कि 'एक अल्लाह ही (One and only one) मअ़बूद (उपास्य) है' जिसके अन्दर वह विशेष गुण पाये जाते हों जो उस के सिवा किसी और में पाये ही न जा सकें।

इस नाम का न 'बहुवचन' (तस्नीया) आता है, न 'स्त्रीलिंग' (मुवन्नस) न यह किसी दूसरे शब्द से मिलकर बना है, और न ही इस का अनुवाद किसी दूसरी भाषा में मुम्किन है। इसलिए शब्द "अल्लाह" अपने अन्दर बेहद माने रखता है, जैसे-

वही पनाह, शरण व शान्ति देने वाला, तमाम सिफ़ात (विशेषताओं) का मालिक (सर्वगुण सम्पन्न) सर्वशक्तिमान (अर्थात उसकी सत्ता और उसके गुण तथा कर्म में कोई उसके समान नहीं), वह हमेशा से है और हमेशा रहेगा। (वही इस सम्पूर्ण सृष्टि का सृष्टा है,) इस लिए उसके अतिरिक्त कोई पूजा, अ़िबादत या उपासना का हक़्दार नहीं। अतः सृष्टि के सृष्टा का 'व्यक्ति वाचक' नाम 'अल्लाह' इसलिए हुआ कि उस सत्ता के विषय में मनुष्य जो कुछ जानता है, या जान सकता है, वह इससे ज़्यादह कुछ नहीं कि बुद्धि चकित रह जाए और ज्ञान उसकी वास्तविकता के समझने में विवश हो जाए। मनुष्य उस सत्ता के अस्तित्व (वजूद) में जितना भी विचार और चिंतन करता जाएगा उसकी बुद्धि चकित ही होती जाएगी।

रह़मान- الرَّحْمٰنِ

इसी तरह़ 'रह़मान' का भी अनुवाद करना बहुत मुश्किल है। इसमें ह़क़ीक़त में भाव रह़मत से बढ़कर है, यह अल्लाह का 'गुणवाचक' (Adverbial) नाम है, 'रह़मान' से भी केवल अल्लाह ही की ओर इशारा (बोध) होता है और उससे रह़मत (दयालुता) एवं मुहब्बत की ज़्यादती का पता चलता है।

الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ अ़रबी में **فعلان** (फ़ुअ़लान) और **فعيل** (फ़अ़ील) दोनों वज़न मुबालिग़ा (बढ़ा कर बताने) के लिए आते हैं। अल्लाह के लिए सिफ़त 'रह़मत' को मुबालिग़ा के साथ बयान करना मक़्सूद है। शब्द 'रह़मान' में रह़मत का आ़म होना और शब्द 'रह़ीम' में रह़मत का पूरा होना बतला दिया गया है। शब्द रह़ीम के मुक़ाबिले में रह़मान में अक्षर भी ज़्यादा हैं और माने भी ज़्यादह हैं।

इसीलिए मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि الرَّحْمٰنِ 'अर्रह़मान' रह़मत की तमाम क़िस्मों को आ़म है और दुनिया व आख़िरत में तमाम मख़्लूक़ को शामिल है। जबकि الرَّحِيْمِ 'अर्रह़ीम' में मोमिनों के लिए ख़ास है। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया وَكَانَ بِالْمُؤْمِنِيْنَ رَحِيْمًا (सूरः अह़ज़ाब-43)

कुछ उ़लमा-ए-तफ़्सीर الرَّحْمٰن (अर्रह़मान) को तो आम एहसान के लिए मानते हैं। अर्थात अल्लाह की रह़मत उसकी तमाम मख़्लूक़ात के लिए आ़म है, लेकिन الرَّحِيْم (अर्रह़ीम) को मोमिनीन के लिए ख़ास नहीं मानते। वह कहते हैं कि शब्द 'रह़मान' से मुराद वह ज़ात है जिसकी नेअ़मतों का फ़ैज़ आ़म है, लेकिन यह काम वक़्ती भी हो सकता है क्योंकि अ़रबी में इस वज़न से अवसाफ़ फ़ेल (गुणवाचक क्रिया) के वक़्त होने पर दलालत करते हैं और शब्द الرَّحِيْم 'अर्रह़ीम' हमेशा और मुस्तक़िल सिफ़ते रह़मत पर दलालत करता है। इसलिए जब अ़रबी भाषा का जानने वाला अल्लाह तआ़ला की सिफ़त (अर्रह़ीम) الرَّحْمٰن 'अर्रह़मान' सुनता है तो वह समझता है कि वह ज़ात जिसकी नेअ़मतों का फ़ायदा आ़म है, लेकिन वह यह नहीं समझता कि रह़मत उसकी हमेशा के लिए सिफ़त (यह गुण) है। इसके बाद जब वह الرَّحِيْم (अर्रह़ीम) बोलता है तो उसे यक़ीन हो जाता है कि रह़मत उसकी हमेशा के लिए है जो उससे कभी अलग होने वाली नहीं।

इस तरह़ الرَّحْمٰن 'अर्रह़मान' नाम अल्लाह के साथ ख़ास है, ग़ैरुल्लाह के लिए इस नाम का प्रयोग जायज़ नहीं। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया "قُلِ ادْعُوا اللّٰهَ أَوِ ادْعُوا الرَّحْمٰنَ **(सूरः इस्रा-110)**

जबकि الرَّحِيْم अर्रह़ीम ग़ैरुल्लाह की सिफ़ात (गुण) इस तरह़ बन सकती है कि अल्लाह तआ़ला ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) की तअ़रीफ़ करते हुए फ़रमाया بِالْمُؤْمِنِيْنَ رَءُوْفٌ رَّحِيْمٌ **(सूरः तौबः-128)**

"यानी वह मोमिनीन के साथ मेहरबान और रह़मत करने वाले है"।

इस तरह़ जो मुह़ब्बत एक ह़कीम अपने रोगी के साथ रखता है या किसी लाचार पर तरस खा कर उसकी ज़रुरत की वह चीज़-जिसे वह खुद न हासिल कर सकता हो बिना उससे कुछ बदला लिए हुए मुह़य्या कर दे (जैसे किसी के पास खाने की कोई चीज़ न हो तो उसका ह़ाल मालूम होने पर बिना किसी बदले के उसके खाने का इन्तिज़ाम कर दे।) इस तरह़ 'रह़मान' में रह़म की शान सबके लिए है अर्थात काफ़िर हो या मोमिन और 'रह़ीम' में विशेष रूप से ईमान वालों ही के साथ है जिसे आख़िरत ही में देखा जा सकेगा।

الرَّحْمٰن 'अर्रह़मान' क़ुर्आन मजीद में 'इस्म अलम' (Noun) के लिए प्रयोग हुआ है। यह क़ुर्आन मजीद में लगभग 50 जगहों पर 'इस्म अलम' के तौर पर आया है।

जैसे- (1) اَلرَّحْمٰنُ عَلَى الْعَرْشِ اسْتَوٰى **(सूरः ताह़ा-5)**

(2) وَعِبَادُ الرَّحْمٰنِ **(सूरः फ़ुर्क़ान,63)** (3) اَلرَّحْمٰنُ عَلَّمَ الْقُرْاٰنَ **(सूरः रह़मान 1-2)**

(4) قُلِ ادْعُوا اللّٰهَ أَوِ ادْعُوا الرَّحْمٰنَ **(सूरः बनी इस्राईल- 110)**

इन आयात में الرَّحْمٰن 'अर्रह़मान' अल्लाह की सिफ़त (गुण) के तौर पर नहीं इस्म अलम (Noun) के तौर पर इस्तेमाल हुआ है। **(तफ़्सीर सूरः बनी इस्राईल)**

अर्रह़ीम الرَّحِيْم

अ़रबी ग्रामर के अनुसार 'रह़ीम' शब्द 'फ़अ़ील' के वज़न पर है जो सिफ़त (गुण) बयान करने

के लिए ही प्रयोग होता है, अर्थात जिसके अन्दर वह गुण हमेशा से हों और बराबर रहें। इस लिए 'रहीम' का अर्थ हुआ "वह ज़ात जो हमेशा लगातार करम करने वाली हो।"

इसी लिए हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की शिक्षा और आदत थी कि जब कोई काम शुरु करते तो 'बिस्मिल्लाहिर्रमानिर्रहीम' पढ़ कर ही शुरु करते अर्थात 'शुरु करता हूँ इस काम को अल्लाह ही से मदद चाहते हुए इस पर और उसी की रहमत (करुणा) पर पूरा भरोसा करते हुए कि वही पूरा करने वाला है, इसी लिए आप (सल्ल०) ने कुर्आन मजीद की हर सूरः को उसी अल्लाह की मदद को सामने रखकर पढ़ने का हुक्म फ़रमाया है।

शब्द 'अल्लाह' के नाम पर ईमान-

उ़लमा-ए-हक़ के नज़्दीक कुर्आन में और रसूल (सल्ल०) की सही हदीसों से अल्लाह के जो नाम व सिफ़ात साबित हैं उन पर उसी तरह ईमान लाना ज़रूरी है जिस तरह साबित हैं। न उन की कैफ़ियत बयान की जाएगी और न ही उन की तावील (खींचतान) की जाएगी।

'इमाम मालिक' (रह०) से जब अल्लाह के अ़र्श पर 'मुस्तवा' होने के बारे में पूछा गया तो उन्होंने फ़रमाया 'इस्तवा' मालूम है। उसकी कैफ़ियत मजहूल (नामालूम) है। उसके बारे में सवाल करना बिद्अ़त है और उस पर ईमान रखना वाजिब है।

हर काम की शुरुआ़त-

इस तरह कुर्आन का कोई रुकूअ़ कोई पेज अल्लाह के नाम से खाली नहीं है जो अल्लाह के कलाम होने की बड़ी दलील है। इसीलिए हिदायत दी गई है कि हर अहम काम **'बिस्मिल्लाह'** कहकर शुरु करो वह काम जब पूरा हो जाये तो **'अल्हम्दुलिल्लाह'** कहो और तअ़ज्जुब का मौक़ा हो तो **'सुब्हानल्लाह'** कहो और किसी काम का इरादा हो तो **'इंशाअल्लाह'** कहो, कोई ग़लती हो जाये तो **'अस्तग़फ़िरुल्लाह'** पढ़ो, शैतानी ख़याल आ जाये तो **'लाहौला वला कुव्वता इल्ला बिल्लाह'** पढ़ो और कोई काम बिगड़ जाये तो **'इन्ना लिल्लाह'** पढ़ो। इस मुख़्तसर सी तअ़लीम के ज़रिये इन्सान अपने रब से क़रीब होता जाता है जिसमें ज़िन्दगी के तमाम काम का रुख़ अल्लाह की तरफ़ हो जाता है।

'बिस्मिल्लाह' पर एतिराज़ करने वालों का जवाब-

जो लोग अदब (साहित्य) और बलाग़त से अनभिज्ञ होते हैं वह इस तरह का एतिराज़ कर देते हैं कि अगर यह अल्लाह का कलाम (वाणी) है तो-

''मैं शुरु करता हूँ अल्लाह के नाम से'' कहने का क्या मतलब है, हालाँकि यहाँ की शैली से भाव स्पष्ट है कि अल्लाह अपने बन्दों को यह तअ़लीम दे रहा है कि वह उसकी हम्द व सना (स्तुति) इन शब्दों से करें और इन वाक्यों के साथ उसके सामने दुआ़ करें। इस में बन्दों को न केवल बन्दगी की तअ़लीम दी गई है बल्कि बन्दगी के आदाब भी सिखाये गये हैं।

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने अपने तमाम तब्लीग़ी ख़ुतूत (पत्र) जो बहुत से बादशाहों और ह़कीमों को भेजे हैं उन की शुरुआ़त بِسْمِ اللّٰهِ बिस्मिल्लाह से फ़रमाई है।

इस्लाम चूंकि शाँति पसन्द धर्म है, इसलिए इस की शुरुआ़त 'ह़म्द' (तअ़रीफ़) से की गई है और अल्लाह का नाम लेकर की गई है। इन्सान क़दम-क़दम पर यह सोचता रहे कि मेरा वजूद (अस्तित्व) और मेरा कोई काम अल्लाह की मर्ज़ी और उसकी मदद के बिना नहीं हो सकता जिसने इसके तमाम कामों को इ़बादत बना दिया है।

इस तरह़ 'खाना' एक काफ़िर भी खाता है और एक मुसलमान भी, मगर मुसलमान अपने लुक़्मा (निवाला) से पहले بِسْمِ اللّٰهِ 'बिस्मिल्लाह' कहकर यह इक़्रार करता है कि यह लुक़्मा ज़मीन से पैदा होने से लेकर पककर तैयार होने तक आसमान व ज़मीन और सितारों और लाखों इन्सानों की मेह़नत लगकर तैयार हुआ है, इस का ह़ासिल करना मेरे बस में न था। अल्लाह ही ने इन तमाम ह़ालतों से गुज़ार कर यह लुक़्मा या घूंट मुझे अ़ता किया है।

इस तरह़ यह तमाम दुनियावी समझे जाने वाले काम अल्लाह का ज़िक्र बनकर इ़बादत में लिखे जाते हैं।

मसायल-

● पहली रकअ़त के शुरु में اَعُوْذُ بِاللّٰهِ 'अऊ़ज़ूबिल्लाह' के बाद بِسْمِ اللّٰهِ 'बिस्मिल्लाह' पढ़ना तमाम इमामों के नज़्दीक वाजिब है। इख़्तिलाफ़ (मतभेद) सिर्फ़ इसमें है कि आवाज़ से पढ़ा जाये या आहिस्ता। 'इमाम अबू ह़नीफ़ा' (रह़०) आहिस्ता पढ़ने को तरजीह (प्राथ्मिकता) देते हैं।

● पहली रकअ़त के बाद दूसरी रकअ़तों में 'सूरः फ़ातिह़ा' से पहले بِسْمِ اللّٰهِ बिस्मिल्लाह पढ़ना चाहिए। इस के सुन्नत होने पर सब का इत्तिफ़ाक़ (सहमति) है।

● नमाज़ में सूरः फ़ातिह़ा के बाद सूरः शुरु करने से पहले 'बिस्मिल्लाह' नहीं पढ़ना चाहिए चाहे जहरी (आवाज़ वाली) नमाज़ हो या सिर्री (ख़ामोशी वाली)। **(शरह मुनीह)**

सूर-ए-फ़ातिहा का परिचय

यह सूरः हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर नुबूव्वत मिल जाने के बाद शहर 'मक्का' में नाज़िल हुई, मगर 'हज़रत मुजाहिद' इसे मदीने में नाज़िल होने वाली सूरः मानते हैं और बाज़ हज़रात इसे मक्की और मदनी दोनों तरह मानते हैं क्योंकि यह दोनों जगह नाज़िल हुई, लेकिन दो बार नाज़िल होने की वजह से इसे दो सूरतें नहीं कहा जाएगा बल्कि कहा जाएगा कि इसकी अ़ज़मत बताने के लिए ऐसा किया गया है। मक्की सूरः उसे कहते हैं जो हिजरत से पहले नाज़िल हुई और मदनी सूरः उसे कहते हैं जो हिजरत के बाद नाज़िल हुई।

इसमें सात आयतें हैं, इस सूरः की सात आयत होने पर सब का इत्तिफ़ाक़ है, लेकिन सातवीं आयत को निश्चित करने में इख़्तिलाफ़ है कि بسم الله **'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'** सूरः फ़ातिहा की आयत है या नहीं।

'इमाम शाफ़ई' (रह०) के अनुसार अगर इस को 'सूरः फ़ातिहः' का हिस्सा माना जाए तो सातवीं आयत 'सिरातल्लज़ीना' से ख़त्म सूरः तक होगी वरना 'इमाम अबू हनीफ़ा (रह०)' के अनुसार सातवीं आयत 'ग़ैरिल मग़ज़ूबि' से आख़िर तक होगी। यह सूरः हक़ीक़त में 'कुर्आन का मुक़द्दिमा अर्थात भूमिका या प्रस्तावना है। अरबी में जिस चीज़ से किसी लेख या पुस्तक की शुरुआत होती है उसे 'फ़ातिहः' कहते हैं और फ़ातिहः और इफ़्तिताह के माने शरु या प्रारम्भ करने के हैं।

सूरः 'फ़ातिहा' के नाम-

यह कुर्आन की बहुत अहम आयत है, जिससे कुर्आन की शुरुआत होती है। इसलिए इस सूरः का मशहूर नाम सूरः फ़ातिहः है। फ़ातिहः के माने शुरु करने वाली चूंकि यह सूरः कुर्आन के शुरु में आई है यानी इस से कुर्आन की शुरुआत होती है। इसलिए इसका मशहूर नाम अल् फ़ातिहा है। इस नाम के अ़लावह और भी बहुत से नाम मुफ़स्सिरीन ने गिनाये हैं, जिन में 'अल्लामा जलालउद्दीन सुयूती (रह०)' ने अपनी किताब 'अलइत्क़ान' में 25 नाम ज़िक्र किये हैं और 'इमाम कुर्तुबी' ने इस के 'बारह' नाम बताए हैं। जो इस तरह हैं-

(1) **ألحمد** (2) **فاتِحَةُ الكتاب** (3) **اُم القرآن** (4) **الصّلاة** (5) **ألكافيه** (6) **اُم الكتاب**
(7) **السبع المثانى** (8) **القرآن العظيم** (9) **الشفاء** (10) **الرّقيّه** (11) **الأساس** (12) **الوافيه**

(1) **अल्हम्दु** (1) **फ़ातिहातुल्किताब** (3) **उम्मुलु कुर्आन** (4) **अस्सलात** (5) **अल्काफ़िया** (6) **उम्मुलु किताब** (7) **अस्सबअ़मसानी**(8) **अल्कुर्आनुलअ़ज़ीम** (9) **अश्शिफ़ा** (10) **अर्रक़ीयह** (11) **अल्असास** (12) **अल्वाफ़ियह**

सूरः फ़ातिहः की फ़ज़ीलत-

हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने 'हज़रत उबई (रज़ि०)' से

फ़रमाया कि मैं तुम्हें ऐसी सूरः न बताऊँ जो पहले कभी न तौरात व इन्जील में उतरी और न कुर्आन में।

अ़र्ज़ किया ज़रूर बताएँ फ़रमाया सूरः फ़ातिहः जो 'सबअ़ मसानी' और कुर्आन अ़ज़ीम मुझे अ़ता हुई। **(तिर्मिज़ी व नसई)**

हज़रत अबू सईद मौला आमिर बिन कुरैज़ ने बताया कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने 'उबई बिन कअ़ब' (रज़ि०) से कहा, "मैं तुझे मस्जिद से निकलने से पहले एक ऐसी सूरः बताऊँगा कि उस जैसी तौरेत और इन्जील में नहीं उतारी गई और न ही कुर्आन में वैसी कोई दूसरी सूरः है। फिर आप (सल्ल०) ने पूछा, 'जब नमाज़ शुरु करते हो तो क्या पढ़ते हो?' उन्होंने 'अल्हम्दुलिल्लाहि रब्बिल् आ़लमीन' पढ़ी, आप ने फ़रमाया यही वह सूरः है।" **(मुवत्ता इमाम मालिक)**

'अ़ब्दुल्लाह बिन जाबिर' (रज़ि०) से रिवायत है जिसमें रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "कुर्आन करीम की सबसे बेहतरीन सूरः, 'सूरः फ़ातिहः' है।" **(मुस्नद अह़मद)**

हज़रत अबू सईद बिन मअ़ला (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मैं तुम्हें एक सूरत बताऊँगा जो कुर्आन में सब सूरतों से ज़्यादह अ़ज़्मत वाली है। वह الحمد لله رب العالمين सूरः फ़ातिहा है। इस में सात आयात हैं जो दोहराई जाती हैं। **(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् अज़ान, बाब 95 ह़दीस 756)**

'सूरः फ़ातिहः' पढ़ कर दम करना-

हज़रत अबू सईद (रज़ि०) से रिवायत है, "हम लोगों ने एक बार सफ़र (यात्रा) में एक जगह पड़ाव डाला तो वहाँ एक लड़की आई और बताया कि क़बीले के सरदार को साँप ने डस लिया और हमारे लोग बाहर गये हैं, क्या आप लोगों में कोई दम (फूँकझाड़) करने वाला है? तो हम में एक आदमी उठकर गया जिस के बारे में हम लोग नहीं जानते थे कि वह दम करना जानता है। उसने दम किया तो साँप का ज़हर उतर गया। उसने उसे तीस बकरियाँ दीं और हम सब को दूध भी पिलाया, जब वह वापस आया तो हम लोगों ने उस से पूछा क्या तुम दम करना जानते थे, उस ने जवाब दिया कि मैंने तो सूरः फ़ातिहः पढ़कर दम किया है, हम ने कहा बकरियों के मामले को ऐसे ही रहने दो, यहाँ तक कि हम रसूलुल्लाह (सल्ल०) से पूछ लें, जब हम मदीने आये और रसूलुल्लाह (सल्ल०) से पूछा तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि उसे कैसे मालूम हुआ कि सूरः फ़ातिहः दम करने की चीज़ है, तुम लोग इन बकरियों को तक़्सीम करते वक़्त मेरा भी एक हिस्सा रखना।" **(बुख़ारी)**

इस ह़दीस को 'इमाम मुस्लिम' और 'इमाम अबू दाऊद' ने भी रिवायत की है। (इस ह़दीस से मालूम होता है कि इसको पढ़कर फूंकने से साँप के काटने का ज़हर अल्लाह के हुक्म से ख़त्म हो जाता है।)

सूरः फ़ातिह़ा और सूरः बक़रः की आख़िरी आयतें-

'इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा' से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) हमारे दर्मियान मौजूद थे और हज़रत जिब्राईल (अ़लै०) भी आप के पास मौजूद थे कि ऊपर से एक आवाज़ सुनाई दी, हज़रत

जिब्राईल (अ़लै०) ने आसमान की तरफ़ नज़र उठाई और कहाः-

"आसमान का यह दरवाज़ा आज से पहले कभी नहीं खुला, इससे एक फ़रिश्ता उतरा और रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास आया और कहा, आप (सल्ल०) को दो नूर दिये जाने की ख़ुशख़बरी देता हूँ जो आप से पहले किसी नबी को नहीं दिये गये, सूरः फ़ातिह़ा और सूरः बक़रः की आख़िरी आयतें, इन का एक ह़र्फ़ (शब्द) भी आप पढ़ें तो उसका बदला आप को दिया जाएगा"। **(मुस्लिम, नसई)**

"ह़ज़रत अबू सईद (रज़ि०) से रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने कहा मैं तुम्हें मस्जिद से निकलने से पहले क़ुर्आन करीम की अ़ज़ीम तरीन सूरः सिखलाऊँगा फिर उन्हें सूरः फ़ातिहः की तअ़लीम दी"।

(बुख़ारी, अबूदाऊद, नसई, इब्ने माजा, मुस्नद अह़मद)

ह़दीस में 'सूर-ए-फ़तिहः' की बहुत सी फ़ज़ीलतें हैं। 'सह़ीह़ बुख़ारी' 642 भाग 2 में है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने 'सूर-ए-फ़तिहः' को "आज़म सूरः फ़ी क़ुर्आन" कहा अर्थात यह क़ुर्आन की अज़ीम तरीन सूरः है। **(बुख़ारी)**

सुनन तिर्मिज़ी (ह़दीस की किताब) में है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने 'सूर-ए-फ़तिहः' के बारे में फ़रमाया किः-

"अल्लाह की क़सम इस जैसी सूरः न तौरेत में उतारी गई न इंजील में, न ज़ुबूर में और न क़ुर्आन में।" **(तिर्मिज़ी)**

'ह़ाकिम' ने 'मुस्तदरक' में रिवायत की है कि "ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने सूर-ए-फ़ातिहः को अफ़्ज़लुलु क़ुर्आन बताया।" **(दुर्रे मन्सूर)**

कुछ ह़दीसों में सूर-ए-फ़तिहः को दो तिहाई क़ुर्आन के बराबर फ़रमाया है। **(दुर्रे मन्सूर, भाग एक)**

'मुस्लिम शरीफ़' में है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया कि अल्लाह तअ़ाला का इर्शाद है कि मैंने नमाज़ को अपने बन्दों के दर्मियान आधा-आधा बाँट दिया है और बन्दा जो सवाल करे उसके लिए वही है। जब बन्दा कहता है اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ अल्लाह तअ़ाला फ़रमाते हैंः-

मेरे बन्दे ने मेरी तअ़रीफ़ की फिर जब वह कहता है الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ तो अल्लाह तअ़ाला फ़रमाते हैं मेरे बन्दे ने मेरी बड़ाई बयान की।

फिर जब कहता है مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ तो अल्लाह तअ़ाला फ़रमाते हैं मेरे बन्दे ने मेरी बुर्ज़ुगी (मर्यादा) बयान की।

फिर जब वह कहता है إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِيْنُ अल्लाह तअ़ाला फ़रमाते हैं कि यह मेरे और मेरे बन्दे के दर्मियान है और बन्दा जो मुझ से सवाल करे उसके लिए वही है फिर जब बन्दा कहता हैः-

اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ ۝ صِرَاطَ الَّذِيْنَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ ۝ غَيْرِ الْمَغْضُوْبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّآلِّيْنَ ۝

तो अल्लाह तअ़ाला फ़रमाते हैं यह मेरे बन्दे के लिए है और मेरा बन्दा जो सवाल करे उसके लिए वही है।

'ह़ज़रत अ़ब्दुल मालिक बिन आमिर' से रिवायत है कि "ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया,

फ़तिहातुल् किताब हर मर्ज के लिए शिफ़ा (तन्दुरुस्ती) है"।

'ह़ज़रत अनस (रज़ि०)' से रिवायत है कि नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया कि "अगर तू फातिह़ातुल् किताब (सूरः फ़ातिह़ः) और قُلْ هُوَ اللّٰهُ اَحَدٌ (कुल हुवल्लाहु अ़हद) पढ़ ले तो मौत के सिवा हर चीज़ से तुझे अमान मिल जाए"। **(दुर्रे मन्सूर)**

नोट– 'सूरः फ़ातिह़ः' और क़ुर्आन की दूसरी सूरतें पढ़कर मुर्दे को सवाब पहुँचाना जायज़ है, लेकिन खाने पर फ़ातिहः पढ़कर तक़्सीम करना कहीं से जायज़ नहीं, यह बेअसल बात है।

इस तरह़ सूरः फ़ातिह़ः बन्दा की एक अ़र्ज़ी और दरख़्वास्त है जो अल्लाह की बारगाह में पेश करता है। जिसकी तफ़्सील आगे आ रही है।

क़ुर्आन मजीद के नाज़िल होने की तर्तीब (क्रम) अलग है और तिलावत की तर्तीब (क्रम) अलग क़ुर्आन मजीद जो 23 साल में थोड़ा-थोड़ा नाज़िल हुआ वह वक़्त, ह़ालात और ह़िक्मत के अनुसार था, लेकिन जो तर्तीब रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने बताई है उस के मुताबिक़ तिलावत की जाती है।

यह सूरः छोटी होने के बावजूद पूरे क़ुर्आन का निचोड़ है इसी लिए इसे "उम्मुल् क़ुर्आन" भी कहा गया है। इस में तौह़ीद रिसालत, आख़िरत का बयान दुआ़ (प्रार्थना) के अन्दाज़ में है।

इस सूरः में अल्लाह तआ़ला ने इन्सानों को यह तअ़लीम दी है कि वह इन शब्दों के ज़रिये उस से दुआ़ करे।

इस तरह़ बन्दा अल्लाह से दुआ़ करता है कि मुझे उस राह पर चला जो ज़िन्दगी का सीधा और आसान रास्ता हो उस के जवाब में पूरा क़ुर्आन उसे दिया जाता है।

सूर-ए-फ़ातिह़ः का अनुवाद

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۝ مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ ۝ اِيَّاكَ نَعْبُدُ وَاِيَّاكَ نَسْتَعِيْنُ ۝
اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ ۝ صِرَاطَ الَّذِيْنَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ ۙ غَيْرِ الْمَغْضُوْبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّآلِّيْنَ ۝

अनुवाद-

(1) सब तरह की तअ़रीफ़ें अल्लाह ही के लिए हैं जो तमाम आलमों (सृष्टियों) का रब (पालन कर्ता) है। (2) बड़ा मेहरबान, निहायत (ख़ूब) रह़म वाला है; (3) बदला दिये जाने वाले दिन का मालिक है; (4) हम तेरी ही इ़बादत करते हैं और तुझ ही से मदद माँगते हैं (5) हमें सीधे रास्ते पर चला; (6) उन लोगों का रास्ता जिन पर तू अपना फ़ज़्ल (अनुग्रह) करता रहा; (7) न उनका जिन पर गुस्सा (प्रकोप) होता रहा और न भटके हुए लोगों का।

सूरः फ़ातिह़ः की व्याख्या

1 अल्ह़म्दु- اَلْحَمْدُ

'ह़म्द' के माने 'मदह़' (प्रशंसा) और 'शुक्र' दोनों से बुलन्द (श्रेष्ठ) हैं अर्थात हर तरह़ की सभी तअ़रीफ़ें और ज़्यादा से ज़्यादा बड़ाई जो दुनिया में अब तक हुई है या अन्त तक होनी सम्भव है, वह सब तअ़रीफ़ें अल्लाह ही के लिए हैं, अर्थात 'मदह़' या तअ़रीफ़ किसी की भी हो, किसी के नाम से हो, ह़क़ीक़त में वह केवल अल्लाह ही की होती है।

الالف واللام فی الحمد لاستغراق جمیع اجناس الحمد للّٰہ تعالٰی (इब्ने कसीर)

सूरः फ़ातिह़ः ह़क़ीक़त में एक दुआ़ है। दुआ़ का अदब यह है कि जिससे दुआ़ माँगी जा रही है, उसकी तअ़रीफ़ व ख़ूबी बयान की जाए और उसके एह़सानात ज़िक्र करते हुए उसके पद का एतिराफ़ (कुबूल) किया जाए और फिर उससे माँगे ताकि वह मायल हो और पूरी तवज्जोह हो जाये और फिर यही अस्ल तअ़रीफ़ नेअ़मत के इक़्रार पर है, जो एह़सानमन्दी का तक़ाज़ा है कि उस अल्लाह की तअ़रीफ़ की जाए।

चूंकि हर नेअ़मत का अ़ता करने वाला वही है। इसलिए शुरु से आख़िर तक सब तअ़रीफ़ जो हुई हैं और जो होंगी वह सब अल्लाह ही के लिए हैं। दुनिया में जो भी हुस्न व ख़ूबी या कमाल मौजूद है वह किसी मख़्लूक़ (सृष्टि) का कमाल नहीं है, बल्कि अल्लाह का दिया हुआ है। इसलिए इस क़ुर्आन के पहले शब्द ने मख़्लूक़ परस्ती की जड़ काट दी और तौह़ीद (एकेश्वरवाद) को दिल व दिमाग़ पर बिठा दिया।

ह़दीस में है कि जब अल्लाह तआ़ला बन्दा को कोई नेअ़मत अ़ता फ़रमाए और वह उस पर

'अल्हम्दु लिल्लाह' कहे तो ऐसा हो गया कि जो कुछ उसने लिया है यानी उससे बेहतर चीज़ उसने दे दी।

दूसरी हदीस में है कि अगर दुनिया की तमाम नेअ्मतें एक व्यक्ति को हासिल हो जाएँ और वह उस पर 'अल्हम्दु लिल्लाह' कह ले तो यह कलिमा सारी नेअ्मतों से अफ़्ज़ल है। **(क़ुर्तुबी)**

'इब्ने जरीर' लिखते हैं कि अल्लाह तआ़ला ने अपनी तअ्रीफ़ ख़ुद बयान करके अपने बन्दों को तअ्लीम दी है कि उसकी तअ्रीफ़ बयान करें।

'इमाम इब्ने क़य्यिम' (रह०) ने लिखा है कि हर अअ्ला सिफ़त हर अच्छे नाम, बेहतर तअ्रीफ़, हर हम्द व मदह जो हो सकती है वह सब अल्लाह ही के लिए है। अल्लाह की जितनी सिफ़तें बयान की जाती हैं और जितने नामों से उसे याद किया जाता है और जो कुछ भी अल्लाह की बड़ाई में कहा जाता है वह सब अल्लाह की तअ्रीफ़ें हैं।

शुक्र-

अल्लाह ही के लिए है का मतलब यह है कि इन्सान को जो बेशुमार (अनगिनत) नेअ्मतें दी गई हैं, वह सब अल्लाह ही की देन है। जैसे-खाने-पीने, सोने, जागने, जिस्म (शरीर) की तमाम चीज़ें सब उसी ने दी हैं। इसलिए उसी का शुक्रगुज़ार बनकर रहना चाहिए।

'इमाम इब्ने जरीर तब्री' फ़रमाते हैं 'अल्हम्दु लिल्लाह' के माने हैं, शुक्र ख़ालिस अल्लाह तआ़ला के लिए। **(तफ़्सीर तब्री भाग-1)**

'इमाम राज़ी' फ़रमाते हैं 'हम्द' नेअ्मतों पर होती है। **(तफ़्सीर कबीर-भाग 1)**

सय्यद क़ुतुब फ़रमाते हैं, अल्लाह के एहसानात का दिल से शुक्र का जज़्बा पैदा होता है और उससे अल्लाह की बन्दगी का जज़्बा उभरता है। **(फ़ीज़िलालिल् क़ुर्आन)**

यही वजह है कि आग़ाज़ व अन्जाम दोनों में अल्लाह की हम्द इस्लामी फ़िक्र के उसूलों में से एक अहम उसूल है। وَهُوَ اللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۭ لَهُ الْحَمْدُ فِي الْاُوْلٰى وَالْاٰخِرَةِ ۡ وَلَهُ الْحُكْمُ وَاِلَيْهِ تُرْجَعُوْنَ **(सूरः क़सस-70)**

इब्ने उ़मर (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने उन से बयान किया कि अल्लाह के एक बन्दे ने कहा, ऐ रब! तेरे ही लिए हम्द है, जैसी तेरी बुर्जुग ज़ात और अ़ज़ीम सिफ़ात का मालिक है। फ़रिश्तों को सख़्त दुश्वारी हुई वह यह न समझ सके कि इसे किस तरह लिखें। वह अल्लाह के पास पहुँचे और अ़र्ज़ किया, ऐ रब! एक बन्दे ने एक ऐसी बात कही है, जिसे हम समझ नहीं पा रहे हैं कि कैसे लिखें। अल्लाह ने पूछा कि मेरे बन्दे ने क्या कहा, हालाँकि वह ख़ूब जानता था कि उस के बन्दे ने क्या कहा था। फ़रिश्तों ने कहा, ऐ रब! उस ने कहा तेरे लिए ही हम्द (तअ्रीफ़) है। मेरे रब जैसी की तेरी बुर्जुग ज़ात और अ़ज़ीम इक़्तिदार की शयाने शान है। अल्लाह ने फ़रमाया मेरे बन्दे ने जैसे कहा लिख लो, यहाँ तक कि मेरे पास आये तो मैं उसका बदला दूँगा। **(सुनन इब्ने माजा)**

इस दुनिया में करोड़ों चीज़ें हैं जो हर वक़्त इन्सान को अपनी ओर खींचती रहती हैं, जैसे किसी

सुन्दर चीज़ या सुन्दर फ़ोटो की तअ़रीफ़ करने लगता है, मगर ह़क़ीक़त यह है कि वह उस के बनाने वाले की ही तअ़रीफ़ होती है, इसी तरह़ बादशाह या अधिकारी यदि इन्साफ़ वाला है तो इसका मतलब यह है कि अल्लाह ने ही इन्साफ़ के गुण उसके अन्दर रखे हैं, यदि कोई सुन्दर और विशेष गुणों का मालिक है, तो वह सब अल्लाह ही का दिया हुआ है। इस तरह़ जिस की भी तअ़रीफ़ की जाये घूम कर उस के बनाने वाले अल्लाह ही की ओर जाती है। इस लिए 'मदह़', 'सना', 'तअ़रीफ़' (प्रशंसा) केवल उसी अल्लाह के लिए है।

'लिल्लाहि'- لِلّٰهِ

'अल्लाह' शब्द व्यक्तिवाचक नाम (Proper Noun) है, उसके गुणवाचक नाम तो बहुत से हैं, जो क़ुर्आन में विषय और प्रसंग के अनुसार आए हैं। अरबी भाषा का शब्द 'इलाह' जिसका अर्थ दूसरी भाषा में करना बहुत कठिन है, परन्तु कुछ विद्वानों ने इसका अर्थ उपास्य, पूज्य, लिया है। इसी 'इलाह' शब्द पर अ़रबी के अलिफ़ और 'लाम' अक्षर बढ़ा देने से 'अल्लाह' बन गया।

'अल्लाह' का अनुवाद-

'अल्लाह' शब्द का अनुवाद दूसरी भाषा में मुम्किन नहीं। उर्दू में ख़ुदा और अंग्रेज़ी में गॉड (GOD) के शब्द आमतौर से ब्रह्माण्ड के सृष्टा के लिए प्रयोग होते हैं, लेकिन ख़ुदा का बहुवचन ख़ुदाओं और ख़ुदावन्दान बनाया जाता है और GOD देवी-देवताओं के लिए भी बोला जाता है। इसीलिए उस का स्त्रीलिंग GODDNESS आता है, जिस का अर्थ देवी के है। अतः शुक्र ग्रह को Goddess Venus कहा जाता है एवं ईसाइयों के जीश्वरवाद (तस्लीस के अ़क़ीदे) में ह़ज़रत ईसा को GOD, The Son की संज्ञा दी गई है। **(The Oxford Eng. Dictionary Vol- IV 268, 271)**

शब्द ईश्वर-

मराठी या हिन्दी में ईश्वर और परमेश्वर के शब्द अल्लाह (Supreme Being) के अर्थ में प्रयोग होते हैं, लेकिन यह 'शिव' और 'विष्णू' के भी उपनाम हैं।

शब्द 'ईश्वर' 'ईश' और 'वर' से मिलकर बना है। ईश का अर्थ मालिक और ह़ाकिम के होते हैं और 'वर' का अर्थ उच्चतर। इस तरह़ ईश्वर का अर्थ हुआ ख़ुदा-ए-बरतर (उच्चतर स्वामी) लेकिन इसका स्त्रीलिंग ईश्वरी आता है, जो देवी के लिए बोला जाता है।

(देखिये Moles Worth's Marathi Eng. Dictionary P. 84)

इसी तरह़ परमेश्वर परम और ईश्वर से मिलकर बना है। 'परम' का अर्थ उच्च के है और परमेश्वर का अर्थ उच्चतर ईश्वर के। 'ईश्वर' और 'परमेश्वर' दोनों शब्दों के प्रयोग से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह "ब्रह्माण्ड के सृष्टा" के लिए तो प्रयोग होता है लेकिन उनके लिए विशेष नहीं बल्कि देवी-देवताओं के लिए उनकी विशेषता के तौर पर भी बोला जाता था और 'उपाधि' के तौर पर इनका प्रयोग होता है।

शब्द 'भगवान'-

इसी तरह़ 'भगवान' शब्द भी अल्लाह के लिए विशेष नहीं बल्कि विशेष गुण के तौर पर था, उपाधि के तौर पर देवताओं के लिए प्रयोग होता है। जैसे- 'भगवान शंकर', 'भगवान शिव' और विष्णु को भी भगवान कहा जाता है।

इस तरह़ यह शब्द क़ुर्आन के शब्द अल्लाह के स्थान पर प्रयोग नहीं हो सकते। जो ब्रह्म्माण्ड के सृष्टा के लिए विशेष हैं।

अल्लाह शब्द 'एकवचन' है। इसका कोई 'बहुवचन' नहीं। क़ुर्आन में अल्लाह २६९७ बार आया है, इससे इसकी महत्ता स्पष्ट हो जाती है।

अर्थात एक वही अस्तित्व, उपासना, प्रार्थना और भक्ति का अधिकारी जो इस सृष्टि का सृष्टा है उसी का नाम अल्लाह है। उसे हम ज़ाहिरी निगाहों (भौतिक दृष्टि) से न देख सकते हैं और न हवासे ख़मसा (भौतिक ज्ञानेन्द्रियों) से उसके अस्तित्व की वास्तविकता को समझ सकते हैं क्योंकि वह इन साधनों से परे है, लेकिन हमारी अन्तर आत्मा उसके अस्तित्व को अनुभव करती है तथा सृष्टि और उसकी व्यवस्था से हमें उस अस्तित्व का प्रमाण प्राप्त होता है, वह हमेशा से है और हमेशा रहेगा, वह सर्व ब्रह्म्माण्ड अर्थात सभी तरह़ के प्राणियों का, चाहे वह फ़रिश्तों की दुनिया हो या चन्द्रमा, मंगल ग्रह आदि सबका वही अकेला अद्वितीय सृष्टिकर्ता और पालनहार (रब) है।

'रब्बिल आ़लमीन'- رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ

'रब' के मअ़नी अ़रबी भाषा में 'तर्बियत' करने और देख-रेख करते-करते एक ह़ालत से दूसरी ह़ालत की ओर उन्नति देने के हैं। यहाँ तक कि वह अपनी पूरी सीमा तक पहुँच जाए।

'रब' का शब्द अरबी भाषा में तीन अर्थों में प्रयोग होता है। 1. मालिक और आक़ा 2. पालने और परवरिश करने वाले (निरीक्षक) 3. मुदब्बिर और मुन्तज़िम (प्रबन्धक) के रूप में, इस तरह़ इन सब मानों में वही इस काइनात (ब्रह्माण्ड) का रब है।

आ़लमीन (Universe)- عٰلمين

आ़लमीन आ़लम (जगत-Planet) की जमा (बहुवचन) है, आ़लमीन जिसमें आसमान, चाँद, सूरज, सितारे, हवा, फ़रिश्ते और जिन्नात आदि की दुनिया के साथ बहुत से आ़लम, जिनको हम जानते हों या न जानते हों, या आइन्दा (भविष्य में) जितने भी आ़लमों (संसारों- Planet) के बारे में तहक़ीक़ होती जाएगी, सब इसी एक शब्द में आ जाएँगे।

इस तरह़ हर निज़ाम शम्सी के अ़लावा और जहान भी हैं और इसी जैसे हज़ारों, लाखों दूसरे आ़लम हैं जो बाहर ख़ला में मौजूद हैं। जैसे- चाँद की रोशनी डेढ़ सेकेण्ड में ज़मीन पर आ जाती है और चाँद से 87 लाख गुना बड़ा एक 'सय्यारह' या नक्षत्र (Heavenly Bodies) का निज़ाम है, जिसकी

किरण उस आ़लम से चलकर पहली मर्तबः ज़मीन पर 1950 ई० में पहुँची है। इससे जहानों की वुस्अ़त (विशालता) का अन्दाज़ा किया जा सकता है।

मुख़्तलिफ़ आ़लम-

ह़ज़रत अबू सईद ख़ुद्री (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि मश्रिक़ से लेकर मग़्रिब तक आ़लमे दुनिया है। उसके अ़लावह तमाम जहान मिलकर (40,000) चालीस हज़ार आ़लम हैं। इमाम तफ़्सीर ह़ज़रत मक़ातिल 80,000 आ़लम फ़रमाते हैं। 'तफ़्सीर कबीर' में 'इमाम राज़ी' लिखते हैं कि इस आ़लम से बाहर अथाह ख़ला (अन्तरिक्ष) का वजूद अ़क़्ली दलायल से साबित है। इसीलिए यह मुम्किन है कि हमारे इस आ़लम की तरह़ और भी हज़ारों लाखों आ़लम अल्लाह ने बना रखे हों और ज़रूरी नहीं कि वहाँ की मख़्लूक़ का मिज़ाज यहाँ की मख़्लूक़ की तरह़ हो बल्कि वहाँ के रहने वालों की ख़ुसूसियत वहाँ के मुनासिब होगी। ख़लाई सफ़र (अन्तरिक्ष यात्रा) से वापस आने के बाद 'जॉन गिलियन' अमरीकी ने जो मक़ाला छपवाया उसमें उसने एतिराफ़ किया है कि कुछ नहीं बतलाया जा सकता कि 'ख़ला' (अन्तरिक्ष) की कितनी और कहाँ तक वुस्अ़त है।

अल्लाह इन सब का रब है। लेकिन क़ुर्आन मजीद में अल् आ़लमीन अहले जहाँ या इन्सानों के मअ़ना में भी आया है। जैसे-

وَمَآ أَرْسَلْنٰكَ إِلَّا رَحْمَةً لِّلْعٰلَمِيْنَ

और 'हमने' आप को सारी दुनिया के लिए रह़मत बना कर भेजा है। ***(सूरः अम्बिया-107)***

إِنْ هُوَ إِلَّا ذِكْرٌ لِّلْعٰلَمِيْنَ ۝

यह (क़ुर्आन) तो सारे संसार वालों के लिए एक नसीह़त है; ***(सूरः तक्वीर-27)***

وَأَنِّيْ فَضَّلْتُكُمْ عَلَى الْعٰلَمِيْنَ ۝

मैंने तुम्हें सारे संसार पर फ़ज़ीलत (प्रधानता) दी थी; ***(सूरः बक़रः-47)***

उ़लमा व मशायख़-

रसूलुल्लाह (सल्ल०) से 'अ़दी बिन ह़ातिम (रज़ि०)' ने जो इस्लाम लाने से पहले ईसाई थे, पूछा हम ने कब अपने उ़लमा व बुज़ुर्गों को रब बनाया और उन की इ़बादत की। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया क्या ऐसा न हुआ कि जिस चीज़ को उन्होंने ह़लाल किया उसे तुम ने ह़लाल समझा और जिसे ह़राम किया उसे ह़राम समझा। उन्होंने कहा हाँ, आपने फ़रमाया यही उन की इ़बादत है।

इस तरह़ अल्लाह ही रब है, उसके सिवा किसी और का हुक्म उस के हुक्म के मुक़ाबिले में नहीं माना जाएगा।

इसलिए कि अल्लाह किसी ख़ास नस्ल, क़ौम या क़बीले का नहीं, बल्कि सब का पालनहार अकेला है अर्थात हर तरह़ की सभी तअ़रीफ़ें उस अल्लाह के लिए ही हैं जो सारे जहानों और हर तरह़ की जिन्सों का पालनहार है।

राजा की मिसाल-

यहाँ उन लोगों के अ़क़ीदों (आस्थाओं) का भी खण्डन किया गया है, जो तमाम देवी देवताओं को अल्लाह का साझीदार मान लेते हैं, और यह समझने लगते हैं कि बड़ा ख़ुदा भी राजा की तरह़ है जिसके कुछ मंत्री और सलाहकार हैं। जिनका कहना राजा मानता है इस लिए जब तक इन छोटे ख़ुदाओं (मंत्रियों) को ख़ुश नहीं किया जाएगा बड़ा ख़ुदा राज़ी नहीं होगा इस लिए इन सबकी पूजा करनी चाहिए। लेकिन यहाँ 'रब्बिल आ़लमीन' से इस अ़क़ीदे का खण्डन हो जाता है जिसे इन्सान ने देवता माना था वह ख़ुद भी किसी के बन्दे हैं, ख़ुदा नहीं! इनके बस में न जिलाना है, न मारना, वह तो ख़ुद ही लाचार और बेबस हैं, तो दूसरों को क्या दे सकते हैं! इस तरह़ यहाँ कहा गया, कि वही एक अल्लाह रब (पालनहार) है तमाम आ़लमों (ब्रह्माण्ड) का।

2 अर्रह़्मानिर्रह़ीम- الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

'रह़मान' में रह़मत की शान सबके लिए है मोमिन हो या काफ़िर और 'रह़ीम' में उसकी दयालुता और माफ़ करने की विशेषता केवल ईमान वालों ही के साथ है।

जिस अल्लाह को 'रब्बिल आ़लमीन' कह कर पुकारा गया था वही अल्लाह तमाम आ़लम (सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड) की तर्बियत व परवरिश का ज़िम्मेदार किसी ज़रूरत, या दबाव या मजबूरी से नहीं! बल्कि यह उसकी सिफ़ते रह़मत की बुनियाद पर है; वही दुनिया में सबको रोज़ी व राह़त पहुँचा रहा है, इसलिए वही बड़ा मेहरबान निहायत रह़म करने वाला है, जो आख़िरत में मोमिनों को बदला उसके अ़मल के अनुसार बहुत ज़्यादा देगा। **(तफ़्सील के लिए 'बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम' की तफ़्सीर देखें।)**

क्या, अल्लाह दयावान नहीं!

हमारे देश में एक समुदाय अल्लाह (परमेश्वर) को रह़मान व रह़ीम (क्षमाशील) नहीं मानता उसके अनुसार क्षमा करना अल्लाह के न्याय के विरुद्ध है, यह कितना विचित्र विचार है! क्षमा करना तो इन्सान की इन्सानियत का सबसे महत्वपूर्ण गुण माना जाता है; क्या जो इन्सान इन्सानों को माफ़ कर देता है वह अन्याय करता है, और क्या इस विचार के लोग अपनी पत्नी और बेटे को क्षमा नहीं करते? दण्ड ही दिया करते हैं, इस समुदाय के लोग मनुष्य को जिस तत्व से बना मानते हैं उसके तीन गुण हैं। (1.सतोगुण 2.रजोगुण 3.तपोगुण।)

इस तरह़ कैसे सम्भव है कि इन्सान से जीवन भर में छोटा-बड़ा किसी तरह़ का पाप हो ही ना, ऐसी निःपाप प्राणी तो अभौतिक अर्थात फ़रिश्ते ही हो सकते हैं; मनुष्य भौतिक है; इस सम्प्रदाय के अनुसार मन के पाप का फल भी भोगना पड़ता है, फिर उसकी मुक्ति कैसे सम्भव है?

यह समुदाय एक और उदाहरण देता है कि यदि राजा, प्रजा को क्षमा करने लगे तो सारी जनता अपराधी ही हो जाएगी, परन्तु यह उदाहरण वास्तविकता के विरुद्ध है, शासक बुद्धिहीन नहीं हुआ करता,

वह भली भांति जानता है कि कौन सा अपराध क्षमा योग्य है और कौन नहीं, वह उसी को क्षमा करता है जो क्षमा के योग्य हो। और अल्लाह तो महाज्ञानवान है उसके क्षमादान का यह अर्थ नहीं है कि वह नास्तिक (काफ़िर) अत्याचारी, दुष्ट सभी को क्षमा कर देगा। वह उसी को क्षमा करता है, जो अल्लाह का बन्दा (भक्त) और आज्ञाकारी (फ़रमाँबरदार) होता है, जिससे यदि भूल-चूक से पाप हो जाये और वह उस पर पश्चाताप भी करे और अच्छे (पुण्यमय) जीवन का अ़हद (प्रतिज्ञा) करे तो उस पर अल्लाह रह़म करता है।

न्याय दया के विरुद्ध नहीं-

जिस तरह़ न्याय दया के विरुद्ध नहीं, उसी तरह़ दया भी न्याय के विरुद्ध नहीं, दोनों का अपना-अपना उचित स्थान है, दया और क्षमा तो मनुष्य का सबसे उत्तम गुण माना गया है, जिसमें दया और क्षमा का भाव नहीं उसमें मनुष्यता नहीं, फिर जो अल्लाह सबका जन्मदाता और पालनकर्ता है, वही इस गुण से कैसे खाली हो सकता है!

यदि दया और क्षमा को दोष माना जाए तो मनुष्य हिंसक बन जाएगा। अक्सर (प्रायः) ऐसे अवसर आते रहते हैं कि मनुष्य से मनुष्य को दुःख पहुँच जाता है यदि कोई किसी को क्षमा न करे, भूल-चूक का भी बदला लेने लगे, तो मानवता ही नष्ट हो जाएगी; त्रुटि और दोष तो मनुष्य का स्वभाव है, यदि अल्लाह के दया और क्षमा के सिद्धान्त ही को न माना जाए और अल्लाह को कठोर न्यायकर्ता मान लिया जाए जो क्षमा करना जानता ही न हो, तो मनुष्य की मुक्ति कभी हो ही नहीं सकती, मनुष्य के कितने दोषों का सम्बन्ध अल्लाह से ही होता है, इसलिए अल्लाह यदि किसी को क्षमा के योग्य समझकर उसे क्षमा कर दे तो उसमें अन्याय का प्रश्न ही कहाँ उठता है।

यदि मनुष्य किसी को दुःख या कष्ट पहुँचाएगा तो ऐसे अनुचित कर्मों का दण्ड मिलेगा। इस तरह़ यह कहना बिल्कुल ग़लत है कि पापियों को माफ़ करके उसे और पाप पर प्रोत्साहित (उभारना) करना है। अल्लाह तो केवल उसी को माफ़ करेगा जिसमें ईश्वर भक्ति का भाव और पुण्य का विचार होगा और वह अपने अनुचित कर्म पर पश्चताप करके उससे दोबारा बचने की कोशिश करेगा। वह अल्लाह अ़लीम, ख़बीर (सर्वज्ञ) है भली-भाँति जानता है कि कौन क्षमा के योग्य है और कौन नहीं, वह उसी को केवल माफ़ करेगा जो माफ़ी (क्षमा) के क़ाबिल (योग्य) होगा।

3 मालिकियौमिद्दीन- مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ

मालिक 'मिल्क' से बना है, जिसका अर्थ होता है किसी पर ऐसा क़ब्ज़ा, जिस पर पूरे अख़्तियार के साथ क़ुद्रत हो।

बादशाह, प्रधानमन्त्री या जज को चाहे कितने ही अधिकार हों बहरह़ाल सीमित ही होते हैं और वह मुजरिमों को क़ानून के मुताबिक़ सज़ा देने पर मजबूर होता है। गोया कि स्वयं ह़ाकिम पर हुकूमत क़ानून की होती है।

मालिक वास्तव में उसे कहते हैं जिसे पूरे अधिकार प्राप्त हों वह मुजरिम को चाहे माफ़ (क्षमा) करे चाहे सज़ा दे कोई उससे पूछने वाला न हो।

दीन का अर्थ-

'दीन' का अर्थ होता है जज़ा देना (बदला देना) और क़ियामत (महाप्रलय) को रोज़े जज़ा (बदले का दिन) इसलिए कहते हैं कि वह पूरे हिसाब और हर अ़मल के बदले का दिन होगा यहाँ भी यौमिद्दीन का मतलब 'क़ियामत का दिन' है। **(कश्शाफ़)**

अस्ल मालिक कौन-

यहाँ यह सवाल उठता है कि क्या अल्लाह आज मालिक नहीं, तो फिर बदले के दिन का मालिक कहने की क्या ज़रूरत थी? हाँ, अल्लाह आज भी इस दुनिया में हर चीज़ का मालिक है, लेकिन हमारी ज़ाहिरी आँखों पर पर्दे पड़े हुए हैं। जैसे कोई कहता है, मैं दुकान का मालिक, कोई कहता है मैं मकान और कारख़ाने का मालिक, जबकि वास्तव में इन्सान किसी चीज़ का मालिक नहीं, बल्कि अल्लाह ने अपने बन्दों को कुछ अधिकार दे रखे हैं, ताकि वह देखे कि बन्दे उसे किस तरह़ प्रयोग करते हैं। वरना आज भी कोई किसी चीज़ का मालिक नहीं, क्योंकि एक व्यक्ति कहता है, मैं इस मकान का मालिक हूँ फिर वह मर जाता है तो उसका बेटा मालिक हो जाता है, फिर अगर वह बेच दे तो तीसरा मालिक हो जाता है तो इससे यह पता चला कि वास्तव में वही मालिक है, जो हमेशा से है और हमेशा रहेगा।

यह बात अगर दुनिया में समझ में नहीं आती तो कल क़ियामत (प्रलय) के दिन सामने ज़ाहिर हो जाएगी जबकि अपनी आँखों से इन्सान देख लेगा कि उस दिन किसी का हुक्म नहीं चलेगा क्योंकि उस दिन अल्लाह के अलावा किसी और को सज़ा और जज़ा (बदला) देने का अधिकार नहीं होगा सब उसके सामने आ़जिज़ (लाचार) व बेबेस होंगे।

क़ियामत का दिन-

इस पूरी सृष्टि (क़ायनात) का एक निश्चित समय पर अन्त हो जाएगा। फिर उस मालिक ने जिस तरह़ अपनी शक्ति से पहले संसार की सृष्टि की है, दूसरे संसार की भी सृष्टि कर देगा और वह शुरु (आदिकाल) से अन्त तक के तमाम इन्सानों को दोबारा ज़िन्दा कर देगा, उसके बाद दुनियावी ज़िन्दग़ी के तमाम कामों का ह़िसाब लेगा और जिसकी ज़िन्दग़ी उसके हुक्मों के अनुसार गुज़री होगी उसे वह इस आलम (सृष्टि) से भी ज़्यादा वसीअ़ (विस्तृत) आलम यानी जन्नत (स्वर्ग) में जगह देगा तथा इस संसार के शुरु से अंत तक के इन्सानों को चाहे वह किसी तरह़ मरे हों और उनके लाशों की जो भी गत बनाई गई हो उनको दोबारा ज़िन्दा कर देगा। इसी को न्याय (इन्साफ़) का दिन भी कहा जाता है।

क़ुर्आन का जवाब-

बहुत से लोग कहते हैं कि जब इन्सान सड़-गल कर मिट्टी में मिल जाता है तो वह दोबारा कैसे

ज़िन्दा किया जाएगा। इसका जवाब कुर्आन ने इस तरह़ दिया हैः-

أَوَلَمْ يَرَ الْإِنسَانُ أَنَّا خَلَقْنَاهُ مِن نُّطْفَةٍ فَإِذَا هُوَ خَصِيمٌ مُّبِينٌ ۝ وَضَرَبَ لَنَا مَثَلًا وَنَسِيَ خَلْقَهُ ۖ قَالَ مَن يُحْيِي
الْعِظَامَ وَهِيَ رَمِيمٌ ۝ قُلْ يُحْيِيهَا الَّذِي أَنشَأَهَا أَوَّلَ مَرَّةٍ ۖ وَهُوَ بِكُلِّ خَلْقٍ عَلِيمٌ ۝

"क्या इन्सान विचार नहीं करता कि हमने उसे नुत्फ़ा (वीर्य- Sperm) से पैदा किया फिर वह स्पष्ट रूप से विरोधी बन गया और वह हमारे सम्बन्ध में कहावतें कहता है और अपनी तख़लीक़ (उत्पत्ति) को भूल गया, और कहता है हड्डियों को कौन ज़िन्दा करेगा जिसने उसे पहली बार पैदा किया वह हर तरह़ से पैदा करना जानता है"। (**सूरः यासीन, आयत नं० 77-79**)

एक दूसरे स्थान पर कहा गया-

أَيَحْسَبُ الْإِنسَانُ أَلَّن نَّجْمَعَ عِظَامَهُ ۝ بَلَىٰ قَادِرِينَ عَلَىٰ أَن نُّسَوِّيَ بَنَانَهُ ۝

"क्या इन्सान ने यह सोच रखा है कि हम उसकी (बिखरी) हड्डियों को जमा न कर सकेंगे? क्यों नहीं, हम इस पर क़ादिर हैं कि उसके पोर-पोर को दुरुस्त कर दें"। (**सूरः क़ियामः नं० 3-4**)

सड़ गल कर मिट्टी में मिलने का मतलब यह हुआ कि वह अपने सूक्ष्तम कण (अणु Molecule) की अवस्था में आ जाएगा, वैज्ञानिक दृष्टिकोण से यह बात स्पष्ट है कि सूक्ष्तम कणों से इन्सान की उत्पत्ति हुई, जब अल्लाह ने पहली बार इन्हीं कणों से इन्सान बना दिया तो यह बात तो आसानी से समझ में आने की है कि बनी हुई चीज़ से दोबारा बनाना तो आसान है। अतः अल्लाह के लिए इन्सान को दोबारा ज़िन्दा करना तो इससे भी ज़्यादा आसान है।

कर्मों का फल और आवागमन-

किसी भी वस्तु का पहली बार पैदा करना या बनाना मुश्किल होता है न कि दोबारा। इसलिए अल्लाह के लिए दोबारा उठा कर ह़िसाब किताब लेना कोई आश्चर्य की बात नहीं।

कुछ लोग कहते हैं कि मनुष्य अपने कर्मों का फल भोगने के लिए दुनिया में आता है। यह बात ह़क़ीक़त से बहुत दूर है इसलिए कि यदि यह कहा जाए कि पाप काट कर मनुष्य का रूप मिलता है तो दोबारा दूसरे मनुष्य रूपी जन्म में तो कष्ट न होना चाहिए।

इसी तरह़ जो बच्चे बचपन में मर जाते हैं, उनकी तो करम यौनि शुरु भी नहीं हुई, तो उन्हें मौत क्यों आई? और अब उन्हें कौन सी यौनि मिलेगी?

इसी तरह़ एक और प्रश्न उठता है कि यदि अल्लाह किसी को उसके पाप के कारण कष्ट दे रहा हो और आप उसकी सहायता करें या भूखे को खाना खिलाएँ तो परमेश्वर के विरोधी हो जाएँगे, जबकि दुनिया का हर समुदाय ह़मदर्दी और दया का पाठ पढ़ाता है, परन्तु आवागमन का अक़ीदा (आस्था) इसके विपरीत है।

यह आस्था इतनी विचित्र है कि एक मामूली आदमी भी विचार करे तो उस पर वास्तविकता खुल

जाएगी कि जिसने पैदा किया है, वही दोबारा एक दिन उठा कर उससे हि़साब किताब लेगा और वह दोबारा इस दुनिया में नहीं भेजा जाएगा, इसी का नाम 'मालिकि यौमिद्दीन' है।

4 इय्याक नअ़बुदु व इय्याक नस्तअ़ीन- إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ

अनुवाद-

''हम तेरी ही अ़िबादत करते हैं और तुझ ही से मदद माँगते हैं।''

इस आयत में दो शब्द हैं जिसमें पहला शब्द إِيَّاكَ نَعْبُدُ 'इय्याक नअ़बुदू' जिसमें बन्दगी और अ़िबादत को अल्लाह के लिए ख़ास रखा गया है, इस तरह़ अल्लाह के बन्दे उसके दरबार में अ़र्ज़ करते हैं कि हम सिर्फ़ तेरी ही अ़िबादत करते हैं, और तेरे सिवा किसी की अ़िबादत (स्तुति) नहीं करते।

अ़िबादत का अर्थ-

किसी का ज़्यादा से ज़्यादा सम्मान व आदर के लिए दिल व जान से बेह़द आ़जिज़ी तुच्छता, निर्बलता एवं अपने आप को मूल्यहीन समझ कर अपने इरादे व अख़्तियार से करने का नाम अ़िबादत है।

दीन की इस्तिलाह़ या ज़बान में अपने-अपने समय के अनुसार शरीअ़त के लाने वाले नबियों (ईशदूतों) की फ़रमाँबरदारी करने का नाम अ़िबादत है।

यदि कोई काम शरीअ़त के हुक्म के ख़िलाफ़ किया जाए, चाहे वह अ़िबादत के रूप में ही क्यों न हो? वह अ़िबादत नहीं होगी बल्कि गुनाह होगा; जैसे नमाज़ अ़िबादतों में सब से अफ़ज़ल (सर्वश्रेष्ठ) अ़िबादत है, लेकिन मकरुह वक़्त में या हड़पी हुई ज़मीन पर उसका पढ़ना गुनाह है।

इसी तरह़ रोजः एक अहम अ़िबादत है, लेकिन ई़द या तशरीक़ के (बक़रःई़द के चार) दिनों में रोजः रखना गुनाह है, इस लिए कि शरीअ़त के हुक्म के ख़िलाफ़ है। इस तरह़ अ़िबादत की अस्ल ह़क़ीक़त फ़रमाँबरदारी है, न कि, अ़िबादत के केवल आ़माल जैसे- नमाज़, रोजः, आदि।

अ़िबादत की क़िस्में-

अ़िबादत के विषय में इमाम ग़ज़ाली (रह०) ने अपनी पुस्तक 'अरबई़न में दस तरह़ की अ़िबादतें गिनाई हैं।

1. नमाज़ 2 ज़कात 3. रोजः 4. ह़ज 5. तिलावते क़ुर्आन 6. हर ह़ाल में अल्लाह का ज़िक्र 7. ह़लाल रोज़ी के लिए मेह़नत 8. पड़ोसी के हुक़ूक़ चाहे वह मुस्लिम हों या ग़ैर मुस्लिम, और साथियों के हुक़ूक़ अदा करना 9. लोगों को नेक कामों का हुक्म करना और बुरे कामों से रोकना 10. ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की सुन्नतों पर अमल करना।

अल्लाह का कोई साझीदार नहीं-

अ़िबादत में अल्लाह के साथ किसी को साझीदार न मानने का अर्थ यह है कि, न किसी से

मुहब्बत अल्लाह के समान हो, न किसी का डर उसके समान हो, न किसी से उम्मीद उसके समान हो, न ही किसी पर ऐसा भरोसा (जैसा अल्लाह पर होना चाहिए), न किसी कार्य को इतना अनिवार्य समझे जितना अल्लाह की अ़िबादत को, न अल्लाह के समान किसी की नज़र व मन्नत माने, न अल्लाह के सिवा किसी की क़सम (सौगन्ध) खाए और न अल्लाह के समान किसी दूसरे के आगे झुक कर सम्मान दे।

पाठक विचार करें इस बात पर कि एक सम्पन्न पिता इसको कैसे बर्दाशत कर सकता है कि वह अपने बेटों से मुहब्बत करता हो और उनकी सब ज़रूरतों को पूरा भी करता हो, लेकिन बेटे उन लोगों के सामने हाथ फैलाएँ और सर झुकाएँ जो खुद उसके पिता के अधीन (Under) हों। क्या बेटों का यह व्यवहार पिता का खुला हुआ विरोध नहीं!

इसी तरह़ एक बादशाह अपनी प्रजा के इस व्यवहार को कैसे सहन कर सकता है कि उसकी क़ौम ऐसे को भी अपना शासक मानती हो जो स्वयं शासक की प्रजा हो, उन पर आस्था रखती हो, उसकी बात मानती हो, उसके समझाने पर भी न मानती हो, तो क्या प्रजा की यह दुष्टता और दुर्व्यहार विद्रोह (अन्याय) नहीं!

ह़ाफ़िज़ इब्ने क़य्यिम (रह़०) फ़रमाते हैं कि बन्दों को यह हुक्म दिया गया है कि वह हर नमाज़ में إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ कहे। इसलिए कि शैतान उसे शिर्क करने का हुक्म देता है और नफ़्स इन्सानी उसकी बात मानकर हमेशा ग़ैरुल्लाह की तरफ़ झुकता है। इसलिए बन्दा हर वक़्त मुह़ताज है कि वह अपने अ़क़ीदे तौह़ीद को शिर्क से पाक करता रहे।

ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) इस आयत की तफ़्सीर में कहते हैं कि "हम तेरी तौह़ीद बयान करते हैं, ऐ हमारे रब! और तुझ ही से डरते हैं और तुझ ही से मदद माँगते हैं।

(अ़िबादत उसी वक़्त क़ुबूल होती है जब वह रसूलुल्लाह (सल्ल०) के अ़मल के मुताबिक़ हो ओर उस से मक़्सूद अल्लाह की रज़ा हो।)

इस सबका खुलासा (निष्कर्ष) यही है कि केवल उसी एक अल्लाह की अ़िबादत (उपासना) करें और उसी से दुआ़ (प्रार्थना व याचना) माँगे।

वइय्याक नस्तअ़ीन- وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ

यहाँ भी 'इय्याक' से अल्लाह की ज़ात की ओर है, अर्थात हम तुझ ही से मदद चाहते हैं, तेरे सिवा किसी से मदद नहीं चाहते, इस तरह़ बन्दा कहता है कि मैं एक दर्दमन्द गुलाम हूँ, जिसका सब कुछ आक़ा के लिए है और जिसका सर फ़रमाँबरदारी के लिए हर वक़्त आक़ा के सामने झुका हुआ है। इस लिए हम अपने शरीर, जान व माल से जो अ़िबादत हो सकती है वह सब तेरे ही लिए करते हैं, उसमें कोई साझीदार नहीं हम तुझ ही को सज्दः करते हैं तेरे ही हुक्मों का पालन करते हैं और यह सब हम तेरी ही मदद से करते हैं।

मदद के लिए पुकारना-

इसी तरह़ अल्लाह के सिवा इस्तिआ़त (मदद) भी किसी से लेना जायज़ नहीं चाहे किसी तरह़ की हो, मगर अस्बाब (माध्यम) के तह़त एक दूसरे से मदद चाहना और मदद लेना शिर्क नहीं यह तो अल्लाह का बनाया हुआ निज़ाम है, जिसमें तमाम काम ज़ाहिरी अस्बाब के अनुसार ही होते हैं यहाँ तक कि अम्बिया भी इन्सानों की मदद ह़ासिल करते हैं। जैसे- ह़ज़रत ई़सा (अ़लै०) ने फ़रमाया-

﴿مَنْ اَنْصَارِیْٓ اِلَی اللّٰہِ﴾ (الصف)

"अल्लाह के दीन के लिए कौन मेरा मदद्गार है?"

अल्लाह तआ़ला ने ईमान वालों से फ़रमाया,

وَتَعَاوَنُوْا عَلَی الْبِرِّ وَالتَّقْوٰی (सूरः अल् माइदा-2)

"नेकी और तक़्वा के कामों में एक दूसरे की मदद करो।"

यह मदद न मना है और न शिर्क, शिर्क तो यह है कि ऐसे व्यक्ति से मदद तलब की जाये जो ज़ाहिरी अस्बाब के एतिबार से मदद न कर सकता हो। जैसे-

किसी मरे हुए शख़्स को मदद के लिए पुकारना उस को मुश्किलकुशा, ह़ाजत रवा समझना, उस को नफ़ा नुक़्सान पहुँचाने वाला दूर या क़रीब से फ़रियाद सुनने वाला समझना अर्थात अस्बाब से अलग हट कर मदद तलब करना या ख़ुदाई सिफ़त (गुणों) में शरीक करने का नाम शिर्क है।

तौह़ीद की तीन क़िस्में

तौह़ीद की तीन अहम क़िस्में हैं।

1- तौह़ीदे रुबूबियत, 2- तौह़ीदे उलूहियत 3- तौह़ीदे सिफ़ात।

1- तौह़ीदे 'रुबूबियत'-

'तौह़ीदे रुबूबियत' का मतलब है कि इस क़ायनात (ब्रह्माण्ड) का ख़ालिक़, मालिक, राज़िक़ और मुदब्बिर सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला ही है, इस तौह़ीद को कम्यूनिस्टों (नास्तिकों) के अ़लावा तमाम लोग मानते हैं यहाँ तक कि मुश्रिकीन भी इस के क़ायल थे और हैं। जैसा कि क़ुर्आन करीम ने मुश्रिकीने मक्का का एतिराफ़ (मानने को) नक़्ल किया है। जैसे फ़रमायाः-

"ऐ पैग़म्बर (सल्ल०)! उन से पूछें कि तुम को आसमान व ज़मीन में रिज़्क़ कौन देता है या (तुम्हारे) कानों और आँखों का मालिक कौन है और निर्जीव से सजीव और सजीव से निर्जीव कौन पैदा करता है और दुनिया के कामों का इन्तिज़ाम (प्रबन्ध) कौन करता है?"

तुरन्त कह देंगे कि अल्लाह (यानी यह सब काम करने वाला अल्लाह है)। **(सूरः यूनुस-31)**

दूसरी जगह फ़रमाया-

अगर आप (सल्ल०) इन से पूछें कि आसमान व ज़मीन का ख़ालिक़ कौन है? तो यक़ीनन यही

कहेंगे कि अल्लाह। **(अल् ज़ुमर-38)**

एक और जगह फ़रमाया, "अगर आप (सल्ल०) इन से पूछें कि ज़मीन और ज़मीन में जो कुछ है, यह सब किस का माल हैं? सातो आसमान और अ़र्शे अ़ज़ीम का मालिक कौन है? हर चीज़ की बादशाही किस के हाथ में है? और वह सब को पनाह देता है और उस के मुक़ाबिल कोई पनाह देने वाला नहीं।

इन सब के जवाब में यह यहीं कहेंगे कि, "अल्लाह।"

"यानी यह सारे काम अल्लाह ही के लिए हैं।" **(अल् मूमिनून-84-89)**

2- तौह़ीदे उलूहियत-

तौह़ीदे उलूहियत का मतलब है कि अ़िबादत की तमाम क़िस्मों का ह़क़दार केवल अल्लाह तआ़ला है, अ़िबादत हर वह काम है जो किसी ख़ास हस्ती को राज़ी करने के लिए, या उस की नाराज़गी के ख़ौफ़ से किया जाये।

इसलिए नमाज़, रोज़ः, ह़ज और ज़कात सिर्फ़ यही अ़िबादत नहीं, बल्कि किसी मख़्सूस (विशेष) से दुआ़ व इल्तिजा करना, उस के नाम की नज़रो नियाज़ देना, उस के सामने दस्ते बस्ता खड़ा होना, उस का तवाफ़ करना, उस से उम्मीद बाँधना और ख़ौफ़ रखना वग़ैरह भी अ़िबादत की शक्लें हैं।

'तौह़ीदे उलूहियत' यह है कि ऊपर दिये गये तमाम काम केवल अल्लाह तआ़ला ही के लिए किये जाएँ। क़ब्र परस्ती के मर्ज़ में मुब्तिला (लिप्त) लोग इस 'तौह़ीदे उलूहियत' में शिर्क करते हैं और अ़िबादात की बहुत सी क़िस्में वह क़ब्रो में मदफ़ून लोगों के साथ कर गुज़रते हैं, जिससे बचना चाहिए।

3- तौह़ीदे सिफ़ात-

'तौह़ीदे सिफ़ात' का मतलब यह है कि अल्लाह तआ़ला की जो सिफ़ात क़ुर्आन व ह़दीस में बयान हुई हैं, उन को बग़ैर किसी तावील और तह़रीफ़ के तस्लीम करे और वह सिफ़ात इस तरह़ से किसी और के अन्दर न माने।

जैसे- उस की सिफ़त इ़ल्म ग़ैब है, या दूर और नज़्दीक से हर एक की फ़रियाद सुनने पर क़ादिर रहने की है, क़ायनात (Universe) में हर तरह़ का तसर्रुफ़ (Possession) करने का उसे अख़्तियार ह़ासिल है, यह या इस तरह़ की और सिफ़ात इलाहिया उन में से कोई सिफ़त (गुण) भी अल्लाह के सिवा किसी नबी, वली या बुज़ुर्ग के अन्दर तस्लीम न की जाएँ। अगर मानी जाएँगी तो यह शिर्क होगा।

ह़ज़रत इमाम मालिक (रह़०) से अ़र्श पर मुस्तवा होने के बारे में पूछा गया तो उन्होंने कहा- "इस्तवा मालूम है, उसकी कैफ़ियत मजहूल (नामालूम) यानी यह नहीं मालूम कि अल्लाह के 'इस्तवा' होने की क्या कैफ़ियत है और उस के बारे में पूछना बिद्अ़त है और उस पर ईमान लाना वाजिब है।"

5 इह्दिनस्सिरातल् मुस्तक़ीम- اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ

"ऐ अल्लाह! हमको सीधे रास्ते की हिदायत फ़रमा," अर्थात अपनी रह़म (कृपा) और मुह़ब्बत (स्नेह) के साथ हमको वह रास्ता बता दीजिए जो दुनिया व आख़िरत में कामियाबी देने वाला हो और आप की रह़मत से ऐसे ह़ालात बन जाएँ जिससे क़ुर्आन व सुन्नत के अनुसार चलना और उस पर अ़मल करना आसान हो जाए।

ऊपर की आयत में जो दुआ़ अल्लाह के दरबार में **'अल्ह़म्दु लिल्लाहि रब्बिल्‌आ़लमीन'** से शुरु की थी और इस दरख़्वास्त का जो मक़्सद था और जो मुराद माँगना चाहता था वह **'इहदिनस्सिरात़ल् मुस्तक़ीम'** में है।

अर्थात ऐ अल्लाह! हमें सिराते मुस्तक़ीम की हिदायत फ़रमा जिस का मतलब है, "किसी व्यक्ति को उसके मन्ज़िले मक़्सूद तक मेहरबानी और ख़ैर ख़्वाही के साथ रहनुमाई करना," जो इन तरीक़ों से हो सकती हैं।

हिदायत का अर्थ

'हिदायत' के माने 'रहनुमाई' और तौफ़ीक़ (Divine Guidance) के हैं और सिराते मुस्तक़ीम से मुराद वह रौशन रास्ता है जिसमें टेढ़ापन न हो जो अल्लाह और उसकी जन्नत तक पहुँचाने वाला हो और यह क़ुर्आन सुन्नत की राह है। मुजाहिद कहते हैं कि इससे मुराद राहे ह़क़ है। इस तरह़ जिसने नबी करीम (सल्ल०) की पैरवी की और उनके बाद उनके सह़ाबा की पैरवी की, उसने ह़क़ की इत्तिबअ़ की और जिसने ह़क़ की पैरवी की उसने इस्लाम की इत्तिबअ़ की और जिसने इस्लाम की इत्तिबअ़ की उसने क़ुर्आन की इत्तिबअ़ की और यही क़ुर्आन अल्लाह की किताब है उसकी मज़बूत रस्सी है और उसकी सीधी राह है।

'ह़ज़रत नव्वास बिन समआ़न (रज़ि०)' ने रसूल (सल्ल०) से रिवायत की है कि अल्लाह तआ़ला ने सिराते मुस्तक़ीम (सीधी राह) की एक मिसाल बयान की है।

"इस राह के दोनों तरफ़ दो दीवारें हैं। उनमें कुछ दरवाज़े खोल दिये गये हैं। उन दरवाज़ों पर पर्दे लटका दिये गये हैं और सीधी राह पर एक पुकारने वाला कह रहा है। ऐ लोगों! सीधी राह पर चलो और उससे इधर-उधर न जाओ। एक और पुकारने वाला सीधी राह के ऊपर से पुकार रहा है, जब कोई आदमी इन दरवाज़ों में से कोई दरवाज़ा खोलना चाहता है तो वह कहता है, देखो इसे न खोलो मगर तुम ने इसे खोल दिया तो उसमें दाख़िल हो जाओगे।"

यह सीधी राह इस्लाम है। दोनों दीवारें अल्लाह के मुक़र्रर किये हुए ह़ुदूद हैं, खोले गये दरवाज़े अल्लाह के ह़राम किये हुए काम हैं और सीधी राह के सिरे पर मौजूद पुकारने वाला अल्लाह की किताब हैं और सीधी राह के ऊपर से पुकारने वाला अल्लाह की तरफ़ हर मुसलमान के दिल में मौजूद ख़ैर की दअ़वत देने वाला जज़्बा है। **(नसई, तिर्मिज़ी, मुस्नद अह़मद)**

अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया-

قَالَ رَبُّنَا الَّذِيٓ اَعْطٰى كُلَّ شَيْءٍ خَلْقَهٗ ثُمَّ هَدٰى ۝

(मूसा ने) कहा, ''हमारा रब वह है 'जिसने' हर चीज़ को उसकी आकृति (शक्ल सूरत) दी, फिर राह दिखाई।'' (सूरः ताहा-50)

दूसरी जगह अल्लाह तआला ने फ़रमाया-

وَجَعَلْنَا مِنْهُمْ أَئِمَّةً يَهْدُونَ بِأَمْرِنَا لَمَّا صَبَرُوا ۖ وَكَانُوا بِآيَاتِنَا يُوقِنُونَ ۝

"और 'हमने' उनमें से पेशवा (नायक) बनाए थे, जो 'हमारे' हुक्म से हिदायत (मार्गदर्शन) किया करते थे, वह सब्र पर क़ायम रहे और 'हमारी' आयतों पर यक़ीन रखते रहे।" (सूरः सज्दः-24)

तीसरी जगह फ़रमाया-

وَالَّذِينَ جَاهَدُوا فِينَا لَنَهْدِيَنَّهُمْ سُبُلَنَا ۚ وَإِنَّ اللَّهَ لَمَعَ الْمُحْسِنِينَ ۝

"और जो लोग 'हमारी' राह में जिहाद (कोशिश) करेंगे 'हम' ज़रूर उन पर अपनी राहें खोल देंगे, और अल्लाह भले काम करने वालों के साथ है।" (सूरः अ़नकबूत-69)

चौथी जगह फ़रमायाः-

وَنَزَعْنَا مَا فِي صُدُورِهِمْ مِنْ غِلٍّ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهِمُ الْأَنْهَارُ ۖ وَقَالُوا الْحَمْدُ لِلَّهِ الَّذِي هَدَانَا لِهَٰذَا وَمَا كُنَّا لِنَهْتَدِيَ لَوْلَا أَنْ هَدَانَا اللَّهُ ۖ لَقَدْ جَاءَتْ رُسُلُ رَبِّنَا بِالْحَقِّ ۖ وَنُودُوا أَنْ تِلْكُمُ الْجَنَّةُ أُورِثْتُمُوهَا بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ۝

"और उनके सीनों में एक-दूसरे के प्रति जो रंजिश होगी, उसे 'हम' दूर कर देंगे- उनके नीचे नहरें बह रही होंगी और वे कहेंगे, ''सभी तअ़रीफ़ें अल्लाह के लिए हैं, 'जिसने' इसकी ओर हमें राह दिखाई, और अगर अल्लाह हमें राह न दिखाता तो हम हरगिज़ राह न पा सकते थे, बेशक 'हमारे' रब के रसूल हक़ (सत्य) लेकर आए थे।'' और उन्हें आवाज़ दी जाएगी, ''यह जन्नत है जिसके तुम वारिस बनाए गये उन कामों के बदले में जो तुम (दुनिया में) किया करते थे।'' (सूरः अअ़राफ़- 43)

पाँचवी जगह फ़रमाया-

وَإِنَّكَ لَتَهْدِي إِلَىٰ صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ ۝

"और बेशक आप सीधे रास्ते की ओर रहनुमाई कर रहे हैं;" (सूरः अश्शूरा-52)

एक जगह फ़रमाया-

إِنَّكَ لَا تَهْدِي مَنْ أَحْبَبْتَ وَلَٰكِنَّ اللَّهَ يَهْدِي مَنْ يَشَاءُ ۚ وَهُوَ أَعْلَمُ بِالْمُهْتَدِينَ ۝

"ऐ मुह़म्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम! आप जिसे चाहें राह (हिदायत) पर नहीं ला सकते, मगर अल्लाह जिसे चाहता है, राह दिखाता है और 'वही' राह पाने वालों को खूब जानता है"। (सूरः क़सस-56)

हिदायत की पहली क़िस्म

'आम या इल्हामी हिदायत' अर्थात किसी चीज़ के बारे में अल्लाह की ओर से उस काम के करने

की बात दिल में डाल दी जाती है, हिदायत की यह क़िस्म सभी मख़्लूक़, जैसे- इन्सानों, हैवानों, जानवरों और जिन्नातों सबके लिए होती है।

इसी आ़म हिदायत का ज़िक्र हज़रत मूसा (अलै०) ने सोलहवें पारे के सूरः ताहा में फ़िरऔ़न से बात-चीत करते हुए इस तरह किया है कि-

"पालनहार वह है जिसने हर चीज़ को पैदा किया फिर उसके अनुसार उसे हिदायत दी"।

इसी हिदायत का नतीजा है कि बच्चा पैदा होते ही माँ का दूध पीने का तरीक़ा जान जाता है, अनाज और पेड़-पौधे ज़मीन से ग़िज़ा हासिल करके बढ़ना और फलना फूलना जान लेते हैं।

दूसरी क़िस्म

दूसरी क़िस्म हिदायत की इन्सानों और जिन्नातों के साथ ख़ास है, जिन्हें अ़क्ल दी गयी है, और यह हिदायत अम्बिया, उलमा, सुल्हा और आसमानी किताबों के ज़रिये हर इन्सान तक पहुँचती है ताकि वह हक़ व नाहक़ में अन्तर कर सके, फिर कोई इसे मान कर मोमिन (मुस्लिम) हो जाता है तो कोई इन्कार करके काफ़िर व मुशरिक हो जाता है।

तीसरी क़िस्म

हिदायत की तीसरी क़िस्म केवल मोमिनों व मुत्तक़ियों (संय्यमियों) के साथ ख़ास है, यह हिदायत अल्लाह की ओर से बिना किसी माध्यम के ही होती है और इसी हिदायत का दूसरा नाम 'तौफ़ीक़े इलाही' है:-

कि ऐसे हालात व अस्बाब का पैदा हो जाना, दिल में ऐसे ख़यालात, रूजहानात और अज़ाएम व इरादे का डाल देना कि जिससे इ़ल्म इलाही (आसमानी शिक्षा) व हिदायत को क़ुबूल कर लेना और उन पर अ़मल करते हुए उस पर जमे रहना सरल व आसान हो जाता है और अल्लाह के हुक्म की खिलाफ़वर्ज़ी दुश्वार व नामुम्किन (असंभव) और मुहाल हो जाती है, हिदायत की यह क़िस्म ला महदूद (असीम) है जिसके बहुत से दरजात (पद) हैं। यही हिदायत का दर्जा इन्सान की तरक़्क़ी (उन्नति) का मैदान है और यही वह दर्जा है जिसे हर बड़े से बड़ा नबी, रसूल और वली (दूत व भक्ति) आ़बिद व ज़ाहिद (संयमी) सालेह व मुत्तक़ी परहेज़गार को आख़िर उम्र तक ज़्यादती की ज़रूरत बाक़ी रहती है और वह हिदायत पर इस्तिक़ामत (जमने) की दरख़्वास्त (अनुरोध) बराबर करता रहता है। चूंकि रुहानी (आध्यात्मिक) तरक़्क़ियों की कोई सीमा नहीं है, इस लिए जो जिस मर्तबः (Post) पर है, उसकी दुआ़ व दरख़्वास्त उससे बुलन्द मर्तबः की होती है।

सिरात- الصِّرَاطَ

सिरात़ कहते हैं रास्ता को, लेकिन उलमा, सिरात उस रास्ते को कहते हैं, जिसमें चार ख़ुसूसियात हों; (1) विशाल तथा व्यापक (अ़ज़ीम और वसीअ़) हो (2) सीधा हो (3) सबसे ज़्यादा क़रीब हो (4) मन्ज़िले

मक़्सूद के लिए उस एक रास्ते के सिवा कोई दूसरा रास्ता न हो।

मुस्तक़ीम- الْمُسْتَقِيمَ

'मुस्तक़ीम' का अर्थ होता है, 'सन्तुलन' (एतिदाल) यहाँ "सिराते मुस्तक़ीम" का मतलब 'दीने हक़', 'दीने इस्लाम' है। जिसमें ऊपर बयान की गयी पाँचों विशेषताएँ पाई जाती हों।

1. इस्लाम ही एक ऐसा विशाल और व्यापक राहे हक़ है, जिस पर यदि पूरी इन्सानी बिरादरी चले तो कोई तंगी न हो।
2. इस्लाम धर्म में हर चीज़ संतुलित रूप से है, न किसी चीज़ में ज़्यादा सख़्ती है और न ही ज़रुरत से ज़्यादा नर्मी, जो सीधी राह है।
3. इस्लाम की सीधी राह, मन्ज़िले मक़्सूद के लिए सबसे ज़्यादा क़रीब और आसान राह है।
4. इस्लाम का रास्ता मन्ज़िले मक़्सूद पर पहुँचने वाला है क्योंकि इन्सान के ज़िन्दगी का मक़्सद अल्लाह की रज़ा (प्रसन्नता) है और दीने इस्लाम ही इस मक़्सद का एक रास्ता है।
5. मन्ज़िले मक़्सूद के लिए इस्लाम के सिवा और कोई रास्ता नहीं है।

इस तरह़ 'इह्दिनस्सिरात़ल् मुस्तक़ीम' वह अहम दुआ (प्रार्थना) है जो इन्सानों को सिखाई गयी है, जिसका हर इन्सान मुह़ताज है।

सीधा रास्ता-

इस विषय पर क़ुर्आन मजीद में कई जगहों पर आया है कि-

''अल्लाह जिसको चाहता है सीधा रास्ता दिखाता है और जिसे चाहता है गुमराह कर (भटका) देता है।''

इसका मतलब यह नहीं कि बिना किसी कारण के अल्लाह जिसके साथ जैसा व्यवहार चाहता है करता है अल्लाह जबकि न्यायकारी है। वह ऐसे कैसे कर सकता है?

सीधा रास्ता दिखाने के लिए ही तो वह अपने रसूल (सन्देष्टा) भेजता रहा, उनके ज़रिये अपनी ओर से शिक्षा भेजता रहा, अन्त में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को इसी उद्देश्य से आख़िरी रसूल (अन्तिम सन्देष्टा) बना कर भेजा और उन पर इस क़ुर्आन को नाज़िल (अवतरित) किया।

वास्तव में सीधे और टेढ़े, भटका देने वाले रास्ते का भी यही मतलब है। उदाहरण स्वरूप-

'स्वास्थ्य के नियम', जो इसके नियमों का पालन करता है वह स्वस्थ रहता है, जो इसके विरुद्ध करता है उसका स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है।

इसी तरह़ सत्य मार्ग वही पाता है, जो सत्य मार्ग पर चलना चाहता है, तो वह उसी के अनुसार चलता है, जो सत्य मार्ग पर चलना ही नहीं चाहता तो वह मार्ग भ्रष्ट हो जाता है, संमार्ग और कुमार्ग के फल का नियम अल्लाह ही का बनाया हुआ है।

अल्लाह ने मनुष्य को बुद्धि दी, सोचने और समझने की शक्ति दी और बहुत सी बातों में उसे यह अधिकार दिया कि चाहे उसे माने और चाहे न मानें, वह चाहे तो कोई काम करे, चाहे न करे, वह अच्छे रास्ते पर भी चल सकता है, और बुरे रास्ते पर भी। वह अल्लाह की दी हुई शक्तियों से अच्छा काम भी ले सकता है और उनको बुरे कामों में भी लगा सकता है। जैसे- 'बोलने की शक्ति' अब अल्लाह के दिये हुए अधिकार से अच्छी बातें भी कर सकता है और गन्दी बातें भी। इसी तरह़ आँख, कान, नाक, हाथ, पैर, हर-हर अंग से भले काम भी ले सकता है और बुरे कामों में भी लगा सकता है।

इस तरह़ सीधा या टेढ़ा रास्ता अल्लाह का बनाया हुआ क़ानून है, अल्लाह बिना कारण न किसी को गुमराह (पथभ्रष्ट) करता है, और न किसी को सीधे रास्ते पर चलाता है, जो जिस रास्ते पर क़दम रखता है, अल्लाह अपने निश्चित नियम के अनुसार उसके साथ व्यवहार करता है। इस लिए इस आयत में उसी अल्लाह से दुअ़ा करवाई गयी है कि ऐ अल्लाह! मुझे सीधे रास्ते पर चला।

6 सिरात़ल्लज़ीन अन्अ़मता अ़लैहिम صِرَاطَ الَّذِينَ أَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ

''ऐ अल्लाह! हमको रास्ता दिखा उन लोगों का जिन पर आपने इन्आ़म किया।''

इस आयत में 'अन्अ़मता अ़लैहिम', और इनआ़म का उल्लेख हुआ है। इस लिए कि अल्लाह के इनआ़म तो अनन्त (बेशुमार) इन्सानों पर हैं।

'मोमिन हो या काफ़िर, फ़रमाँबरदार हो या नाफ़रमान यहाँ तक कि अल्लाह अपने विरोधियों को भी अपनी नेअ़मतों से महरूम नहीं रखते, फिर कुछ नेअ़मतें दुनियावी हैं और कुछ मरने के बाद की, और कुछ रूहानी हैं, कुछ ज़ाहिरी और कुछ बातिनी (अन्दुरूनी) परन्तु 'अन्अ़मता अ़लैहिम' से यहाँ यह तात्पर्य है, कि जिनका परिणाम (नतीजा) आख़िरत (मरने के बाद) में मिलेगा, जैसे ईमान, नेक आ़माल (अच्छे आचरण) अल्लाह की तौफ़ीक़, अल्लाह की मदद, तक़्वा और परहेज़गारी आदि जिन पर अल्लाह के इन्आ़मात हुए उनकी तस्दीक़ (पुष्टि) खुद क़ुर्आन ने सूरः निसा में किया है।

أُولَٰئِكَ مَعَ الَّذِينَ أَنْعَمَ اللَّهُ عَلَيْهِم مِّنَ النَّبِيِّينَ وَالصِّدِّيقِينَ وَالشُّهَدَاءِ

''वह लोग जिन पर अल्लाह तआ़ला का इनआ़म हुआ अम्बिया और सिद्दीक़ीन और शोहदा और नेक लोग हैं'' **(सूरः निसा-69)**

इस आयत से मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला ने वास्तविक इनआ़म का हक़्दार इन्हीं चार तरह़ के लोगों को माना है या यही चार दर्जे मक़्बूल बन्दों के हैं जिन में सबसे आ़ला (सर्वश्रेष्ठ) अम्बिया (अलै०) हैं, जिन्हें अल्लाह ने अपना पैग़ाम (सन्देश) बन्दों तक पहुँचाने के लिए चुन लिया और जिनके पास अल्लाह की वह्य आई और जिनकी शिक्षा सबसे अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) है।

अम्बिया (ईशदूतों) के बाद दूसरे दर्जे पर 'सिद्दीक़ीन' (सच्चे लोग) हैं जो अपने नबी की उम्मत में सबसे अधिक सम्मानित लोग होते हैं।

फिर सिद्दीक़ीन के बाद 'शुहदा' हैं जिन्होंने दीन व ईमान की मुहब्बत में अपनी जान तक क़ुर्बान कर दी।

उनके बाद 'सालिह़ीन' (नेक लोग) हैं जो अल्लाह के हुक्मों का पूरी तरह़ पालन करते हैं, जो अपने नबी की बातों को पूरी तरह़ मानते हैं, इस तरह़ यह चार तरह़ के लोग जिस रास्ते पर चलें वही सीधा रास्ता है।

7 ग़ैरिल मग़ज़ूबि अ़लैहिम غَيْرِ الْمَغْضُوبِ عَلَيْهِمْ

सीधे रास्ते को बताने के साथ अनिवार्य था, कि उन लोगों का रास्ता भी बता दिया जाए, जो सीधे रास्ते से हट कर बाग़ी (विद्रोहियों) और मुख़ालिफ़ों (विरोधियों) के गिरोह में शामिल हो गये, ताकि बन्दा उन लोगों के रास्ते पर चलने की दुआ़ करे जिन पर इनआ़म हुआ, वहीं यह भी दुआ़ करे कि ऐ अल्लाह! हमको उस रास्ते पर चलने से बचा जिन पर आप का ग़ज़ब हुआ और जो गुमराह हो गये, यही 'ग़ैरिल मग़ज़ूबि अ़लैहिम' में तअ़लीम दी गयी है।

अर्थात वह लोग जो अल्लाह के ग़ज़ब का शिकार हुए जिन पर अल्लाह का गुस्सा और अ़ज़ाब नाज़िल हुआ जिन्होंने अल्लाह के हुक्मों की नाफ़रमानी की उसने नबियों को झुठलाया और हक़ को मिटाने की कोशिश की और जो अपने आ़माल (आचरण) की वजह से अल्लाह के ग़ज़ब और गुस्सा का निशाना बने।

वलज़्ज़ाल्लीन وَلَا الضَّالِّينَ

'गुमराह' (पथभ्रष्ट) इस से मुराद वह लोग हैं जो जिहालत व हठधर्मी के कारण दीन के विषय में ग़लत रास्ते पर पड़ गये और दीन से निकल कर अपना संतुलन खो दिया, और ह़द से आगे चले गये, जैसे नस़ारा (ईसाई) जो नबी की तअ़ज़ीम (आदर व सम्मान) में इतने बढ़े कि खुदाई का दर्जा दे दिया, जैसा कि मुफ़स्सिरीन ने लिखा है, और बहुत सी आयतों व ह़दीसों से इसकी तस्दीक़ भी होती है कि 'ग़ैरिल मग़ज़ूबि अ़लैहिम' से मुराद यहूद हैं, और 'वलज़्ज़ाल्लीन' से मुराद नसारा (ईसाई) हैं।

जबकि कुछ उलमा ने लिखा है कि 'मग़ज़ूबि' से मुराद वह लोग हैं जो दीनी बातों को जानने पहचानने के बावजूद अपनी शरारत और इच्छा पूर्ति की वजह से उसके ख़िलाफ़ करते हैं, या अल्लाह के हुक्मों को मानने में कोताही करते हैं जैसे आमतौर पर यहूदियों का ह़ाल था कि दुनिया ह़ासिल करने के लिए दीन को क़ुर्बान करते और नबियों की तौह़ीन करते।

इस तरह़ बन्दा अपने रब से दरख़्वास्त (अनुरोध) करता है कि 'ऐ अल्लाह! हम वह रास्ता नहीं चाहते जो आप के हुक्मों के ख़िलाफ़ और नाफ़रमानी वाला हो, या दीन से दूर कर देने वाला हो और न वह रास्ता जिस पर जाहिल, गुमराह (पथभ्रष्ट) और दीन में तब्दीली (संशोधन) करने वाले हों।

आमीन-

इस सूरः के ख़त्म पर आमीन कहना सुन्नत है, इसके माने हैं 'ऐ अल्लाह ऐसा ही कर' या 'ऐ अल्लाह! तू क़ुबूल फ़रमा।'

ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कि जब इमाम

"आमीन" कहे तो तुम भी कहो, इसलिए कि जिस की आमीन फ़रिश्तों की आमीन से मिल जाएगी उस के तमाम पिछले गुनाह माफ़ कर दिये जाएँगे। **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

यह शब्द क़ुर्आन से अलग हैं। इस शब्द के विषय में तमाम मुफ़स्सिरीन कहते हैं कि शब्द आमीन न क़ुर्आन का भाग है न अंश और न ही सूरः फ़ातिहा का।

इसीलिए 'आमीन' क़ुर्आन या सूरः फ़ातिहा के बाद नहीं लिखी जाती, बल्कि जिस तरह़ तमाम दुआओं के बाद आमीन कहना सुन्नत है, उसी तरह़ सूरः फ़ातिहा के बाद भी सुन्नत है, लेकिन इसमें इख़्तिलाफ़ (मतभेद) है कि आमीन ज़ोर से कहे या आहिस्ता (धीरे से)। इस में 'इमाम अबू हनीफ़ा (रह०)' की तह़क़ीक़ (शोध) के अनुसार आहिस्ता कहना बेहतर है।

'इमाम शाफ़ई' बग़ैर बुलन्द आवाज़ से पढ़ते हैं। उनकी दलील 'ह़ज़रत वायल बिन ह़जर (रज़ि०)' की रिवायत है जिसमें बुलन्द आवाज़ से पढ़ने का ज़िक्र है। लेकिन 'इमाम अबू ह़नीफ़ा (रह़०)' इब्ने मुफ़्ज्जल और ह़ज़रत अ़नस (रज़ि०) की रिवायतों की वजह से आहिस्ता पढ़ने के क़ायल हैं। इस तरह़ आयत ادْعُوا رَبَّكُمْ تَضَرُّعًا وَخُفْيَةً भी है।

ह़ज़रत अबुहुरैरा (रज़ि०) की भी एक रिवायत है कि रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया, जब इमाम आमीन कहे तो तुम भी कहो। इसलिए जिसकी आमीन फ़रिश्तों से मिल जाएगी उसके तमाम पिछले गुनाह माफ़ कर दिये जाएँगे। **(बुख़ारी व मुस्लिम)** से भी ह़न्फ़िया की ताकीद हो रही है क्योंकि आमीन बिल जहर मतलूब होती तो आप यह इर्शाद फ़रमाते "اِذا قال الامام امين فقولوا آمين"

यह रिवायत और ख़ुल्फ़-ए-राशिदीन के अ़मल से साबित है कि 'सुब्ह़ानकल्लाहुम्मा' और 'अऊज़ूबिल्लाह' और 'बिस्मिल्लाह' और 'आमीन' यह चारों चीज़ें आहिस्ता पढ़ी जाती थीं। इस तरह़ यह इख़्तिलाफ़ (मतभेद) जायज़ और नाजायज़ होने का नहीं है, बल्कि अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) है या ग़ैर अफ़ज़ल होने का है।

मसायल-

'सूरः फ़ातिहः' में पहले अल्लाह तआ़ला की ह़म्द (तअ़रीफ़) सना है। फिर सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला ही की अ़िबादत का इक़रार व इज़्हार है कि उसके सिवा किसी को अपना ह़ाजत रवा न समझे, उसके बाद फिर एक अहम दुआ़ जो तमाम इन्सानी ज़रुरियात पर ह़ावी है।

पूरी सूरः का ख़ुलासा-

(1) इसमें यह तअ़लीम दी गई है कि जब अल्लाह तआ़ला से कोई हुक्म व दरख़्वास्त (अनुरोध) करना हो तो उसका तरीक़ा यह है कि पहले उसकी ह़म्द (तअ़रीफ़) व सना बयान की जाए और इस बात का इक़रार किया जाए कि हम तेरे सिवा किसी को अ़िबादत के लायक़ नहीं समझते और न किसी को मुश्किल कुशा (परेशानी दूर करने वाले) मानते हैं। उसके बाद अपने मतलब की दुआ़ की जाए और दुआ़ भी इख़्तिसार (संक्षेप) से की जाए और ऐसी की जाए जिसमें तमाम मक़ासिद दाख़िल हों।

(2) ह़म्द सिर्फ़ अल्लाह ही की होनी चाहिए इसलिए अपनी तअ़रीफ़ की इजाज़त नहीं।

(3) इन्सान के लिए दुनिया में जो लोग अल्लाह की नेअ़मतों का वास्ता हैं। वह भी एक तरफ़ से मुह़सिन (एह़सान करने वाले) हैं। इसलिए उनके लिए भी शुक्र गुज़ारी का हुक्म है।

(4) केवल रब का शब्द अल्लाह के अ़लावा किसी और के लिए बोलना जायज़ नहीं और किसी को सज्दः तअ़ज़ीमी करना भी जायज़ नहीं। इसी तरह़ बैतुल्लाह (अल्लाह का घर) के अ़लावा किसी चीज़ के इर्द गिर्द तवाफ़ (घूमना) करना मना है।

(5) किसी चीज़ को ह़लाल या ह़राम क़रार देने का ह़क़ किसी को दे देना शिर्क है। किसी के नाम की नज़्र और मन्नत माँगना शिर्क है। इसी तरह़ अल्लाह तआ़ला के सिवा किसी को ह़ाजत रवा मुश्किल कुशा समझ कर उससे दुआ़ माँगना भी शिर्क है। ऐसे ही जो आ़माल शिर्क की निशानी समझे जाते हैं। जैसे- सर पर चोटी रखना, तिलक लगाना, चन्दन लगाना, जनैव पहनना वग़ैरह भी ह़राम है।

(6) इस तरह़ इस्तिआ़नत (मदद) ग़ैरुल्लाह (अल्लाह के सिवा किसी दूसरे) से ह़राम है। जिसकी दो सूरतें हैं। एक यह कि अल्लाह के सिवा किसी फ़रिश्ता या पैग़म्बर, वली या किसी इन्सान को अल्लाह तआ़ला के बराबर क़ादिरे मुतलक़ समझकर उससे दुआ़ माँगे तो खुला हुआ कुफ़्र और शिर्क है। दूसरी सूरत ग़ैरुल्लाह से इस्तिआनत (मदद) जो कुफ़्फ़ार और मुश्रिकीन का दूसरा तरीक़ा है, लेकिन क़ुर्आन उससे मना करता है यानी किसी मख़्लूक़ फ़रिश्ता, पैग़म्बर, वली या किसी देवता के बारे में यह अ़क़ीदा रखना कि हर चीज़ पर प्रभुत्व तो अल्लाह का है और पूरा अख़्तियार (अधिकार) तो उसी को है लेकिन उसने अपनी क़ुद्रत व अख़्तियार का कुछ ह़िस्सा फ़लाँ व्यक्ति को सौंप दिया है और वह उस में कुछ अख़्तियार रखता है। यही वह इस्तिआनत (मदद) है जिसे क़ुर्आन शिर्क और ह़राम क़रार देता है।

(लेकिन मुश्रिक व बुतपरस्त मोअ़जिज़ात व करामात (चमत्कार) की वजह से धोके का शिकार हो जाते हैं और वह यह समझ बैठते हैं कि यह काम अल्लाह ने नहीं बल्कि फ़रिश्ता या पैग़म्बर या वली या किसी देवी-देवता ने किया है। जब कि यह सब काम अस्बाब (चीज़ों) के पर्दे में अल्लाह ही करता है। अलबत्ता ज़ाहिर में अस्बाब ही में इन्सान उलझ कर रह जाता है। अल्लाह तआ़ला तो अम्बिया और औलिया का एजाज़ बढ़ाने के लिए उनसे मोअ़जिज़ात व करामात करवाता है, मगर मोअ़जिज़ात व करामत उनके अख़्तियार में नहीं होती, इसलिए अ़क़ीदा यही रखना चाहिए की सब कुछ अल्लाह की क़ुद्रत से ही होता है।

❖

(भाग–2)

सूर–ए–बक़रः

(सूरः नं. 2)

सूर-ए-बक़्रः का संक्षिप्त परिचय

नाम-

इस सूरः का नाम 'सूर-ए-बक़्रः' है और इसी नाम से हदीस और सहाबा से इसका नाम मिलता है।

'बक़्रः' का अर्थ होता है 'गाय' या 'बैल', इसलिए कि इस सूरः के आठवें रुकूअ़ में 'बनी इस्राईल' के ज़माने के एक वाक़िया(घटना) का बयान है, जिसमें अल्लाह तआ़ला की ओर से एक गाय ज़ब्ह़ करने का हुक्म हुआ था जिसका ज़िक्र इस सूरः में तफ़्सील से किया गया है इसलिए पहचान के तौर पर इस सूरः का नाम "अल् बक़्रः" रखा गया है, सूरतों के नाम ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने ही अल्लाह के हुक्म से रखे थे।

सूरः के नाज़िल होने का ज़माना

इस सूरः का अक्सर ह़िस्सा 'मदीना' में नाज़िल हुआ अर्थात ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के मदीना हिजरत करने के बाद। जबकि इसकी कुछ आयतें ह़ज के वक़्त नाज़िल हुई थीं, मगर उसे भी मुफ़स्सिरीन मदनी आयतें ही कहते हैं। इसमें 286 आयतें और 6021 कलिमात (शब्द) और 40 रुकूअ़ (अध्याय) हैं, क़ुर्आन मजीद की यह सबसे बड़ी सूरः है जिसमें शरीअ़त के हुक्म भी सबसे ज़्यादा हैं।

ह़ज़रत आ़इशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा फ़रमाती हैं, "सूरः निसा और सूरः बक़्रः उस ज़माने में नाज़िल हुई जबकि मैं आप (सल्ल०) के घर आ चुकी थी।" **(बुख़ारी)**

आप रज़ियल्लाहु अ़न्हा की रुख़सती 2 हिज्री में हुई।

इस सूरः की आयतें अलग-अलग ज़मानों में नाज़िल होती रहीं, यहाँ तक कि जो सूद से मुतअ़ल्लिक़ आयतें हैं वह ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की आख़िरी उम्र में फतेह़ मक्का के बाद नाज़िल हुई और इसकी एक आयत तो क़ुर्आन की बिल्कुल आख़िरी आयत है जो दस हिज्री में, दस ज़िल्‌हिज्जः को मिना में नाज़िल हुई जब कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) हज्जतुल्‌विदा के फ़रायज़ अदा कर रहे थे। **(क़ुर्तुबी)**

फिर इसके 80-90 दिन के बाद ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की वफ़ात हुई और वह्य का सिल्‌सिला हमेशा के लिए ख़त्म हो गया।

क़ुर्आन की तर्तीब (sequence) के अनुसार यह दूसरी सूरः है, मगर नाज़िल होने के एतिबार से 91 नम्बर की सूरः है अर्थात 90 सूरतें इससे पहले मक्का में नाज़िल हो चुकी थीं और 23 सूरतें इसके बाद मदीना में नाज़िल हुई।

इस सूरः के नाज़िल होने के वक़्त की ह़ालत

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) मक्का से हिजरत करके मदीना आए तो यहाँ यहूदियों का बोलबाला था। यहूदियों में बड़े-बड़े धनी और बड़े-बड़े विद्वान मौजूद थे, जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) मदीना आए तो यह इस्लाम और मुसलमानों के दुश्मन हो गये और दुश्मनाने इस्लाम के दो गिरोह मदीना के आस-पास थे। एक तो वह जो खुल्लम-खुल्ला मुसलमानों के मुख़ालिफ़ और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की रिसालत के इन्कारी थे और दूसरा गिरोह मुनाफ़िक़ों (कपटाचारियों) का था जो ज़ाहिर में इस्लाम के मानने वाले थे, मगर अन्दर से इस्लाम दुश्मन थे।

यह सीधे-साधे मुसलमानों के दिलों में संदेह डालने की कोशिश करते और अन्दर ही अन्दर यहूदियों से मिले रहते, अल्लाह तआ़ला ने इन मुनाफ़िक़ों के संदेह को ख़त्म करने के लिए यह सूरः नाज़िल करनी शुरु की।

यहूदियों का एक रहनुमा 'मालिक बिन सैफ़' मुसलमानों के दिलों में बहुत ज़्यादा संदेह डालता और कहता-

"यह वह किताब नहीं है जिसकी ख़बर पिछली आसमानी किताबों में दी गई है।"

अल्लाह तआ़ला ने शुरु की आयतों में उसके संदेह को दूर किया, फिर चार आयतों में मुसलमानों की तारीफ़ और गुणों को बताया, दो आयतें काफ़िरों के सम्बन्ध में और 13 आयतें मुनाफ़िक़ों के ह़ालात पर नाज़िल फ़रमाईं।

इस सूरः के विषय-

इस सूरः का केन्द्रीय विषय (मर्कज़ी मज़मून) दअ़वते तौह़ीद (एकेश्वरवाद की ओर बुलावा) है। इस तरह इस सूरः के ख़ास विषय यह हैं-

(१) तौह़ीद (२) रिसालत (३) अल्लाह के रास्ते में जिहाद (४) अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करना और कुछ विशेष मामलात से सम्बन्धित एह़काम ज़िक्र किये गये हैं।

जैसे-

● **पहले और दूसरे रुकूअ़** में बताया गया है कि क़ुर्आन को अल्लाह की किताब होने में संदेह नहीं, लेकिन क़ुर्आन मजीद उन्हीं लोगों के लिए हिदायत (रहनुमाई) है जिनके दिलों में अल्लाह का डर हो।

फिर बताया गया है कि क़ुर्आन सुन कर दुनिया में तीन तरह़ के लोग पैदा होंगे, पहले मोमिन, जो इसको सुन कर इस पर ईमान लाएँगे दूसरे काफ़िर वह इसके मुख़ालिफ़ होंगे, वह इसके मानने से इन्कार करेंगे, तीसरे मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) जो ज़ाहिर में तो इसके मानने वाले होंगे मगर अन्दर से इन्कारी होंगे।

● **तीसरे रुकूअ़** में तमाम इन्सानों को तौह़ीद की दअ़वत दी गई है। फिर तमाम इन्सानों को अ़िबादत और बन्दगी का हुक्म दिया गया है और क़ुर्आन मजीद के ह़क़ होने को साबित किया गया है।

● **चौथे रुकूअ** में हज़रत आदम (अलै०) की पैदाइश, शैतान-इब्लीस की नाफ़रमानी और आदम व हव्वा को बहका कर जन्नत से निकलवाने और उनकी दुआ़ के क़ुबूल होने का ज़िक्र है।

● **पाँचवें रुकूअ से चौदह रुकूअ** तक बनी इस्राईल के हालात बयान किये गये हैं कि इस क़ौम पर अल्लाह के कैसे-कैसे इनआ़मात हुए, लेकिन उन्होंने शुक्र करने के बजाय नाशुक्री ही की; जैसे-

उनके अहद (प्रतिज्ञा) को तोड़ना, कोहितूर पर जाने के बाद ख़ुराफ़ात में मुब्तिला होना, शनिवार (सनीचर) के दिन का मामला, तौरेत का मिलना, गाय का वाक़िया, नबियों के क़त्ल करने का ज़िक्र करने के बाद जादू की नापाक कोशिशें, नबियों की तौहीन और यहूद के ग़लत अक़ीदे का ज़िक्र है।

● **पन्द्रहवें रुकूअ** में बनी इस्राईल से लेकर हज़रत इस्माईल (अलै०) के हालात और उनकी नस्ल में आख़िरी नबी के पैदा होने का ज़िक्र है।

● **सोलहवें से अट्ठारहवें रुकूअ** तक हज़रत इब्राहीम व हज़रत इस्माईल (अ़लै०) और कअ़बः की तअ़मीर मदीना में अहले इस्लाम के तहवीले क़िब्ला (क़िब्ला की तब्दीली) अर्थात बैतुल मक़्दिस से ख़ान-ए-कअ़बः की ओर मुँह करके नमाज़ पढ़ने का ज़िक्र है।

● **उन्नीस्वें रुकूअ** में नमाज़ और सब्र से मदद लेने का ज़िक्र और जो लोग अल्लाह की राह में मर गये उनको हमेशा की ज़िन्दगी यानी जन्नत की बशारत और हज व उमरः का ज़िक्र है।

● **बीस्वें रुकूअ** में अल्लाह की क़ुद्रत की निशानियाँ अल्लाह के ख़ालिक़ होने की दलीलें, मुश्रिकों के शिर्क का रद्द और शिर्क से बचने के तरीक़ों का ज़िक्र है।

● **इक्कीस्वें रुकूअ** में पाक और हराम से सम्बन्धित चीज़ों का ज़िक्र है।

● **बाइस्वें से पचीस्वें रुकूअ** तक ईमान, सद्क़ः, ख़ैरात, नमाज़, रोज़ः एतिकाफ़, हज, अल्लाह की राह में माल खर्च करना और लोगों के साथ नेकी से पेश आने का ज़िक्र है।

● **छब्बीस्वें रुकूअ** में दुश्मनों से जिहाद का तफ़्सीली ज़िक्र है।

● **सत्ताइस्वें रुकूअ** में शराब, जुआ, यतीमों और ग़रीबों की मदद का ज़िक्र है।

● **अठ्ठाइस्वें से इकत्तीस्वें रुकूअ** तक समाजी ज़िन्दगी के मसायल जैसे- निकाह, हैज़, निफ़ास, तलाक़ व इद्दत, ईला, दूसरा निकाह, बच्चों की तर्बियत और महर का ज़िक्र है।

● **बत्तीस्वें और तेतीस्वें रुकूअ** में बनी इस्राईल का एक नबी की दुआ़ से ज़िन्दा होना, हज़रत तालूत व जालूत के मुक़ाबले का ज़िक्र और बनी इस्राईल की सल्तनत और हज़रत दाऊद के दौर में ज़िन्दा होने का ज़िक्र है।

● **चौंतीस्वें रुकूअ** में आयतुल्कुर्सी और इस्लाम के क़ुबूल करने में कोई ज़बरदस्ती के न होने का ज़िक्र है।

● **पैंतीस्वें से अड़तीस्वें रुकूअ** में हज़रत इब्राहीम (अ़लै०) के चार जानवरों को ज़िन्दा करके दिखाने और हज़रत उज़ैर (अ़लै०) का ज़िक्र है।

● <u>**उन्तालिस से आख़िर रुकूअ**</u> तक सद्क़ः, ख़ैरात, सूद और गवाही, लेने-देने से सम्बन्धित मसायल, ईमान व इस्लाम का खुलासा और आख़िर में दुआ पर सूरः को मुकम्मल किया गया है।

सूरः बकरः की फ़ज़ीलत

● हज़रत इब्ने मसऊद (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जिस घर में सूरः बकरः पढ़ी जाती है, शैतान उस घर से निकल जाता है।" **(मुस्लिम)**

● हज़रत अबू उमामा (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "दो जगमगाने वाली सूरतें यानी सूरः बकरः और आले इमरान पढ़ा करो, क़ियामत के दिन वह इस हाल में आएँगी जैसे दो सायबान (बादल के टुकड़े) या दो परिन्दों के झुंड, वह पढ़ने वालों की ओर से झगड़ा करेंगी"।

● हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) की एक हदीस में है कि इस सूरः में एक आयत ऐसी है जो तमाम कुर्आन की आयतों में अफ़ज़ल है, वह आयतुल् कुर्सी है। **(इब्ने कसीर, तिर्मिज़ी)**

● हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) ने फ़रमाया, "सूरः बकरः की दस आयतें ऐसी हैं कि अगर कोई व्यक्ति रात को पढ़ ले तो उस रात को शैतान और जिन्न दाख़िल न होगा, उसको और उसके घर वालों को उस रात में कोई आफ़त, बीमारी आदि पेश न आएँगी और अगर यह आयतें किसी मज़नून पर पढ़ी जाएँ तो वह ठीक हो जाएगा, वह दस आयतें यह हैं। "चार सबसे पहले की आयतें एक आयतुल् कुर्सी, दो आयतें उसके बाद की और तीन आयतें आख़िर सूरः की।" **(इब्ने कसीर)**

● हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, अपने घरों को क़ब्र न बनाओ। जिस घर में सूरः बक़रः पढ़ी जाती है उस में शैतान दाख़िल नहीं होता।

(मुस्नद अहमद, सहीह मुस्लिम, तिर्मिज़ी, नसई)

● हज़रत अबू उमामा (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) को कहते हुए सुना, कुर्आन पढ़ा करो, इसलिए कि क़ियामत के दिन अपने पढ़ने वालों के लिए सिफ़ारिशी बनकर आएगा। दोनों रौशनी फैलाने वाली सूरतें (सूरः बक़रः और सूरः आले इमरान) पढ़ा करो। दोनों क़ियामत के दिन इस तरह आएँगी जैसे दो बादल हों या चिड़ियों के दो झुण्ड हों सफ़ें बाँधे हुए अपने पढ़ने वालों की तरफ़ से दिफ़ाअ़ कर रही होंगी। सूरः बक़रः पढ़ो इसलिए कि इस का हासिल करना बरकत है और इस का छोड़ देना बाइसे हसरत है और जादूगर लोग इस के पढ़ने वाले पर असर अन्दाज़ नहीं हो सकते।

● हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) से मौकूफ़न और मरफ़ूअ़न रिवायत है कि शैतान उस घर से भाग जाता है, जिस में सूरः बक़रः की तिलावत सुनता है। **(मुस्तदरक हाकिम, नसई)**

❖

(सूर-ए-बक़रः की व्याख्या) आयत नं० 1 से 10 तक

اٰياتها ٢٨٦ (٢) سُورَةُ الْبَقَرَةِ مَدَنِيَّةٌ (٨٧) رُكُوعَاتُهَا

यह सूरः मदनी है। इसमें 40 रुकूअ़ और 286 आयतें हैं।

الٓمّٓ ۞ ذٰلِكَ الْكِتٰبُ لَا رَيْبَ ۛ فِيْهِ ۛ هُدًى لِّلْمُتَّقِيْنَ ۞ الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِالْغَيْبِ وَيُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَمِمَّا رَزَقْنٰهُمْ
يُنْفِقُوْنَ ۞ وَالَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ ۚ وَبِالْاٰخِرَةِ هُمْ يُوْقِنُوْنَ ۞ اُولٰٓئِكَ عَلٰى هُدًى مِّنْ رَّبِّهِمْ ۗ
وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ ۞ اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا سَوَآءٌ عَلَيْهِمْ ءَاَنْذَرْتَهُمْ اَمْ لَمْ تُنْذِرْهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۞ خَتَمَ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ وَعَلٰى سَمْعِهِمْ ۗ
وَعَلٰٓى اَبْصَارِهِمْ غِشَاوَةٌ ۫ وَّلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۞ وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّقُوْلُ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَبِالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَمَا هُمْ بِمُؤْمِنِيْنَ ۞
يُخٰدِعُوْنَ اللّٰهَ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ۚ وَمَا يَخْدَعُوْنَ اِلَّآ اَنْفُسَهُمْ وَمَا يَشْعُرُوْنَ ۞ فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ ۙ فَزَادَهُمُ اللّٰهُ مَرَضًا ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۢ بِمَا
كَانُوْا يَكْذِبُوْنَ ۞

अनुवाद-

① अलिफ़- लाम्- मीम् ② इस किताब (क़ुर्आन) में कोई सन्देह नहीं,रहनुमा है परहेज़गारों के लिए। ③ जो ग़ैब (परोक्ष) पर ईमान (आस्था) लाते, और नमाज़ क़ायम करते, और जो कुछ 'हमने' उनको दे रखा है उसमें से ख़र्च करते हैं; ④ और जो लोग ईमान लाते हैं उस पर, जो आप की ओर (क़ुर्आन) उतारा गया है, और जो आप से पहले उतारा गया, और आख़िरत (परलोक) पर भी यक़ीन रखते हैं; ⑤ यही लोग अपने रब(पालनहार) की ओर से हिदायत(सीधी राह) पर हैं और यही नजात (कामियाबी) पाने वाले हैं। ⑥ जिन लोगों ने कुफ़्र (इन्कार) किया उनके लिए बराबर है, चाहे आप उन्हें ख़बरदार करें या न करें, वे ईमान लाने वाले नहीं; ⑦ अल्लाह ने उनके दिलों और उनके कानों पर मुहर लगा रखी है, और उनकी आँखों पर पर्दा है, और उनके लिए बड़ा अ़ज़ाब तैयार है। ⑧ और कुछ लोग ऐसे हैं जो कहते हैं कि हम अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर ईमान रखते है, हालाँकि वे ईमान नहीं रखते; ⑨ वे अल्लाह को और ईमान वालों को धोखा देते हैं, हालांकि वे अपने आप को धोखा दे रहे हैं, और वे इससे बेख़बर हैं। ⑩ उनके दिलों में (इन्कार का) रोग था, तो अल्लाह ने उनके रोग को और बढ़ा दिया, और उनके झूठ बोलने की वजह से उन्हें दुःख देने वाला अ़ज़ाब होगा।

आयत नं० 1 से 10 तक की व्याख्या

❶ الٓمّٓ ۞ इस सूरः की शुरुआत 'अलिफ़ लाम मीम' से हुई है, इस तरह के हुरुफ़ (अक्षर) क़ुर्आन

मजीद की कई सूरतों के शुरु में आये हैं, जिनको 'हुरुफ़े मुक़त्तआ़त' कहते हैं।

'हुरूफ़े मुक़त्तआ़त'-

कुर्आन की 29 सूरतों की शुरुआत 'हुरूफ़ मुक़त्तआ़त' से हुई है।

'हुरूफ़े मुक़त्तआ़त' को हुरुफ़े मुक़त्तआ़त इसलिए कहते हैं कि इसके हुरूफ़ (अक्षर) अलग-अलग पढ़े जाते हैं जैसे-

حٰمٓ, الٓمٓ, الٓمٓصٓ में मुफ़स्सिरीन का इख़्तिलाफ़ है, कुछ तो कहते हैं कि इनके माना केवल अल्लाह ही को मालूम हैं किसी और को नहीं। जैसे 'कुर्तुबी' ने ह़ज़रत अबू बक्र (रज़ि०) ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०), ह़ज़रत उ़स्मान (रज़ि०), ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०), ह़ज़रत इब्ने मसऊद(रज़ि०) से यही नक़्ल किया है।

'हुरूफ़े मुक़त्तआ़त' के माने-

जिन्होंने इस की तफ़्सीर (व्याख्या) बयान करने की कोशिश की है उन में से अक्सर लोगों की राय इस तरह़ है- 'अ़ब्दुर्रह़मान बिन ज़ैद बिन अस्लम' (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि यह सूरतों के नाम हैं। अल्लामा 'अबुल् क़ासिम मह़मूद बिन उमर जुमख़्शरी' अपनी तफ़्सीर में लिखते हैं कि अक्सर लोगों का इत्तिफ़ाक़ (सहमति) इस पर है कि यह सूरतों के नाम हैं।

अल्लाह के नाम-

कुछ मुफ़स्सिरीन कहते हैं कि यह अल्लाह तआ़ला के नाम हैं। जैसे-'ह़ज़रत शाबी (रह़०)', 'सालिम बिन अ़ब्दुल्लाह', 'इस्माईल बिन अ़ब्दुर्रह़मान' कहते हैं कि यह अल्लाह के नाम हैं।

ह़ज़रत 'इब्ने अ़ब्बास' (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह तआ़ला का बड़ा नाम है और रिवायत है कि الٓمٓ حٰمٓ طٰسٓ यह सब अल्लाह तआ़ला के बड़े नाम हैं।

'ह़ज़रत अ़ली' (रज़ि०) और 'ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास' (रज़ि०) से भी यही रिवायत है।

अल्लाह की क़सम-

एक और रिवायत में है कि यह अल्लाह तआ़ला की क़सम है और उसका नाम भी, 'ह़जरत इक्रमा' (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि यह क़सम हैं।

ह़ज़रत 'इब्ने अ़ब्बास' (रज़ि०) और ह़ज़रत 'इब्ने मसऊद' (रज़ि०) और कुछ सह़ाबा से रिवायत है कि अल्लाह तआ़ला के नामों के अलग-अलग हुरूफ़ (अक्षर) हैं।

क़ौमों की मुद्दत-

'अबुल आलिया' (रह़०) फ़रमाते हैं कि यह तीन हुरूफ़ 'अलिफ़', 'लाम्' और 'मीम' उन हुरूफ़ में से हैं जो तमाम ज़बानों में आते हैं। इनमें से हर हुरूफ़ अल्लाह तआ़ला के एक-एक नाम के शुरु का हर्फ़ है और इसमें क़ौमों की मुद्दत और वक़्त का बयान है। अलिफ़ से 'अल्लाह' और लाम से 'लतीफ़'

होता है और मीम से 'मजीद' होता है।

शार्ट हैंड (Short hand) यानी 'अलिफ़' से अल्लाह–

कुछ उ़लमा कहते हैं कि जिस तरह़ आजकल शार्ट हैंड है, उसी तरह़ उस वक़्त भी अ़रबों के यहाँ कुछ लफ़्ज़ रायज थे। इसलिए ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि 'अलिफ़', 'लाम', 'मीम' में 'अलिफ़' से इनआ़मते इलाही और 'लाम' से 'लुत्फ़' और 'मीम' से 'मुल्क' मुराद है, यानी अल्लाह के मुल्क की तमाम नेअ़मतें उसी के लुत्फ़ व करम से है।

या 'अलिफ़' से 'अल्लाह' और 'लाम' से 'जिब्रईल' और 'मीम' से 'मुह़म्मद' मुराद हैं, यानी कलामे इलाही जिब्रईल अमीन के ज़रिये ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) पर नाज़िल हुआ है।

'अबुल् आलिया' का ख़याल है कि इस ह़िसाब से कि 'अब्जद', क़ौमों की तारीख़ उनके उरूज व ज़वाल (उत्थान व पतन) की दास्तानें इन ह़ुरूफ़ में है।

इस तरह़ एक बार कुछ यहूद ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ख़िद्मत में ह़ाज़िर हुए। आप (सल्ल०) ने उनके सामने 'अलिफ़', 'लाम', 'मीम' पढ़ा तो कहने लगे हम कैसे ऐसे दीन में दाख़िल हों जिसकी कुल मुद्दत 71 साल हो। यह सुनकर आप (सल्ल०) मुस्कुराये और फिर 'अलिफ़', 'लाम', 'मीम' 'स्वाद', 'अलिफ़', 'लाम', 'रा' पढ़कर सुनाया, कहने लगे इन की संख्या (161) और 671 है जो पहली संख्या से बढ़े हुए हैं, मगर अब मामला पेचीदा और संदिग्ध हो गया है, इसलिए हम कोई फ़ैसला नहीं कर सकते।

कोड वर्ड (Code word)–

हर ज़बान में कुछ शार्टकट हुरूफ़ होते हैं, जो ख़ास माना व मतलब के लिए इस्तेमाल होते हैं और उनको ख़ास-ख़ास लोग ही समझ सकते हैं जिनको अंग्रेज़ी में कोड वर्ड कहते हैं। इसी तरह़ क़ुर्आनी हुरूफ़े मुक़त्तआ़त हैं जिनका अर्थ अल्लाह और उसके रसूल ही जानते हैं।

अल्लाह के ख़ास इस्रार (राज़)–

आमिर, शाबी, सुफ़्यान सौरी और मुह़द्दिसीन ने फ़रमाया, कि हर आसमानी किताब में अल्लाह तआ़ला के कुछ ख़ास इस्रार (राज़) होते हैं, इसी तरह यह हुरुफ़ मुक़त्तआ़त क़ुर्आन में अल्लाह तआ़ला के राज़ हैं। इन पर ईमान लाना और इनका पढ़ना हमारे लिए सवाबे अ़ज़ीम है और इसके माना के फ़िक्र में पड़ना दुरुस्त नहीं।

चैलेन्ज (Challenge)–

मुफ़स्सिरीन ने एक और ह़िक्मत इन हुरूफ़ को, सूरतों के शुरु में लाने की यह बयान की है कि अ़रबवासियों को बताना था कि यह किताब जो मुह़म्मद (सल्ल०) पर नाज़िल हुई है, इसके कलिमात (शब्द) उन्हीं हुरूफ और उन्हीं अक्षरों से बने हैं जो तुम्हारी बातचीत और तुम्हारे मुहावरों में प्रयोग होते

हैं, तुम बड़े साहित्यकार हो तो इस जैसी किताब इन्हीं अक्षरों के ज़रिये बना कर लाओ।

जब माहिरीन इस जैसी किताब बना कर नहीं ला सकते तो एक उम्मी (अनपढ़), जिसने किसी से कुछ नहीं पढ़ा, उसके बारे में कैसे कहते हो कि उसने अपने पास से बना लिया? अगर यह कलाम (वाणी) अल्लाह के सिवा किसी और का होता तो तुम लोग इस जैसा कलाम बनाने में कैसे नाकाम रह जाते।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया,

"जिसने अल्लाह की किताब का एक हर्फ़ (अक्षर) पढ़ा तो उसकी वजह से एक नेकी मिलेगी और वह नेकी दस नेकियों के बराबर होगी, मैं यह नहीं कहता कि अलिफ़-लाम्-मीम् एक हर्फ़ है, बल्कि अलिफ़ एक हर्फ़ है, लाम् एक हर्फ़ है और मीम् एक हर्फ़ है।" **(मिश्कात)**

ख़ुलासा-

संक्षेप में यह कि सूरतों के नाम हों या अल्लाह तआला के नाम या सूरतों के शुरु में एक-एक अल्फ़ाज़ (शब्द) हों। मुम्किन (सम्भव) है कि इन में हर-हर हर्फ़ से अल्लाह तआला के एक-एक नाम की ओर इशारा हो और इसी तरह उसकी सिफ़तों और मुद्दत आदि की ओर भी।

तमाम सहाबा व ताबईन व उ़लमा-ए-उम्मत के नज़्दीक यह हुरूफ़ इस्रार (राज़) हैं जिसका इ़ल्म अल्लाह के सिवा किसी को नहीं है और हो सकता है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) को बतौर राज़ के दिया गया हो जिसको दीनी ज़रूरतों में कोई हर्ज न होने की वजह से उम्मत को बताने से रोक दिया गया हो, मगर कुछ मुफ़स्सिरीन ने अपनी समझ के मुताबिक़ इस तरह के माने अन्दाज़ से लगाने की कोशिश की है।

2 ذٰلِكَ الْكِتٰبُ لَا رَيْبَ ۛ فِيْهِ ۛ هُدًى لِّلْمُتَّقِيْنَ ۙ

ज़ालिका का अर्थ-

हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि यहाँ 'ज़ालिका' के माने 'हाज़ा' के हैं, इसी तरह मुजाहिद, इक्रमा, सईद बिन जुबैर, सुद्दी, 'मक़ातिल बिन हय्यान', 'ज़ैद बिन अस्लम' आदि भी यही कहते हैं। **(इब्ने कसीर)**

इमाम बुख़ारी से भी यह नक़्ल किया गया है और मतलब भी यही है कि 'ज़ालिका' के अस्ल माना तो 'वह' के हैं, लेकिन कभी क़रीब के माना में 'यह' का भी प्रयोग होता है। यहाँ इसी माना में है अर्थात 'यह किताब ऐसी' है जिसमें किसी सन्देह की गुन्जाइश नहीं।

अल् किताब-

अल् किताब से मुराद क़ुर्आन मजीद है, यानी वह किताबे अ़ज़ीम जो हक़ीक़ी मानों में किताब है। इसलिए इस में इ़ल्म व हिक्मत के ऐसे ख़ज़ाने और ऐसा खुला हुआ हक़ बयान किया है जो अगली किताबों में मौजूद नहीं।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के ज़माने में यहूदी अपनी किताबों में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की

पेशीनगोई (भविष्यवाणी) को देखकर मदीना और उसके क़रीब आकर आबाद हो गये थे ताकि आख़िरी नबी का इन्तिज़ार (प्रतिक्षा) कर सकें। यहाँ उनकी ओर भी इशारा मिलता है कि यह वही किताब है, जिनकी पेशीनगोई पिछले नबियों ने की है।

फिर यहूद-ए-मदीना में से, 'मालिक बिन सैफ़' मुसलमानों के दिल में शक डालता था कि यह वह किताब नहीं है जिसकी ख़बर अगली किताबों में दी गई है।

इस से वह शक भी दूर किया गया है कि यह वही किताब है, जिसकी ख़बर पहली किताबों में दी गई है और इसमें कोई शक नहीं। वह उलमा-ए-यहूद जो अपनी किताबों के सच्चे आ़लिम थे, क़ुर्आन को सुनते ही हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर ईमान ले आये, अब भी जो सच्चे दिल से क़ुर्आन का अध्ययन करेगा तो वह यह मान लेगा कि यह अल्लाह की किताब है।

शब्द 'हुदा' (هدیٰ) का इस्तेमाल दो माने में हुआ है, पहला माने रहनुमाई करना और राहे हक़ को वाज़ेह़ कर देना है। इस एतिबार से क़ुर्आन करीम राहे हक़ से भटके हुए लोगों के लिए हुदा (هدیٰ) है कि उन को हक़ की तरफ़ रहनुमाई करता है चाहे वह इससे फ़ायदा उठाएँ या न उठाएँ।

दूसरा माना बन्दा के दिल में हिदायत क़ुबूल करने की सलाहियत (योग्यता) पैदा करना और तौफ़ीक़ देना है। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया "यही लोग हैं जिन्हें अल्लाह ने हिदायत दी" यानी क़ुर्आन उन की रहनुमाई करता है और उस के ज़रिये राहे हक़ पर चलने की तौफ़ीक़ भी इन्हें मिलती है।

मुत्तक़ी-

हज़रत 'इब्ने अ़ब्बास' (रज़ि०) कहते हैं मुत्तक़ी उन लोगों को कहते हैं जो राहे हिदायत पर न चलने की सूरत में अल्लाह के अ़ज़ाब से डरते हैं और दीने इस्लाम की तस्दीक़ और उस पर चलने की सूरत में अल्लाह की रहमत की उम्मीद रखते हैं।

हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से किसी ने 'तक़्वा' के माने पूछा तो कहा कि कभी खारदार रास्ता पर चले हो उसने कहा हाँ, तो उन्होंने पूछा कि तुम ने किस तरह रास्ता तय किया? उसने कहा जब कांटा देखता तो उस से अलग हो जाता तो उन्होंने कहा यही "तक़्वा" है। आगे की आयत में मुत्तक़ियों के औसाफ़ (गुण) बताये जा रहे हैं।

ग़लत फ़हमी-

कुछ लोग क़ुर्आन को हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की रचना मानते हैं यह एक बड़ी भारी ग़लती है क्योंकि आप (सल्ल०) उम्मी (Unlettered, निराक्षर) थे। आप (सल्ल०) के पास जिब्रईल (अ़लै०) क़ुर्आन ले कर आते थे जिसे आप बाद में लिखा दिया करते थे। इसके अ़लावा क़ुर्आन ने यह चैलेंज किया है कि इस जैसी किताब तमाम जिन्नात और इन्सान मिल कर भी नहीं बना सकते।

3 الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِالْغَيْبِ وَيُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَمِمَّا رَزَقْنٰهُمْ يُنْفِقُوْنَ ۙ

सूरः बकरः के तेईस्वें रुकूअ़ में तमाम इन्सानों के लिए क़ुर्आन को हिदायत की किताब बताया गया है और यहाँ मुत्तक़ियों (परहेज़गारों) के लिए हिदायत बताया गया है।

दोनों बातें अपनी-अपनी जगह बेहतर हैं, क़ुर्आन का पैग़ाम हर इन्सान के लिए आम है, तमाम इन्सानों को बार-बार समझाया गया है और दलीलें पेश की गई हैं, जिनको सामने रख कर थोड़ी सी समझ रखने वाला भी हिदायत पर आ सकता है। लेकिन इससे वही लोग फ़ायदा उठा सकते हैं जो अपनी अक़्लों को इस्तेमाल करके ह़क़ को क़ुबूल करते हैं और यह तय कर लेते हैं कि हमें सीधी राह अपनाना है और बुरी चीज़ों से बचना है अर्थात- शिर्क और कुफ़्र से बच कर छोटे और बड़े गुनाह से बचना और अपने पैदा करने वाले मालिक के हुक्म के अनुसार ज़िन्दगी गुज़ारना।

इस तरह़ इसका मतलब यह हुआ कि यह किताब काफ़िरों को तौह़ीद (एकेश्वरवाद) का रास्ता दिखाने वाली, फ़ासिक़ों और गुनहगारों को छोटे-बड़े गुनाहों से बचने की हिदायत करने वाली और नेक लोगों को वली, सिद्दीक़ीन के दर्जे तक पहुँचाने वाली है।

ईमान की परिभाषा-

"ईमान का शाब्दिक अर्थ होता है-किसी की बात को किसी के भरोसे पर यक़ीनी तौर से मान लेना"।

और पारिभाषिक तौर पर रसूल की ख़बर पर रसूल की बात को मान लेने का नाम ईमान है अर्थात ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के भरोसे पर उन की बताई हुई सभी बातों को मान लेने का नाम ईमान है।

ग़ैब का अर्थ-

शाब्दिक तौर पर ग़ैब ऐसी चीज़ों के लिए बोला जाता है जो न ज़ाहिरी तौर पर इन्सान को मालूम हों और न अन्दुरूनी तौर पर अर्थात न वह आँख से नज़र आएँ, न कान से सुनाई दें, न नाक से सूँघ कर, न ज़बान से चख़ कर और न हाथ से छू कर उनका इ़ल्म (ज्ञान) हो सके। पारिभाषिक तौर पर ग़ैब से वह तमाम चीज़ें मुराद हैं जिनकी ख़बर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने दी हैं और उनका इ़ल्म ज़ाहिरी या अन्दुरूनी तौर पर नहीं किया जा सकता। जैसे अल्लाह तआ़ला की ज़ात व सिफ़ात, तक़्दीर, जन्नत व दोज़ख़ (स्वर्ग व नर्क) के ह़ालात, क़ियामत और उसमें पेश आने वाले ह़ालात, फ़रिश्ते, तमाम आसमानी किताबें और पिछले अम्बिया (ईशदूतों) का ज़िक्र।

इससे यह भी मालूम हो गया कि केवल जानने को ईमान नहीं कहते क्योंकि जहाँ तक जानने का सम्बन्ध है वह तो इब्लीस, शैतान और बहुत से काफ़िरों को भी ह़ासिल है कि उनको ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के सच्चे होने का यक़ीन था, मगर उन्होंने माना नहीं इसलिए वह मोमिन नहीं हो सके।

ईमान और इस्लाम में अन्तर-

शाब्दिक तौर पर ईमान किसी चीज़ के दिल से तस्दीक़ करने का नाम है और इस्लाम कहते हैं ताअ़त और फ़रमाँबरदारी को, ईमान बग़ैर इस्लाम के और इस्लाम बग़ैर ईमान के मोअ़तबर नहीं, अर्थात

अल्लाह और उसके रसूल की केवल दिल से तस्दीक़ कर लेना उस वक़्त तक शरीअ़त में मोअ़तबर नहीं जब तक ज़बान से उस की तस्दीक़ का इज़्हार और इताअ़त और फ़रमाँबरदारी का इक़रार न करे। इसी तरह ज़बान से तस्दीक़ (पुष्टि) का इज़्हार या फ़रमाँबरदारी का एतिबार उस वक़्त तक मोअ़तबर नहीं जब तक कि दिल में अल्लाह और उसके रसूल की तस्दीक़ न हो।

नमाज़ क़ायम करना–

नमाज़ क़ायम करना यह है कि नमाज़ के फ़रायज़, वाजिबात, सुन्नत व मुस्तहबात आदि को ख़ुशूअ़ ख़ुज़ूअ़ के साथ अदा किया जाए।

इसी तरह इक़ामत के माना केवल नमाज़ पढ़ने के नहीं, बल्कि नमाज़ को हर तरह से दुरुस्त करने का नाम इक़ामत है।

हज़रत 'इब्ने अ़ब्बास' (रज़ि०) फ़रमाते हैं, नमाज़ का क़ायम करना यह है कि रुकूअ़, सज्दः पूरा-पूरा अदा किया जाए, तिलावत भी सही हो, नमाज़ में ख़ुशूअ़ भी हो और नमाज़ पढ़ते वक़्त नमाज़ का ध्यान भी हो। **(इब्ने कसीर)**

हज़रत क़तादा (रज़ि०) फ़रमाते हैं, "वक़्तों का ख़्याल रखना, वुज़ू अच्छी तरह करना, रुकूअ़, सज्दः अच्छी तरह करना इक़ामतिस्सलात है।" **(इब्ने कसीर)**

इसी तरह सुन्नत के मुताबिक़ नमाज़ का एहतिमाम करना वरना मुनाफ़िक़ीन भी नमाज़ पढ़ते हैं, लेकिन वह नमाज़ क़ुबूल नहीं होती।

अल्लाह की राह में ख़र्च करना–

इस आयत के अनुसार हर तरह का वह ख़र्च जो अल्लाह की राह में किया जाए, चाहे फ़र्ज़ ज़कात हो या दूसरे वाजिब सद्क़ात व ख़ैरात, क्योंकि क़ुर्आन में जहाँ कहीं शब्द इन्फ़ाक़ आया है, वह नफ़्ली सद्क़ात के लिए प्रयोग हुआ है और शब्द ज़कात, फ़र्ज़ ज़कात के लिए।

हज़रत 'इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) व इब्ने मसऊद (रज़ि०)' और कुछ सहाबा ने कहा है कि इससे मुराद आदमी का अपने बाल बच्चों को खिलाना पिलाना है यह ज़कात के हुक्म से पहले की आयत है। **(इब्ने कसीर)**

हज़रत 'ज़िहाक़ (रह०)' फ़रमाते हैं, "ज़कात की सात आयतें जो 'सूरः तौबः' में हैं उनके नाज़िल होने से पहले यह हुक्म था कि अपनी-अपनी ताक़त के अनुसार थोड़ा बहुत जो हो सके देते रहें।"

4-5 وَالَّذِينَ يُؤْمِنُونَ بِمَا أُنْزِلَ إِلَيْكَ وَمَا أُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ وَبِالْآخِرَةِ هُمْ يُوقِنُونَ ۝ أُولَٰئِكَ عَلَىٰ هُدًى مِنْ
رَبِّهِمْ وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ۝

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) आख़िरी नबी–

इस आयत में परहेज़गारों की सिफ़ात (गुणों) का बयान है। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद और

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि०) ने इसकी तफ़्सीर में फ़रमाया, हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के ज़माने में मोमिन दो तरह के थे। एक वह जो पहले मुशिरकों में से थे, जिन्होंने इस्लाम कुबूल किया दूसरे वह जो पहले अहले किताब-यहूदी या ईसाई थे, फिर मुसलमान हो गये। इससे पहले की आयत में पहले की तरह का ज़िक्र था और इस आयत में दूसरे तरह का ज़िक्र है। इसी लिए इस आयत में क़ुर्आन पर ईमान लाने के साथ पिछली आसमानी किताबों पर ईमान लाने की बात कही गयी है कि वह दुगने सवाब के हक़्दार हैं।

एक तो यह कि पिछली किताबों के ज़माने में उन पर ईमान लाने और अमल करने का सवाब, दूसरे क़ुर्आन के ज़माने में क़ुर्आन पर ईमान लाने और अमल करने का सवाब। पिछली आसमानी किताबों पर ईमान लाना आज भी हर मुसलमान पर फ़र्ज़ है, जो कुछ अल्लाह की ओर से नाज़िल हुआ था, मगर अमल केवल 'क़ुर्आन' ही पर किया जाएगा।

इससे मालूम हुआ कि आप की 'वह्य' आख़िरी 'वह्य' है क्योंकि अगर क़ुर्आन के बाद कोई और किताब नाज़िल होने वाली होती तो जिस तरह इस आयत में पिछली किताबों पर ईमान लाना ज़रूरी कहा गया है, उसी तरह भविष्य में नाज़िल होने वाली किताब और वह्य पर ईमान लाने का ज़िक्र ज़रूर होता। इससे मालूम हुआ कि अब क़ुर्आन ही केवल क़ियामत तक बाक़ी रहने वाली किताब है।

कलामे इलाही (ईशग्रन्थ)-

इस तरह पूरी दुनिया में इस समय क़ुर्आन मजीद के सिवा कोई भी आसमानी किताब अर्थात कलामे इलाही (ईशग्रन्थ) अपने वास्तविक रूप में मौजूद नहीं है, इस समय भी बहुत सी क़ौमें अपने-अपने ग्रन्थों को ईश्वरीय ग्रन्थ बताती हैं, लेकिन उनके पास इसका कोई प्रमाण नहीं कि वह ग्रन्थ कब और किस पर नाज़िल हुआ और जितना नाज़िल हुआ था बिना किसी संशोधन के पूरा-पूरा मौजूद है इसका उत्तर देने में सभी असमर्थ हैं।

लेकिन क़ुर्आन ऐसा ग्रन्थ है जो एक उम्मी (निराक्षर) पर नाज़िल हुआ जिन्होंने न कभी कोई किताब पढ़ी न लिखी मगर उन्होंने पहले की ईश्वरीय पुस्तकों की शिक्षाएँ, पहले के नबियों के क़िस्से, धर्मों और पन्थों की मान्यताएँ प्राचीन जाति का इतिहास, संस्कृति, नैतिकता और आचार व्यवहार की शिक्षा, आदेश और नियम सब बयान किये।

यह इसका खुला प्रमाण है कि यह ईश्वरीय ग्रन्थ है, जो उस समय से आज तक एक अक्षर भी तब्दील नहीं हो सका। उस समय का क़ुर्आन हो या आज का दोनों में कोई अन्तर नहीं मिलेगा, इसलिए कि हर ज़माने में इसके याद करने वालों की संख्या हज़ारों बल्कि लाखों से अधिक रही।

इस तरह़ जिसको अपने पैदा करने वाले मालिक के अनुसार ज़िन्दगी गुज़ारना हो, उसको चाहिए कि वह अब पिछली ईश्वरीय किताबों पर यक़ीन रखते हुए, क़ुर्आन पर अमल करे।

इस्लाम के बुनियादी अ़क़ीदे-

ह़दीस में है “इस्लाम की बुनियाद” पाँच चीज़ों पर है।

1- इस बात की शहादत देना कि अल्लाह के सिवा कोई मअ़बूद नहीं और मुह़म्मद (सल्ल०) अल्लाह के रसूल हैं।

2- नमाज़ क़ायम करना।

3- ज़कात अदा करना।

4- ह़ज करना

5- रमज़ान के रोज़े रखना। **(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् ईमान, बाब, 2; ह़दीस, 8)**

आख़िरत पर ईमान-

ईमान वालों की एक सिफ़त (गुण) यह भी बताई गई है कि वह आख़िरत पर ईमान लाते हैं। ईमान के तीन अहम ह़िस्से हैं। (1) तौह़ीद (2) रिसालत (3) मौत के बाद ज़िन्दा होने पर ईमान।

इस्लाम का यही वह अ़क़ीदा है जिसने दुनिया की काया पलट कर दी जिस को इससे पहले भी तमाम नबियों ने बताया था। यह वह अक़ीदा (आस्था) है, जिसकी वजह से इन्सान बुराई से बच जाता है कि चाहे वह अकेले में हो, लोगों के बीच में या रात के अन्धेरे में हो, उसका यह अक़ीदा होता है कि कोई देखने वाला देख रहा है और लिखने वाला मेरे सब अ़मल लिख रहा है और कल क़ियामत के मैदान में इसका ह़िसाब देना है इसलिए वह बुराईयों से बच जाता है।

मरने के बाद दोबारा उठाये जाने की कल्पना विभिन्न तरीक़ों से लोगों ने गढ़ बना ली हैं, जबकि इससे पहले भी नबियों ने आख़िरत का यही रूप बताया था। विशेष रूप से हमारे यहूदी, ईसाई और हिन्दू भाईयों ने अपने-अपने विचार दाख़िल करके वास्तविक रूप ही बदल डाला, जिस पर उन्हें विचार की आवश्यकता है।

तमाम धर्मों में आख़िरत का अ़क़ीदा

हिन्दूमत और आख़िरत-

हिन्दूमत में विभिन्न प्रकार की विचारधाराएँ आ गई हैं। जैसे निर्वाण, पुनर्जन्म या आवागमन और परलोकवाद आपस में उलझे हुए हैं। आर्य समाजी आवागमन को मानते हैं, सनातन धर्मी पुनर्जन्म और परलोकवाद दोनों को मानते हैं। कुछ लोग निर्वाण को भी मानते हैं लेकिन ‘दुर्गाशंकर सत्यार्थी’ व ‘सत्यप्रकाश विद्या शंकर’ का मानना है कि वेदों में है कि मरने के बाद फिर से जीवन मिलना निश्चित है जिसे दिव्य जीवन कहा गया है, वेदों में अन्तिम दिन का भी उल्लेख है। ‘ऋग्वेद’ के ‘प्रथम मण्डल’ के ‘सैंतालीस्वें सूक्त’ में अच्छे लोगों से अच्छे बदले का वादा किया गया है और बुरे लोगों को कठोर

अज़ाब की धमकी दी गयी है।

'श्री मद् भागवत' के दस्वें स्कन्ध, अध्याय चार, श्लोक नं० पाँच से बारह तक में प्रलय का विस्तारपूर्वक उल्लेख है, इसी के पाँचवें स्कन्ध के छब्बीस्वें अध्याय में अट्ठाईस तरह के नर्कों का वर्णन भी है।

बुद्धमत और आख़िरत (परलोकवाद)-

बुद्धमत में तो परलोक के बजाय निर्वाण का अक़ीदा मिलता है। बुद्धमत के अनुसार दुनिया में दुःख ही दुःख है और इस दुःख का कारण (तृष्णा) है और इस दुःख से छुट्कारा पाने का एक ही रास्ता है, वह यह कि अपनी इच्छाओं पर क़ाबू पा ले, यह क़ाबू आर्य आष्टाँगिक मार्ग के ज़रिये ह़ासिल किया जा सकता है। सम्यक ज्ञान, सम्यक दृष्टि, सम्यक समाधि आदि। इनके यहाँ दण्ड व पुरस्कार या आख़िरत का कोई विधान नहीं।

ईसाई मत और आख़िरत (परलोकवाद)-

लूका यूहन्ना, मत्ती, मर्कश यह इंजीलें जो ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) के बाद पचास वर्ष से लेकर एक सौ पचास के बीच लिखी गई, जिनमें आख़िरत के सम्बन्ध में ख़ुदावन्द की बादशाहियत, स्थाई जीवन, दोज़ख़ तथा जन्नत का ज़िक्र मिलता है। ईसाईयों के यहाँ फ़ैसले का दिन ऐसा दिन है जिसमें आदम, सुत अर्थात मसीह ख़ुदा के फ़रिश्तों की देख-रेख में आएगा।

"इससे अचम्भा मत करो क्योंकि वह समय आएगा कि जितने क़ब्रों में हैं उसका शब्द सुन कर निकलेंगे जिन्होंने भलाई की है वह जीवन के पुनरुत्थान के लिए जी उठेंगे और जिन्होंने बुराई की है वे दण्ड के पुनरुत्थान के लिए जी उठेंगे"। **(यूहन्ना 5 : 28-29)**

"अपने लिए स्वर्ग में धन इकट्ठा करो, जहाँ न तो कीड़े कुछ बिगाड़ते हैं और न चोर सेंध लगाते न चुराते हैं क्योंकि जहाँ तेरा धन है वहाँ तेरा मन भी लगा रहेगा। **(मत्ती 7: 20)**

हे साँपों! हे करैतों के बच्चों तुम नर्क के दण्ड से कैसे बचोगे।

जैन धर्म और आख़िरत-

जैन दर्शन कर्म को परमाणुओं का पिंड मानता है उसके अनुसार जीवों की विविधता का मूल कारण यही कर्म है। आत्मा (जीव) और कर्म का सम्बन्ध अनादि है, कर्म का सम्बन्ध व्यक्ति के शरीर मन और आत्मा से है। एक बार सारे कर्मों का विनाश हो जाने के बाद पुनः कर्मोपार्जन नहीं होता क्योंकि उस अवस्था में कर्मबन्ध का कोई कारण विद्यमान नहीं रहता। आत्मा की इसी अवस्था को 'कैवल्य' या मोक्ष कहते हैं।

आचार्य 'उमा स्वामी' ने 'कैवल्य' के सम्बन्ध में कहा है-

सभ्यग्दर्शन ज्ञान चरित्राणि मोक्षमार्गः। (तत्वार्थ सूत्र 1-1)

अर्थात 'सम्यक दर्शन', 'सम्यक ज्ञान' और 'सम्यक चरित्र' ही मोक्ष के साधन हैं। जैन दर्शन के अनुसार कर्म और पुनर्जन्म का अविच्छेद सम्बन्ध है, कर्म की सत्ता स्वीकार करने पर उसके फलस्वरूप परलोक अथवा पुनर्जन्म की सत्ता उसे स्वीकार करनी पड़ती है। जैन धर्म आत्मा के आवागमन को मानता है।

जैन धर्म यह मानता है कि जिन कर्मों का फल एक जन्म में प्राप्त नहीं होता, उन कर्मों के फल का भोग पुनर्जन्म में करना पड़ता है। जैन कर्म साहित्य में समस्त जीवों का समावेश चार गतियों में किया गया है। 1- मनुष्य 2- तियर्च 3- नरक 4- देव

मरने के बाद प्राणी अपने कर्म के अनुसार इन चार गतियों में से किसी एक गति में जाकर जन्म लेता है। **(उत्तराध्यन, सूत्र, सैक्रेण्ड बुक आफ़ दी ईस्ट भाग 45 पृ० 93, 97)**

सिख धर्म और आख़िरत या आवागमन-

गुरुदास जी कहते हैं कि गुरु के बिना आवागमन से छुट्कारा नहीं मिल सकता। पउड़ी 18 में इस प्रकार दिया गया है।

कितड़े अन्हे आखी आनि केतडिआँ ही दिसनि काणो।
केतडिआँ चुन्हे फिरनि कितड़े रतीआने उकताणे।
कितड़े नकटे गुण गुणो कितड़े बोले बुचे लाणे।
केतिडियाँ गिल्हड़ गली अंगि रसउली वेणि विहाणे।
टुँडे बाँडे केतडे गंजे लुँजे कोढ़ी जाणे।
कितड़े लूले पिंगुले कितड़े कुब्बे होई कुडाणे।
कितड़ें ख़ुसरे हीजड़े केतडिआ गुगे तुतलाणे।
गुर पूरे विणु आवंण जणे।। 18

(वारां ज्ञानरत्नावली, गुरुमुखी-नागरी लिपि)

अनुवाद- कितने ही अन्धे हैं, और कितने ही काने दिखाई पड़ते हैं, कितने चौंधी आँखों वाले और कितने रतौंधी वाले, कितने नकटे नाक में बोलने वाले, बहरे और बिना कानों के हैं, कितनों के गले सूजे हुए और कितनों के अंगों में रसौलियाँ हैं और कितने लूले, गंजे बिना हाथ के और कोढ़ी हैं, कितने लूले कुबड़े और पिंगले हैं जो दुःख में रह रहे हैं। कितने हिंजड़े और कितने ही गूँगे और तुत्लाने वाले हैं, पूरे गुरु के बिना यह सब आवागमन के चक्र में पड़े रहेंगे। **(अनु०, डा० जोध सिंह)**

इसी प्रकार बिलावलु महला में हैं-

मनु मंदरु तनु वेस कलंदरु
घट ही तीरथि नावा।।
एकु सबदु मेरै प्रानि बसतु है

बाहुडि जनमि न आवा।।

(गुरु ग्रन्थ साहिब)

अनुवाद- 'मन' मन्दिर है और 'शरीर' कलंदरों का वेश है, मैं 'मन' मन्दिर ही में तीर्थ स्नान करता हूँ। एक गुरु उपदेश मेरे प्राणों में वास करता है इसे करके मैं पुनः जन्म में नहीं आऊँगा। (ज्ञानी नारायण सिंह)

इस तरह़ इनके यहाँ बहुत सी जगहों पर आवागमन से सम्बन्धित उल्लेख मौजूद है।

आख़िरत (परलोक) के सम्बन्ध में विभिन्न मत-मतान्तर-

जीवन क्या है? मृत्यु क्या है? और मरने के बाद क्या होगा? इस सम्बन्ध में अनेक प्रकार की विचारधाराओं का अध्ययन किया गया तथा संसार के प्रसिद्ध सिद्धान्तों की समीक्षा भी की गई जिसमें एक बात यह सामने आई कि अति प्राचीन काल से आज तक सभी ने इस महत्वपूर्ण समस्या पर विचार किया और लगभग सभी ने मरने के बाद के जीवन को किसी न किसी रूप में माना।

लेकिन जहाँ संसार के धार्मिक ग्रन्थों में क़ुर्आन को छोड़कर सब में तब्दीली आ गई और ईशवाणी के साथ-साथ मनुष्यों की वाणी को सम्मिलित कर लिया गया जिस की वजह से मौलिक शिक्षाएँ बदल कर कुछ से कुछ हो गईं वहीं परलोक की धारणा को भी बदल दिया गया।

पुनर्जन्म और आवागमनीय सिद्धान्त-

ऊपर विभिन्न मतों के मानने वालों के अ़क़ीदे जिनमें पुनर्जन्म का आवागमनीय सिद्धान्त था, परन्तु क्या यह सिद्धान्त जो गढ़ बना लिए गये हैं समाज के लिए लाभदायक हो सकते हैं? कदापि नहीं।

आवागमन का सिद्धान्त ह़िम्मतों को पस्त करने वाला, तरक़्क़ी की रूह़ को मुर्दा कर देने वाला मत है जो इन्सान को संसार त्याग और सन्यास की ओर ले जाता है। इसी तरह एक बार गुनाह करने के बाद वह सोचेगा कि अगले जन्म में मुझे जब पेड़ ही बनना है तो जितना चाहे पाप कर लो और मानवीय जीवन की तमाम लज़्ज़तों, सुखों से जी भरकर आनन्द उठा लो।

इसके विपरीत अगर इन्सान आख़िरत को मान लेता है तो वह कभी निराश नहीं होता, उसकी निगाह में पारलौकिक जीवन होता है। दुनिया की तक्लीफ़ या मुसीबत को वह इतना महत्व नहीं देता बल्कि वह परलोक की सफ़लता देखता है।

क़ुर्आन की धारणा-

"क़ुर्आन में कहा गया है "सांसारिक जीवन की सुख सामग्री आख़िरत की अपेक्षा बहुत थोड़ी है।"

(क़ुर्आन 9, 38)

वर्तमान जगत के विषय में क़ुर्आन बताता है कि वह हमेशा के लिए नहीं है। इसकी एक निश्चित आयु है और इसी आयु के भीतर इसकी उपयोगिता है, इसके बाद एक नया जीवन है। जो व्यक्ति अल्लाह को अपना रब दुनिया में मानेगा या उसके बताए हुए विधान के अनुसार जीवनयापन करेगा तो परलोकिक

जीवन में उसका ठिकाना जन्नत (स्वर्ग) होगा और वहाँ वह हमेशा-हमेश (सदैव) रहेगा।

"वहाँ तुम्हारे लिए वह कुछ है जिस का तुम्हारा जी चाहे और तुम्हारे लिए वह कुछ है जो तुम तलब करो।" **(क़ुर्आन 41,31)**

इसी प्रकार आख़िरत में बुरे लोगों का ठिकाना नरक होगा जहाँ उन्हें दण्ड दिया जाएगा। जैसे-

"आग उनके चेहरे को झुलसा देगी और उनके चेहरे बिगड़ जाएँगें।" **(क़ुर्आन 23, 104)**

क़ुर्आन मजीद में इसी आख़िरत की ज़िन्दगी पर ईमान लाने की बात कही गई है और जो उस पर ईमान लाएँगे उन्हीं के लिए कामियाबी का वादा भी किया गया है।

6 إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا سَوَاءٌ عَلَيْهِمْ ءَأَنذَرْتَهُمْ أَمْ لَمْ تُنذِرْهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ۝

'इब्ने जरीर' ने 'इब्ने इस्हाक़', मुहम्मद बिन अबी इक्रमा, सअ़ीद बिन जुबैर, इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) के वास्ते से अल्लाह तआ़ला के फ़रमान إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا के बारे में नक़्ल किया है, कि यह दो आयतें मदीना मुनव्वरह के यहूदियों के बारे में नाज़िल हुई हैं और 'इब्ने जरीर' ने 'रबीअ़ बिन अनस (रज़ि०)' के वास्ते से नक़्ल किया है कि إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا से وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ यहाँ तक यह दो आयतें जंगे अहज़ाब के बारे में नाज़िल हुई हैं।

इसमें उन्हीं लोगों का ज़िक्र है जिनके गुण ऊपर बताए गये हैं। जैसे ग़ैब पर ईमान लाना, नमाज़ क़ायम रखना, अल्लाह के दिये हुए में से ख़र्च करना, रसूलुल्लाह (सल्ल०) पर जो नाज़िल हुआ और आप से पहले जो किताब उतरी उस पर ईमान लाना और आख़िरत पर ईमान लाना, बुराईयों और ह़रामकारियों से बचना, यही लोग हिदायत वाले हैं और यही सीधी राह पर चलने वाले हैं और यही लोग दुनिया व आख़िरत में कामियाबी पाने वाले हैं, जो आख़िरत में अल्लाह की रज़ा ह़ासिल करके जन्नत में दाख़िल होंगे।

पहले की आयतों में अल्लाह तआ़ला ने परहेज़गारों का ह़ाल और उनका अन्जाम ज़िक्र किया था। अब अगली आयतों में काफ़िरों का ह़ाल बयान होता है कि आप उन्हें डराएँ या न डराएँ मानने वाले नहीं।

7 خَتَمَ اللَّهُ عَلَىٰ قُلُوبِهِمْ وَعَلَىٰ سَمْعِهِمْ ۖ وَعَلَىٰ أَبْصَارِهِمْ غِشَاوَةٌ ۖ وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ۝

काफ़िर का अर्थ-

'काफ़िर' का शाब्दिक अर्थ होता है 'ढ़ापने, छुपाने या इन्कार करने वाला', अर्थात ह़क़ या वास्तविकता का इन्कार करने वाला। अतः जो व्यक्ति अल्लाह तआ़ला और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को आख़िरी रसूल न माने और उनके द्वारा दिये गये दीन को (जो ह़ज़रत आदम (अ़लै०) से चला आ रहा है) न माने बल्कि उसका इन्कार करे (चाहे वह मुस्लिम परिवार में ही क्यों न पैदा हुआ हो काफ़िर कहलाएगा।)

कुफ़्र किसे कहते हैं-

'कुफ़्र' का अर्थ होता है 'इन्कार करना'। कुफ़्र ईमान का विलोम (Opposite) है और ईमान का

ख़ुलासा यह है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को रसूल मानना और वह जो कुछ (क़ुर्आन के रूप में) अल्लाह की ओर से लेकर आये हैं उनकी दिल से तस्दीक़ करना। इस तरह जो रसूल (सल्ल०) की शिक्षाओं में से, जिनका सुबूत मौजूद हो किसी एक बात को भी हक़ न समझे और उसकी तस्दीक़ न करे, तो वह काफ़िर कहलाएगा।

क़ुर्आन की आयतों की रौशनी में आ़लिमों ने कुफ़्र की पाँच क़िस्में बताई हैं।

(1) **कुफ़्र तक्ज़ीब-** अर्थात नबियों और रसूलों को झुठलाना।

(2) **कुफ़्र इस्तिकबार-** अर्थात घमंड या ग़ुरूर की वजह से अल्लाह और उसके रसूल के हुक्मों को न मानना और उनको क़ुबूल करने से इन्कार कर देना।

(3) **कुफ़्र एराज़-** अर्थात अल्लाह के पैग़म्बरों की न तस्दीक़ करे, न झुठलाए बल्कि मुँह मोड़े रहे।

(4) **कुफ़्र तरद्दुद-** अर्थात हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के न सच्चे होने का यक़ीन हो और न झूठे होने का, बल्कि संदेह में पड़ा हो।

(5) **कुफ़्र निफ़ाक़-** अर्थात ज़बान से तो इक़रार करता हो मगर दिल से इन्कार करता हो।

हठधर्मी काफ़िर

एक बात यहाँ यह समझ लेना चाहिए कि इन आयतों में हर काफ़िर का बयान नहीं है क्योंकि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की दअ़वत पर हज़ारों काफ़िर ईमान लाए और अब भी ला रहे हैं और क़ियामत तक लाते रहेंगे बल्कि यहाँ वह ख़ास तरह के काफ़िर मुराद हैं जिनके बारे में अल्लाह तआ़ला को मालूम था कि वह काफ़िर ही मरेंगे, जिनके दिल हठधर्मी की वजह से ऐसे काले हो चुके थे कि उन पर किसी नसीहत का कोई असर नहीं हो सकता था।

उन्होंने तय कर रखा था कि हमें मुहम्मद (सल्ल०) की बात नहीं माननी है। ऐसे काफ़िरों के बारे में इन आयात में पहली बात तो यह बतलाई गई, कि नबी (सल्ल०) का ऐसे काफ़िरों को डराना या न डराना बराबर है अर्थात ऐसे काफ़िरों के हक़ में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के डराने का कोई असर न होगा।

● अब यहाँ एक प्रश्न यह हो सकता है कि ऐसे काफ़िरों को समझाने की क्या ज़रूरत थी कि जिनके बारे में यह पहले से तय था। जवाब इसका यह है कि इस डराने और न डराने का मतलब यह है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को तसल्ली देने के लिए यह बतलाया गया है कि आप इन हठधर्मियों को जानने के बावजूद इनके ईमान न लाने की फ़िक्र में ग़म न करें, आप की ज़िम्मेदारी तो सन्देश पहुँचाने की और तब्लीग़ करने की है उस का अज्र तो आप को मिलेगा।

इससे यह भी मालूम हुआ कि किसी के कुफ़्र पर जमे रहने की वजह से दअ़वत व तब्लीग़ न छोड़ देना चाहिए बल्कि दअ़वत देते रहना चाहिए।

● एक प्रश्न इसमें यह भी हो सकता है कि जब अल्लाह ही ने उनके ईमान न लाने की बात फ़रमा दी तो उन पर ईमान न लाने का इल्ज़ाम नहीं होना चाहिए। यह तो ऐसा ही है जैसे कोई डाक्टर किसी ख़तरनाक चीज़ को देखकर उसके मरने की पेशीनगोई कर दे और वह मर जाए, तो क्या उस डाक्टर पर उसका कोई इल्ज़ाम आएगा, या यह कहा जाएगा कि डाक्टर के कहने से वह मर गया, अगर यह न कहता तो न मरता। नहीं, बल्कि यहाँ यह कहा जाएगा कि मरीज़ की हालत ही ऐसी थी कि उसका मरना तय था।

यहाँ भी यही हाल है कि इन लोगों के ईमान न लाने की वजह यह नहीं कि सत्य इन पर स्पष्ट नहीं हुआ, बल्कि इसकी वजह यह है कि सत्य को ठुकराने का जो रवैया इन्होंने अपनाया है, उसके नतीजे में वे कुदरत के क़ानून की चपेट में आ गये और उनमें सत्य को सुनने, समझने और पहचानने की क्षमता ख़त्म हो गई।

हक़ के दाख़िल होने के रास्ते-

इस से यह हक़ीक़त मालूम होती है कि इन्सान के दिल में सत्य (हक़) उसी सूरत में प्रवेश पा सकता है जबकि वह अपना दिल, अपने कान और अपनी आँख खुली रखे।

इन्सान के इल्म (ज्ञान) हासिल करने के तीन ही ज़रिये हैं। एक दिल, दूसरा कान, तीसरा आँख लेकिन जब किसी के यह तीनों ज़रिये ख़त्म हो जाएँ तो उस की हिदायत की क्या उम्मीद हो सकती है। इसी को यहाँ फ़रमाया गया है कि उनके दिलों और कानों पर मुहर लग चुकी है और उनकी आँखों पर पर्दा पड़ चुका है, हक़ को कुबूल होने की तमाम राहें बन्द हो चुकी हैं, इसलिए अब वह ईमान नहीं लाएँगे जिसके नतीजे में बड़े अ़ज़ाब का मज़ा चखेंगे।

क्या अल्लाह ने मुहर लगाई है?

यहाँ एक सवाल यह हो सकता है कि जब अल्लाह तआ़ला ही ने उन के दिलों और कानों पर मुहर लगा दी है और उनकी आँखों पर पर्दा डाल दिया है जिससे उनको हिदायत नसीब नहीं हुई और कुफ़्र पर मर गये तो फिर उन्हें सज़ा क्यों दी जाएगी।

इस का जवाब मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि अल्लाह तआ़ला ज़ालिम नहीं हैं वह किसी को बिना किसी कुसूर के सज़ा नहीं देते। इस जगह ज़िद्दी और सरकश काफ़िरों का अंजाम ज़िक्र किया गया है, जो ख़ुद उन के ही बुरे आ़माल का नतीजा है।

जहाँ तक अल्लाह का तअ़ल्लुक़ है, तो अल्लाह तआ़ला ही ने इन्सान को पैदा किया, देखने सुनने के लिए आँखें और कान दिये, सोचने समझने के लिए दिल व दिमाग़ दिये। इन्सान की अपनी जान में और भी ऐसी निशानियाँ मौजूद हैं कि इन्सान अगर सोचे तो हक़ व बातिल में अन्तर कर सकता है।

अल्लाह तआ़ला ने पैग़म्बर भी भेजे जिन्होंने दिन रात अल्लाह का पैग़ाम सुनाया जिससे हक़ को

पहचानने के बाद उन्होंने इन्कार किया और ज़िद पर अड़े रहे। न आँखों से काम लिया, न कानों से, न अ़क्ल से, जिसका नतीजा यह हुआ कि उनके रग-रग में इन्कार बैठ गया और उन पर गुमराही का अंधेरा छा गया, जिससे वह बाहर नहीं आ सकते, गुमराही की इसी ह़ालत को मुहर या बन्द कहा गया है।

मालूम हुआ कि इन के दिल पर मुहर का लगना इनके हमेशा इन्कार करने की वजह से है। ऐसा नहीं है कि उस मुहर की वजह से उन्हें कुफ़्र पर मजबूर किया गया हो। इसलिए वह जो कुफ़्र पर अपने आप से या अपने इरादे से जमे रहे, उसकी सज़ा उनको आख़िरत में अ़ज़ाब की शक्ल में मिलेगी जिसे ह़दीस में इस तरह बयान किया गया है।

ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, 'बन्दा जब कोई गुनाह कर बैठता है तो उसके दिल में काला नुक़्ता पड़ जाता है अगर वह तौबः करके गुनाह से रुक जाता है तो उसका दिल पहले की तरह साफ़ हो जाता है और अगर वह तौबः के बजाय गुनाह पर गुनाह करता जाता है तो वह काला नुक़्ता फैल कर उसके पूरे दिल पर छा जाता है।' **(तिर्मिज़ी)**

रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया यह वह ज़ंग है जिसे अल्लाह तआ़ला ने सूर-ए-मुतफ़्फ़िफ़ीन आयत नं १४ में फ़रमाया है- كَلَّا بَلْ رَانَ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ مَّا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ

अर्थात "उन के करतूतों की वजह से उनके दिलों पर ज़ंग चढ़ गया है।" **(सूरः मुतफ़्फ़िफ़ीन)**

इसी को क़ुर्आन ने "ख़त्म" (मुहर) लग जाना कहा है।

8 وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّقُوْلُ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَ بِالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَمَا هُمْ بِمُؤْمِنِيْنَ ۘ﴿۸﴾

मुनाफ़िक़ किसे कहते हैं

इस सूरः के पहले रुकूअ़ में दो गिरोहों का ज़िक्र हुआ, एक वह जो ज़ाहिरी और अन्दुरूनी तौर से भी ईमान वाले थे, दूसरे वह जिन्होंने इस्लाम और ह़क़ की दअ़वत को न दिल से माना और न ज़बान से बल्कि उस की खुल कर मुख़ालिफ़त की और इन्कार पर जमे रहे।

अब इस दूसरे रुकूअ़ में एक तीसरे गिरोह का ज़िक्र (उल्लेख) है, उनका हाल और अंजाम बयान किया गया है जिन्होंने केवल दिखलाने के लिए ज़ाहिरी तौर पर इस्लाम क़ुबूल कर लिया मगर अन्दर से काफ़िर ही रहे। इस गिरोह को 'मुनाफ़िक़ीन' कहा जाता है कि ज़ाहिर में ज़बान से आदमी ईमान लाने का इक़रार करता हो, दिखावटी नमाज़ भी पढ़ता हो और दूसरे इस्लामी काम भी करता हो, लेकिन दिल से काफ़िर हो और इस्लाम के ख़िलाफ़ अ़क़ीदा रखता हो, ऐसे इन्सान को शरीअ़त में मुनाफ़िक़ कहा जाता है।

मुनाफ़िक़ों का गिरोह मक्का में न था बल्कि यह मदीना में ह़ज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के आने के बाद पैदा हुआ।

निफ़ाक़ की क़िस्में-

निफ़ाक़ कई तरह का होता है। जिसमें से तीन अहम क़िस्म यह हैं:-

(1) ज़बान से इस्लाम और ईमान को तो ज़ाहिर करे, मगर अन्दर से इन्कार करे।

(2) अन्दर से साफ़ इन्कार तो न हो मगर यक़ीन भी न हो बल्कि शक हो।

(3) यह कि दिल में तस्दीक़ तो हो मगर पूरी तरह न हो, गुनाहों और दुनिया की चाहत ने ऐसा कर दिया हो कि यह दुनिया के फ़ायदे को ईमान पर तर्जीह (प्राथ्मिकता) देता हो, दुनिया हासिल करने के लिए इस्लाम के मानने वालों का मुक़ाबला और उनकी बर्बादी और दीन को बुरा भला कहना उसके लिए कुछ मुश्किल न हो।

यह तीनों "एतिक़ादी निफ़ाक़" हुए जो अल्लाह के नज़्दीक सख़्त काफ़िर हैं और जहन्नम के सबसे नीचे दर्जे में रहेंगे।

"इन्नल् मुनाफ़िक़ीना फ़िद्दरकिल अस्फ़लि मिनन्नार"

ऊपर दिये गये तीनों क़िस्मों के मुनाफ़िक़ मदीना में मौजूद थे। इन आयात में उन्हीं मुनाफ़िक़ों के ईमान की हक़ीक़त बयान की गई है।

जैसा कि अल्लामा 'इब्ने कसीर' ने अपनी तफ़्सीर में लिखा है कि "जब हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) हिजरत करके मदीना आए और यहाँ पर 'औस' और 'खज़रज' के क़बीलों में से अक्सर ने अन्सारे-मदीना बनकर रसूलुल्लाह (सल्ल०) का साथ दिया, लेकिन यहूदी अल्लाह की इस नेअ़मत से महरूम रहे।"

मदीना के यहूदियों से सुलह़-

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने इन मदीना के यहूदियों से और अ़रब के कुछ गिरोहों से सुलह़ कर ली थी। जब जंगे बद्र हुई और उसमें अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को फ़तेह दी तो कुफ़्र का धड़ टूट गया, तब यह गिरोह मुनाफ़िक़ीन का पैदा हो गया। इन का सरदार 'अ़ब्दुल्लाह बिन उबई' था। रसूलुल्लाह (सल्ल०) के मदीना आने से पहले 'औस' और 'ख़ज़रज' ने 'अ़ब्दुल्लाह बिन उबई' को अपना बादशाह बनाने और उस को ताज पहनाने का मश्वरह कर रखा था, लेकिन मदीने वालों का रुख़ अब हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की तरफ़ हो गया। जिस से उसकी सरदारी ख़तरे में पड़ गई। मुसलमान बराबर बढ़ रहे थे जिसकी वजह से हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाना आसान न था।

इसलिए उसने और उस के साथियों ने ज़ाहिरी तौर पर इस्लाम क़ुबूल करके अपने को मुसलमानों में शामिल कर लिया और अन्दर से जड़ काटते रहे, इस इन्तिज़ार में कि जब मौक़ा मिलेगा इस्लाम छोड़ देंगे और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के ख़िलाफ़ उठ खड़े होंगे। यह लोग ऊपर से मुसलमान थे और अन्दर से काफ़िर थे, इस तरह मुनाफ़िक़ों का एक गिरोह मदीना और उसके आस-पास तैयार हो गया, मगर इस में मक्का के मुहाजिर एक भी न था, मदीना के यहूद और क़बीला 'औस व ख़ज़रज' के कुछ लोग इस गिरोह में शामिल थे।

यह लोग मुसलमानों से कहते थे कि हम ईमान वाले हैं, मगर अन्दर से इस्लाम से दुश्मनी की आग

इनके दिलों में भड़क रही थी। इस तरह यह लोग अल्लाह और ईमान वालों को धोखा देते थे और काफ़िरों से एकांत में मिलते तो कहते थे हम तुम्हारे साथ हैं। यह लोग अपने को मुसलमान ज़ाहिर करने के लिए साथ में नमाज़े भी पढ़ते थे मगर दिल से नमाज़ी न थे। इसलिए जमाअ़त की पाबन्दी में सुस्ती करते थे और काहिली के साथ ऊपर के दिल से नमाज़ पढ़ते थे।

जिहाद में भी साथ जाते थे लेकिन कभी तो बीच से ही वापस आ जाते और कभी साथ रहते हुए भी धोखा देते, ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और आपके साथियों को तक्लीफ़ पहुँचाने और दिल दुखाने के बराबर उपाय करते रहते और झूठी क़समें खाकर कहते कि हम मुसलमान हैं मगर इस्लाम के ख़िलाफ़ चालबाज़ी करके रसूलुल्लाह (सल्ल०) को तक्लीफ़ पहुँचाने वाली बातें करते फिर साफ़ इन्कार कर के क़सम खा जाते थे कि हम ने तो ऐसा नहीं कहा।

इन लोगों के हालात 'सूरः बक़रः' के 'दूसरे रुकूअ़' में 'सूरः निसा' के 'इक्कीसवें रुकूअ़' में 'सूरः मुनाफ़िक़ून' और 'सूरः ह़श्र' में तफ़्सील से बयान किये गये हैं और 'सूरः तौबः' में तो इन की पूरी अन्दुरूनी ह़ालत भी बयान की गई है।

सीरत की किताबों में उन लोगों के नाम भी लिखे हैं कि यह कौन-कौन थे और किस क़बीला से थे। 'अलूबिदाया वन्निहाया' के शुरु "अलूमग़ाज़ी" में यहूदी उ़लमा और पादरियों जिन्होंने इस्लाम और हज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की खुलकर मुख़ालिफ़त की उनके नाम, और उन लोगों के नाम जो यहूदियों और 'औस' व 'खज़रज' में से मुनाफ़िक़ थे, ज़िक्र किया है।

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) इन लोगों के साथ नर्मी का बर्ताव करते रहे जिस में ह़िक्मत यह थी कि शायद यह लोग असली मुसलमान हो जाएँ मगर वहीं यह मस्लह़त भी थी कि अगर इनके साथ सख़्ती करेंगे तो अ़रब के दूसरे लोग जो मुसलमान नहीं हुए हैं और इन लोगों के सही ह़ालात उन को मालूम नहीं हैं वह इस्लाम से क़रीब आने के बजाय दूर हो जाएँगे और शैतान उन्हें समझाएगा कि देखो! मुह़म्मद (सल्ल०) का अपने मानने वालों के साथ कैसा बर्ताव है?

यहाँ तक कि वह दिन भी आ गया कि यह लोग ज़िल्लत के साथ मस्जिदे नबवी से निकाल दिये गये।

(विस्तार के लिए देखें, 'सीरत इब्ने हिशाम', भाग 2)

ऊपर की आयत में बताया गया था कि यह जो दावा करते हैं कि अल्लाह पर ईमान लाए और आख़िरत पर ईमान लाए, उस पर फ़रमाया कि इन लोगों का यह दावा सिरे से झूठा है, यह ईमान वाले नहीं हैं, केवल ज़बानी दावे से कोई मुसलमान नहीं होता जब तक दिल से उन चीज़ों की तस्दीक़ न करे जो नबियों ने बताई हैं और जिन पर ईमान लाने का हुक्म दिया गया है, उस वक़्त तक कोई शख़्स ईमान वाला नहीं हो सकता।

इस तरह इस आयत पर ग़ौर करने से ईमान व इस्लाम की पूरी ह़क़ीक़त मालूम हो जाती है कि मुनाफ़िक़ीन न केवल कलिमा पढ़ते थे, बल्कि नमाज़ जमाअ़त के साथ रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पीछे पढ़ते थे और मुसलमानों की तरह दूसरे इस्लामी काम भी करते थे। मगर अल्लाह ने उन के लिए साफ़ शब्दों

में फ़रमाया وَمَا هُمْ بِمُؤْمِنِيْنَ **अर्थात "और वह ईमान वाले नहीं"**

उस के बाद आगे की आयत में इनकी दोरुख़ी चाल का ज़िक्र है।

9 يُخٰدِعُوْنَ اللّٰهَ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ۚ وَمَا يَخْدَعُوْنَ اِلَّآ اَنْفُسَهُمْ وَمَا يَشْعُرُوْنَ

मुनाफ़िक़ों की चालबाज़ी-

"चालबाज़ी करते हैं अल्लाह से और उन लोगों से जो ईमान ला चुके हैं और वह ह़क़ीक़त में किसी के साथ चालबाज़ी नहीं करते, मगर अपने आप से और वह इस का शुऊर या एह़सास भी नहीं रखते"।

मुफ़स्सिरीन (व्याख्याकारों) ने लिखा है कि धोखा और फ़रेब तो उसे दिया जाता है जो इ़ल्म न रखता हो और ह़क़ीक़त न जानता हो, लेकिन अल्लाह तआ़ला तो आ़लिमुल्ग़ैब है छुपी और ज़ाहिरी चीज़ों का जानने वाला है तो अल्लाह तआ़ला को धोखा कैसे दिया जा सकता है।

ज़ाहिर है कि अल्लाह तआ़ला को कोई धोखा नहीं दे सकता, मगर इन मुनाफ़िक़ों का रसूलुल्लाह (सल्ल०) को धोखा देना और मुसलमानों को धोखा देना, एक तरह से अल्लाह के साथ चालबाज़ी और धोखा फ़रमाया गया है; यह लोग अल्लाह के साथ चालबाज़ी करते हैं और यह मुनाफ़िक़ लोग अल्लाह के रसूल के साथ चालबाज़ी और ईमान वालों को धोखा देकर उनसे दुनिया का फ़ायदा ह़ासिल करना चाहते थे क्योंकि ज़ाहिरी तौर पर इस्लाम क़ुबूल कर लेने से, वह ज़ाहिरी हुक्मों में मुसलमानों ही में शामिल किये जाते थे।

इसलिए उनका जान व माल मुसलमानों से मह़फ़ूज़ था और मुसलमानों के ह़ासिल होने वाले माले ग़नीमत में भी बराबर के ह़िस्सेदार रहते, लेकिन अल्लाह तआ़ला ने मुनाफ़िक़ों की चालबाज़ी के सम्बन्ध में बता दिया कि यह मुनाफ़िक़ अपनी दो रंगी पालीसी (नीतियों) और इस दोरुख़ी चाल से कि ज़ाहिर में इस्लाम और मुसलमानों के साथ और अन्दर से कुफ़्र और दुश्मनाने इस्लाम के साथ मुसलमानों को ध ाोखा देकर मज़ा उड़ाते रहेंगे। जिससे मुसलमानों और काफ़िरों को ख़ुश रखेंगे और दोनों तरफ़ से फ़ायदे ह़ासिल करते रहेंगे, लेकिन ह़क़ीक़त यह है कि वह अल्लाह के रसूल और मुसलमानों को धोखा नहीं दे रहे, बल्कि ख़ुद अपनी जानों को धोखा दे रहे हैं, और इन ह़रकतों से अपनी दीन व दुनिया ख़राब कर रहे हैं, मगर उन्हें इस बात का एह़सास तक नहीं कि यह उनकी ख़ुद तबाही और बर्बादी का ज़रिया है। इसलिए उनके धोखा और चाल से ईमान वालों को कोई नुक़्सान नहीं पहुँचता, उल्टा उन्हीं को पहुँचता है।

10 فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ ۙ فَزَادَهُمُ اللّٰهُ مَرَضًا ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۢ بِمَا كَانُوْا يَكْذِبُوْنَ

दिलों का मर्ज़-

"उनके दिलों में बड़ा मर्ज़ था तो अल्लाह ने उनके मर्ज़ को और बढ़ा दिया और उनके लिए दर्दनाक सज़ा है इसलिए कि वे झूठ बोला करते थे"।

यहाँ पर मुनाफ़िक़ों के ग़लत अ़क़ीदों को मर्ज़ और बीमारी कहा गया है और यह शब्द 'मर्ज़' उनके

निफ़ाक़, संदेह, झूठ, इन्कार और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) व ईमान वालों से दुश्मनी, हसद (ईर्ष्या) आदि के लिए बोला गया है।

आगे बतलाया गया है कि यह बीमारी जो उनके दिलों में लगी हुई थी कम होने के बजाय दिन-ब-दिन बढ़ती ही गई। जैसे-जैसे इस्लाम और मुसलमानों को दुश्मनों पर कामियाबी हासिल हुई, वैसे-वैसे उनके दिलों में जलन व हसद की आग भड़कती गई, तो यह बीमारी उन्हीं के बुरे आ़माल और बद्परहेज़ियों का नतीजा थीं।

यह भी फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने उनके मर्ज़ को और बढ़ा दिया, इसका मतलब यह है कि यह लोग इस्लाम और मुसलमानों की तरक़्क़ी से जलते हैं लेकिन इस्लाम और मुसलमान बढ़ते ही रहेंगे। इसलिए इनका मर्ज़ बढ़ता ही रहेगा और अन्त में इसकी वजह से बर्बादी और नाकामी में पड़ेंगे।

आयत नं० 11 से 20 तक

وَاِذَا قِيْلَ لَهُمْ لَا تُفْسِدُوْا فِى الْاَرْضِ ۙ قَالُوْٓا اِنَّمَا نَحْنُ مُصْلِحُوْنَ ۝ اَلَآ اِنَّهُمْ هُمُ الْمُفْسِدُوْنَ وَلٰكِنْ لَّا يَشْعُرُوْنَ ۝ وَاِذَا قِيْلَ لَهُمْ
اٰمِنُوْا كَمَآ اٰمَنَ النَّاسُ قَالُوْٓا اَنُؤْمِنُ كَمَآ اٰمَنَ السُّفَهَآءُ ۭ اَلَآ اِنَّهُمْ هُمُ السُّفَهَآءُ وَلٰكِنْ لَّا يَعْلَمُوْنَ ۝ وَاِذَا لَقُوا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا قَالُوْٓا
اٰمَنَّا ۚ وَاِذَا خَلَوْا اِلٰى شَيٰطِيْنِهِمْ ۙ قَالُوْٓا اِنَّا مَعَكُمْ ۙ اِنَّمَا نَحْنُ مُسْتَهْزِءُوْنَ ۝ اَللّٰهُ يَسْتَهْزِئُ بِهِمْ وَيَمُدُّهُمْ فِىْ طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُوْنَ ۝ اُولٰۗىِٕكَ
الَّذِيْنَ اشْتَرَوُا الضَّلٰلَةَ بِالْهُدٰى ۠ فَمَا رَبِحَتْ تِّجَارَتُهُمْ وَمَا كَانُوْا مُهْتَدِيْنَ ۝ مَثَلُهُمْ كَمَثَلِ الَّذِى اسْتَوْقَدَ نَارًا ۚ فَلَمَّآ اَضَاۗءَتْ
مَا حَوْلَهٗ ذَهَبَ اللّٰهُ بِنُوْرِهِمْ وَتَرَكَهُمْ فِىْ ظُلُمٰتٍ لَّا يُبْصِرُوْنَ ۝ صُمٌّۢ بُكْمٌ عُمْىٌ فَهُمْ لَا يَرْجِعُوْنَ ۝ اَوْ كَصَيِّبٍ مِّنَ السَّمَاۗءِ فِيْهِ ظُلُمٰتٌ
وَّرَعْدٌ وَّبَرْقٌ ۚ يَجْعَلُوْنَ اَصَابِعَهُمْ فِىْٓ اٰذَانِهِمْ مِّنَ الصَّوَاعِقِ حَذَرَ الْمَوْتِ ۭ وَاللّٰهُ مُحِيْطٌۢ بِالْكٰفِرِيْنَ ۝ يَكَادُ الْبَرْقُ يَخْطَفُ اَبْصَارَهُمْ ۭ
كُلَّمَآ اَضَاۗءَ لَهُمْ مَّشَوْا فِيْهِ ڎ وَاِذَآ اَظْلَمَ عَلَيْهِمْ قَامُوْا ۭ وَلَوْ شَاۗءَ اللّٰهُ لَذَهَبَ بِسَمْعِهِمْ وَاَبْصَارِهِمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝

अनुवाद-

(11) और जब उनसे कहा जाता है कि ''ज़मीन (मुल्क) में फ़साद न मचाओ,'' तो कहते हैं, ''हम तो सुधार करने वाले हैं; (12) जान लो, वही लोग फ़साद करने वाले हैं, लेकिन उन्हें एहसास नहीं होता। (13) और जब उनसे कहा जाता है कि जिस तरह और लोग ईमान ले आए तुम भी ईमान ले आओ, तो कहते हैं, ''क्या हम ऐसा ईमान लाएँ जैसे वे मूर्ख लोग ईमान ले आए हैं?'' जान लो! यही मूर्ख हैं, लेकिन जानते नहीं। (14) और ये लोग जब ईमान लाने वालों से मिलते हैं तो कहते हैं, ''हम ईमान ले आए हैं; और जब एकांत में अपने शैतानों (दुष्ट मुखियों) से मिलते हैं तो कहते हैं, हम तुम्हारे साथ हैं, हम तो केवल हंसी मज़ाक़ के लिए ऐसा करते हैं;'' (15) अल्लाह उनका मज़ाक़ उड़ा रहा है, और उन्हें ढ़ील दे रहा है, कि वे इस सरकशी में भटक रहे हैं; (16) यही वे लोग हैं जिन्होंने हिदायत (सत्मार्ग) के बदले गुमराही मोल ली, तो उनकी इस तिजारत ने न कोई लाभ पहुँचाया और न ही वे सीधी राह पा सके; (17) उनकी मिसाल उस व्यक्ति की सी है जिसने आग जलाई, फिर जब उसके आस-पास ख़ूब रोशनी हो गई, तो अल्लाह ने (अचानक) उनकी (आँखों की) रोशनी छीन ली, और उन्हें अंधेरों में छोड़ दिया कि उन्हें कुछ सुझाई नहीं दे रहा है; (18) वे बहरे हैं,गूँगे हैं, अन्धे हैं, कि लौटने वाले नहीं; (19) या (उनकी मिसाल ऐसी है) जैसे आसमान से वर्षा हो रही हो, जिसके साथ अंधेरियाँ हों और गरज और चमक भी हो, वह बिजली की कड़क की वजह से मरने के डर से अपने कानों में उँगलियाँ दे ले रहे हों, और अल्लाह ने तो काफ़िरों (इन्कारियों) को घेर रखा है; (20) क़रीब है कि बिजली उनकी आँखों की रोशनी उचक ले जाए; जब उनके आगे बिजली चमकती है, तो उसमें चलते हैं और जब उन पर अंधेरा छा जाता है तो खड़े रह जाते हैं, और अगर अल्लाह चाहता तो उनकी सुनने और देखने की ताक़तें छीन लेता, बेशक अल्लाह को हर चीज़ पर क़ुदरत (सामर्थ्य) है।

आयत नं० 11 से 20 तक की व्याख्या

11-19

وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ لَا تُفْسِدُوا فِي الْأَرْضِ قَالُوا إِنَّمَا نَحْنُ مُصْلِحُونَ ۝ أَلَا إِنَّهُمْ هُمُ الْمُفْسِدُونَ وَلَٰكِن لَّا يَشْعُرُونَ ۝
وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ آمِنُوا كَمَا آمَنَ النَّاسُ قَالُوا أَنُؤْمِنُ كَمَا آمَنَ السُّفَهَاءُ أَلَا إِنَّهُمْ هُمُ السُّفَهَاءُ وَلَٰكِن لَّا يَعْلَمُونَ ۝
وَإِذَا لَقُوا الَّذِينَ آمَنُوا قَالُوا آمَنَّا وَإِذَا خَلَوْا إِلَىٰ شَيَاطِينِهِمْ قَالُوا إِنَّا مَعَكُمْ إِنَّمَا نَحْنُ مُسْتَهْزِئُونَ ۝ اللَّهُ يَسْتَهْزِئُ بِهِمْ
وَيَمُدُّهُمْ فِي طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُونَ ۝ أُولَٰئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الضَّلَالَةَ بِالْهُدَىٰ فَمَا رَبِحَت تِّجَارَتُهُمْ وَمَا كَانُوا مُهْتَدِينَ ۝
مَثَلُهُمْ كَمَثَلِ الَّذِي اسْتَوْقَدَ نَارًا فَلَمَّا أَضَاءَتْ مَا حَوْلَهُ ذَهَبَ اللَّهُ بِنُورِهِمْ وَتَرَكَهُمْ فِي ظُلُمَاتٍ لَّا يُبْصِرُونَ ۝ صُمٌّ
بُكْمٌ عُمْيٌ فَهُمْ لَا يَرْجِعُونَ ۝ أَوْ كَصَيِّبٍ مِّنَ السَّمَاءِ فِيهِ ظُلُمَاتٌ وَرَعْدٌ وَبَرْقٌ يَجْعَلُونَ أَصَابِعَهُمْ فِي آذَانِهِم مِّنَ الصَّوَاعِقِ
حَذَرَ الْمَوْتِ وَاللَّهُ مُحِيطٌ بِالْكَافِرِينَ ۝

मुनाफ़िक़ों का फ़साद-

इन आयतों में मुनाफ़िक़ों के कुछ हालात बयान किये गये हैं कि जब उन से कहा जाता था कि "ज़मीन में फ़साद न करो" तो वह कहते थे, "हम कहाँ फ़साद करने वाले हैं, हमारा काम तो सुधार करना ही है।" जबकि वह मुसलमानों के राज़ को ज़ाहिर करके काफ़िरों तक पहुँचाते थे, कभी काफ़िरों को मुसलमानों के ख़िलाफ़ उक्साते और मुसलमानों की मुख़ालिफ़त करते, कभी काफ़िरों के एतिराज़ात को मुसलमानों के सामने ज़िक्र करते, जबकि निफ़ाक़ ख़ुद एक फ़साद था, जिस से बढ़कर कोई फ़साद नहीं।

व्याख्याकार 'इब्ने कसीर' ने लिखा है कि उनका कहना था कि हम दोनों लोग, मुसलमानों और काफ़िरों के बीच जोड़ पैदा करने का वास्ता हैं। उन्होंने अपने निफ़ाक़ को सुधार का नाम दिया, उनका दावा झूठा था, दोनों गिरोह में से हर गिरोह उनको अपने गिरोह से अलग समझता था। इस तरह उनके अ़मल से जो फ़साद फैलता उसको वह न समझ रहे थे और न आख़िरत में जो अ़ज़ाब होगा उस को जानते थे। जब उनसे कहा जाता था कि ईमान ले आओ, अर्थात इस्लाम को सच्चे दिल से, क़ुबूल कर लो, तो वह कहते थे-

"जो ईमान लाए हैं, वह तो मूर्ख हैं, हम मूर्खता का काम क्यों करें?"

सहाबा-ए-किराम, ख़ासतौर से अन्सार के दोनों गिरोह 'औस' और 'खज़रज' जिन्होंने इस्लाम क़ुबूल कर लिया था, उनको उन्होंने बेवक़ूफ़ बनाया और अपने समझदार और चालाक होने का दावा किया, अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया, "यह ख़ुद ही बेवक़ूफ़ हैं लेकिन जानते नहीं, जिन्होंने ईमान छोड़कर कुफ़्र अपनाया, इस्लाम को नुक़्सान पहुँचाया, अपनी आख़िरत बर्बाद की और दुनिया में ईमान वाले और काफ़िर दोनों इन्हें मलामत करते रहे।

मुनाफ़िक़ों का ईमान-

मुनाफ़िक़ ईमान वालों से कहते थे कि “हम ईमान ला चुके” और जब अकेले में अपने शैतानों, अर्थात, काफ़िरों के सरदारों के पास जाते, जो खुले हुए काफ़िर थे तो कहते, “बेशक हम तुम्हारे साथ हैं” यह जो हम मुसलमानों से कह देते हैं, कि हम मुसलमान हैं, यह उनका मज़ाक़ उड़ाने के लिए, दिल्लगी के तौर पर उनके सामने उनके गिरोह में होने का इक़रार कर लेते हैं, लेकिन अन्दर से हम तुम्हारे ही साथ हैं।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं, “यह जो ईमान वालों का मज़ाक़ उड़ाते हैं, इस के बदले आख़िरत में बेइज़्ज़त और रुसवा होंगे और उनके मज़ाक़ उड़ाने का अ़ज़ाब उन्हीं पर होगा।”

अल्लाह तआ़ला उनको ढ़ील दे रहा है वह समझ रहे हैं कि हम बहुत फ़ायदे में हैं, जबकि वह नर्क की ओर जा रहे हैं। यहाँ दुनिया में, मुसलमानों की ओर इशारा करते हुए जबानों और कन्खि़यों से उनका मज़ाक़ उड़ाते हैं, मगर आख़िरत में ईमान वाले उन का मज़ाक़ उड़ाएँगे।

दुनिया में मुनाफ़िक़ अपने माल और ज़ायदाद में लगे हुए हैं और समझ रहे हैं कि हम कामियाब हैं, उन का यह समझना ग़लत है।

हिदायत के बदले गुमराही

इस आयत में कहा जा रहा है कि मुनाफ़िक़ों को तिजारत का तरीक़ा भी नहीं मालूम कि हिदायत जैसी अच्छी चीज़ छोड़कर गुमराही जैसी बुरी चीज़ ख़रीद ली। मुनाफ़िक़ अक्सर व्यापारी लोग थे, इसलिए उनको तिजारत की मिसाल देकर समझाया गया कि इन लोगों को तिजारत (बिज़नेस) का भी तरीक़ा न आया कि अच्छी क़ीमती चीज़ अर्थात ईमान देकर रद्दी और ख़राब चीज़ अर्थात कुफ़्र और गुमराही ख़रीद ली। आगे की आयतों में और दो मिसालें बयान की गई हैं।

मुनाफ़िक़ों की दो मिसालें

ह़ज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के ज़माने में मुनाफ़िक़ दो तरह के थे, एक तो वह जो इस्लाम के दुश्मन थे और दिल से इन्कार करते, मगर ज़बान से मुसलमान होने का दावा करते थे। दूसरे वह जो कमज़ोर दिल के थे और इस्लाम के ह़क़ होने में संदेह था, मगर कभी इस्लाम की ख़ूबियाँ देख कर झुक जाते और जब नफ़्सानी ख़्वाहिश और दुनियावी मक़्सद सामने आता तो फिर बदल जाते।

क़ुर्आन की इन आयतों में दोनों तरह के लोगों की मिसाल बयान की गई है। पहले क़िस्म के मुनाफ़िक़ों की मिसाल में बतलाया गया है कि उनकी ह़ालत उस आदमी की तरह है जिसने सख़्त अंधेरी रात में आग जलाई हो और उस आग की रौशनी से आस-पास की तमाम चीज़ें रौशन हो गयी हों फिर वह उस की वजह से उसके आस-पास की चीज़ों के नफ़ा नुक़्सान को समझने लगा हो, मगर अचानक

उसके आँख की रौशनी कोई छीन ले जिस से उसे कुछ दिखाई न दे और वह रौशनी के बावजूद अन्धों की तरह देख-भाल न सके तो जिस तरह यह आदमी रौशनी होने के बाद उस से फ़ायदा नहीं उठाया और अंधेरे में रह गया, उसी तरह मुनाफ़िक़ भी हक़ का नूर फैल जाने के बाद उससे फ़ायदा नहीं उठाया और गुमराही के अन्धेरों में फिर जा फंसे।

इस तरह जिहालत की गुमराही में फंस कर उनकी हालत ऐसी हो गई, कि जैसे बहरे हों, गूँगे हों अन्धे हों, कि उनके कान हक़ बात सुनने के क़ाबिल न हों और ज़बान हक़ बात कहने के क़ाबिल न हो और आँखें हक़ देखने के काम की न हो तो ऐसी हालत में उनके हक़ की ओर पलटने की क्या उम्मीद की जा सकती है।

20 يَكَادُ الْبَرْقُ يَخْطَفُ أَبْصَارَهُمْ ۖ كُلَّمَا أَضَاءَ لَهُم مَّشَوْا فِيهِ وَإِذَا أَظْلَمَ عَلَيْهِمْ قَامُوا ۚ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ لَذَهَبَ
بِسَمْعِهِمْ وَأَبْصَارِهِمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝

'इब्ने जरीर', सुद्दी, कबीर, अबू मालिक, अबू सालेह़, इब्ने अ़ब्बास, मरवह, इब्ने मसऊद और सह़ाबा-ए-किराम (रिज़वानुल्लाहि अ़लैहिम अजमअ़ीन) की एक जमाअ़त ने इस बात को बयान किया है कि मदीना मुनव्वरह के मुनाफ़िक़ीन में से दो आदमी रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास से भाग कर मुश्रिकीन की तरफ़ रवाना हुए, रास्ते में उन्हें उसी बारिश से साबिक़ा पड़ा, जिस का अल्लाह तआ़ला ने क़ुर्आन में ज़िक्र किया है कि इस में बहुत सख़्त गरज, अन्धेरा और चमक थी।

इस तरह़ जब ख़ूब ज़ोर के साथ बादल गरजता तो यह दोनों इस ख़ौफ़ के मारे कि कहीं गरज की आवाज़ से उन के कान फट न जाएँ अपनी उंगलियों को अपने कानों में दे लेते थे, और जब बिजली चमकती तो उस की रोशनी में चलना शुरु कर देते थे और जब बिजली न चमकती तो नज़र कुछ न आता, इसलिए चलते-चलते फिर अपनी जगहों पर वापस पहुँच जाते और दिल ही दिल में कहते अफ़्सोस कि सुबह़ हो जाए तो हम रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्‌मत में ह़ाज़िर होकर अपने हाथ उन के हाथ पर रख देंगे।

सुबह़ हुई और उन्होंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्‌मत में ह़ाज़िर होकर इस्लाम क़ुबूल कर लिया और अपने हाथ आपके हाथ पर रख दिये, और उन का इस्लाम भी अच्छा हो गया।

अल्लाह तआ़ला ने मदीना मुनव्वरह के मुनाफ़िक़ीन में से उन दोनों मुनाफ़िक़ों की ह़ालत बयान फ़रमाई है जो मदीना मुनव्वरह से निकल कर गये थे और वैसे मुनाफ़िक़ीन का तरीक़ा यह था कि जब वह रसूल (सल्ल०) की मजलिस में ह़ाज़िर होते तो वह अपनी उंगलियों को अपने कानों में इस डर की वजह से रख लेते, कि कहीं उन के बारे में क़ुर्आन करीम की कोई आयत नाज़िल न हो जाए या उन की किसी बात का इज़्हार कर दिया जाए, जिस की बिना पर वह क़त्ल कर दिये जाएँ। जैसा कि मदीना मुनव्वरह से निकलने वाले दोनों मुनाफ़िक़ीन का तरीक़ा यह था कि वह अपने कानों में उंगलियाँ रख लेते थे और जब रोशनी होती तो चल पड़ते थे। चुनाँचे जब उन मुनाफ़िक़ीन के अमवाल औलाद में ज़्यादती

हो गई और माल ग़नीमत मिल गया तो दीन की मदद करने लगे और कहने लगे कि अब मुहम्मद (सल्ल०) का दीन सच्चा है और उस पर क़ायम हो गये, जैसा कि दोनों मुनाफ़िक़ीन जब भी बिजली चमकती थी तो उस की रोशनी में चलना शुरु कर देते थे और जब तारीकी होती तो खड़े हो जाते, इसी तरह़ दूसरे मुनाफ़िक़ीन का ह़ाल था कि जब उन के माल व औलाद हलाक व बर्बाद हो गये और मुसीबतों का सामना करना पड़ा तो कहने लगे कि यह सब मुसीबतें रसूलुल्लाह (सल्ल०) के दीन की वजह से हैं।

दूसरी मिसाल–

इन आयतों में मुनाफ़िक़ों की दूसरी मिसाल बयान की गई है। जैसे तेज़ बारिश हो, चारो तरफ़ अन्धेरा हो, बादल की ग़रज, बिजली की चमक और मौत का सामना अर्थात जो लोग वहाँ मौजूद हों कड़क की आवाज़ से डर रहे हों, कि अभी मौत आ जाएगी कड़क की आवाज़ की वजह से कानों में उंगलियाँ डाले हुए हों, सख़्त बिजली उनकी आँखों की रोशनी ख़त्म करने को हो इसी हैरानी और परेशानी में खड़े-खड़े बिजली चमकती हो तो उस की रौशनी में एक दो क़दम चल लेते हों और जब अंधेरा छा जाता हो तो हैरान खड़े रह जाते हों।

ठीक इसी तरह़ मुनाफ़िक़ों की ह़ालत होती है कि जब इस्लाम को बढ़ता हुआ देखते हैं तो उस की ओर बढ़ने लगते हैं। फिर जब दुनिया की मुह़ब्बत ज़ोर पकड़ती है और दुनिया के फ़ायदे इस्लाम को छोड़ने में नज़र आते हैं तो खड़े के खड़े रह जाते हैं अर्थात ईमान की ओर बढ़ने से रुक जाते हैं।

मगर अल्लाह तआला अपने इल्म व क़ुद्रत से सब को घेरे में लिए हुए हैं वह चाहे तो सुनने और देखने की पूरी ताक़त ख़त्म कर दे, बेशक वह हर चीज़ पर क़ुद्रत (सार्मथ्य) रखने वाला है।

"उम्मुल् मोमिनीन ह़ज़रत आ़इशा (रज़ियल्लाहु अ़न्हा) से रिवायत है कि जब आप (सल्ल०) बारिश देखते तो फ़रमाते ऐ अल्लाह! हमें नफ़ा बख़्श बारिश अ़ता फ़रमा।" **(बुख़ारी)**

आयत नं० 21 से 29 तक

يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ اعْبُدُوْا رَبَّكُمُ الَّذِيْ خَلَقَكُمْ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ۝ الَّذِيْ جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ فِرَاشًا وَّالسَّمَآءَ بِنَآءً
وَّاَنْزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً فَاَخْرَجَ بِهٖ مِنَ الثَّمَرٰتِ رِزْقًا لَّكُمْ ۚ فَلَا تَجْعَلُوْا لِلّٰهِ اَنْدَادًا وَّاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝ وَاِنْ كُنْتُمْ فِيْ رَيْبٍ مِّمَّا نَزَّلْنَا عَلٰى
عَبْدِنَا فَاْتُوْا بِسُوْرَةٍ مِّنْ مِّثْلِهٖ ۠ وَادْعُوْا شُهَدَآءَكُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ۝ فَاِنْ لَّمْ تَفْعَلُوْا وَلَنْ تَفْعَلُوْا فَاتَّقُوا النَّارَ
الَّتِيْ وَقُوْدُهَا النَّاسُ وَالْحِجَارَةُ ۚ اُعِدَّتْ لِلْكٰفِرِيْنَ ۝ وَبَشِّرِ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ اَنَّ لَهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ۭ
كُلَّمَا رُزِقُوْا مِنْهَا مِنْ ثَمَرَةٍ رِّزْقًا ۙ قَالُوْا هٰذَا الَّذِيْ رُزِقْنَا مِنْ قَبْلُ ۙ وَاُتُوْا بِهٖ مُتَشَابِهًا ۭ وَلَهُمْ فِيْهَآ اَزْوَاجٌ مُّطَهَّرَةٌ ۤ ۙ وَّهُمْ فِيْهَا
خٰلِدُوْنَ ۝ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَسْتَحْيٖٓ اَنْ يَّضْرِبَ مَثَلًا مَّا بَعُوْضَةً فَمَا فَوْقَهَا ۭ فَاَمَّا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا فَيَعْلَمُوْنَ اَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّهِمْ ۚ وَاَمَّا الَّذِيْنَ كَفَرُوْا
فَيَقُوْلُوْنَ مَاذَآ اَرَادَ اللّٰهُ بِهٰذَا مَثَلًا ۘ يُضِلُّ بِهٖ كَثِيْرًا ۙ وَّيَهْدِيْ بِهٖ كَثِيْرًا ۭ وَمَا يُضِلُّ بِهٖٓ اِلَّا الْفٰسِقِيْنَ ۝ الَّذِيْنَ يَنْقُضُوْنَ عَهْدَ اللّٰهِ
مِنْ بَعْدِ مِيْثَاقِهٖ ۠ وَيَقْطَعُوْنَ مَآ اَمَرَ اللّٰهُ بِهٖٓ اَنْ يُّوْصَلَ وَيُفْسِدُوْنَ فِي الْاَرْضِ ۭ اُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْخٰسِرُوْنَ ۝ كَيْفَ تَكْفُرُوْنَ بِاللّٰهِ وَكُنْتُمْ
اَمْوَاتًا فَاَحْيَاكُمْ ۚ ثُمَّ يُمِيْتُكُمْ ثُمَّ يُحْيِيْكُمْ ثُمَّ اِلَيْهِ تُرْجَعُوْنَ ۝ هُوَ الَّذِيْ خَلَقَ لَكُمْ مَّا فِي الْاَرْضِ جَمِيْعًا ۤ ثُمَّ اسْتَوٰٓى اِلَى السَّمَآءِ فَسَوّٰىهُنَّ
سَبْعَ سَمٰوٰتٍ ۭ وَهُوَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ۝

अनुवाद-

(21) ऐ लोगो! अपने 'रब' की इबादत करो, जिसने तुमको और उन लोगों को जो तुमसे पहले गुज़रे हैं पैदा किया, ताकि तुम परहेज़गार(संयमी) बन जाओ; (22) (वही है) 'जिसने' तुम्हारे लिए ज़मीन को फ़र्श, और आसमान को छत बनाया, और आसमान से पानी बरसा कर उससे तुम्हारे खाने की चीज़ें और फल पैदा किये; तो न बनाओ अल्लाह के बराबर किसी दूसरे को, और 'तुम तो जानते हो।' (23) और जो 'हमने' अपने बन्दे (मुहम्मद) पर (क़ुर्आन) उतारा है; अगर तुमको इसमें शक हो तो इस जैसी तुम एक (ही) सूरः बना कर ले आओ, और अल्लाह के सिवा जो तुम्हारा मददगार हो, उन सब को बुला लाओ, अगर तुम सच्चे हो; (24) फिर अगर तुम ऐसा न कर सको, और तुम हरगिज़ नहीं कर सकते,तो डरो उस आग से जिसका ईंधन इन्सान और पत्थर हैं, जो काफ़िरों (इन्कारियों) के लिए तैयार की गई है। (25) और ख़ुशख़बरी सुना दीजिए उनको जो ईमान लाए और नेक काम करते रहे, उनको ऐसे बाग़ मिलेंगे कि बहती होंगी उनके नीचे नहरें, जब उनको वहाँ का कोई फल खाने को मिलेगा तो कहेंगे, ''यह तो वही है जो हम को इससे पहले मिला था, और उन्हें इससे मिलता जुलता ही (फल) मिलेगा।'' उनके लिए वहाँ पाक-साफ़ पत्नियाँ होंगी,और वे वहाँ हमेशा-हमेश रहेंगे। (26) अल्लाह इस बात से नहीं शर्माता; चाहे किसी मच्छर ही की मिसाल क्यों न हो, या उससे भी घटिया किसी और चीज़ की, फिर जो ईमान ला चुके हैं वे तो जानते हैं कि वह उनके रब की ओर से सत्य है! और जो इन्कार करने वाले हैं तो वे कहते हैं, "इस मिसाल से अल्लाह का इरादा क्या है?'' इससे बहुतों को भटकने देता है और बहुतों को सीधी राह दिखा देता है, और भटकते तो केवल वही हैं, जो नाफ़रमान (अवज्ञाकारी) हैं। (27) जो अल्लाह से अ़हद (प्रतिज्ञा) करने के बाद अपना वचन तोड़ देते हैं, और जिसे अल्लाह ने जोड़े रखने का हुक्म दिया है उसे काट डालते हैं, और ज़मीन पर फ़साद करते हैं,वही लोग नुक़सान उठाने वाले हैं। (28) अल्लाह का इन्कार तुम कैसे कर सकते हो! जबकि तुम निर्जीव

थे तो उसने तुमको जीवित किया, और तुम को वही मौत देता है, फिर तुमको ज़िन्दा करेगा, फिर तुम उसी की ओर लौट कर जाओगे। (29) वह (अल्लाह) जिसने तुम्हारे लिए ज़मीन की तमाम चीज़ों को पैदा किया, फिर आसमान की ओर ध्यान दिया, तो सात आसमान बना दिये और 'वह' तो हर चीज़ की जानकारी रखता है।

आयत नं० 21 से 29 तक की व्याख्या

21-22 يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ اعْبُدُوْا رَبَّكُمُ الَّذِيْ خَلَقَكُمْ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ۝ الَّذِيْ جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ فِرَاشًا وَّالسَّمَاۗءَ بِنَاۗءً ۠ وَّاَنْزَلَ مِنَ السَّمَاۗءِ مَاۗءً فَاَخْرَجَ بِهٖ مِنَ الثَّمَرٰتِ رِزْقًا لَّكُمْ ۚ فَلَا تَجْعَلُوْا لِلّٰهِ اَنْدَادًا وَّاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝

तौहीद और दअ़वत-

शुरु सूरः से पिछली आयत तक तीन गिरोहों का ज़िक्र हुआ ।

(1) मुत्तक़ियों (परहेज़गारों का), काफ़िरों और मुनाफ़िक़ों के गुण, उनका बदला और उनके अन्जाम का ज़िक्र हुआ। अब आगे की आयत में एक इन्सान को परहेज़गार बनाने के लिए जिन चीज़ों की ज़रुरत होती है, उसका ज़िक्र किया जाता है।

अ़िबादत-

अ़िबादत कहते हैं पूरी तरह अल्लाह की फ़रमाँबरदारी करना और उस के हुक्मों को मानना जिसमें नमाज़, रोज़ः, ह़ज, ज़कात आदि अ़िबादत शामिल हैं जिसमें सही अ़क़ीदे, मामलात, राजनीति, समाजी मामले भी दाख़िल हैं अर्थात हर काम अल्लाह के हुक्म के अनुसार करना या न करना यही अ़िबादत है।

अल्लाह तआ़ला ने यह नहीं कहा कि मेरी अ़िबादत करो, बल्कि यह कहा कि अपने रब की अ़िबादत करो अर्थात हर वक़्त और हर ह़ाल में परवरिश करने वाले की अ़िबादत करो।

(1) الَّذِيْ خَلَقَكُمْ इसमें पहली अ़क़्ली दलील 'ख़लक़कुम' में दी गई अर्थात जिसने तुम्हें पैदा किया और नेअ़मतें भी दीं, तो वही अ़िबादत के लायक़ है।

(2) وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ अर्थात तुम्हारे बाप-दादा और दूसरे तमाम इन्सानों का पैदा करने वाला वही है इसीलिए वही अ़िबादत के लायक़ है।

(3) الَّذِيْ جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ فِرَاشًا अर्थात जिसने ज़मीन को तुम्हारे लिए फ़र्श बना दिया कि तुम उस पर चल फिर सकते हो, बैठ सकते हो, लेट सकते हो, घर बना सकते हो, यह ज़मीन न इतनी नर्म है कि ठहर न सको और न इतनी सख़्त है कि उसको खोद न सको, इसलिए उसी की अ़िबादत करनी चाहिए।

(4) وَّالسَّمَاۗءَ بِنَاۗءً अर्थात जिसने तुम्हारे लिए आसमान को छत बनाया, जैसे- दुनिया एक मकान की तरह

है कि आसमान उसकी छत है और ज़मीन उसका फ़र्श है और चाँद, सूरज और सितारे उस घर के चिराग़ हैं।

(5) وَأَنْزَلَ مِنَ السَّمَاءِ مَاءً فَأَخْرَجَ بِهِ مِنَ الثَّمَرَاتِ رِزْقًا لَكُمْ अर्थात पानी के ज़रिये मुर्दा ज़मीन को ज़िन्दा करके उससे तुम्हारे लिए रोज़ी पैदा की इन्सानों के खाने पीने की चीज़ें ज़ैसे- ग़ल्ला, अनाज, सब्ज़ी, तरकारी, फल इन सबका ज़मीन से उगने और पैदा करने के इन्तिज़ाम अल्लाह तआ़ला ही ने किये। इसलिए यह बात साबित हो गयी कि केवल उसी की इ़बादत करनी चाहिए।

अल्लामा इब्ने कसीर ने इन आयतों की व्याख्या में लिखा है कि इमाम मालिक (रह़०) से हारून रशीद ने पूछा कि अल्लाह तआ़ला के बारे में क्या दलील है। आपने फ़रमाया भाषाओं का भिन्न होना आवाज़ों और बोलने का अन्दाज़ अलग-अलग होना, यह सब साबित करता है कि कोई ज़ात ऐसी है जिस का नाम अल्लाह तआ़ला है।

इसलिए आख़िर में अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है,

ऐ इन्सानों! जब तुमने जान लिया कि तुम्हारा और तुम्हारे बाप दादा का, ज़मीन व आसमान का और सारी दुनिया का पालने वाला अल्लाह है तो अ़िबादत का दूसरा ह़क़्दार और कौन साझीदार हो सकता है?

इस तरह इस सूरः में सब से पहले इन्सानों को अल्लाह की इ़बादत करने का हुक्म दिया गया और अल्लाह तआ़ला के साथ किसी को साझीदार न ठहराने को कहा गया जो इस्लाम की सब से पहली तअ़लीम है।

'अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०)' से रिवायत है कि मैंने आप (सल्ल०) से सवाल किया कि अल्लाह के नज़्दीक कौन सा बड़ा गुनाह है तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तू अल्लाह का शरीक ठहराए जबकि उस ने तुझे पैदा किया है।" मैंने पूछा कि फिर कौन सा? आप ने फ़रमाया, "तू अपनी औलाद को इस ख़ौफ़ से क़त्ल करे कि वह तेरे साथ खाएँगे"। मैंने पूछा फिर कौन सा? फ़रमाया "तू अपने पड़ोसी की बीवी से ज़िना करे।" **(बुख़ारी, अल् तफ़्सीर, बाब-3, ह़दीस-4477)**

23 وَإِنْ كُنْتُمْ فِي رَيْبٍ مِمَّا نَزَّلْنَا عَلَىٰ عَبْدِنَا فَأْتُوا بِسُورَةٍ مِنْ مِثْلِهِ وَادْعُوا شُهَدَاءَكُمْ مِنْ دُونِ اللَّهِ إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ۝

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के रसूल होने की दलील

इन आयतों में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के रसूल होने को साबित किया गया है। नुबूवत की सबसे बड़ी दलील मुअ़जिज़ः (चमत्कार) हुआ करता है। इसलिए दूसरे नबियों को अपने-अपने ज़माने के अनुसार मुअ़जिज़े दिये गये जो उनके लिए नुबूवत की दलील बने।

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को बहुत से मुअ़जिज़े दिये गये, लेकिन तमाम मुअ़जिज़े में सबसे बड़ा इ़ल्मी मुअ़जिज़ः क़ुर्आन मजीद है, जो आप (सल्ल०) के नुबूवत की सबसे बड़ी दलील है।

इन आयतों में काफ़िरों और मुश्रिकों के इल्ज़ाम का जवाब दिया गया है, जो वह कहते थे कि मुह़म्मद

(सल्ल०) ने ख़ुद ही थोड़ा-थोड़ा कर के लिख लिया है और लोगों को अल्लाह का कलाम बता कर सुना देते हैं। अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि,

"इस किताब में कोई संदेह नहीं जिसको 'हमने' अपने बन्दे पर नाज़िल किया।"

लेकिन अगर तुम को कोई संदेह हो तो तुम भी इसी तरह की छोटी से छोटी सूरः बना कर ले आओ क्योंकि तुम अहले ज़बान हो और इसी क़ौम, इसी शहर और इसी मुल्क के रहने वाले हो। मुह़म्मद (सल्ल०) तो उम्मी हैं अर्थात पढ़ना लिखना भी नहीं जानते और तुम शेर व शायरी में बढ़-चढ़ कर हो तो कोई एक छोटी सी सूरः बना कर ले आओ।

कुफ़्फ़ार को इस क़िस्म का चैलेंज क़ुर्आन में चार और मक़ामात पर भी किया गया है। जैसे-

(सूरः यूनुस- 14:10, सूरः हूद 11:34, सूरः बनी इस्राईल 17: 88 और सूरः अत्तूर 34: 52 में।

यह एक ऐसा चैलेंज है जिस का जवाब कुफ़्फ़ार से आज तक नहीं बन पड़ा और न ही आइन्दा दे सकते हैं। इस से तीन बातों का सुबूत मिलता है। (1) अल्लाह की ज़ात का सुबूत (2) क़ुर्आन का अल्लाह की ओर से नाज़िल होने का सुबूत (3) आप (सल्ल०) के रसूल होने का सुबूत।

यह एक खुला चैलेंज है जो काफ़िरों और मुश्रिकों को सूरः बनी इस्राईल, सूरः हूद और सूरः यूनुस में दिया गया है। यह तीनों एलान हिजरत से पहले मक्का में किये गये, इसलिए कि यह तीनों सूरतें मक्की हैं।

क़ुर्आन जैसा कलाम-

इतिहास गवाह है कि पूरे अ़रब ने इस कलाम को बेमिसाल मानने को तस्लीम किया। आज लगभग चौदह सौ वर्ष बीत चुके हैं, लेकिन कोई व्यक्ति क़ुर्आन जैसा कलाम न ला सका। शाम, दमिश्क, मिस्र, फ़िलिस्तीन आदि में लाखों यहूदी मौजूद हैं जिनकी मातृ भाषा अ़रबी है और जो अख़बार और मैंग़ज़ीन निकालते हैं, लेकिन आज तक क़ुर्आन की एक सूरः जैसी कोई सूरः भी नहीं बना सके।

इसी आयत में दूसरी ग़ैब की यह ख़बर दे दी गई कि क़ियामत तक कोई व्यक्ति उस जैसा कलाम नहीं ला सकता, तो जब यह बात साबित हो गयी कि क़ुर्आन अल्लाह का कलाम है और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) जिन पर यह उतारा गया अल्लाह के सच्चे पैग़म्बर हैं, तो ऐ इन्कार करने वालों! अगर अब भी तुम इन्कार ही पर अड़े रहे तो तुम्हारा ठिकाना जहन्नम की आग होगी जिस का ईधन अल्लाह के नाफ़रमान बन्दे और पत्थर होंगे और वह तुम जैसे इन्कारियों के लिए तैयार की गई है।

24 فَإِنْ لَّمْ تَفْعَلُوْا وَلَنْ تَفْعَلُوْا فَاتَّقُوا النَّارَ الَّتِيْ وَقُوْدُهَا النَّاسُ وَالْحِجَارَةُ ۖ أُعِدَّتْ لِلْكٰفِرِيْنَ ۝

इस जगह पत्थर से मुराद आम पत्थर हो सकता है या गन्धक के पत्थर जिन की वजह से आग में तेज़ी आती है या वह बुत मुराद हो सकते हैं जिन को काफ़िर पूजते थे, ताकि मुश्रिक अपने देवताओं की बेबसी देखकर अफ़्सोस करें फिर फ़रमाया गया, यह काफ़िरों के लिए तैयार की गई है। इससे मालूम हुआ कि जहन्नम ह़क़ीक़त में काफ़िरों (इन्कारियों) के लिए ही तैयार की गई है और ईमान वाले को अगर

किसी गुनाह की वजह से रखा भी जाएगा तो थोड़े दिन की सज़ा के बाद निकाल लिया जाएगा।

25 وَبَشِّرِ الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ أَنَّ لَهُمْ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِن تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ ۖ كُلَّمَا رُزِقُوا مِنْهَا مِن ثَمَرَةٍ رِّزْقًا ۙ قَالُوا
هَٰذَا الَّذِي رُزِقْنَا مِن قَبْلُ ۖ وَأُتُوا بِهِ مُتَشَابِهًا ۖ وَلَهُمْ فِيهَا أَزْوَاجٌ مُّطَهَّرَةٌ ۖ وَهُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝

ईमान वालों को जन्नत की ख़ुशख़बरी

अब इन आयतों में ईमान वालों को ख़ुशख़बरी दी जाती है कि जो इस क़ुर्आन पर ईमान रखते हैं, उसको अल्लाह तआ़ला का कलाम समझते हैं और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को जिन पर यह कलाम नाज़िल हुआ अल्लाह का सच्चा रसूल मानते हैं, क़ुर्आन के अनुसार आख़िरत पर यक़ीन रखते हुए दुनिया में क़ुर्आन के अनुसार ज़िन्दग़ी गुज़ारते हैं, नेक अ़मल करते हैं ऐसे लोगों को आख़िरत में जन्नत के बाग़ात मिलेंगे, जहाँ तरह-तरह की नेअ़मतें होंगी।

जन्नत-

जन्नत का अर्थ होता है 'बाग़' लेकिन पारिभाषिक तौर से शरीअ़त में उस जगह का नाम है, जिसे ईमान वालों को रहने के लिए आख़िरत में दिया जाएगा, जो हमेशा के लिए होगा।

जन्नत वालों को जब जन्नत के फल एक बार देने के बाद दूसरी बार दिया जाएगा तो वह उन फलों की ज़ाहिरी शक्ल पहले दिये गये फलों के जैसी होने की वजह से कहेंगे कि यह फल तो वही हैं जो हमको पहले दिए गए थे, लेकिन जब वह उनको खाएँगे तो मालूम होगा कि उनका स्वाद पहले फलों से अलग है, अर्थात जन्नत में जो फल जन्नतियों को दिये जाएँगे वह ज़ाहिरी शक्ल में पहले दिये गये फलों से मिलता जुलता होगा, मगर स्वाद हर एक का अलग होगा। कुछ मुफ़स्सिरीन ने कहा है कि फलों जैसा होने का मतलब यह है कि जन्नत के फल देखने में दुनिया के फलों की तरह होंगे और जब जन्नत वालों को जन्नत में फल मिलेंगे तो वह कहेंगे कि यह तो वही फल हैं जो दुनिया में हमें मिला करते थे।

जन्नत वालों को अच्छे मकान, मेवे, फल आदि ही केवल नहीं बल्कि जन्नत में सुकून व राह़त के लिए पाक साफ़ बीवियाँ होंगी जो हर तरह की ज़ाहिरी और अन्दुरूनी गन्दग़ियों से पाक होंगी। ज़ाहिरी गन्दग़ियाँ जैसे- मैल-कुचैल, पाख़ाना, पेशाब, हैज़ व निफ़ास आदि, अन्दुरूनी गन्दग़ियाँ जैसे- बुरा व्यवहार बुरी आ़दतें आदि, फिर यह तमाम नेअ़मतें हमेशा के लिए दी जाएँगी।

"ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि अल्लाह ने फ़रमाया मैंने अपने नेकबन्दों के लिए ऐसी चीज़ें बनायी हैं जिसे न किसी आँख ने देखा न किसी कान ने सुना और न किसी इन्सान के दिल में उनका गुमान गुज़रा।" **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

जन्नती का ह़ाल-

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जन्नत में दाख़िल होने वाले पहले गिरोह की सूरतें चौदहवीं के

बयान करना हो तो वहाँ उस की मिसाल घटिया चीज़ से ही देना बेहतर होता है, ताकि उस का घटिया होना मालूम हो जाए। मिसाल के लिए जरूरी होता है कि मिसाल समझने वाले के अनुसार हो। इसलिए काफ़िरों का एतिराज़ कम अ़क़्ली की दलील है।

आगे की आयतों में बताया गया है कि इस तरह के सवालात उन्हीं लोगों के दिलों में पैदा होते हैं, जिन के दिल व दिमाग़ में कुफ़्र की वजह से सोचने और समझने की ताक़त ख़त्म हो गई हो। ईमान वालों के दिलों में ऐसे सवालात नहीं पैदा होते। ईमान वाले तो अल्लाह के मअ़बूद होने और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के सच्चा होने पर और क़ुर्आन मजीद के अल्लाह का कलाम होने पर, पूरा-पूरा यक़ीन रखते हैं, मगर इन्कार वही करते हैं जो अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान नहीं रखते, जिनके दिलों में ह़क़ खोजने की फ़िक्र नहीं होती वह केवल इसी टोह में लगे रहते हैं कि अल्लाह के कलाम में किसी न किसी तरह कोई ऐब ढूंढे।

पूछते हैं कि इस मिसाल का क्या मतलब है इस पर आगे की आयत में फ़रमाया गया है कि यह इस मिसाल से कुछ लोगों को गुमराह करते हैं, मगर बहुत से लोगों को हिदायत मिल जाती है।

फिर आगे की आयत में फ़रमाया गया, कि अल्लाह तआ़ला किसी को गुमराह नहीं करते। यह मिसाल केवल फ़ासिक़ लोगों के लिए अर्थात हुक्म न मानने वालों के लिए है। अब आगे फ़ासिक़ लोगों की व्याख्या की जाती है कि फ़ासिक़ उसे कहते हैं जो अल्लाह से किये हुए मुआ़हिदे को तोड़े।

27 الَّذِينَ يَنْقُضُونَ عَهْدَ اللَّهِ مِنْ بَعْدِ مِيثَاقِهِ وَيَقْطَعُونَ مَا أَمَرَ اللَّهُ بِهِ أَنْ يُوصَلَ وَيُفْسِدُونَ
فِي الْأَرْضِ ۚ أُولَٰئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ

अल्लाह से किया हुआ वादा-

मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि इस आयत में अल्लाह को मानने का मतलब यह है कि अल्लाह को रब मानें और उसकी फ़रमाँबरदारी का इक़रार करे जिस का ज़िक्र सूरः अअ़राफ़ में आयत नं० 122 में फ़रमाया गया है कि जब आ़लमे अरवाह में अल्लाह तआ़ला ने तमाम इन्सानों को आदम (अ़लै०) की पीठ से निकाल कर उनको समझने और बोलने की ताक़त अ़ता फ़रमाई तो तौह़ीद (अद्वैतवाद) का इक़रार करवाया तो सबने अल्लाह तआ़ला के सवाल "अलस्तु बिरब्बिकुम" क्या मैं तुम्हारा रब और पालनहार नहीं हूँ, तो उस के जवाब में "बला" (क्यों नहीं) कहा था।

'ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास' और 'ह़ज़रत उबई बिन कअ़ब' से रिवायत है कि यहाँ आयत में 'अहदल्लाहि' से इसी दिन का इक़रार मुराद है जो इन्सान और अल्लाह के दर्मियान हो चुका था, इसलिए चाहिए था कि इन्सान उसको रब मानने से इन्कार न करता और अपने रब की फ़रमाँबरदारी करता। लेकिन काफ़िरों और मुश्रिकों ने इस मुआ़हिदे को तोड़ डाला और अल्लाह के साथ दूसरे मअ़बूद बना लिए।

फ़ासिक़ों का अ़मल-

दूसरी बात फ़ासिक़ों की यह बयान फ़रमाई कि वह तोड़ते हैं उन तअ़ल्लुक़ात को जिनको अल्लाह

ने जोड़ने का हुक्म दिया है। जैसे- बन्दे और अल्लाह के दर्मियान जिसमें बन्दों के आपसी हुक़ूक़ भी आ गये और इन्हीं हुक़ूक़ के पूरा करने का नाम दीने इस्लाम है और इसको तोड़ना फ़िस्क़ है।

तीसरी निशानी फ़ासिक़ों की यह बताई, कि वह ज़मीन में फ़साद फैलाते हैं। जैसे- किसी पर ज़ुल्म करना, किसी का हक़ मारना आदि। अन्दरूनी फ़साद, जैसे- कुफ़्र करना, हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से हसद रखना। मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि जो बात या अमल या हरकत अल्लाह की रज़ामन्दी और उसके हुक्म के ख़िलाफ़ हो, वह सब फ़ितना फ़साद है। यही वह लोग हैं जो नुक़सान उठाने वाले हैं।

मुनाफ़िक़ की पहचान-

हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मुनाफ़िक़ की तीन निशानियाँ हैं जब बोलता है तो झूठ बोलता है, जब अमानत रखी जाती है तो ख़यानत करता है, जब वादा करता है तो वादा ख़िलाफ़ी करता है। **(बुख़ारी)**

रिश्तेदारों के साथ बद्सुलूकी-

नबी करीम (सल्ल०) का फ़रमान है, "क़तअ़ रहमी करने वाला जन्नत में नहीं जाएगा।"

(सहीह़ बुख़ारी, अलू अदब, बाब 11, ह़दीस 5984)

28 كَيْفَ تَكْفُرُونَ بِاللَّهِ وَكُنتُمْ أَمْوَاتًا فَأَحْيَاكُمْ ۖ ثُمَّ يُمِيتُكُمْ ثُمَّ يُحْيِيكُمْ ثُمَّ إِلَيْهِ تُرْجَعُونَ

इस आयत में कहा जा रहा है कि तुम अपने पैदा करने वाले मालिक का कैसे इन्कार करते हो जब कि उसी ने तुम को पैदा किया, तुम नुत्फ़े (वीर्य) की हालत में बेजान थे तो अल्लाह तआ़ला ने तुम को ज़िन्दगी दी, तुम्हारा जिस्म बनाया और उसमें रुह़ फूँकी और बात इतनी ही नहीं कि मुर्दा थे उसके बाद उसने ज़िन्दगी दी, बल्कि उसके बाद यह भी है कि जब तुम्हारा निश्चित वक़्त पूरा हो जाएगा तो फिर उसके बाद ज़िन्दगी देगा इस ज़िन्दगी के बाद उसी की ओर लौटा दिये जाओगे। उस वक़्त इस दुनिया में किये हुए अ़मल का ह़िसाब होगा।

दुनिया में अल्लाह तआ़ला ने चार अहम चीज़ें पैदा की हैं आग, हवा, पानी और मिट्टी, इन्हीं से खाने-पीने की चीज़ें बनती हैं। जब इन्सान यह चीज़ें खाता है तो उसके जिस्म में ख़ून बनता है फिर उस ख़ून से मनी बनती है, फिर वह मनी माँ के रहम में जाती है, फिर वह बेजान नुत्फ़ा होती है, फिर जमा हुआ ख़ून, फिर गोश्त की बोटी, फिर उसमें हड्डियाँ, फिर उसके अंग, फिर उसमें जान डाली जाती है। फिर वह एक जानदार बनकर माँ के पेट से बाहर आता है।

यह है इसकी पहली पैदाइश कि एक बेजान नुत्फ़ा से अल्लाह ने इसको जानदार बनाया, और इसकी एक निश्चित उम्र तय की, फिर उस निश्चित उम्र के बाद मौत देता है। फिर एक जमाने के बाद क़ियामत में वह तमाम इन्सानों को दोबारा ज़िन्दा करेगा।

29 هُوَ الَّذِي خَلَقَ لَكُم مَّا فِي الْأَرْضِ جَمِيعًا ثُمَّ اسْتَوَىٰ إِلَى السَّمَاءِ فَسَوَّاهُنَّ سَبْعَ سَمَاوَاتٍ ۚ وَهُوَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ

ज़मीन व आसमान की पैदाइश-

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है कि उसने आसमान और ज़मीन को पैदा किया और ज़मीन में जो कुछ है सब तुम्हारे लिए है, जिनसे शरीअ़त के अनुसार फ़ायदा उठा सकते हो। केवल ज़मीन ही इन्सानों के लिए बहुत बड़ी नेअ़मत है, जबकि इन्सान उसके अन्दर की तमाम चीज़ों से फ़ायदा भी उठाता है जिनकी गिनती नहीं गिनी जा सकती।

ऊपर की आयतों से मालूम हुआ कि सबसे पहले ज़मीन बनाई गई और उसके बाद उसके ऊपर पहाड़ रखे गये, फिर सात आसमान बना दिये जो बनाने से पहले धुएँ की सूरत में थे उसके बाद ज़मीन को मौजूदा शक्ल में फैला दिया गया अर्थात आसमान जो धुएँ की शक्ल में था जिसका ज़िक्र सूरः हामीम सज्दः में है कि उसके बाद सात आसमान बना दिये और ख़ूब अच्छी तरह बनाये, उसमें न फटन (दरार) है, न किसी तरह की कोई कमी है, सातों आसमान जो तह-ब-तह बने हुए हैं उनमें किसी तरह की कोई कमी नहीं। इतने बड़े आसमान और इतनी बड़ी ज़मीन और उसमें जो अब है या आइन्दा होगा या पहले था, उन सब का इ़ल्म अल्लाह ही को है। इसलिए अल्लाह हर इन्सान के अ़क़ीदे और अ़मल के अनुसार बदला देगा।

आयत नं० 30 से 39 तक

وَاِذْ قَالَ رَبُّكَ لِلْمَلٰٓئِكَةِ اِنِّیْ جَاعِلٌ فِی الْاَرْضِ خَلِیْفَةً ؕ قَالُوْٓا اَتَجْعَلُ فِیْهَا مَنْ یُّفْسِدُ فِیْهَا وَ یَسْفِكُ الدِّمَآءَ ۚ وَنَحْنُ نُسَبِّحُ بِحَمْدِكَ وَنُقَدِّسُ
لَكَ ؕ قَالَ اِنِّیْٓ اَعْلَمُ مَا لَا تَعْلَمُوْنَ ۝ وَعَلَّمَ اٰدَمَ الْاَسْمَآءَ كُلَّهَا ثُمَّ عَرَضَهُمْ عَلَى الْمَلٰٓئِكَةِ ۙ فَقَالَ اَنْۢبِـُٔوْنِیْ بِاَسْمَآءِ هٰٓؤُلَآءِ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِیْنَ ۝
قَالُوْا سُبْحٰنَكَ لَا عِلْمَ لَنَآ اِلَّا مَا عَلَّمْتَنَا ؕ اِنَّكَ اَنْتَ الْعَلِیْمُ الْحَكِیْمُ ۝ قَالَ یٰٓاٰدَمُ اَنْۢبِئْهُمْ بِاَسْمَآئِهِمْ ۚ فَلَمَّآ اَنْۢبَاَهُمْ بِاَسْمَآئِهِمْ ۙ قَالَ اَلَمْ اَقُلْ لَّكُمْ اِنِّیْٓ
اَعْلَمُ غَیْبَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۙ وَاَعْلَمُ مَا تُبْدُوْنَ وَمَا كُنْتُمْ تَكْتُمُوْنَ ۝ وَاِذْ قُلْنَا لِلْمَلٰٓئِكَةِ اسْجُدُوْا لِاٰدَمَ فَسَجَدُوْٓا اِلَّآ اِبْلِیْسَ ؕ اَبٰى وَاسْتَكْبَرَ ۫
وَكَانَ مِنَ الْكٰفِرِیْنَ ۝ وَقُلْنَا یٰٓاٰدَمُ اسْكُنْ اَنْتَ وَزَوْجُكَ الْجَنَّةَ وَكُلَا مِنْهَا رَغَدًا حَیْثُ شِئْتُمَا ۪ وَلَا تَقْرَبَا هٰذِهِ الشَّجَرَةَ فَتَكُوْنَا مِنَ الظّٰلِمِیْنَ ۝
فَاَزَلَّهُمَا الشَّیْطٰنُ عَنْهَا فَاَخْرَجَهُمَا مِمَّا كَانَا فِیْهِ ۪ وَقُلْنَا اهْبِطُوْا بَعْضُكُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ ۚ وَلَكُمْ فِی الْاَرْضِ مُسْتَقَرٌّ وَّمَتَاعٌ اِلٰى حِیْنٍ ۝ فَتَلَقّٰٓى اٰدَمُ
مِنْ رَّبِّهٖ كَلِمٰتٍ فَتَابَ عَلَیْهِ ؕ اِنَّهٗ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِیْمُ ۝ قُلْنَا اهْبِطُوْا مِنْهَا جَمِیْعًا ۚ فَاِمَّا یَاْتِیَنَّكُمْ مِّنِّیْ هُدًى فَمَنْ تَبِعَ هُدَایَ فَلَا خَوْفٌ
عَلَیْهِمْ وَلَا هُمْ یَحْزَنُوْنَ ۝ وَالَّذِیْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا بِاٰیٰتِنَآ اُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ النَّارِ ۚ هُمْ فِیْهَا خٰلِدُوْنَ ۝

अनुवाद-

(30) और जब तुम्हारे रब ने फ़रिश्तों से कहा, ''मैं ज़मीन में अपना नायब (प्रतिनिधि) बनाने वाला हूँ।'' (तो फ़रिश्ते) बोले, ''क्या! आप ज़मीन में ऐसे व्यक्ति को (नायब) बनाएँगे, जो फ़साद करें, और खून ख़राबा करें, और हम तो आपका ज़िक्र और पवित्रता बयान करते ही रहते हैं।'' (रब ने) कहा, ''बेशक जो मैं जानता हूँ, तुम नहीं जानते।'' (31) और (अल्लाह ने) आदम को तमाम नाम सिखाए, फिर उन्हें फ़रिश्तों के सामने पेश किया और कहा, ''अगर सच्चे हो! तो मुझे इन चीज़ों के नाम बताओ।'' (32) उन सबने कहा, (ऐ अल्लाह!) ''तू पाक है, 'तूने' जो कुछ हमें बताया उसके सिवा हमें कोई इल्म नहीं, बेशक तू इल्म वाला, हिकमत वाला है ।'' (33) (तब अल्लाह ने) हुक्म दिया,''ऐ आदम! इन (फ़रिश्तों) को उनके नाम बता दो, जब उन्होंने उनको उनकेनाम बता दिये तो फ़रमाया, ''क्या मैंने तुम से (पहले ही) नहीं कहा था, कि ज़मीन और आसमानों की छिपी बातों को मैं ही जानता हूँ, और मैं जानता हूँ, जो कुछ तुम ज़ाहिर करते हो और जो कुछ छिपाते हो।'' (34) और जब 'हमने' फ़रिश्तों से कहा, ''आदम को सज्दः करो,'' तो इब्लीस (शैतान) के सिवा सब ने सज्दः किया, उसने इन्कार किया और घमंड में आ गया और वह काफ़िर (अवज्ञाकारी) हो गया। (35) और 'हमने' कहा, ''ऐ आदम! तुम और तुम्हारी पत्नी जन्नत में रहो, और जहाँ से चाहो तुम दोनों जी भर के खाओ और इस पेड़ के पास मत फटकना! अन्यथा ज़ालिमों में हो जाओगे।'' (36) फिर शैतान ने उन्हें वहाँ से फिसला दिया, फिर उन दोनों को वहाँ से निकलवा दिया जहाँ वे थे, और 'हमने' हुक्म दिया कि, तुम सब उतरो यहाँ से, तुम एक-दूसरे के दुश्मन रहोगे और ज़मीन में तुम्हारे लिए एक वक़्त तक ठिकाना और (जीवन काटने का) सामान है।'' (37) फिर आदम ने अपने 'रब' से कुछ शब्द प्राप्त किये, तो (अल्लाह ने) उनकी तौबः क़ुबूल कर ली, बेशक वही तौबः क़ुबूल करने वाला,रहम वाला है। (38) 'हमने' कहा, ''तुम सब यहाँ से उतर जाओ, फिर अगर मेरी ओर से तुम लोगों के पास कोई हिदायत (पथ-प्रदर्शन) पहुँचे तो जिन्होंने मेरी हिदायत की पैरवी की उन को न तो डर होगा और न वे दुःखी होंगे,'' (39) और जिन्होंने इन्कार किया, और हमारी आयतों को झुठलाया, वही दोज़ख़ी हैं, वे हमेशा उसी में रहेंगे।''

आयत नं० 30 से 39 तक की व्याख्या

30 وَإِذْ قَالَ رَبُّكَ لِلْمَلٰٓئِكَةِ إِنِّي جَاعِلٌ فِي الْأَرْضِ خَلِيفَةً ۖ قَالُوٓا أَتَجْعَلُ فِيهَا مَن يُفْسِدُ فِيهَا وَيَسْفِكُ الدِّمَآءَ
وَنَحْنُ نُسَبِّحُ بِحَمْدِكَ وَنُقَدِّسُ لَكَ ۖ قَالَ إِنِّيٓ أَعْلَمُ مَا لَا تَعْلَمُونَ ۝

ह़ज़रत आदम (अ़लै०) की पैदाइश

क़ुर्आन मजीद में ह़ज़रत आदम (अ़लै०) का नाम कई सूरतों में पच्चीस जगह आया है और नबियों के ज़िक्र में पहला नाम ह़ज़रत आदम (अ़लै०) का है। जिन का ज़िक्र क़ुर्आन मजीद की कई सूरतों में किया गया है जैसे-

1- सूरः बकरः 2- सूरः अअ़राफ़ 3- सूरः बनी इस्राईल 4- सूरः कहफ़ 5- सूरः ताहा 6-सूरः हिज्र 7- सूरः साद् 8- सूरः आले इमरान 9- सूरः माइदः 10- सूरः मरयम 11- सूरः यासीन

ऊपर की आयतों में ह़ज़रत आदम (अ़लै०) का ज़िक्र मौजूद है। संक्षेप में ह़ज़रत आदम (अ़लै०) का ज़िक्र इस तरह है कि अल्लाह तआ़ला ने जब ह़ज़रत आदम (अ़लै०) को पैदा करना चाहा तो फ़रिश्तों को हुक्म दिया कि मैं ज़मीन पर अपना ख़लीफ़ा बनाना चाहता हूँ फ़रिश्तों ने यह सुना तो अ़र्ज़ किया कि अगर पैदाइश की ह़िक्मत यह है कि वह दिन-रात मेरी तस्बीह़ करें तो इसके लिए हम तैयार हैं और इन्सान तो अच्छे और बुरे अर्थात ख़ून बहाने वाले भी होंगे तो आदम को बनाने में क्या ह़िक्मत है? यह फ़रिश्तों ने मालूम करना चाहा।

अल्लाह तआ़ला ने फ़रिश्तों को पहली बार तो जवाब यह दिया कि आदम को पैदा करने और ज़मीन में ख़िलाफ़त की ह़क़ीक़त और उसकी ज़रूरत से तुम वाक़िफ़ (परिचित) नहीं हो, इसका इ़ल्म तो पूरी तरह से मुझे ही है।

दूसरे जवाब में जब ह़ज़रत आदम (अ़लै०) ने तमाम चीज़ों के नाम बता दिये तो यह एह़सास दिलाया कि फ़रिश्तों को ह़ज़रत आदम (अ़लै०) की अहमियत और अपनी कमज़ोरी का पता चल जाए।

31-33 وَعَلَّمَ آدَمَ الْأَسْمَآءَ كُلَّهَا ثُمَّ عَرَضَهُمْ عَلَى الْمَلٰٓئِكَةِ فَقَالَ أَنۢبِـُٔونِي بِأَسْمَآءِ هٰٓؤُلَآءِ إِن كُنتُمْ صٰدِقِينَ ۝ قَالُوا
سُبْحٰنَكَ لَا عِلْمَ لَنَآ إِلَّا مَا عَلَّمْتَنَآ ۖ إِنَّكَ أَنتَ الْعَلِيمُ الْحَكِيمُ ۝ قَالَ يٰٓـَٔادَمُ أَنۢبِئْهُم بِأَسْمَآئِهِمْ ۖ فَلَمَّآ أَنۢبَأَهُم بِأَسْمَآئِهِمْ
قَالَ أَلَمْ أَقُل لَّكُمْ إِنِّيٓ أَعْلَمُ غَيْبَ السَّمٰوٰتِ وَالْأَرْضِ وَأَعْلَمُ مَا تُبْدُونَ وَمَا كُنتُمْ تَكْتُمُونَ ۝

ह़ज़रत आदम (अ़लै०) को अल्लाह तआ़ला ने पैदा फ़रमा कर उनको बहुत सी चीज़ों का इ़ल्म (ज्ञान) दे दिया अर्थात ज़मीन की चीज़ों के नाम और उनकी ख़ुसूसियात (विशेषताओं) का इ़ल्म दे दिया और फ़रिश्तों के सामने वह चीज़ें पेश कर के फ़रमाया कि तुम इन चीज़ों के बारे में क्या जानते हो? वह नाम नहीं बता सके और उन्होंने अपनी कमज़ोरी का एतिराफ़ किया। उस पर अल्लाह ने ह़ज़रत आदम (अ़लै०) से कहा कि फ़रिश्तों को उनके नाम बताओ, तो ह़ज़रत आदम (अ़लै०) ने तमाम नाम बतला

दिये। इस तरह ह़ज़रत आदम (अ़लै०) की फ़ज़ीलत साबित हो गई और उन्हें मुअ़ल्लिम (शिक्षक) का दर्जा दिया गया और फ़रिश्तों को तालिबे इ़ल्म (विद्यार्थी) का। इस से एक बात यह मालूम हुई कि फ़रिश्तों को भी इ़ल्म ग़ैब नहीं और दूसरी बात यह भी मालूम हुई कि आ़लिम का दर्जा इ़बादतगुज़ार से ज़्यादा है। जब अल्लाह ने फ़ज़ीलत साबित करना चाहा तो इ़ल्म में ज़्यादती कर दी। जिससे फ़रिश्तों ने अपनी कम इ़ल्मी का इक़रार कर लिया। कुछ बड़े फ़रिश्तों के नाम जो ह़दीस में आये हैं वह इस तरह़ हैं।

(1) ह़ज़रत जिब्रईल (अ़लै०) (यह नबियों पर वह़्य लाते थे।)
(2) ह़ज़रत मीकाईल (अ़लै०) (यह मख़्लूक़ को रिज़्क़ पहुँचाते हैं।)
(3) ह़ज़रत इज़्राईल (अ़लै०) (यह रूहों को क़ब्ज़ करते हैं।)
(4) इस्राफ़ील (अ़लै०) (यह क़ियामत में सूर फूँकेंगे।)

इस तरह जब ह़ज़रत आदम (अ़लै०) की फ़ज़ीलत फ़रिश्तों पर ज़ाहिर हो गई और यह मालूम हो चुका कि जिस ख़िलाफ़त के लिए, इ़ल्म की जरूरत है वह ह़ज़रत आदम (अ़लै०) में मौजूद है तो अल्लाह तआ़ला ने ह़ज़रत आदम (अ़लै०) को फ़रिश्तों से तअ़ज़ीम (सम्मान) कराने का इरादा किया ताकि ह़ज़रत आदम (अ़लै०) की फ़ज़ीलत मालूम हो जाए जिस का ज़िक्र आगे की आयतों में मौजूद है।

34 وإذ قلنا للملئكة اسجدوا لادم فسجدوا الا ابليس ابى واستكبر وكان من الكفرين

फ़रिश्तों का आदम (अ़लै०) के लिए सज्दः

जब ह़ज़रत आदम (अ़लै०) की फ़ज़ीलत मालूम हो गई तो अल्लाह तआ़ला ने फ़रिश्तों को हुक्म दिया कि उन को सज्दः करें हुक्म तो पहले से दिया जा चुका था जैसा कि सूरः ह़िज्र और सूरः साद में है (कि जब मैं उसको बता दूँ और उस में अपनी रुह फूंक दूँ तो तुम उस के लिए सज्दः में गिर पड़ना)

लेकिन जब ह़ज़रत आदम का अफ़्ज़ल होना मालूम हो गया, तो पहले दिये गये हुक्म को दोहराया, ताकि फ़रिश्ते अपने इ़ल्म से उनकी फ़ज़ीलत का इक़रार करें, फिर 'उसके' हुक्म के अनुसार सब ने सज्दः किया, सिवाय इब्लीस के।

सज्दः तअ़ज़ीमी (सम्मानीय) का हुक्म

यह तो लगभग सभी मुसलमान जानते हैं कि यह सज्दः इ़बादत का न था क्योंकि इ़बादत तो केवल अल्लाह ही के लिए है, फिर यह सज्दः कौन सा था, इस विषय में मुफ़स्सिरीन (व्याख्याकारों) ने दो बातें लिखी हैं। कुछ लोगों ने कहा है कि यह सज्दः तो अल्लाह ही के लिए था और ह़ज़रत आदम (अ़लै०) को केवल 'क़िब्ला' के रूप में बनाया गया था, मगर उनको क़िब्ला बनाने से भी उनका दर्जा ज़ाहिर हो गया जैसा कि 'कअ़बः शरीफ़' क़िब्ला है और उसको एक फ़ज़ीलत है।

● कुछ लोगों ने कहा है कि सज्दः तो ह़ज़रत आदम (अ़लै०) के लिए था, लेकिन यह सज्दः

तअ़ज़ीमी (सम्मान हेतु) था, अ़िबादत का सज्दः न था, जैसा कि ह़ज़रत यूसुफ़ (अ़लै०) के भाईयों ने उनको सज्दः किया था। **(बैज़ावी)**

● तीसरी बात यह है कि सज्दः चूंकि अल्लाह के हुक्म से था, तो फिर यह तो अल्लाह ही को सज्दः करने जैसा हुआ और अगर यह सज्दः तअ़ज़ीमी था तो पहले इस तरह़ का सज्दः दूसरी शरीअ़तों में जायज़ था, लेकिन शरीअ़ते मुह़म्मदी में किसी तरह का कोई सज्दः जायज़ नहीं, सिवाय अल्लाह के।

'सज्दः' का अर्थ होता है 'सर झुकाकर अदब के साथ फ़रमाँबरदारी करना', लेकिन शरीअ़त के अनुसार 'ज़मीन पर पेशानी (मस्तक) रखना' सज्दः चूंकि सम्मान के आख़िरी दर्जे का निशान है, इसलिए ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की शरीअ़त में सज्दः तो अल्लाह के सिवा किसी को जायज़ ही नहीं।

अ़िबादत का सज्दः-

किसी को मअ़बूद समझकर सज्दः करना। इस तरह का सज्दः तो पिछली हर उम्मत में मना और कुफ़्र व शिर्क था और कभी किसी शरीअ़त में जायज़ नहीं रहा।

● दूसरी क़िस्म सज्दः की सज्द-ए-तअ़ज़ीमी ('सज्द-ए-सम्मान') है। अर्थात सम्मान के तौर पर किसी के सामने सर झुकाना। जैसे मुलाक़ात के वक़्त मुआ़नका और मुसाफ़ा (गले मिलने और हाथ मिलाने) की इजाज़त है। इसी तरह पिछली शरीअ़तों (मज़हबी क़ानून) में यह सज्दः सम्मान के तौर पर सलाम की जगह पर था, जैसा कि तेरहवें पारः के सूरः यूसुफ़ में, ह़ज़रत यूसुफ़ (अ़लै०) को उनके माँ बाप और उनके भाईयों को सज्दः करने का हुक्म हुआ जो उस वक़्त की शरीअ़त में जायज़ था, लेकिन अब किसी के लिए "तअ़ज़ीम" में सज्दः नहीं किया जा सकता, जो रसूलुल्लाह (सल्ल०) से ह़राम होना साबित है।

एक ह़दीस में ह़ज़रत मुआ़ज़ बिन जबल (रज़ि०) फ़रमाते हैं, मैंने शाम के रहने वालों को अपने सरदारों और उ़लमा के सामने सज्दः करते देखा तो मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से गुज़ारिश की 'या रसूलल्लाह' (सल्ल०) आप इस के ज़्यादा ह़क़दार हैं कि आप को सज्दः किया जाए, तो रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया, अगर मैं किसी इन्सान को किसी इन्सान के सामने सज्दः करने की इजाज़त देता, तो औ़रतों को हुक्म देता कि वे अपने शौहर (पति) को सज्दः करें, क्योंकि उनका उन पर बड़ा ह़क़ है। मतलब यह है कि इस शरीअ़त में 'तअ़ज़ीमी' सज्दः मना है इसलिए किसी को किसी के लिए किसी भी सूरत में सज्दः जायज़ नहीं।

इब्लीस

इब्लीस का शाब्दिक अर्थ होता है 'सख़्त नाउम्मीदी की वजह से ग़मग़ीन होकर ह़ैरत में आ जाना' यह शैतान का लक़ब है जिसका मशहूर नाम 'अज़ाज़ील' है, चूंकि शैतान रह़मते ह़क़ से नाउम्मीद है, इसलिए इसका लक़ब इब्लीस हुआ। यह इब्लीस फ़रिश्तों में से न था बल्कि जिन्नात में से था अर्थात

आग से पैदा किया गया था। यह अपनी इ़बादत की कसरत और इ़ल्म की वजह से फ़रिश्तों के गिरोह में शामिल कर लिया गया था।

जब तमाम फ़रिश्तों को सज्दे का हुक्म हुआ तो इब्लीस को भी फ़रिश्तों में रहने की वजह से हुक्म हुआ, लेकिन इब्लीस ने अल्लाह के इस हुक्म को मानने से इन्कार कर दिया और घमण्ड किया और जैसा कि कुर्आन मजीद की कई सूरतों में ज़िक्र हुआ कि जब अल्लाह तआ़ला ने इब्लीस से सवाल किया कि जब तुझको मैंने सज्दः का हुक्म दिया, तो फिर किस बात ने तुझको ऐसा करने से रोका।

इस पर इब्लीस ने जवाब दिया कि मैं आदम से बेहतर हूँ, आप ने मुझे आग से पैदा किया और आदम को मिट्टी से। इब्लीस का मक़्सद यह था कि मैं आदम से बेहतर हूँ, इसलिए मैं आदम के आगे नहीं झुक सकता। नतीजा यह हुआ कि इस नाफ़रमानी ने उसे अल्लाह की रह़मत से दूर कर दिया और वह काफ़िरों में से हो गया।

● **दूसरा कुफ़्र** यह किया कि अल्लाह के हुक्म को अल्लाह की ह़िक्मत के ख़िलाफ़ जाना और अपनी ह़िक्मत और इ़ल्म को बड़ा समझा।

● **तीसरा कुफ़्र** यह किया कि अपनी इस सरकशी को अल्लाह के हुक्म से बेहतर अ़मल समझा।

ऊपर की आयत में शैतान के काफ़िर हो जाने के लिए दो शब्द प्रयोग हुए हैं एक "अबा" और दूसरे "वस्तकबरा"।

"अबा का अर्थ होता है, सख़्त इन्कार करना यह शब्द 'इबा' से बना है। जिसका अर्थ होता है जानबूझ कर किसी चीज़ का इन्कार करना। इससे मालूम हुआ कि अल्लाह और उसके रसूल के किसी हुक्म को बुरा समझना उसमें ऐब निकालना उसके साथ इन्कार करना।

"इस्तकबरा" के माने हैं, तकब्बुर (घमण्ड) किया। अर्थात अपने आप को बड़ा समझते हुए दूसरे को कमतर समझना।

अल्लाह जमाल पसन्द करता है

ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) से रिवायत है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जन्नत में वह दाख़िल न होगा जिसके दिल में एक ज़र्रा बराबर भी किब्र (घमण्ड) होगा", इस पर एक सह़ाबी ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह हर व्यक्ति पसन्द करता है कि उसका कपड़ा अच्छा हो, उसका जूता अच्छा हो, तो ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह जमील (सुन्दर) है और जमाल (सुन्दरता) को पसन्द करता है। यह घमण्ड, ग़ुरूर नहीं बल्कि ग़ुरूर यह है कि ह़क़ को बातिल करना और लोगों को ह़क़ीर व ज़लील समझना।"

घमण्ड का नतीजा-

(1) घमण्ड एक ऐसा बड़ा गुनाह है जिसने इब्लीस को अल्लाह के दरबार से निकलवा दिया। इसलिए घमण्ड हमेशा ज़िल्लत के गड्ढे में गिराता है।

(2) अल्लाह की मर्ज़ी पर राज़ी रहना चाहिए। शैतान उसकी मर्ज़ी पर राज़ी न हुआ, इसलिए उसका नतीजा ख़राब हुआ।

(3) इन्सान अपने इ़ल्म अ़िबादत पर घमण्ड न करे और न मौजूदा ईमान व अ़मल और इ़ल्म पर, इसलिए कि अस्ल तो एतिबार अन्जाम का है। ईमान वही क़ुबूल है जो आख़िर तक साथ रहे शैतान ने हज़ारों बरस अ़िबादत की, मगर आख़िरी अन्जाम उसके लिए मुफ़ीद न हुआ।

(4) अल्लाह के हुक्म की नाफ़रमानी करना और उसका इन्कार करना बड़ा गुनाह है। इसलिए अल्लाह के हुक्म जो क़ुर्आन व ह़दीस से साबित हों, उनमें अपनी राय रखने दिमाग़ चलाने और हुज्जत करने का किसी को ह़क़ नहीं।

(5) अल्लाह के हुक्म में जल्दी करनी चाहिए ढ़ील और सुस्ती न करनी चाहिए जैसा कि फ़रिश्तों के अ़मल से ज़ाहिर हुआ कि हुक्म मिलते ही सब सज्दे में चले गये।

(6) कभी किसी गुनाह का वबाल ऐसा सख़्त होता है कि अल्लाह की मदद इन्सान का साथ छोड़ देती है, जिसके नतीजे में उसकी हर कोशिश और अ़मल उसको गुमराही की ओर ढकेल देती है।

35 وَقُلْنَا يَا آدَمُ اسْكُنْ أَنْتَ وَزَوْجُكَ الْجَنَّةَ وَكُلَا مِنْهَا رَغَدًا حَيْثُ شِئْتُمَا وَلَا تَقْرَبَا هَٰذِهِ الشَّجَرَةَ فَتَكُونَا مِنَ الظَّالِمِينَ ۝

ह़ज़रत आदम (अ़लै०) और जन्नत

इस आयत में बतलाया गया है कि ह़ज़रत आदम (अ़लै०) को जन्नत में ठहरने का हुक्म दिया गया। फिर ह़ज़रत आदम (अ़लै०) से उनकी पत्नी ह़ज़रत हव्वा को पैदा किया जिसे 'तफ़सीर अज़ीज़ी' में 'शाह अ़ब्दुल अ़ज़ीज़ साह़ब' मुहद्दिस देहलवी ने लिखा है कि जब ह़ज़रत आदम (अ़लै०) ने तन्हाई मह़सूस की और तमन्ना की कि कोई हम जिन्स इनका हो, तो अल्लाह ने रह़मत फ़रमाई और ह़ज़रत आदम (अ़लै०) जिस वक़्त सो रहे थे फ़रिश्तों को हुक्म हुआ कि बाईं पसुली से आदम को चीरो और उस जगह से एक ख़ूबसूरत औ़रत निकालो फिर उस चीरी हुई पसुली को मिला दिया गया, और उस चीरने से ह़ज़रत आदम (अ़लै०) को कोई तक्लीफ़ भी नहीं हुई। जब ह़ज़रत आदम (अ़लै०) जागे तो देखा कि उनका एक हम जिन्स बराबर में मौजूद है पूछा कि तुम कौन हो? तो अल्लाह का हुक्म हुआ कि यह हमारी बन्दी है नाम इन का 'हव्वा' है और तुम्हारे लिए इन को पैदा किया गया है। फिर निकाह़ हुआ और फ़रिश्ते गवाह हुए।

इस तरह ह़ज़रत आदम (अ़लै०) और उनकी बीवी को जन्नत में रहने का हुक्म दिया, लेकिन एक पेड़ के बारे में कहा कि इसके पास भी मत जाना। मक़्सद यह था कि इसमें से मत खाना और साथ ही यह भी फ़रमाया कि अगर तुमने इसमें से खा लिया तो ज़ालिमों में से हो जाओगे। इससे दो तरह का ज़ुल्म मुराद हो सकता है, एक तो यह कि जो मना किया गया है उस हुक्म को तोड़ना, जो एक बड़ा गुनाह है जिसकी वजह से वह सज़ा के ह़क़दार हो जाएँगे।

दूसरे यह कि जब हुक्म तोड़ देंगे तो यहाँ जिन नेअ़मतों में रह रहे हैं वह सब छिन जाएँगी और यहाँ से निकलना पड़ेगा।

पेड़ जिसके खाने से मना फ़रमाया था वह कौन सा था इसके विषय में ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास और कुछ दूसरे सहाबा से यह नक़्ल किया गया है कि यह गेहूँ का पेड़ था। ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) और ह़ज़रत इब्ने मसऊद (रज़ि०) से नक़्ल किया गया है कि यह अंगूर का पेड़ था, ह़ज़रत मुजाहिद ने फ़रमाया कि यह इन्जीर का पेड़ था। **(तफ़्सीर दुर्रे मन्सूर) वल्लाहु आ़लम**

ह़ज़रत आदम (अ़लै०) व हव्वा का बहकाना–

अल्लाह तआ़ला ने ह़ज़रत आदम (अ़लै०) से फ़रमा दिया था कि यह इब्लीस तुम्हारा दुश्मन है और शैतान इस ताक में था कि किसी तरह इनको जन्नत से निकलवाऊँ। उसे यह मालूम था कि ह़ज़रत आदम को एक पेड़ के खाने से मना फ़रमाया गया है और उसे यह भी मालूम था कि अगर किसी तरह इनसे इस हुक्म के ख़िलाफ़ करवा दूँ तो ज़रूर इनकी पकड़ हो जाएगी, जो यहाँ से निकाले जाने का ज़रिया बनेगा तो उसने ह़ज़रत आदम (अ़लै०) से कहा कि तुम को इस पेड़ के खाने से इसलिए रोका गया है कि जो कोई इस पेड़ से खा लेगा वह हमेशा यहीं रहेगा और जो राह़त यहाँ ह़ासिल है उसमें कभी कमी न आएगी और उसने यह भी कहा कि तुम दोनों को तुम्हारे रब ने इस पेड़ के खाने से इसलिए रोका है कि इस पेड़ के खाने से फ़रिश्ते हो जाओगे और हमेशा ज़िन्दा रहोगे जिसका ज़िक्र सूरः अअ़राफ़ और सूरः ताहा में मौजूद है और उसने केवल समझाया ही नहीं बल्कि दोनों से कहा, बेशक मैं तुम्हारे लिए नसीह़त करने वाला हूँ।

अल्लाह तआ़ला ने सूरः अअ़राफ़ में फ़रमाया, "और शैतान ने क़सम खाई कि मैं तुम दोनों का बहुत बड़ा ख़ैर ख़्वाह हूँ।" **(सूरः अअ़राफ़-21)**

इसी तरह़ अल्लाह ने फ़रमाया, बेशक शैतान तुम्हारा दुश्मन है, इसलिए तुम उसे दुश्मन समझते रहो वह तो अपने गिरोह वालों को बुलाता है ताकि वह सब जहन्नमी हो जाएँ। **(सूरः फ़ातिर-6)**

ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कि सब से बेहतरीन दिन जुमअ़ का दिन है, इसी दिन आदम पैदा किये गये और इसी दिन वहाँ से निकाले गये। **(मुस्लिम, नसई)**

36 فَأَزَلَّهُمَا الشَّيْطَٰنُ عَنْهَا فَأَخْرَجَهُمَا مِمَّا كَانَا فِيهِ ۖ وَقُلْنَا اهْبِطُوا بَعْضُكُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ ۖ وَلَكُمْ فِي الْأَرْضِ مُسْتَقَرٌّ وَمَتَاعٌ إِلَىٰ حِينٍ ۝

शैतान के समझाने बुझाने और क़सम खाने से दोनों ने उस पेड़ में से खा लिया जिससे मना फ़रमाया गया था और वह उनको धोखा देकर नीचे उतारने में कामियाब हो गया। इस पेड़ को चखना ही था कि जन्नत के कपड़े उनसे अलग हो गये और दोनों की शर्म की जगह एक-दूसरे के सामने ज़ाहिर हो गई, तो जन्नत के पत्ते अपने जिस्मों में रखने लगे, अल्लाह ने उनको पुकार कर फ़रमाया, क्या मैंने तुम को इस पेड़ से मना न किया था और क्या मैंने यह न कहा था कि बेशक शैतान तुम्हारा दुश्मन है दोनों गुनाह के इक़रारी हुए और फिर माफ़ी माँगने लगे।

शैतान का बहकाना-

यहाँ यह सवाल उठता है कि शैतान ने उनको किस तरह बहकाया और किस तरह वस्वसा डाला, जबकि वह वहाँ से निकाल दिया गया था। इस विषय में मुफ़स्सिर 'बैज़ावी' ने लिखा है कि इ़ज़्ज़त के साथ उसका वहाँ रहना और वहाँ दाख़िल होना मना न था, चूंकि ह़ज़रत आदम व हव्वा का इम्तिहान लेना था इसलिए वस्वसा डालने के लिए मौक़ा दिया गया और यह भी हो सकता है कि दरवाज़े के पास खड़ा होकर वस्वसा डाला हो। जो भी हुआ हो उसने वस्वसा डाला और बहकाया और उन्होंने उसकी बात पर अ़मल किया जिसकी वजह से ज़मीन पर आना पड़ा।

ह़ज़रत आदम (अ़लै०) को पहले से ज़मीन पर भेजना और ख़लीफ़ा बनाना तय था, मगर शैतान का बहकाना और उनका पेड़ में से खा लेना ज़मीन पर आने का ज़रिया बना।

जब उन्होंने उस पेड़ में से खा लिया तो अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि यहाँ से उतर जाओ ज़मीन में जाकर रहो वहाँ तुम में से कुछ लोग कुछ के दुश्मन होंगे और ज़मीन में तुम को ठहरना है और एक ज़माने तक उससे फ़ायदा उठाना है।

इसका मतलब एक तो यह है कि आदम, हव्वा और उनकी औलादों को क़ियामत तक दुनिया में रहना है जिसका वक़्त निश्चित है दूसरा मतलब यह है कि उनमें से हर व्यक्ति को अपनी मौत आने तक ज़मीन पर रहना है और थोड़ा बहुत फ़ायदा ह़ासिल करना है।

37 فَتَلَقّٰىٓ اٰدَمُ مِنْ رَّبِّهٖ كَلِمٰتٍ فَتَابَ عَلَيْهِ ۚ اِنَّهٗ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيْمُ

ह़ज़रत आदम (अ़लै०) की तौबः-

ह़ज़रत आदम (अ़लै०) और उनकी बीवी से जो ग़लती हुई उसकी वजह से वह बहुत अफ़्सोस में थे तो अल्लाह तआ़ला की ओर से उन को कुछ कलिमात बताये गये कि उन के ज़रिये वह तौबः करें अक्सर मुफ़स्सिरीन ने सूरः अअ़राफ़ के इन शब्दों को ही बताया है-

رَبَّنَا ظَلَمْنَآ اَنْفُسَنَا ٚ وَاِنْ لَّمْ تَغْفِرْ لَنَا وَتَرْحَمْنَا لَنَكُوْنَنَّ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ

अनुवाद-

"ऐ हमारे रब हमने अपनी जानों पर ज़ुल्म किया और अगर आप ने हमारी मग़्फ़िरत न फ़रमाई और हम पर रह़म न फ़रमाया तो हम घाटे में पड़ने वालों में हो जाएँगें।" **(सूरः अअ़राफ़-23)**

इस तरह 'आदम' और 'हव्वा' दोनों ने ही इन शब्दों के ज़रिये दुआ़ की और अल्लाह तआ़ला ने उनकी दुआ़ क़ुबूल फ़रमाई। माफ़ी और मग़्फ़िरत तो हो गई लेकिन जन्नत में वापस नहीं भेजा गया।

ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) 'फ़तलक़्क़ा'......................के जवाब में फ़रमाते हैं कि आदम ने कहा या रब! क्या तूने मुझे अपने हाथ से नहीं बनाया। अल्लाह ने कहा हाँ, आदम ने कहा, अगर मैं तौबः करूँ और अपनी ह़ालत दुरुस्त कर लूँ तो क्या तू मुझे दोबारा जन्नत में लौटा देगा, अल्लाह

ने कहा, हाँ। **(ह़ाकिम)**

जन्नत से दुनिया में-

जन्नत से दुनिया में कौन कहाँ उतरा इस में बहुत इख़्तिलाफ़ है, लेकिन अक्सर मुफ़स्सिरीन (व्याख्याकार) कहते हैं कि ह़ज़रत आदम (अ़लै०) जन्नत से निकल कर 'सरान्दीप' अर्थात 'लंका' या 'सीलोन' में उतरे और ह़ज़रत 'हव्वा' 'जद्दा' में उतरीं।

और इब्ने उ़मर (रज़ि०) का क़ौल है कि ह़ज़रत आदम (अ़लै०) 'सफ़ा' पर और ह़ज़रत हव्वा 'मरवा' पर उतरीं।

ह़ज़रत आदम (अ़लै०) और ह़ज़रत हव्वा की मुलाक़ात अरफ़ात के मक़ाम पर हुई और वहीं एक-दूसरे को पहचाना। इसी लिए अरफ़ात को 'अरफ़ात' अर्थात पहचान की जगह कहते हैं।

ह़ज़रत आदम (अ़लै०) और मूसा-

ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि ह़ज़रत आदम (अ़लै०) और ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) की जब मुलाक़ात हुई तो ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) आदम (अ़लै०) से कहने लगे आप ही हैं जिन्होंने तमाम लोगों को मुसीबत में डाला और जन्नत से निकलवाया। ह़ज़रत आदम (अ़लै०) ने जवाब दिया तुम वही 'मूसा' हो जिसे अल्लाह तआ़ला ने अपनी रिसालत के लिए चुना और अपने लिए ख़ास किया और तुम पर तौरेत नाज़िल फ़रमाई। ह़ज़रत 'मूसा' (अ़लै०) ने कहा, हाँ तब आदम (अ़लै०) ने फ़रमाया क्या तुमने तौरेत में नहीं पढ़ा कि अल्लाह ने यह हुक्म मेरी पैदाइश से भी पहले लिख दिया था। ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) ने उस का जवाब दिया, इस पर रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया इस तरह ह़ज़रत आदम (अ़लै०) ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) पर दलील में ग़ालिब आये। **(बुख़ारी)**

ह़ज़रत आदम (अ़लै०) को ज़मीन पर भेजना गुनाह के कफ़्फ़ारा के तौर पर न था, बल्कि सूरः बक़रः की तीस्वीं आयत में फ़रमा दिया गया है, "कि हम ज़मीन में ख़लीफ़ा बनाने वाले हैं जो पहले से तय था।"

इसमें ईसाइयों के आस्था का जवाब है, जो यह कहते हैं कि आदम का यह गुनाह इन्सानों में नस्ल दर नस्ल चल रहा है और ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) उसके कफ़्फ़ारा के लिए सूली पर चढ़ गये, जबकि अल्लाह ने साफ़ बता दिया है कि हमने माफ़ कर दिया। दुनिया में आना गुनाह की वजह से न था बल्कि एक बहाना था। अल्लाह तआ़ला ने आदम को पैदा ही ज़मीन के लिए किया था।

क़ुर्आन का बयान है-

फ़रमाया, ''तुझे किसने सज्दः करने से रोका, जबकि 'मैंने तुझे हुक्म दिया?'' 'बोला; ''मैं इससे अच्छा हूँ 'तूने' मुझे आग से पैदा किया और इसे मिट्टी से पैदा किया।'' फ़रमाया, ''उतर जा यहाँ से! तुझे कोई हक़ नहीं है कि यहाँ घमंड करे, बस निकल जा; बेशक तू ज़लील है।'' (उसने) कहा, ''मुझे उस दिन तक मोहलत दीजिए, जिस दिन लोग उठाये जाएँगे।'

फ़रमाया, ''तुझे मोहलत है।'' कहा, ''अच्छा, इस वजह से कि 'तूने' मुझे गुमराही में डाला है, मैं भी 'तेरी' सीधी राह पर उनके लिए घात लगा कर ज़रूर बैठूँगा; फिर उनके आगे और उनके पीछे और उनके दाएँ और उनके बाएँ से उनके पास आऊँगा; और 'तू' उनमें से अक्सर लोगों को शुक्रगुज़ार न पाएगा।'' फ़रमाया,
''निकल जा यहाँ से! ज़लील व ख़्वार होकर, उनमें से जो तेरी पैरवी करेंगे, 'मैं' ज़रूर तुम सबसे जहन्नम को भर दूँगा।'' और ''ऐ आदम! तुम और तुम्हारी बीवी दोनों जन्नत में रहो बसो, फिर जहाँ से चाहो खाओ, और इस पेड़ के पास न जाना' वरना ज़ालिमों में से हो जाओगे।''
तो शैतान ने दोनों को बहकाया, ताकि उनकी शर्मगाहों को, जो उन दोनों से छिपी थीं, उन दोनों के सामने खोल दे; और उस (इब्लीस) ने कहा, ''तुम्हारे 'रब' ने तुम दोनों को जो इस पेड़ से रोका है, तो केवल इसलिए कि कहीं ऐसा न हो कि तुम फ़रिश्ते हो जाओ, या कहीं ऐसा न हो कि तुम हमेशा अमर (जीते) रहो'' और उसने उन दोनों के आगे क़समें खाईं।
''मैं ही तुम दोनों का भला चाहने वाला हूँ;'' इस तरह धोखा देकर उसने उन दोनों को झुका लिया, जब उन्होंने उस पेड़ (के फल) को चखा, तो उनकी शर्मगाहें एक-दूसरे के सामने खुल गयीं और वह अपने ऊपर बाग़ के पत्ते जोड़-जोड़ कर रखने लगे, तब उनके रब ने उनको पुकारा, ''क्या 'मैंने' तुम दोनों को इस पेड़ से रोका न था और तुमसे कहा न था कि शैतान तुम्हारा खुला दुश्मन है?'' दोनों बोले, ''हमारे रब! 'हमने' अपने आप पर ज़ुल्म किया, अब अगर 'तूने' हमें माफ़ न किया और हम पर रहम न किया, तो फिर हम घाटा उठाने वालों में से होंगे।'' फ़रमाया, ''उतर जाओ! तुम आपस में एक-दूसरे के दुश्मन हो और तुम्हारे लिए एक वक़्त तक ज़मीन पर ठिकाना और (ज़िन्दगी का) सामान है।'' फ़रमाया, ''उसी में तुम्हें जीना और उसी में तुम्हें मरना है और उसी से तुमको निकाला जाएगा।'' **(सूरः अअ़राफ़ आयत नं० 12 से 25)**

हज़रत आदम (अ़लै०) की क्षमा याचना (माफ़ी) का ज़िक्र एक और जगह इस तरह़ है-

"फिर आदम ने अपने 'रब' से कुछ शब्द प्राप्त किये, तो (अल्लाह ने) उनकी तौबः क़ुबूल कर ली, बेशक वही तौबः क़ुबूल करने वाला,रह़म वाला है। 'हमने' कहा, ''तुम सब यहाँ से उतर जाओ, फिर अगर मेरी ओर से तुम लोगों के पास कोई हिदायत (पथ-प्रदर्शन) पहुँचे तो जिन्होंने मेरी हिदायत की पैरवी की उन को न तो डर होगा और न वे दुखी होंगे,'' और जिन्होंने इन्कार किया और हमारी आयतों को झुठलाया, वही दोज़ख़ी हैं, वे हमेशा उसी में रहेंगे।'' **(सूरः बक़रः आयत नं० 37 से 39)**

इस तरह़ पृथ्वी पर पहला मुनष्य, हम सब के पूर्वज ह़ज़रत आदम (अ़लै०), अल्लाह के पैग़म्बर

(देवदूत) के रूप में पधारे।

आदम कहाँ उतरे थे?

प्रसिद्ध शोधकर्ता 'सैय्यद सुलेमान नदवी' अपनी पुस्तक 'अ़रब-हिन्द तअ़ल्लुक़ात' में लिखते हैं। (अनुवाद उर्दू से हिन्दी)

> अ़रब वासियों का दावा यह है कि हिन्दुस्तान से उन का सम्बन्ध केवल चन्द हज़ार वर्ष का नहीं वरन उत्पत्ति के प्रारम्भ से ही यह देश उनकी पैतृक भूमि है। ह़दीसों व क़ुर्आनी भाष्यों में जहाँ ह़ज़रत आदम (अ़लै०) की कथा है, बहुत सी परम्पराओं के अनुसार यह उल्लेख मिलता है कि "आदम जब आसमान की जन्नत से निकाले गये तो वह इसी ज़मीन की जन्नत में जिस का नाम 'हिन्दुस्तान जन्नत निशान' है, उतारे गये। सरान्द्वीप (श्रीलंका) में उन्होंने पहला क़दम रखा, जिसका चिन्ह उसके एक पर्वत पर विद्यमान है।
>
> **(सय्यद सुलेमान नदवी)**
>
> "इब्ने जरीर (प्रसिद्ध कुरआ़नी भाष्य) इब्ने अबी ह़ातिम (ह़दीसों का एक संकलन) और ह़ाकिम (ह़दीसों का एक संकलन) में है कि "हिन्दुस्तान के उस क्षेत्र का नाम जिसमें ह़ज़रत आदम उतरे, 'दजना' है।" क्या यह कहा जा सकता है कि यह 'दजना'-दखन या दख्खन (दख्खन-हिन्दी रूपान्तर दक्षिण) है जो भारत के दक्षिण क्षेत्र का प्रसिद्ध नाम है?

38-39 قُلْنَا اهْبِطُوا مِنْهَا جَمِيعًا ۖ فَإِمَّا يَأْتِيَنَّكُم مِّنِّي هُدًى فَمَن تَبِعَ هُدَايَ فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ۝
وَالَّذِينَ كَفَرُوا وَكَذَّبُوا بِآيَاتِنَا أُولَٰئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ ۖ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝

हिदायत क़ुबूल करने वालों के लिए इनआ़म-

इससे पहले हुक्मे 'एहबितू' (उतर जाओ) पहली आयत में यह हुक्म बताने के लिए आया कि तुम यहाँ से जाओ और जहाँ जा रहे हो वह मुसीबत की जगह होगी, तुम्हारी आपस में दुश्मनी होगी और वहाँ थोड़े दिनों रहना होगा और दूसरा हुक्म यह बताने के लिए है कि जहाँ तुम को भेजा जा रहा है वह तक्लीफ़ की जगह है वहाँ तुम्हारे मालिक की ओर से हिदायत आएगी।

अल्लाह तआ़ला के पैग़म्बर आएँगे, उन पर वह्य नाज़िल होगी। उन पैग़म्बरों और उन पर नाज़िल हुई किताबों पर ईमान लाना होगा, उसी के अनुसार ज़िन्दगी गुज़ारनी होगी। जो हिदायत की पैरवी करेंगे, उनके लिए यहाँ जन्नत में वापस आकर बेहतर ठिकाना होगा, न उन्हें कोई ख़ौफ़ होगा और न रंज और जो लोग इन्कार करेंगे और मेरी आयतों को झुठलाएँगे, वह लोग आग वाले होंगे अर्थात दोज़ख़ में जाएँगे जिस तरह ईमान वाले जन्नत में रहेंगे, उसी तरह यह इन्कार करने वाले हमेशा दोज़ख़ में रहेंगे।

आयत नं० 40 से 50 तक

يٰبَنِیْٓ اِسْرَآءِیْلَ اذْكُرُوْا نِعْمَتِیَ الَّتِیْٓ اَنْعَمْتُ عَلَیْكُمْ وَ اَوْفُوْا بِعَهْدِیْٓ اُوْفِ بِعَهْدِكُمْ ۚ وَ اِیَّایَ فَارْهَبُوْنِ ۝٤٠ وَ اٰمِنُوْا بِمَآ اَنْزَلْتُ مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَكُمْ
وَ لَا تَكُوْنُوْٓا اَوَّلَ كَافِرٍۭ بِهٖ ۪ وَ لَا تَشْتَرُوْا بِاٰیٰتِیْ ثَمَنًا قَلِیْلًا ۫ وَّ اِیَّایَ فَاتَّقُوْنِ ۝٤١ وَ لَا تَلْبِسُوا الْحَقَّ بِالْبَاطِلِ وَ تَكْتُمُوا الْحَقَّ وَ اَنْتُمْ
تَعْلَمُوْنَ ۝٤٢ وَ اَقِیْمُوا الصَّلٰوةَ وَ اٰتُوا الزَّكٰوةَ وَ ارْكَعُوْا مَعَ الرّٰكِعِیْنَ ۝٤٣ اَتَاْمُرُوْنَ النَّاسَ بِالْبِرِّ وَ تَنْسَوْنَ اَنْفُسَكُمْ وَ اَنْتُمْ تَتْلُوْنَ الْكِتٰبَ ؕ
اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ۝٤٤ وَ اسْتَعِیْنُوْا بِالصَّبْرِ وَ الصَّلٰوةِ ؕ وَ اِنَّهَا لَكَبِیْرَةٌ اِلَّا عَلَى الْخٰشِعِیْنَ ۝٤٥ الَّذِیْنَ یَظُنُّوْنَ اَنَّهُمْ مُّلٰقُوْا رَبِّهِمْ وَ اَنَّهُمْ
اِلَیْهِ رٰجِعُوْنَ ۝٤٦ یٰبَنِیْٓ اِسْرَآءِیْلَ اذْكُرُوْا نِعْمَتِیَ الَّتِیْٓ اَنْعَمْتُ عَلَیْكُمْ وَ اَنِّیْ فَضَّلْتُكُمْ عَلَى الْعٰلَمِیْنَ ۝٤٧ وَ اتَّقُوْا یَوْمًا لَّا تَجْزِیْ نَفْسٌ عَنْ نَّفْسٍ
شَیْــٴًـا وَّ لَا یُقْبَلُ مِنْهَا شَفَاعَةٌ وَّ لَا یُؤْخَذُ مِنْهَا عَدْلٌ وَّ لَا هُمْ یُنْصَرُوْنَ ۝٤٨ وَ اِذْ نَجَّیْنٰكُمْ مِّنْ اٰلِ فِرْعَوْنَ یَسُوْمُوْنَكُمْ سُوْٓءَ الْعَذَابِ
یُذَبِّحُوْنَ اَبْنَآءَكُمْ وَ یَسْتَحْیُوْنَ نِسَآءَكُمْ ؕ وَ فِیْ ذٰلِكُمْ بَلَآءٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ عَظِیْمٌ ۝٤٩ وَ اِذْ فَرَقْنَا بِكُمُ الْبَحْرَ فَاَنْجَیْنٰكُمْ وَ اَغْرَقْنَاۤ اٰلَ فِرْعَوْنَ
وَ اَنْتُمْ تَنْظُرُوْنَ ۝٥٠

अनुवाद–

(40) ऐ बनी इस्राईल! (याक़ूब की संतान) मेरे एहसान को याद करो, जो 'मैं' तुम पर कर चुका हूँ, और तुम मेरे अ़हद (प्रतिज्ञा) को पूरा करो तो मैं तुम्हारे अ़हद को पूरा करूँगा, और मुझ ही से डरते रहो; (41) और ईमान लाओ उस चीज़ (कुर्आन) पर जो मैंने उतारा है जो तुम्हारे किताब (तौरात) की तस्दीक़ करती है; और सबसे पहले (तुम ही) इसके इन्कार करने वाले न बनो, और मेरी आयतों को थोड़ी सी क़ीमत के बदले मत बेचो और मुझ ही से डरते रहो; (42) और तुम हक़ को झूठ के साथ मत मिलाओ, और हक़ को मत छिपाओ जान बूझ कर; (43) और नमाज़ क़ायम करो, और ज़कात दिया करो, और झुकने (रूकूअ़ करने) वालों के साथ तुम भी झुका (रुकूअ़) करो; (44) क्या! तुम लोगों को भलाइयों का हुक्म करते हो, और अपने आप को भूल जाते हो, हालाँकि तुम किताब (तौरात) भी पढ़ते रहते हो! क्या तुम (इतना भी) नहीं समझते! (45) और सब्र और नमाज़ के ज़रिये (अल्लाह से) मदद चाहो, और बेशक यह (नमाज़) कठिन काम है मगर उन लोगों के लिए नहीं, जो (अल्लाह का) डर रखने वाले हैं। (46) जो समझते हैं कि उन्हें अपने रब से मिलना है, और उसी की ओर उन्हें पलटकर जाना है। (47) ऐ बनी इस्राईल (याक़ूब की सन्तान) मेरे एहसान को याद करो, जो मैं तुम पर कर चुका हूँ, और उस बात को भी (याद करो) कि मैंने तुम्हें सारे संसार पर फ़ज़ीलत (प्रधानता) दी थी; (48) और उस दिन से डरो, जब कोई किसी के काम न आएगा, न उसकी ओर से (किसी की) सिफ़ारिश क़ुबूल की जाएगी और न उससे कुछ बदले में लिया जाएगा और न लोगों को (कहीं से) मदद पहुँचेगी। (49) और (याद करो) जब 'हमने' तुमको फ़िरऔन के लोगों से छुटकारा दिया, वे तुम को सख़्त सज़ा दिया करते थे, (यानी) तुम्हारे बेटों को क़त्ल कर देते थे, और तुम्हारी बेटियों को ज़िन्दा छोड़ देते थे, और इसमें तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारे लिए एक बड़ी आज़माइश थी; (50) और (वह वक़्त भी याद करो) जब 'हमने' तुम्हारी वजह से समुद्र को फाड़ कर तुम को बचा लिया, और फ़िरऔन वालों को डुबो दिया, और तुम देख रहे थे।

आयत नं० 40 से 50 तक की व्याख्या

40 يٰبَنِىٓ اِسْرَآءِيْلَ اذْكُرُوْا نِعْمَتِىَ الَّتِىْٓ اَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَاَوْفُوْا بِعَهْدِىْٓ اُوْفِ بِعَهْدِكُمْ ۚ وَاِيَّايَ فَارْهَبُوْنِ

बनी इस्राईल– 'ऊपर की आयत में शब्द 'या बनी इस्राईल' आया है जिस से मुराद यहूदी हैं। इस्राईल हज़रत याकूब (अ़लै०) का लक़ब था जो इब्रानी ज़बान का शब्द है जिसके माने होते हैं 'अल्लाह का नेक बन्दा' और कुछ लोगों के अनुसार अर्थ होता है। अ़ब्दुल्लाह 'अल्लाह का बन्दा' हज़रत याकूब (अ़लै०) के बारह बेटे थे, जो बारह क़बीलों में बटे हुए थे उन सब को बनी इस्राईल कहा जाता था।

हज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की नस्लें–

हज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की एक बीवी का नाम 'सारा' था, जो उनके चचा की लड़की थीं और दूसरी बीवी का नाम 'हाजरा' था। हज़रत 'सारा' से हज़रत इस्हाक़ (अ़लै०) और 'हाजरा' से हज़रत इस्माईल (अ़लै०) पैदा हुए। हज़रत इस्हाक़ (अ़लै०) के बेटे याकूब (अ़लै०) थे जिनको बनी इस्राईल कहा जाता है जिनके बारह बेटे थे, उसमें से एक हज़रत यूसुफ़ (अ़लै०) थे जो मिस्र में रहने लगे थे।

इस तरह इन बारह भाईयों की औलादें बारह क़बीलों (गिरोहों) में बटी हुई थीं जिनकी संख्या कई लाख थी, मगर इनका असली वतन 'कनआन' था, जो फ़िलिस्तीन में है। और हज़रत इस्माईल (अ़लै०) की औलाद मक्का में आबाद रहीं, हज़रत इस्हाक़ (अ़लै०) की औलाद पहले 'कनआन' में, फिर मिस्र में आबाद हो गई।

हज़रत यूसुफ़ (अ़लै०) की सत्ता के ख़त्म हो जाने के बाद हुकूमत में इनका कुछ भी हिस्सा न रहा, चूंकि यह लोग मिस्र के अस्ल रहने वाले नहीं थे। इसलिए मिस्र क़ौम (क़िब्त) के लोग इन पर ज़ुल्म करने लगे और इनको ग़ुलाम बना लिया यहाँ तक कि इनके लड़कों को ज़िब्ह कर देते थे और यह कुछ न कर सकते थे।

हज़रत मूसा (अ़लै०)–

इसी बनी इस्राईल में हज़रत मूसा (अ़लै०) पैदा हुए जिनकी मुख़ालिफ़त में उस वक़्त का बादशाह जिसका लक़ब फ़िरऔन था। उसको हज़रत मूसा (अ़लै०) ने अल्लाह की ओर दअ़वत दी और हज़रत मूसा (अ़लै०) ने यह भी कहा कि बनी इस्राईल को हमारे साथ भेज दें, उनके कहने पर न वह 'बनी इस्राईल' को भेजने के लिए तैयार हुआ और न दअ़वत को कुबूल किया।

बनी इस्राईल का मिस्र से निकलना–

बनी इस्राईल हज़रत मूसा (अ़लै०) के हुक्म से रातों-रात मिस्र से निकल कर समुद्र तक पहुँच गये। जब सुबह फ़िरऔन को मालूम हुआ तो वह अपनी फ़ौज को लेकर समुद्र तक पहुँच गया।

हज़रत मूसा (अ़लै०) ने अपना असा (डंडा) समुद्र में मारा जिससे समुद्र फट गया और उसमें रास्ते बन गये और 'बनी इस्राईल' के क़बीले उन रास्तों से पार हो गये। यह सब देख कर फ़िरऔन ने भी अपनी फ़ौज को समुद्र में डाल दिया।

फिरऔन और उसकी फ़ौज जब समुद्र के बीच में पहुँची तो अल्लाह तआ़ला ने समुद्र को मिला दिया, फ़िरऔन की फ़ौज डूब गयी और मूसा (अ़लै०) अपनी क़ौम 'बनी इस्राईल' को लेकर पार हो गये, फ़िरऔन भी इसमें डूब मरा, मगर अल्लाह ने उसकी लाश को महफ़ूज़ रखा जो अब भी मिस्र के अजायब घर में मौजूद है, ताकि लोग हक़ के झुठलाने वालों का अन्जाम देख लें।

चालीस साल 'तीह' की घाटी में-

'बनी इस्राईल' समुद्र पार करने के बाद अपने ही इलाक़े में जाना चाहते थे। इसलिए कि उनके बाप-दादा मिस्र थोड़े दिनों में ऊँट की सवारी कर के पहुँच आये थे, मगर इनको 'तीह' की घाटी से घर तक पहुँचने में चालीस साल लग गये और यह हज़रत मूसा (अ़लै०) को परेशान करते रहे और मैदाने 'तीह' में चालीस साल तक चलते रहे (सुबह को जहाँ से चलते शाम को वहीं पहुँच जाते)।

जब हज़रत मूसा (अ़लै०) इनको इसी मैदान में छोड़ कर तूर पहाड़ पर तौरात लेने गये, तो इन लोगों ने यहाँ एक बछड़ा बना कर उसकी पूजा शुरु कर दी और हज़रत मूसा (अ़लै०) तूर पहाड़ से वापस आये तो लोगों ने कहा हम तुम्हारी बात जब मानेंगे जब कि हम अल्लाह को आमने-सामने देख लें।

उस ज़माने में उनको खाने के लिए 'मन्न व सल्वा' मिलता था, मगर उन्होंने हज़रत मूसा (अ़लै०) से कहा कि हम एक खाने पर सब्र न करेंगे हम को सब्ज़ी, प्याज़, ख़ीरा, ककड़ी आदि चाहिए और तौरात को मानने से इन्कार कर दिया। इसके बाद अल्लाह तआ़ला ने तूर पहाड़ को टेन्ट की तरह तान दिया यह सब उसी मैदान में हुआ और वहीं हज़रत मूसा (अ़लै०) की वफ़ात हो गई।

उनकी वफ़ात के बाद हज़रत 'यूशा बिन नून' (अ़लै०) के ज़माने में इनका इलाक़ा फ़तेह़ हुआ और बैतुल मक़्दिस में दाख़िल हुए, उस वक़्त इनको हुक्म हुआ था कि अदब के साथ ग़ल्तियों की माफ़ी मांगते हुए दाख़िल हों, मगर इन्होंने इसके ख़िलाफ़ किया।

इसी क़ौम 'बनी इस्राईल' में 'हज़रत दाऊद' (अ़लै०) और 'हज़रत सुलेमान' (अ़लै०) जैसे नबी और बादशाह हुए और इन्हीं 'बनी इस्राईल' को 'यहूदी' भी कहा जाता है।

मदीना में यहूदियों का इतिह़ास-

इतिहासकारों ने लिखा है कि 'बख़्त नस्र' (मशहूर बादशाह) ने जब बैतुल् मक़्दिस को ढा दिया और वहाँ के रहने वालों को निकलवा दिया और बनी इस्राईल (यहूद) में से बहुत से लोगों को क़ैद कर लिया तो उनमें से एक गिरोह ने हिजाज़ की ओर रुख़ किया। उनमें से कुछ 'वादियुल् क़ुरा' और कुछ 'मदीना' में आकर बस गये जहाँ पहले से कुछ लोग 'बनी जुरहुम' और कुछ 'अमाल्का' आबाद थे। वह खजूरों के बाग़ लगाते और खेतियाँ करते, यहूदी उनके साथ मिलकर रहने लगे, फिर यह बढ़ते रहे और 'बनी

जुरहुम' और 'अमाल्क़ा' कम होते रहे यहाँ तक कि उनको यहूदियों ने मदीना से निकाल दिया और उनकी इमारतों और खेतियों पर क़ब्ज़ा कर लिया। (फ़त्हुलु बारी)

कुछ इतिहासकारों ने यह लिखा है कि यहूदी उ़लमा तौरात में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की सिफ़तों (गुणों) को पढ़ते थे, जिसमें यह भी था कि उस मुह़म्मद की हिजरत ऐसे शहर की ओर होगी जहाँ खजूरें होंगी और वह दो पथरीली ज़मीनों के बीच होगा। इसलिए वह शाम से आये और इस शहर में आबाद हो गये, ताकि उस नबी पर ईमान लाएँ और उसकी पैरवी करें। (मदीनतुलु मुख़्तार व मोजमुलु बुल्दान)

यहाँ पर यहूदियों के बसने के कई साल बाद यमन के दो क़बीले 'औस' और 'खज़रज' भी मदीना मुनव्वरह में आकर आबाद हो गये जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) हिजरत करके मदीना तशरीफ़ लाए तो उस वक़्त तीन क़बीले यहूदियों के (1) बनू नज़ीर (2) बनू क़ुरैज़ा (3) बनू क़ैनक़ाअ़ और दो क़बीले यमन से आने वाले 'औस' व 'ख़ज़रज' यहाँ आबाद थे।

यहूद, औस व ख़ज़्रज-

'औस और ख़ज़्रज' यह दोनों क़बीले बुत परस्त थे, आपस में भी इनकी लड़ाईयाँ हुआ करती थीं और यहूदियों से भी जंग होती रहती थीं। यहूदी अहले किताब और इ़ल्म वाले समझे जाते थे। यहूदी औस व ख़ज़रज से कहते थे कि जब नबी आएगा तो हम उनकी पैरवी करेंगे और उनके साथी बन कर तुम को मिटा देंगे।

औस व ख़ज़्रज का इस्लाम-

ह़ज के मौक़े पर पहली बार जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने 'औस' और 'खज़्रज' के कुछ लोगों को इस्लाम की दअ़वत दी तो यह आपस में कहने लगे कि यह तो वही नबी मालूम होते हैं जिनकी भविष्यवाणी का यहूदी ज़िक्र कर के हमें धमकियाँ दिया करते हैं, कि आख़िरी नबी जब आएँगे तो हम उनके साथ मिल कर तुम्हें क़त्ल कर देंगे, ऐसा न हो कि वह आगे बढ़ जाएँ। इस तरह 'औस' व 'ख़ज़रज' के लोग मुसलमान हो गये और मदीना आकर उन्होंने इस्लाम का प्रचार व प्रसार शुरु कर दिया जिससे दोनों क़बीलों में इस्लाम फैल गया फिर दोनों क़बीलों के बारह लोगों ने अगले साल ह़ज के मौक़े पर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से मुलाक़ात की और आप (सल्ल०) से 'बैअ़त' की और कहा आप मदीना तशरीफ़ लाएँ।

यहूदियों का इन्कार-

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) जब मदीना आये तो यहूदी यह जानने के बावजूद कि आप नबी हैं इन्कार कर दिया, जिन में कुछ लोग ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम जैसे लोगों ने इस्लाम क़ुबूल कर लिया बाक़ी लोग मुख़ालिफ़त करते रहे।

अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया "ऐ बनी इस्राईल! मेरी उन नेअ़मतों को याद करो जो मैंने तुमको दी हैं और मेरा वादा पूरा करो मैं भी तुम्हारा वादा पूरा करुँगा और मुझ ही से डरो"।

अ़हद (प्रतिज्ञा)-

पहला अ़हद तो आ़लमें अ़रवाह में अल्लाह को अपना रब और मअ़बूद मानने और उसके साथ किसी को साझीदार न बनाने का और दूसरा उसकी ओर से नाज़िल किये हुए हुक्मों पर अ़मल करने का है।

अ़हद का ज़िक्र दूसरी आयतों में इस तरह़ भी है। **जैसे-**

وَلَقَدْ أَخَذَ اللّٰهُ مِيْثَاقَ بَنِيْٓ إِسْرَآءِيْلَ ۚ وَبَعَثْنَا مِنْهُمُ اثْنَيْ عَشَرَ نَقِيْبًا ۖ وَقَالَ اللّٰهُ إِنِّيْ مَعَكُمْ ۖ
لَئِنْ أَقَمْتُمُ الصَّلٰوةَ وَآتَيْتُمُ الزَّكٰوةَ وَآمَنْتُمْ بِرُسُلِيْ وَعَزَّرْتُمُوْهُمْ وَأَقْرَضْتُمُ اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا
لَأُكَفِّرَنَّ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ وَلَأُدْخِلَنَّكُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهٰرُ ۚ

अनुवाद- "और अल्लाह ने बनी इस्राईल से वादा लिया था, और 'हमने' उनमें बारह सरदार मुक़र्रर किये थे; फिर अल्लाह ने कहा था, मैं तुम्हारे साथ हूँ, अगर तुमने नमाज़ क़ायम रखी, और ज़कात देते रहे, और मेरे रसूलों पर ईमान लाए, और उनकी मदद की और अल्लाह को अच्छा क़र्ज़ दिया, तो 'मैं' ज़रूर तुम्हारी बुराइयाँ तुमसे दूर कर दूँगा, और ज़रूर तुम्हें ऐसे बाग़ों में दाख़िल करूँगा, जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी।" **(सूरः अल् माईदा-12)**

41 وَآمِنُوْا بِمَآ أَنْزَلْتُ مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَكُمْ وَلَا تَكُوْنُوْٓا أَوَّلَ كَافِرٍۢ بِهٖ ۖ وَلَا تَشْتَرُوْا بِآيٰتِيْ ثَمَنًا قَلِيْلًا ۚ وَإِيَّايَ فَاتَّقُوْنِ ۝

क़ुर्आन पर ईमान-

यहूदियों से अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि इस किताब अर्थात 'क़ुर्आन मजीद' को जो मैंने मुह़म्मद (सल्ल०) पर नाज़िल की है ईमान लाओ। पहली बात तो इस वजह से कि क़ुर्आन को अल्लाह ही ने नाज़िल किया है। जैसे- तुम तौरात पर इस वजह से ईमान लाए कि अल्लाह ने उसको उतारा है, उसी तरह यह भी अल्लाह की उतारी हुई किताब है, इसलिए इस पर भी ईमान लाओ। यह उस किताब, जो मूसा (अ़लै०) पर नाज़िल हुई थी अर्थात तौरेत, उस की तस्दीक़ करती है। इस वजह से भी तुम को ईमान लाना चाहिए और यह कि तौरात में आख़िरी नबी के आने का ज़िक्र है, इसलिए तुम को चाहिए कि सबसे पहले 'मुह़म्मद (सल्ल०)' पर ईमान लाओ।

इस आयत में कहा गया है कि तुम सबसे पहले इन्कार करने वालों में से न बनो, जबकि मक्का के मुश्रिक पहले ही इन्कार कर चुके थे मगर उनका इन्कार जिहालत की बिना पर था। हिजरत के बाद यह सूरः बक़रः पहली सूरः है जो मदीना में नाज़िल हुई और पहला गिरोह अहले किताब में यहूद का है, जो मदीना व ख़ैबर में आबाद थे और दूसरा गिरोह शाम व यमन आदि में आबाद था। यहूद चूंकि इ़ल्म वाले कहलाते थे और नबवी ख़ानदान से थे, वह अगर मुह़म्मद (सल्ल०) की नुबूवत और क़ुर्आन का इन्कार करेंगे तो नसारा (ईसाई) भी उनका देखा देखी इन्कार करने लगेंगे, इसलिए फ़रमाया कि ऐ यहूद! तुम अहले किताब में से, इस के पहले मुन्किर न बनो, क्योंकि अगर तुमने इन्कार कर दिया तो

बाद में क़ियामत तक जितने अहले किताब इन्कार करते रहेंगे उनका वबाल भी तुम्हारे आ़माल में लिखा जाता रहेगा।

यहूद की आ़दत-

आगे की आयत में फ़रमाया गया है कि यहूद की आ़दत थी कि वह आसमानी किताब में जानबूझ कर अपनी बात साबित करने के लिए घटा बढ़ा दिया करते थे और कभी व्याख्या को बदल दिया करते थे और पूरी क़ौम में कोई भी व्यक्ति पूरी किताब का सही ह़ाफ़िज़ न होता था। उस वक़्त कोई ऐसी लाईब्रेरी न थी जिसमें दीनी और आसमानी किताब महफ़ूज़ रहती। हर आ़लिम के पास जो कुछ होता उसी के पास रहता इसलिए कुछ का कुछ बना देना आसान था।

यहाँ अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि मेरी आयतों को न बदलो और न ह़क़ को छिपाओ कि थोड़ी सी रक़म लेकर दुनियावी नफ़ा ह़ासिल करो। अल्लाह से डरो, जैसा कि उससे डरने का ह़क़ है।

थोड़ी क़ीमत में न बेचो का यह मतलब नहीं कि ज़्यादा मिल जाए तो सौदा कर लो, बल्कि मतलब यह है कि अल्लाह के हुक्म के मुक़ाबले में दुनियावी फ़ायदे को अहमियत न दो और यह हुक्म क़ियामत तक अल्लाह से डरने वालों के लिए है। **(फ़त्हुल् बारी)**

42 وَلَا تَلْبِسُوا الْحَقَّ بِالْبَاطِلِ وَتَكْتُمُوا الْحَقَّ وَأَنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٤٢﴾

यहूदी उ़ल्मा-

इस आयत में भी यहूद के उलमा के बारे में कहा गया है कि यह लोग 'तौरेत' को बदल चुके थे और उसमें जो सही बातें बाक़ी थीं उनको भी मिला डाला। अगर कोई कुछ पूछता तो उसका मतलब जो चाहते बता देते और पूछने वाले को खु़श करने और उससे रिश्वत लेने के लिए उसके मर्ज़ी के अनुसार व्याख्या कर देते थे। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की जो निशानियाँ 'तौरेत' में लिखी थीं उनको छिपाते थे। इसलिए हुक्म फ़रमाया गया कि ह़क़ को बातिल के साथ मत मिलाओ जिसे तुम जानते हो कि हम ऐसा कर रहे हैं और तुम यह भी जानते हो कि इसका क्या वबाल है फिर भी ऐसी हरकतें करते हो।

43 وَأَقِيمُوا الصَّلَوٰةَ وَآتُوا الزَّكَوٰةَ وَارْكَعُوا مَعَ الرَّاكِعِينَ ﴿٤٣﴾

नमाज़ और ज़कात-

इस आयत में नमाज़ क़ायम करने और ज़कात देने का हुक्म है। नमाज़ जिस्मानी अ़िबादत है और ज़कात माली अ़िबादत है। क़ुर्आन मजीद में दोनों का ज़िक्र साथ-साथ आया है, नमाज़ और ज़कात का हुक्म तो सभी को है, लेकिन यहूदियों को ख़ासतौर से इसलिए फ़रमाया कि इन लोगों में सत्ता और माल की लालच का मर्ज़ था, जिसका नमाज़ और ज़कात में दोनों का इलाज है और इसलिए भी कि यहूदियों की नमाज़ में रुकूअ़ नहीं था। मतलब यह हुआ कि अब तक जो नमाज़ पढ़ते रहे अब उसको छोड़ो

और अब वह नमाज़ पढ़ो जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने बताई है।

कुछ उलमा ने इस आयत को फ़र्ज़ नमाज़ के जमाअत से वाजिब होने पर दलील लिया है और जो लोग वाजिब नहीं कहते उनके नज़्दीक भी बाजमाअत नमाज़ बेहतर है। इस आयत से नमाज़ बाजमाअत की अहमियत भी मालूम हुई।

सज्दः और रुकूअ़-

وَارْكَعُوا مَعَ الرَّاكِعِينَ रुकूअ़ के लग़्वी माना झुकने के हैं। इस तरह़ सज्दः को भी रुकूअ़ कह सकते हैं। मगर यहाँ रुकूअ़ शब्द में इशारा इस तरफ़ है कि यहूद बिना रुकूअ़ की नमाज़ पढ़ते थे, मगर मुसलमानों को रुकूअ़ के साथ नमाज़ पढ़ने का हुक्म हुआ और से مَعَ الرَّاكِعِينَ नमाज़ बजमाअ़त का हुक्म है, जिस से बज़ाहिर वजूब मालूम हो रहा है। इमाम अह़मद के नज़्दीक जमाअ़त फ़र्ज़ और दूसरे ह़ज़रात के नज़्दीक वाजिब या सुन्नत मुअक्किदह है।

ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया कि क़सम है उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है, बेशक मैंने इरादा किया कि मैं लकड़ियों के जमा करने का हुक्म दूँ जो जमा कर ली जाएँ, फिर नमाज़ का हुक्म दूँ ताकि अज़ान दी जाए। फिर किसी व्यक्ति को हुक्म दूँ जो लोगों का इमाम बने और मैं उन लोगों के घरों की ओर चला जाऊँ जो जमाअ़त में ह़ाज़िर न हुए हों फिर उनके घरों को जला दूँ। **(बुख़ारी)**

ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) ने फ़रमाया कि बेशक मैंने अपना वह ज़माना देखा है कि नमाज़ जमाअ़त से केवल वही व्यक्ति पीछे रह जाता था जो मुनाफ़िक़ हो और उसका निफ़ाक़ खुला हुआ होता था। जो सब को मालूम होता था या कोई मरीज़ होता, (बल्कि) मरीज़ का भी यह हाल था कि दो आदमियों के दर्मियान चलकर आ सकता तो आ जाता था। यहाँ तक कि नमाज़ में ह़ाज़िर हो जाता और फ़रमाया कि बेशक हम को रसूल (सल्ल०) ने हिदायत के तरीक़े बताए हैं और हिदायत के तरीक़ों में से यह भी है कि मस्जिद में नमाज़ पढ़ी जाए जिस में अज़ान दी जाती हो। **(मुस्लिम)**

रसूलुल्लाह (सल्ल०) की पेशीनगोई-

इस से मुराद नबी करीम (सल्ल०) की दो सिफ़ात हैं जो तौरात व इन्जील में मौजूद थीं। जैसे- "ऐ नबी! हम ने तुझे इज़हारे ह़क़ करने वाला, ख़ुशख़बरी सुनाने वाला और डराने वाला बना कर भेजा है और उम्मियों (अ़रबों) को (आख़िरत के अ़ज़ाब से) बचाने वाला, तू मेरा बन्दा और मेरा रसूल है। मैंने तेरा नाम 'मुतवक्कल' रखा है, वह न बद्ज़बान है न सख़्त दिल, न बाज़ारों में गुल मचाने वाला न बुराई का बदला बुराई से देने वाला, बल्कि दरगुज़र करने और बख़्श देने वाला है। अल्लाह उसे दुनिया से उस वक़्त तक नहीं उठाएगा जब तक कि वह इस बिगड़ी हुई क़ौम को सीधा न कर ले यानी यह लोग **(लाइलाह इल्लल्लाहु)** न कहने लगें और उस की बरकत से अंधी आँखें, बहरे कान और ग़िलाफ़ चढ़े दिल खुल न जाएँ।" **(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् बुयूअ़, बाब 50, ह़दीस 2125)**

44 أَتَأْمُرُونَ النَّاسَ بِالْبِرِّ وَتَنسَوْنَ أَنفُسَكُمْ وَأَنتُمْ تَتْلُونَ الْكِتَابَ ۚ أَفَلَا تَعْقِلُونَ

मदीना और उसके आसपास रहने वाले कुछ यहूदी उ़लमा नबी करीम (सल्ल०) पर ईमान ले आए थे और इस्लाम को क़ुबूल कर चुके थे। उन की जब उ़लम-ए-यहूद से दीन के मामले में बातचीत होती तो छुप कर यहूदी उलमा उन से यही कहते थे कि बेशक यह पैग़म्बर सच है, तुम इस दीने इस्लाम को मत छोड़ना और तुम इस पर क़ायम रहते हुए मुह़म्मद (सल्ल०) की फ़रमाँबरदारी करो। हम कुछ मसलिहत की वजह से इस्लाम क़ुबूल नहीं करते।

इस तरह यह यहूदी उलमा दिल से इस्लाम को सही समझते थे और दूसरों को क़ायम रहने को भी कहते थे, लेकिन ख़ुद उस पर क़ायम नहीं रहते थे। इसी लिए अल्लाह तआ़ला इस आयत में फ़रमाता है।

"लोगों को तो नेक काम (ईमान लाने) के लिए कहते हो और ख़ुद अपनी ख़बर नहीं लेते हालांकि तुम तौरेत को पढ़ते हो। तो क्या तुम इतना भी नहीं समझते हो" (नेक काम से मुराद ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) पर ईमान लाना और इस्लाम क़ुबूल करना है)

बुरे अ़मल की सज़ा-

ह़दीस में आया हैः "(क़ियामत के दिन) एक आदमी को लाया जाएगा और जहन्नम में झोंक दिया जाएगा और वह उस में इस तरह़ चक्कर खाता रहेगा जैसे चक्की का पाट घुमाने वाला गधा चक्कर खाता है। अहले दोज़ख़ उस के गिर्द जमा होकर पूछेंगेः "अरे! क्या तू वही शख़्स नहीं जो (दुनिया में) भलाई का हुक्म देता था और बुराई से रोकता था?" वह जवाब में कहेगाः "मैं भलाई का हुक्म तो देता था मगर ख़ुद उस पर अ़मल न करता था और बुराई से रोकता था, लेकिन ख़ुद बुरे काम किया करता था।

(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् फ़ितन, बाब 17, ह़दीस 7098)

यहाँ यह बात समझ लेनी चाहिए कि उलम-ए-यहूद दूसरों को नेक बात कहने पर उन की बुराई नहीं फ़रमाई गई, बल्कि उस नेक बात को ख़ुद के अ़मल न करने पर उन को इल्ज़ाम दिया गया है।

इससे यह बात साबित हुई कि अच्छी बात को कहना तो ख़ुद एक अच्छाई बल्कि वाजिब और ज़रूरी है, लेकिन उसके साथ कहने वाले को ख़ुद भी उस पर अ़मल करना चाहिए मगर इसका मतलब यह भी नहीं है कि बेअ़मल नसीह़त न करे, या जब तक अ़मल न करने लगे उस वक़्त तक किसी को दअ़वत न दे।

अ़मल न करने वाला नसीह़त कर सकता है-

ऊपर की आयत का हरग़िज़ यह मतलब नहीं है कि बेअ़मल शख़्स दूसरों को नसीह़त नहीं कर सकता क्योंकि ख़ुद नेकी करना अलग बात है और दूसरों को नेकी बताना एक अलग बात है। कोई दोनों को करता है तो बहुत अच्छा यानी आ़मिल भी है और दअ़वत भी है, लेकिन इन में से अगर एक पर

अ़मल करता है तो यह नहीं कहा जाएगा कि दूसरा काम क़ुबूल नहीं है यानी सिर्फ़ आ़मिल हैं ख़ुद अ़मल कर लेता है दूसरों को नहीं बताता या केवल दूसरों को भलाई के लिए कहता है, मगर ख़ुद नहीं करता तो यह दोनों शख़्स पहले शख़्स के बराबर तो नहीं हो सकते, मगर फिर भी एक नेकी करने वाला, एक नेकी छोड़ने वाला कहा जाएगा। जैसे- एक शख़्स नमाज़ भी पढ़ता है, दाढ़ी भी रखता है तो वह तो बहुत बेहतर है लेकिन एक शख़्स नमाज़ तो पढ़ता है, लेकिन दाढ़ी न रखे तो यह नहीं कहा जाएगा कि दाढ़ी की दअ़वत भी न दे और न यह कहा जाएगा कि दाढ़ी नहीं रखते तो नमाज़ क्यों पढ़ रहे हो।

नसीहत के लिए कैसी परहेज़गारी हो-

"इमाम मालिक (रह०) सअ़ीद बिन ज़ुबैर का क़ौल नक़्ल करते हैं कि जो शख़्स दूसरों को नसीहत में इस का इन्तिज़ार करे कि पहले मैं गुनाह छोड़ दूँ फिर दूसरों से कहूँगा तो इसका नतीजा यह निकलेगा कि दुनिया में कोई भी तब्लीग़ करने वाला नहीं होगा क्योंकि नबी के सिवा गुनाह से बिल्कुल कोई पाक नहीं हो सकता।"

"हसन बसरी फ़रमाते हैं कि शैतान तो यही चाहता है कि लोग इस ग़लत ख़याल में पड़कर फ़रीज़-ए-तब्लीग़ छोड़ दें।"

इस लिए ऊपर की आयत का यह मतलब नहीं कि बेअ़मल को नसीहत और तक़रीर नहीं करना चाहिए, बल्कि मतलब यह है कि तक़रीर या नसीहत करने वाले को बे-अ़मल नहीं होना चाहिए क्योंकि बेअ़मली से नसीहत मुवस्सिर नहीं होती।

45-46 وَاسْتَعِينُوا بِالصَّبْرِ وَالصَّلٰوةِ ۚ وَإِنَّهَا لَكَبِيرَةٌ إِلَّا عَلَى الْخٰشِعِينَ ۝ الَّذِينَ يَظُنُّونَ
أَنَّهُم مُّلٰقُوا رَبِّهِمْ وَأَنَّهُمْ إِلَيْهِ رٰجِعُونَ ۝

इन आयतों में यहूद को बता दिया गया है कि उन्हें इस्लाम क़ुबूल करना चाहिए, इसलिए कि वह जानते हैं कि मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के रसूल हैं। मगर माल और सत्ता की मुहब्बत की वजह से ईमान नहीं लाते, कि अगर वह ईमान ले आएँगे तो चढ़ावे आदि से महरूम हो जाएँगे और जो इ़ज़्ज़त मिली है वह शायद ख़त्म हो जाए। इसलिए अल्लाह तआ़ला ने इसके इलाज के तौर पर फ़रमाया सब्र और नमाज़ से मदद लो अर्थात ईमान लाकर सब्र व नमाज़ का एहतिमाम करो, क्योंकि सब्र से माल की मुहब्बत घट जाएगी और नमाज़ से सत्ता की मुहब्बत कम हो जाएगी।

सब्र और नमाज़ एक मोमिन के दुनियावी ज़िन्दगी की मुसीबतों को बर्दाश्त करने के लिए बड़े हथियार हैं। नमाज़ के ज़रिये अल्लाह की मदद माँगे तो मुसीबत से छुटकारा होगा। मुसीबत से छुटकारा न हो सका तो सब्र करेगा और अल्लाह के यहाँ सवाब पाएगा।

"हज़रत हुज़ैफ़ा (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि ग़ज़्व-ए-ख़न्दक़ के मौक़े पर मैं रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास वापस आया तो आप (सल्ल०) चादर ओढ़े नमाज़ पढ़ रहे थे और आप की आ़दत थी कि जब कोई मुश्किल बात पेश आती तो नमाज़ पढ़ने लगते।" हज़रत अ़ली (रज़ि०) ने बयान फ़रमाया कि मैंने

ग़ज़्व-ए-बद्र की रात में देखा कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) के सिवा सब लोग सोये हुए थे और आप बराबर नमाज़ में मशगूल थे और सुबह तक दुआ करते रहे।" (इब्ने कसीर)

47 يٰبَنِىٓ إِسْرَآءِيلَ ٱذْكُرُوا۟ نِعْمَتِىَ ٱلَّتِىٓ أَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَأَنِّى فَضَّلْتُكُمْ عَلَى ٱلْعٰلَمِينَ ﴿٤٧﴾

बनी इस्राईल के इनआमात-

यहाँ से दोबारा बनी इस्राईल को वह इनआमात याद कराये जा रहे हैं जो उन पर किये गये, एक इनआम यह अता फ़रमाया कि उनको तमाम दुनिया पर फ़ज़ीलत दी गई अर्थात उम्मते मुहम्मदिया से पहले सारे संसार में सबसे अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) होने की फ़ज़ीलत हासिल थी, जिसे उन्होंने अल्लाह के हुक्म को तोड़ कर गवां दिया और उम्मते मुहम्मदिया को ख़ैर-ए-उम्मत का लक़ब दिया गया। इसमें यह भी बताया गया है कि अल्लाह के इनआम किसी ख़ास नस्ल के साथ नहीं हैं, बल्कि यह ईमान और अमल की बुनियाद पर मिलते हैं और ईमान व अमल न करने पर छीन लिए जाते हैं।

48 وَٱتَّقُوا۟ يَوْمًا لَّا تَجْزِى نَفْسٌ عَن نَّفْسٍ شَيْـًٔا وَلَا يُقْبَلُ مِنْهَا شَفٰعَةٌ وَلَا يُؤْخَذُ مِنْهَا عَدْلٌ وَلَا هُمْ يُنصَرُونَ ﴿٤٨﴾

कोई किसी की मदद न करेगा-

इस आयत में बनी इस्राईल को क़ियामत के दिन से डराया जा रहा है कि न कोई किसी के काम आएगा, न सिफ़ारिश क़ुबूल होगी न कुछ देकर छुट्कारा हो सकेगा, न कोई मददगार होगा।

यहूद को यह घमंड था कि हम तो अल्लाह के महबूब और चहीते हैं इसलिए हमें कुछ अज़ाब न होगा, हम तो नबियों की औलाद हैं जो हमें अल्लाह के अज़ाब से बचा लेंगे, लेकिन अल्लाह तआला ने फ़रमा दिया कि वहाँ अल्लाह के नाफ़रमानों को कोई सहारा न दे सकेगा।

इसी धोखे में आज के मुसलमान भी फँसे हुए हैं और रसूलुल्लाह (सल्ल०) की शफ़ाअत को लेकर नासमझी से बुरे अमल करने में लगे हुए हैं। बेशक नबी करीम (सल्ल०) शफ़ाअत फ़रमाएँगे और सही हदीसों से साबित है कि अल्लाह तआला उनकी शफ़ाअत क़ुबूल भी फ़रमाएगा, लेकिन यह भी हदीसों में है कि शिर्क करने वाले इससे महरूम रहेंगे।

इस आयत में शफ़ाअत का इन्कार काफ़िरों के लिए है। जैसा कि अल्लाह ने दूसरी जगह फ़रमाया فَمَا تَنفَعُهُمْ شَفٰعَةُ ٱلشّٰفِعِينَ तो सिफ़ारिश करने वालों की सिफ़ारिश कुछ भी फ़ायदा न पहुँचा सकेगी। *(सूरः मुदस्सिर-48)* فَمَا لَنَا مِن شٰفِعِينَ तो (आज) हमारा कोई सिफ़ारशी नहीं। *(सूरः शुअरा-100)*

मूमिनीन के लिए रसूलुल्लाह (सल्ल०) की शफ़ाअत साबित है, यही अहले सुन्नत वलजमाअत का अक़ीदा है और क़ुर्आन व सुन्नत से यही साबित है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) मोमिनीन की शफ़ाअत करेंगे और अल्लाह उन की शफ़ाअत क़ुबूल फ़रमाएँगे।

इससे भी इन्कार नहीं कि गुनहगारों को जहन्नम में सज़ा देने के बाद आप (सल्ल०) की शफ़ाअत

चाँद की तरह़ चमक रही होंगी, वह थूक, नाक की रतूबत और पाखाना व पेशाब से पाक होंगी, उन के बर्तन सोने के और कंघियाँ भी सोने चाँदी की होंगी। अगूंठियों में अ़ूद की ख़ुश्बूदार लकड़ी इस्तेमाल होगी, उन के पसीने से मुश्क की ख़ुश्बू निकलेगी, हर एक की दो बीवियाँ होंगी जिन की ख़ूबसूरती और नज़ाकत इतनी ज़्यादा होगी कि उन के पिंडुली की हड्डी का गूदा भी बाहर से दिखाई दे रहा होगा। जन्नती आपस में इख़्तिलाफ़ और बुग्ज़ से पाक होंगे, उन के दिल एक होंगे और सुबह़ व शाम अल्लाह की तस्बीह़ बयान करेंगे।" **(सह़ीह़ बुख़ारी, बदउल्ख़ल्क़, बाब 8, ह़दीस 3245)**

26 إِنَّ اللّٰهَ لَا يَسْتَحْيِۦٓ اَنْ يَّضْرِبَ مَثَلًا مَّا بَعُوْضَةً فَمَا فَوْقَهَا ۚ فَاَمَّا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا فَيَعْلَمُوْنَ اَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّهِمْ ۚ وَاَمَّا الَّذِيْنَ كَفَرُوْا فَيَقُوْلُوْنَ مَاذَآ اَرَادَ اللّٰهُ بِهٰذَا مَثَلًا ۘ يُضِلُّ بِهٖ كَثِيْرًا ۙ وَّيَهْدِيْ بِهٖ كَثِيْرًا ۚ وَمَا يُضِلُّ بِهٖٓ اِلَّا الْفٰسِقِيْنَ

إِنَّ اللّٰهَ لَا يَسْتَحْيِۦٓ इस आयत के बारे में इब्ने जरीर ने सुद्दी से अपनी सनद के साथ रिवायत नक़्ल की है कि जब अल्लाह तआ़ला ने मुनाफ़िक़ीन की यह दो मिसालें बयान फ़रमाईं كَمَثَلِ الَّذِى اسْتَوْقَدَ نَارًا और اَوْ كَصَيِّبٍ مِّنَ السَّمَآءِ तो मुनाफ़िक़ीन बोले कि अल्लाह तआ़ला की ज़ात तो इस से बहुत बुलन्द है, कि इस क़िस्म की मिसालें बयान फ़रमाए। तब अल्लाह तआ़ला ने यह आयतें नाज़िल फ़रमाई कि हाँ, वाक़ई अल्लाह तआ़ला तो नहीं शरमाते इस बात से, कि कोई मिसाल बयान कर दें और वाह़िदी ने अ़ब्दुल ग़नी बिन सईद सक़फ़ी से और मूसा बिन अ़ब्दुर्रह़मान, इब्ने जुरैज और अ़ता ने ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) के वास्ते से नक़्ल किया है, कि अल्लाह तआ़ला ने क़ुर्आन करीम में जब मुश्रिकीन के मअ़बूदों का ज़िक्र फ़रमाया, कि अगर मक्खी भी उन से किसी चीज़ को छीन ले तो वह उसे दूर नहीं कर सकते। इस पर उन के मअ़बूदों की ह़क़ीक़त वाज़ेह़ फ़रमाई और मकड़ी का जाला कहा तो कहने लगे देखा अल्लाह तआ़ला ने मुह़म्मद (सल्ल०) पर जो क़ुर्आन नाज़िल किया है उस में मक्खी और मकड़ी का ज़िक्र है, इन चीज़ों के ज़िक्र से क्या होगा इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई।

(तफ़्सीर इब्ने अ़ब्बास)

काफ़िरों का एतिराज़-

काफ़िरों ने यह एतिराज़ किया था कि इस क़ुर्आन में कहीं मकड़ी कहीं मच्छर की मिसालें दी गई हैं, अगर यह क़ुर्आन अल्लाह का कलाम है तो इस में ऐसी छोटी कमतर चीज़ों का ज़िक्र न होना चाहिए था, क्योंकि ऐसी ह़क़ीर चीज़ों का ज़िक्र अल्लाह के कलाम के लायक़ नहीं और इस में इन ह़क़ीर चीज़ों का ज़िक्र है, इसलिए यह अल्लाह का कलाम नहीं है। जिस का जवाब इन आयतों में दिया गया है कि अल्लाह तआ़ला को इस बात से कुछ शर्म नहीं आती कि कोई मिसाल बयान करे किसी मच्छर की, या उस चीज़ की जो उससे भी घटिया हो क्योंकि मिसाल का मतलब यह होता है कि वह बात जिस के लिए मिसाल दी गई हो साफ़-साफ़ बयान कर दी जाए।

अब यह मक़्सद जिस मिसाल से समझ में आ जाए वही बेहतर होती है। मच्छर, मक्खी, मकड़ी एक छोटी सी मख़्लूक़ (सृष्टि) है, मगर जहाँ बुतपरस्ती (मूर्ति पूजा) और काफ़िरों के दीन की कमज़ोरी

पर जहन्नम से निकाला जाएगा। क्या जहन्नम की यह चन्द रोज़ा सज़ा बर्दाश्त के क़ाबिल है कि हम शफ़ाअ़त की वजह से गुनाह करते रहें?

49 وَإِذْ نَجَّيْنَٰكُم مِّنْ ءَالِ فِرْعَوْنَ يَسُومُونَكُمْ سُوٓءَ ٱلْعَذَابِ يُذَبِّحُونَ أَبْنَآءَكُمْ وَيَسْتَحْيُونَ نِسَآءَكُمْ ۚ وَفِى ذَٰلِكُم بَلَآءٌ مِّن رَّبِّكُمْ عَظِيمٌ ﴿٤٩﴾

इस आयत में बनी इस्राईल पर अल्लाह की नेअ़मतों की तफ़्सील बयान की जा रही हैं, यहाँ ख़िताब (बात) तो मदीना के यहूदियों से है, लेकिन मुराद इससे इनके बाप-दादा हैं और आले फ़िरऔन से मुराद फ़िरऔन और उसके तमाम मानने वाले हैं। 'फ़िरऔन' जिसका नाम 'मेरनिपताह' (Merneptah) बयान किया जाता है।

जब ह़ज़रत यूसुफ़ (अ़लै०) ने कनान से वालिदैन, भाईयों और रिश्तेदारों को मिस्र बुला लिया तो उन्हें मिस्र के बादशाह के हुक्म से ज़मीन दी और उनमें कसरत से औलादें होने लगीं। ह़ज़रत यूसुफ़ (अ़लै०) और अज़ीज़े मिस्र के इन्तिक़ाल के बाद उनकी अहमियत कम होती गई, मगर नस्ल बढ़ती रही यहाँ तक कि चार सौ वर्ष में उनकी तअ़दाद लाखों तक पहुँच गई।

मिस्र के बादशाह का लक़ब फ़िरऔन-

मिस्र के बादशाहों का लक़ब फ़िरऔन होता था। फ़िरऔन जिस का नाम मेरनिपताह (Merneptah) बयान किया जाता है ने ख़्वाब में देखा कि बनी इस्राईल में कोई ऐसा शख़्स पैदा होगा जो उस की सल्तनत को ग़ारत करेगा। चुनांचे उस ने बनी इस्राईल के हर बच्चे को क़त्ल कराने और लकड़ियों को लौंडियाँ बनाने का ज़ालिमाना हुक्म जारी कर दिया। उनको विदेशी बनी इस्राईलियों का मिस्र में रहना पसंद न था और ख़ुद हुकूमत करने की वजह से उनसे टैक्स लेते मर्दों से मज़दूरी का काम लेते और औ़रतों से कपड़ा सिलवाते।

पूरी बनी इस्राईल की क़ौम मिस्र में ग़ुलामी की जंज़ीरों में जकड़ी हुई थी कि एक रात फ़िरऔन-ए-मिस्र अर्थात वलीद बिन मुसअब ने ख़्वाब देखा कि एक आग बैतुल् मक़्दिस की ओर से आई है जिसने तमाम मिस्र को घेर लिया और चुन-चुन कर एक-एक क़िब्ती अर्थात मिस्री के घर में घुस गई और उसको जला दिया और बनी इस्राईल के मकानात में वह नहीं गई, फ़िरऔन-ए-मिस्र ने सुबह होते ही तमाम काहिनों को जमा करके इस ख़्वाब की ताबीर पूछी, इस ख़्वाब को सुन कर जादूगरों ने कहा कि बनी इस्राईल में एक बच्चा पैदा होने वाला है जिसके ज़रिये उसकी हुकूमत का ख़ात्मा हो जाएगा।

फ़िरऔन ने यह सुनते ही हुक्म दिया कि बनी इस्राईल में जो लड़का पैदा हो वह क़त्ल कर दिया जाए और लड़कियाँ ज़िन्दा रखी जाएँ। बनी इस्राईल इन परेशानियों से गुज़रते रहे यहाँ तक कि ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) पैदा हुए और अल्लाह तआ़ला की ह़िक्मत से ख़ुद फ़िरऔन के महल में परवरिश पाये।

इस आयत में इसी ओर इशारा है कि बनी इस्राईल ऐसी मुसीबत में गिरफ़्तार थे। अल्लाह तआ़ला ने इस मुसीबतों से बनी इस्राईल को ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) के ज़रिये निजात दी। इस आयत के आख़िर

में यह भी फ़रमाया कि इस आयत में बड़ी आज़माइश थी। इससे मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला की आज़माइश विभिन्न सूरतों में होती है।

50 وَاِذْ فَرَقْنَا بِكُمُ الْبَحْرَ فَاَنْجَيْنٰكُمْ وَاَغْرَقْنَآ اٰلَ فِرْعَوْنَ وَاَنْتُمْ تَنْظُرُوْنَ۝

बनी इस्राईल और फ़िरऔ़न-

इस आयत में दूसरा इनआ़म ज़िक्र किया गया है, अर्थात ऐ मदीना के यहूद! उस नेअ़मत को भी याद करो जब कि हमने समुद्र को फाड़ कर रास्ता बना दिया और तुम को डूबने से बचा लिया।

यह उस समय हुआ जब 'हज़रत मूसा' (अ़लै०) मिस्र में 'बनी इस्राईल' के घराने में पैदा होकर 'फ़िरऔ़न' के महल में जवान हुए और फिर एक मिस्री के धोखे से क़त्ल हो जाने की वजह से 'फ़िरऔ़न' की गिरफ़्तारी से बच कर मद्यन चले गये और वहाँ से काफ़ी दिनों के बाद अल्लाह के पैग़म्बर बन कर वापस आये और मुद्दतों फ़िरऔ़न को समझाते रहे। वह जब किसी तरह न माना तो हज़रत मूसा (अ़लै०) को हुक्म इलाही हुआ कि बनी इस्राईल को चुपके से लेकर मिस्र से निकल जाओ।

रास्ते में समुद्र अर्थात बह्रे क़ुल्ज़ुम के किनारे पर आ पहुँचा तो हज़रत मूसा (अ़लै०) ने अल्लाह के हुक्म से अपनी लाठी पानी पर मारी पानी दो तरफ़ हो गया। हज़रत मूसा (अ़लै०) अपनी क़ौम को लेकर चल पड़े और दूसरे किनारे पहुँच गये और फ़िरऔ़न की फ़ौज को पानी ने सब तरफ़ से आ घेरा और सब उसी में डूब गये जिस को बनी इस्राईल अपनी आँखों से देख रहे थे।

आशूरा का रोज़ः-

'इब्ने अ़ब्बास' (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) जब मदीना आए तो देखा कि यहूदी मुह़र्रम की दस्वीं तारीख़ को रोज़ः रखते हैं। आप (सल्ल०) ने उनसे पूछा, "यह कैसा रोज़ः है" तो उन्होंने कहा, "आज ही के दिन अल्लाह ने हज़रत मूसा और 'बनी इस्राईल' को उनके दुश्मनों से निजात दी थी। इसलिए हज़रत मूसा (अ़लै०) ने अल्लाह के शुक्र के तौर पर रोज़ः रखा था।" आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मैं मूसा (अ़लै०) का तुमसे ज़्यादा ह़क़दार हूँ फिर रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने रोज़ः रखा और रोज़ः रखने का हुक्म दिया।" **(बुख़ारी, मुस्लिम, नसई)**

आयत नं० 51 से 60 तक

وَإِذْ وٰعَدْنَا مُوسٰىٓ أَرْبَعِينَ لَيْلَةً ثُمَّ اتَّخَذْتُمُ الْعِجْلَ مِنْ بَعْدِهٖ وَأَنْتُمْ ظٰلِمُونَ ۝ ثُمَّ عَفَوْنَا عَنْكُمْ مِّنْ بَعْدِ ذٰلِكَ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ۝
وَإِذْ اٰتَيْنَا مُوسَى الْكِتٰبَ وَالْفُرْقَانَ لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُونَ ۝ وَإِذْ قَالَ مُوسٰى لِقَوْمِهٖ يٰقَوْمِ إِنَّكُمْ ظَلَمْتُمْ أَنْفُسَكُمْ بِاتِّخَاذِكُمُ
الْعِجْلَ فَتُوبُوٓا إِلٰى بَارِئِكُمْ فَاقْتُلُوٓا أَنْفُسَكُمْ ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَّكُمْ عِنْدَ بَارِئِكُمْ فَتَابَ عَلَيْكُمْ إِنَّهٗ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيمُ ۝ وَإِذْ قُلْتُمْ يٰمُوسٰى لَنْ
نُّؤْمِنَ لَكَ حَتّٰى نَرَى اللّٰهَ جَهْرَةً فَأَخَذَتْكُمُ الصّٰعِقَةُ وَأَنْتُمْ تَنْظُرُونَ ۝ ثُمَّ بَعَثْنٰكُمْ مِّنْ بَعْدِ مَوْتِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ۝ وَظَلَّلْنَا عَلَيْكُمُ
الْغَمَامَ وَأَنْزَلْنَا عَلَيْكُمُ الْمَنَّ وَالسَّلْوٰى كُلُوا مِنْ طَيِّبٰتِ مَا رَزَقْنٰكُمْ وَمَا ظَلَمُونَا وَلٰكِنْ كَانُوٓا أَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ۝ وَإِذْ قُلْنَا ادْخُلُوا هٰذِهِ
الْقَرْيَةَ فَكُلُوا مِنْهَا حَيْثُ شِئْتُمْ رَغَدًا وَّادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا وَّقُولُوا حِطَّةٌ نَّغْفِرْ لَكُمْ خَطٰيٰكُمْ وَسَنَزِيدُ الْمُحْسِنِينَ ۝ فَبَدَّلَ الَّذِينَ ظَلَمُوا
قَوْلًا غَيْرَ الَّذِي قِيلَ لَهُمْ فَأَنْزَلْنَا عَلَى الَّذِينَ ظَلَمُوا رِجْزًا مِّنَ السَّمَآءِ بِمَا كَانُوا يَفْسُقُونَ ۝ وَإِذِ اسْتَسْقٰى مُوسٰى لِقَوْمِهٖ فَقُلْنَا اضْرِبْ
بِّعَصَاكَ الْحَجَرَ فَانْفَجَرَتْ مِنْهُ اثْنَتَا عَشْرَةَ عَيْنًا قَدْ عَلِمَ كُلُّ أُنَاسٍ مَّشْرَبَهُمْ كُلُوا وَاشْرَبُوا مِنْ رِّزْقِ اللّٰهِ وَلَا تَعْثَوْا فِي الْأَرْضِ
مُفْسِدِينَ ۝

अनुवाद-

(51) और जब 'हमने' मूसा से चालीस रातों का वादा किया, (तूर पहाड़ पर) फिर इसके बाद तुम बछड़े (की इबादत) में लग गये, और तुम ज़ालिम थे। (52) फिर 'हमने' तुमको माफ़ कर दिया,उस अपराध के बाद भी, ताकि तुम शुक्र करो; (53) और (याद करो) जब 'हमने' मूसा को किताब (तौरात) और कसौटी (सच और झूठ में अन्तर करने वाले मोजिज़े) अ़ता की ताकि तुम सीधी राह पर चल सको; (54) और जब मूसा ने अपनी क़ौम से कहा, ''भाइयो तुमने बछड़े को (मअ़बूद) ठहराने में अपने ऊपर बहुत ज़ुल्म किया, तो तुम अपने पैदा करने वाले के सामने तौबः करो और अपनो को (जिन्होंने बछड़े की पूजा में हिस्सा लिया उन्हें) अपने हाथों से क़त्ल करो, तुम्हारे पैदा करने वाले के नज़दीक तुम्हारे हक़ में यही बेहतर है,'' तो 'उसने' तुम्हारी तौबः क़ुबूल कर ली, बेशक 'वही' तौबः क़ुबूल करने वाला, रहम वाला है। (55) और जब तुमने कहा, ''ऐ मूसा! हम तुम्हारे कहने पर ईमान नहीं लाएँगे जब तक कि अल्लाह को सामने न देख लें,'' फिर तुम पर (बिजली का) कड़ाका टूट पड़ा और तुम देख रहे थे। (56) फिर तुम्हारे मरने के बाद 'हमने' तुमको ज़िन्दा कर दिया ताकि तुम शुक्र अदा करो। (57) और 'हमने' तुम पर बादलों की छाया की, और तुम पर 'मन्न' और 'सल्वा' उतारते रहे; और 'हमने' जो तुम को पाकीज़ा चीज़ें दी हैं उनमें से खाओ, और उन्होंने 'हमारा' तो कुछ भी नहीं बिगाड़ा, बल्कि अपने ही ऊपर ज़ुल्म करते थे। (58) और जब 'हमने' कहा था, ''दाख़िल हो जाओ इस बस्ती में, जितना और जहाँ से चाहो, जी भर के खाते रहो, और सज्दे करते हुए शहर में दाख़िल होना और मुँह से "हित्ततुन" (तौबः-तौबः) कहते जाना तो 'हम' तुम्हारी ग़ल्तियाँ माफ़ कर देंगे, और भलाई पर क़ायम रहने वालों को और भी ज़्यादा देंगे।'' (59) तो जो ज़ालिम थे, उन्होंने बदल डाली वह बात जो उनसे कही गई थी तो ऐसे ज़ालिमों पर 'हमने' आसमान से भयंकर अ़ज़ाब उतारा, यह सब उनकी नाफ़रमानी की वजह से हुआ। (60) और जब मूसा ने अपनी क़ौम के लिए पानी की दुआ़ की, तो 'हमने' कहा, "चट्टान पर अपनी लाठी मारो," तो उस से बारह स्रोत फूट निकले, और हर गिरोह ने

अपना-अपना घाट जान (कर पानी पी) लिया, खाओ और पियो अल्लाह के दिये हुए (रिज़्क़) से और ज़मीन पर फ़साद करते न फिरो।

आयत नं० 51 से 60 तक की व्याख्या

51 وَاِذْ وٰعَدْنَا مُوْسٰۤى اَرْبَعِيْنَ لَيْلَةً ثُمَّ اتَّخَذْتُمُ الْعِجْلَ مِنْۢ بَعْدِهٖ وَاَنْتُمْ ظٰلِمُوْنَ۝

हज़रत मूसा (अ़लै०) का तूर पर जाना-

जब 'हज़रत मूसा' (अ़लै०) 'बह्रे कुलज़ुम' को पार करके 'वादी-ए-तीह' में पहुँचे, जहाँ से उनको अपने वतन फ़िलिस्तीन जाना था। यहीं हज़रत मूसा (अ़लै०) से अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया, 'कोहितूर पर आकर एक महीना हमारी अ़िबादत (उपासना) करो ताकि आप को किताब तौरेत अ़ता की जाए।'

अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ 'हज़रत मूसा' (अ़लै०) पहाड़ पर तशरीफ़ ले गये और अपनी क़ौम 'बनी इस्राईल' से तीस रातों का वादा करके गये कि बाद में आ जाएँगे, मगर अल्लाह तआ़ला ने वहाँ दस रात और ठहरने का हुक्म दे दिया फिर जब एक माह बाद हज़रत मूसा (अ़लै०) अपनी क़ौम के पास वापस न आये तो बनी इस्राईल में यह मश्हूर हो गया कि हज़रत मूसा (अ़लै०) का इन्तिक़ाल हो गया।

सामरी का बछड़ा बनाना-

जब 'बनी इस्राईल' हज़रत मूसा (अ़लै०) के साथ मिस्र से निकलने वाले थे, तो उन्होंने 'क़िब्ती' क़ौम के लोगों से (जो मिस्र के असली रहने वाले थे) अपने ज़ेवरात माँग लिए। यह ज़ेवरात उन्हीं लोगों के थे इनमें एक आदमी 'सामरी' नाम का था जो सुनारी का काम किया करता था। उसने उन ज़ेवरों को जमा कर के गाय के बछड़े की शक्ल बना दी और उसके मुँह में मिट्टी डाल दी। अल्लाह तआ़ला ने उस मिट्टी में ऐसा असर डाला कि उसमें से गाय की जैसी आवाज़ आने लगी, चूंकि मिस्र के लोग गाय बैल और बिल्ली पूजते थे इसलिए बनी इस्राईल भी उससे मुतास्सिर होकर जब उसकी आवाज़ सुनी तो कहने लगे यह हमारा मअ़बूद (उपास्य) है और बनी इस्राईल उसी को सज्दः करने लगे।

'बनी इस्राईल' की निगरानी के लिए 'हज़रत हारून' (अ़लै०) को 'हज़रत मूसा' (अ़लै०) छोड़ कर कोहितूर पर तशरीफ़ ले गये थे 'हारून' (अ़लै०) ने उनको बहुत समझाया कि बछड़ा बना कर पूजा न करो, यह खुला शिर्क और हज़रत मूसा (अ़लै०) को वापस आने दो, लेकिन अक्सर ने उनका कहना न माना और उल्टा उनको मारने पर तैयार हो गये। 'हज़रत हारून' (अ़लै०) चुप हो गये और थोड़े से बनी इस्राईलियों के सिवा सब उसकी पूजा करने लगे।

बछड़े का अन्जाम-

जब हज़रत मूसा (अ़लै०) 'तौरेत शरीफ़' की तख़्तियाँ लेकर तशरीफ़ लाए तो बनी इस्राईल की यह

ह़रकत देख कर बड़े ग़ज़बनाक हुए और अपने भाई ‘ह़ज़रत हारून’ पर भी गुस्सा हुए कि मैंने तुमको अपना नायब बनाया था तुमने इनको मना क्यों नहीं किया उन्होंने कहा, मैंने मना किया और ज़्यादा सख़्ती करता तो यह मुझे क़त्ल कर डालते, फिर ‘सामरी’ से ‘ह़ज़रत मूसा’ (अ़लै०) ने पूछा कि तुम ने यह ह़रकत क्यों की तो उसने पूरा क़िस्सा बता दिया।

ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) ने ‘सामरी’ को बद्दुआ़ दे दी और कहा “तू जा तेरे लिए ज़िन्दगी भर यह बात तय कर दी गई है कि तू जिसे देखेगा उससे कहेगा कि “मुझे न छूना” जिसकी वजह से वह कोढ़ी हो गया और न कोई उसके पास आता था न वह किसी को छू सकता था इसी ह़ालत में वह मर गया। फिर ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) ने उस बछड़े को जला कर समुद्र में बहा दिया।

52 ثُمَّ عَفَوْنَا عَنْكُمْ مِّنْ بَعْدِ ذٰلِكَ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝

इन आयतों में उन्हें याद दिलाया गया है कि इस जुर्म अज़ीम को अल्लाह तआ़ला ने माफ़ कर दिया ताकि वह शुक्र के तौर पर उसकी ओर रुजूअ़ हों यह उनके तौबः करने के बाद की बात है उनकी तौबः का ज़िक्र अभी एक आयत के बाद आएगा।

53 وَاِذْ اٰتَيْنَا مُوْسَى الْكِتٰبَ وَالْفُرْقَانَ لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُوْنَ ۝

इस आयत में तौरेत शरीफ़ अ़ता फ़रमाने का ज़िक्र है कि अल्लाह तआ़ला ने ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) को उन की रहनुमाई के लिए तौरेत दी जो अल्लाह तआ़ला की नेअ़मत थी। यहाँ उसी नेअ़मत को याद कराया गया है ताकि उसमें मौजूद बशारत के अनुसार रसूलुल्लाह (सल्ल०) पर ईमान लाकर और दीने इस्लाम पर अ़मल करके गुमराही से निजात ह़ासिल करें।

इस आयत में शब्द किताब से मुराद कुछ मुफ़स्सिरीन (टीकाकारों) ने तौरेत माना है जिसकी एक अहम सिफ़त ‘फ़ुरक़ान’ है अर्थात वह ह़क़ व बातिल के दर्मियान फ़र्क़ करती है और कुछ लोगों ने किताब से मुराद ‘तौरेत’ और ‘फ़ुरक़ान’ से मुराद ‘मोजिज़ात’ लिए हैं जो अल्लाह ने ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) को कुफ़्र व ईमान के दर्मियान फ़र्क़ करने के लिए दिये थे।

54 وَاِذْ قَالَ مُوْسٰى لِقَوْمِهٖ يٰقَوْمِ اِنَّكُمْ ظَلَمْتُمْ اَنْفُسَكُمْ بِاتِّخَاذِكُمُ الْعِجْلَ فَتُوْبُوْٓا اِلٰى بَارِئِكُمْ فَاقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ ۭ ذٰلِكُمْ
خَيْرٌ لَّكُمْ عِنْدَ بَارِئِكُمْ ۭ فَتَابَ عَلَيْكُمْ ۭ اِنَّهٗ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيْمُ ۝

बनी इस्राईल की तौबः-

जब ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) ‘तौरेत’ लेकर वापस ‘बनी इस्राईल’ के पास आये तो देखा कि क़ौम उस बछड़े की अ़िबादत में लग चुकी है इस पर उन्हें बड़ा गुस्सा आया और उन्हें बुत परस्ती से तौबः करने पर आमादा किया। मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि हुक्म हुआ था कि जिन लोगों ने बछड़े की अ़िबादत नहीं की थी वह उन लोगों को क़त्ल कर दें जिन्होंने बछड़े की अ़िबादत की। इस तरह क़त्ल करने के वक़्त उनके रिश्तेदार भी आ जाते, तो क़त्ल करने से हिचकिचा जाते, इस पर अल्लाह तआ़ला ने काले बादल

भेज दिये ताकि एक-दूसरे को न देखें, इस तरह सुबह से शाम तक क़त्ल करने का सिलसिला चलता रहा, फिर हज़रत मूसा (अ़लै०) और हज़रत हारून (अ़लै०) ने दुआ़ की तो बादल हटा दिया गया और तौबः नाज़िल हो गई, जबकि उस वक़्त तक सत्तर हज़ार आदमी क़त्ल किये जा चुके थे, मगर जो क़त्ल कर दिये गये उन को माफ़ कर दिया गया और जो बाक़ी रह गये उनकी तौबः क़ुबूल कर ली गई।

(बैज़ावी, इब्ने कसीर)

इससे मालूम हुआ कि कोई कैसा ही कितना बड़ा गुनाह करे उसके लिए तौबः का दरवाज़ा खुला हुआ है, मगर सच्चे दिल से इस्लाम क़ुबूल करे, तौहीद व रिसालत पर ईमान लाए, तो उसकी तौबः क़ुबूल हो जाती है।

55-56 وَإِذْ قُلْتُمْ يَٰمُوسَىٰ لَن نُّؤْمِنَ لَكَ حَتَّىٰ نَرَى ٱللَّهَ جَهْرَةً فَأَخَذَتْكُمُ ٱلصَّٰعِقَةُ وَأَنتُمْ تَنظُرُونَ ۝ ثُمَّ بَعَثْنَٰكُم مِّنۢ بَعْدِ مَوْتِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ۝

बनी इस्राईल का सवाल-

बनी इस्राईल ने कहा कि आप जो फ़रमा रहे हैं कि यह अल्लाह की किताब है इसकी क्या दलील है? हम तो इसको जब मानेंगे जबकि अल्लाह तआ़ला हमसे ख़ुद फ़रमाए कि यह मेरी किताब है। 'हज़रत मूसा' (अ़लै०) ने फ़रमाया, "चलो मेरे साथ जो लोग चलें वह रोज़ः रखें और पाक व साफ़ होकर चलें।" तो हज़रत मूसा (अ़लै०) सत्तर आदमियों को ले गये और यह अल्लाह का कलाम सुनकर मुतमइन (सन्तुष्ट) हुए मगर फिर कहने लगे, "हम अल्लाह को अपने सामने देख लें तब मानेंगे", इनका यह कहना था कि इनको बिजली की कड़क ने इनकी जान ले ली। जब यह हुआ तो हज़रत मूसा (अ़लै०) सोचने लगे कि बनी इस्राईल क्या कहेंगे कि यह कैसे हुआ। इस पर हज़रत मूसा (अ़लै०) ने दुआ़ की तो अल्लाह तआ़ला ने उनको दोबारा ज़िन्दा कर दिया। यह अल्लाह का उन पर एक और एहसान था।

(इब्ने कसीर, बैज़ावी)

यह आयत इस बात की दलील है कि दुनिया में अल्लाह तआ़ला को नहीं देखा जा सकता, लेकिन आख़िरत में मोमिनीन, सादिक़ीन अल्लाह को देख सकेंगे।

57 وَظَلَّلْنَا عَلَيْكُمُ ٱلْغَمَامَ وَأَنزَلْنَا عَلَيْكُمُ ٱلْمَنَّ وَٱلسَّلْوَىٰ ۖ كُلُوا۟ مِن طَيِّبَٰتِ مَا رَزَقْنَٰكُمْ ۖ وَمَا ظَلَمُونَا وَلَٰكِن كَانُوٓا۟ أَنفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ۝

मैदान-ए-तीह में बनी इस्राईल का मन्न व सलवा

बादलों का साया और 'मन्न व सलवा' का क़िस्सा इस तरह वादि-ए-तीह में पेश आया कि बनी इस्राईल का असली वतन मुल्क शाम था। 'हज़रत यूसुफ़' (अलै०) के समय में यह मिस्र आये थे और यहीं रहने लगे और मुल्क शाम में 'अमालका' नामी क़ौम का ग़ल्बा हो गया। फ़िरऔन जब डूब गया और यह लोग सन्तुष्ट हो गये तो अल्लाह तआ़ला का इन को हुक्म हुआ कि 'अ़मालक़ा' से जिहाद करो और अपनी असली जगह को उन के क़ब्ज़े से छुड़ा लो। बनी इस्राईल इस इरादे पर मिस्र से चले और उन

के हुदूद में पहुँच कर जब 'अमालूक़ा' के ज़ोर व ताक़त का हाल मालूम हुआ तो हिम्मत हार बैठे और जिहाद से साफ़ इन्कार कर दिया, अल्लाह तआ़ला ने उन को उस इन्कार की यह सज़ा दी, कि चालीस साल तक एक मैदान में परेशान फिरते रहे, घर पहुँचना नसीब न हुआ।

यह मैदान बहुत बड़ा न था बल्कि मिस्र और सीरिया के दर्मियान लगभग दस मील का रक़्बा था। यह लोग अपने वतन मिस्र, जाने के लिए दिन भर सफ़र करते और रात को किसी मन्ज़िल पर उतरते। सुबह देखते कि जहाँ से चले थे वहीं पर हैं। इसी तरह चालीस साल परेशान उस मैदान में चलते रहे, इसीलिए इस मैदान को 'वादि-ए-तीह' कहा जाता है, 'तीह' के माने ही होते हैं परेशानी के।

यह 'वादि-ए-तीह' एक खुला मैदान था न उस में कोई इमारत थी न कोई पेड़ पौधा जिसके नीचे धूप और सर्दी, गर्मी से बचा जा सके और न यहाँ कोई खाने-पीने का सामान था, न पहनने के लिए लिबास, मगर अल्लाह तआ़ला ने मोअ़जिज़े के तौर पर हज़रत मूसा (अ़लै०) की दुआ़ से उसी मैदान में उन की तमाम ज़रूरियात का इन्तिज़ाम फ़रमा दिया।

"मन्न व सल्वा"-

मुजाहिद (रह़०) ने कहा **'मन्न'** एक क़िस्म की मीठी गोंद है और **'सल्वा'** बेड़ (लाल गुड़िया) की तरह़ का एक परिन्दा था। नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया "کھنبی" (जो ख़ुद्रव होती है।) **'मन्न'** की क़िस्म से है (क्योंकि वह भी बिला मशक़्क़त ह़ासिल हो जाती है) और उस के पानी में आँख के लिए शिफ़ा है।" **(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् तफ़्सीर, बाब 4, ह़दीस 4478)**

बनी इस्राईल की ज़रुरतें-

बनी इस्राईल ने धूप की शिकायत की तो अल्लाह तआ़ला ने एक सफ़ेद बादल का टुकड़ा साया कर दिया और भूख से पेट भरने के लिए मन्न व सल्वा नाज़िल फ़रमा दिया। पेड़ों से एक मीठी चीज़ पैदा कर दी, जिसे यह लोग इकट्ठा कर लेते थे, उसी को 'मन्न' कहा गया है और बटेरें उन के पास जमा हो जातीं वहाँ से भागती न थीं, यह उन को पकड़ लेते और ज़ब्ह़ करके उन्हें खाते, इसी को 'सल्वा' कहा गया है। यह लोग दोनों चीज़ों से पेट भर लेते थे। इन्हें जब पानी की ज़रूरत पेश आई तो ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) को एक पत्थर पर लाठी मारने का हुक्म दिया गया, उस पत्थर से चश्में फूट पड़े जैसा कि दूसरी आयतों में ज़िक्र है। इन लोगों ने रात के अंधेरे की शिकायत की तो अल्लाह तआ़ला ने ग़ैब से एक रौशनी उन के मुहल्ले के दर्मियान क़ायम कर दी, कपड़े मैले हुए और फटने लगे तो लिबास की जरूरत हुई इस पर अल्लाह तआ़ला ने ऐसा कर दिया कि उन के कपड़े न मैले हों न फटें, और बच्चों के कपड़े उन के जिस्म के बढ़ने के साथ-साथ उसी मिक़्दार में बढ़ते रहे। **(तफ़्सीर क़ुर्तुबी)**

और इन्हें यह भी हुक्म हुआ था कि ज़रूरत के अनुसार ख़र्च ले लिया करें, आइन्दा के लिए जमा करके न रखें, मगर उन लोगों ने उस में भी इख़्तिलाफ़ किया और गोश्त आदि बचा कर रख लेते तो रखा हुआ गोश्त सड़ जाता। इस तरह़ नाफ़रमानी कर के अपना ही नुक़्सान करते रहे।

58 وَإِذْ قُلْنَا ادْخُلُوا هَٰذِهِ الْقَرْيَةَ فَكُلُوا مِنْهَا حَيْثُ شِئْتُمْ رَغَدًا وَادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا وَقُولُوا حِطَّةٌ
نَغْفِرْ لَكُمْ خَطَايَاكُمْ ۚ وَسَنَزِيدُ الْمُحْسِنِينَ

बस्ती में अदब के साथ दाख़िल होने का हुक्म-

हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, बनी इस्राईल को यह हुक्म दिया गया था कि शहर के दरवाज़े में झुक कर दाख़िल होना और ज़बान से 'हित्ततुन' कहना (यानी गुनाहों की बख़्शिश माँगना) लेकिन वह अपनी सुरीनों के बल घसिटते हुए दाख़िल हुए और 'हित्ततुन' के बजाए "हब्बतुन फ़ी सुम्बुलातिन" (दाना बाली के अन्दर) कहने लगे। **(बुख़ारी)**

यह कौन सी बस्ती है जिसमें दाख़िल होने का इस आयत में ज़िक्र है। कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया है कि इस से 'बैतुल् मक़्दिस' मुराद है और कुछ हज़रात ने फ़रमाया है कि यह 'अरीहा' बस्ती थी जिसमें दाख़िल होने का हुक्म हुआ था।

मुफ़स्सिर 'इब्ने कसीर' के अनुसार पहला कथन ही सही है, क्योंकि यह मिस्र से आकर अपने इलाक़े में जा रहे थे और 'अरीहा' उनके रास्ते में नहीं पड़ता था और फिर लिखते हैं कि यह वाक़िआ 'हज़रत मूसा' (अ़लै०) के ज़माने का नहीं है, बल्कि यह उस वक़्त का है, जबकि 'बनी इस्राईल' चालीस साल मैदान में हैरान फिर रहे थे जो हज़रत 'यूशअ़ बिन नून' (अ़लै०) के साथ बैतुल् मक़्दिस में दाख़िल हुए। उन के इलाक़े में (जिसे यह छोड़कर मिस्र चले गये थे) क़ौम अ़मालूक़ा आबाद थी वह बड़े क़द और बड़े ताक़त वाले लोग थे।

हज़रत मूसा (अ़लै०) ने जब 'बनी इस्राईल' से फ़रमाया कि चलो इस ज़मीन में दाख़िल हो जाओ जो अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे लिए लिख दी है, तो उन लोगों ने कहा कि इस में तो बड़े ख़तरनाक क़िस्म के लोग आबाद हैं। हमारे बस का नहीं है कि हम इन से मुक़ाबिला करें। तुम जाओ और तुम्हारा रब, दोनों वहाँ जा कर क़िताल करें, उन की इस हरकत पर चालीस साल के लिए 'बैतुल् मक़्दिस' की ज़मीन उन पर हराम कर दी गई फिर हज़रत यूशअ़ (अ़लै०) की अगुवई में 'बैतुल् मक़्दिस' फ़तेह हुआ।

59 فَبَدَّلَ الَّذِينَ ظَلَمُوا قَوْلًا غَيْرَ الَّذِي قِيلَ لَهُمْ فَأَنْزَلْنَا عَلَى الَّذِينَ ظَلَمُوا رِجْزًا مِنَ السَّمَاءِ بِمَا كَانُوا يَفْسُقُونَ

'बैतुल् मक़्दिस' में दाख़िला-

जब 'बैतुल मक्दिस' में दाख़िल होने लगे तो हुक्म हुआ कि अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करते हुए दाख़िल हों, कि उस ने उन का इलाक़ा उन को वापस फ़रमाया और उस में फ़तेह दी और उनको 'मैदाने तीह' की हैरानी और परेशानी से निजात दी और उस शुक्र के इज़्हार के लिए अ़मली तौर पर यह तज्वीज़ फ़रमाया कि 'झुक कर' अदब से दाख़िल हों और ऐसी कोई हालत न हो कि मज़ाक़ बन जाए और यह भी हुक्म हुआ "हित्ततुन" कहते हुए दाख़िल हों जिसके माने यह हैं कि ऐ अल्लाह! हम अपने गुनाहों के बख़्शिश का सवाल करते हैं।

अल्लाह तआ़ला ने उन से वादा फ़रमाया कि ऐसा करोगे तो हम तुम्हारी ग़ल्तियों को माफ़ कर देंगे और जो लोग अच्छे काम करने वाले हैं उनके सवाब में और ज़्यादती कर देंगे। हुक्म क्या हुआ था और ह़रकत क्या की। इसी को फ़रमाया कि ज़ालिमों ने इस को बदल दिया, जिस का हुक्म दिया गया था, अ़मल को तो इस तरह बदला कि झुके हुए दाख़िल होने के बजाए बच्चों की तरह अपने धड़ों (पुट्ठों के बल) पर घसिटते हुए दाख़िल हुए। जिस में एक तरह का मज़ाक़ था और जो माफ़ी माँगने का हुक्म हुआ था उस में इस तरह शब्द बदल डाला कि 'हित्ततुन की जगह' "ह़ब्बतुन फ़ी शअ़ीरतिन" कहते हुए दाख़िल हुए। **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

चूँकि इस में अल्लाह के हुक्म की तौहीन थी इसलिए अल्लाह ने ताऊन (संगीन बीमारी) में मुब्तिला कर दिया।

इस से मुराद ताऊन है। जैसा कि ह़दीस में है, "ताऊ़न एक तरह़ का अ़ज़ाब है जो पहले-पहले बनी इस्राईल के एक गिरोह में नाज़िल किया गया था।" या यूँ फ़रमाया "अगले लोगों पर।" (यहाँ रावी को शुब्हा है) "फिर जब तुम सुनो कि किसी मुल्क में ताऊन फैला हुआ है तो वहाँ मत जाओ और अगर वह ज़मीन उस की लपेट में आ जाए जहाँ तुम्हारा क़याम है तो वहाँ से फ़रार होने की नियत से न निकलो। **(सह़ीह़ बुख़ारी, अह़ादीसुल् अम्बिया, बाब 54, ह़दीस 3473)**

60 وَاِذِ اسْتَسْقٰى مُوْسٰى لِقَوْمِهٖ فَقُلْنَا اضْرِبْ بِّعَصَاكَ الْحَجَرَ ۭ فَانْفَجَرَتْ مِنْهُ اثْنَتَا عَشْرَةَ عَيْنًا ۭ قَدْ عَلِمَ
كُلُّ اُنَاسٍ مَّشْرَبَهُمْ ۭ كُلُوْا وَاشْرَبُوْا مِنْ رِّزْقِ اللّٰهِ وَلَا تَعْثَوْا فِى الْاَرْضِ مُفْسِدِيْنَ ۝

पत्थर से पानी के स्रोत-

यह क़िस्सा भी मैदाने तीह में पेश आया। बनी इस्राईल ने पानी की माँग की तो ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) ने अल्लाह से दुआ़ की, जिस पर अल्लाह ने वह्य की कि "आप अपनी लाठी पत्थर पर मारिये पानी उबल पड़ेगा।" ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) ने ऐसा ही किया तो 'बनी इस्राईल' के सभी कबीलों के अलग-अलग बारह चश्मे (स्रोत) जारी हो गये।

❖

आयत नं० 61 से 71 तक

وَإِذْ قُلْتُمْ يَا مُوسَىٰ لَن نَّصْبِرَ عَلَىٰ طَعَامٍ وَاحِدٍ فَادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُخْرِجْ لَنَا مِمَّا تُنبِتُ الْأَرْضُ مِن بَقْلِهَا وَقِثَّائِهَا وَفُومِهَا وَعَدَسِهَا
وَبَصَلِهَا ۖ قَالَ أَتَسْتَبْدِلُونَ الَّذِي هُوَ أَدْنَىٰ بِالَّذِي هُوَ خَيْرٌ ۚ اهْبِطُوا مِصْرًا فَإِنَّ لَكُم مَّا سَأَلْتُمْ ۗ وَضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةُ وَالْمَسْكَنَةُ
وَبَاءُوا بِغَضَبٍ مِّنَ اللَّهِ ۗ ذَٰلِكَ بِأَنَّهُمْ كَانُوا يَكْفُرُونَ بِآيَاتِ اللَّهِ وَيَقْتُلُونَ النَّبِيِّينَ بِغَيْرِ الْحَقِّ ۗ ذَٰلِكَ بِمَا عَصَوا وَّكَانُوا يَعْتَدُونَ ۝
إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَالَّذِينَ هَادُوا وَالنَّصَارَىٰ وَالصَّابِئِينَ مَنْ آمَنَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَهُمْ أَجْرُهُمْ عِندَ رَبِّهِمْ
وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ۝ وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَكُمْ وَرَفَعْنَا فَوْقَكُمُ الطُّورَ خُذُوا مَا آتَيْنَاكُم بِقُوَّةٍ وَاذْكُرُوا مَا فِيهِ لَعَلَّكُمْ
تَتَّقُونَ ۝ ثُمَّ تَوَلَّيْتُم مِّن بَعْدِ ذَٰلِكَ ۖ فَلَوْلَا فَضْلُ اللَّهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهُ لَكُنتُم مِّنَ الْخَاسِرِينَ ۝ وَلَقَدْ عَلِمْتُمُ الَّذِينَ اعْتَدَوْا مِنكُمْ
فِي السَّبْتِ فَقُلْنَا لَهُمْ كُونُوا قِرَدَةً خَاسِئِينَ ۝ فَجَعَلْنَاهَا نَكَالًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهَا وَمَا خَلْفَهَا وَمَوْعِظَةً لِّلْمُتَّقِينَ ۝ وَإِذْ قَالَ مُوسَىٰ
لِقَوْمِهِ إِنَّ اللَّهَ يَأْمُرُكُمْ أَن تَذْبَحُوا بَقَرَةً ۖ قَالُوا أَتَتَّخِذُنَا هُزُوًا ۖ قَالَ أَعُوذُ بِاللَّهِ أَنْ أَكُونَ مِنَ الْجَاهِلِينَ ۝ قَالُوا ادْعُ لَنَا رَبَّكَ
يُبَيِّن لَّنَا مَا هِيَ ۚ قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ إِنَّهَا بَقَرَةٌ لَّا فَارِضٌ وَلَا بِكْرٌ عَوَانٌ بَيْنَ ذَٰلِكَ ۖ فَافْعَلُوا مَا تُؤْمَرُونَ ۝ قَالُوا ادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُبَيِّن
لَّنَا مَا لَوْنُهَا ۚ قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ إِنَّهَا بَقَرَةٌ صَفْرَاءُ فَاقِعٌ لَّوْنُهَا تَسُرُّ النَّاظِرِينَ ۝ قَالُوا ادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُبَيِّن لَّنَا مَا هِيَ إِنَّ الْبَقَرَ تَشَابَهَ
عَلَيْنَا وَإِنَّا إِن شَاءَ اللَّهُ لَمُهْتَدُونَ ۝ قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ إِنَّهَا بَقَرَةٌ لَّا ذَلُولٌ تُثِيرُ الْأَرْضَ وَلَا تَسْقِي الْحَرْثَ مُسَلَّمَةٌ لَّا شِيَةَ فِيهَا
قَالُوا الْآنَ جِئْتَ بِالْحَقِّ ۚ فَذَبَحُوهَا وَمَا كَادُوا يَفْعَلُونَ ۝

अनुवाद-

(61) और जब तुमने कहा, ''ऐ मूसा! हम को सब्र न होगा एक ही तरह के खाने पर, तो अपने 'रब' से हमारे लिए दुआ़ करो कि हम को ज़मीन में उगने वाली सब्ज़ी, ककड़ी, गेहूँ, मसूर और प्याज़ निकाल कर दे।'' (मूसा) बोले, ''क्या किसी अच्छी चीज़ को छोड़ कर, बदले में घटिया चीज़ को लेना चाहते हो? तब तो किसी शहरी आबादी में जाओ, जो तुम माँगते हो वहाँ मिलेगा।'' और (आख़िरकार) उन पर ज़िल्लत थोप दी गई, और उन्होंने अल्लाह का ग़ज़ब अपने सर ले लिया; यह इसलिए कि वे अल्लाह की आयतों से इन्कार करते थे, और नबियों को बिला वजह मार डाला करते थे, यह इसलिए हुआ कि हुक्म को न मानते और हद(सीमा) का उल्लंघन करते थे। (62) जो लोग ईमान लाए और जो भी यहूदी और ईसाई और साबिई, अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान लाए और नेक काम करे तो उनका बदला उनके रब के यहाँ मौजूद है, और न तो उनको डर होगा और न वह दुखी होंगे। (63) और जब 'हमने' तुमसे अहद (वचन) लिया, और "तूर" पहाड़ को तुम्हारे ऊपर उठा खड़ा किया, (और कहा,) जो चीज़ (किताब) 'हमने' तुम्हें दी है उसे मज़बूती के साथ पकड़ो, और जो कुछ उसमें है उसे याद रखो ताकि तुम परहेज़गार (संयमी) बन जाओ। (64) फिर इसके बाद भी तुम फिर गये, तो अगर अल्लाह का फ़ज़्ल और उसकी रहमत तुम पर न होती, तो तुम घाटे में पड़ गये होते। (65) और तुम उन लोगों को खूब जानते हो, जो हफ़्ते (शनिवार) को (मछली का शिकार करने में) हद से आगे बढ़ गये थे, तो 'हमने' उनसे कहा, धिक्कारे, फिट्कारे हुए बन्दर बन जाओ; (66) फिर 'हमने' इस घटना को उन लोगों के लिए जो उस वक़्त मौजूद थे और उन लोगों के लिए

भी जो बाद में आने वाले थे चेतावनी और (अल्लाह से) डरने वालों के लिए नसीहत बना दिया। (67) और जब मूसा ने अपनी क़ौम से कहा, ''अल्लाह तुमको हुक्म देता है कि एक गाय (या बैल) ज़ब्ह करो।'' वे कहने लगे, ''क्या आप हमसे हंसी करते हैं?'' (मूसा ने) कहा, ''अल्लाह की पनाह माँगता हूँ इससे कि मैं नादान बनूँ।'' (68) कहने लगे, ''अपने रब को पुकारो! वह हमें साफ़-साफ़ बताएं कि वह गाय (या बैल) कैसी हो।'' (मूसा) बोले, 'वह' (अल्लाह) फ़रमाता है कि वह गाय न बूढ़ी हो न बच्चा, बल्कि दोनों के बीच की हो, बस तुम को जो हुक्म दिया गया है उसको पूरा करो,'' (69) उन्होंने कहा, ''अपने 'रब' से हमारे लिए दुआ़ कीजिए, 'वह' हमको अच्छी तरह समझा दे कि उसका रंग कैसा हो।'' (मूसा ने) कहा, ''अल्लाह फ़रमाता है, कि उस गाय का रंग खूब गहरा ज़र्द हो कि देखने वालों को भला लगे;'' (70) उन्होंने कहा, ''अपने रब से हमारे लिए पूछिए, कि हमको अच्छी तरह समझा दे कि वह क्या (गुण रखती) हो, हमको तो (इस रंग की बहुत सी) गाय एक ही तरह की मालूम होती हैं, और अल्लाह ने चाहा तो हम ज़रूर ठीक-ठीक पता लगा लेंगे;'' (71) (मूसा ने) कहा, ''वह अल्लाह फ़रमाता है, कि वह न किसी काम काज में ली गई हो, न ज़मीन जोतने में, और न खेती के सिंचाई में हो, हर तरह बे ऐब हो, उसमें किसी तरह का दाग़ न हो।'' वे बोले, ''अब तुम ठीक (पहचान) लाये हो फिर उस को (बड़ी मुश्किल से) ज़ब्ह किया और लगता न था कि वे ऐसा करेंगे?

आयत नं० 61 से 71 तक की व्याख्या

61 وَإِذْ قُلْتُمْ يٰمُوسٰى لَنْ نَّصْبِرَ عَلٰى طَعَامٍ وَّاحِدٍ فَادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُخْرِجْ لَنَا مِمَّا تُنْۢبِتُ الْاَرْضُ مِنْۢ بَقْلِهَا وَقِثَّآئِهَا
وَفُوْمِهَا وَعَدَسِهَا وَبَصَلِهَا ۗ قَالَ اَتَسْتَبْدِلُوْنَ الَّذِىْ هُوَ اَدْنٰى بِالَّذِىْ هُوَ خَيْرٌ ۗ اِهْبِطُوْا مِصْرًا فَاِنَّ لَكُمْ مَّا
سَاَلْتُمْ ۗ وَضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةُ وَالْمَسْكَنَةُ ۗ وَبَآءُوْ بِغَضَبٍ مِّنَ اللّٰهِ ۗ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَانُوْا يَكْفُرُوْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ
وَيَقْتُلُوْنَ النَّبِيّٖنَ بِغَيْرِ الْحَقِّ ۗ ذٰلِكَ بِمَا عَصَوْا وَّكَانُوْا يَعْتَدُوْنَ ﴿۶۱﴾

बनी इस्राईल का प्याज़ लहसुन-

'मैदाने तीह' में बनी इस्राईल को दोनों वक़्त खाने के लिए 'मन्न व सल्वा' मिलता था जिससे उनका जी भर गया तो मिस्र के ज़माने की चीज़ें याद आने लगीं और हज़रत मूसा (अ़लै०) से माँग की कि हमें तो खाने के लिए सब्ज़ी ककड़ी, लहसनु, प्याज़ और दाल चाहिए। हज़रत मूसा (अ़लै०) ने डाँटा और कहा कि तुम कैसे लोग हो! कि अच्छा खाना छोड़ कर घटिया खाने का सवाल करते हो, यह चीज़ें तो हर शहर में मिलती हैं अगर यही तुम को चाहिए तो किसी शहर में चले जाओ। यह चीज़ें इस क़ाबिल नहीं कि इन्हें तुम्हारे लिए अल्लाह से इस चट्यल मैदान में माँगू।

जब 'बनी इस्राईल' पर, अल्लाह की नेअ़मतों के ज़िक्र के बाद उनकी बुराईयों का ज़िक्र किया तो अल्लाह ने उनके कुफ़्र और नबियों के क़त्ल जैसे जुर्मों का ज़िक्र करके उनके तमाम बुरे आ़माल का नतीजा बयान कर दिया कि अल्लाह ने उन पर हमेशा के लिए ज़िल्लत व मस्कनत (फ़क़ीरी) मुसल्लत

कर दी। इसलिए वह दुनिया में जिस ज़मीन पर रहे हर क़ौम ने उन्हें ज़लील किया। इसी लिए यहूदियों से बढ़ कर ज़लील और माल का लालची कोई दूसरी क़ौम नहीं है। इनका मालदार होते हुए भी पैसे के लिए जान देना और थोड़ा सा नुक़्सान हो जाने पर हार्टफ़ेल हो जाना, यह सब बातें दिली कमज़ोरी को ज़ाहिर करती हैं।

62 إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَالَّذِينَ هَادُوا وَالنَّصَارَىٰ وَالصَّابِئِينَ مَنْ آمَنَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَعَمِلَ
صَالِحًا فَلَهُمْ أَجْرُهُمْ عِندَ رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ۝

إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَالَّذِينَ هَادُوا ‘इब्ने अबी हातिम’ और ‘अ़दी’ ने अपनी सनद में ‘इब्ने अबी नजीह़’ के वास्ते से मुजाहिद से नक़्ल किया है, ह़ज़रत सल्मान फ़ारसी (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से उन ह़ज़रात के दीन से सम्बन्धित सवाल किया कि जिन के दीन पर मैं ख़ुद था। चुनांचे मैंने आप से उन की नमाज़ और अ़िबादत का ज़िक्र किया इस पर यह आयते करीमा नाज़िल हुई।

और ‘वाह़िदी’ ने ‘अ़ब्दुल्लाह बिन कसीर’ के वास्ते से मुजाहिद से नक़्ल किया है कि जब ह़ज़रत सल्मान (रज़ि०) ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से अपने साथियों का ज़िक्र किया तो रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कि वह सब दोज़ख़ में हैं। ह़ज़रत सल्मान (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि यह फ़रमान सुनते ही नज़रों के सामने अन्धेरा छा गया, तब यह आयते करीमा नाज़िल हुई। फ़रमाते हैं कि इस आयत के नाज़िल होने से जैसे- मेरे ऊपर से पहाड़ हट गया और ‘इब्ने जरीर’ और ‘इब्ने अबी ह़ातिम’ ने ‘सुद्दी’ से नक़्ल किया है कि यह आयते करीमा ह़ज़रत सल्मान फ़ारसी (रज़ि०) के साथियों के बारे में नाज़िल हुई है। **(तफ़्सीर इब्ने अ़ब्बास)**

इस आयत से मालूम हुआ कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की बेअ़सत (अभ्युदय) जब से हुई है यहूदी, ईसाई, साबिअ़ीन और हर क़ौम के लिए कामियाबी केवल ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की बताई हुई शरीअ़त में है।

यहूद का अर्थ-

“अल्लज़ीना हादू” से यहूद मुराद हैं, ‘हादा’ ‘यहूदा’ माने ‘तौबः करना’, चूंकि इन लोगों ने गाय के बछ़ड़े की अ़िबादत से तौबः की थी। इसलिए इन्हें इस शब्द से याद किया जाता है। इनका मशहूर नाम ‘यहूद’ है। पूरी जमाअ़त को ‘यहूद’ और एक व्यक्ति को ‘यहूदी’ कहते हैं। जिन्हें अब (Jews) जिउस कहते हैं।

कुछ मुफ़स्सिरीन की राय है कि यह लोग ह़ज़रत याक़ूब (अ़लै०) के सब से बड़े बेटे यहूदा की ओर संकेत है, इसलिए इन्हें यहूदी कहा जाता है। मगर कुछ लोगों का कहना है कि यह शब्द ‘तहूद’ से निकला है जो ‘ह़रकत करने’ के माने में है। चूंकि यह लोग तौरेत पढ़ते हुए ‘ह़रकत’ करते थे इसलिए इनका यह लक़ब पड़ गया।

यहूद, यहूज़ा शब्द से निकला है जो कि याक़ूब (अ़लै०) का एक बेटा था और बाद में ह़ज़रत मूसा

(अ़लै०) के मानने वालों को 'यहूदी' कहा जाने लगा। 'यहूद' उन का मज़हबी नाम है और मौजूदा दौर में 'सहयूनी' (Zion) उन का सियासी नाम है। हज़रत ईसा (अ़लै०) 'बैतुलू लह़म' के गाँव 'नासिरा' में पैदा हुए। यहूदी उन्हें 'नासिरा' का बिद्अ़ती फ़िरक़ा कह कर पुकारते थे, इसी लिए इन्हें 'नसारा' कहा जाने लगा।

अल्लाह तआ़ला ने ईसाईयों को 'नसारा' यानी 'अल्लाह के अन्सार' के नाम से याद करके उन पर एह़सान फ़रमाया है। जबकि वह ख़ुद को 'मसीह़ी' कहते हैं जो कि शख़्सी निस्बत है। 'साबिअ़ीन' बेदीन या अपना दीन छोड़ने वाले को कहते हैं, इसी तरह़ 'आतिश परस्तों' (अग्नि पूजक) या सितारा परस्तों को भी कहते हैं। एक रिवायत के मुताबिक़ यह ईसाईयों का एक फ़िर्क़ा था।

अन्नसारा-

नसारा उन को कहते हैं जो ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) के दीन को मानने वाले हैं। कुछ लोगों के अनुसार यह शब्द नुस्रत से बना है। जब ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) ने **'मन अन्सारी इलल्लाह'** फ़रमाया तो उन के हवारीईन ने **"नह़नु अन्सारुल्लाह"** कहा जैसा कि सूरः सफ़ में है। शब्द 'नसारा' का जमा 'नसरान' भी बताया गया है जैसा कि 'सुकरान' की जमा 'सकारा' है। एक बात यह भी कही जाती है कि यह लोग एक बस्ती में ठहरे थे जिस को 'नसारा' कहा जाता था, इस की वजह से इन को 'नसारा' कहा गया है।

'नसारा' से वह लोग मुराद हैं जो ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) के मानने का दावा करते हैं। इन दावेदारों में वह भी थे जो उनके अस्ली दीन पर थे और उनके दीन में किसी तरह की तब्दीली नहीं की और वह लोग भी हैं जिन्होंने उनका दीन बदल दिया और ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) को अल्लाह तआ़ला का बेटा बना दिया, फिर ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) और उनकी वालिदा को भी मअ़बूद मानने लगे। कुर्आन मजीद ने उन को किसी जगह ईसाई नहीं फ़रमाया यानी ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) की ओर निस्बत नहीं की इसलिए कि मुश्रिक उनकी ओर मन्सूब नहीं हो सकते। कुर्आन ने उन के लिए शब्द 'नसारा' प्रयोग किया है।

'ह़ज़रत जाबिर' बिन अ़ब्दुल्लाह (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, ईसा (अ़लै०) इब्ने मरयम नाज़िल होंगे। मुसलमान उन्हें इमामत कराने की दअ़वत देंगे लेकिन वह फ़रमाएँगे तुम में से ही कुछ लोग एक दूसरे के इमाम हों। यह अल्लाह की जानिब से इस उम्मत का एज़ाज़ होगा। **(मुस्लिम)**

अस्साबिईन-

'साबिईन' कुर्आन के नाज़िल होने के ज़माने में एक फ़िर्क़ा था जिसे ह़ज़रत मुजाहिद (रह़०) ने फ़रमाया कि यह लोग 'मजूसियत' 'यहूदियत' और 'नस्रानियत' के दर्मियान थे इनका अपना कोई मज़हब न था। ह़ज़रत ह़सन बसरी (रह़०) ने फ़रमाया यह लोग फ़रिश्तों की इ़बादत करते थे, 'इब्ने अबी ज़िनाद' ने अपने वालिद से नक़्ल किया है कि यह वह लोग थे जो ईराक़ के क़रीब रहते थे और तमाम नबियों पर ईमान लाते थे और साल भर में तीस रोज़े रखते थे और यमन की ओर रुख़ करके नमाज़ पढ़ते थे।

'अ़ब्दुर्रह़मान बिन ज़ैद' ने कहा है कि यह लोग 'मूसल' के जज़ीरा में रहते थे और यह केवल **'लाइलाह इल्लल्लाह'** कहते थे।

'ख़लील' का क़ौल है कि इनका दीन 'नसारा' के दीन से मिलता जुलता था, इनका क़बीला उत्तरी हब्शा की ओर था। यह लोग समझते थे कि हम नूह (अ़लै०) के दीन पर हैं।

'वह़ब बिन मुनब्बा' का कहना है कि यह लोग न यहूदियत के दीन पर थे, न नस्रानियत पर, न मजूसियत पर, इसी तरह़ यह मुश्रिक भी न थे। यह फ़ित्रत (नेचर) पर बाक़ी थे, इनका कोई मुक़र्रर (निर्धारित) दीन न था।

कुछ लोगों का कहना है कि यह वह लोग हैं जो यहूद व नसारा का दीन छोड़ कर फ़रिश्तों की अ़िबादत करते थे। यहाँ इस बात की ख़बर दी गई है कि तौबः का दरवाज़ा यहूद और ग़ैर यहूद सब के लिए खुला हुआ है। चाहे गुनाह ऐसे हों जो अल्लाह के ग़ुस्सा का ज़रिया हों जैसे यहूद के गुनाह थे, तौबः कर लेने और नबी (सल्ल०) पर ईमान लाने के बाद दुनिया व आख़िरत में वही अज्र मिलेगा जो दूसरे मोमिनों को मिलेगा।

इसमें यह भी बताया गया है कि पिछली क़ौमों में से जिन लोगों ने अपने-अपने ज़माने के नबी को माना उनको अल्लाह अच्छा बदला देगा और यह ह़ाल क़ियामत तक रहेगा कि नबी करीम (सल्ल०) की क़ियामत तक जितने लोग बात मानेंगे उनको हमेशा के लिए भलाई मिलेगी और किसी तरह का डर और ख़ौफ़ नहीं होगा।

63-66

وَاِذْ اَخَذْنَا مِيْثَاقَكُمْ وَرَفَعْنَا فَوْقَكُمُ الطُّوْرَ ۭ خُذُوْا مَآ اٰتَيْنٰكُمْ بِقُوَّةٍ وَّاذْكُرُوْا مَا فِيْهِ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ۝
ثُمَّ تَوَلَّيْتُمْ مِّنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ ۚ فَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ لَكُنْتُمْ مِّنَ الْخٰسِرِيْنَ ۝ وَلَقَدْ عَلِمْتُمُ
الَّذِيْنَ اعْتَدَوْا مِنْكُمْ فِي السَّبْتِ فَقُلْنَا لَهُمْ كُوْنُوْا قِرَدَةً خٰسِـــِٕيْنَ ۝ فَجَعَلْنٰهَا نَكَالًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهَا وَمَا
خَلْفَهَا وَمَوْعِظَةً لِّلْمُتَّقِيْنَ ۝

बनी इस्राईल का अहद

जब ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) तौरेत लेकर आये और 'शरीअ़त' बनी इस्राईल को मिल गई तो बनी इस्राईल से अ़हद लेने के वक़्त अल्लाह ने अपनी क़ुद्रत ज़ाहिर करने के लिए तूर पहाड़ को उनके सर के ऊपर उठा दिया और कहा कि इसे पूरी ताक़त के साथ संभालो और जो कुछ इसमें है उसे याद करो। उन्होंने उस वक़्त तो अहद कर लिया, लेकिन बाद में उसका कुछ ख़याल नहीं रखा और उसे तोड़ डाला। अंजाम तो यह होना चाहिए था कि अल्लाह का अ़ज़ाब उनको पकड़ लेता, लेकिन अल्लाह ने उन पर रह़म किया और उनकी रहनुमाई के लिए नबियों को भेजा कि शायद वह राहे रास्त पर आ जाएँ।

सनीचर के दिन का शिकार-

इस आयत में यहूद की एक बस्ती वालों के अ़हद के ख़िलाफ़ बहाना बनाने का ज़िक्र है। जिस तरह

मुसलमानों के लिए ‘जुमअः’ का दिन अफ़्ज़ल क़रार दिया उसी तरह यहूद के लिए ‘सनीचर’ का दिन अफ़्ज़ल क़रार दिया था। उसकी अज़्मत के लिए उन्हें हुक्म दिया गया था कि उस दिन मछली का शिकार न करें और उसी दिन उनके इम्तिहान के लिए मछलियाँ ज़्यादा आती थीं। उन्होंने हीला व बहाना से काम लिया, वह करते यह थे कि सनीचर के दिन से पहले जाल और काँटे पानी में डाल देते तो मछलियाँ उनमें फंस कर रह जाती थीं फिर जब सनीचर का दिन गुज़र जाता तो उनको पकड़ लेते और अपने दिल को समझा लेते कि हमने सनीचर के दिन एक भी मछली नहीं पकड़ी, वह तो ख़ुद से जालों में और कांटों में आ गईं। अल्लाह ने उनके इस बहाना की वजह से उन पर यह अ़ज़ाब भेजा कि उनकी सूरतों को बन्दर की सूरत में बदल दिया।

जब यह लोग बन्दर बना दिये गये तो बन्दरों की तरह आवाज़ें निकालते थे उनके दुमें भी पैदा हो गईं थीं और जो लोग उनको मना करते थे वह उनके पास गये और कहा, “क्या हमने तुमको मना नहीं किया था तो वह सर हिला-हिला कर जवाब देते थे, ज़बान से बोल नहीं पाते थे।”

बन्दर और सुअर-

हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया गया है कि सनीचर के दिन ज़्यादती करने वाले बन्दर और सुअर बना दिये गये। उनमें जो जवान थे वह बन्दर बना दिये गये और जो बूढ़े थे वह ख़िन्ज़ीर।

हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से यह भी नक़्ल किया गया है कि वह क़ौम मस्ख़ (चेहरे बदल दिये गये) हुई और मस्ख़ की हालत में तीन दिन से ज़्यादा नहीं रही। इन तीन दिनों में उन्होंने कुछ नहीं खाया पिया और उनकी नस्ल भी नहीं चली।

यहूदियों के लिए हफ़्ते का दिन मुबारक क़रार दिया गया था, मगर वह उस की हुरमत का लिहाज़ न कर सके। **(तफ़्सील के लिए देखें अअ़राफ़ः 164)**

उम्मते मुहम्मदिया में भी मस्ख़ होगा-

उम्मते मुहम्मदिया अब तक मस्ख़ के अ़ज़ाब से बचती चली आई, लेकिन क़ियामत के क़रीब मस्ख़ होगा। जैसा कि ‘सुनन तिर्मिज़ी’ के किताबुल् फ़ितन में मौजूद है और ‘बुख़ारी शरीफ़’ की एक हदीस में भी मस्ख़ किये जाने का ज़िक्र है। **(मिश्कात शरीफ़)**

यहूद ने एक और हीला किया कि उन पर चर्बी हराम कर दी गई थी। रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, “उसको उन्होंने अच्छी सूरत में बना कर बेच दिया।” **(बुख़ारी, मुस्लिम, मिश्कात)**

हदीस के व्याख्याकारों ने अच्छी सूरत में बनाने का मतलब यह लिखा है कि चर्बी को वह पिघला कर उसमें दूसरी चीज़ें मिला देते और उसका नाम बदल कर बेच देते और उसकी क़ीमत खा लेते।

आज इसी तरह उम्मते मुहम्मदिया में भी बहुत से हीले रिवाज पा गये हैं।

लोग शराब को ह़लाल कर लेंगे-

एक ह़दीस में है कि मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, “लोग शराब को ह़लाल कर लेंगे।” अ़र्ज़ किया गया यह कैसे होगा ह़ालाँकि अल्लाह तआ़ला ने उसको ह़राम कर दिया है। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, “वह शराब का दूसरा नाम रख लेंगे और उसको ह़लाल कर लेंगे।” **(मिश्कात पेज नं० 461)**

आजकल यही हो रहा है कि शराब पीते हैं मगर नाम दूसरा रख लिया है सूद लेते हैं और उसका नाम नफ़ा रख लिया है। ज़कात को अदा करने के लिए हीले कर लेते हैं। दाढ़ी मूँडने के लिए जायज़ होने की हुज्जत निकालते हैं जो बहुत ही ख़तरनाक अ़मल है, ऐसे हीलों और बहानों की सूची बहुत लम्बी है, जो बहुत ख़तरनाक है।

67-71 وَإِذْ قَالَ مُوسَىٰ لِقَوْمِهِ إِنَّ اللَّهَ يَأْمُرُكُمْ أَنْ تَذْبَحُوا بَقَرَةً ۖ قَالُوا أَتَتَّخِذُنَا هُزُوًا ۖ قَالَ أَعُوذُ بِاللَّهِ أَنْ
أَكُونَ مِنَ الْجَاهِلِينَ ۝ قَالُوا ادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُبَيِّنْ لَنَا مَا هِيَ ۚ قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ إِنَّهَا بَقَرَةٌ لَا فَارِضٌ وَلَا بِكْرٌ
عَوَانٌ بَيْنَ ذَٰلِكَ ۖ فَافْعَلُوا مَا تُؤْمَرُونَ ۝ قَالُوا ادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُبَيِّنْ لَنَا مَا لَوْنُهَا ۚ قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ إِنَّهَا
بَقَرَةٌ صَفْرَاءُ فَاقِعٌ لَوْنُهَا تَسُرُّ النَّاظِرِينَ ۝ قَالُوا ادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُبَيِّنْ لَنَا مَا هِيَ إِنَّ الْبَقَرَ تَشَابَهَ عَلَيْنَا وَإِنَّا إِنْ
شَاءَ اللَّهُ لَمُهْتَدُونَ ۝ قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ إِنَّهَا بَقَرَةٌ لَا ذَلُولٌ تُثِيرُ الْأَرْضَ وَلَا تَسْقِي الْحَرْثَ مُسَلَّمَةٌ لَا
شِيَةَ فِيهَا ۚ قَالُوا الْآنَ جِئْتَ بِالْحَقِّ ۚ فَذَبَحُوهَا وَمَا كَادُوا يَفْعَلُونَ ۝

बक़रः का मतलब-

इन आयतों में बक़रः के ज़ब्ह़ करने का ज़िक्र है। ‘बक़रः’ अ़रबी भाषा में ‘गाय’ और ‘बैल’ दोनों के लिए प्रयोग होता है। कुछ लोगों ने इसका तर्जुमः बैल से किया है और उनका कहना है कि क़िस्सा के आख़िर में यह फ़रमाया गया है कि वह बक़रः ऐसा हो जो हल जोतने में प्रयोग न किया गया हो और खेती की सिंचाई में न लगाया गया हो यह काम चूंकि बैल ही से होता है इसलिए बक़रः से बैल मुराद है।

दूसरे लोगों ने इसका तर्जुमः ‘गाय’ से किया है, चूंकि बक़रः इसमे-जिन्स है इसलिए ‘गाय’ का तर्जुमः करने की भी गुन्जाइश है। ‘कुर्तुबी’ ने लिखा है कि बक़रः अस्ल में सिर्फ़ गाय के लिए है और ‘सौर’ का ‘मुअन्नस’ (स्त्रीलिंग) है।

वाक़िया-

यह क़िस्सा क्यों पेश आया? इसके बारे में क़ुर्आन की इस आयत से मालूम हो रहा है कि तफ़्सीर इब्ने कसीर में ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया गया है कि ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) के ज़माने में एक बूढ़ा आदमी था जिसकी कोई औलाद न थी। वह बहुत मालदार था, जबकि उसके भाई के लड़के तंगदस्त थे और उनको चचा की मीरास भी मिलनी थी। यह लोग चचा के मौत के इन्तिज़ार में थे लेकिन उसकी ज़िन्दगी लम्बी होती चली गई तो शैतान ने उनको समझाया कि तुम अपने चचा को क़त्ल कर दो, तो तुम उसके माल के वारिस और ह़क़दार बन जाओगे।

इस तरह़ उन्होंने चचा को क़त्ल कर के लाश दूसरी बस्ती के क़रीब डाल दी। जब सुबह हुई तो इन्हीं लोगों ने उस बस्ती वालों पर क़त्ल का इल्ज़ाम लगा दिया और कहा इसका बदला ज़रूर लेंगे, उस बस्ती के लोग क़सम खाने लगे और उन्होंने कहा कि हमने नहीं क़त्ल किया।

इस तरह क़ातिल का पता लगाने के लिए बनी इस्राईल ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) के पास गये तो उन्होंने एक गाय ज़ब्ह़ करने का हुक्म दिया और उसके गोश्त का एक टुकड़ा मक़्तूल के जिस्म पर मारने का हुक्म दिया जिससे वह ज़िन्दा हो गया और क़ातिल का पता बता कर मर गया। **(फ़त्हुल् क़ादीर)**

उन्होंने पहले तो ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) की बात का मज़ाक़ उड़ाया कि यह कहीं हो सकता है कि गाय का गोश्त मक़्तूल का नाम बताएगा।

यह बात ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) को बहुत नागवार हुई और उन्होंने फ़रमाया, कि मैं इस बात से अल्लाह की पनाह लेता हूँ कि जाहिलों में से हो जाऊँ, यह तो जिहालत की बात है। फिर जब गाय ज़िब्ह़ करने पर राज़ी हो गये तो तरह-तरह के सवालात करते गये और उन सवालात की वजह से पाबन्दियों में बँधते गये, इस पर अल्लाह तआ़ला ने भी हुक्म में सख़्ती कर दी। वह कहने लगे कि ऐ मूसा! आप हमारे लिए अपने रब से दुआ़ करें कि वह बता दे कि वह गाय कैसी हो, यानी उसकी उम्र कितनी हो, उसका रंग पूछा और तमाम तरह के सवालात करते गये, जिसके जवाब में अल्लाह तआ़ला ने सख़्ती फ़रमाई कि वह जानवर उनको महंगा पड़ा।

दुर्रे मन्सूर में ह़ज़रत 'इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०)' से नक़्ल किया गया है कि उन्होंने उस गाय की खाल दीनारों से भर कर देने का सौदा किया और गाय को ज़ब्ह़ कर दिया।

ह़ज़रत 'अबू हुरैरा (रज़ि०)' से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तुम से पहले लोग अपने अम्बिया से सवालात की कसरत और उन से इख़्तिलाफ़ की वजह से तबाह हुए। अगर मैं तुम्हें किसी बात से मना करूँ तो उस से बाज़ आ जाओ। अगर तुम्हें कुछ करने का हुक्म दूँ तो उसको पूरा करने की कोशिश करो।" **(बुख़ारी)**

नोट- दीन में बहुत बारीकी निकाल-निकाल कर सख़्ती अपनाने को शरीअ़त में मना किया गया है।

आयत नं० 72 से 82 तक

وَإِذْ قَتَلْتُمْ نَفْسًا فَادَّارَأْتُمْ فِيهَا ۖ وَاللَّهُ مُخْرِجٌ مَا كُنْتُمْ تَكْتُمُونَ ۝ فَقُلْنَا اضْرِبُوهُ بِبَعْضِهَا ۚ كَذَٰلِكَ يُحْيِي اللَّهُ الْمَوْتَىٰ وَيُرِيكُمْ
آيَاتِهِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ۝ ثُمَّ قَسَتْ قُلُوبُكُمْ مِنْ بَعْدِ ذَٰلِكَ فَهِيَ كَالْحِجَارَةِ أَوْ أَشَدُّ قَسْوَةً ۚ وَإِنَّ مِنَ الْحِجَارَةِ لَمَا يَتَفَجَّرُ مِنْهُ
الْأَنْهَارُ ۚ وَإِنَّ مِنْهَا لَمَا يَشَّقَّقُ فَيَخْرُجُ مِنْهُ الْمَاءُ ۚ وَإِنَّ مِنْهَا لَمَا يَهْبِطُ مِنْ خَشْيَةِ اللَّهِ ۗ وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ۝ أَفَتَطْمَعُونَ
أَنْ يُؤْمِنُوا لَكُمْ وَقَدْ كَانَ فَرِيقٌ مِنْهُمْ يَسْمَعُونَ كَلَامَ اللَّهِ ثُمَّ يُحَرِّفُونَهُ مِنْ بَعْدِ مَا عَقَلُوهُ وَهُمْ يَعْلَمُونَ ۝ وَإِذَا لَقُوا الَّذِينَ آمَنُوا
قَالُوا آمَنَّا وَإِذَا خَلَا بَعْضُهُمْ إِلَىٰ بَعْضٍ قَالُوا أَتُحَدِّثُونَهُمْ بِمَا فَتَحَ اللَّهُ عَلَيْكُمْ لِيُحَاجُّوكُمْ بِهِ عِنْدَ رَبِّكُمْ ۚ أَفَلَا تَعْقِلُونَ ۝
أَوَلَا يَعْلَمُونَ أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ مَا يُسِرُّونَ وَمَا يُعْلِنُونَ ۝ وَمِنْهُمْ أُمِّيُّونَ لَا يَعْلَمُونَ الْكِتَابَ إِلَّا أَمَانِيَّ وَإِنْ هُمْ إِلَّا يَظُنُّونَ ۝
فَوَيْلٌ لِلَّذِينَ يَكْتُبُونَ الْكِتَابَ بِأَيْدِيهِمْ ثُمَّ يَقُولُونَ هَٰذَا مِنْ عِنْدِ اللَّهِ لِيَشْتَرُوا بِهِ ثَمَنًا قَلِيلًا ۖ فَوَيْلٌ لَهُمْ مِمَّا كَتَبَتْ أَيْدِيهِمْ وَوَيْلٌ
لَهُمْ مِمَّا يَكْسِبُونَ ۝ وَقَالُوا لَنْ تَمَسَّنَا النَّارُ إِلَّا أَيَّامًا مَعْدُودَةً ۚ قُلْ أَتَّخَذْتُمْ عِنْدَ اللَّهِ عَهْدًا فَلَنْ يُخْلِفَ اللَّهُ عَهْدَهُ ۖ أَمْ تَقُولُونَ عَلَى اللَّهِ
مَا لَا تَعْلَمُونَ ۝ بَلَىٰ مَنْ كَسَبَ سَيِّئَةً وَأَحَاطَتْ بِهِ خَطِيئَتُهُ فَأُولَٰئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ ۖ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝ وَالَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ
أُولَٰئِكَ أَصْحَابُ الْجَنَّةِ ۖ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝

अनुवाद-

(72) और जब तुमने एक व्यक्ति को मार डाला, फिर उसके बारे में (आपस में) झगड़ने लगे, लेकिन जो बात तुम छिपा रहे थे; और अल्लाह उसको खोलने वाला था। (73) फिर 'हमने' कहा, (गाय का) ''कोई टुकड़ा मुर्दे पर मार दो (वह ज़िन्दा हो जाएगा)।'' इसी तरह (क़ियामत में) अल्लाह मुर्दो को ज़िन्दा करेगा और 'वह' तुमको अपनी निशानियाँ (चमत्कार) दिखाता है, ताकि तुमको समझ आ जाए; (74) फिर इस (चमत्कार) के बाद भी तुम्हारे दिल कठोर ही रहे, जैसे वे पत्थर (दिल) हो गये बल्कि उससे भी अधिक कठोर; और पत्थरों में कुछ ऐसे भी होते हैं कि उनमें से नहरें फूट निकलती हैं, और कुछ ऐसे भी होते हैं जो फट जाते हैं और उनमें से पानी निकलने लगता है, और कुछ ऐसे भी होते हैं जो अल्लाह के डर से लुढ़क पड़ते हैं; और जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उससे बेख़बर नहीं। (75) क्या तुमको उम्मीद है कि (यहूदी) तुम्हारी बात मानकर ईमान ले आएंगे? (जबकि) उनका ह़ाल यह है कि उनमें कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो अल्लाह का कलाम (तौरात) सुनते हैं फिर उसको सुन लेने के बाद भी बदल देते हैं, और वे इसे (खूब) जानते हैं। (76) और जब ये लोग उनसे मिलते हैं जो ईमान ला चुके हैं, तो कहते हैं, ''हम भी ईमान ले आए हैं,'' और जब एक-दूसरे से अकेले में मिलते हैं, तो कहते हैं; ''क्या तुम उन्हें वे बातें, जो अल्लाह ने तुम पर खोलीं, बता देते हो कि वे उनके ज़रिये तुम्हारे रब के यहाँ तुमको इल्ज़ाम दें सो क्या तुम समझते नहीं!'' (77) क्या यह लोग (इतना भी) नहीं जानते! कि अल्लाह को इसकी भी ख़बर है, जिसको यह छिपाते हैं, और जिसे यह ज़ाहिर करते हैं। (78) और कुछ उनमें अनपढ़ (भी) हैं, जो किताब (इलाही) का कोई इल्म नहीं रखते सिवाय झूठी तमन्नाओं (कामनाओं) के, और वह तो बस अटकल से काम लेते हैं। (79) तो बड़ी ख़राबी है उन लोगों के लिए जो (अल्लाह की) किताब को अपने हाथ से लिखते हैं, फिर कह देते हैं, ''यह अल्लाह की ओर

से है,'' ताकि उसके ज़रिये थोड़े से दाम हासिल कर लें, तो तबाही है उनके लिए जो वह अपने हाथों से लिखते हैं और तबाही है उनके लिए कि ऐसे काम करते हैं। (80) और कहते हैं, ''हमको तो दोज़ख़ की आग छुएगी भी नहीं, सिवाय कुछ गिने-चुने दिनों के।'' कह दीजिए, ''तुम ने अल्लाह के यहाँ से कोई वचन ले रखा है, जो अब अल्लाह अपने वादे के ख़िलाफ़ न करेगा? या (यूँ ही) अल्लाह के ज़िम्मे ऐसी बात लगाते हो जो तुम नहीं जानते; (81) जो बुरे काम करता हो और हर ओर से गुनाहों में घिरा हो, तो ऐसे ही लोग दोज़ख़ी हैं कि वे हमेशा (जहन्नम की) आग ही में रहेंगे; (82) और जो लोग ईमान लाए और नेक काम करते रहे ऐसे ही लोग जन्नती हैं कि वे हमेशा उसी में रहेंगे।

आयत नं० 72 से 82 तक की व्याख्या

72-73 وَإِذْ قَتَلْتُمْ نَفْسًا فَادّٰرَءْتُمْ فِيهَا ۖ وَاللَّهُ مُخْرِجٌ مَا كُنْتُمْ تَكْتُمُونَ ۝ فَقُلْنَا اضْرِبُوهُ بِبَعْضِهَا ۚ
كَذَٰلِكَ يُحْيِي اللَّهُ الْمَوْتَىٰ وَيُرِيكُمْ آيَاتِهِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ۝

यह क़त्ल का वही क़िस्सा है, जिसकी बिना पर बनी इस्राईल को गाय ज़ब्ह़ करने का हुक्म दिया था, लेकिन अल्लाह तआ़ला ने उस क़त्ल का राज़ ज़ाहिर कर दिया। ह़ालाँकि वह क़त्ल रात के अंधेरे में लोगों से छिप कर किया गया था। मतलब यह हुआ कि नेकी या बुराई चाहे जितना छुप कर करो, वह अल्लाह को मालूम है और अल्लाह उसको ज़ाहिर करने की क़ुद्‌रत रखता है। इसलिए तन्हाई में हो या लोगों के सामने हमेशा अच्छे ही काम करना चाहिए।

एक ह़िक्मत यह भी हो सकती है कि 'बनी इस्राईल' की हुज्जतबाज़ी का ह़ाल आम लोगों को और उनके बाद में आने वाली नस्लों को मालूम हो जाए ताकि वह ऐसा न करें। इस के बाद अल्लाह तआ़ला ने फ़रमा दिया कि इसी तरह़ अल्लाह तआ़ला ज़िन्दा करता है मुर्दों को और दिखाता है तुमको अपनी निशानियाँ, ताकि तुम अ़क़्ल से काम लो।

74 ثُمَّ قَسَتْ قُلُوبُكُمْ مِنْ بَعْدِ ذَٰلِكَ فَهِيَ كَالْحِجَارَةِ أَوْ أَشَدُّ قَسْوَةً ۚ وَإِنَّ مِنَ الْحِجَارَةِ لَمَا يَتَفَجَّرُ مِنْهُ
الْأَنْهَارُ ۚ وَإِنَّ مِنْهَا لَمَا يَشَّقَّقُ فَيَخْرُجُ مِنْهُ الْمَاءُ ۚ وَإِنَّ مِنْهَا لَمَا يَهْبِطُ مِنْ خَشْيَةِ اللَّهِ ۗ وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ
عَمَّا تَعْمَلُونَ ۝

यहूदियों की सख़्ती-

इस आयत में यहूदियों के दिलों की सख़्ती को बयान किया गया है कि इन के दिल पत्थर की तरह सख़्त हो गये हैं, बल्कि इनमें पत्थरों से भी ज़्यादा सख़्ती आ गई है। अल्लाह की निशानियों को देखने के बावजूद ह़क़ को क़ुबूल नहीं करते।

जबकि पत्थरों में तो यह बात है कि उनमें से कुछ ऐसे हैं जिनसे नहरें जारी होती हैं और कुछ फट जाते हैं तो उन में पानी निकल आता है और कुछ उन में ऐसे हैं जो अल्लाह के ख़ौफ़ से गिर पड़ते हैं।

इनके दिलों के सख़्ती की मिसाल पत्थर की सख़्ती से इसलिए दी गई है कि पत्थर लोहे और राँगे से भी ज़्यादा सख़्त होता है, क्योंकि लोहा तो आग में पिघल जाता है मगर पत्थर नहीं पिघलता, फिर अल्लाह ने बताया कि पत्थर इन के दिलों से बेहतर है, इसलिए कि कुछ पत्थर ऐसे होते हैं जिन से नहरें जारी होती हैं और कुछ फट जाते हैं और उनमें चश्मे (स्रोत) जारी होते हैं और कुछ पत्थर ऐसे होते हैं कि अल्लाह के डर से अपनी जगह से लुढ़कते हुए नीचे आ जाते हैं।

हज़रत 'इब्ने उ़मर(रज़ि०)' से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह के ज़िक्र के अ़लावा ज़्यादा बात न किया करो, क्योंकि ज़िक्रुल्लाह के अ़लावा बात करना दिल की सख़्ती का ज़रिया है और बेशक लोगों में सबसे ज़्यादा अल्लाह से दूर वह शख़्स है जिस का दिल सख़्त हो।" **(तिर्मिज़ी)**

75 أَفَتَطْمَعُونَ أَنْ يُؤْمِنُوا لَكُمْ وَقَدْ كَانَ فَرِيقٌ مِنْهُمْ يَسْمَعُونَ كَلَامَ اللَّهِ ثُمَّ يُحَرِّفُونَهُ
مِنْ بَعْدِ مَا عَقَلُوهُ وَهُمْ يَعْلَمُونَ ۝

यहूदियों का ह़ाल-

यहूद के दिलों की सख़्ती बयान करने के बाद अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को ख़िताब किया है कि क्या अब भी तुम लोग उम्मीद करते हो कि यह लोग तुम्हारे दीन को अपना लेंगे? उनके बाप दादा की तारीख़ यह है कि तौरेत को सुनते और अच्छी तरह समझते, फिर उसे बदल देते थे। ह़लाल को ह़राम और ह़राम को ह़लाल बना देते थे। ह़क़ को बातिल और बातिल को ह़क़ बताते थे, इनका भी ह़ाल ऐसा ही है। यह अपने बाप दादा से किसी तरह कम नहीं है। ऐ मुसलमानों! क्या आप को उम्मीद है कि यह बद्‌बख़्त ईमान ले आएँगे ह़ालाँकि उन में से एक गिरोह तो समझते बूझते अल्लाह के कलाम में तब्दीली कर रहा है।

इस आयत से मालूम होता है कि नबी (सल्ल०) की पहचान के लिए तौरेत में निशानियाँ मौजूद थीं जिसे यह लोग आख़िरी नबी (सल्ल०) के मदीना आने से पहले मशहूर कर चुके थे। कुछ लोग मदीना तशरीफ़ लाने के बाद भी बयान कर देते थे और उन से कह देते कि हम भी उस नबी पर ईमान लाते हैं और जब अपने साथियों से अलग मिलते तो कहते कि तुम मुसलमानों को तौरेत की ऐसी बातें क्यों बताते हो जो तुम्हारे अपने ख़िलाफ़ हैं। क्या तुम चाहते हो कि अल्लाह के सामने मुसलमान तुम पर हुज्जत क़ायम करें? इसलिए इन से कैसे उम्मीद की जा सकती है कि यह सच्चे दीन में दाख़िल हो जाएँगे।

76 وَإِذَا لَقُوا الَّذِينَ آمَنُوا قَالُوا آمَنَّا وَإِذَا خَلَا بَعْضُهُمْ إِلَىٰ بَعْضٍ قَالُوا أَتُحَدِّثُونَهُمْ بِمَا فَتَحَ اللَّهُ عَلَيْكُمْ
لِيُحَاجُّوكُمْ بِهِ عِنْدَ رَبِّكُمْ أَفَلَا تَعْقِلُونَ ۝

अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं وَإِذَا لَقُوا الَّذِينَ آمَنُوا 'इब्ने जरीर' ने इकरमा (रज़ि०) के वास्ते से ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि जिस वक़्त यह यहूदी मोमिनों से मिलते तो कहते कि हम इस बात पर ईमान लाते हैं कि तुम्हारे 'मुह़म्मद' (सल्ल०) अल्लाह तआ़ला के रसूल हैं मगर वह सिर्फ़ तुम्हारे ही लिए ख़ास हैं और जब तन्हाई में आपस में एक दूसरे से मिलते तो कहते कि क्या

यह उन के अ़रब लोगों के सामने यह बात बयान करते हो तो क्या तुम रसूलुल्लाह (सल्ल०) की वजह से अपनी फ़ौक़ियत ज़ाहिर करते थे (कि वह नबी हम ही में से हैं) और यह आख़िरी नबी उन ही लोगों में से हो गये तब यह आयत وَإِذَا لَقُوا नाज़िल हुई।

सुद्दी से नक़्ल किया है कि यह आयते करीमा यहूदियों की एक जमाअ़त के बारे में नाज़िल हुई, जिन्होंने पहले ईमान क़ुबूल किया था, फिर बाद में मुनाफ़िक़ हो गये थे और अ़रब ह़ज़रात में से मोमिनीन के पास आकर वह इन बातों को बयान करते थे तो उन के कुछ लोगों ने कहा कि क्या उस अ़ज़ाब को जाकर बयान करते हो जो अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे ह़क़ में बयान फ़रमाया है कि यह लोग यह कहने लगें कि हम अल्लाह तआ़ला की नज़र में तुम से ज़्यादा मह़बूब और तुम से ज़्यादा इ़ज़्ज़त वाले हैं।

(लुबाबुन्नुक़ूल फ़ी अस्बाबिन नुज़ूल)

मुनाफ़िक़ों और अहले किताब का ह़ाल-

इन आयतों में मुनाफ़िक़ों और अहले किताब का ह़ाल बयान किया गया है कि जब यह मुसलमानों से मिलते हैं तो कहते हैं कि हम लोग आप ही की तरह मुसलमान हैं, लेकिन जब आपस में मिलते हैं और कोई दूसरा नहीं होता तो एक दूसरे को डाँटते हैं "कि तुम लोग क्या मुसलमानों के सामने इस्लाम व ईमान का इज़्हार करते हो और कहते हो कि हम तो तुम्हारी तरह हैं, यह तो हमारे ख़िलाफ़ उनके लिए दलील बन जाती है और कहते हैं कि इन यहूदियों ने इक़रार कर लिया है कि हम लोग (यानी मुसलमान) जिस दीन पर हैं वह ह़क़ है और वह लोग (यहूद) जिस दीन पर हैं वह ग़लत है और क़ियामत के दिन यही लोग अल्लाह के सामने हमारे ख़िलाफ़ गवाही देंगे और कहेंगे कि क्या तुम लोग दुनिया में हमें नहीं बताया करते थे कि तुम्हारी किताबों में हमारे दीने इस्लाम और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के सच्चाई की गवाही मौजूद है तो उस दिन तमाम मख़्लूक़ के सामने हमारी रुसवाई होगी।

77 أَوَلَا يَعْلَمُونَ أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ مَا يُسِرُّونَ وَمَا يُعْلِنُونَ ۝

इस आयत में अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है कि तुम बताओ या न बताओ अल्लाह को तो हर बात का इ़ल्म है और वह उन बातों को भी तुम्हारे बतलाये बिना मुसलमानों पर ज़ाहिर फ़रमा सकता है।

78 وَمِنْهُمْ أُمِّيُّونَ لَا يَعْلَمُونَ الْكِتَابَ إِلَّا أَمَانِيَّ وَإِنْ هُمْ إِلَّا يَظُنُّونَ ۝

यहूदी अवाम-

इस आयत में जाहिल यहूदी अवाम का ज़िक्र किया गया है कि यह लोग न तौरेत पढ़ सकते थे और न किसी तरह का इ़ल्म रखते थे, मगर यह झूठी तमन्नाओं में उलझे हुए थे। यह लोग समझते थे कि हमें जन्नत में ज़रूर जाना है, अगर अ़ज़ाब भी हुआ तो थोड़े दिन दोज़ख़ (नर्क) में रहेंगे फिर निकाल दिये जाएँगे, इसलिए कि हम तो नबियों की औलाद और अल्लाह के मह़बूब हैं। नुबूवत तो केवल

हमारे ही ख़ानदान में हैं। इस तरह़ की बहुत सी झूठी तमन्नाओं में यह लोग फँसे हुए थे।

79 فَوَيْلٌ لِّلَّذِينَ يَكْتُبُونَ الْكِتٰبَ بِأَيْدِيهِمْ ثُمَّ يَقُولُونَ هٰذَا مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ لِيَشْتَرُوا بِهِ ثَمَنًا قَلِيلًا ۖ فَوَيْلٌ لَّهُمْ مِّمَّا كَتَبَتْ أَيْدِيهِمْ وَوَيْلٌ لَّهُمْ مِّمَّا يَكْسِبُونَ ۝

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है فَوَيْلٌ لِّلَّذِينَ 'नसई' ने इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि यह आयते करीमा यहूदियों के बारे में नाज़िल हुई है और इब्ने अबी ह़ातिम ने इ़करमा के वास्ते से ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि यह आयते करीमा यहूदी उ़लमा के बारे में नाज़िल हुई है। उन्होंने तौरेत में रसूलुल्लाह (सल्ल०) की यह सिफ़त लिखी हुई पाई थी कि आप सुरमगीं आँखों वाले दर्मियाना क़द वाले, ख़ूबसूरत चेहरे वाले होंगे आप के बाल न बिल्कुल सीधे होंगे और न बिल्कुल टेढ़े। यहूदियों ने ह़सद, बुग़्ज़ व अ़दावत में इस सिफ़त को मिटा कर वहाँ यह लिख दिया कि आप लम्बे क़द नीली आँखों और सीधे बालों वाले होंगे।

وَقَالُوا لَنْ تَمَسَّنَا النَّارُ इस आयत के बारे में 'तबरानी' ने 'कबीर' में और 'इब्ने अबी ह़ातिम' ने बवास्ता इब्ने इस्ह़ाक़, मोह़म्मद बिन बक्र, इकरमा, सई़द बिन जुबैर (रज़ि०) ने ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) मदीना मुनव्वरह तशरीफ़ लाए और यहूद यह कहते थे कि दुनिया की मुद्दत "सात हज़ार साल" की है और लोगों को पूरे ज़माने तक अ़ज़ाब दिया जाएगा और दुनिया का एक हज़ार साल आख़िरत में दोज़ख़ के दिनों में से एक दिन है तो यह सात दिन हो गये।

इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह पूरी आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई और इब्ने जरीर (रज़ि०) ने ज़िह़ाक के वास्ते से ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि यहूद कहते थे कि हम दोज़ख़ में दाख़िल नहीं होंगे, मगर क़सम के ह़लाल होने के लिए सिर्फ़ उन दिनों में जिन में हम ने बछड़े की पूजा की है और वह चालीस रातें हैं जिस वक़्त वह ख़त्म हो जाएँगी तो हम से अ़ज़ाब भी ख़त्म हो जाएगा। **(लुबाबुन्नुकूल फ़ी अस्बाबिन्नुज़ूल)**

यहूदी उ़लमा और दुनिया परस्ती-

इस आयत में यहूदी उ़लमा और उनकी दुनिया परस्ती का ज़िक्र फ़रमाया गया है कि अवाम जब उलमा के पास जाते, फिर उनसे मसले पूछते और साथ में कुछ रिश्वत दे देते, तो वह उनकी मर्ज़ी के मुताबिक़ मसला बता देते और कहते यही अल्लाह का हुक्म है। इस तरह उनके उलमा अल्लाह की किताब की तहरीफ़ (संशोधन) के मुजरिम और रिश्वतखोरी के गुनाह में मुब्तिला थे।

(तफ़्सील के लिए देखें सूरः अल् माइदा आयत नं० 17)

अल्लाह तआ़ला ने उनका ह़ाल बयान करने के बाद फ़रमाया कि इनके लिए दोनों वजह से हलाकत और बर्बादी है इसीलिए इनके बारे में 'वैल' अर्थात तबाही व बर्बादी का ज़िक्र दो बार आया है। इसलिए कि इन्होंने तौरेत को बदला और दूसरे लोगों का माल नाजायज़ तरीक़े से खाया।

इसी तरह़ के वहम और गुमान लगभग तमाम धर्म वालों ने ईजाद किये हैं। ईसाईयों ने ह़ज़रत ईसा

(अ़लै०) को सूली पर चढ़ा के उम्मत के कफ़्फ़ारे का अ़क़ीदा (आस्था) ईजाद किया। उम्मते मुहम्मदिया इन कामों में भी यहूद व नसारा से पीछे नहीं रही। चुनाँचे उसने पीरों की शफ़ाअ़त जैसे अ़क़ीदे ईजाद कर लिए कि पीर क़ियामत के दिन उन्हें अ़ज़ाब से छुड़ा लेंगे चाहे जो करते रहो। यह सब अ़क़ीदे उम्मत में दीन की बुनियादें काट कर बे-अ़मली की राह खोलते हैं।

हदीस में 'वैल' जहन्नम की एक वादी का नाम है जिसकी गहराई इतनी है कि एक काफ़िर को उसकी तह तक़ गिरने में चालीस साल लगेंगे। **(अहमद, तिर्मिज़ी)**

80 وَقَالُوا لَنْ تَمَسَّنَا النَّارُ إِلَّا أَيَّامًا مَعْدُودَةً ۚ قُلْ أَتَّخَذْتُمْ عِنْدَ اللَّهِ عَهْدًا فَلَنْ يُخْلِفَ اللَّهُ عَهْدَهُ
أَمْ تَقُولُونَ عَلَى اللَّهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿٨٠﴾

यहूदी अपने को अल्लाह का लाडला कहते थे-

यहूदी इस गुमान में थे कि वह अपने आप को अल्लाह का लाडला और चहीता समझते थे, इसलिए उनको जहन्नम में नहीं डाला जाएगा। अगर डाला भी गया तो गिनती के चन्द दिनों के लिए। वह कहते थे कि दुनिया की कुल उम्र सात हज़ार साल की है और हम हज़ार साल के मुक़ाबिले में एक दिन जहन्नम में रहेंगे। कुछ यह कहते थे कि हम ने बछड़े की अ़िबादत चालीस दिन की है तो हमें चालीस ही दिन के लिए जहन्नम में डाला जाएगा।

अल्लाह तआ़ला ने उन का जवाब कई तरह से दिया है जैसे यहाँ फ़रमाया, "क्या तुम्हारा अल्लाह के साथ कोई मुआ़हिदा है? अगर ऐसा हो तो दिखलाओ।"

एक और मक़ाम पर फ़रमाया, आप कहिये, "ऐ लोगों! जो यहूदी बने हुए हो, अगर तुम्हें यह गुमान हो कि आ़म लोगों के बजाय तुम ही अल्लाह के चहीते हो तो मौत की तमन्ना करो, अगर तुम इस बात में सच्चे हो?"

"यह कभी भी मौत की तमन्ना न करेंगे अपने करतूतों की वजह से जो यह कर चुके हैं और अल्लाह ज़ालिमों को जानता है।" **(अल् जुमअ़ः 6-7)**

'इब्ने अ़ब्बास' और 'मुजाहिद' की रिवायत में है कि यहूद कहा करते थे कि दुनिया की उम्र "सात हज़ार साल" है और हम लोग "एक हज़ार साल" के बदले एक दिन जहन्नम में रहेंगे।

इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) की एक दूसरी रिवायत है कि 'यहूद' कहा करते थे कि हम लोग उतनी ही मुद्दत अ़ज़ाब में मुब्तिला होंगे जितनी मुद्दत बछड़े की अ़िबादत की थी, यानी चालीस दिन, फिर अ़ज़ाब का सिल्सिला ख़त्म हो जाएगा। अल्लाह तआ़ला ने उनके इस बात पर फ़रमाया, 'क्या तुमने अल्लाह से इसके लिए कोई अ़हद ले रखा है?' हक़ीक़त यह है कि यह अल्लाह पर आरोप है। क़ुर्आन व सुन्नत के अनुसार जहन्नम में सभी काफ़िर व मुश्रिक रहेंगे। हाँ, गुनाहगार शिर्क न करने वाला जहन्नम से निकाल दिया जाएगा।

81-82 بَلٰى مَنْ كَسَبَ سَيِّئَةً وَّاَحَاطَتْ بِهٖ خَطِيْٓــئَتُهٗ فَاُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ النَّارِ ۚ هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ۝ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا
وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ اُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ الْجَنَّةِ ۚ هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ۝

इन दोनों आयतों में जन्नत व जहन्नम में जाने का उसूल बयान किया गया है कि जिसके आ़माल में बुराईयाँ ही बुराईयाँ होंगी यानी कुफ़्र व शिर्क किया होगा और चाहे अच्छे अ़मल भी किये हों, वह सब बेकार हो जाएँगे और वह हमेशा के लिए जहन्नमी होंगे और जो ईमान और नेक अ़मल किये होंगे वह जन्नती होंगे और जो मोमिन गुनाहगार होंगे उनका मामला अल्लाह के सुपुर्द होगा। अल्लाह चाहेगा तो अपने फ़ज़्ल से उनके गुनाह माफ़ कर देगा या कुछ दिन जहन्नम में रखने के बाद या नबी की शफ़ाअ़त से उनको जन्नत में दाख़िल फ़रमा देगा जैसा कि सही ह़दीसों से साबित है।

आयत नं० 83 से 87 तक

وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَ بَنِي إِسْرَائِيلَ لَا تَعْبُدُونَ إِلَّا اللَّهَ وَبِالْوَالِدَيْنِ إِحْسَانًا وَذِي الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسَاكِينِ وَقُولُوا لِلنَّاسِ حُسْنًا وَأَقِيمُوا
الصَّلَاةَ وَآتُوا الزَّكَاةَ ثُمَّ تَوَلَّيْتُمْ إِلَّا قَلِيلًا مِّنكُمْ وَأَنتُم مُّعْرِضُونَ ﴿٨٣﴾ وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَكُمْ لَا تَسْفِكُونَ دِمَاءَكُمْ وَلَا تُخْرِجُونَ
أَنفُسَكُم مِّن دِيَارِكُمْ ثُمَّ أَقْرَرْتُمْ وَأَنتُمْ تَشْهَدُونَ ﴿٨٤﴾ ثُمَّ أَنتُمْ هَٰؤُلَاءِ تَقْتُلُونَ أَنفُسَكُمْ وَتُخْرِجُونَ فَرِيقًا مِّنكُم مِّن دِيَارِهِمْ تَظَاهَرُونَ
عَلَيْهِم بِالْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ وَإِن يَأْتُوكُمْ أُسَارَىٰ تُفَادُوهُمْ وَهُوَ مُحَرَّمٌ عَلَيْكُمْ إِخْرَاجُهُمْ أَفَتُؤْمِنُونَ بِبَعْضِ الْكِتَابِ وَتَكْفُرُونَ
بِبَعْضٍ فَمَا جَزَاءُ مَن يَفْعَلُ ذَٰلِكَ مِنكُمْ إِلَّا خِزْيٌ فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا وَيَوْمَ الْقِيَامَةِ يُرَدُّونَ إِلَىٰ أَشَدِّ الْعَذَابِ وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ
عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٨٥﴾ أُولَٰئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الْحَيَاةَ الدُّنْيَا بِالْآخِرَةِ فَلَا يُخَفَّفُ عَنْهُمُ الْعَذَابُ وَلَا هُمْ يُنصَرُونَ ﴿٨٦﴾ وَلَقَدْ آتَيْنَا
مُوسَى الْكِتَابَ وَقَفَّيْنَا مِن بَعْدِهِ بِالرُّسُلِ وَآتَيْنَا عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ الْبَيِّنَاتِ وَأَيَّدْنَاهُ بِرُوحِ الْقُدُسِ أَفَكُلَّمَا جَاءَكُمْ رَسُولٌ
بِمَا لَا تَهْوَىٰ أَنفُسُكُمُ اسْتَكْبَرْتُمْ فَفَرِيقًا كَذَّبْتُمْ وَفَرِيقًا تَقْتُلُونَ ﴿٨٧﴾

अनुवाद-

(83) और (याद करो) जब 'हमने' बनी इस्राईल (याकूब के बेटों) से अ़हद (प्रतिज्ञा) लिया, ''तुम इबादत
न करना किसी की सिवाय अल्लाह के, और अच्छे व्यवहार से पेश आना; (अपने) माँ बाप से, रिश्तेदारों और
यतीमों और मुहताजों से, और लोगों से भली बात कहना और नमाज़ क़ायम रखना, और ज़कात देते रहना।''
फिर तुम सब इन हुक्मों से फिर गये, सिवाय तुम में से कुछ लोगों के, और तुम (अहद से) मुँह फेर कर
बैठ गये। (84) और (याद करो) जब 'हमने' तुम से अ़हद (बचन) लिया, ''अपनों के खून न बहाओगे और
न अपने लोगों को अपनी बस्तियों से निकालोगे, फिर तुमने इक़रार किया, और तुम (खुद ही) गवाह हो;''
(85) फिर तुम वही हो कि अपनों को क़त्ल करते हो, और अपने में से कुछ लोगों को गुनाह और ज़ुल्म से
चढ़ाई करके उन्हें वतन से निकाल भी देते हो और अगर वे तुम तक बन्दी बनकर पहुँच जाते हैं, तो तुम
फ़िदिया (अर्थदण्ड) देकर छुड़ा भी लेते हो, हालाँकि उनका (वतन से) निकालना ही तुम पर ह़राम था; तो क्या
तुम किताब के कुछ हुक्मों को तो मानते हो और कुछ को इन्कार करते हो? बस तुममें से जो ऐसा करे, उसकी
सज़ा क्या है! सिवाय दुनियावी ज़िन्दगी में रूसवाई के? और क़ियामत के दिन यह सख़्त अ़ज़ाब में डाले जाएँगे,
और अल्लाह उससे बेख़बर नहीं, जो कुछ तुम करते हो। (86) यही वे लोग हैं जिन्होंने दुनिया की ज़िन्दगी
ख़रीद ली है, आख़िरत के बदले में, सो उन पर से न अ़ज़ाब हल्का किया जाएगा और न उन्हें मदद ही
पहुँचेगी। (87) और 'हमने' मूसा को किताब प्रदान की, और उनके पीछे 'हमने' एक के बाद एक, कई नबी
भेजे; और मरयम के बेटे ईसा को 'हमने' खुली हुई निशानियाँ (चमत्कार) प्रदान कीं, और रूहुल
कुदुस(जिब्राईल अ़लैहिस्सलाम) के ज़रिये उनकी पुष्टि (मदद) की; तो जब कभी तुम्हारे पास कोई रसूल
(ईशदूत) ऐसी बातें लेकर आते जो तुम्हारी इच्छाओं के ख़िलाफ़ होतीं, तो तुम अकड़ने लगते? फिर एक गिरोह
को तो तुम ने झुठला दिया था और एक गिरोह को क़त्ल करते रहे।

आयत नं० 83 से 87 तक की व्याख्या

83 وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَ بَنِيٓ إِسْرَٰٓءِيلَ لَا تَعْبُدُونَ إِلَّا ٱللَّهَ وَبِٱلْوَٰلِدَيْنِ إِحْسَانًا وَذِى ٱلْقُرْبَىٰ وَٱلْيَتَٰمَىٰ وَٱلْمَسَٰكِينِ وَقُولُوا۟
لِلنَّاسِ حُسْنًا وَأَقِيمُوا۟ ٱلصَّلَوٰةَ وَءَاتُوا۟ ٱلزَّكَوٰةَ ثُمَّ تَوَلَّيْتُمْ إِلَّا قَلِيلًا مِّنكُمْ وَأَنتُم مُّعْرِضُونَ ﴿٨٣﴾

इस आयत में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के ज़माने के यहूदियों की वह बातें याद दिलाई जा रही हैं जिन का अल्लाह ने उनके बाप-दादा को हुक्म दिया था और उस के लिए उन से अ़हद(प्रतिज्ञा) लिया था। लेकिन वह ऐसी सख़्त दिल क़ौम थी कि उसने कभी भी किसी अ़हद का ख़याल नहीं रखा और सिवाय चन्द लोगों के पूरी क़ौम ने बद्अ़हदी की।

इस अ़हद में सबसे पहले एक अल्लाह की अ़िबादत की ताकीद है, जो हर नबी की बुनियादी और पहली दअ़वत रही है (जैसा कि सूरः निसा-३६ और सूरः अम्बिया की २५ नं० आयतों में मौजूद है) उस के बाद वालिदैन, रिश्तेदारों, यतीमों और मिस्कीनों के साथ अच्छे व्यवहार, नमाज़ और ज़कात का हुक्म है जिससे मालूम होता है कि यह अ़िबादतें पिछली शरीअ़तों में भी मौजूद थीं।

वालिदैन के साथ हुस्ने सुलूक-

ज़ाहिर में तो यह मदीना के यहूदियों से ख़िताब है मगर यह तअ़लीमात सब के लिए हैं। अल्लाह तआ़ला ने अपनी अ़िबादत और वालिदैन के साथ हुस्ने सुलूक की ताकीद की है। इस से वालिदैन के साथ हुस्ने सुलूक की अहमियत मालूम होती है। एक दूसरी जगह इर्शाद फ़रमाया है कि-

وَقُل رَّبِّ ٱرْحَمْهُمَا كَمَا رَبَّيَانِى صَغِيرًا **(सूरः बनी इस्राईल,24)**

अनुवाद- *‘ऐ मेरे रब’! जिस तरह उन्होंने मुझे बचपन में पाला है, उसी तरह ‘तू’ भी उन पर रह़म कर।”*

यह कुर्आन की उन चन्द दुआ़ओं में से एक दुआ़ है जिस के माँगने का अल्लाह तआ़ला ने तरीक़ा बताया है ।

मिस्कीनों के साथ सुलूक-

ह़दीस में मिस्कीन की तअ़रीफ़ (परिभाषा) यूँ की गई है, “मिस्कीन वह नहीं है जो लोगों के घरों के चक्कर लगाता रहे, एक लुक़्मे और दो लुक़्मे और एक खजूर और दो खजूर की ख़्वाहिश उसे दर बदर फिराती रहे। बल्कि मिस्कीन तो वह है जिस के पास इतना माल न हो जिस से वह अपनी ज़रूरत पूरी कर सके और कोई उस का ह़ाल भी न जानता हो कि उसे ख़ैरात दे और न वह ख़ुद लोगों से सवाल करे।” **(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् ज़कात बाब 53, ह़दीस 1479)**

सबसे अच्छा अ़मल-

‘अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद’ (रज़ि०) की रिवायत है, मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से पूछा, “कौन सा

अ़मल सब से बेहतर है?" तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "वक़्त पर नमाज़ अदा करना", मैंने पूछा, "फिर कौन सा?" आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "वालिदैन के साथ अच्छा व्यवहार", मैंने पूछा, "फिर कौन सा?" आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह की राह में जिहाद करना।" **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

इन आयतों में लोगों के साथ अच्छी बात करने का हुक्म दिया गया है। 'इमाम ह़सन बसरी' कहते हैं कि इसमें लोगों को अच्छाई का हुक्म देना और बुराई से मना करना पहले नम्बर पर शामिल है। शब्द 'नास' से इस बात की ओर इशारा है कि इस हुक्म में सभी लोग यहाँ तक कि कुफ़्फ़ार भी शरीक हैं, कि उनसे भी मुस्कुराते हुए अच्छे अन्दाज़ में बात की जाए। इसलिए कि मुसलमान बद्ज़बान, गाली गलौज देने वाला और झगड़ालू नहीं होता। रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "छोटी से छोटी नेकी को भी कमतर न जानो चाहे नेकी यही (छोटी सी) हो कि तुम अपने भाई के साथ मुस्कुराते हुए मिलो।" **(मुस्लिम, तिर्मिज़ी)**

इसी तरह ऊपर की आयत में यह भी बताया गया कि बनी इस्राईल ने अ़हद (प्रतिज्ञा) को तोड़ा और नेक काम न कर सके सिवाय चंद लोगों के, जिन्होंने हुक़ूक़ की अदाएगी में कोताही नहीं की और रसूलुल्लाह (सल्ल०) पर ईमान ले आये थे। इस तरह यह भी मालूम हुआ कि किसी क़ौम में कुछ नेक लोगों का वजूद अ़ज़ाबे इलाही से रोक नहीं सकता।

84-85

وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَكُمْ لَا تَسْفِكُونَ دِمَاءَكُمْ وَلَا تُخْرِجُونَ أَنفُسَكُم مِّن دِيَارِكُمْ ثُمَّ أَقْرَرْتُمْ وَأَنتُمْ تَشْهَدُونَ ۞ ثُمَّ أَنتُمْ هَٰؤُلَاءِ تَقْتُلُونَ
أَنفُسَكُمْ وَتُخْرِجُونَ فَرِيقًا مِّنكُم مِّن دِيَارِهِمْ تَظَاهَرُونَ عَلَيْهِم بِالْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ وَإِن يَأْتُوكُمْ أُسَارَىٰ تُفَادُوهُمْ
وَهُوَ مُحَرَّمٌ عَلَيْكُمْ إِخْرَاجُهُمْ ۚ أَفَتُؤْمِنُونَ بِبَعْضِ الْكِتَابِ وَتَكْفُرُونَ بِبَعْضٍ ۚ فَمَا جَزَاءُ مَن يَفْعَلُ ذَٰلِكَ مِنكُمْ إِلَّا خِزْيٌ
فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا ۖ وَيَوْمَ الْقِيَامَةِ يُرَدُّونَ إِلَىٰ أَشَدِّ الْعَذَابِ ۗ وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ۞

अ़हद का ख़याल-

इन दोनों आयतों में बताया गया है कि अल्लाह तआ़ला ने बनी इस्राईल से तौरेत में यह अ़हद (प्रतिज्ञा) लिया था कि वह आपस में एक दूसरे को क़त्ल नहीं करेंगे, घरों से न निकालेंगे और गुलाम न बनाएँगे। रसूलुल्लाह (सल्ल०) के ज़माने में मदीना के यहूद को वही अ़हद (प्रतिज्ञा) याद दिलाया जा रहा है और उनसे कहा जा रहा है कि तुम लोगों ने इस अ़हद का ख़याल न रखा और एक दूसरे को क़त्ल करते रहे और एक गिरोह को उन के घरों से निकाल दिया।

ऐसे लोगों को इ़बरत नाक सज़ा सुनाई गई है। 'बनू क़ुरैज़ा' सन् ५ हिज्री में जंगे 'ख़न्दक़' के बाद क़त्ल किये गये और उन के बच्चे और औ़रतें ग़ुलाम और लौंडियाँ बनाई गईं। बनू नज़ीर ४ हिज्री में जिलावतन (देश बदर) हुए और उन पर जिज़्या लगाया गया।

ज़्यादा तफ़्सील के लिए देखें **(सूरः अल् ह़श्रः आयत नं० 3)**

नबी करीम (सल्ल०) के ज़माने में अन्सार के दो क़बीले थे 'औस' और 'खज़्रज' उनकी आपस

में बराबर जंग होती रहती थी।

यहूदियों के क़बीले-

इस तरह मदीना में यहूदियों के तीन क़बीले थे।

(1) बनू कैनक़ाअ़

(2) बनू नज़ीर

(3) बनू क़ुरैज़ा

यह भी आपस में लड़ते रहते थे। 'बनू क़ुरैज़ा', 'औस' के साथी थे और 'बनू कैनक़ाअ़' व 'बनू नज़ीर', 'ख़ज़्रज' के साथी थे। जंग में यह अपने लोगों की मदद करते और यहूदियों को क़त्ल करते, उनके घरों को लूटते और उन्हें वतन से बाहर कर देते, जबकि तौरेत के अनुसार ऐसा करना ह़राम था।

इस तरह उन यहूदियों को जो क़ैदी बन जाते, तो उन्हें फ़िद्या देकर छुड़ाते और कहते कि हमें तौरेत में यही हुक्म दिया गया है। इन आयतों में यहूदियों के उसी किरदार को बयान किया गया है कि यह कुछ चीज़ों पर तो ईमान लाते हैं और कुछ को छोड़ देते हैं।

उनकी इस ह़रकत की वजह से अल्लाह ने उनके ऊपर दुनिया में ज़िल्लत व रुस्वाई मुसल्लत कर दी और अपने रसूल को उन के ख़िलाफ़ उभारा जिसके नतीजे में क़त्ल, क़ैद और जिला वतन (देश-निकाला) की मुसीबतों में मुब्तिला हुए और आख़िरत में भी सख़्त अ़ज़ाब में मुब्तिला किये जाएँगे।

ह़ाफ़िज़ इब्ने कसीर लिखते हैं कि यहूद के इसी ख़बासत की वजह से, कि तौरेत का जो हुक्म अपनी ख़्वाहिश के अनुसार पाया, बयान किया और जिसे चाहा छुपा लिया, तौरेत और उस में मौजूद एह़काम और रसूलुल्लाह (सल्ल०) की सिफ़ात, आप की बेअ़सत (अभ्युदय) और हिजरत से सम्बन्धित ख़बरों के बारे में उन पर भरोसा नहीं किया जा सकता।

86 أُولَٰئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الْحَيَاةَ الدُّنْيَا بِالْآخِرَةِ ۖ فَلَا يُخَفَّفُ عَنْهُمُ الْعَذَابُ وَلَا هُمْ يُنْصَرُونَ ﴿٨٦﴾

अल्लाह तआ़ला ने तौरेत के कुछ एह़काम पर उन के अ़मल न करने का ज़रिया यह बताया है कि उन्होंने दुनिया की ज़िन्दग़ी को आख़िरत पर तर्जीह (प्राथ्मिकता) दी कि अगर अपने साथियों की हिमायत न की तो दुनिया के लोग क्या कहेंगे। 'क्या कहेंगे' के मुक़ाबले में आग के अ़ज़ाब को क़ुबूल कर लिया।

87 وَلَقَدْ آتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ وَقَفَّيْنَا مِنْ بَعْدِهِ بِالرُّسُلِ ۖ وَآتَيْنَا عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ الْبَيِّنَاتِ وَأَيَّدْنَاهُ بِرُوحِ
الْقُدُسِ ۗ أَفَكُلَّمَا جَاءَكُمْ رَسُولٌ بِمَا لَا تَهْوَىٰ أَنْفُسُكُمُ اسْتَكْبَرْتُمْ فَفَرِيقًا كَذَّبْتُمْ وَفَرِيقًا تَقْتُلُونَ ﴿٨٧﴾

'बनी इस्राईल' का जुर्म-

यहाँ 'बनी इस्राईल' के कुछ जुर्मों का ज़िक्र किया गया है कि अल्लाह ने उन्हें तौरेत दी जिसे उन्होंने बदल डाला, अल्लाह ने ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) के बाद उनमें बहुत से नबियों और रसूलों को भेजा ताकि

'तौरेत' को लागू करें लेकिन उनके साथ अच्छा मामला न किया, उनको झुठ्लाया और बहुतों को क़त्ल किया और आख़िर में अल्लाह ने 'हज़रत ईसा' (अ़लै०) को मब्अ़ूस किया जिन्होंने अल्लाह के हुक्म से लोगों को दअ़वत दी तो 'बनी इस्राईल' ने उन्हें झुठलाया और उनके ख़िलाफ़ षडयन्त्र किया और उनकी बातों को अक्सर इन्कार करते रहे।

'बय्यिनात' से मुराद वह मोअ़जिज़े (चमत्कार) हैं जो अल्लाह ने 'हज़रत ईसा' (अ़लै०) को दिये और जिनका ज़िक्र 'सूरः आले इ़मरान' और 'सूरः अल् माइदा' में आया है। 'हज़रत ईसा (अ़लै०)' अल्लाह के हुक्म से मुर्दों को ज़िन्दा करते थे। मिट्टी से बनी हुई चिड़ियों में फूँक मारते तो वह अल्लाह के हुक्म से उड़ने लगती थीं। पैदाइशी नाबीना (अन्धे) और सफ़ेद दाग के मरीज़ पर हाथ फेरते तो मरीज़ को शिफ़ा हो जाती थी जिनका ज़िक्र 'सूरः आले इ़मरान' आयत नम्बर ४६ में है।

रूहुल् कुदुस-

यहाँ 'रूहुल् कुदुस' से मुराद (तात्पर्य) हज़रत जिब्रईल (अ़लै०) हैं। इनको रूहुल् कुदुस इसलिए कहा गया है कि वह अल्लाह के हुक्म से पैदा हो गये थे, जैसा कि ख़ुद हज़रत ईसा (अ़लै०) को 'रूहुन' कहा गया है और 'कुदुस' से अल्लाह की ज़ात मुराद है। इब्ने कसीर ने इसी को सही कहा है क्योंकि 'अल् माइदा' आयत नम्बर १० में 'रूहुल् कुदुस' और 'इन्जील' दोनों अलग-अलग माने में ज़िक्र हुए हैं। इसलिए 'रूहुल् कुदुस' से 'इन्जील' मुराद नहीं हो सकती एक और आयत में हज़रत जिब्रईल (अ़लै०) को 'अर्रूहुल् अमीन' फ़रमाया गया है और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने हज़रत हस्सान (रज़ि०) के बारे में फ़रमाया ऐ अल्लाह! 'रूहुल् कुदुस' से इसकी ताईद फ़रमा। एक दूसरी हदीस में है जिब्रईल (अ़लै०) तुम्हारे साथ हैं इससे मालूम हुआ कि 'रूहुल् कुदुस' से मुराद जिब्रईल (अ़लै०) ही हैं। **(फ़त्हुल् बारी)**

यहूदी हज़रत ईसा (अ़लै०) के झुठलाने और क़त्ल करने के लिए इसलिए लगे रहते थे कि जो हुक्म वह बताते वह, उनके ख़्वाहिशों के ख़िलाफ़ होते।

आयत नं० 88 से 96 तक

وَقَالُوا قُلُوبُنَا غُلْفٌ ۚ بَلْ لَعَنَهُمُ اللَّهُ بِكُفْرِهِمْ فَقَلِيلًا مَا يُؤْمِنُونَ ﴿٨٨﴾ وَلَمَّا جَاءَهُمْ كِتَابٌ مِنْ عِنْدِ اللَّهِ مُصَدِّقٌ لِمَا مَعَهُمْ وَكَانُوا
مِنْ قَبْلُ يَسْتَفْتِحُونَ عَلَى الَّذِينَ كَفَرُوا فَلَمَّا جَاءَهُمْ مَا عَرَفُوا كَفَرُوا بِهِ ۚ فَلَعْنَةُ اللَّهِ عَلَى الْكَافِرِينَ ﴿٨٩﴾ بِئْسَمَا اشْتَرَوْا بِهِ
أَنْفُسَهُمْ أَنْ يَكْفُرُوا بِمَا أَنْزَلَ اللَّهُ بَغْيًا أَنْ يُنَزِّلَ اللَّهُ مِنْ فَضْلِهِ عَلَىٰ مَنْ يَشَاءُ مِنْ عِبَادِهِ ۖ فَبَاءُوا بِغَضَبٍ عَلَىٰ غَضَبٍ ۚ وَلِلْكَافِرِينَ
عَذَابٌ مُهِينٌ ﴿٩٠﴾ وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ آمِنُوا بِمَا أَنْزَلَ اللَّهُ قَالُوا نُؤْمِنُ بِمَا أُنْزِلَ عَلَيْنَا وَيَكْفُرُونَ بِمَا وَرَاءَهُ وَهُوَ الْحَقُّ مُصَدِّقًا لِمَا
مَعَهُمْ ۗ قُلْ فَلِمَ تَقْتُلُونَ أَنْبِيَاءَ اللَّهِ مِنْ قَبْلُ إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿٩١﴾ وَلَقَدْ جَاءَكُمْ مُوسَىٰ بِالْبَيِّنَاتِ ثُمَّ اتَّخَذْتُمُ الْعِجْلَ مِنْ بَعْدِهِ
وَأَنْتُمْ ظَالِمُونَ ﴿٩٢﴾ وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَكُمْ وَرَفَعْنَا فَوْقَكُمُ الطُّورَ خُذُوا مَا آتَيْنَاكُمْ بِقُوَّةٍ وَاسْمَعُوا ۖ قَالُوا سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا وَأُشْرِبُوا
فِي قُلُوبِهِمُ الْعِجْلَ بِكُفْرِهِمْ ۚ قُلْ بِئْسَمَا يَأْمُرُكُمْ بِهِ إِيمَانُكُمْ إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿٩٣﴾ قُلْ إِنْ كَانَتْ لَكُمُ الدَّارُ الْآخِرَةُ عِنْدَ اللَّهِ خَالِصَةً مِنْ
دُونِ النَّاسِ فَتَمَنَّوُا الْمَوْتَ إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٩٤﴾ وَلَنْ يَتَمَنَّوْهُ أَبَدًا بِمَا قَدَّمَتْ أَيْدِيهِمْ ۗ وَاللَّهُ عَلِيمٌ بِالظَّالِمِينَ ﴿٩٥﴾ وَلَتَجِدَنَّهُمْ أَحْرَصَ
النَّاسِ عَلَىٰ حَيَاةٍ وَمِنَ الَّذِينَ أَشْرَكُوا ۚ يَوَدُّ أَحَدُهُمْ لَوْ يُعَمَّرُ أَلْفَ سَنَةٍ وَمَا هُوَ بِمُزَحْزِحِهِ مِنَ الْعَذَابِ أَنْ يُعَمَّرَ ۗ وَاللَّهُ بَصِيرٌ
بِمَا يَعْمَلُونَ ﴿٩٦﴾

अनुवाद-

(88) और (यहूदी) कहते, ''हमारे दिल पर्दे में (सुरक्षित) हैं,'' (नहीं) बल्कि अल्लाह ने उन पर लानत कर रखी है; उनके कुफ़्र की वजह से; तो वह बहुत कम ईमान लाते हैं। (89) और जब उनके पास एक किताब अल्लाह की ओर से आयी तस्दीक़ करने वाली, उसकी जो उनके पास (पहले से) मौजूद है; और इसके पहले वे (खुद ही इस किताब द्वारा) काफ़िरों पर फ़त्ह़ (विजय) माँगा करते थे; फिर जब उनके पास वह आ गया, जिसको वे खूब पहचानते थे, तो उसी से इन्कार कर बैठे; सो अल्लाह की लानत हो काफ़िरों (इन्कारियों) पर; (90) बुरी है, वह चीज़ जिसके बदले में उन्होंने अपनी जानों को बेच डाला है; इस जलन से कि अल्लाह अपने बन्दों में से जिसपर चाहता है अपनी मेहरबानी में से नाज़िल करता है (अल्लाह की नाज़िल की हुई किताब से) कुफ़्र करने लगे तो वे (उसके) ग़ज़ब पर ग़ज़ब में मुब्तिला हो गये, और काफ़िरों के लिए ज़िल्लत वाला अ़ज़ाब है; (91) और जब उनसे कहा जाता है, ''ईमान लाओ, उस कलाम पर जो अल्लाह ने उतारा है,'' तो कहते हैं, हम उस पर ईमान रखते हैं जो (किताब) हमारे ऊपर उतारी गई है; और जो कुछ उसके अ़लावा है, उससे इन्कार करते हैं;'' हालाँकि वह (खुद भी) हक़ है और उसकी भी तस्दीक़ करने वाली है जो उनके पास है, कह दीजिए, ''अच्छा तुम इससे पहले नबियों को क्यों क़त्ल करते रहे, अगर तुम ईमान वाले हो?'' (92) और तुम्हारे पास मूसा खुली-खुली निशानियाँ लेकर आए इस पर भी तुमने बछड़े को अपना (उपास्य बना) लिया, और तुम तो हो ही ज़ालिम; (93) और जब 'हमने' तुमसे पक्का अ़हद (वचन) लिया, और तुम्हारे ऊपर तूर (पहाड़) को बुलन्द किया, ''जो कुछ 'हमने' तुम्हें दिया है, उसे मज़बूती के साथ पकड़ो, और सुनो;'' वे बोले, ''हमने सुना, लेकिन हम मानते नहीं और उनके कुफ़्र की वजह से बछड़ा उनके दिल में समाया हुआ था, कह दीजिए, ''अगर तुम ईमान वाले (बनते) हो तो तुम्हारा ईमान तुमको कैसी बुरी बात सिखाता है;'' (94) कह दीजिए, ''अगर अल्लाह के यहाँ आख़िरत का घर (परलोक का सुख) ख़ास कर

तुम्हारे ही लिए है, दूसरे लोगों के लिए नहीं; तो अगर तुम्हारा यह ख़याल सच्चा है तो मौत की तमन्ना करो;" (95) लेकिन वे इसकी इच्छा कभी न करेंगे, उन बुरे कामों की वजह से जो वे अपने हाथों आगे भेज चुके हैं; और अल्लाह तो ज़ालिमों को खूब जानता है; (96) और आप उन्हें जीवन का हरीस (लालची) सब लोगों से बढ़कर पाएँगे, और (यहाँ तक कि) मुश्रिकों से भी बढ़कर; उनमें से हर-एक यह चाहता है कि हज़ार वर्ष की उम्र पाए, और अगर इतनी उम्र पा भी जाएँ तो वह उन्हें (आख़िरत के) अ़ज़ाब से बचा न सकेगी, और जो कुछ वे कर रहे हैं अल्लाह उसे ख़ूब देख रहा है।

आयत नं० 88 से 96 तक की व्याख्या

88 وَقَالُوْا قُلُوْبُنَا غُلْفٌ ؕ بَلْ لَّعَنَهُمُ اللّٰهُ بِكُفْرِهِمْ فَقَلِيْلًا مَّا يُؤْمِنُوْنَ۝

जब नबी करीम (सल्ल०) ने यहूदे मदीना को दअ़वते इस्लाम दी, तो उन्होंने आप को नाउम्मीद करने के लिए यह बातें कहीं जो ऊपर आयत में ज़िक्र की गईं, ताकि दोबारा उन को आप दअ़वत न दे सकें।

'हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा' से आयत के माने इस तरह है, उन्होंने कहा, "हमारे दिल के ऊपर पर्दे पड़े हुए हैं, तुम्हारी बात हमारी समझ में नहीं आती इसलिए हमारे ऊपर मेह़नत न करो।"

'हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा' से दूसरा क़ौल यह है कि यहूद ने कहा, "हमारे दिल इ़ल्म व मअ़रिफ़त (अल्लाह की पहचान) से भरे हुए हैं, अब इन में मुहम्मद के इ़ल्म के लिए कोई गुन्जाइश नहीं है।"

अल्लाह ने उन के क़ौल को रद्द करते हुए कहा, "ऐसी बात नहीं कि उन के दिल क़ुबूले ह़क़ की सलाह़ियत (योग्यता) नहीं रखते, बल्कि अल्लाह ने उन के कुफ़्र व हठधर्मी की वजह से उन के दिलों पर लअ़नत भेज दी है और उन पर मुहर लगा दी है, इसलिए उन का यह ह़ाल है कि तौरेत के बहुत ही थोड़े अह़काम पर ईमान रखते हैं।"

और जब उन के लिए अल्लाह की तरफ़ से एक किताब आई जो उन के पास पहले से मौजूद किताब की तस्दीक़ (पुष्टि) कर रही थी (तो उस का इन्कार कर बैठे) ह़ालाँकि इस से पहले काफ़िरों पर ग़ल्बा की तमन्ना किया करते थे।

89 وَلَمَّا جَآءَهُمْ كِتٰبٌ مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ مُصَدِّقٌ لِّمَا مَعَهُمْ ۙ وَكَانُوْا مِنْ قَبْلُ يَسْتَفْتِحُوْنَ عَلَى الَّذِيْنَ
كَفَرُوْا ۚ فَلَمَّا جَآءَهُمْ مَّا عَرَفُوْا كَفَرُوْا بِهٖ ؗ فَلَعْنَةُ اللّٰهِ عَلَى الْكٰفِرِيْنَ۝

यहूदियों की हठधर्मी

पहले लिखा जा चुका है कि मदीने में यहूदी इसलिए आकर आबाद हुए थे कि आख़िरी नबी (अन्तिम महाईशदूत) की बेअ़सत (अभ्युदय) होगी तो हम उनकी इत्तिबा (अनुसरण) करेंगे। यह लोग अपने को

तौहीद परस्त (एकेश्वरवादी) समझते थे और यह समझते थे कि हमारे पास आसमानी इल्म (ईश्वरीय ज्ञान) मौजूद है। मदीना में 'औस' और 'खज़रज' नामी दो क़बीले भी यमन से आकर आबाद हो गये थे, मगर यह लोग मूर्ति पूजक मुश्रिक थे। यहूदियों की इन लोगों से जंग होती रहती थी और यहूदी उनसे कहा करते थे कि आख़िरी नबी आने वाले हैं, हम उन पर ईमान लाकर उनके साथ मिलकर तुमसे जिहाद करेंगे और उस वक़्त तुम को तबाह कर देंगे और क़ौम-ए-आ़द की तरह़ तुमको क़त्ल करेंगे।

यह लोग आख़िरी नबी ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के गुणों को जानते थे जो तौरेत में भविष्यवाणी के रूप में मौजूद थी। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की बेअ़सत हो गई और आप मदीना मुनव्वरह तशरीफ़ ले आये और यहूदियों ने आप को उन निशानियों और गुणों के ज़रिये पहचान भी लिया, जो उन्होंने किताबों में पढ़ रखा था कि यही वह आख़िरी नबी हैं जिनका इन्तिज़ार कर रहे थे। उन्होंने आप के मोअ़जिज़ात (चमत्कार) भी देखे और सब कुछ देखते हुए आप की नुबूव्वत और रिसालत का इंकार कर बैठे। उनको 'औस' और खज़रज के कुछ लोगों ने तवज्जोह भी दिलाई कि ऐ यहूदियों! तुम अल्लाह से डरो और इस्लाम क़ुबूल करो। तुम ही कहा करते थे कि आख़िरी नबी पर ईमान लाकर और उनके साथ मिलकर तुम्हें हरा (पराजित कर) देंगे। इसलिए तुम अब ह़क़ को क़ुबूल करो, आख़िरी नबी पर ईमान लाओ और मुसलमान हो जाओ।

इस पर उन्होंने कहा, "यह वह नबी नहीं हैं हम जिसके इन्तिज़ार में थे, वह तो हम ही में से होगा, अ़रब क़ौम में से नहीं होगा।" यह लोग जानते पहचानते हुए इन्कार कर गये। उनको सिर्फ़ यह ह़सद (ईर्ष्या) थी कि यह नबी अ़रब क़ौम में क्यों आया। इस आयत में उनके इसी इन्कार और सच्चाई से मुँह मोड़ने का ज़िक्र है और आख़िर में यह बताया गया, कि काफ़िरों पर अल्लाह की लअ़नत हो जो सच्चाई और ह़क़ीक़त को जानते हुए भी उसके मानने से इन्कार कर गये। **(इब्ने कसीर)**

आख़िरी नबी का इन्तिज़ार–

ह़ज़रत 'अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास (रज़ि०)' से रिवायत है कि यहूदी अ़रब में ज़िल्लत की ज़िन्दगी गुज़ार रहे थे इसलिए वह अपने लिए एक तरह की ताक़त ह़ासिल करने के लिए कुछ अ़रब क़बीलों से मिलकर रहना पसंद करते थे और जब 'औस' व 'खज़रज' वाले उन पर ज़्यादती करते तो कहते कि जल्द ही आख़िरी नबी आने वाले हैं हम उनके साथ मिलकर तुमसे जंग करेंगे और ग़ल्बा (प्रभुत्व) ह़ासिल करेंगे। लेकिन जब अल्लाह ने उस आख़िरी नबी को अ़रबों में मब्ऊ़स किया तो ह़सद की वजह से कि यह नबी 'बनी इस्राईल' में से क्यों न हुआ उन पर ईमान लाने से इन्कार कर दिया।

'अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम' ने अपने इस्लाम लाने के क़िस्से में यहूदियों को ख़िताब करके कहा था कि "ऐ यहूद क़ौम! अल्लाह से डरो, उस अल्लाह की क़सम जिसके सिवा कोई मअ़बूद (उपास्य) नहीं। तुम जानते हो कि मुह़म्मद (सल्ल०) अल्लाह के रसूल हैं और दीने ह़क़ (सत्य धर्म) लेकर आये हैं।" **(बुख़ारी)**

यहूद के अक्सर लोगों ने ह़सद की वजह से ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को नहीं माना, मगर कुछ

यहूद मदीना में ऐसे भी थे जिन्होंने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को अपने सहीफ़ों (ग्रन्थों) में दी गई भविष्यवाणियों (पेशनगोईयों) की बिना पर सच्चे दिल से इस्लाम क़ुबूल कर लिया। जैसे- एक मालदार यहूदी आ़लिम 'ज़ैद बिन सोअ़ना' का हदीस में इस तरह ज़िक्र आया है।

'ज़ैद बिन सोअ़ना' का इस्लाम-

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम (रज़ि०) कहते हैं कि जब अल्लाह तआ़ला ने 'ज़ैद बिन सोअ़ना' को हिदायत देने का इरादा फ़रमाया तो इस तरह हुआ कि 'ज़ैद' ने अपने दिल में कहा कि नुबूव्वत की जितनी अ़लामते थीं वह सब की सब तो मैंने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को देखकर पहचान लीं। सिवाय दो निशानियों के जिनके विषय में मुझको मालूम नहीं हुआ।

उसमें से एक तो यह है कि उनकी नर्म मिजाज़ी सख़्त मिजाज़ी से बढ़ी हुई होगी। दूसरे यह कि जितना उनके साथ बुरा सुलूक किया जाएगा उतना ही उनकी नर्म मिज़ाजी की शान ज़्यादा होगी।

'ज़ैद बिन सोअ़ना' कहते हैं कि मैं बराबर इस बारे में सोचता रहा कि मैं इनसे बेतकल्लुफ़ी पैदा कर लूँ तो मैं इन दोनों बातों का भी इम्तिहान ले लूँ।

एक बार एक बद्‌वी अ़रब ने अपने क़बीले के लिए इस्लाम की तर्ग़ीब के सिलसिले में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से कुछ माल मदद के तौर पर माँगा। मगर आप (सल्ल०) के पास उस वक़्त नक़द कुछ मौजूद न था तो ज़ैद बिन सोअ़ना ने खुद हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से कहा कि आप मुझसे कुछ मिस्काल (माप) सोना क़र्ज़ ले लीजिए और निश्चित समय पर उसके बदले खजूरें मुझे दे दीजिएगा। इस पर रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने कुछ सोना क़र्ज़ ले लिया और उस बद्‌वी अ़रब को दे दिया। जब तय किये हुए समय के अनुसार थोड़े दिन रह गये तो ज़ैद बिन सोअ़ना ने अपने क़र्ज़ की याद दहानी के लिए हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के पास उस वक़्त पहुँचे जब कि आप (सल्ल०) एक नमाज़े जनाज़ा पढ़कर दोपहर की धूप में एक दीवार के साये में बैठे हुए थे।

क़र्ज़ की अदाएगी का मुतालूबा-

ज़ैद पहले से अपनी सोची समझी स्कीम के अनुसार सीधे हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के पास पहुँचे और आप के कुर्ता और चादर का दामन पकड़कर तेज़ी से अपने क़र्ज़ के अदायगी का मुताल्बा किया और कहा, "मेरा क़र्ज़ क्यों नहीं अदा करते, ऐ मुहम्मद! मैं अ़ब्दुल मुत्तलिब की औलाद को ख़ूब जानता हूँ वह इसी तरह के हैं" यह देखकर तमाम सहाबा को बहुत गुस्सा आया और हज़रत उ़मर (रज़ि०) बर्दाश्त न कर सके और ज़ैद बिन सोअ़ना को डांट कर कहा, "ऐ खुदा के दुश्मन तू हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की ख़िद्‌मत में क्या बक्वास कर रहा है और मैं सुन रहा हूँ और आप (सल्ल०) के साथ इस तरह बुराई से पेश आ रहा है और मैं अपनी आँखों से देख रहा हूँ। उस ज़ात की क़सम जिसने आप को दीने हक़ देकर भेजा है, अगर मुझे हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की नाराज़गी का डर न होता तो मैं अभी अपनी तलवार से तेरा सर उतार देता।"

इधर हज़रत उ़मर (रज़ि०) यह फ़रमा रहे थे और उधर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) बड़े सुकून के

साथ उनको देखते और मुस्कुराते जाते। उसके बाद आप ने हज़रत उ़मर (रज़ि०) से फ़रमाया, "तुम इसको और मुझको इन बातों के अलावा कुछ और समझाते तो बेहतर होता। मुझसे यह कहते कि इसका क़र्ज़ बिना किसी देरी के पूरा-पूरा अदा कर दो और इससे कहते कि अच्छे तरीक़े से मांगो।" फिर फ़रमाया, "ऐ उमर, जाओ और इसके क़र्ज़ अदा करने का इन्तिज़ाम करो और इसके साथ जो ज़ोरदार आवाज़ में तुमने बात की है उसके बदले में इसको बीस साअ़ खजूरें और ज़्यादा दे दो।"

'ज़ैद बिन सोअ़ना' को ह़क़ीक़त में न क़र्ज़ लेना था और न बीस साअ़ ज़्यादा खजूरों की ज़रूरत थी। न उनके दिल पर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की डाँट का कोई असर था बल्कि उल्टा वह एक अजीब तरह की ख़ुशी मह़सूस करने लगे कि वह जिस चीज़ को यहाँ आज़माने आये थे और जिस चीज़ की भविष्यवाणी अपने धार्मिक ग्रन्थों में पढ़ रखी थी उसे आज़मा लिया, अब उन्हें ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को अल्लाह का नबी मानने और इस्लाम क़ुबूल करने में कोई हिचकिचाहट न थी।

क़ुबूलियत का एलान-

अतः उन्होंने उसी वक़्त ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) जिनकी डांट कुछ देर पहले खा चुके थे, गवाह बनाकर इस्लाम क़ुबूल करने का एलान किया और न केवल इस्लाम का एलान किया बल्कि अपना आधा माल भी मुसलमानों के लिए सद्क़ः कर दिया। फिर जब वह अपनी क़ौम के पास लौट कर आये तो वहाँ उनके इस्लाम क़ुबूल कर लेने की ख़बर उन के आने से पहले ही पहुँच चुकी थी। दूसरे यहूदी उ़लमा ने तंज़ (Comment) करते हुए पूछा, "तुम तो क़र्ज़ वसूलने गये थे मुह़म्मद (सल्ल०) के पास। यह क्या हुआ?"

उन्होंने बड़े इत्मिनान से जवाब दिया, नहीं क़र्ज़ अदा करने गया था जो पहले से मेरे ज़िम्मे था। उस के बाद यह तमाम जंगों में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के साथ ही रहे और जिस साल तबूक की जंग हुई उस साल इन की वफ़ात हो गई थी।

अल्लाह की किताब-

अल्लाह की किताब अर्थात क़ुर्आन मजीद की सिफ़त (गुण) बयान करते हुए फ़रमाया कि 'मुसद्दिक़ुल् लिमा मअ़हुम' कि यह किताब उस किताब की तस्दीक़ करने वाली है जिसको वह अल्लाह की किताब मानते हैं (अर्थात तौरेत)। इसमें इस ओर इशारा है, कि अगर यह नबी उस नबी के ख़िलाफ़ होता जिस पर तौरेत नाज़िल हुई और यह नबी उस किताब की काट करता जो अल्लाह तआ़ला ने उस नबी पर नाज़िल की थी जिसको तुम मानते हो, और वह तो सारे नबियों पर ईमान लाने और अल्लाह तआ़ला की तमाम किताबों को मानने की दअ़वत देता है। उसका इन्कार इस ह़सद की वजह से करना कि यह अ़रब में पैदा हुआ बड़ी बेवक़ूफ़ी है बल्कि अल्लाह तआ़ला पर एतिराज़ है कि उसने अ़रब में नबी क्यों भेजा?

90 بِئْسَمَا اشْتَرَوْا بِهِ أَنفُسَهُمْ أَن يَكْفُرُوا بِمَا أَنزَلَ اللَّهُ بَغْيًا أَن يُنَزِّلَ اللَّهُ مِن فَضْلِهِ عَلَىٰ مَن يَشَاءُ
مِنْ عِبَادِهِ ۖ فَبَاءُوا بِغَضَبٍ عَلَىٰ غَضَبٍ ۚ وَلِلْكَافِرِينَ عَذَابٌ مُّهِينٌ ۝

इस में यह बताया गया है कि इन्होंने अपनी जानों को दोज़ख़ का ह़क़्दार बनाया। अल्लाह तआ़ला जिसको चाहे नुबूव्वत व रिसालत दे दे और जिस बन्दे पर चाहे अपनी किताब उतारे उसे पूरा-पूरा अधिकार है। उसमें किसी को एतिराज़ करने का कोई ह़क़ नहीं कि अल्लाह तआ़ला ने फ़लाँ को क्यों नबी बनाया और फ़लाँ को क्यों नहीं बनाया। यहूदी ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) की नुबूव्वत का इन्कार करके और अल्लाह तआ़ला पर एतिराज़ करके काफ़िर हुए, फिर अल्लाह के रसूल मुह़म्मद (सल्ल०) की किताब क़ुर्आन का इन्कार करके कुफ़्र में बढ़ते चले गये जिससे अल्लाह तआ़ला के ग़ज़ब (प्रकोप) के ह़क़्दार हुए, इसलिए आख़िरत में ज़िल्लत के अ़ज़ाब में गिरफ़्तार होंगे।

अगर यह लोग आख़िरी नबी पर ईमान लाते तो अपनी जानों को दोज़ख़ से बचा लेते, मगर इन्होंने इन्कार किया और इन्कार करके हमेशा के लिए अ़ज़ाब के ह़क़्दार हो गये।

यह बहुत ही बुरी चीज़ थी जिसकी वजह से यहूद ने अपनी जानों को हलाकत में डाल दिया। केवल ह़सद और नस्ली तअ़स्सुब (Discrimination) की बुनियाद पर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की नुबूवत (ईशदूत) का यक़ीन रखते हुए उन पर ईमान न लाए और अल्लाह के एक ग़ज़ब के बाद दूसरे ग़ज़ब के ह़क़्दार हुए।

91 وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ آمِنُوا بِمَا أَنزَلَ اللَّهُ قَالُوا نُؤْمِنُ بِمَا أُنزِلَ عَلَيْنَا وَيَكْفُرُونَ بِمَا وَرَاءَهُ ۚ وَهُوَ الْحَقُّ
مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَهُمْ ۗ قُلْ فَلِمَ تَقْتُلُونَ أَنبِيَاءَ اللَّهِ مِن قَبْلُ إِن كُنتُم مُّؤْمِنِينَ ۝

यहूदियों का जवाब

इस आयत में यहूदियों की यह बात ज़िक्र की गई है कि हम केवल तौरेत पर ईमान लाते हैं उसके सिवा किसी किताब को नहीं मानते। उसका जवाब देते हुए कहते हैं कि وَهُوَ الْحَقُّ مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَهُمْ ۗ कि जो किताब हमने मुह़म्मद (सल्ल०) पर नाज़िल की है वह उस किताब की तस्दीक़ करने वाली है जिस पर ईमान रखने के दावेदार हैं। क़ुर्आन को न मानना तौरेत के न मानने की तरह है।

तौरेत में यह हरगिज़ नहीं है कि 'बनी इस्राईल' के अलावा किसी क़ौम में से अल्लाह तआ़ला नबी भेजे तो उसको मत मानना और तौरेत के अलावा अल्लाह के किसी दूसरी किताब पर ईमान न लाना। यह सब बातें उनके अपने ह़सद की वजह से हैं। तौरेत में तो आख़िरी नबी के बेअ़सत (अभ्युदय) की ख़बर दी गई है, जब आख़िरी नबी (सल्ल०) की बेअ़सत हो गई तो उनकी निशानियाँ और सिफ़ात (गुण) से यहूदियों ने पहचान लिया कि यह आख़िरी नबी हैं।

इन सब के बावजूद आप पर ईमान न लाना और क़ुर्आन मजीद को न मानना यह तौरेत को मानने से इन्कार करना है। यह कहते हैं कि हमारा तौरेत पर ईमान है, हालाँकि इनका उस पर भी ईमान नहीं है। इस बात को अल्लाह तआ़ला ने तीन तरह से रद्द फ़रमाया-

तौरेत पर कैसे ईमान है-

(1) यह कि जब दूसरी किताब हक़ (सत्य) साबित हो गई और उसका अल्लाह की ओर से आना साबित हो गया तो फिर इन्कार करने से ईमान बाक़ी नहीं रहेगा।

(2) यह कि जब आख़िरी नबी (सल्ल०) और उनकी किताब क़ुर्आन की ख़बर और उस पर ईमान लाने का हुक्म ख़ुद तौरेत में मौजूद है तो फिर क़ुर्आन के इन्कार से तो ख़ुद तौरेत का इन्कार करना साबित होता है फिर यह अपने ईमान का दावा कैसे करते हैं?

(3) नबियों का क़त्ल करना तमाम आसमानी किताबों के अनुसार कुफ़्र है तो तुम्हारे बाप-दादाओं ने जो कुछ नबियों को क़त्ल किया और क़ातिलों को तुम अपना रहनुमा मानते हो अर्थात उनके इस काम से तुम राज़ी हो तो इस तरह़ भी तौरेत के साथ तुम्हारा इन्कार साबित होता है।

इन तीनों दलीलों के साथ अल्लाह तआ़ला ने यह साबित कर दिया कि यहूद के ईमान का दावा बिल्कुल ग़लत है और वह क़ुर्आन और आख़िरी नबी मुहम्मद (सल्ल०) को न मानकर कुफ़्र में फँसे हुए हैं। आगे की आयत में यहूद के ईमान के दावे में झूठा होने की चौथी दलील दी जा रही है।

92 وَلَقَدْ جَاءَكُمْ مُوسَىٰ بِالْبَيِّنَاتِ ثُمَّ اتَّخَذْتُمُ الْعِجْلَ مِنْ بَعْدِهِ وَأَنْتُمْ ظَالِمُونَ ۝

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है कि तुम तो ख़ुद ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) के ज़माने में कुफ़्र कर चुके हो और वह यह कि ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) तुम्हारे पास तौह़ीद व रिसालत की खुली हुई दलीलें लेकर आये, जो इस बात को साबित करती थीं कि अ़िबादत और पूजा अल्लाह ही के लिए ख़ास है। अल्लाह के सिवा कोई अ़िबादत के लायक़ नहीं फिर भी तुमने अर्थात तुम्हारी यहूद क़ौम ने ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) के कोहितूर (तूर पहाड़) पर जाने के बाद एक बछड़े को अपना मअ़बूद बना लिया, तो बछड़े को मअ़बूद बनाने का मामला उन मदीना के यहूद के साथ पेश नहीं आया, जो ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के ज़माने में क़ुर्आन के नाज़िल होने के समय मौजूद थे और जिनसे इन आयतों में ख़िताब हो रहा है, मगर चूंकि यह मदीना के यहूद अपने बाप-दादाओं के मदद्गार रहते थे इसलिए यह भी उसी में शामिल हैं।

इसमें उस तरफ़ भी इशारा हो गया कि जिनके बाप-दादाओं ने ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) को झुठलाया और कुफ़्र किया, उनके बाद के लोगों से ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का इन्कार कर देना कोई अजीब बात नहीं। आगे यहूद के ईमान लाने के दावे में झूठा होने की दलीलें दी जा रही हैं। **(इब्ने कसीर)**

93 وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَكُمْ وَرَفَعْنَا فَوْقَكُمُ الطُّورَ خُذُوا مَا آتَيْنَاكُمْ بِقُوَّةٍ وَاسْمَعُوا ۖ قَالُوا سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا
وَأُشْرِبُوا فِي قُلُوبِهِمُ الْعِجْلَ بِكُفْرِهِمْ ۚ قُلْ بِئْسَمَا يَأْمُرُكُمْ بِهِ إِيمَانُكُمْ إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ۝

यहूदियों से अहद

इससे पहले इसी सूरः के 'आठवें रुकूअ़' में यहूदियों से पक्का वादा लेने और कोहेतूर उन पर

उठाने और मज़बूती के साथ तौरेत को थामने और उस पर अ़मल करने का अहद लेने का ज़िक्र गुज़रा है, यहाँ फिर उसको दोहराया जा रहा है और साथ में यह भी फ़रमाया कि जब उनको हुक्म हुआ कि तौरेत को मज़बूती से थाम लो और उसके एह़काम को सुन लो तो उन्होंने कहा कि हमने सुन तो लिया लेकिन हम इस पर अ़मल न करेंगे।

हुक्म था कि दिल के कानों से सुनो, क़ुबूल करने के लिए सुनो, अ़मल करने के लिए सुनो, लेकिन उन्होंने अपने ऊपर पहाड़ गिरने के डर से उस वक़्त तो कह दिया कि हाँ हमने सुना और ऊपर के दिल से इक़रार भी कर लिया, जैसा कि मुफ़स्सिरीन ने लिखा है। लेकिन बाद में अपनी बात से फिर गये और नाफ़रमानी करने लगे और कहने लगे कि सुना तो है लेकिन अ़मल करना हमारे बस का काम नहीं।

बछड़े की मुह़ब्बत-

फिर फ़रमाया कि उन्होंने बछड़े की जो अ़िबादत की थी, उनके कुफ़्र की वजह से उनका यह ह़ाल हो गया था कि बछड़े की मुह़ब्बत उनके अन्दर पूरी तरह़ बैठ गई थी।

फिर फ़रमाया कि अगर तुम वास्तव में मोमिन हो जैसा कि तुम्हारा दावा है तो समझ लो कि तुम्हारा ईमान तुम्हें बुरे कामों की तअ़लीम (शिक्षा) देता है, कुफ़्र और शिर्क पर डालता है। यह कैसा ईमान है! जो तौह़ीद (एकेश्वरवाद) की तअ़लीम नहीं देता और अल्लाह तआ़ला की नाफ़रमानी पर उभारता है और आख़िरी नबी ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को झुठलाने पर उभारता है, जिनका नबी होना साबित हो चुका है।

यहूद का एक ग़लत अ़क़ीदा यह भी था कि जन्नत हमारे लिए ख़ास है। दूसरे मज़हब और क़ौम के लोगों के लिए नहीं। जन्नत के केवल हम ही वारिस होंगे आगे उनके इस ग़लत मनगढ़त अ़क़ीदे को रद्द फ़रमाया गया है जिसका ज़िक्र अगली आयतों में मौजूद है।

94 قُلْ إِنْ كَانَتْ لَكُمُ الدَّارُ الْآخِرَةُ عِنْدَ اللَّهِ خَالِصَةً مِنْ دُونِ النَّاسِ فَتَمَنَّوُا الْمَوْتَ إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٩٤﴾

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है قُلْ إِنْ كَانَتْ لَكُمُ الدَّارُ الْآخِرَةُ इब्ने जरीर (रज़ि०) ने 'अबू अल् आ़लिया' से नक़्ल किया है कि यहूदी यह दावा किया करते थे कि जन्नत में सिर्फ़ यहूदी दाख़िल होंगे, इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई यानी अगर जन्नत सिर्फ़ तुम्हारे ही लिए है तो मौत की तमन्ना कर के बताओ।

मौत की तमन्ना-

यहूद दावा करते थे कि जन्नत केवल उनके लिए है, दूसरे लोग उसमें दाख़िल नहीं होंगे। अल्लाह तआ़ला ने उनसे कहा कि अगर तुम सच्चे हो तो मौत की तमन्ना करो, ताकि तुम जल्द से जल्द दुनिया की परेशानियों से निजात पाकर जन्नत की राहतों को पा लो।

'इब्ने जरीर' ने यही तफ़्सीर बयान की है। 'ह़ाफ़िज़ इब्ने कसीर' कहते हैं कि इस आयत में दअ़वते 'मुबाहिला' है और 'इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा' से यही रिवायत है कि इस आयत की तफ़्सीर यूँ

होगी कि ऐ मेरे रसूल, आप यहूदियों से कहिये कि अगर तुम अपने दावा में सच्चे हो तो दुआ़ करो कि अल्लाह तआ़ला दोनों गिरोहों में से झूठे गिरोह को मौत दे दे। अतः जब रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने उनसे ऐसी दुआ़ करने को कहा तो उन्होंने इन्कार कर दिया क्योंकि उन्हें अपने गुनाहों का इ़ल्म था और इसकी ख़बर ख़ुद क़ुर्आन मजीद ने दे दी कि वह ऐसा कभी नहीं करेंगे।

'इमाम बुख़ारी' ने इब्ने अ़ब्बास से रिवायत की है कि अगर इस दअ़वते 'मुबाहिला' (क़सम खाकर दुआ़ करना) के बाद यहूद मौत की तमन्ना करते तो सब के सब मर जाते और जहन्नम में अपना ठिकाना अपनी आँखों से देख लेते।

95 وَلَنْ يَّتَمَنَّوْهُ اَبَدًا بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيْهِمْ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِالظّٰلِمِيْنَ ۝

इसमें अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है कि यह मौत की तमन्ना कैसे कर सकते हैं, यह तो लम्बी उम्र के आख़िरी दर्जे की ख़्वाहिश (इच्छा) रखते हैं क्योंकि मौत के बाद उन्हें अपने बुरे अन्जाम का पता है। वह तो चाहते हैं कि जितने दिन हो सके मौत उनसे टलती रहे।

96 وَلَتَجِدَنَّهُمْ اَحْرَصَ النَّاسِ عَلٰي حَيٰوةٍ ۚ وَمِنَ الَّذِيْنَ اَشْرَكُوْا ۚ يَوَدُّ اَحَدُهُمْ لَوْ يُعَمَّرُ اَلْفَ سَنَةٍ ۚ
وَمَا هُوَ بِمُزَحْزِحِهٖ مِنَ الْعَذَابِ اَنْ يُّعَمَّرَ ۭ وَاللّٰهُ بَصِيْرٌۢ بِمَا يَعْمَلُوْنَ ۝

यह तो दूसरे मुश्रिकों से जो किसी किताब को नहीं मानते उनसे भी ज़्यादा दुनिया में रहने और जीने के लालची हैं, इनकी तमन्ना है कि काश हज़ार साल ज़िन्दा रह जाते। अगर यह हज़ार साल भी ज़िन्दा रह जाएँ तो उसकी वजह से अ़ज़ाब से छुट्कारा नहीं हो सकता। कभी न कभी तो मौत आ ही जाएगी और मौत के बाद वही अ़ज़ाब और दोज़ख़ का सामना होगा जो काफ़िरों के लिए तय है। जैसे इब्लीस (शैतान) को हज़ारों साल की ज़िन्दग़ी दी गई, मगर अन्जाम उसका दोज़ख़ ही है।

अह़ादीस में मौत के याद रखने का हुक्म और फ़ज़ीलत भी आई है और साथ ही मौत की तमन्ना और दुआ़ न करने का हुक्म भी आया है।

ज़िन्दग़ी एक नेअ़मत है-

ज़िन्दग़ी अल्लाह तआ़ला की एक नेअ़मत और आख़िरत की कमाई का ज़रिया है, इस लिए लम्बी उम्र तो मोमिन के लिए नेकी की अ़लामत बताया गया है क्योंकि मोमिन की उम्र में ज़्यादती से नेकियाँ और भलाईयाँ ही ज़्यादा होती हैं और मौत से अ़मल ख़त्म हो जाता है। इस तरह़ उम्र की ज़्यादती से हो सकता है कि नेक आ़माल में ज़्यादती हो, लेकिन दुनिया की परेशानी से घबराकर मौत मांगना या उस की तमन्ना करना इस्लाम में जायज़ नहीं है।

एक ह़दीस में ह़ज़रत अनस (रज़ि०) से रिवायत है कि जब किसी को कोई तक्लीफ़ पहुँचे तो वह मरने की तमन्ना न करे और अगर इस क़िस्म की तमन्ना ज़रूरी हो तो यूँ कहे, "ऐ अल्लाह! मुझको ज़िन्दा रख उस वक़्त तक जब तक ज़िन्दग़ी मेरे लिए बेहतर है और मौत दे मुझको उस वक़्त जब मेरा मरना बेहतर हो।"

अल्लाह से मिलने की तमन्ना-

'बुख़ारी' व 'मुस्लिम' में ह़ज़रत उबादह बिन सामित (रज़ि०) से रिवायत है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जो व्यक्ति अल्लाह से मिलना पसंद करता है तो अल्लाह तआ़ला भी उससे मिलना पसंद करता है और जो व्यक्ति अल्लाह से मिलने को बुरा समझता है तो अल्लाह तआ़ला भी उससे मिलने को बुरा समझता है।"

यह सुनकर ह़ज़रत आ़इशा (रज़ियल्लाहु अ़न्हा) या ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की अज़वाजे मुतह्हरात {ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की पत्नियाँ} में से किसी और ने अ़र्ज़ किया, "या रसूलल्लाह (सल्ल०)! हम मौत को तो बुरा समझते हैं।" आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "यह बात नहीं है, बल्कि ह़क़ीक़त यह है कि मोमिन को जब मौत आती है तो उसको ख़ुशख़बरी सुनाई जाती है कि अल्लाह उससे राज़ी है और उसको अच्छा समझता है तो उस वक़्त उसके ख़याल में अल्लाह की रज़ामन्दी से बेहतर कोई चीज़ नहीं होती और फिर यह होता है कि मोमिन बन्दा अल्लाह तआ़ला से मुलाक़ात के लिए बेचैन हो जाता है और अल्लाह भी उससे मुलाक़ात को पसन्द करता है। काफ़िर बन्दा के पास जिस वक़्त मौत का फ़रिश्ता आता है तो उसको अ़ज़ाबे इलाही (ईश्वरीय प्रकोप) और सज़ा से डराता है तो उसके ख़याल में उस वक़्त मौत से बुरी चीज़ कोई नहीं होती तो वह अल्लाह तआ़ला से मिलने को बुरा समझता है और अल्लाह तआ़ला भी उससे मुलाक़ात को बुरा और नापसंद समझता है।" ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) जब इस दुनिया से रुख़सत होने लगे तो इन्तिक़ाल के क़रीब फ़रमाते थे।

"अल्लाहुम्मः अल्हिक़्नी बिल् रफ़ीक़िल् आ़ला" ऐ अल्लाह! मुझको जल्द आ़लमे बाला में पहुँचा दे और अपने दीदार से शर्फ़ बख़्शने वालों में मिला दे।

मगर जिनको आख़िरत का यक़ीन नहीं होता तो वह अपनी जान को बचाते और ह़राम व ह़लाल जिस तरह से मिले दुनिया को ह़ासिल करने के लिए जान खपाते हैं और जब दुनिया से तंग हो जाते हैं तो बेसब्र होकर मौत की तमन्ना करने लगते हैं कि काश! इस मुसीबत से छूट जाएँ, तो ऐसी मौत की तमन्ना करना ह़राम है।

❖

आयत नं० 97 से 103 तक

قُلْ مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِّجِبْرِيْلَ فَإِنَّهُ نَزَّلَهُ عَلٰى قَلْبِكَ بِإِذْنِ اللّٰهِ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ وَهُدًى وَّبُشْرٰى لِلْمُؤْمِنِيْنَ ۝ مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِّلّٰهِ
وَمَلٰٓئِكَتِهٖ وَرُسُلِهٖ وَجِبْرِيْلَ وَمِيْكٰلَ فَإِنَّ اللّٰهَ عَدُوٌّ لِّلْكٰفِرِيْنَ ۝ وَلَقَدْ أَنْزَلْنَآ إِلَيْكَ اٰيٰتٍۢ بَيِّنٰتٍ ۚ وَمَا يَكْفُرُ بِهَآ إِلَّا
الْفٰسِقُوْنَ ۝ أَوَكُلَّمَا عٰهَدُوْا عَهْدًا نَّبَذَهٗ فَرِيْقٌ مِّنْهُمْ ۚ بَلْ أَكْثَرُهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۝ وَلَمَّا جَآءَهُمْ رَسُوْلٌ مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ مُصَدِّقٌ
لِّمَا مَعَهُمْ نَبَذَ فَرِيْقٌ مِّنَ الَّذِيْنَ أُوْتُوا الْكِتٰبَ ۙ كِتٰبَ اللّٰهِ وَرَآءَ ظُهُوْرِهِمْ كَأَنَّهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ۝ وَاتَّبَعُوْا مَا تَتْلُوا الشَّيٰطِيْنُ عَلٰى
مُلْكِ سُلَيْمٰنَ ۚ وَمَا كَفَرَ سُلَيْمٰنُ وَلٰكِنَّ الشَّيٰطِيْنَ كَفَرُوْا يُعَلِّمُوْنَ النَّاسَ السِّحْرَ وَمَآ أُنْزِلَ عَلَى الْمَلَكَيْنِ بِبَابِلَ هٰرُوْتَ وَمٰرُوْتَ ۚ
وَمَا يُعَلِّمٰنِ مِنْ أَحَدٍ حَتّٰى يَقُوْلَآ إِنَّمَا نَحْنُ فِتْنَةٌ فَلَا تَكْفُرْ ۚ فَيَتَعَلَّمُوْنَ مِنْهُمَا مَا يُفَرِّقُوْنَ بِهٖ بَيْنَ الْمَرْءِ وَزَوْجِهٖ ۚ وَمَا هُمْ بِضَآرِّيْنَ
بِهٖ مِنْ أَحَدٍ إِلَّا بِإِذْنِ اللّٰهِ ۚ وَيَتَعَلَّمُوْنَ مَا يَضُرُّهُمْ وَلَا يَنْفَعُهُمْ ۚ وَلَقَدْ عَلِمُوْا لَمَنِ اشْتَرٰىهُ مَا لَهٗ فِي الْاٰخِرَةِ مِنْ خَلٰقٍ ۚ وَلَبِئْسَ
مَا شَرَوْا بِهٖٓ أَنْفُسَهُمْ ۚ لَوْ كَانُوْا يَعْلَمُوْنَ ۝ وَلَوْ أَنَّهُمْ اٰمَنُوْا وَاتَّقَوْا لَمَثُوْبَةٌ مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ خَيْرٌ ۚ لَوْ كَانُوْا يَعْلَمُوْنَ ۝

अनुवाद-

(97) कह दीजिए, ''जो कोई जिब्रईल का दुश्मन हो, उसने तो इस (क़ुर्आन) को आप के दिल पर अल्लाह के हुक्म से उतारा है, वह तस्दीक़ (सत्यापन) करने वाला है उस (किताब) की जो उसके पहले से है; और ईमान वालों के लिए हिदायत और ख़ुशख़बरी है। (98) जो व्यक्ति अल्लाह का दुश्मन हो, और उसके फ़रिश्तों का और उसके रसूलों का और जिब्रईल और मीकाईल (फ़रिश्तों) का, तो अल्लाह भी ऐसे काफ़िरों (इन्कारियों) का दुश्मन है। (99) और (ऐ पैग़म्बर!) 'हमने' तुम्हारे पास स्पष्ट निशानियाँ भेजी हैं और बद्किरदारों (दुष्कर्मियों) के सिवा, और कोई उनसे इन्कार न करेगा। (100) क्या यह (उनकी नीति है,) कि उन्होंने जब कभी कोई अ़हद (प्रतिज्ञा) किया तो उन्हीं में से किसी (न किसी) गिरोह ने उसे तोड़ डाला, बल्कि अक्सर तो ईमान ही नहीं रखते; (101) और जब उनके पास अल्लाह की ओर से रसूल आए, और (वह) उस किताब (तौरात) की, जो इन (यहूदियों) के पास है तस्दीक़ (पुष्टि) करते हैं, तो जिन लोगों को किताब दी गई थी उनमें से एक गिरोह ने, अल्लाह की किताब को अपनी पीठ के पीछे फेक दिया, जैसे कि वे जानते ही नहीं। (102) और उन (ढकोसलों) के पीछे लग गये, जो सुलेमान की हुकूमत से (झूठ) जोड़कर; शैतानी चर्चा किया करते थे, (जादू का) और सुलेमान ने तो कभी कुफ़्र नहीं किया, बल्कि शैतान (ही) कुफ़्र किया करते थे; कि लोगों को जादू सिखाते थे और उन बातों के भी पीछे हो लिए जो बाबुल (शहर) में 'हारूत' और 'मारूत' दो फ़रिश्तों पर उतरा था; और वे (दोनों) किसी को कुछ नहीं सिखाते थे जब तक यह कह न देते थे कि ''हम तो आज़माइश के लिए हैं, तो तुम (इसे सीखकर) कुफ़्र में न पड़ो।'' लोग उनसे ऐसा (जादू) सीखते जिसके ज़रिये पति-पत्नी में जुदाई डाल दें, हालाँकि अल्लाह के हुक्म के बिना वह अपनी इन बातों से किसी को नुक़सान नहीं पहुँचा सकते थे, मगर यह कुछ ऐसे (मन्त्र) सीखते जिनसे इन्हें ही नुक़सान पहुँचता और फ़ायदा कुछ न होता, और वह इतना ज़रूर जानते थे; कि जो व्यक्ति इन बातों (जादू) का ख़रीदार होगा उसके लिए आख़िरत (परलोक) में कोई हिस्सा, नहीं, वह बहुत बुरा था जिसके बदले में उन्होंने अपने आप को बेच डाला, काश! वे जानते। (103) और अगर वे ईमान ले आते और तक़्वा (परहेज़गारी) अपनाते तो उसका

सवाब अल्लाह के यहाँ कहीं बेहतर होता; काश! वे (इतना) जानते।

आयत नं० 97 से 103 तक की व्याख्या

97 قُلْ مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِّجِبْرِيْلَ فَإِنَّهٗ نَزَّلَهٗ عَلٰى قَلْبِكَ بِإِذْنِ اللّٰهِ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ وَهُدًى وَّبُشْرٰى لِلْمُؤْمِنِيْنَ

قُلْ مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِّجِبْرِيْلَ इमाम बुख़ारी (रह०) ने 'हज़रत अनस (रज़ि०)' से रिवायत नक़्ल की है कि अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) के आने की ख़बर जिस वक़्त सुनी, हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम (रज़ि०) एक ज़मीन में फलों को जमा कर रहे थे वह रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्‌मत में हाज़िर हुए और अ़र्ज़ किया कि मैं आप से तीन बातें दर्याफ़्त करना चाहता हूँ, जिन का इ़ल्म नबी के अ़लावा और किसी को नहीं होता।

1- क़ियामत की अ़लामतें क्या हैं?

2- जन्नतियों का सब से पहला खाना क्या होगा?

3- लड़का अपने बाप या अपनी माँ के क्यों मुशाबेह (हम मिस्ल, समान) होता है।

आप (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, "इन बातों के जवाब के मुतअ़ल्लिक़ अभी जिब्रईल अमीन ने मुझे आगाह किया है", इब्ने सलाम बोले, 'जिब्रईल', आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "हाँ जिब्रईल ने", इब्ने सलाम बोले "फ़रिश्तों में से जिब्रईल तो यहूदियों के दुश्मन हैं", इस पर आप (सल्ल०) ने यह आयते करीमा तिलावत फ़रमाई قُلْ مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِّجِبْرِيْلَ हाफ़िज़ बिन हजर अ़स्क़लानी 'फ़त्हुल्‌ बारी' में फ़रमाते हैं कि-

हदीस के सियाक़ व सबाक़ (Back ground) से यह बात ज़ाहिर हो रही है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने यहूदियों की रद्द के लिए इस आयते करीमा की तिलावत फ़रमाई और इस तिलावत से आयत का उसी वक़्त नाज़िल होना लाज़िम नहीं आता और यही चीज़ ज़्यादा सही है क्योंकि इस आयते करीमा के नुज़ूल के बारे में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम के वाक़िये के अ़लावा और दूसरा वाकिया भी साबित है।

चुनाँचे इमाम अहमद, तिर्मिज़ी और नसई ने 'बक्र बिन शिहाब' और 'सईद बिन जुबैर' के वास्ते से 'हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०)' से नक़्ल किया है कि यहूदियों की एक जमाअ़त रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्‌मत में हाज़िर हुई और अ़र्ज़ किया, "ऐ अबुल्‌ क़ासिम, (सल्ल०) हम आप से पाँच बातों के मुतअ़ल्लिक़ दर्याफ़्त करते हैं अगर वह पाँचों बातें आप (सल्ल०) ने हमें बतला दीं तो हम यह पहचान लेंगे कि बेशक आप नबी (सल्ल०) हैं।"

और बक़िया हदीस को बयान किया, जिस में यह भी है कि यहूदियों ने आप (सल्ल०) से दर्याफ़्त किया कि बनी इस्राईल ने अपने ऊपर किन चीज़ों को हराम किया था और अ़लामाते नबी (नबी के गुण) क्या हैं? और उस के आवाज़ की हक़ीक़त क्या है? और बच्चा मर्द या औ़रत क्यों होता है? और आसमान से वह्य कौन लेकर आता है, यहाँ तक कि यहूदी बोले हमें बतलाइये कि आप के पास वह्य कौन लेकर आता है, आप (सल्ल०) ने फ़रमाया जिब्रईल अमीन, यहूदी बोले यह तो जंग व क़िताल और अ़ज़ाबे

इलाही के अहकाम लेकर आते हैं वह हमारे दुश्मन हैं, अगर आप 'मीकाईल' का नाम लेते जो रहमत की बारिश के साथ आते हैं तो यह बेहतर होता, तब यह आयते करीमा नाज़िल हुई। **(तफ़्सीर इब्ने अ़ब्बास)**

इस आयत के नाज़िल होने की और भी वजहें मुफ़स्सिरीन ने बयान करते हुए लिखी हैं कि जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) मदीना तशरीफ़ लाए और यहूदियों को समझाना शुरु किया तो यहूदियों ने अपने कुछ आ़लिमों को आप (सल्ल०) के पास भेजा, उन यहूदियों के उ़लमा ने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से कहा कि हम आप से कुछ बातें पूछना चाहते हैं जिनको नबियों के सिवा कोई नहीं जानता।

अगर आप ने सही जवाब दे दिया तो वास्तव में आप नबी हैं, जिनकी भविष्यवाणी ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) ने दी है। इस तरह उन्होंने चार सवालात किये।

यहूदी उ़लमा के सवालात-

इसी तरह़ यहूदियों के उ़लमा ने और भी सवालात किये। जैसे-

(1) पहला सवाल यह था कि सबसे पहले 'ह़ज़रत याक़ूब (अ़लै०)' ने अपने ऊपर किस चीज़ को ह़राम किया था।

(2) दूसरा सवाल यह था कि 'नबी उम्मी' जिनका ज़िक्र तौरेत में आया है उनकी क्या निशानियाँ हैं।

(3) तीसरा सवाल यह था कि पेट के अन्दर लड़का या लड़की किस तरह हो जाता है।

(4) चौथा सवाल यह था कि आप के पास वह्य या ख़बर कौन लाता है?

पहला जवाब-

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तुमको मालूम है कि ह़ज़रत याक़ूब (अ़लै०) को एक सख़्त मर्ज़ हो गया था और जब मर्ज़ लम्बा हो गया तो उन्होंने मन्नत मानी कि अगर अल्लाह तआ़ला मुझे अच्छा कर देगा तो मैं अपना पसंदीदा खाना-पीना छोड़ दूँगा और वह खाना हरगिज़ नहीं खाऊँगा जो मुझे सबसे ज़्यादा पसंद है, अर्थात ऊँट का गोश्त और दूध। अल्लाह तआ़ला ने उन्हें सेहत दी और उन्होंने अपनी मन्नत पूरी की और ऊँट का गोश्त खाना छोड़ दिया।"

दूसरा जवाब-

दूसरे सवाल का जवाब आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "वह नबी उम्मी जिसका तौरेत में ज़िक्र है उसके सिफ़ात (गुणों) में से यह बात होगी कि उसकी आँखें सोएँगी लेकिन दिल बेदार (जागता) रहेगा"।

तीसरा जवाब-

तीसरे सवाल का जवाब यह है कि, "तुम लोग जानते हो कि मर्द का पानी गाढ़ा और सफ़ेद होता है और औ़रत का पानी पतला और ज़र्द होता है। इन दोनों पानियों में जो पानी अल्लाह के हुक्म से ग़ालिब आ जाता है बच्चा वैसा ही हो जाता है"।

चौथा जवाब-

चौथे सवाल का जवाब आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जिब्रईल (अ़लै०) मेरे पास वह्य लाते हैं और हर नबी के पास 'जिब्रईल' ही वह्य लेकर आते थे। यहूद बोले कि आप ने सब कुछ सही बताया, लेकिन जिब्रईल हमारा दुश्मन है। वही अ़ज़ाब लेकर आते हैं और हमारे बाप-दादा को उन्होंने ही तबाह व बर्बाद किया है। अगर 'मीकाईल (अ़लै०)' आप के पास 'वह्य' लाते तो बेशक हम आप के ऊपर ईमान ले आते क्योंकि 'मीकाईल' बारिश और रह़मत लाते हैं। इस तरह यहूद ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) पर ईमान लाने से इन्कार कर दिया। इस पर यह आयतें नाज़िल हुईं । **(इब्ने कसीर भाग-1)**

'जिब्रईल' से दुश्मनी-

अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि जो व्यक्ति 'जिब्रईल' का दुश्मन हो तो हुआ करे (जिब्रईल का कोई कुसूर नहीं वह अल्लाह की ओर से नियुक्त हैं। अल्लाह तआ़ला की ओर से जो कुछ उनको दिया जाता है वही वह पहुँचाते हैं) उन्होंने ही आप के दिल पर अल्लाह के हुक्म से क़ुर्आन नाज़िल किया है और यह क़ुर्आन पिछली आसमानी किताबों की तस्दीक़ करता है और अहले ईमान को बशारत भी देता है। जो व्यक्ति 'जिब्रईल' से दुश्मनी रखता है वह वास्तव में अल्लाह का दुश्मन है क्योंकि 'जिब्रईल' को अल्लाह तआ़ला ने क़ासिद (दूत) बनाया। जो कुछ अल्लाह तआ़ला ने जिब्रईल के ज़रिये अपने नबियों पर भेजा 'जिब्रईल' वह्य लेकर आये उनसे दुश्मनी करना अल्लाह से दुश्मनी करना है।

98 مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِّلّٰهِ وَمَلٰٓئِكَتِهٖ وَرُسُلِهٖ وَجِبْرِيْلَ وَمِيْكٰلَ فَاِنَّ اللّٰهَ عَدُوٌّ لِّلْكٰفِرِيْنَ ۝۹۸

जो व्यक्ति अल्लाह का, उसके फ़रिश्तों का, उसके रसूलों का, जिब्रईल और मीकाईल का दुश्मन होगा वह काफ़िर है। अल्लाह तआ़ला काफ़िरों का दुश्मन है। यहूदियों की यह कैसी बात है कि हम उस किताब को नहीं मानते जिसको जिब्रईल लेकर आये, पहली बात तो वह जो कुछ लेकर आए अल्लाह का कलाम है, लाने वाला कोई भी हो भेजने वाले को देखा जाता है। एह़काम भेजने वाला अल्लाह तआ़ला है फिर अल्लाह के हुक्मों को इसलिए न मानना कि जिब्रईल लाए हैं जबकि वह अल्लाह के हुक्म से लाया हो बहुत बड़ी महरूमी की बात है।

'जिब्रईल' का दुश्मन-

मुफ़स्सिर 'इब्ने कसीर' लिखते हैं कि फ़रिश्तों और रसूलों के ज़िक्र करने के बाद 'ह़ज़रत जिब्रईल' और 'मीकाईल' का जो ज़िक्र किया उससे यह बात साफ़ हो गई कि अल्लाह के किसी रसूल से दुश्मनी रखना फ़रिश्तों में से हो या इन्सानों में से, वास्तव में अल्लाह तआ़ला से दुश्मनी है। जो व्यक्ति यह कहता हो कि 'जिब्रईल' से हमारी दुश्मनी है और 'मीकाईल' से हमारी दुश्मनी नहीं है वह ग़लत कहता है।

वह वास्तव में 'मीकाईल (अ़लै०)' का भी दुश्मन है क्योंकि एक फ़रिश्ते से दुश्मनी, सब फ़रिश्तों से दुश्मनी करने की तरह है, जो कुफ़्र है। यहूदियों का यह कहना कि 'मीकाईल' हमारे दोस्त हैं, ग़लत

है। 'जिब्रईल' का या किसी भी फ़रिश्ते का दुश्मन होना सारे फ़रिश्तों का दुश्मन होना है और उसमें अल्लाह की दुश्मनी छिपी हुई है।

इमाम बुख़ारी (रह०) ने "हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत की है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) की हदीस क़ुद्सी है (जो मेरे किसी दोस्त से दुश्मनी करेगा उसे मैं जंग की ख़बर देता हूँ) और जिसका दुश्मन अल्लाह होगा उसकी दुनिया व आख़िरत दोनों बर्बाद हो जाएगी। इसीलिए अल्लाह ने जिब्रईल के दुश्मनों के ख़िलाफ़ अपने ग़ज़ब का इज़्हार किया है।" **(बुख़ारी)**

99 وَلَقَدْ اَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ اٰيٰتٍۢ بَيِّنٰتٍ ۚ وَمَا يَكْفُرُ بِهَآ اِلَّا الْفٰسِقُوْنَ ۝

आयात बय्यिनात का इन्कार

हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया गया है कि 'इब्ने सूरया' यहूदी ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से कहा, "ऐ मुहम्मद! कोई ऐसी चीज़ आप नहीं लाए जिसे हम पहचानते हों और न आप के पास ऐसी कोई खुली हुई दलील है जिसकी वजह से हम आपकी बात मान लें।"

इस पर यह आयत नाज़िल हुई कि हमने, ऐ मुहम्मद (सल्ल०)! आप की ओर खुली हुई आयतें नाज़िल फ़रमाई हैं जो आयात बय्यिनात हैं इन आयतों में यहूद की छिपी हुई बातें उनके भेद और राज़ बयान करना उनके गुज़रे हुए लोगों के हालात बयान करना और उनकी तब्दील की हुई चीज़ों का पता देना, यह सब कुछ अल्लाह तआ़ला ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर ज़ाहिर फ़रमाया और अपनी किताब में नाज़िल फ़रमाया, जो व्यक्ति इंसाफ़ पसंद हो हसद और जलन की वजह से अपनी जान को हलाक करने पर तुल न गया हो उसके लिए यह दलील काफ़ी है, लेकिन अगर किसी को हक़ और वास्तविकता से जलन हो और बुराई उसकी फ़ितूरत बन गई हो तो वही इन खुली हुई आयतों का इन्कार कर सकता है।

इन आयतों के सुनने के बाद होना तो यह चाहिए था कि वह रसूल (सल्ल०) पर ईमान ले आते जिन्होंने किसी आदमी से कुछ सीखे बिना उन्हें इन बातों की ख़बर दी, लेकिन वह इस नेअ़मत से महरूम रहे। **(तफ़्सीर दुर्रे मन्सूर, भाग-1 पेज नं० 94)**

100 اَوَكُلَّمَا عٰهَدُوْا عَهْدًا نَّبَذَهٗ فَرِيْقٌ مِّنْهُمْ ۭ بَلْ اَكْثَرُھُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۝

وَلَقَدْ اَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ اٰيٰتٍۢ بَيِّنٰتٍ ۚ 'इब्ने अबी हातिम' ने 'सईद' और 'इकरमा' के वास्ते से हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि 'इब्ने सूरया' ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से अ़र्ज़ किया कि आप हमारे पास कोई ऐसी चीज़ लेकर नहीं आये जिसे हम पहचानते हों और न आप पर कोई बयान करने वाली वाज़ेह (स्पष्ट) आयत नाज़िल हुई है, तो इस पर अल्लाह तआ़ला ने इस आयत وَلَقَدْ اَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ اٰيٰتٍۢ بَيِّنٰتٍ को नाज़िल फ़रमाया। **(तफ़्सीर इब्ने अ़ब्बास)**

वादे की ख़िलाफ़वर्ज़ी-

तफ़्सीर इब्ने कसीर में है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने यहूदियों के सामने ज़िक्र किया जो ख़ातिमुन्नबीय्यीन (आख़िरी नबी) के बारे में उनसे अ़हद लिया गया था वह याद दिलाया, तो वह साफ़ इन्कार कर गये। उनमें से एक आदमी 'मालिक बिन सैफ़' था, उसने कहा, "अल्लाह की क़सम मुहम्मद के बारे में हमसे कोई अ़हद नहीं लिया गया।" इस पर यह आयत नाज़िल हुई أَوَكُلَّمَا عَاهَدُوا عَهْدًا نَّبَذَهُ فَرِيقٌ अर्थात यह लोग उस अ़हद का इन्कार करते हैं और हाल इनका यह है कि जब कभी इन्होंने कोई अ़हद किया तो उनमें से एक जमाअ़त ने उसको रद्द कर दिया, उनका यह मिजाज़ है और अ़हद को तोड़ने की आ़दत है।

'रूहुल् मआ़नी' में यह भी लिखा है कि इसमें नबी (सल्ल०) को तसल्ली दी गई है कि उनकी परवाह न करें और उनकी मुख़ालिफ़त को अपने दिल का बोझ न बनाएँ।

101 وَلَمَّا جَاءَهُمْ رَسُولٌ مِّنْ عِندِ اللَّهِ مُصَدِّقٌ لِّمَا مَعَهُمْ نَبَذَ فَرِيقٌ مِّنَ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ
كِتَابَ اللَّهِ وَرَاءَ ظُهُورِهِمْ كَأَنَّهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ۝

इसी बुरी आ़दत का नतीजा था कि जब नबी करीम (सल्ल०) तशरीफ़ लाए और क़ुर्आन ने तौरेत की तस्दीक़ की तो यहूदियों ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) की तमाम निशानियाँ जानने और पहचानने के बावजूद झुठला दीं और क़ुर्आन को अल्लाह की किताब मानने से इन्कार कर दिया।

क़ुर्आन को तो क़ुबूल किया ही नहीं मगर तौरेत के भी इन्कारी हो गये और इसमें जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की सिफ़ात बयान की गईं थीं उनके इज़्हार के बजाय उनको छिपा लिया और इस अन्दाज़ से इन्कार करने लगे कि जैसे वह जानते ही नहीं कि तौरेत अल्लाह की किताब है और उन्हें पता ही नहीं कि इसमें हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की नुबूव्वत के दलायल (प्रमाण) मौजूद हैं। **(रुहुल् मआ़नी, भाग-1, पेज नं० 336)**

102 وَاتَّبَعُوا مَا تَتْلُوا الشَّيَاطِينُ عَلَىٰ مُلْكِ سُلَيْمَانَ ۖ وَمَا كَفَرَ سُلَيْمَانُ وَلَٰكِنَّ الشَّيَاطِينَ كَفَرُوا يُعَلِّمُونَ
النَّاسَ السِّحْرَ وَمَا أُنزِلَ عَلَى الْمَلَكَيْنِ بِبَابِلَ هَارُوتَ وَمَارُوتَ ۚ وَمَا يُعَلِّمَانِ مِنْ أَحَدٍ حَتَّىٰ يَقُولَا
إِنَّمَا نَحْنُ فِتْنَةٌ فَلَا تَكْفُرْ ۖ فَيَتَعَلَّمُونَ مِنْهُمَا مَا يُفَرِّقُونَ بِهِ بَيْنَ الْمَرْءِ وَزَوْجِهِ ۚ وَمَا هُم بِضَارِّينَ
بِهِ مِنْ أَحَدٍ إِلَّا بِإِذْنِ اللَّهِ ۚ وَيَتَعَلَّمُونَ مَا يَضُرُّهُمْ وَلَا يَنفَعُهُمْ ۚ وَلَقَدْ عَلِمُوا لَمَنِ اشْتَرَاهُ مَا لَهُ فِي
الْآخِرَةِ مِنْ خَلَاقٍ ۚ وَلَبِئْسَ مَا شَرَوْا بِهِ أَنفُسَهُمْ ۚ لَوْ كَانُوا يَعْلَمُونَ ۝

'मालिक बिन अबी अल् सैफ़ (रह०)' बयान करते हैं कि जिस वक़्त रसूलुल्लाह (सल्ल०) भेजे गये और आप ने उस अ़हद व मीसाक़ को, जो उन से लिया गया था और उस अ़हद और पैमान को, जो उन से हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के बारे में लिया गया था, बयान किया तो यह यहूदी बोले वल्लाहु (क़सम है) हम से मुहम्मद (सल्ल०) के सम्बन्धित कोई अ़हद (वादा) नहीं लिया गया। इस पर यह आयत नाज़िल हुई।

وَاتَّبَعُوا مَا تَتْلُوا الشَّيٰطِيْنُ इब्ने जरीर (रज़ि०) ने 'शहर बिन ख़ौशब' से नक़्ल किया है कि यहूदी कहते थे मुहम्मद (सल्ल०) को देखो हक़ बात को बातिल (ग़लत) बातों से मिलाते हैं, सुलेमान (अ़लै०) का ज़िक्र अम्बिया-ए-किराम के साथ करते हैं। क्या वह जादूगर नहीं थे? हवा पर सवार रहते थे? इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयात وَاتَّبَعُوا مَا تَتْلُوا الشَّيٰطِيْنُ नाज़िल फ़रमाई।

रसूलुल्लाह (सल्ल०) से सवाल-

'इब्ने अबी हा़तिम' ने 'अबू अल्‌ आ़लिया' से नक़्ल किया है कि यहूदियों ने तौरेत की बातों में से किसी ज़माने के मुतअ़ल्लिक़ रसूलुल्लाह (सल्ल०) से दर्याफ़्त किया और यहूदी आप से किसी चीज़ के बारे में नहीं दर्याफ़्त करते थे, मगर यह कि अल्लाह तआ़ला आप पर उस के बारे में जो कुछ यहूदी सवाल करते, अल्लाह तआ़ला वह्य नाज़िल फ़रमा देता था। जब यहूदियों ने यह देखा तो आपस में कहने लगे कि यह तो (यानी रसूल सल्ल०) जो बातें हमारे पास नाज़िल शुदह हैं उन से बहुत ज़्यादा जानने वाले हैं, फिर उन से जादू के बारे में सवालात व एतिराज़ात किया। इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई وَاتَّبَعُوا مَا تَتْلُوا الشَّيٰطِيْنُ। **(तफ़्सीर इब्ने अ़ब्बास)**

इन आयतों में अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है कि इन्होंने अल्लाह की किताब तौरेत को भी नहीं माना और सहर या जादू जैसी शैतानी और काफ़िराना चीज़ की बात मानी, जिसकी चर्चा शयातीन यानी ख़बीस जिन्नात :हज़रत सुलेमान (अ़लै०)' के ज़माने में किया करते थे और यह ख़बीस जिन्नात जो कुफ़्र की बातें और सहर (जादू) ख़ुद भी करते और दूसरे लोगों को भी इस सहर (जादू) की शिक्षा देते।

इस तरह वही 'सहर' (जादू) अब तक चला आ रहा है और इसकी इत्तिबअ़ (अनुसरण) यह यहूद करते हैं और इसी तरह यह यहूद उस 'सहर' की भी पैरवी करते हैं, जो किसी ज़माना में शहर 'बाबुल' में दो फ़रिश्तों पर जिनका नाम 'हारूत' व 'मारूत' था, एक ख़ास हिक्मत के लिए नाज़िल किया गया था।

जादू का सबब (कारण)-

दुनिया में जो कुछ होता है सब अल्लाह के हुक्म से ही होता है चाहे उसका सबब (कारण) कुछ भी हो। जादू भी एक सबब है जिसकी वजह से उसका कुछ प्रभाव पड़ता है और जिस पर जादू किया जाए उस को तक्लीफ़ पहुँच जाती है। हज़रत हूद (अ़लै०) को उनकी उम्मत के लोगों ने कहा,

"اِنَّمَا اَنْتَ مِنَ الْمُسَحَّرِيْنَ" (कि तुम तो उन्हीं लोगों में से हो जिन पर जादू कर दिया गया हो।)

"यही बात हज़रत शुऐब (अ़लै०) के बारे में उनकी उम्मत के लोगों ने कही।"

हज़रत मूसा (अ़लै०) का जादूगरों से मुक़ाबला तो मशहूर ही है, यह जादूगरी का सिल्‌सिला हज़रत सुलेमान (अ़लै०) और उनके बाद भी रहा। एक यहूदी ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर जादू कर दिया था जिसका ज़िक्र बुख़ारी शरीफ़ (भाग-2) पेज नं० 585 पर मौजूद है।

अब भी जादूगर दुनिया में मौजूद हैं और जादूगरी दुनिया में रायज है। पहली बात जो यहूद की शिकायत के बारे में ऊपर की आयतों में अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाई कि किताब को उन्होंने पसे पुश्त (पीठ

पीछे) डाल दिया। फिर फ़रमाया 'हज़रत सुलेमान (अ़लै०)' के ज़माने में शैतान पढ़ते थे यानी जादू करते थे और उसमें मश्गूल रहते थे। मुफ़स्सिरीन ने इस तरह के वाक़ियात लिखे हैं कि वक़्ती तौर पर चन्द दिन हज़रत सुलेमान (अ़लै०) की हुकूमत जाती रही थी। उस ज़माने में शैतानों ने उनकी कुर्सी के नीचे जादू की चीज़ें दफ़न कर दी थीं और जब उनकी वफ़ात हो गई तो उनको खोद कर निकाला और लोगों में मशहूर कर दिया कि सुलेमान (अ़लै०) नबी नहीं थे, बल्कि जादू के ज़ोर पर हुकूमत चलाते थे। **(इब्ने कसीर)**

बनी इस्राईल के उ़लमा ने तो इस बात को नहीं माना, लेकिन उनके अवाम ने इस बात को मान लिया और कहने लगे कि यह जादू ही सुलेमान (अ़लै०) का इ़ल्म है और इसके सीखने सिखाने में लग गये और नबियों की किताबों को छोड़ बैठे।

जब हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने हज़रत सुलेमान (अ़लै०) के विषय में फ़रमाया कि वह अल्लाह के पैग़म्बरों में से थे तो यहूदियों ने कहा कि मुहम्मद (सल्ल०) यह कहते हैं कि सुलेमान बिन दाऊद (अ़लै०) नबी थे, हालाँकि वह केवल जादूगर थे। इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल की और हज़रत सुलेमान (अ़लै०) को जादू से बरी फ़रमाया और साफ़ फ़रमाया-

وَمَا كَفَرَ سُلَيْمٰنُ وَلٰكِنَّ الشَّيٰطِيْنَ كَفَرُوْا अर्थात सुलेमान ने कुफ़्र नहीं किया, लेकिन शयातीन ने कुफ़्र किया। शयातीन का यह काम था कि लोगों को जादू सिखाते थे। **(कुर्तुबी व इब्ने कसीर)**

'बाबुल' का जादू और 'हारूत' व 'मारूत'-

एक ज़माने में जादू का बहुत चर्चा था। विशेष रूप से ईराक़ के शहर 'बाबुल' में जादू के असर को देखकर लोग उससे बहुत प्रभावित हुए। जादूगरों को लोग बहुत बड़ा समझने लगे। अल्लाह तआ़ला ने जादू के नुक़्सान को बताने के लिए दो फ़रिश्तों को भेजा जिनका नाम 'हारूत' और 'मारूत' था ताकि वह सहर (जादू) की हक़ीक़त को बताएँ और मोअ़जिज़ा (चमत्कार) और 'सहर' (जादू) में अन्तर मालूम हो जाए। इसमें लोगों का इम्तिहान भी लेना एक मक़्सद था कि देखा जाए, कि कौन ईमान और ख़ैर को और कौन कुफ़्र और शिर्क को अपनाता है। जब उन दोनों फ़रिश्तों ने अपना काम शुरु किया तो लोग उनके पास आने जाने लगे और कहने लगे कि हमको भी जादू के तरीक़े सिखा दो।

वह दोनों फ़रिश्ते जब उनको जादू की कोई चीज़ बताते तो पहले यह कह देते कि देखो अल्लाह तआ़ला ने हमको अपने बन्दों की आज़माइश का ज़रिया बनाया है कि इन चीज़ों को जानने के बाद, कौन व्यक्ति अपने दीन की हिफ़ाज़त करता है, ताकि बुराई से बच जाए और कौन व्यक्ति अपने दीन को बर्बाद करता है और अपने लिए बुराई को पसंद करता है। वह फ़रिश्ते कहते थे कि हम तुमको नसीहत करते हैं कि अगर तुम जादू हासिल करना चाहते हो तो अच्छी नियत से हासिल करो, ताकि बुराई से महफ़ूज़ रहो फिर इस नियत पर क़ायम रहना।

जादू बुराई के लिए न सीखो और इसको बुराई में इस्तेमाल न करना, वरना इस में लग कर ईमान बर्बाद कर लोगे। जो लोग उनसे इस तरह का अहद कर लेते थे वह उन्हें जादू के तरीक़े बता देते थे,

उसके बाद जो व्यक्ति अपने अ़हद पर क़ायम न रहता वह उस जादू से लोगों को तक्लीफ़ पहुँचाने का ज़रिया बना लेता और वह उसका अपना अ़मल होता। **(रुहुलू मआ़नी)**

जादू का प्रभाव-

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है कि यह लोग उन दोनों फ़रिश्तों से वह चीज़ सीख लेते थे जिसके ज़रिये मियाँ-बीवी में जुदाई कर देते थे। इससे मालूम हुआ कि जादू के प्रभाव से दो मुहब्बत वालों में नफ़रत पैदा हो सकती है और मेल-मुहब्बत वालों में जुदाई हो सकती है। जादू के ज़रिये उस ज़माना के लोग बड़ी-बड़ी ह़रकते करते और तक्लीफ़ पहुँचाते थे। उनमें से केवल एक चीज़ का ज़िक्र यहाँ फ़रमाया गया है जो अल्लाह तआ़ला को बहुत नापसंद है और शैतान को बहुत मह़बूब है वह यह कि मियाँ-बीवी के दर्मियान जुदाई करवा देना।

इब्लीस का तख़्त-

"ह़ज़रत जाबिर (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया कि बेशक इब्लीस अपना तख़्त पानी पर बिछाता है, फिर अपनी जमाअ़तों को भेजता है, उसकी जमाअ़तों के लोग तमाम लोगों को फ़ित्ना (उत्पीड़ा) में डालते हैं। इब्लीस का सबसे बड़ा क़रीबी उन में से वह होता है जो फ़ित्ना डालने में सबसे बड़ा हो। (फ़ित्नों में डालकर इब्लीस के लोग उसके पास आते रहते हैं और अपना-अपना कमाल ज़ाहिर करते हैं) उनमें से एक आकर कहता कि मैंने ऐसा-ऐसा किया तो इब्लीस कहता है कि तूने कुछ भी नहीं किया। फिर उनमें से एक आता है और कहता है कि मैं फ़लाँ व्यक्ति के पीछे इतना लगा कि उसके और उसकी बीवी के दर्मियान जुदाई पैदा कर दी। उसकी यह बात सुनकर इब्लीस उसे क़रीब कर लेता है और कहता है हाँ, तूने अच्छा काम किया।" ह़ज़रत आ़मश (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि मुझे जहाँ तक याद है इस ह़दीस में यह भी है कि इब्लीस उसको चिमटा लेता है जिसने मियाँ-बीवी में जुदाई करा दी हो। **(मुस्लिम)**

जादू का प्रभाव अल्लाह के हुक्म से-

अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि यह लोग जादू के ज़रिये किसी को कुछ नुक़्सान नहीं पहुँचा सकते मगर अल्लाह के हुक्म से। यह आयत दलील है कि जादू की एक ह़क़ीक़त है और अल्लाह के इरादे के अनुसार नुक़्सान पहुँचता है। जादूगर मियाँ-बीवी के सम्बन्ध को तोड़ने में भी कामियाब हो जाते हैं, मगर जो कुछ होता है वह अल्लाह के ही इरादे से होता है। जैसे-

आग से जल जाना और चाकू-छुरी से ज़ख़्म हो जाना और कुछ मशहूर दवाओं के खाने से अच्छा हो जाना और खाना खा लेने से पेट भर जाना। इस तरह की चीज़ें चूंकि रोज़ाना पेश आती हैं इसलिए इसमें कोई तअ़ज्जुब नहीं होता और यह सब अल्लाह तआ़ला के इरादे से होता है। मगर अल्लाह तआ़ला चाहे तो आग नहीं जला सकती, जैसे 'ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०)' पर आग से कुछ नहीं हुआ और अल्लाह

तआ़ला चाहे तो छुरी से कुछ भी नहीं कट सकती। {जैसे- ह़ज़रत इस्माईल (अ़लैहिस्सलाम) को छुरी ज़िब्ह़ न कर सकी} और अल्लाह तआ़ला चाहे तो ख़ूब ज़्यादा खाने से भी पेट न भरे (जैसा कि बाज़ मर्ज़ में होता है।) इसी तरह़ जादू के ज़रिये जो कुछ होता है उस के असर से ज़ाहिर होने वाली चीज़ों को लोग तअ़ज्जुब से देखते हैं।

कम इल्म लोग जादूगरों से बहुत ज़्यादा प्रभावित हो जाते हैं और बहुत से जाहिल पीर थोड़ा बहुत जादू का काम सीखकर जाहिलों को अपनी तरफ़ मुतवज्जेह (आकर्षित) करके कारोबार भी करते हैं। जादू का असर भी जब ही होता है, जब कि अल्लाह तआ़ला का इरादा हो। फिर जब अल्लाह तआ़ला चाहता है जादू कट भी जाता है। जैसा कि जब जादूगर ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) के मुक़ाबिले में आये तो उन्होंने फ़रमाया, तुम जो कुछ लाए हो वह जादू है। बेशक अल्लाह तआ़ला जल्द इसको ख़त्म कर देगा।

बड़े-बड़े जादूगरों का अ़मल قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ الْفَلَقِ और قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ النَّاسِ के ज़रिये ख़त्म हो जाता है।

जादू कैसे होता है-

जादू के बहुत से ज़रिये हो सकते हैं उनमें से एक यह है कि शैतानों की मदद ह़ासिल करने के लिए उनको खुश किया जाता है और उसके लिए कभी ऐसे शब्द पढ़े जाते हैं जो कुफ़्र और शिर्क के शब्द हों और जिसमें शैतानों की तारीफ़ की गई हो और कभी सितारों की अ़िबादत की जाती है, और कभी ऐसे अ़ामाल अख़्तियार किये जाते हैं जो शैतान को पसन्द हैं। जैसे-

किसी को जानबूझकर क़त्ल करके उन का ख़ून इस्तेमाल करना, नापाकी की ह़ालत में रहना और नजासत में मुलव्विस रहना। इसी लिए ज़्यादा कामियाब जादू उन लोगों का होता है जो गन्दे और नजिस (नापाक) रहते हैं, वह तहारत (पाकी) और अल्लाह तआ़ला के नाम से दूर भागते हैं फिर उन को ख़बीस कामों की अ़ादत पड़ जाती है। जादूगर अ़ौरतें ह़ैज़ (माहवारी) के ज़माने में जादू करती हैं जो ज़्यादा असर अन्दाज़ होता है, अ़ामतौर से शयातीन जादूगरों की मदद तलब करने से काम कर देते हैं, देखने वाला समझता है कि यह जादूगर के किसी करतब से ऐसा हो गया।

जिस तरह़ फ़रिश्ते उन ह़ज़रात की मदद करते हैं जो मुत्तक़ी (परहेज़गार) हों और तहारत और पाकीज़गी को अख़्तियार करते हों और बद्बू और नजासत से दूर भागते हों, अल्लाह के ज़िक्र और अअ़माले ख़ैर (अच्छे काम) में लगे रहते हों। इसी तरह़ शयातीन उन लोगों के मदद्गार होते हैं जो क़ौल (कथनी) फ़ेअ़ल (कर्म) और एतिक़ाद (आस्था) के एतिबार से ख़बासत (ग़न्दगी) और नजासत (नापाकी) में शयातीन की तरह़ से हों क्योंकि मदद के लिए उसी जैसा बनना ज़रुरी है। **(रुहुलू मआ़नी)**

जादू की क़िस्में-

मुफ़स्सिर 'इब्ने कसीर' ने 'अबू अ़ब्दुल्लाह राज़ी' से सह़र (जादू) की आठ क़िस्में नक़्ल की हैं। उन में से क़ुव्वते ख़यालिया का असर, नज़रबन्दी और दवाओं का इस्तेमाल करना भी ज़िक्र किया है उन

में जो हाथ की सफ़ाई या कुव्वते ख़यालिया या दवाओं का इस्तेमाल है उस को जादू कह दिया गया है। नज़रबन्दी को बतौरे मिसाल ऐसा समझ लिया जाए जैसे-

रेल में बैठे हुए को मालूम होता है कि ज़मीन भी साथ-साथ जा रही है, इसी तरह़ जैसे प्लेटफ़ार्म पर वह गाड़ी चल रही है जिस में हम बैठते हैं तो नज़र को यह मालूम होता है कि बराबर कोई गाड़ी चल रही है।

ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) के मुक़ाबले में जो जादूगर आये थे उन के बारे में इर्शाद है يُخَيَّلُ اِلَيۡهِ مِنۡ سِحۡرِهِمۡ اَنَّهَا تَسۡعٰى (कि उन के जादू की वजह से ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) के ख़याल में यूँ मालूम हो रहा था कि यह रस्सी और लाठी दौड़ रही हैं) यह सूरः ताहा में है।

सूरः अअ़राफ़ में इर्शाद है-

“जब उन्होंने अपनी लाठियाँ और रस्सियाँ डालीं तो लोगों की आँखों पर जादू कर दिया और उन पर हैबत ग़ालिब (प्रभावित कर दिया) कर दी और बड़ा जादू ले कर आये।”

इस से साफ़ ज़ाहिर है कि जादूगरों ने अपने जादू से लोगों की नज़रबन्दी कर दी थी जिस के असर से ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) भी उन लाठियों और रस्सियों को साँप समझने लगे और उन के दिल में थोड़ा सा ख़ौफ़ भी आ गया।

सूरः ताहा में है कि فَاَوۡجَسَ فِىۡ نَفۡسِهٖ خِيۡفَةً مُّوۡسٰى (मूसा ने अपने जी में ख़ौफ़ मह़सूस किया) अल्लाह तआ़ला का इर्शाद है कि- **‘ला तख़फ़ इन्नका अन्तल् अअ़ला...........................वला युफ़्लिहुस्साह़िरु........**कि तुम डरो नहीं, तुम ही ग़ालिब विजयी रहोगे। जो तुम्हारे हाथ में है उस को डाल दो, उन्होंने जो कुछ करतब किया है उस को तुम्हारी लाठी निगल जाएगी। उन्होंने जो कुछ बनाया है यह केवल जादू का मक्र है और जादूगर जहाँ भी हो कामियाब नहीं होता।

जादू का असर-

जैसा कि पहले हम ने अ़र्ज़ किया कि ‘सह़र’ (जादू) का असर भी अस्बाब (माध्यम) के तह़त होता है वह अस्बाब आ़म लोगों के सामने नहीं होते और जादूगरों को उन छिपे हुए अस्बाब का पता होता है। अब रहा ह़ज़रात अम्बिया-ए-किराम का मोअ़जिज़ा (चमत्कार) तो उस में कोई सबब (माध्यम) ज़ाहिर या पोशीदा नहीं होता, इस में भी अल्लाह तआ़ला के चाहने से ही होता है।

ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) के लिए आग का ठंडा हो जाना और मूसा (अ़लै०) के लाठी मारने से समुद्र का फट जाना और पत्थर से चश्मों का बह जाना। रसूलुल्लाह (सल्ल०) के एक मुट्ठी ख़ाक फेंकने से काफ़िरों की आँखों में पहुँच जाना, मुबारक उंगलियों से पानी का जारी हो जाना और थोड़ी चीज़ का ज़्यादा हो जाना, थोड़े से आटे की रोटियाँ कई सौ आदमियों के लिए काफ़ी हो जाना वग़ैरह-वग़ैरह यह सब किसी वजह से नहीं था। ख़त्म नुबूव्वत के बाद एक मुसलमान को यह अ़क़ीदा रखना कि अब कोई नबी नहीं आ सकता हर दावा करने वाले नबी और जादूगरों के करतबों से मह़फ़ूज़ रख सकता है।

मोअ़जिज़ः और सहर (जादू) में अन्तर-

ऊपर मोअ़जिज़ा (चमत्कार) और सहर (जादू) का अन्तर ज़ाहिर हो गया। इस के अ़लावा दोनों में एक अन्तर यह भी है कि सहर (जादू) गन्दे और नापाक लोगों से ज़ाहिर होता है और अल्लाह तआ़ला के नबी पाकबाज़ और नेक बन्दे थे। इसलिए भी दोनों में भ्रम नहीं हो सकता और साहिबे 'रुहुल मआ़नी' ने लिखा है कि अल्लाह तआ़ला ने किसी जादूगर को यह ताक़त नहीं दी कि समुद्र को फाड़ दे, या मुर्दो को ज़िन्दा कर दे या 'जमादात' (पशु पक्षी) से बात करा दे। इन के अ़लावा भी उन में से किसी को ऐसी चीज़ पर कुद्रत नहीं दी जो हज़रात अम्बिया-ए-किराम (अ़लै०) के मोअ़जिज़ात थे।

'साहिबे रुहुलू मआ़नी' ने यह भी लिखा है कि बाज़ मोहक़्क़िक़ीन (Research Scholar) ने सहर (जादू) और मोअ़जिज़ह के दर्मियान यूँ फ़र्क़ बताया है कि मोअ़जिज़ह चैलेंज के साथ होता है ।

नबियों के हाथ पर जो कुछ मोअ़जिज़ह ज़ाहिर होता था वह उसकी तरफ़ से नुबूव्वत का दावा होता था और जो मोअ़जिज़ह इस से ज़ाहिर होता था, वह उस के मुक़ाबिले में उसी तरह की चीज़ पेश करने का चैलेंज भी करता था। यह सूरत किसी जादूगर और झूठे मुद्दई नुबूव्वत के हाथ पर ज़ाहिर नहीं हो सकती, मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्ल०) के बाद तो अब नुबूव्वत ही ख़त्म है।

नुबूव्वत का दावा करने वाले-

बहुत से झूठे मुद्दई नुबूव्वत का दावा करने वाले पैदा हुए उनमें से अगर किसी ने कोई करतब किया तो वह एक दिखावा था, वह सब झूठे अपनी मौत आप ही ख़त्म हो गये। जादूगर चैलेंज नहीं कर सकते, वे तो मुक़ाबिले से डरते रहते हैं और एक जादूगर दूसरे जादूगर का काट कर देता है और तमाशा दिखाने वाले जादूगरों को देखा है कि बाँसुरी बजते-बजते उसकी आवाज़ ख़त्म हो जाती है और मजमा में खड़ा हुआ दूसरा जादूगर उसकी आवाज़ बन्द कर देता है। किसी नबी के किसी मोअ़जिज़ह के ख़िलाफ़ कोई जादूगर अ़मल करके नहीं दिखा सका और न उसकी काट कर सका, तारीख़ इसकी गवाह है।

करामात-

बहुत से औलिया अल्लाह से 'करामत' भी ज़ाहिर हो जाती है, लेकिन उन के इस 'करामत' से अल्लाह की कुर्बत और दर्जात के बढ़ने में कोई ज़्यादती नहीं होती और अक्सर ऐसा भी होता है कि 'साहिबे करामत' को अपनी 'करामत' का पता भी नहीं चलता। इसलिए बहुत से सूफ़िया के नज़्दीक करामत की कोई अहमियत नहीं। शायद किसी को यह सवाल पैदा हो कि 'मोअ़जिज़ह' और 'सहर' (जादू) में तो अन्तर मालूम हो गया और नुबूव्वत बाक़ी भी नहीं रही ताकि किसी को धोखा हो सके, लेकिन औलिया अल्लाह तो होते हैं और उन से करामत ज़ाहिर होना मुम्किन है।

करामत और जादू में फ़र्क़-

समझ लेना चाहिए कि करामत अल्लाह तआ़ला के नेक बन्दों से ज़ाहिर होती है जो अ़िबादत,

अल्लाह के ज़िक्र, इताअ़त और फ़रमाँबरदारी में मश्ग़ूल रहते हैं। पाक-साफ़ होते हैं नजासत से बचते हैं, जनाबत (नापाक) हो जाने पर जल्दी ग़ुस्ल कर लेते है। जादू उन लोगों का काम है जो गन्दे और नापाक होते हैं जिन्हें अल्लाह के नाम से दूरी होती है और जो अल्लाह की अ़िबादत से दूर भागते हैं वह नजासत, ख़बासत और जनाबत में पड़े रहते हैं यही उन का मिज़ाज बन चुका होता है, जो शख़्स यह कहे कि मैं वली साह़ब हूँ और उन का ह़ाल वह हो जो शयातीन और उस के दोस्तों का होता है यानी ताअ़त, अ़िबादात और अल्लाह के ज़िक्र से दूर, नजासत, जनाबत और ख़बासत से भरपूर रहता हो वह हरगिज़ वली नहीं और न उस के करतब को करामत कहा जा सकता है।

जादू के कलिमात-

सह़र (जादू) के फ़िस्क़ या कुफ़्र वग़ैरह होने में तफ़्सील यह है कि अगर इसके कलिमात कुफ़्रिया हों जैसे- इस्तिआ़नत (मदद) व शयातीन या कवाकिब (सितारे) वग़ैरह तब तो कुफ़्र है, चाहे इस से किसी को नुक़्सान पहुँचाया जाए या नफ़ा और अगर कलिमात मुबाह़ हों तो उससे, किसी को, ख़िलाफ़ शरई न नुक़्सान पहुँचाया जाए न और किसी नाजायज़ काम में इस्तेमाल किया जाए तो उस को आम बोल-चाल में सह़र (जादू) नहीं कहते, बल्कि अ़मल या तअ़वीज़ गन्डा कहते हैं जो मुबाह़ है।

अल्बत्ता नियत में लफ़्ज़ सह़र उसको भी जो अजूबा हो और अगर कलिमात समझ में न आते हों तो वह सन्देह कुफ़्र होने की वजह से मना है और यही तफ़्सील है तमाम तअ़वीज़ गन्डों और नक़्श वग़ैरह में कि जिसका माना समझ में आता हो, शरीअ़त के ख़िलाफ़ न हो और नाजायज़ मक़्सद में इस्तेमाल न हो, इतनी शर्तों के साथ जायज़ है, वरना नाजायज़ और कुफ़्र अ़मली है।

फिर फ़रमाया وَيَتَعَلَّمُونَ مَا يَضُرُّهُمْ وَلَا يَنفَعُهُمْ (कि वह लोग ऐसी चीज़ सीखते थे जो उन को नुक़्सान देने वाली थी नफ़ा देने वाली न थीं।)

'अ़ल्लामा क़ुर्तुबी' फ़रमाते हैं कि इस का मतलब यह है कि आख़िरत में जादू की वजह से नुक़्सान पहुँचेगा, चाहे दुनिया में थोड़ा बहुत नफ़ा कमा लें। कुछ ह़ज़रात ने फ़रमाया कि दुनिया में भी उन के लिए घाटा है क्योंकि जादू का नुक़्सान जादूगर को पहुँच जाता है। इस्लामी हुकूमत उस को सज़ा देगी और जादूगरी की बद्बख़्ती उस पर लागू होगी।

'साह़िबे रूहुल मआ़नी' लिखते हैं कि وَلَا يَنفَعُهُمْ में यह बताया गया है कि जादू ख़ालिस 'शर' (बुराई) है और नुक़्सान मह़ज़ ऐसा नहीं कि जैसी कुछ नुक़्सान वाली चीज़ें नफ़ा भी देती हैं। (जैसे ज़हर, किश्ता कुछ दवा में मुफ़ीद हो जाता है) इसलिए कि जादूगर जादू सीख कर जादूगरी की बातों से मह़फ़ूज़ रहने का इरादा नहीं करता और यह भी है कि आयत के सन्दर्भ से यह ज़ाहिर है कि वह दुनिया व आख़िरत में नफ़ा न देने वाला है क्योंकि इस का सम्बन्ध रोज़ी-रोटी से नहीं है, इसलिए इस आयत में जादू से बचने की बात कही गई है।

जादूगरों की ह़ालत-

अगर कोई शख़्स कभी कोई नफ़ा किसी मुसलमान को इस तरह पहुँचा दे कि मुसलमानों से नुक़्सान को ख़त्म कर दे तो गोया यह एक नफ़ा है, लेकिन ऐसा बहुत कम होता है और आ़मतौर पर जादूगर बेदीन होते हैं इसलिए सामूहिक तौर पर जादू नुक़्सान ही देने वाली चीज़ है। कोई भी जादूगर ऐसा नहीं देखा गया जिस ने जादू के ज़ोर पर दुनिया जमा कर ली हो, ज़ायदाद ह़ासिल कर ली हो या हुकूमत पर क़ाबिज़ हो गया हो। इन लोगों को हमेशा बद्ह़ाली में देखा जाता है, दीन व आ़माल से, तहारत, ज़िक्र व अ़िबादात से तो दूर होते ही हैं दुनियावी एतिबार से मैले-कुचैले और फटे-पुराने कपड़ों में रहते हैं, तमाशे दिखा कर लोगों के कहने से दूसरों पर जादू करके थोड़े बहुत पैसे वसूल करके ज़िन्दगी गुज़ारते हैं और चन्द पैसों के लिए दूसरों पर जादू कर देते हैं उनकी दुनिया व आख़िरत की तबाही नज़रों के सामने है। उस के बाद फ़रमाया وَلَقَدْ عَلِمُوْا لَمَنِ اشْتَرٰىهُ مَا لَهٗ فِی الْاٰخِرَةِ مِنْ خَلَاقٍ ﳴ यानी किताबुल्लाह को छोड़कर जो यहूदी जादू के पीछे लगे उन्हें मालूम है कि जिस ने अल्लाह की किताब (क़ुर्आन) को छोड़कर जादू ह़ासिल किया, उन को उस के लिए आख़िरत में कोई ह़िस्सा नहीं।

यह सब जानने के बावजूद उन्होंने जादू अख़्तियार कर के कुफ़्र को मोल लिया फिर फ़रमाया وَلَبِئْسَ مَا شَرَوْا بِهٖۤ اَنْفُسَهُمْ ؕ لَوْ كَانُوْا یَعْلَمُوْنَ कि उन्होंने अपनी जानों को बेच दिया यानी जानों के बदले जादू और कुफ़्र ख़रीद लिया और अपनी जानों को दुनिया व आख़िरत की नेअ़मतों से मह़रूम करके अ़ज़ाब के ह़क़्दार हुए। यह बहुत बुरा सौदा किया, अगर वह इस को जानते तो ऐसा न करते। **(रुहुल् मआ़नी)**

मुफ़स्सिरीन ने सवाल किया है कि पहले तो وَلَقَدْ عَلِمُوْا फ़रमाया फिर لَوْ كَانُوْا یَعْلَمُوْنَ फ़रमाया इस में बज़ाहिर इख़्तिलाफ़ है। फिर उस के दो तीन जवाब दिये जिन में से एक जवाब यह है कि उन का जानना न जानने के दर्जे में है। जब नुक़्सान जानते हुए किसी चीज़ को अख़्तियार किया और ईमान से मुँह मोड़ा तो गोया वह जानने के बावजूद नहीं जानते। 'रूहुल् मआ़नी' ने यह भी लिखा है कि उन्होंने अ़ज़ाब को तो जाना लेकिन उसकी ह़क़ीक़त और शिद्दत को न जाना गोया لَوْ كَانُوْا یَعْلَمُوْنَ का मफ़अ़ूल मह़फ़ूज़ है।

तीन तरह़ के लोग-

ह़ज़रत अबू मूसा अशअ़री (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तीन क़िस्म के लोग जन्नत में दाख़िल न होंगे- शराब का आ़दी, क़तअ़ रह़मी (रिश्ता तोड़ने) करने वाला और जादू पर यक़ीन रखने वाला।" **(तिर्मिज़ी)**

ह़ज़रत सअ़द (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने आप (सल्ल०) से सुना आप (सल्ल०) फ़र्माते, "जिस ने सुबह़ के वक़्त सात अ़जवा खजूरें खा लीं तो उसे उस दिन जादू या ज़हर असर नहीं करेगा।" **(बुख़ारी)**

103 وَلَوْ اَنَّهُمْ اٰمَنُوْا وَاتَّقَوْا لَمَثُوْبَةٌ مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ خَیْرٌ ؕ لَوْ كَانُوْا یَعْلَمُوْنَ ۠

अगर यह लोग अल्लाह के पैग़म्बरों पर ईमान लाते जिन में मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्ल०) पर ईमान लाना भी शामिल है और कुफ़्र व गुनाह से बचते तो अल्लाह तआ़ला की ओर से उन्हें उसका बदला दिया जाता जो उससे बेहतर होता, जिसके बदले उन्होंने अपने नफ़्सों को बेचा। अगर वह जानते होते तो आख़िरत के सवाब को हाथ से न जाने देते और ख़ैर की ओर बढ़ते। आख़िरत का थोड़ा सा सवाब भी इस दुनिया के बहुत बड़े फ़ायदे से बढ़ा हुआ है।

जादूगर की सज़ा-

जादूगर की सज़ा के बारे में साहिबे रूहुलू मआ़नी लिखते हैं कि 'हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा (रह०)' फ़रमाते हैं कि जादूगर को क़त्ल कर दिया जाए, जब यह मालूम हो जाए कि यह जादूगर है उसका यह कहना कि मैं अब से जादू न करुँगा तौबः करता हूँ क़ुबूल नहीं किया जाएगा।

शैतान को राज़ी करने की सूरतें-

क़ुर्आन व सुन्नत में जादू हर ऐसे अजीब काम को कहा जाता है जिसमें शैतानों को ख़ुश करके उनकी मदद ह़ासिल की गई हो फिर शैतानों को राज़ी करने की बहुत सी सूरतें होती हैं। कभी-कभी ऐसे मन्त्र अपनाए जाते हैं जिनमें कुफ़्र और शिर्क के कलिमात हों और शयातीन की तारीफ़ की गई हो या सितारों की अ़िबादत की गई हो जिससे शैतान ख़ुश होता है। कभी ऐसे आ़माल अपनाये जाते हैं जो शैतान को पसन्द हैं जैसे किसी को जानबूझकर ख़ून करके उसका ख़ून इस्तेमाल करना या जनाबत व निजासत की ह़ालत में रहना और तहारत व पाकीज़गी से दूर रहना।

कुफ़्र एतिक़ादी-

क़ुर्आन व सुन्नत में जिसको जादू कहा गया है वह कुफ़्र एतिक़ादी (आस्था का कुफ़्र) है या कम से कम कुफ़्र अ़मली से खाली नहीं होता। इसलिए इसका सीखना सिखाना इस पर अ़मल करना सब ह़राम है। हाँ, मगर मुसलमानों से तक्लीफ़ को दूर करने के लिए बक़द्रे ज़रूरत सीखा जाए, तो कुछ फ़ुक़हा ने इजाज़त दी है। जादू के सीखने और फिर इसे इस्तेमाल करने वाले को 'इमाम अबू ह़नीफ़ा' व 'इमाम मालिक (रह़०)' काफ़िर बतलाते हैं मगर इमाम साह़ब के कुछ शार्गिदों का क़ौल है कि जादू को अगर बचाव के लिए सीखे तो काफ़िर नहीं होता, मगर जो उसका एतिक़ाद रखे और उसे नफ़ा देने वाला समझे उसको भी कुफ़्र कहते हैं उसकी सज़ा क़त्ल है।

जादूगर का हुक्म-

'मुल्ला अ़ली क़ारी (रह़०)' 'शरह फ़िक़ः अकबर' में लिखते हैं कि जो जादू कुफ़्र है उसका अपनाने वाला मर्द मुरतद (दीन से फिर जाने वाला) हो जाने की वजह से क़त्ल किया जाएगा और जादूगर औ़रत क़त्ल नहीं की जाएगी, इसलिए कि मुरतद औ़रत को क़त्ल नहीं किया जाता (वह हमेशा क़ैद में रहेगी)

और जो जादू फ़िस्क़ के दर्जे में हो उसमें जादू की वजह से क़त्ल न किया जाएगा और अगर कोई ऐसा काम हो जिससे किसी इन्सान की हलाकत हो गई या मरीज़ हो गया या मियाँ-बीवी में जुदाई करा दी हो तो ज़मीन में फ़साद करने की वजह से क़त्ल किया जाएगा और इस सूरत में जादूगर और जादूगरनी दोनों क़त्ल किये जाएँगे, क्योंकि उसकी वजह इरतिदाद नहीं बल्कि 'फ़साद फ़िल् अ़र्ज़' (ज़मीन पर फ़साद फैलाना है।)

सर जुदा करने के बाद-

'हज़रत जुन्दुब बिन कअ़ब (रज़ि०)' ने देखा कि एक आदमी जादू या करतब दिखा रहा है उस ने एक शख़्स को ज़ब्ह़ कर दिया फिर उस का सर जुदा कर दिया, फिर उस का सर वापस जोड़ दिया। लोग देखकर ख़ुशी से चीख उठे और कहने लगे कि सुब्हानल्लाह तू तो मुर्दों को ज़िन्दा करता है 'हज़रत जुन्दुब' ने तल्वार निकाली और उस जादूगर की गर्दन मार दी और फ़रमाया अगर यह सच्चा है तो अपने नफ़्स को ज़िन्दा करे। हज़रत जुन्दुब के बारे में रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया था कि "यह एक ऐसी तल्वार मारेगा जिस की वजह से यह तन्हा एक उम्मत के बराबर दर्जा पा लेगा।" **(अलूअसाबः 250 भाग 1)**

चूंकि उस जादूगर के अ़मल से लोग प्रभावित होकर यूँ समझ रहे थे कि यह शख़्स मुर्दों को ज़िन्दा करता है इसलिए फ़साद को दूर करने की वजह से उस का क़त्ल ज़रूरी हुआ।

तफ़्सीर क़ुर्तुबी-

'तफ़्सीर क़ुर्तुबी' में इस क़िस्से को इस तरह़ लिखा है कि 'वलीद बिन उ़क़्बा' (अमीर इराक़) के पास एक शख़्स रस्सी पर चल रहा था और गधे के पीछे से उस की दुम में दाख़िल होता था और उस के मुँह से निकल जाता था। 'हज़रत जुन्दुब' ने उसको क़त्ल कर दिया, हज़रत सरवरे आ़लम (सल्ल०) ने फ़रमाया था कि मेरी उम्मत में वह शख़्स होगा जिस को 'जुन्दब' कहा जाएगा वह एक मर्तबा ऐसी तल्वार मारेगा जिस से ह़क़ और बातिल (नाह़क़) के दर्मियान अन्तर स्पष्ट कर देगा। **(क़ुर्तुबी भाग 2, पेज नं० 47)**

अगर क़ुर्आन व ह़दीस के कलिमात ही से अ़मल किया जाएगा, मगर नाजायज़ मक़्सद के लिए इस्तेमाल करें तो वह भी जायज़ नहीं। जैसे- किसी को जानबूझकर नुक़्सान पहुँचाने के लिए कोई तअ़वीज़ दिया जाए या वज़ीफ़ा पढ़ा जाए चाहे वज़ीफ़ा अस्मा-ए-इलाही (अल्लाह के नाम) या आयाते क़ुर्आनिया का हो वह भी ह़राम है।

तअ़वीज़ गन्डे वग़ैरह जो अ़मल करते हैं उन में भी जिन्नात व शयातीन से मदद ली जाती है जो सह़र (जादू) के हुक्म हैं और ह़राम हैं और अगर अल्फ़ाज़ मुश्तबह (संदिग्ध) हो, माने मालूम न हों, शयातीन और बुतों से मदद का इम्कान (आशंका) हो तो भी ह़राम है।

'हारूत' व 'मारूत'-

आ़मतौर पर अ़वाम में एक क़िस्सा मशहूर है जिस का कोई सुबूत नहीं। जो 'हारूत' व 'मारूत'

और 'जुहरह' के बारे में है कि उन दोनों फ़रिश्तों को कुव्वते शहवानिया (काम इच्छा) देकर ज़मीन में उतार दिये गये थे और वह ज़मीन में आये तो 'जुहरह' से शहवत (सम्भोग) वाला मतलब ह़ासिल करने का इरादा किया और उसको आमादा करने की कोशिश की तो उस ने उन से इस्मे आ़जम (अल्लाह का ख़ास नाम) पूछ लिया, जिस के ज़रिये वह आसमान पर चली गई और वहाँ सितारा बन गई। उन दोनों फ़रिश्तों से अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया, "दुनिया का अ़ज़ाब चाहते हो या आख़िरत का," तो उन्होंने दुनिया के अ़ज़ाब को आख़िरत के अ़ज़ाब पर तरजीह़ दी और वह 'बाबुल' के कुंवे में उलटे लट्के हुए हैं और क़ियामत तक अ़जाब होता रहेगा। इस क़िस्से को अ़ल्लामा 'इब्ने जौज़ी' ने दो तरीक़े से नक़्ल किया है और 'अ़ल्लामा कुर्तुबी' और 'साह़िबे रूहुल् मआ़नी' ने इस क़िस्से को ग़लत बताया है।

आयत नं० 104 से 113 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَقُوْلُوْا رَاعِنَا وَقُوْلُوا انْظُرْنَا وَاسْمَعُوْا ؕ وَلِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝ مَا يَوَدُّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ اَهْلِ
الْكِتٰبِ وَلَا الْمُشْرِكِيْنَ اَنْ يُّنَزَّلَ عَلَيْكُمْ مِّنْ خَيْرٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ ؕ وَاللّٰهُ يَخْتَصُّ بِرَحْمَتِهٖ مَنْ يَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيْمِ ۝ مَا
نَنْسَخْ مِنْ اٰيَةٍ اَوْ نُنْسِهَا نَاْتِ بِخَيْرٍ مِّنْهَآ اَوْ مِثْلِهَا ؕ اَلَمْ تَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝ اَلَمْ تَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ لَهٗ مُلْكُ
السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ وَمَا لَكُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ مِنْ وَّلِيٍّ وَّلَا نَصِيْرٍ ۝ اَمْ تُرِيْدُوْنَ اَنْ تَسْـَٔلُوْا رَسُوْلَكُمْ كَمَا سُئِلَ مُوْسٰى مِنْ قَبْلُ ؕ
وَمَنْ يَّتَبَدَّلِ الْكُفْرَ بِالْاِيْمَانِ فَقَدْ ضَلَّ سَوَآءَ السَّبِيْلِ ۝ وَدَّ كَثِيْرٌ مِّنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ لَوْ يَرُدُّوْنَكُمْ مِّنْۢ بَعْدِ اِيْمَانِكُمْ كُفَّارًا ۚۖ حَسَدًا مِّنْ
عِنْدِ اَنْفُسِهِمْ مِّنْۢ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُمُ الْحَقُّ ۚ فَاعْفُوْا وَاصْفَحُوْا حَتّٰى يَاْتِيَ اللّٰهُ بِاَمْرِهٖ ؕ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝ وَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا
الزَّكٰوةَ ؕ وَمَا تُقَدِّمُوْا لِاَنْفُسِكُمْ مِّنْ خَيْرٍ تَجِدُوْهُ عِنْدَ اللّٰهِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ ۝ وَقَالُوْا لَنْ يَّدْخُلَ الْجَنَّةَ اِلَّا مَنْ كَانَ
هُوْدًا اَوْ نَصٰرٰى ؕ تِلْكَ اَمَانِيُّهُمْ ؕ قُلْ هَاتُوْا بُرْهَانَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ۝ بَلٰى ۚ مَنْ اَسْلَمَ وَجْهَهٗ لِلّٰهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ فَلَهٗٓ
اَجْرُهٗ عِنْدَ رَبِّهٖ ۪ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝ وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ لَيْسَتِ النَّصٰرٰى عَلٰى شَيْءٍ ۪ وَّقَالَتِ النَّصٰرٰى لَيْسَتِ الْيَهُوْدُ عَلٰى
شَيْءٍ ۙ وَّهُمْ يَتْلُوْنَ الْكِتٰبَ ؕ كَذٰلِكَ قَالَ الَّذِيْنَ لَا يَعْلَمُوْنَ مِثْلَ قَوْلِهِمْ ۚ فَاللّٰهُ يَحْكُمُ بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ فِيْمَا كَانُوْا فِيْهِ يَخْتَلِفُوْنَ ۝

अनुवाद-

(104) ऐ ईमान वालो! (पैग़म्बर के साथ) 'राअिना' न कहा करो बल्कि 'उन्ज़ुर्ना' कहा करो; और ध्यान से सुनो और काफ़िरों के लिए दुखदाई अ़ज़ाब है; (105) जो लोग काफ़िर हैं (चाहे) अह्ले किताब (किताब वाले) में से हों या मुश्रिकों में से, वे इसे ज़रा भी पसंद नहीं करते कि तुम्हारे ऊपर कोई भी भलाई तुम्हारे रब की ओर से उतरे; हालाँकि अल्लाह अपनी रह्मत में जिसे चाहता है खास (नियुक्त) कर लेता है और अल्लाह बड़ा ही फ़ज़्ल (मेहरबानी) वाला है। (106) (ऐ पैग़म्बर!) 'हम' कोई आयत मन्सूख़ (स्थगित) कर देते हैं या उसे भुला देते हैं तो उससे अच्छी या वैसी ही (दूसरी आयत) भेज देते हैं, क्या तुमको मालूम नहीं, कि अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर (सामर्थ्य) है? (107) क्या तुमको मालूम नहीं कि आसमानों और ज़मीन का राज्य 'उसी' अल्लाह का है, और अल्लाह के सिवा तुम्हारा कोई दोस्त और मदद्गार नहीं। (108) क्या तुम यह चाहते हो कि अपने रसूल से उसी तरह के सवाल करो जिस तरह के सवाल पहले मूसा से किये गये थे? और जो ईमान के बदले कुफ़्र अपनाए, तो वह सीधे रास्ते से भटक गया। (109) बहुत से अह्ले किताब ह़क़ के ज़ाहिर हो जाने के बावजूद, अपने दिली ह़सद (ईर्ष्या) की वजह से चाहते हैं कि तुम्हारे ईमान लाने के बाद फिर तुमको काफ़िर बना दें, तो तुम माफ़ करो, और उन पर ध्यान न दो, यहाँ तक कि अल्लाह अपना हुक्म जारी कर दे, बेशक अल्लाह हर चीज़ पर कुदरत (सामर्थ्य) रखता है; (110) और नमाज़ की पाबन्दी रखो, और ज़कात देते रहो; और जो कुछ भलाई तुम अपने लिए आगे भेज दोगे,उसे अल्लाह के पास पा लोगे, बेशक तुम जो कुछ कर रहे हो, अल्लाह उसका खूब देखने वाला है। (111) और (यहूदी और ईसाई) कहते हैं कि यहूदियों और ईसाइयों के सिवा कोई जन्नत में जा नहीं पाएगा,'' यह उन लोगों की बातिल इच्छाएँ हैं, कह दीजिए, ''अपनी सनद (प्रमाण) लाओ, अगर तुम सच्चे हो।'' (112) हाँ सच बात तो यह है कि

जिसने अपने आप को (भक्ति पूर्वक) अल्लाह के हवाले कर दिया और भले काम करने वाला (सत्कर्मी) हो गया, तो उसको इसका बदला उसके रब से मिलेगा; और ऐसे लोगों को (क़ियामत में) न डर होगा और न वे दुखी होंगे। (113) और यहूदी कहते हैं, ''ईसाई (का मज़हब) कुछ नहीं,'' और ईसाई कहते हैं, ''यहूद (का मज़हब) कुछ नहीं,'' हालाँकि वे (दोनों ही) किताब (तौरात व इंजील) के पढ़ने वाले हैं, इसी तरह उन्हीं जैसी बातें ये (मुश्रिक भी) करते हैं, जो (कुछ भी) नहीं जानते, तो जिस बात में ये लोग झगड़ रहे हैं, क़ियामत के दिन अल्लाह इनमें उसका फ़ैसला कर देगा।

आयत नं० 104 से 113 तक की व्याख्या

104 يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَقُوْلُوْا رَاعِنَا وَقُوْلُوا انْظُرْنَا وَاسْمَعُوْا ۭ وَلِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝

يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَقُوْلُوْا رَاعِنَا وَقُوْلُوا انْظُرْنَا 'इब्ने मुन्ज़िर' ने 'सुद्दी' से नक़्ल किया है कि यहूदियों में से दो शख़्स 'मालिक बिन सैफ़' और 'रिफ़ाआ़ बिन यज़ीद' जब भी रसूलुल्लाह (सल्ल०) से मिलते तो 'राअ़िना' कहते और उन का यह मतलब होता कि आप हमारे सामने बातचीत फ़रमाएँ, मगर ह़क़ीक़त में हम आप की बातचीत को नहीं सुनते, मुसलमानों ने यह सुनकर समझा कि यह ऐसा कलिमा है जिस से अहले किताब अपने अम्बिया-ए-किराम की तअ़ज़ीम करते हैं, तो उन्होंने भी रसूलुल्लाह (सल्ल०) से यही कलिमा शुरु कर दिया, इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह फ़रमान नाज़िल किया कि ऐ ईमान वालों! 'राअ़िना' मत कहा करो, बल्कि انْظُرْنَا **'अुन्ज़ुर्ना'** कहा करो और अबू नईम ने दलायल में बवास्ता 'सुद्दी', सग़ीर, काल्बी, अबू सालेह़ और ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि 'राअ़िना' यहूदियों की ज़बान में बहुत बुरी गाली थी।

यहूदी इस लफ़्ज को बोलते और आपस में हँसते थे, चुनाँचे अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई।

"ह़ज़रत सअ़द बिन मुआ़ज़ (रज़ि०) ने जब आयते करीमा सुनी तो यहूदियों से कहा ऐ अल्लाह के दुश्मनों! अगर इस मजलिस के बाद मैंने तुम में से किसी को इस कलिमे को रसूलुल्लाह (सल्ल०) के सामने बोलते देखा तो उस की गर्दन उड़ा दूँगा। **(तफ़्सीर इब्ने अ़ब्बास)**

शब्द 'राअ़िना' और यहूद की शरारत

इस आयत में यहूद की शरारत का ज़िक्र है कि जब वह ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के पास आते तो शब्द 'राअ़िना' से आप को ख़िताब करते। शब्द 'राअ़िना' के माने 'तब्रानी' ज़बान में 'बेवक़ूफ़' और 'शेख़ी बाज़' के थे, मगर अ़रबी ज़बान में 'राअ़िना' का मतलब है कि 'हमारी ओर मुतवज्जेह हो जाइये' या हमारी रिआ़यत कीजिए या हमारे हाल पर तवज्जोह फ़रमाइए। इसलिए अ़रबी जानने वाले इस शरारत को नहीं समझ पाते थे और यह लोग शरारत की वजह से कभी-कभी ज़बान दबा कर 'राअ़िना' कहते

जिसके माने होते 'हमारे चरवाहे'।

मुसलमानों को इस बुरे माना और यहूद की साज़िश का इल्म न था कि जिस नियत और जिस माने में वह हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को मुख़ातब करते थे, बल्कि मुसलमानों ने यह समझ कर कि यह 'अहले किताब' के उ़लमा नबियों के आदाब से पूरी तरह वाकिफ़ हैं, जब उनके उलमा यह शब्द इस्तेमाल करते हैं तो मुसलमानों ने समझा कि यह शब्द तअ़ज़ीम (इ़ज़्ज़त) के लिए है। इसलिए मुसलमानों ने भी इस शब्द का इस्तेमाल शुरु कर दिया इससे उन शरारती यहूद को और ख़ुशी होने लगी, फिर आपस में बैठकर हंसते कि अब तक तो हम इनको छिपे तौर पर बुरा कहते थे अब ऐलानिया कहने की तद्बीर ऐसी हाथ आ गई कि मुसलमान भी इसमें शरीक हो गये।

ह़ज़रत सअ़द बिन मुआ़ज़ (रज़ि०) यहूदियों की ज़बान जानते थे, उन्होंने मह़सूस कर लिया कि यहूदी 'राअ़िना या मुह़म्मद' कहते हैं और आपस में हँसते हैं। इसलिये उन्होंने यहूदियों से कहा आइन्दा तुम में से किसी ने यह शब्द कहा तो गर्दन उड़ा दूँगा। वह कहने लगे कि तुम लोग भी तो यह शब्द कहते हो, इस पर यह आयत नाज़िल हुई, "ऐ मुसलमानों! तुम 'राअ़िना' न कहो इसके बजाय शब्द 'उन्ज़ुरना' कहो जिसके माने "हमारी ओर देखिए और तवज्जोह फ़रमाइए।"

इसलिये ऐसे शब्द बोलना चाहिए जिसके माने में दूसरे माने का संदेह न हो सके और यहूदी यह न कह सकें कि तुम भी शब्द 'राअ़िना' बोलते हो तो हम ने भी बोल दिया। मुसलमानों से कहा गया कि तुम बात को सुनो और इसे लोगों को बताओ और यह भी फ़रमाया कि काफ़िरों के लिए अ़ज़ाबे अ़लीम है, वह आख़िरत में अपनी ह़रकतों की दर्दनाक सज़ा पा लेंगे। **(मुआ़लिमुत्तन्ज़ील, भाग-1 पेज नं० 102)**

मज़ाक़ न उड़ाया जाए-

ऊपर की व्याख्या से यह बात मालूम होती है कि जिस शब्द में दो तरह के माना हों ख़ैर व शर के तो उसका बोलना जायज़ नहीं। जब तक कोई ऐसी चीज़ उसके साथ न मिला ली जाए जिससे वह ख़ैर ही के लिए ख़ास हो जाए और यह भी कि किसी की हंसी मज़ाक़ उड़ाना सख़्त मना है और हर वह शब्द मना है जिसमें मज़ाक़ उड़ाने का अन्देशा हो।

मुफ़स्सिर 'इब्ने कसीर' फ़रमाते हैं कि ईमान वालों को काफ़िरों की मुशाबिहत (सूरत) अपनाने से मना फ़रमाया गया है, क़ौल में भी, अ़मल में भी, उसके बाद 'मुस्नद अह़मद' और 'सुनन अबी दाऊद' से ह़दीस नक़्ल की है।

"जो शख़्स किसी क़ौम की मुशाबिहत अख़्तियार करता है वह उन ही में से है" उसके बाद लिखते हैं कि इस से यह बात साबित हो जाती है कि काफ़िरों के साथ उनकी बातचीत और उनका अ़मल और उनके लिबास और उनका त्योहार और उनकी अ़िबादात आदि में मुशाबिहत (सूरत) अख़्तियार करना सख़्त मना है।

अच्छे नाम रखना चाहिए-

इसीलिए किसी को 'मालिकुल् इम्लाक' यानी 'शहन्शाह' कहने से मना फ़रमाया गया है। एक लड़की

का नाम 'आसिया' (गुनहगार) था, ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने उसका नाम 'जमीला' रख दिया। एक ह़दीस में है कि तुम में से कोई व्यक्ति अपने ग़ुलाम और बाँदी को 'अ़ब्दी' या 'अ़मती' न कहे तुम सब अल्लाह के बन्दे और तुम्हारी सब औ़रतें अल्लाह की बन्दियाँ हैं। 'अ़ब्दी' और 'अ़मती' की जगह 'ग़ुलामियाँ' और 'जारियात' कहा जाए। **(मिश्कातुल् मसाबीह़)**

105 مَا يَوَدُّ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ أَهْلِ الْكِتٰبِ وَلَا الْمُشْرِكِينَ أَنْ يُنَزَّلَ عَلَيْكُمْ مِنْ خَيْرٍ مِنْ رَبِّكُمْ ۗ وَاللّٰهُ يَخْتَصُّ بِرَحْمَتِهِ مَنْ يَشَاءُ ۗ وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيمِ ۝

यहूदियों का ह़सद-

जब मुसलमान यहूदियों से कहते, कि तुम इस्लाम क़ुबूल करो और मुह़म्मद रसूलुल्लाह (सल्ल०) पर ईमान लाओ तो वह कहते थे कि तुम जिस दीन की तरफ़ बुलाते हो, हमारे दीन से बेहतर नहीं है और हमारी तमन्ना है कि तुम्हारा दीन बेहतर होता तो हम उसको मान लेते।

इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल की, ऐ मुसलमानों! इनको यह पसंद नहीं है कि तुमको किसी तरह़ की ख़ैर पहुँचे। यहूदी तो इस ह़सद में मरे जा रहे हैं कि आख़िरी नबी ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ह़ज़रत इस्माईल (अ़लै०) की औलाद में से क्यों आये और ह़ज़रत इस्ह़ाक़ की औलाद में क्यों न हुए और मुश्रिकीन इसलिए नाराज़ हैं कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने जो दीन पेश किया वह उनकी ख़्वाहिश के ख़िलाफ़ है, उनको तौह़ीद (एकेश्वरवाद) पसन्द नहीं अपने बनाये हुए मअ़बूदों (उपास्यों) से मुह़ब्बत है जब उनको रद्द किया जाता है तो उनको बुरा लगता है।

अल्लाह तआ़ला ने इस आयत में फ़रमाया, तुम्हारे ख़यालात का अल्लाह पाबन्द नहीं, 'वह' जिसे चाहे अपनी रह़मत के साथ ख़ास कर दे और जिसे चाहे नुबूव्वत अ़ता कर दे और जिसे चाहे हिदायत दे दे, इसमें किसी को एतिराज़ करने का कोई ह़क़ ह़ासिल नहीं। **(रुहुल् मआ़नी, भाग-1 पेज नं० 350)**

इसीलिए अल्लाह तआ़ला ने यहाँ मुसलमानों के साथ काफ़िरों की दुश्मनी का ज़िक्र किया है ताकि मुसलमान काफ़िरों की चालों से बच जाएँ और अल्लाह का शुक्र अदा करें कि उसने उन्हें ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के ज़रिये इस्लाम जैसी नेअ़मत अ़ता फ़रमाई। **(इब्ने कसीर)**

106 مَا نَنْسَخْ مِنْ اٰيَةٍ اَوْ نُنْسِهَا نَاْتِ بِخَيْرٍ مِّنْهَآ اَوْ مِثْلِهَا ۗ اَلَمْ تَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝

एह़काम की तब्दीली-

ऊपर से यहूद की शरारतों और इस्लाम व अहले इस्लाम से दुश्मनी का ज़िक्र होता चला आ रहा है। यहूद अपनी दुश्मनी का इज़्हार मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से करते थे, क़ुर्आन और इस्लाम पर एतिराज़ात करके, मुसलमानों में ग़लत प्रोपेगन्डा करते और मुसलमानों से कहते थे कि अगर यह क़ुर्आन अल्लाह की तरफ़ से है और तुम्हारी शरीअ़त अल्लाह की तरफ़ से है तो तौरेत के हुक्मों को उसने क्यों मन्सूख़ (ख़त्म) किया और फिर ख़ुद ही अपनी शरीअ़त के कुछ हुक्मों को एक बार तो नाज़िल किया और दोबारा

उसको रोक दिया। जैसे- पहले तुम्हारा क़िब्ला 'बैतुल् मक़्दिस' की तरफ़ था, फिर 'मस्जिदे ह़राम' की तरफ़ हो गया तो यहूद अल्लाह के हुक्मों के नस्ख़ (ख़त्म करने या संशोधन) के क़ायल (मानने वाले) न थे, इसीलिए इन्जील और क़ुर्आन को नहीं मानते थे कि इनमें कुछ एहकाम तौरेत के मन्सूख़ हो गये थे, यही वजह थी इन किताबों के नबियों की, नुबूव्वत को भी मानने से इंकार कर दिया था। यहाँ पर अल्लाह तआ़ला ने यहूदियों के इस आयत का जवाब देते हुए फ़रमाया।

'नस्ख़' का मतलब-

"हम किसी आयत का हुक्म जो मौक़ूफ़ (रोक) कर देते हैं चाहे आयत ज़ेहनों में या क़ुर्आन में बाक़ी रहे या ज़ेहनों से ख़त्म कर दें, तो यह कोई एतिराज़ की चीज़ नहीं, क्योंकि इसमें भी मस्लहत होती है, फिर हम उस आयत से बेहतर या उस आयत ही की तरह दूसरी ले आते हैं।"

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने यहूद के एतिराज़ के जवाब में बतलाया, कि हम जो आयत मन्सूख़ करते हैं अर्थात उसके हुक्म या तिलावत दोनों को मन्सूख़ व मौक़ूफ़ करते हैं या बिल्कुल लोगों के ज़ेहनों से उसके शब्द ही को मिटा देते हैं, तो इसमें अल्लाह तआ़ला की ख़ास मस्लेहत और ह़िक्मत होती है।

'मन्सूख़' होने की सूरत-

इस आयत में क़ुर्आन के मन्सूख़ होने की जितनी सूरतें हो सकती हैं सबको जमा कर दिया गया है। 'नस्ख़' के माना डिक्शनरी में मिटाना, बदलना, बेकार करना, ख़त्म करना और लिखने के होते हैं, लेकिन शरीअ़त में 'नस्ख़' एक हुक्म के बजाय दूसरा हुक्म जारी करने को कहा जाता है। चाहे वह दूसरा हुक्म यह हो कि पहला हुक्म बिल्कुल ख़त्म कर दिया जाए, या यह हो कि उसकी जगह दूसरा अ़मल बतला दिया जाए। एक सूरत मन्सूख़ होने की यह है कि क़ुर्आन की पंक्ति बाक़ी रहे और उसका हुक्म मन्सूख़ हो जाए उसको 'मन्सूख़ुल् हुक्म' कहते हैं। जैसे-

"औ़रत के लिए शौहर की वफ़ात पर इद्दत एक साल तक रखी गई थी बाद में चार महीने दस दिन कर दी गई और जिस आयत में एक साल का ज़िक्र है वह भी क़ुर्आन में मौजूद है। जैसे- (मताअ़न इलल्हौलि ग़ैरा इख़्राज)"

दूसरी सूरत-

'नस्ख़' की दूसरी सूरत यह है कि उसकी तिलावत मन्सूख़ हो जाए और हुक्म बाक़ी रहे, इसको 'मन्सूख़ुत्-तिलावत' कहते हैं, इसकी मिसाल में आयत 'रज्म' को पेश किया जाता है।

तीसरी सूरत-

मन्सूख़ की तीसरी सूरत यह है कि पहला हुक्म मन्सूख़ हो जाए और उसकी जगह दूसरा हुक्म आ जाए। जैसे- बैतुल् मक़्दिस की तरफ़ नमाज़ पढ़ना मन्सूख़ किया गया और उसके बजाय नमाज़ में

कअ़बः का हुक्म हुआ। इसी तरह़ जैसे पहले क़रीबी रिश्तेदारों के लिए वसीयत करना वाजिब था फिर वह आयत मीरास से 'मन्सूख़' हो गई।

इसी तरह़ बाज़ सूरतें ऐसी हैं जिनमें पहला हुक्म 'मन्सूख़' हो गया और उसकी जगह दूसरा हुक्म लागू नहीं किया गया, जैसे-

सूरः मुम्तहिना में إِذَا جَاءَكُمُ الْمُؤْمِنَٰتُ 'मन्सूख़' कर दिया गया और उसकी जगह दूसरा हुक्म नाज़िल नहीं हुआ।

'नन्सख़' के साथ 'नुन्सिहा' भी फ़रमाया जिसका तर्जुमा 'भुला देने' का है। बाज़ आयतें ऐसी थीं जिनको बिल्कुल ही क़ुर्आन से और ज़ेहनों से भुला दिया गया था। बाज़ ह़ज़रात ने फ़रमाया सूरः अह़ज़ाब और सूरः बक़रः जैसी थीं उसका अक्सर ह़िस्सा उठा लिया गया, फिर न उसकी तिलावत बाक़ी रही न हुक्म बाक़ी रहा।

दुर्रे मन्सूर भाग-1 पेज नं० 105 में है कि 'ह़ज़रत सहल बिन हुनैफ़' से रिवायत है कि एक रात, एक सह़ाबी तहज्जुद पढ़ने खड़े हुए उन्हें एक सूरत याद थी जिसे उन्होंने नमाज़ में पढ़ना चाहा तो 'बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम' के अ़लावा वह कुछ न पढ़ सके और उसी रात में बहुत से सह़ाबा के साथ ऐसा ही वाक़िया पेश आया। सुबह को जब रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास ह़ाज़िर होकर अ़र्ज़ किया तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "यह सूरह पिछली रात 'मन्सूख़' हो गई जो लोगों के सीनों से और हर उस जगह से मिटा दी गई जहाँ-जहाँ लिखी हुई थी।" **(मुआ़लिमुत् तन्ज़ील, भाग-1 पेज नं० 104)**

रसूलुल्लाह (सल्ल०) से रिवायत हैं कि अल्लाह ने अपने कुछ अह़काम 'मन्सूख़' (ख़त्म) कर दिये। जैसे क़ुर्आन की बाज़ आयात ने दूसरी आयात को 'मन्सूख़' कर दिया। **(बुख़ारी)**

107 أَلَمْ تَعْلَمْ أَنَّ اللَّهَ لَهُ مُلْكُ السَّمَٰوَٰتِ وَالْأَرْضِ ۗ وَمَا لَكُم مِّن دُونِ اللَّهِ مِن وَلِيٍّ وَلَا نَصِيرٍ

फ़िर फ़रमाया तुझे यह मालूम नहीं कि अल्लाह तआ़ला हर चीज़ पर क़ादिर है उसे हुक्म बाक़ी रखने पर भी क़ुद्रत है और 'मन्सूख़' करने पर भी क़ुद्रत है वह ज़ेहनों से भुला देने पर भी क़ादिर है। वह ह़िक्मत के मुताबिक़ जो चाहे करे, जिस हुक्म को चाहे बाक़ी रखे जिसको चाहे 'मन्सूख़' कर दे। किसी को क्या एतिराज़, अगर कोई अल्लाह पर एतिराज़ करेगा तो वह उस की सज़ा भुगत लेगा। आसमानों और ज़मीन पर उसी की बादशाहत है, जब वह काफ़िरों को अ़ज़ाब भेजेगा तो उनको कोई मदद्गार और दोस्त नहीं मिलेगा।

108 أَمْ تُرِيدُونَ أَن تَسْأَلُوا رَسُولَكُمْ كَمَا سُئِلَ مُوسَىٰ مِن قَبْلُ ۗ وَمَن يَتَبَدَّلِ الْكُفْرَ بِالْإِيمَانِ فَقَدْ ضَلَّ سَوَاءَ السَّبِيلِ

आयत के नाज़िल होने की मुख़्तलिफ़ तरीक़े-

قوله تعالیٰ أَمْ تُرِيدُونَ أَن تَسْأَلُوا इब्ने ह़ातिम ने 'सई़द' और 'इ़करमा (रज़ि०)' के वास्ते से ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है, फ़रमाते हैं कि 'राफ़ेअ़ बिन ह़रमला' ने और 'वहब बिन

ज़ैद' ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से अ़र्ज़ किया, कि हमारे पास ऐसी किताब लाइए जो हम पर आसमान से नाज़िल हो जिसे हम खुद पढ़ सकें, या हमारे लिए नहरें जारी कर दीजिए ताकि हम आप की पैरवी करें और आप की तस्दीक़ करें, इस पर अल्लाह तआ़ला ने اَمْ تُرِيْدُوْنَ से سَوَآءَ السَّبِيْلِ तक आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई। 'ह्वई बिन अख़्तब' और 'अबू यासिर बिन अख़्तब' यहूदियों में से थे, यह दोनों अपनी पूरी कोशिश के साथ लोगों को इस्लाम से रोकने में तुले हुए थे, तो अल्लाह तआ़ला ने उन दोनों के बारे में وَدَّ كَثِيْرٌ مِّنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ इस आयत को नाज़िल फ़रमाया।

इब्ने जरीर ने मुजाहिद से नक़्ल किया है कि क़ुरैश ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से अ़र्ज़ किया कि उन के लिए कोहे सफ़ा को सोने का बना दिया जाए, आप ने फ़रमाया मगर वह तुम्हारे हक़ में बेहतर नहीं। अगर तुम कुफ़्र करोगे तो वैसा ही होगा जैसा कि 'बनी इस्राईल' के साथ हुआ।

नोट- चुनाँचे उन्होंने न माना और अपने क़ौल से रुजूअ़ न किया, इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा اَمْ تُرِيْدُوْنَ नाज़िल फ़रमाई। सुद्दी (रह०) से नक़्ल किया है कि अ़रब के लोगों ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से कहा कि हमारे पास अल्लाह तआ़ला को ले आएँ ताकि हम खुद बग़ैर किसी हिजाब के दीदारे इलाही कर लें, इस पर यह आयत नाज़िल हुई।

'बनी इस्राईल' में जब किसी से कोई गुनाह हो जाता था तो अपने दरवाज़े पर उस गुनाह और उस के कफ़्फ़ारे को लिखा हुआ पाता था, अगर वह शख़्स कफ़्फ़ारा अदा कर देता था तो सिर्फ़ दुनिया में रुसवाई होती थी और अगर कफ़्फ़ारा नहीं अदा करता था तो आख़िरत में उस की रुसवाई का बाइस होता था और अल्लाह तआ़ला ने तुम्हें इस से बेहतर चीज अता की है।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है وَمَنْ يَّعْمَلْ سُوْٓءًا اَوْ يَظْلِمْ نَفْسَهٗ यानी जो शख़्स किसी बुराई का इरतिकाब कर के अपने ऊपर जुल्म करे फिर उस क बाद अल्लाह तआ़ला से अपने गुनाहों की माफ़ी के लिए अस्तग़फ़ार करे तो अल्लाह तआ़ला गफ़ूरुर्रहीम है और पाँचों नमाज़ें और एक जुमअ़ से दूसरे जुमअ़ तक दर्मियानी गुनाहों के लिए कफ़्फ़ारा हैं, इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई اَمْ تُرِيْدُوْنَ।

'मुआ़लिमुत्तन्ज़ील' में इस आयते शरीफ़ा के दो शाने नुज़ूल लिखे हैं।

पहला तो यह कि यहूदियों ने यूँ कहा, "ऐ मुहम्मद (सल्ल०)! तुम आसमान से उसी तरह पूरी किताब एक साथ लाकर पेश करो जैसे हज़रत मूसा (अ़लै०) तौरेत शरीफ़ लाए थे" और दूसरा मुश्रिकीने मक्का ने सवाल किया कि हम तुम्हारी बात नहीं मानेंगे जब तक कि तुम अल्लाह को और फ़रिश्तों को हमारे सामने न ले आओ, मुम्किन है दोनों बातों के जवाब में यह आयत नाज़िल हुई हो।

अल्लाह तआ़ला ने तम्बीह फ़रमाई कि ऐसे सवालात न करो, जैसे मूसा (अ़लै०) से पहले सवालात किये गये थे। 'बनी इस्राईल' ने उन से कहा "اَرِنَا اللّٰهَ جَهْرَةً" कि हमें अल्लाह पाक को आमने-सामने दिखा दो।

यह बेतुके सवालात थे जिस की कोई ज़रुरत नहीं और जिन को एतिराज़ ही करना हो वह तो हर

फ़रमाइश पूरी हो जाने पर भी मानने वाले नहीं। हज़रत मूसा (अलै०) तो पूरी किताब एक साथ लाए थे, फिर भी ज़ालिमों ने उसे कहाँ माना? सूरः क़सस में है فَلَمَّا جَاءَهُمُ الْحَقُّ مِنْ عِنْدِنَا (सो जब हमारी तरफ़ से उन लोगों के पास हक़ पहुँचा तो कहने लगे उन को ऐसी किताब क्यों न मिली जैसी मूसा को मिली थी। क्या जो किताब मूसा को मिली थी इस से पहले यह लोग उस के मुन्किर (इन्कारी) नहीं हुए। उन लोगों ने कहा यह दोनों जादू हैं जो एक-दूसरे के मददगार हैं और कहते थे कि हम तो हर एक के मुन्किर हैं)।

बेजा सवालात-

'सहीह मुस्लिम शरीफ़' में है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, "ऐ लोगो! तुम पर हज फ़र्ज़ किया गया लिहाज़ा हज करो।" तो एक आदमी ने सवाल किया या रसूलल्लाह (सल्ल०)! क्या हर साल हज करना फ़र्ज़ है? इस पर आप (सल्ल०) ख़ामोश रहे, यहाँ तक कि सायल ने तीन बार सवाल किया, फिर आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अगर मैं हाँ कह देता तो हर साल हज करना फ़र्ज़ हो जाता और तुम उस को नहीं कर सकते थे।" फिर फ़रमाया, "मैं जब तक तुमको छोड़े रखूँ (यानी कोई हुक्म न बताऊँ) तुम भी मुझे छोड़े रखो (यानी सवालात न करो) क्योंकि तुम से पहले लोग इसी वजह से हलाक हो गये कि सवालात ज़्यादा करते थे और अपने नबियों के ख़िलाफ़ चलते थे। सो मैं जब किसी चीज़ का हुक्म करूँ तो जहाँ तक मुम्किन हो उस पर अमल करो और अगर मैं किसी चीज़ से मना कर दूँ तो उसे छोड़ दो।"

एक और हदीस में हज़रत मुग़ीरा बिन शोअ़बा (रज़ि०) से रिवायत है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे लिए बाल की खाल और बहुत ज़्यादा सवालात और माल को नापसंदीदा क़रार दिया।" **(मिश्कातुल् मसाबीह, बुख़ारी, मुस्लिम)**

आयत का शाने नुज़ूल चाहे वही हो जो 'मुआ़लिमुत्तन्ज़ील' से नक़्ल किया गया है, लेकिन इस में मुसलमानों को भी यह नसीहत मिल गई कि जो अहकाम हैं उन में बेतुके सवाल न करें, बल्कि ज़रूरत की बातें ही पूछें।

हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जिसे मैं छोड़ दूँ, तुम भी उसे छोड़ दो। तुम से पहले, लोग अम्बिया से कसरते सवालात और उन से इख़्तिलाफ़ करने की बिना पर हलाक किये गये। मैं तुम्हें अगर किसी चीज़ से मना करूँ तो बाज़ आ जाओ और अगर मैं किसी काम का हुक्म दूँ तो उसको पूरा करो।" **(मुस्लिम)**

सूरः माइदा में इर्शाद है, "ऐ ईमान वालो! ऐसी बातें मत पूछो कि अगर तुम पर ज़ाहिर कर दी जाएँ तो तुम्हारी नागवारी का सबब हों।" **(अल् माइदा)**

एक हदीस में आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मुसलमानों में सब से बड़ा मुजरिम वह है जिस के सवाल करने की वजह से कोई हलाल चीज़ हराम कर दी गई हो।" **(बुख़ारी)**

109 وَدَّ كَثِيرٌ مِّنْ أَهْلِ الْكِتٰبِ لَوْ يَرُدُّوْنَكُمْ مِّنْ بَعْدِ إِيْمَانِكُمْ كُفَّارًا ۚ حَسَدًا مِّنْ عِنْدِ أَنْفُسِهِمْ مِّنْ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُمُ الْحَقُّ ۚ فَاعْفُوْا وَاصْفَحُوْا حَتّٰى يَأْتِيَ اللّٰهُ بِأَمْرِهٖ ۗ إِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ﴿۱۰۹﴾

यहूदियों को यह तो ख़ूब मालूम हो गया था कि मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्ल०) हक़ीक़त में अल्लाह के नबी हैं, लेकिन वह हसद की वजह से मुसलमान न होते और तरह्-तरह् की कोशिशें करते ताकि और लोग मुसलमान न हों और जो लोग मुसलमान हो जाते उन्हें फिर अपने मज़हब में वापस करने की कोशिश करते, अल्लाह तआला ने उन के दिल के ग़लत इरादों की ख़बर मुसलमानों को दे दी, जिससे वह बचते रहें और उन की चिकनी चुपड़ी बातों में न आएँ और उन की झूठी हमदर्दी को कोई हैसियत न दें। चूंकि मुसलमान और यहूदी एक ही शहर यानी मदीना मुनव्वरह में रहते थे और उस वक़्त तक ज़ाहिरी अस्बाब (माध्यमों) के एतिबार से मुसलमानों के ग़ल्बे (प्रभुत्व) की सूरत ज़ाहिर न हुई थी इसलिए मुसलमानों से फ़रमाया, तुम माफ़ और दरगुज़र करते रहो और अल्लाह तआला के हुक्म का इन्तिज़ार करते रहो। अल्लाह तआला को सब कुछ क़ुद्रत है कि वह तुम को उन पर ग़ल्बा दे दें, अतः इस के बाद वह भी दिन आया कि क़बीला 'बनू नज़ीर' को मुसलमानों ने ख़ैबर की तरफ़ जिलावतन कर दिया (देश से निकलवा दिया) और यहूद के दूसरे क़बीले 'बनू क़ुरैज़ा' के मर्द क़त्ल कर दिये गये।

110 وَأَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَآتُوا الزَّكٰوةَ ۚ وَمَا تُقَدِّمُوْا لِأَنْفُسِكُمْ مِّنْ خَيْرٍ تَجِدُوْهُ عِنْدَ اللّٰهِ ۗ إِنَّ اللّٰهَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ ﴿۱۱۰﴾

सब्र व सलाह–

इन आयतों में फ़रमाया, नमाज़ें क़ायम करते रहो, ज़कात देते रहो और जो कुछ अपनी जानों के लिए कोई भलाई पहले से भेज दोगे उसे अल्लाह के पास पा लोगे। इस में आमाले सालिहा में मश्गूल रहने और जानी व माली अिबादत अदा करते रहने का हुक्म दिया गया है। जैसा कि وَاعْفُوْا والصفحو में सब्र का हुक्म दिया। सब्र और सलाह (नमाज़) अल्लाह तआला की मदद हासिल करने का ज़रिया हैं जिसे واستَعِيْنوا بِالصّبرِ والصَّلوٰة में यह बात स्पष्ट रूप से बता दी गई है। आमाले सालिहा में यह भी तासीर है कि दुश्मन पर ग़ालिब होने का ज़रिया बनते हैं। दुनिया में भी उन्हें कामियाबी हासिल होती है और आख़िरत में भी उन का बदला मिलेगा। यहाँ से जो ख़ैर भेजेंगे अल्लाह तआला के यहाँ जमा रहेगा जब वहाँ जाएँगे तो पा लेंगे। आख़िर में फ़रमाया إِنَّ اللّٰهَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ (अल्लाह तआला तुम्हारे सब कामों को देखता है।) हर ख़ैर व शर का उसे इल्म है। जो शख़्स अच्छाई या बुराई उस के पास लेकर पहुँचेगा वह उसके अनुसार जज़ा व सज़ा का हक़्दार होगा।

हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जो व्यक्ति एक खजूर के बराबर हलाल कमाई से सद्क़ा कर दे (और अल्लाह तआला हलाल ही को क़ुबूल फ़रमाता है) तो अल्लाह तआला उसको क़ुबूल फ़रमा लेता है। फिर उसकी तर्बियत फ़रमाता है अर्थात उसको बढ़ाता रहता है जैसे तुम में से कोई व्यक्ति अपने घोड़े के बच्चे की तर्बियत करता रहता है।" **(बुख़ारी भाग-1, 189)**

111 وَقَالُوا لَنْ يَدْخُلَ الْجَنَّةَ إِلَّا مَنْ كَانَ هُودًا أَوْ نَصَارَىٰ ۗ تِلْكَ أَمَانِيُّهُمْ ۗ قُلْ هَاتُوا بُرْهَانَكُمْ
إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ

इन आयतों में अल्लाह तआ़ला ने यहूद व नसारा के घमंड की ख़बर दी है कि उनमें से हर एक गिरोह यह कहता था कि जन्नत में वही दाख़िल होगा जो उसके दीन को मानने वाला होगा। अल्लाह तआ़ला ने उसके इस दावे को रद्द किया और कहा कि यह केवल तुम्हारी झूठी तमन्नाएँ हैं जिसकी सच्चाई पर तुम्हारे पास कोई दलील नहीं, अगर तुम सच्चे हो तो कोई दलील पेश करो।

112 بَلَىٰ مَنْ أَسْلَمَ وَجْهَهُ لِلَّهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ فَلَهُ أَجْرُهُ عِنْدَ رَبِّهِ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ

इन आयतों में अल्लाह तआ़ला ने यहूद और नसारा के दावा को दोबारा रद्द किया और फ़रमाया कि यह केवल तुम्हारा दावा है कि तुम ही लोग जन्नत में जाओगे ऐसा नहीं है। बल्कि जन्नत में हर वह व्यक्ति दाख़िल होगा जो तौह़ीद का मानने वाला (अर्थात एकेश्वरवादी) अपने अ़मल में मुख़्लिस (ख़ालिस अल्लाह के लिए) और सुन्नत का पाबन्द होगा।

इससे यह बात भी साबित हुई कि यहूद व नसारा भी जन्नत में दाख़िल नहीं होंगे। इसलिए कि वह न तो तौह़ीद वाले (एकेश्वरवादी) हैं, न अपने अ़मल में मुख़्लिस और न सुन्नत के पाबन्द।

'ह़ाफ़िज़ इब्ने कसीर (रह़०)' लिखते हैं कि अ़मल के मक़्बूल होने की दो शर्तें हैं। पहली शर्त यह है कि वह ख़ालिस अल्लाह के लिए हो। दूसरी शर्त यह है कि वह ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की सुन्नत और इस्लामी शरीअ़त के अनुसार हो, अगर नियत में इख़्लास हो लेकिन अ़मल सुन्नत के मुताबिक़ न हो तो वह अ़मल रद्द कर दिया जायेगा। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जिसने कोई ऐसा अ़मल किया जिसका हमने हुक्म नहीं दिया तो वह रद्द कर दिया जाएगा।" **(मुस्लिम)**

इसलिए उन साधू सन्तों का अ़मल अल्लाह के यहाँ क़ाबिले क़ुबूल नहीं जिनका अ़मल ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के अनुसार न हो। इसी तरह अगर अ़मल शरीअ़त के अनुसार हो, लेकिन नियत अल्लाह को राज़ी करने की न हो तो ऐसा अ़मल भी रद्द कर दिया जाएगा। जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने सूरः निसा में फ़रमाया (बेशक मुनाफ़िक़ीन अल्लाह को धोखा देना चाहते हैं।) **(सूरः निसा, 42)**

113 وَقَالَتِ الْيَهُودُ لَيْسَتِ النَّصَارَىٰ عَلَىٰ شَيْءٍ وَقَالَتِ النَّصَارَىٰ لَيْسَتِ الْيَهُودُ عَلَىٰ شَيْءٍ وَهُمْ يَتْلُونَ الْكِتَابَ ۗ
كَذَٰلِكَ قَالَ الَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ مِثْلَ قَوْلِهِمْ ۚ فَاللَّهُ يَحْكُمُ بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيَامَةِ فِيمَا كَانُوا فِيهِ يَخْتَلِفُونَ

आयत के नाज़िल होने की वजह-

'तफ़्सीर दुर्रे मन्सूर' भाग-1 पेज नं० 108 में ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि जब 'नजरान' के नसारा (ईसाई) रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्मत में ह़ाज़िर हुए तो यहूदियों के उ़लमा भी वहाँ पहुँचे। दोनों लोगों ने वहाँ ह़ाज़िर होकर आपस में बहस शुरु कर दी। यहूदियों ने ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) की नुबूव्वत का भी इन्कार किया और इन्जील के किताबुल्लाह (अल्लाह की किताब) होने का भी

इन्कार किया। 'नसारा' को मुक़ाबिले में जवाब देने का जोश आया तो उनमें से एक व्यक्ति ने यहूदियों से कहा कि "तुम किसी चीज़ पर नहीं हो," अर्थात तुम्हारे दीन की कोई अस्लियत और बुनियाद नहीं।

अल्लाह के नबी या अल्लाह की किसी किताब से तुम्हारा कोई सम्बन्ध न है और न कभी था। इस तरह हज़रत मूसा (अ़लै०) की नुबूव्वत का इन्कार कर बैठे और तौरेत शरीफ़ के किताबुल्लाह होने के इन्कारी हो गये। अल्लाह तआ़ला ने इस आयत में दोनों जमाअ़तों के दावे ज़िक्र करके फ़रमाया وَهُمْ يَتْلُوْنَ الْكِتٰبَ अर्थात हर फ़रीक़ (गिरोह) अल्लाह की किताब भी पढ़ता है। हज़रत मूसा और हज़रत ईसा की रिसालत का इल्म होते हुए रिसालत का इन्कार करता है। हर गिरोह को दूसरे गिरोह के बारे में मालूम है कि तहरीफ़ (संशोधन) करने के बावजूद अल्लाह की किताब और अल्लाह के रसूल से हर एक अपने आप को जोड़ता है। यह जोड़ना उनके कुफ़्र की वजह से उनको निजात दिलाने वाला नहीं।

यहूद की दुश्मनी–

इससे उनके आपस की नफ़रत और दुश्मनी का भी अन्दाज़ा होता है। हालांकि अहले किताब होने का तक़ाज़ा यह था कि वह एक दूसरे को न झुठलाते, क्योंकि तौरेत व इन्जील हर एक दूसरे की तस्दीक़ करती हैं। इसी तरह वह तमाम किताबें जो अल्लाह तआ़ला ने भेजी हैं एक दूसरे की तस्दीक़ करती हैं मगर हद यह है कि मूर्ति पूजक, जिनके पास न कोई इल्म है, न कोई आसमानी किताब, वह भी आसमानी दीन वालों के बारे में कहते हैं कि यह लोग सही राह पर नहीं हैं।

इसमें इस बात की ओर इशारा किया गया है कि अहले किताब आपस के नफ़रत की वजह से वैसी ही बात करते हैं जैसी बुतपरस्त करते हैं और यह उन ही की तरह हो गये।

इसी तरह नबी करीम (सल्ल०) की उम्मत में भी बहुत सी जमाअ़तों ने तो क़ुर्आन की पैरवी का दम भरा मगर रसूल की सुन्नत का इन्कार कर दिया था। दावा तो किया कि क़ुर्आन व सुन्नत दोनों की पैरवी करते हैं, लेकिन अ़मल सुन्नत के ख़िलाफ़ रहता है। तरह-तरह की व्याख्याओं के ज़रिये सुन्नत को अपनी ज़िन्दगी से निकाल दिया।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया कि मैं तुम्हारे लिये दो चीज़ें छोड़े जा रहा हूँ। मेरे बाद तुम गुमराह न होंगे। अगर तुम इन दोनों को मज़बूती के साथ थामे रहोगे। "वह अल्लाह तआ़ला की किताब और मेरी सुन्नत है।"

आयत नं० 114 से 121 तक

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ مَّنَعَ مَسٰجِدَ اللّٰهِ اَنْ يُّذْكَرَ فِيْهَا اسْمُهٗ وَسَعٰى فِىْ خَرَابِهَا ؕ اُولٰٓئِكَ مَا كَانَ لَهُمْ اَنْ يَّدْخُلُوْهَآ اِلَّا خَآئِفِيْنَ ؕ لَهُمْ فِى الدُّنْيَا
خِزْىٌ وَّلَهُمْ فِى الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۝ وَلِلّٰهِ الْمَشْرِقُ وَالْمَغْرِبُ ۚ فَاَيْنَمَا تُوَلُّوْا فَثَمَّ وَجْهُ اللّٰهِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۝
وَقَالُوا اتَّخَذَ اللّٰهُ وَلَدًا ۙ سُبْحٰنَهٗ ؕ بَلْ لَّهٗ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ كُلٌّ لَّهٗ قٰنِتُوْنَ ۝ بَدِيْعُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ وَاِذَا قَضٰٓى
اَمْرًا فَاِنَّمَا يَقُوْلُ لَهٗ كُنْ فَيَكُوْنُ ۝ وَقَالَ الَّذِيْنَ لَا يَعْلَمُوْنَ لَوْلَا يُكَلِّمُنَا اللّٰهُ اَوْ تَاْتِيْنَآ اٰيَةٌ ؕ كَذٰلِكَ قَالَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ
مِّثْلَ قَوْلِهِمْ ؕ تَشَابَهَتْ قُلُوْبُهُمْ ؕ قَدْ بَيَّنَّا الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يُّوْقِنُوْنَ ۝ اِنَّآ اَرْسَلْنٰكَ بِالْحَقِّ بَشِيْرًا وَّنَذِيْرًا ۙ وَّلَا تُسْئَلُ عَنْ اَصْحٰبِ
الْجَحِيْمِ ۝ وَلَنْ تَرْضٰى عَنْكَ الْيَهُوْدُ وَلَا النَّصٰرٰى حَتّٰى تَتَّبِعَ مِلَّتَهُمْ ؕ قُلْ اِنَّ هُدَى اللّٰهِ هُوَ الْهُدٰى ؕ وَلَئِنِ اتَّبَعْتَ
اَهْوَآءَهُمْ بَعْدَ الَّذِىْ جَآءَكَ مِنَ الْعِلْمِ ۙ مَا لَكَ مِنَ اللّٰهِ مِنْ وَّلِىٍّ وَّلَا نَصِيْرٍ ۝ اَلَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ يَتْلُوْنَهٗ حَقَّ تِلَاوَتِهٖ ؕ
اُولٰٓئِكَ يُؤْمِنُوْنَ بِهٖ ؕ وَمَنْ يَّكْفُرْ بِهٖ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْخٰسِرُوْنَ ۝

अनुवाद-

(114) और उससे बढ़कर ज़ालिम कौन होगा। जो अल्लाह की मस्जिदों को इससे रोक दे, कि उनमें
उसका नाम लिया जाए, और उसकी बरबादी का प्रयास करे? यह लोग इस योग्य ही नहीं कि उसमें दाखिल
हों, मगर हाँ यह कि डरते हुए; उनके लिए दुनिया में रुसवाई है और आख़िरत में (भी) बड़ा अ़ज़ाब है। (115)
और (यहूद व नसारा अपने-अपने क़िब्लों के लिए झगड़ते हैं हालाँकि) अल्लाह ही का है पूरब (भी) और
पश्चिम (भी), तो जिस ओर भी तुम मुँह करो, उधर ही अल्लाह की ज़ात है। बेशक अल्लाह बेहद वुसअ़त
वाला (सर्वव्यापी), जानने वाला है। (116) और ये लोग कहते हैं, ''अल्लाह औलाद रखता है (हालाँकि) 'वह'
इन बातों से पाक है, बल्कि जो कुछ आसमानों और ज़मीन में है, सब 'उसी' का है और सब उसी के
फ़रमांबरदार (आज्ञाकारी) हैं; (117) (वह) बनाने वाला है आसमानों और ज़मीन का; और जब (वह) किसी
काम को करना चाहता है, तो बस इतना ही उससे कहता है, ''हो जा'' तो वह हो जाता है । (118) और
जिन्हें इल्म (जानकारी) नहीं है, वे कहते हैं, ''अल्लाह हमसे बात क्यों नहीं करता? या हमारे पास कोई निशानी
(बड़ी) क्यों नहीं आ जाती?'' इसी तरह वे लोग कह चुके हैं, जो इनसे पहले हो चुके हैं वे भी इन्हीं की सी
बातें किया करते थे, इन लोगों के दिल आपस में मिलते-जुलते हैं। हमने अपनी निशानियां बयान कर दी हैं
उन लोगों के लिए जो यक़ीन रखते हैं। (119) (ऐ मुहम्मद) हमने आपको हक़ के साथ भेजा है खुशख़बरी
सुनाने वाला, और डराने वाला बनाकर, और आपसे दोज़ख़ वालों के विषय में कुछ भी पूछ न होगी; (120)
और आपसे हरगिज़ न यहूदी खुश होंगे और न ईसाई जब तक कि आप उनके मज़हब पर न चलने लग
जाएँ। कह दीजिए, ''अल्लाह की (बतलाई हुई) हिदायत ही हिदायत है और अगर बाद उस इल्म के, जो आप
को पहुँच चुका है, उनकी इच्छाओं की पैरवी करने लगेंगे! तो आपके लिए अल्लाह (की पकड़) के सामने न
कोई दोस्त होगा न कोई मददगार। (121) जिन लोगों को 'हमने' किताब दी, वे उसे उसी तरह पढ़ते हैं,
जिस तरह उसके पढ़ने का हक़ है, वे लोग उस पर ईमान रखने वाले हैं, और जो लोग इससे इन्कार करते
हैं तो वही लोग घाटे में रहेंगे।

आयत 114 से 121 तक की व्याख्या

114 وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنْ مَّنَعَ مَسٰجِدَ اللّٰهِ أَنْ يُّذْكَرَ فِيْهَا اسْمُهٗ وَسَعٰى فِيْ خَرَابِهَا ؕ أُولٰٓئِكَ مَا كَانَ لَهُمْ أَنْ يَّدْخُلُوْهَآ إِلَّا
خَآئِفِيْنَ ؕ لَهُمْ فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ وَّلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۝

मस्जिदों में ज़िक्र से रोकना-

इस आयत में उन लोगों को सब से बड़ा ज़ालिम बताया गया है जो अल्लाह की मस्जिदों से रोकें, या उन में अल्लाह का नाम लेने और अल्लाह की अ़िबादत करने से मना करें या उन के वीरानी की कोशिश करें, इस काम के करने वाले कौन हैं जिन के बारे में यह आयत नाज़िल हुई?

मुआ़लिमुत्तन्ज़ील पेज नं० १०७ में 'ह़ज़रत अ़ता' और 'अ़ब्दुर्रह़मान बिन ज़ैद' से नक़्ल किया गया है कि यह आयत मुश्रिकीने मक्का के बारे में नाज़िल हुई, हिजरत के छठवें साल रसूलुल्लाह (सल्ल०) अपने सह़ाबा (रज़ि०) के साथ उ़मरह करने के लिए तशरीफ़ ले गये तो मक्का वालों ने आप (सल्ल०) को मक़ामे हुदैबिया में रोक दिया और उ़मरह के लिए मस्जिदे ह़राम तक न पहुँचने दिया।

मस्जिद को आबाद करने का मतलब-

मस्जिदों को आबाद करने का मतलब यह है कि उन में वह काम होते रहें जिन कामों के लिए वह बनाई गई हैं, नमाज़, तिलावत, ज़िक्र, एतिकाफ़ आदि। और 'मस्जिदे ह़राम' के आबाद करने में यह बात भी शामिल है कि उन में 'तवाफ़' किया जाए, जो शख़्स इन कामों से रोकेगा वह मस्जिदों को वीरान करने वाला है।

मुश्रिकीने मक्का उस वक़्त 'मस्जिदे ह़राम' के मुतवल्ली (संरक्षक) थे, लेकिन 'कअ़बः शरीफ़' में उन्होंने बुत रख दिये थे। ज़ाहिरी तअ़मीर (निर्माण) की देखभाल ही को उन्होंने उस को आबाद करना समझ लिया था और उस की ह़क़ीक़ी तअ़मीर से ग़ाफ़िल थे। तौह़ीद के बजाय शिर्क के काम करते थे, वहाँ नमाज़ियों को नमाज़ नहीं पढ़ने देते थे। उन के ज़ुल्म व ज़्यादती की वजह से ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और आप के सह़ाबा हिजरत करने पर मजबूर हुए, फिर जब 'उ़मरह' के लिए तशरीफ़ ले गये तो 'उ़मरह' न करने दिया। मुश्रिकीन को समझाया गया कि उ़मरह करके वापस हो जाएँगे लेकिन वह न माने और ज़िद पर अड़े रहे।

यहाँ तक कि आप सह़ाबा के साथ वापस तशरीफ़ ले आये और आइन्दा साल 'उ़मरह' की क़ज़ा फ़रमाई यह जो फ़रमाया أُولٰٓئِكَ مَا كَانَ لَهُمْ أَنْ يَّدْخُلُوْهَآ إِلَّا خَآئِفِيْنَ इसमें इस बात की ख़ुशख़बरी दी कि मक्का मुअ़ज़्ज़मा पर जब ग़ल्बा अहले इस्लाम का हो जाएगा तो यह मुश्रिकीन इस में डरते हुए दाख़िल होंगे। अतः अल्लाह तआ़ला ने यह एलान कराया कि ख़बरदार इस साल के बाद कोई मुश्रिक हरगिज़ ह़ज न करे। **(मुआ़लिमुत्तन्ज़ील भाग 1, पेज नं० 107)**

कुछ 'मुफ़स्सिरीन' ने फ़रमाया, आयते शरीफ़ा में यहूद व नसारा का ज़िक्र है उन्होंने मुख़्तलिफ़ अवक़ात में बैतुल् मुक़द्दस की बेहुरमती की। 'ह़ज़रत मुजाहिद' ने फ़रमाया, इस से नसारा मुराद हैं जो बैतुल् मुक़द्दस में तक्लीफ़ देने वाली चीज़ें फेंक देते थे और लोगों को नमाज़ पढ़ने से रोकते थे। 'क़तादा' का क़ौल है कि इस से रूमी लोग मुराद हैं उन्होंने यहूदियों के ह़सद में बैतुल् मुक़द्दस की बर्बादी में 'बख़्त नस्र मजूसी' की मदद की। 'कअ़ब अह़बार' से मन्क़ूल है कि नसारा बैतुल् मुक़द्दस पर ग़ालिब हुए तो उन्होंने इस को जला दिया।

जब ह़ज़रत मुह़म्मद रसूलुल्लाह (सल्ल०) की बेअ़सत हुई तो अल्लाह तआ़ला ने यह आयतें नाज़िल फ़रमाई। इसलिए जो भी नसरानी अब बैतुल् मुक़द्दस में दाख़िल होता है तो ख़ौफ़ के साथ दाख़िल होता है। **(दुर्रे मन्सूर 108, भाग 1)**

सबबे नुज़ूल जो भी हो या नुज़ूल-ए-आयात के वक़्त मसाजिद अल्लाह से रोकने का मिस्दाक़ कोई भी जमाअ़त हो, क़ुर्आन मजीद के उ़मूमी बयान से पता चलता है कि मस्जिदों में अल्लाह का नाम लेने से रोकना ज़ुल्म है, जो बड़े ज़ुल्म में शुमार होता है।

अगर कोई ऐसी जमाअ़त या उस का कोई व्यक्ति मस्जिद में आना चाहे, जो दायरे इस्लाम से ख़ारिज हो जैसे किसी नये मुद्दई-ए-नुबूव्वत (नुबूव्वत का दावा करने वाले) पर ईमान लाने वाले लोग, जिस ने ख़त्मे नुबूव्वत के बाद नुबूव्वत का दावा किया तो उन लोगों को अपनी मस्जिद से रोक सकते हैं। यह मना करना ज़िक्रुल्लाह से मना करना नहीं बल्कि मुसलमानों को कुफ़्र से महफ़ूज़ रखने के लिए होगा।

इस तरह़ के लोगों को जब मुसलमानों ने मस्जिद से रोका (अर्थात क़ादियानी जैसे लोगों ने) तो उन्होंने ऊपर की यह आयत पढ़ी, मगर ऐसे अ़क़ीदा रखने वालों के लिए सूरः अन्आ़म *(आयत नं० 93)* में फ़रमाया गया–

وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرَىٰ عَلَى اللَّهِ كَذِبًا أَوْ قَالَ أُوحِيَ إِلَيَّ وَلَمْ يُوحَ إِلَيْهِ شَيْءٌ وَمَن قَالَ سَأُنزِلُ مِثْلَ مَا أَنزَلَ اللَّهُ (और उस शख़्स से ज़्यादा कौन ज़ालिम होगा जो अल्लाह पर झूठी तोहमत लगाए या यूँ कहे कि मुझ पर वह्य आती है ह़ालांकि उस पर किसी बात की भी वह्य नहीं आई और जो शख़्स यूँ कहे कि जैसा कलाम अल्लाह तआ़ला ने नाज़िल फ़रमाया है अन्क़रीब ऐसा नाज़िल करूँगा।)

कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि यह أُولَٰئِكَ مَا كَانَ لَهُمْ أَن يَدْخُلُوهَا إِلَّا خَائِفِينَ केवल मस्जिदे ह़राम के बारे में नहीं है, बल्कि दूसरी मसाजिद भी शामिल हैं। **(तफ़्सीर इब्ने कसीर पेज नं० 157 भाग 1)**

ह़दीसे क़ुद्सी में है "इब्ने आदम मुझे (अल्लाह को) झुठलाता है, ह़ालांकि उसे यह ह़क़ नहीं पहुँचता और वह मुझे गाली देता है ह़ालांकि उसे यह ह़क़ नहीं पहुँचता, उस का मुझे झुठलाना यह है कि वह दावा करता है कि मैं उसे पहली बार की तरह़ दोबारा ज़िन्दा (पैदा) करने पर क़ादिर नहीं हूँ और उस का मुझे गाली देना यह कि वह कहता है कि मेरी औलाद है ह़ालांकि मैं इन बातों से पाक हूँ कि मेरी कोई बीवी या औलाद हो।" **(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् तफ़्सीर, बाब 8, ह़दीस 4482)**

अल्लाह का वादा-

मोमिनों से अल्लाह तआला का वादा है कि उन की मदद होगी और मस्जिदें काफ़िरों के प्रभुत्व से आज़ाद होंगी। 'साहिबे रूहुल् मआनी' फ़रमाते हैं कि अल्हम्दु लिल्लाह, अल्लाह तआला ने यह वादा पूरा फ़रमाया और बैतुल् मुक़द्दस मुसलमानों के क़ब्ज़े में आया, अगर कोई 'नस्रानी' इस में दाख़िल होता था तो चोरी छिपे अपना रूप बदल कर दाख़िल होता था। फिर 'क़तादा' का क़ौल नक़्ल किया है कि जो भी कोई 'नस्रानी' बैतुल् मुक़द्दस में पाया जाता उसको ख़ूब सज़ा दी जाती।

फिर 'साहिबे रूहुल् मआनी' लिखते हैं कि अगर कोई शख़्स यह सवाल उठाये कि बैतुल् मुक़द्दस फिर नसारा के हाथ में चला गया जिसे 'सलाहउद्दीन अय्यूबी' ने दोबारा फ़तेह़ किया यहाँ यह सवाल पैदा नहीं होता क्योंकि आयत में कोई कलिमा इस बात पर दलालत करने वाला नहीं है कि बैतुल् मुक़द्दस हमेशा मुसलमानों ही के क़ब्ज़े में रहेगा। जब अल्लाह तआला ने मुसलमानों के क़ब्ज़े में दे दिया तो उन पर लाज़िम था कि क़ब्ज़ा बाक़ी रखते कमज़ोर ईमान, कमज़ोर आमाल और कमज़ोर तद्बीर की वजह से खो बैठे यह उन्होंने ईमानी तक़ाज़ों के ख़िलाफ़ किया।

साहिबे बयानुल् क़ुर्आन ने أُولٰٓئِكَ مَا كَانَ لَهُمْ أَنْ يَّدْخُلُوْهَآ إِلَّا خَآئِفِيْنَ का मतलब यह लिखा है उन लोगों को तो कभी बे-हैबत और बेबाक होकर उन मसाजिद में क़दम भी न रखना चाहिए था, बल्कि जब जाते तो निहायत अ़ज़्मत और हुरमत व अदब से जाते जब बेबाक होकर अन्दर जाने का ह़क़ नहीं तो उसकी हुरमत का कब ह़क़ ह़ासिल है। इसी को यहाँ ज़ुल्म फ़रमाया गया है।

ख़ुलासा यह निकला कि इस में मसाजिद का अदब बताया गया है। यह बात संदर्भ से दिल को ज़्यादा लगती है वल्लाहु आ़लम।

फिर फ़रमाया لَهُمْ فِى الدُّنْيَا خِزْىٌ وَّلَهُمْ فِى الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ (कि दुनिया में उन लोगों के लिए रुस्वाई है और आख़िरत में वह सब क़ौमें रुस्वा होंगी जिन्होंने मस्जिदे ह़राम या बैतुल् मुक़द्दस में अल्लाह के ज़िक्र व इ़बादत से रोका और उन के वीरानी की कोशिश की। दुनिया में यह क़ौमें मग़्लूब (पराजित) भी हुईं मुसलमानों की (हुकूमत में) भी रही, 'यहूद' व 'नसारा' जिज़्या देने पर मजबूर हुए और आख़िरत में तमाम काफ़िरों को बड़ा अ़ज़ाब होगा, बार-बार क़ुर्आन मजीद में इस का ज़िक्र किया गया है।

115 وَلِلّٰهِ الْمَشْرِقُ وَالْمَغْرِبُ فَأَيْنَمَا تُوَلُّوْا فَثَمَّ وَجْهُ اللّٰهِ إِنَّ اللّٰهَ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۝

'वह' किसी दिशा में मौजूद नहीं-

इस विषय में मुफ़स्सिरीन ने तीन वाक़िआ़त (घटनाएँ) लिखे हैं, जिन में इस आयत के नुज़ूल का ज़िक्र है। तीनों वाक़िआ़त में यह है कि सहाबा सफ़र में थे अंधेरी रात में (और बाज़ रिवायात में है कि बादल की वजह से) क़िब्ला के बारे में सन्देह हो गया, हर एक ने अपने ग़ौर व फ़िक्र के मुताबिक़ जिधर क़िब्ला समझ में आया उधर नमाज़ पढ़ी। सुबह़ हुई तो ग़ल्ती मालूम हुई ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से

इस का ज़िक्र किया गया तो आप (सल्ल०) ने ख़ामोशी अख़्तियार फ़रमाई फिर अल्लाह तआ़ला ने यह आयतें नाज़िल फ़रमाईं, उन में से एक वाक़िआ़ सुनन तिर्मिज़ी के "अब्वाबुत्तफ़्सीर" में भी है।

इब्ने उ़मर (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) मक्का से मदीना आते वक़्त अपनी सवारी पर सवार थे और नफ़्ल नमाज़ अदा कर रहे थे। जिस तरफ़ सवारी का रुख़ होता उधर ही उन का रुख़ होता। फिर उन्होंने यह आयत तिलावत की और कहा कि यह आयत इसी बारे में नाज़िल हुई है। **(मुस्लिम)**

क़तादा (रज़ि०) से मरवी है कि यह आयत 'मन्सूख़' है और नासिख़ क़ौल यह है कि فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ अपना रुख़ (नमाज़ की ह़ालत में) मस्जिदे ह़राम की जानिब कीजिए। **(सूरः बक़रः-144)**

आयत का मतलब यह है कि अल्लाह तआ़ला पूरब का भी मालिक है और पश्चिम का भी मालिक है (बल्कि तमाम दिशाओं का मालिक है इस में उत्तर और दक्षिण भी आ गये। जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया فَلَا أُقْسِمُ بِرَبِّ الْمَشَارِقِ وَالْمَغَارِبِ إِنَّا لَقَادِرُونَ *(सूरः मआ़रिज-40)* इस तरह़ 'उसे' पूरा अख़्तियार है कि जिस दिशा को चाहे क़िब्ला क़रार दे। चूंकि मअ़बूद वही है और सब दिशाएँ उसी की मख़्लूक़ हैं, इसलिए वह अपनी अ़िबादत के लिए जिस रुख़ का चाहे हुक्म दे और जिस रुख़ पर भी अ़िबादत करने से राज़ी हो जाए, अ़िबादतगुज़ारों के लिए वही दिशा क़िब्ला है। किसी को इस में एतिराज़ का क्या ह़क़ है, वह कअ़बः शरीफ़ को क़िब्ला मुक़र्रर फ़रमा दे तो उसे पूरा अख़्तियार है और बैतुल् मुक़द्दस को क़िब्ला बना दे तो उसे पूरा अख़्तियार है, इन दोनों के अ़लावा और किसी रुख़ पर नमाज़ पढ़ने की इजाज़त दे दे तो भी उसे अख़्तियार है।

अल्लाह हर दिशा में है-

अल्लाह तआ़ला तो इस से बुलन्द है कि उस का जिस्म हो या वह किसी 'दिशा' में हो जिधर रुख़ किया जाए उधर अल्लाह का रुख़ है। यानी हुक्म ख़ुदावन्दी के मुताबिक़ जिधर भी नमाज़ पढ़ लें उधर ही वह दिशा होगी, जिस की तरफ़ तुम्हें रुख़ करने का हुक्म दिया गया और उसी तरफ़ नमाज़ पढ़ने में उसकी रज़ा है।

ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा ने फ़रमाया कि यह आयत सफ़र में नफ़्ल नमाज़ पढ़ने के बारे में नाज़िल हुई। रसूलुल्लाह (सल्ल०) मक्का मुअ़ज़्ज़माँ से मदीना मुनव्वरह तशरीफ़ ला रहे थे और अपनी सवारी पर नफ़्ल नमाज़ पढ़ रहे थे, सवारी जिधर भी मुतवज्जेह होती आप बराबर नमाज़ में मश्ग़ूल रहते। **(तिर्मिज़ी, फ़ी तफ़्सीर सूरः बक़रः)**

'अनस बिन सीरीन' का बयान है कि हम ने ह़ज़रत अनस बिन मालिक (रज़ि०) का इस्तिक़बाल किया जबकि वह शाम से आ रहे थे हम ने देखा कि रास्ते में अपनी सवारी पर नमाज़ पढ़ रहे हैं और रुख़ क़िब्ला से हटा हुआ है जो बाएँ जानिब था। मैंने कहा मैं देख रहा हूँ आप क़िब्ला के रुख़ के अ़लावा दूसरी तरफ़ नमाज़ पढ़ रहे हैं, उन्होंने फ़रमाया, "अगर मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) को ऐसा करते हुए

न देखा होता तो मैं ऐसा न करता।" यह रिवायात 'सहीह़ मुस्लिम' में मौजूद हैं।

आयत के आख़िर में फ़रमाया إِنَّ اللّٰهَ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ यानी वह बन्दों पर उन के दीन में वुस्अ़त अ़ता फ़रमाता है और ऐसी किसी बात का हुक्म नहीं देता जो उनकी ताक़त से बाहर हो, बाज़ ह़ज़रात ने फ़रमाया कि وَاسِعٌ से यह मुराद है कि उस का इ़ल्म हर चीज़ को घेरे है ऐसी कोई चीज़ नहीं जो उस के इ़ल्म से बाहर हो। जैसा कि सूरः ताहा *(आयत नं० 98)* में फ़रमाया وَسِعَ كُلَّ شَيْءٍ عِلْمًا और 'फ़रा' का क़ौल यह है कि وَاسِعٌ माने 'जव्वाद और सख़ी या दाता के है' जिस की देन हर एक के लिए है। बाज़ मुफ़स्सिरीन ने इस के माने **'वासिऊल् मग्फ़िरह'** बताया है यानी कोई भी गुनाह ऐसा नहीं जिस का बख़्शना उस के नज़्दीक मुश्किल हो। **(क़ुर्तुबी, पेज नं० 84 भाग 2)**

रूहुल् मआ़नी पेज नं० ३६५ में है यानी अल्लाह तआ़ला मिल्कियत के एतिबार से या रह़मत के एतिबार से हर चीज़ को घेरे में लिए है। इसीलिए उस ने क़िब्ला के बारे में तुम पर आसानी फ़रमा दी, तंगी नहीं फ़रमाई और वह बन्दों की मस्लह़तों को ख़ूब जानता है, किसी जगह भी कोई अ़मल कैसा ही करें वह उस से बाख़बर रहता है। इस तरह़ वह सब को अ़मल का बदला अ़ता फ़रमाएगा, वह दिलों के ह़ाल को भी जानता है, अगर किसी ने अंधेरे में अपने ग़ौर व फ़िक्र के मुताबिक़ क़िब्ला के ख़िलाफ़ नमाज़ पढ़ी, लेकिन अल्लाह ही के लिए, जिस का मक़्सद इताअ़त ही हो तो वह सवाब का मुस्तह़िक़ होगा और उसे अल्लाह की ख़ुशनूदी ह़ासिल होगी।

इस्तिक़्बाल-ए-क़िब्ला-

इस्तिक़बाल-ए-क़िब्ला नमाज़ की शरायत में से है, ग़ैर क़िब्ले की ओर नमाज़ पढ़े तो नमाज़ न होगी। हाँ, अगर किसी शख़्स को दुश्मन उसे क़िब्ला की तरफ़ नमाज़ न पढ़ने दे, तो जिस तरफ़ मुँह करके पढ़ सकता हो उसी तरफ़ पढ़ ले उस वक़्त वही उस का क़िब्ला होगा।

अगर कोई एक शख़्स या जमाअ़त किसी जगह मौजूद हो और क़िब्ला में इश्तिबाह (सन्देह) हो जाए और वहाँ कोई बतलाने वाला न हो, तो हर शख़्स अपने-अपने तौर पर ख़ूब ग़ौर व फ़िक्र करे। जिस तरफ़ दिल का इत्मिनान हो उस तरफ़ नमाज़ पढ़ ले। अगर ग़ौर व फ़िक्र के बाद किसी तरफ़ नमाज़ पढ़नी शुरु की और नमाज़ पढ़ते हुए मालूम हो जाए कि क़िब्ला दूसरी तरफ़ है तो उसी तरफ़ घूम जाए। फिर से नमाज़ दोहराने की ज़रूरत नहीं है।

अगर क़िब्ला के दिल से इत्मिनान करने के बाद नमाज़ पढ़ी और नमाज़ पढ़ने के बाद मालूम हुआ कि ग़लत रुख़ पर नमाज़ पढ़ी थी तो नमाज़ लौटाने की ज़रुरत नहीं।

अंधेरी रात में किसी जगह चन्द मुसलमान मौजूद हों और क़िब्ले का इ़ल्म न हो मगर उन में से एक शख़्स इमाम बन गया और इमाम व मुक़्तदी सब ने अपने-अपने ग़ौर व फ़िक्र से नमाज़ पढ़ ली और हर एक की दिशा मुख़्तलिफ़ (अलग-अलग) थी और मुक़्तदियों को यह इ़ल्म नहीं कि इमाम का रुख़ किधर है तो यह सह़ी हो जाएगी। हाँ, अगर किसी को यह पता है कि इमाम का रुख़ फ़लाँ ओर है और

वह रुख़ उस मुक़्तदी के नज़्दीक सही नहीं है तो उस मुक़्तदी की नमाज़ न होगी क्योंकि वह अपने इमाम को ग़ल्ती पर समझे हुए है।

इसी तरह अगर कोई शख़्स इमाम से आगे बढ़ गया यानी इमाम के आगे खड़ा हो गया इस तरह से कि इमाम का चेहरा उसकी पुश्त (पीठ) की तरफ़ हो तो भी इक़्तिदा सही न होगी।

(अल् हिदाया, बाब शराइतुस्सलाह)

जो शख़्स आबादी से बाहर हो और जानवर पर सवार हो वह चाहे कि मैं नफ़्ल नमाज़ पढ़ूँ तो वह बैठे-बैठे अपनी सवारी पर नफ़्ल नमाज़ पढ़ सकता है। चाहे सवारी का रुख़ क़िब्ला की जानिब न हो जैसा कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) और बाज़ सहाबा का अ़मल बह़वाला 'सह़ी मुस्लिम' गुज़र चुका।

नोट-

फ़र्ज़ नमाज़ ग़ैर क़िब्ला की तरफ़ रुख़ करके पढ़ी जाए तो सही न होगी सिवाय यह कि न क़िब्ला मालूम हो और न कोई बताने वाला हो तो इस सूरत में ग़ौर व फ़िक्र करके नमाज़ पढ़ ले जैसा कि ऊपर ज़िक्र किया गया।

रेल में और पानी के जहाज़ में नमाज़ आसानी से क़िब्ला रुख़ होकर पढ़ी जा सकती है। बहुत से लोगों को देखा गया है कि फ़र्ज़ नमाज़ भी सफ़र में बिला क़िब्ला पढ़ने को जायज़ समझते हैं और क़िब्ला की तरफ़ रुख़ करने की क़ुदरत होते हुए ग़ैर क़िब्ला की ओर नमाज़ पढ़ते हैं और कहते हैं कि साह़ब सफ़र में सब माफ़ है। यह उन की ग़लती है और उन का अ़मल फ़ुक़हा की तस्रीहात (Findings) के ख़िलाफ़ है उनकी नमाज़ नहीं होती।

दिशा की ह़िक्मत-

किसी ख़ास दिशा को क़िब्ला क़रार देना बहुत सी ह़िक्मतों और मस्लह़तों के अनुसार है। अगर किसी एक रुख़ पर नमाज़ पढ़ने का हुक्म न दिया जाता और हर शख़्स को अख़्तियार होता कि जिधर को चाहे रुख़ करके नमाज़ पढ़ ले तो इस पर इख़्तिलाफ़ होता और एक ही ओर क़िब्ला निश्चित हो जाने से इत्तिह़ाद (Unity) को जो अ़मली सबक़ मिल रहा है वह भी न रहता। इसलिए सारी दुनिया का क़िब्ला एक ही चीज़ को क़रार दिया गया। हिजरत के बाद एक साल से कुछ ऊपर बैतुल मुक़द्दस की ओर नमाज़ पढ़ी गई फिर कअ़बः शरीफ़ को क़िब्ला क़रार दिया गया।

इस तफ़्सील से साफ़ हो गया कि अ़िबादत सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला ही की होती है बैतुल्लाह हो या बैतुल मुक़द्दस, जिस की तरफ़ भी हुक्म ख़ुदावन्दी के मुताबिक़ नमाज़ पढ़ी गई वह अल्लाह तआ़ला ही की अ़िबादत है। किसी दिशा या किसी घर की तरफ़ रुख़ करके नमाज़ पढ़ने से उस दिशा या उस घर की इ़बादत नहीं होती। इस से बुत परस्तों का यह एतिराज़ ख़त्म हो जाता है कि हम बुतों की अ़िबादत करते हैं तो तुम भी तो कअ़बः की ओर नमाज़ पढ़ते हो, क्योंकि मुसलमान रुख़ कअ़बः की ओर तो करते हैं, लेकिन अ़िबादत अल्लाह की ही करते हैं और मुश्रिक बुतों की अ़िबादत करते हैं। उन के ज़ेहनों

में कहीं से भी यह बात नहीं होती कि हम अ़िबादत अल्लाह की कर रहे हैं और बुतों को बतौरे क़िब्ला सामने रख रहे हैं। अगर मुसलमानों को देखा देखी कहने भी लगें तो यह उन की झूठी बात होगी।

बैतुल् मुक़द्दस को क़िब्ला क़रार देने के बाद कअ़बः शरीफ़ को क़िब्ला क़रार देने से जहाँ यह बात मालूम हुई कि मक़्सद सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की अ़िबादत है। बैतुल् मुक़द्दस या कअ़बः शरीफ़ की ओर रुख कर के नमाज़ पढ़ना क़िब्ला के तौर पर है (यानी हिक्मत और मस्लहत की वजह से उन में से अल्लाह तआ़ला ने जिस को जब चाहा क़िब्ला क़रार दे दिया।) यहाँ यह भी मालूम हुआ कि चारों दिशाओं में से कोई भी दिशा क़िब्ला के लिए निश्चित और मख़्सूस नहीं है। जब कअ़बः शरीफ़ को क़िब्ला क़रार दे दिया गया तो क़िब्ला की कोई दिशा निश्चित न रही। सारे आ़लम के मुसलमानों को कअ़बः शरीफ़ की तरफ़ रुख़ करके नमाज़ पढ़ने का हुक्म दे दिया जिस पर सब अ़मल करते हैं, जिससे चारों दिशाओं की तरफ़ नमाज़ों में रुख़ हो जाता है इस से فَثَمَّ وَجْهُ اللّٰهِ का मफ़्हूम भी पूरी तरह़ अदा हो जाता है।

116 وَقَالُوا اتَّخَذَ اللّٰهُ وَلَدًا ۙ سُبْحٰنَهٗ ؕ بَلْ لَّهٗ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ كُلٌّ لَّهٗ قٰنِتُوْنَ ۝

अल्लाह तआ़ला के लिए औलाद-

इस आयत में यहूद व नसारा और मुश्रिकीने अ़रब की बातों को ग़लत साबित किया गया है जिन्होंने 'उज़ैर' व 'मसीह़' (अ़लै०) को अल्लाह का बेटा समझा था और फ़रिश्तों को अल्लाह की बेटियाँ बताते थे। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि वह अल्लाह इन ग़लत दावों से पाक है।

यहूद कहते हैं कि 'उज़ैर' अल्लाह का बेटा है और 'नसारा' कहते हैं कि 'मसीह़ इब्ने मरयम' अल्लाह का बेटा है। अल्लाह फ़रमाते हैं कि ज़मीन और आसमान में जो कुछ है सब अल्लाह की मख़्लूक़ हैं। जब सब कुछ अल्लाह तआ़ला ने पैदा किया है तो वह जो चाहता है केवल शब्द 'कुन' से पैदा कर देता है। ऐसी ज़ात को औलाद की क्या ज़रूरत हो सकती है।

इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि इब्ने आदम मुझे झुठलाता है और यह उसके लायक़ नहीं है और वह मुझे गाली देता है और यह उसके लायक़ नहीं है। उस का मुझे झुठलाना यह है कि उस ने गुमान किया है कि मैं उसे दोबारा पैदा नहीं कर सकता और मुझे गाली देना मेरी औलाद ठहराना है, बेशक मैं बीवी या औलाद रखने से बुलन्दतर (above) हूँ।" **(बुख़ारी)**

ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि इन्सान ने मुझको झुठलाया, जबकि उसके लिए ऐसा करना दुरुस्त न था और उसने मुझे गाली दी ह़ालांकि उसके लिए ऐसा करना दुरुस्त न था। उसका झुठलाना यह है कि मैं (मौत देकर) दोबारा उसे ज़िन्दा न करुँगा, जैसा कि मैंने शुरु में उसे पैदा किया था और उसका गाली देना यह है कि वह कहता है कि अल्लाह तआ़ला औलाद वाला हो गया मगर मैं बेनियाज़ हूँ, न मैंने किसी को जना और

न मैं जना गया और न कोई मेरे बराबर है।" **(बुख़ारी भाग-2 पेज नं 744)**

आसमान और ज़मीन के दर्मियान जो कुछ है वह सब अल्लाह की मिल्कियत में हैं, जो उसके सामने इन्किसारी (Reverently) के साथ झुके हुए हैं, तो बन्दों में से कोई अल्लाह का बेटा कैसे हो सकता है! औलाद तो दो लोगों के ज़रिये पैदा होती है और अल्लाह का कोई शरीक नहीं और न उसकी कोई बीवी है फिर अल्लाह का बेटा कैसे हो सकता है!

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तक्लीफ़ की बातें सुनकर अल्लाह से ज़्यादा सब्र करने वाला कोई नहीं, लोग उसके लिए बेटा बताते हैं फिर भी वह उन्हें रोज़ी देता है और राहत देता है अर्थात तमाम मख़्लूक़ उसकी निगरानी और हिफ़ाज़त में हैं।" **(बुख़ारी व मुस्लिम)**

117 بَدِيعُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ وَاِذَا قَضٰٓى اَمْرًا فَاِنَّمَا يَقُوْلُ لَهٗ كُنْ فَيَكُوْنُ ۝

अल्लाह तआ़ला ने आसमान और ज़मीन को बिना किसी पिछली मिसाल के पैदा किया। जिस तरह उसने मसीह (अ़लै०) को बिना किसी बाप के 'कुन' शब्द से पैदा किया था कि जब वह किसी चीज़ के हो जाने का फ़ैसला करता है तो 'कुन' (यानी हो जा) कहता है और वह चीज़ अल्लाह के इरादे के अनुसार वजूद में आ जाती है।

118 وَقَالَ الَّذِيْنَ لَا يَعْلَمُوْنَ لَوْلَا يُكَلِّمُنَا اللّٰهُ اَوْ تَاْتِيْنَآ اٰيَةٌ ۭ كَذٰلِكَ قَالَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ مِّثْلَ قَوْلِهِمْ ۭ تَشَابَهَتْ قُلُوْبُهُمْ ۭ قَدْ بَيَّنَّا الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يُّوْقِنُوْنَ ۝

وَقَالَ الَّذِيْنَ لَا يَعْلَمُوْنَ 'इब्ने जरीर' और 'इब्ने अबी हातिम' ने 'सईद' और 'इक्रमा' के वास्ते से हज़रत इब्ने अ़ब्बास की रिवायत नक़्ल की है, फ़रमाते हैं कि 'राफ़ेअ़ बिन ख़ुज़ैमा' ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से कहा, "जैसा कि आप दावा करते हैं, कि आप अल्लाह तआ़ला के रसूल हैं तो अल्लाह तआ़ला से कहिये कि वह हम से कलाम करे ताकि हम उस की बातचीत को सुनें।" इस पर यह आयत नाज़िल हुई وَقَالَ الَّذِيْنَ لَا يَعْلَمُوْنَ अ़ब्दुर्रज़्ज़ाक़ बवास्ता सौरी, मूसा बिन उ़बैदह, मुहम्मद बिन कअ़ब क़रज़ी (रज़ि०) से नक़्ल करते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, "काश मुझे मालूम हो जाता कि मेरे वालिदैन ने क्या किया है।" इस पर यह आयतें नाज़िल हुई اِنَّآ اَرْسَلْنٰكَ कि हम ने हक़ के साथ आप को ख़ुशख़बरी सुनाने वाला और डराने वाला बना कर भेजा है, दोज़ख़ियों के मुतअ़ल्लिक़ आप से किसी क़िस्म का कोई सवाल नहीं किया जाएगा।

चुनाँचे इस दुनिया से जाने तक आप ने फिर वालिदैन का ज़िक्र नहीं किया, यह हदीस मुरसल है। और इब्ने जरीर ने बवास्ता 'इब्ने जुरैज', 'दाऊद बिन अबी आ़सिम' से नक़्ल किया है कि एक दिन रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मेरे वालिदैन कहाँ हैं? इस पर यह आयत नाज़िल हुई।" यह हदीस भी मुरसल है। **(तफ़्सीर इब्ने अ़ब्बास)**

रबीअ़ बिन अनस, क़तादा और सुद्दी आदि की राय है कि यह आयत मुश्रिकीने अ़रब के बारे में उतरी है। उन लोगों ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से सवाल किया था कि अगर तुम अल्लाह के रसूल

हो तो अल्लाह हम लोगों से बात करके क्यों नहीं बता देता कि उसने तुम्हें अपना रसूल बना कर भेजा है। इस राय के अनुसार 'अल्लज़ीना मिन क़ब्लिहिम' से मुराद यहूद और नसारा हैं।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से मुश्रिक अपनी मर्ज़ी की निशानियाँ तलब किया करते थे और इस क़िस्म के सवालात हमेशा करते और कहते थे, "हम अल्लाह को देखना चाहते हैं अगर तुम रसूल हो तो एक फ़रिश्ता तुम्हारे साथ क्यों नहीं रहता जो लोगों को तुम्हारी तरफ़ बुलाता रहे।"

"अगर तुम रसूल हो तो तुम्हारे पास ख़ज़ाना क्यों नहीं आता।" यह कि "तुम्हारे पास खजूरों और अंगूरों के बाग़ होने चाहिए। इन सवालात से उनका मतलब हिदायत नहीं हुआ करता था बल्कि शरारत और फ़ित्ना फैलाना होता था वरना अल्लाह ने तो निशानियाँ हमेशा ही इन्सान की हिदायत के लिए नबियों और रसूलों के साथ भेजी हैं।

आगे की आयत में फ़रमाया गया है कि मुश्रिकीने अ़रब और यहूद व नसारा के दिल कुफ़्र और सरकशी में एक दूसरे जैसे हैं और ईमान व यक़ीन लाने वालों के लिए वह निशानियाँ काफ़ी हैं जो अल्लाह ने क़ुर्आन में फ़रमा दी हैं।

119 إِنَّآ أَرْسَلْنَٰكَ بِٱلْحَقِّ بَشِيرًا وَنَذِيرًا ۖ وَلَا تُسْـَٔلُ عَنْ أَصْحَٰبِ ٱلْجَحِيمِ ﴿١١٩﴾

इस्लाम में ज़ोर ज़बरदस्ती नहीं–

इस आयत में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से फ़रमाया गया है कि हमने आप को हक़ (दीने इस्लाम) के साथ भेजा है और आप का दर्जा यह है कि आप जन्नत की बशारत (ख़ुशख़बरी) दें और दोज़ख़ से डराएँ। फिर फ़रमाया कि आप से दोज़ख़ वालों के बारे में सवाल न होगा। इस में आप को तसल्ली दी गई है कि जो लोग मुसलमान न हों आप उनके बारे में परेशान न हों। आप अपना काम किये जाएँ आप से कोई सवाल न होगा कि काफ़िरों ने इस्लाम क्यों क़ुबूल नहीं किया और दोज़ख़ के हक़दार क्यों हुए, ज़बरदस्ती ईमान क़ुबूल कराना आप की ज़िम्मेदारी नहीं है, आप का काम पहुँचा देना है और हमारा काम हिसाब लेना है। जिसका ज़िक्र सूरः काफ़ के आख़िर में फ़रमाया गया है।

120 وَلَن تَرْضَىٰ عَنكَ ٱلْيَهُودُ وَلَا ٱلنَّصَٰرَىٰ حَتَّىٰ تَتَّبِعَ مِلَّتَهُمْ ۗ قُلْ إِنَّ هُدَى ٱللَّهِ هُوَ ٱلْهُدَىٰ ۗ وَلَئِنِ
ٱتَّبَعْتَ أَهْوَآءَهُم بَعْدَ ٱلَّذِى جَآءَكَ مِنَ ٱلْعِلْمِ ۙ مَا لَكَ مِنَ ٱللَّهِ مِن وَلِىٍّ وَلَا نَصِيرٍ ﴿١٢٠﴾

وَلَن تَرْضَىٰ عَنكَ ٱلْيَهُودُ सअ़लबी ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि मदीना मुनव्वरह के यहूदी और 'नजरान' के ईसाई इस बात की उम्मीद में थे कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) उन के क़िब्ला की तरफ़ नमाज़ पढ़ें, जब अल्लाह तआ़ला ने क़िब्ला बैतुल्लाह की तरफ़ कर दिया तो वह इस बात से मायूस हो गये कि उन के दीन की तरह हो जाए, तब अल्लाह तआ़ला ने यह हुक्म नाज़िल किया कि यहूद व नसारा आप से हरगिज़ राज़ी न होंगे। **(लुबाबुन्नुक़ूल फ़ी अस्बाबिन्नुज़ूल)**

यहूद और नसारा राज़ी नहीं हो सकते

तफ़्सीर कुर्तुबी भाग-2 पेज नं० 93 में इस आयत की तफ़्सीर करते हुए लिखा है कि ऐ मुहम्मद (सल्ल०)! उनका आप से दलायल और मोअ़जिज़ात का मुतालूबा इसलिए नहीं है कि उनके कहने के अनुसार मोअ़जिज़ात ज़ाहिर हो जाएँ तो यह वाक़ई ईमान ले आएँगे बल्कि बात यह है कि आप उनके सामने वह मोअ़जिज़ात लाएँ जिनका यह सवाल करते हैं तब भी यह आप से हरग़िज़ राज़ी न होंगे। इनका मक़्सद तो यह है कि आप अपने दीन इस्लाम को छोड़ दें और इनकी पैरवी करने लगें। जब तक आप इनके दीन की पैरवी न करेंगे यह कभी आप से राज़ी होने वाले नहीं।

इसमें यहूद व नसारा के ईमान न लाने के बारे में नाउम्मीदी की ख़बर दी गई है। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया, "ऐ मुहम्मद (सल्ल०)! यहूद और नसारा आप से कभी भी ख़ुश न होंगे। यहाँ तक कि आप उनके दीन को क़ुबूल कर लें।" इसलिए उनकी मर्ज़ी हासिल करने की कोशिश अच्छी बात नहीं आप तो केवल अल्लाह की रज़ामन्दी तलब करें और उनके सामने वह दीन पेश करें जो आप को देकर भेजा गया है और इसके अ़लावा कोई भी दीन हक़ नहीं। यह आयत इस बात की दलील है कि यहूद व नसारा के पास हिदायत नहीं, वह अपने ख़्वाहिश पर हैं और वह दूसरों को उसी की तरफ़ बुलाते हैं और इसमें उम्मते इस्लामिया के लिए सख़्त वअ़ीद है कि अगर क़ुर्आन व सुन्नत का इ़ल्म आ जाने के बाद यहूद व नसारा की राह अपनाएँगे तो अल्लाह के अ़ज़ाब से उन्हें कोई बचा नहीं सकता।

मालिक को राज़ी करने की फ़िक्र-

मोमिन का काम है कि वह केवल अपने मालिक को राज़ी रखे और उसे राज़ी रखने के लिए जो राज़ी होता हो राज़ी रहे और जो नाराज़ होता हो नाराज़ रहे। कोई अपना हो या पराया अल्लाह को नाराज़ करके किसी दूसरे को राज़ी करने की कोशिश ईमान के ख़िलाफ़ है।

आजकल बहुत से मुसलमान अपने आ़माल, लिबास और ज़ाहिरी चीज़ें, शक्ल व सूरत में यहूद व नसारा की पैरवी करते हैं और उन लोगों के सामने अपने को कमृतर समझते हैं। उन्हें राज़ी करने के लिए दाढ़ी मुंडाते हैं, यूरोपियन लिबास भी पहनते हैं औ़रतों को बेपर्दा घुमाते हैं और ग़ैर मह़रम से उन औ़रतों का मुसाफ़ह कराते हैं, टाई लगाने को फ़ख़्र समझते हैं और यह समझते हैं कि अगर हमने ऐसा न किया तो यह दुश्मनाने इस्लाम ताने देंगे, कमेन्ट करेंगे और हमें नौकरी से निकाल देंगे अच्छी नज़र से नहीं देखेंगे।

अफ़्सोस! है कि इनको यह मन्ज़ूर है कि अल्लाह के हुक्मों को तोड़ दें और मुहम्मद (सल्ल०) की पैरवी छोड़ दें, लेकिन काफ़िरों और बेदीन लोगों को राज़ी रखें और इ़ज़्ज़त की नज़र से देखें, चाहे आख़िरत में उसकी वजह से अ़ज़ाब ही भुगतना पड़े, जबकि काफ़िर किसी भी तरह़ राज़ी नहीं हो सकते। वह तो उसी समय राज़ी होंगे जब 'नऊ़ज़ूबिल्लाह' दीन और इस्लाम को छोड़कर उनकी मिल्लत व मज़हब में चले जाएँ।

ऊपर की आयतों से यह भी मालूम हुआ कि तमाम दुनिया के काफ़िर मज़हबी एतिबार से चाहे अलग हों, लेकिन कुफ़्र के मामले में सब एक साथ हो जाते हैं इसलिए इन सब की मिल्लत एक ही है।

ख़ुलासा यह है कि दुनिया में दो मिल्लते हैं एक मिल्लते ईमान और एक मिल्लते कुफ़्र। यहाँ तक कि कुछ फ़िर्क़े अपने को मुसलमान कहते हैं मगर अ़क़ीदे में वह मुसलमान नहीं होते, वह भी इस्लाम दुश्मनी में और मुसलमानों की हुकूमतों को तबाह करने में यहूद व नसारा और मुश्रिकीन से किसी तरह पीछे नहीं होते।

121 الَّذِينَ آتَيْنَاهُمُ الْكِتَابَ يَتْلُونَهُ حَقَّ تِلَاوَتِهِ أُولَٰئِكَ يُؤْمِنُونَ بِهِ ۗ وَمَن يَكْفُرْ بِهِ
فَأُولَٰئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ ۝

इस आयत में ईमान वालों की तअ़रीफ़ फ़रमाई गई है कि वह अल्लाह के किताब की इस तरह तिलावत करते हैं जैसा कि उसकी तिलावत का ह़क़ है। ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) और ह़ज़रत इब्ने मसऊद (रज़ि०) ने फ़रमाया कि ऐसी तिलावत करना जैसा कि तिलावत का ह़क़ है। इसका मतलब यह है कि अल्लाह की किताब में जिन चीज़ों को ह़लाल क़रार दिया गया है उस पर अ़मल करे और जिन चीज़ों को ह़राम क़रार दिया गया है उनको छोड़ दे और क़ुर्आन को उसी तरह पढ़े, जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने नाज़िल फ़रमाया है, उसके कलिमात में या उसके अर्थ में तब्दीली न करे।

ह़ज़रत ह़सन बसरी (रज़ि०) ने फ़रमाया कि उनके हुक्मों पर अ़मल करे और मुतशाबिहात (वह आयतें जिन के माने स्पष्ट न हों) पर ईमान लाए और जो कुछ भी सवालात पेश आएँ उसको इ़ल्म वालों से मालूम करें।

ह़ज़रत उमर (रज़ि०) ने फ़रमाया कि इस आयत में उन लोगों का ज़िक्र है जो तिलावत करते वक़्त किसी रह़मत वाली आयत पर पहुँचते हैं तो अल्लाह तआ़ला से रह़मत का सवाल करते हैं और जब किसी अ़ज़ाब की आयत पर पहुँचते हैं तो उससे अल्लाह की पनाह माँगते हैं।

इस आयत से मुराद यहूद और नसारा हैं और इन आयतों में उनके ईमानी दावे को रद्द किया जा रहा है। इसलिए आयत की तफ़्सीर यह होगी कि उनमें से जिन लोगों ने अपनी किताब की पैरवी की, ह़लाल व ह़राम को समझा उसमें तब्दीली नहीं की, वही लोग ऐ मुह़म्मद (सल्ल०) इस दीन पर ईमान लाएँगे, जो हमने आप पर नाज़िल किया है वह यहूद और नसारा नहीं, जिन्होंने अपनी किताब को बदल दिया, ह़लाल को ह़राम और ह़राम को ह़लाल बनाया। आप (सल्ल०) से सम्बन्धित पेशीनगोईयों (निशानियों) को छुपाया इसीलिए अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया,

وَمَن يَكْفُرْ بِهِ فَأُولَٰئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ जो लोग दीन का इन्कार करेंगे वही ह़क़ीक़त में ख़सारा (नुक़्सान) वाले होंगे और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया कि उस ज़ात की क़सम जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है जो व्यक्ति भी चाहे वह यहूदी हो या ईसाई मेरे बारे में सुनेगा और मुझ पर ईमान नहीं लाएगा तो वह जहन्नम में रहेगा। **(मुस्लिम)**

आयत नं० 122 से 129 तक

يٰبَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ اذْكُرُوْا نِعْمَتِيَ الَّتِيْٓ اَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَاَنِّىْ فَضَّلْتُكُمْ عَلَي الْعٰلَمِيْنَ ۝ وَاتَّقُوْا يَوْمًا لَّا تَجْزِىْ نَفْسٌ عَنْ نَّفْسٍ شَـيْـــًٔـا
وَّلَا يُقْبَلُ مِنْهَا عَدْلٌ وَّلَا تَنْفَعُهَا شَفَاعَةٌ وَّلَا ھُمْ يُنْصَرُوْنَ ۝ وَاِذِ ابْتَلٰٓى اِبْرٰهٖمَ رَبُّهٗ بِكَلِمٰتٍ فَاَتَـمَّهُنَّ ۭ قَالَ اِنِّىْ جَاعِلُكَ
لِلنَّاسِ اِمَامًا ۭ قَالَ وَمِنْ ذُرِّيَّتِىْ ۭ قَالَ لَا يَنَالُ عَهْدِي الظّٰلِمِيْنَ ۝ وَاِذْ جَعَلْنَا الْبَيْتَ مَثَابَةً لِّلنَّاسِ وَاَمْنًا ۭ وَاتَّخِذُوْا مِنْ
مَّقَامِ اِبْرٰهٖمَ مُصَلًّى ۭ وَعَهِدْنَآ اِلٰٓى اِبْرٰهٖمَ وَاِسْمٰعِيْلَ اَنْ طَهِّرَا بَيْتِىَ لِلطَّاۗىِٕفِيْنَ وَالْعٰكِفِيْنَ وَالرُّكَّعِ السُّجُوْدِ ۝ وَاِذْ قَالَ
اِبْرٰهٖمُ رَبِّ اجْعَلْ ھٰذَا بَلَدًا اٰمِنًا وَّارْزُقْ اَھْلَهٗ مِنَ الثَّمَرٰتِ مَنْ اٰمَنَ مِنْهُمْ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۭ قَالَ وَمَنْ كَفَرَ فَاُمَتِّعُهٗ
قَلِيْلًا ثُمَّ اَضْطَرُّهٗٓ اِلٰى عَذَابِ النَّارِ ۭ وَبِئْسَ الْمَصِيْرُ ۝ وَاِذْ يَرْفَعُ اِبْرٰهٖمُ الْقَوَاعِدَ مِنَ الْبَيْتِ وَاِسْمٰعِيْلُ ۭ رَبَّنَا تَقَبَّلْ
مِنَّا ۭ اِنَّكَ اَنْتَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۝ رَبَّنَا وَاجْعَلْنَا مُسْلِمَيْنِ لَكَ وَمِنْ ذُرِّيَّتِنَآ اُمَّةً مُّسْلِمَةً لَّكَ ۠ وَاَرِنَا مَنَاسِكَنَا وَتُبْ عَلَيْنَا ۚ اِنَّكَ
اَنْتَ التَّوَّابُ الرَّحِيْمُ ۝ رَبَّنَا وَابْعَثْ فِيْهِمْ رَسُوْلًا مِّنْھُمْ يَتْلُوْا عَلَيْهِمْ اٰيٰتِكَ وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَيُزَكِّيْهِمْ ۭ اِنَّكَ اَنْتَ
الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ۝

अनुवाद-

(122) ऐ बनी इस्राईल! मेरी वह नेअ़मतें याद करो, जो 'मैंने' तुम को दीं, और यह कि मैंने तुमको
सारे संसार के लोगों पर फ़ज़ीलत (प्रधानता) दी; (123) और उस दिन से डरो, कि कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति
का बोझ न बाँट सकेगा, और न उसकी ओर से कोई बदला स्वीकार किया जाएगा, और न सिफ़ारिश उसको
फ़ायदा देगी, और न लोगों को कोई मदद पहुँचेगी। (124) और (याद करो) जब इब्राहीम को उनके रब ने
कुछ बातों में आज़माया, तो उन्होंने उन बातों को पूरा कर दिखाया, (तो अल्लाह ने) कहा, ''मैं ज़रूर तुमको,
लोगों का इमाम (पथ प्रदर्शक) बनाऊँगा।'' उन्होंने कहा, ''मेरी नस्ल में भी,'' कहा गया, ''मेरा वादा ज़ालिमों
(अत्याचारियों) को नहीं पहुँचता।'' (125) और (याद करो) जब 'हमने' कअ़बः को लोगों के जमा होने और
अमन पाने की जगह बनाया; और (लोगों को हुक्म दिया कि) इब्राहीम के खड़े होने की जगह को नमाज़ की
जगह बना लो; और 'हमने' इब्राहीम और इस्माईल को हुक्म दिया कि ''मेरे घर का तवाफ़ (परिक्रमा) करने
वालों, और एतिकाफ़ करने वालों, और रूकूअ़ व सज्दः करने वालों के लिए पाक-साफ़ रखा करें। (126)
और जब इब्राहीम ने दुआ़ की, ''ऐ मेरे रब! इस शहर को अमन वाला बना दे और इसमें रहने बसने वालों
में से जो अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान लाएँ।'' उनके खाने को मेवे अता कर (अल्लाह ने
फ़रमाया), ''जो कुफ़्र करेगा, 'मैं' उसे भी कुछ दिन मज़े उड़ाने दूँगा, फिर उसे घसीटते हुए जहन्नम के अ़ज़ाब
तक पहुँचा दूँगा और वह कैसा बुरा ठिकाना है!'' (127) और (वह वक़्त भी याद रखना चाहिए) जब इब्राहीम
और इस्माईल कअ़बे की बुनियादें ऊँची कर रहे थे। (और दुआ़ कर रहे थे) ''ऐ हमारे रब! हमसे (यह
खिदमत) कुबूल कर; बेशक 'तू' सुनने वाला, जानने वाला है; (128) ऐ हमारे रब! हम (दोनों) को अपना
फ़रमाँबरदार बनाए रख और हमारी औलाद में और हमको हमारी अ़िबादत (हज्ज) के तरीक़े बता और हमारी
तौबः कुबूल कर; बेशक 'तू' बड़ा तौबः कुबूल करने वाला, रहम वाला है। (129) ऐ हमारे रब! उनमें एक
रसूल उन्हीं में से भेज, जो उन्हें तेरी आयतें पढ़कर सुनाए और उन्हें अल्लाह की किताब और हिकमत की
तालीम (शिक्षा) दे, और उन्हें पाक (संय्यमी) करे, बेशक तू ज़बर्दस्त, हिक्मत वाला है''।

आयत नं० 122 से 129 तक की व्याख्या

122 يٰبَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ اذْكُرُوْا نِعْمَتِيَ الَّتِيْٓ اَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَاَنِّيْ فَضَّلْتُكُمْ عَلَى الْعٰلَمِيْنَ ۝

यह आयत सूरः बक़रः की आयत नं० (48) में गुज़र चुकी है। यहाँ पर इस आयत को दोबारा ज़िक्र करने का मक़्सद 'बनी इस्राईल' को अल्लाह के इनआ़मात याद दिला कर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) पर ईमान लाने की बात कही गई है कि वह केवल ह़सद की बुनियाद पर उनका इन्कार न करें और तौरेत में उनकी जो पेशीनगोई (भविष्यवाणी) बताई गई है उन्हें न छिपाएँ और क़ियामत के दिन से डरें।

123 وَاتَّقُوْا يَوْمًا لَّا تَجْزِيْ نَفْسٌ عَنْ نَّفْسٍ شَيْـًٔا وَّلَا يُقْبَلُ مِنْهَا عَدْلٌ وَّلَا تَنْفَعُهَا شَفَاعَةٌ وَّلَا هُمْ يُنْصَرُوْنَ ۝

इसमें भी बनी इस्राईल को बताया गया है कि ईमान और अ़ामाले सालिह़ा (नेक अ़मल) करें, इसी के साथ क़ियामत के दिन के अ़ज़ाब से भी डराया गया है कि अगर इन्सान अल्लाह की नेअ़मतों को सामने रखे कि अल्लाह ने मुझ पर क्या-क्या इनआ़मात फ़रमाए और अपने आप का मुह़ासबा (जायज़ा) भी करे कि मैंने इसके मुक़ाबले में क्या किया और साथ ही आख़िरत की फ़िक्र भी हो तो ऐसा व्यक्ति अ़माले सालिह़ा से दूर नहीं रह सकता, लेकिन यहूदी तो ईमान और अ़ामाले सालिह़ा से भी दूर हो गये।

124 وَاِذِ ابْتَلٰٓى اِبْرٰهٖمَ رَبُّهٗ بِكَلِمٰتٍ فَاَتَمَّهُنَّ ۭ قَالَ اِنِّىْ جَاعِلُكَ لِلنَّاسِ اِمَامًا ۭ قَالَ وَمِنْ ذُرِّيَّتِىْ ۭ قَالَ لَا يَنَالُ عَهْدِى الظّٰلِمِيْنَ ۝

इस आयत में ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की आज़माइश और उनके पूरा उतरने का ज़िक्र है और शब्द 'कलिमात' से क्या मुराद है इसमें मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि कलिमात बहुवचन है, कलिमा की। यहाँ कलिमात से शरीअ़त के एह़काम मुराद हैं, जिन्हें ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) को दिया गया था, जिसने उसको पूरा किया उस की अल्लाह तआ़ला ने तारीफ़ फ़रमाई। अर्थात ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) के यह कौन से एह़काम थे जिनका हुक्म उनको दिया गया था, इस पर 'ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०)' के ही दो क़ौल हैं एक यह कि अल्लाह तआ़ला ने उनको मनासिके ह़ज का हुक्म दिया जिसको उन्होंने पूरा फ़रमाया, दूसरा यह कि तहारत (पाकी) से सम्बन्धित उनको हुक्म दिये गये, जिनकी संख्या दस है उनमें से पाँच सर से सम्बन्धित हैं और पाँच जिस्म के दूसरे अंग से सम्बन्धित हैं। जैसे-

1- मूँछे काटना।

2- कुल्ली करना।

3- सांस के साथ नाक में पानी लेकर नाक साफ़ करना।

4- मिस्वाक कराना।

5- सर के बालों में माँग निकालना।

6- नाख़ून काटना

7- नाफ़ के नीचे के बाल साफ़ करना।

8- ख़त्ना कराना।

9- बग़लों के बाल उखाड़ना (या साफ़ करना)।

10- पेशाब और पाख़ाना करके पानी से धोना।

(बुख़ारी पेज नं० 473 में है कि) रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, अल्लाह के नबी ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने 80 साल की उम्र में मक़ामे क़ुदूम में अपना ख़त्ना किया।

ह़ज़रत सईद बिन मुसय्यिब से नक़्ल किया गया है कि ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) सबसे पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने मेहमान की मेहमान नवाज़ी की और जिन्होंने सबसे पहले अपनी मूँछे तराशीं और जिनके चेहरे पर सब से पहले सफ़ेद बाल नज़र आये।

ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) का एक क़ौल यह है कि अल्लाह तआ़ला ने इब्राहीम (अ़लै०) को जिन चीज़ों का हुक्म दिया और उन्होंने उनको पूरा किया वह तीस चीज़ें हैं उनमें से दस **‘सूरः बरात’** की आयत اَلتَّآئِبُوْنَ الْعٰبِدُوْنَ से आख़िर तक और दस ‘सूरः मोमिनून’ के शुरु में और **‘सूरः मआ़रिज’** के पहले रुकूअ़ की और दस **‘सूरः अह़ज़ाब’** की आयत اِنَّ الْمُسْلِمِيْنَ وَالْمُسْلِمٰتِ में। जैसे ऊपर की चीज़ों को छोड़कर 1- तौबः करना 2- अ़िबादत करना। 3- अल्लाह की ह़म्द करना। 4- रोज़ः रखना 5- रुकूअ़ करना। 6- सज्दः करना 7- अच्छाई का हुक्म देना। 8- बुराई से रोकना। 9- अल्लाह के हुदूद की हिफ़ाज़त करना।

इसी तरह सूरः मोमिनून में यह अह़काम हैं-

1- नमाज़ में ख़ुशूअ़ करना।

2- बक्वास बातों से बचना।

3- ज़कात अदा करना।

4- शर्म की जगह को ह़राम कामों से मह़फ़ूज़ रखना।

5- अमानतों की निगरानी करना।

6- अहद की पाबन्दी करना।

7- नमाज़ों की पाबन्दी करना।

इसी तरह सूरः मआ़रिज में है-

8- अपने मालों में सायल और मह़रूम का ह़िस्सा रखना।

9- अपने रब के अ़ज़ाब से डरना।

10- गवाहियों को ठीक से अदा करना।

इसी तरह सूरः अह़ज़ाब में यह चीज़ें हैं-

1- इस्लाम का काम करना।

2- दिल से मोमिन होना।

3- फ़रमाँबरदारी करना।

4- क़ौल और अ़मल (कथनी और करनी) में सच्चाई अपनाना।

5- अल्लाह की फ़रमाँबरदारी करना और मुसीबत पर सब्र करना।

6- ख़ुशूअ़ (दिल से) करना।

7- माल ख़ैरात करना।

8- रोज़ः रखना।

9- शर्मगाहों (गुप्त अंगों) की हिफ़ाज़त करना।

10- बहुत ज़्यादा अल्लाह का ज़िक्र करना।

हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा का एक क़ौल यह है कि जिन कलिमात (शब्दों) में अल्लाह तआ़ला ने हज़रत इब्राहीम (अ़लै०) को आज़माया वह यह हैं-

1- अपनी क़ौम से जुदा हो जाना और अल्लाह के लिए अलग रहना।

2- नमरूद से अल्लाह की तौहीद के बारे में बह़स करना और जान का ख़त्रा होते हुए उसके सामने हक़ बात कहना।

3- आग में डाला जाना और उसके बावजूद हक़ पर क़ायम रहना।

4- अपना वतन छोड़कर अल्लाह के लिए हिजरत करना और दूसरी जगह (मुल्क शाम) चला जाना।

5- अल्लाह की तरफ़ से लोगों की ज़ियाफ़त (मेहमानी) करना और अपनी जान और माल से उस पर जमे रहना।

6- बेटे को ज़िब्ह़ करने का हुक्म होना फिर उसके गले पर छुरी फेर देना।

जब यह सब काम कर चुके और इम्तिह़ान में पूरे उतर गये तो अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया **'अस्लिम'** (फ़रमाँबरदार) हो जाओ, तो उन्होंने फ़रमाया कि मैं रब्बुल् आ़लमीन का फ़रमाँबरदार हूँ।

हाफ़िज़ इब्ने कसीर ने मुफ़स्सिर इब्ने जरीर से नक़्ल किया है कि कलिमात शब्द की तफ़्सीर में जितने भी क़ौल (वचन) हैं उनमें जो कुछ भी है शब्द कलिमात से यह सब मुराद हो सकते हैं और यह भी हो सकता है कि इसमें से कुछ चीज़ें मुराद हों, लेकिन इज्मा (सहमति) से इनमें कोई भी चीज़ कलिमात की तफ़्सीर में साबित नहीं है, लेकिन इब्ने कसीर फ़रमाते हैं कि तमाम क़ौलों (कथनों) में जो कुछ है उन सबको मुराद लेना ज़्यादा बेहतर है।

हज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की इमामत-

उ़लमा-ए-तफ़्सीर ने फ़रमाया है कि जब अल्लाह तआ़ला ने उन को हुक्म देकर आज़माया और उन्होंने हुक्मों को पूरा कर दिया, तो बतौर सुलह और इनआ़म अल्लाह तआ़ला ने उन्हें उन लोगों का पेशवा (रहनुमा) बना दिया। जिन हुक्मों में उन को आज़्माया था, उन के पूरा करवाने का मक़्सद भी

यही था कि आमाल और अख़्लाक़ के एतिबार से उनकी पूरी तरह़ तर्बियत हो जाए ताकि वह इमामत के लायक़ हो जाएँ। अल्लाह तआ़ला ने उन को इस तरह़ पेशवा (अगुवा) बनाया कि पहले तो उन को नुबूव्वत दे दी और उन पर सह़ीफ़े नाज़िल फ़रमाए, फिर उन की नस्ल और ज़ुर्रियत (वंशज) में इमामत को जारी फ़रमाया, यानी उन के बाद जितने भी नबी आये वह सब उन्हीं की नस्ल में से थे और सब इस बात पर क़ायम थे कि इब्राहीम ख़लील (अ़लै०) की मिल्लत की पैरवी (अनुसरण) करें। यहाँ तक कि ह़ज़रत मुह़म्मद रसूलुल्लाह (सल्ल०) भी उनकी नस्ल में से थे और उनको भी हुक्म हुआ कि इब्राहीम (अ़लै०) की मिल्लत अर्थात इस्लाम के अनुसार चलें।

यह और बात है कि पूरी तरह़ से उनकी मिल्लत के अह़काम उन के बाद आने वाले अम्बिया किराम (अ़लै०) की मिल्लत में न थे, लेकिन अक्सर या बाज़ एह़काम उनके बाद की शरीअ़तों में उनकी मिल्लत के मुताबिक़ थे।

लेकिन यह भी बता दिया गया कि इस नस्ल में भी जो कोई ज़ालिम होगा वह इस दर्जे पर नहीं हो सकता। मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि यहाँ 'अ़हद' से मुराद 'इमामत' है और निश्चित तौर पर इस से नुबूव्वत मुराद है और ज़ालिमों से काफ़िर मुराद हैं। **'वल् काफ़िरूना हुमुज़्ज़ालिमून'** आयत से मालूम हुआ कि ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की नस्ल में ज़ालिम भी होंगे और ज़ालिम को नुबूव्वत नहीं मिल सकती और नुबूव्वत कोई ऐसी चीज़ नहीं है जो नस्ली तअ़ल्लुक़ की वजह से मिलती चली जाए यह तो अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल है जिस को चाहा अल्लाह तआ़ला ने नबी बना दिया और जब चाहा सिलसिला-ए-नुबूव्वत ख़त्म फ़रमा दिया।

125 وَإِذْ جَعَلْنَا الْبَيْتَ مَثَابَةً لِّلنَّاسِ وَأَمْنًا ۖ وَاتَّخِذُوا مِن مَّقَامِ إِبْرَاهِيمَ مُصَلًّى ۖ وَعَهِدْنَا إِلَىٰ
إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ أَن طَهِّرَا بَيْتِيَ لِلطَّائِفِينَ وَالْعَاكِفِينَ وَالرُّكَّعِ السُّجُودِ

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है وَاتَّخِذُوا مِن مَّقَامِ إِبْرَاهِيمَ مُصَلًّى इमाम बुख़ारी (रह़०) वग़ैरह ने ह़ज़रत उ़मर फ़ारूक़ (रज़ि०) से रिवायत नक़्ल की है, फ़रमाते हैं कि तीन बातों में मैंने अपने परवरदिग़ार से मुवाफ़िक़त की है, मैंने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह (सल्ल०) अगर मक़ामे इब्राहीम को मुसल्ला (तवाफ़ की दोगाना उस जगह पढ़ी जाए) बना लें तो बेहतर है, इस पर यह आयते करीमा وَاتَّخِذُوا مِن مَّقَامِ إِبْرَاهِيمَ नाज़िल हुई। मैंने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह (सल्ल०)! अज़्वाजे मुतह्हरात के पास (मसायल दर्याफ़्त करने के लिए) हर क़िस्म के आदमी आते रहते हैं, अगर आप अपनी अज़्वाजे मुतह्हरात को पर्दे का हुक्म दे दें तो कितना अच्छा होता। इस पर यह आयत नाज़िल हुई يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَدْخُلُوا بُيُوتَ النَّبِيِّ रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्मत में तमाम अज़्वाजे मुतह्हरात ग़ैरत में जमा हुई, मैंने उन से कहा عَسَىٰ رَبُّهُ إِن طَلَّقَكُنَّ यानी अल्लाह तआ़ला इन से बेहतर रसूल (सल्ल०) को अज़्वाज अ़ता फ़रमाएगा, चुनाँचे इसी तरह़ आयते करीमा नाज़िल हो गई, यह ह़दीस मुख़्तलिफ़ लाइनों (तुरुक) से मरवी है।

चुनाँचे इब्ने अबी ह़ातिम से रिवायत है कि जब रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने बैतुल्लाह का तवाफ़ किया तो ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने फ़रमाया, "यह हमारे बाप-दादा ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) का मक़ाम है।"

रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया "हाँ!" हज़रत उमर (रज़ि०) ने अर्ज़ किया, "तो फिर उसे नमाज़ की जगह क्यों न बना लें?" उसी वक़्त अल्लाह तआला ने हुक्म नाज़िल फ़रमा दिया, कि मक़ामे इब्राहीम (अलै०) को नमाज़ पढ़ने की जगह बना लो।

हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि०) से नक़्ल किया गया है कि वह मक़ामे इब्राहीम (अलै०) के पास से गुज़रे और अर्ज़ किया, "या रसूलल्लाह (सल्ल०) क्या हम अपने परवरदिग़ार के ख़लील की जगह पर खड़े हों।" आप ने फ़रमाया, ज़रूर, "फिर अर्ज़ किया कि क्या उसे नमाज़ पढ़ने की जगह न बना लें?" जवाब में रसूलुल्लाह (सल्ल०) थोड़ी देर रुके, इस पर यह आयते करीमा وَاتَّخِذُوْا مِنْ مَّقَامِ اِبْرٰهٖمَ مُصَلًّى नाज़िल हो गई। इमाम सियोती (रह०) फ़रमाते हैं कि इस हदीस और इस से पहली वाली हदीस का संदर्भ यह बतला रहा है कि यह आयत हज्जतुल विदाअ में नाज़िल हुई है।

कअ़बः शरीफ़ अम्न की जगह है-

हज़रत इब्राहीम (अलै०) अपने वतन से हिजरत (वतन छोड़ कर दूसरी जगह जाना) फ़रमा कर मुल्क शाम चले गये थे। उनकी एक बीवी हज़रत सारह थी जिनकी औलादें सब वहीं रहती थी। दूसरी बीवी हज़रत हाजिरा थीं, जिन से हज़रत इस्माईल (अलै०) पैदा हुए थे, जिनको अल्लाह के हुक्म से मक्का मुअज़्ज़मा में छोड़ दिया था जो उस वक़्त सुनसान, चट्यल मैदान था जिस का वाक़िआ इन्शाअल्लाह सूरः इब्राहीम की तफ़्सीर में बयान होगा। जब इस्माईल (अलै०) बड़े हो गये तो हज़रत इब्राहीम (अलै०) को अपने बेटे के ज़ब्ह करने का हुक्म हुआ, जिस में यह कामियाब हो गये। फिर दोनों को कअ़बः शरीफ़ बनाने का हुक्म हुआ और दोनों बाप बेटों ने मिलकर कअ़बः बनाया जिस का ज़िक्र आगे आ रहा है।

अम्न की जगह-

इस आयते शरीफ़ा में कअ़बः शरीफ़ को अव्वल तो مَثَابَةً फ़रमाया, जो **'साबा यसूबु'** से बना है यानी ज़र्फ़ का सीग़ा है। जिस के माने हैं लौटने की जगह। हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि०) और बहुत से ताबिईन से रिवायत है कि इसको مَثَابَةً इसलिए फ़रमाया कि लोग बार-बार इस की तरफ़ आते हैं तवाफ़ करते हैं और अपने घरों को चले जाते हैं फिर वापस आते हैं, उसकी हाज़िरी देने और तवाफ़ करने से दिल नहीं भरता। दुनिया के विभिन्न शहरों के लोग उस की तरफ़ बार-बार रुख़ करते हैं। हज़रत 'इक्रमा', 'क़तादा' और 'अता खुरासानी' ने इस का तर्जुमा **'मजमअ'** किया है यानी 'जमा होने की जगह', जो दूसरे हज़रात ने फ़रमाया क्योंकि जब हर तरफ़ से लोग आते हैं तो वहाँ जमा होने की सूरत पैदा हो जाती है। फिर फ़रमाया وَاَمْنًا (कि हम ने कअ़बः शरीफ़ को अम्न की जगह बनाया) सूरः आले इमरान में फ़रमाया।

'वमन दख़लहु काना आमिना' (और जो शख़्स इस में दाख़िल होगा अम्न वाला होगा।) हज़रत इब्राहीम (अलै०) 'बानी कअ़ब' ही के वक़्त से कअ़बः शरीफ़ का एहतिराम ज़ेहनों में चला आ रहा था, दर्मियान में मुश्रिकीन भी कअ़बः शरीफ़ के मुतवल्ली रहे हैं और वह भी उसकी अज़्मत और एहतिराम

के क़ायल थे और सारे अ़रब में यह बात मशहूर थी कि यह अम्न की जगह है। ज़माने जाहिलियत में अ़रब के लोग आपस में लड़ते रहते थे, एक क़बीला दूसरे क़बीले पर ग़ारतग़री कर देता था और जंग करना उन का ज़रूरी अ़मल बन गया था, लेकिन मक्का मुअ़ज़्ज़माँ के रहने वालों में कोई क़बीला ह़मला आवर नहीं होता था। अल्लाह तआ़ला ने सूरः अ़न्कबूत में अहले मक्का पर अपना इनआ़म ज़ाहिर फ़रमाते हुए इर्शाद फ़रमाया,

اَوَلَمْ يَرَوْا اَنَّا جَعَلْنَا حَرَمًا اٰمِنًا وَّيُتَخَطَّفُ النَّاسُ مِنْ حَوْلِهِمْ ۭ اَفَبِالْبَاطِلِ يُؤْمِنُوْنَ وَبِنِعْمَةِ اللّٰهِ يَكْفُرُوْنَ (क्या उन्हें मालूम नहीं! कि 'हम' ने बना दिया ह़रम को अम्न की जगह और उसके आस-पास के शहरों में लोगों को उचक लिया जाता है यह लोग बातिल पर ईमान लाते हैं और अल्लाह की नेअ़मत की नाशुक्री करते हैं।) चूंकि ह़रम-ए-मक्का अम्न की जगह क़रार दे दी गई है, इसलिए इस में क़त्ल व क़िताल जायज़ नहीं है। ह़ज़रत जाबिर (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया यह तुम में से किसी के लिए ह़लाल नहीं है कि मक्का में हथियार साथ लिए फिरे।

ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, मुझ से पहले किसी के लिए इस में क़िताल करना ह़लाल क़रार नहीं दिया गया और मेरे लिए ह़लाल नहीं किया गया मगर दिन के थोड़े से ह़िस्से में, मक्का मुअ़ज़्ज़माँ ह़रम है (यानी उसकी ह़ुरमत बराबर क़ायम है, वहाँ हमेशा के लिए किसी जानवर या घास तक काटना ह़राम है) क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने क़ियामत तक के लिए इस की ह़ुरमत बाक़ी रखी है। **(बुख़ारी)**

यह जो आप ने फ़रमाया कि मेरे लिए इस में थोड़ी देर के लिए क़िताल ह़लाल किया गया है इस से फ़तेह़ मक्का का दिन मुराद है। ह़ज़रत इमाम अबू ह़नीफ़ा (रह़०) ने फ़रमाया, "जो शख़्स ह़रम के बाहर ह़िल में किसी को क़त्ल करके ह़रम में पनाह ले ले तो उस को 'ह़रम' में क़त्ल न किया जाये बल्कि उस के साथ उठा बैठा न जाये, ख़रीद व फ़रोख़्त न की जाये, खाने-पीने को कुछ न दिया जाये, ताकि मजबूर ह़ोकर ह़रम से बाहर आ जाये फिर उसे ख़ारिज ह़रम ह़िल में क़त्ल कर दिया जाए"।

(रुह़ुलू मआ़नी)

ह़रम-ए-मक्का में जिस तरह़ क़त्ल व क़िताल जायज़ नहीं उसी तरह़ इस में शिकार करना, शिकार के जानवरों को भगाना और दौड़ाना भी मना है। ह़रम मक्का से घास और दरख़्त का काटना और वहाँ के काँटे काटना भी मना है, जिस की तशरीह़ बुख़ारी व मुस्लिम की अह़ादीस में मौजूद है और कुतुब फ़िक़ह में तफ़्सील लिखी है। फिर फ़रमाया,

मक़ामे इब्राहीम-

وَاتَّخِذُوْا مِنْ مَّقَامِ اِبْرٰهٖمَ مُصَلًّى (और मक़ामे इब्राहीम को नमाज़ की जगह बना लो।) मक़ामे इब्राहीम से क्या मुराद है? इस बारे में बहुत से क़ौल मशहूर हैं जिसे आ़म मुफ़स्सिरीन ने अख़्तियार किया है (और अह़ादीस शरीफ़ा से इसकी ताईद होती है कि) इस से वह पत्थर मुराद है जिस पर खड़े होकर ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) कअ़बः शरीफ़ बनाते थे, यह पत्थर ज़ीना का काम देता था और ह़ज़रत इब्राहीम

(अ़लै०) उस पर खड़े होकर तअ़मीर फ़रमाते थे। जब कअ़बः शरीफ़ की तअ़मीर से फ़ारिग़ हो गये, तो जिस तरफ़ कअ़बः शरीफ़ का दरवाज़ा है उस तरफ़ उस को छोड़ दिया गया। कई साल वह वहीं था रसूल (सल्ल०) के ज़माने में भी उसी जगह रहा। ह़ज़रत अबू बक्र (रज़ि०) के ज़माने ख़िलाफ़त में भी वहीं था, फिर जब ह़ज़रत उ़मर फ़ारूक़ (रज़ि०) का ज़माना आया तो उन्होंने वहाँ से हटा कर उस जगह रख दिया जहाँ अब है।

मक़ामे इब्राहीम की तारीख़-

कुछ रिवायात में है कि एक बार सैलाब आ गया था, जो इस को बहा कर ले गया। ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने उसे वहीं रख दिया। ह़ज़राते सह़ाबा और सारी उम्मत ने उस का एक जगह होना तस्लीम कर लिया जहाँ ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने रख दिया था। ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ख़ुलफ़-ए-राशिदीन में से हैं जिन के तरीक़े पर चलने का रसूल (सल्ल०) ने हुक्म दिया और उन के बारे में यह भी फ़रमाया, **इक़्तदौ बिल्लज़ीना मिम् बअ़दी अबी बक्र व उ़मर।** **(तिर्मिज़ी)**

(यानी मेरे बाद उन का इत्तिबअ़ करना जो मेरे बाद होंगे यानी अबू बक्र व उ़मर) और उसको पहली जगह से हटाने में ह़िक्मत भी है क्योंकि अब तवाफ़ करने वालों और तवाफ़ की रकअ़तें पढ़ने वालों की ज़्यादा कसरत है। अगर अपनी जगह होता और तवाफ़ करने वाले उसी के पीछे तवाफ़ की रकअ़तें पढ़ते तो तवाफ़ करने वालों को कअ़बः शरीफ़ के क़रीब से गुज़रने का रास्ता न मिलता।

एक ज़माने तक मक़ामे इब्राहीम एक चार दीवारी के अन्दर था जो बन्द रहता था। मौजूदा हुकूमत ने वह इमारत ख़त्म करके मक़ामे इब्राहीम को बलूरी शीशा में रख दिया है। बाहर से मक़ामे इब्राहीम दिखाई देता है जिस में ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) के क़दम मुबारक के निशानात साफ़ नज़र आते हैं। सह़ीह़ मुस्लिम में है (भाग १ पेज नं० १३६५) कि ह़ज्जतुल् विदा के मौक़े पर रसूलुल्लाह (सल्ल०) तवाफ़ करने के बाद मक़ामे इब्राहीम की तरफ़ बढ़े और क़ुर्आन मजीद के यह अल्फ़ाज़ तिलावत फ़रमाए- وَاتَّخِذُوا مِنْ مَّقَامِ إِبْرٰهِيمَ مُصَلًّى और वहाँ दो रकअ़तें इस तरह पढ़ीं कि मक़ामे इब्राहीम को अपने और कअ़बः शरीफ़ के दर्मियान कर लिया। इन दो रकअ़तों में सूरः قُلْ يٰٓأَيُّهَا الْكٰفِرُوْنَ और सूरः قُلْ هُوَ اللّٰهُ أَحَدٌ पढ़ी। ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) से रिवायत है कि उन्होंने अ़र्ज़ किया, "या रसूलल्लाह आप मक़ामे इब्राहीम को नमाज़ की जगह बना लेते तो अच्छा था।" तो इस पर यह आयत وَاتَّخِذُوا مِنْ مَّقَامِ إِبْرٰهِيمَ مُصَلًّى नाज़िल हुई। **(सह़ी बुख़ारी)**

तवाफ़ के बाद जो दो रकअ़तें पढ़ना वाजिब है उनको मस्जिदे ह़राम में किसी भी जगह पढ़ सकते हैं, लेकिन मक़ामे इब्राहीम के पीछे पढ़ना अफ़्ज़ल है।

बैतुल्लाह को पाक करने का हुक्म

وَعَهِدْنَآ إِلٰٓى إِبْرٰهِيمَ وَإِسْمٰعِيلَ (और हम ने हुक्म भेजा इब्राहीम और इस्माईल की तरफ़ कि पाक करो

मेरे घर को तवाफ़ करने वालों, वहाँ के रहने वालों, रुकूअ़ और सज्दः करने वालों के लिए) इस में कअ़बः शरीफ़ को पाक रखने का हुक्म है और कअ़बः शरीफ़ के साथ मस्जिदे ह़राम के पाक रखने का भी हुक्म हो गया क्योंकि तवाफ़ और नमाज़ की अदाएगी इस में होती है और पाक करने में सब कुछ दाख़िल है। बातिनी नापाकी शिर्क व कुफ़्र, बुत परस्ती, और गन्दी बातों से, इसी तरह़ झूठ, फ़रेब, बद्अ़मली, और ज़ाहिरी नापाकी से पाक रखें।

<u>तवाफ़ एक ऐसी</u> अ़िबादत है जो सिर्फ़ मस्जिदे ह़राम ही में हो सकती है जो कअ़बः शरीफ़ के चारों तरफ़ है। आयते शरीफ़ा में लफ़्ज़ وَالْعٰكِفِيْنَ आया है उस के बारे में ह़ज़रत सअ़द बिन जुबैर का क़ौल है कि इस से मक्का मुअ़ज़्ज़माँ के रहने वाले मुराद हैं, ह़ज़रत अ़ता ने फ़रमाया कि इस से वह लोग मुराद हैं, जो दूसरे शहरों से आते और मस्जिदे ह़राम में क़ियाम कर लेते हैं। ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) ने फ़रमाया कि हम जब भी मस्जिदे ह़राम में बैठ जाएँ तो 'आ़किफ़ीन' में शुमार हो जाएँगे और इस में वह लोग भी दाख़िल हैं जो मस्जिदे ह़राम में एतिकाफ़ करें क्योंकि लफ़्ज़ 'उकूफ़' उन पर भी सिद्ध होता है और وَالرُّكَّعِ السُّجُوْدِ (रुकूअ़ और सज्दः करने वाले) से नमाज़ी मुराद हैं। मस्जिदे ह़राम में जितना भी तवाफ़ और नमाज़ का एहतिमाम हो सके, करना चाहिए इसलिए कि इन दोनों की बहुत बड़ी फ़ज़ीलत है।

तवाफ़ का सवाब-

'सुनन तिर्मिज़ी' में है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जिस ने उस घर का तवाफ़ करते हुए सात चक्कर लगाए और ठीक तरह़ से शुमार किया उसे एक ग़ुलाम आज़ाद करने के बराबर सवाब होगा" और आप (सल्ल०) ने यह भी फ़रमाया कि तवाफ़ करने वाला जो भी क़दम रखेगा और उठाएगा तो हर क़दम पर अल्लाह तआ़ला उस का एक गुनाह माफ़ फ़रमा देंगे और एक नेकी उस के आ़माल नामे में लिख देंगे।

मस्जिदे ह़राम में नमाज़ का सवाब-

मस्जिदे ह़राम में नमाज़ पढ़ने के बारे में रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, "मेरी मस्जिद (यानी मस्जिदे नबवी) में एक नमाज़ दूसरी नमाज़ों के मुक़ाबिले में हज़ार नमाज़ों से अफ़्ज़ल है, मगर मस्जिदे ह़राम इस से अलग है (क्योंकि इस का सवाब मस्जिदे नबवी में नमाज़ पढ़ने से ज़्यादा है।) मस्जिदे ह़राम में एक नमाज़ दूसरी नमाज़ों के मुक़ाबिले में एक लाख नमाज़ों से अफ़्ज़ल है।"

(अह़मद व इब्ने माजा अल् मन्ज़री भाग 2, पेज नं० 214)

126 وَإِذْ قَالَ إِبْرٰهِيْمُ رَبِّ اجْعَلْ هٰذَا بَلَدًا اٰمِنًا وَّارْزُقْ اَهْلَهٗ مِنَ الثَّمَرٰتِ مَنْ اٰمَنَ مِنْهُمْ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ
الْاٰخِرِ ۗ قَالَ وَمَنْ كَفَرَ فَاُمَتِّعُهٗ قَلِيْلًا ثُمَّ اَضْطَرُّهٗۤ اِلٰى عَذَابِ النَّارِ ۗ وَبِئْسَ الْمَصِيْرُ

ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की दुआ़- ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने मक्का मुकर्रमा के लिए

अल्लाह तआ़ला से दरख़्वास्त की कि इस को अम्न वाला शहर बना दीजिए। अल्लाह तआ़ला ने उन की दुआ़ कुबूल फ़रमाई और उस को "बलद-ए-अमीन" क़रार दिया। जिस के मुतअ़ल्लिक़ कुछ अह़काम पिछली आयत की तफ़्सीर में बयान हो चुके हैं। ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने यह भी दुआ़ की कि इस शहर के रहने वालों को जो भी इन में से अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता हो रिज़्क़ दिया जाये, जो तरह़-तरह़ के फलों से हो।

चूंकि उन्होंने पहले **'क़ाल ला यनालु अ़हदिज़्ज़ालिमीन'** का एलान सुन लिया था इसलिए दुआ़ में अहले ईमान के लिए ख़ास कर दिया और अ़र्ज़ किया फलों का इनआ़म अल्लाह तआ़ला पर और आख़िरत पर ईमान रखने वालों को दिया जाये। चूंकि अल्लाह तआ़ला का दुनियावी रिज़्क़ मोमिन और काफ़िर सभी को मिलता है, इसलिए अल्लाह पाक की तरफ़ से एलान हुआ कि रिज़्क़ तो सभी को मिलेगा, इस में ईमान वालों के लिए ख़ास नहीं है। मोमिन और काफ़िर सभी खाएँगे, लेकिन आख़िरत का रिज़्क़ सिर्फ़ मोमिनीन के लिए मख़्सूस है।

काफ़िरों को दुनिया में जितनी जिस की ज़िन्दगी होगी उतने दिन दुनिया में अपना रिज़्क़ खा सकेगा और दुनिया में जितनी भी बड़ी ज़िन्दगी हो आख़िरत के मुक़ाबिले में थोड़ी है। अहले कुफ़्र दुनिया में खा पी लेंगे दुनिया से नफ़ा उठा लेंगे, लेकिन आख़िरत में उन का कोई ह़िस्सा नहीं वहाँ उन को दोज़ख़ जाने के लिए मजबूर होना पड़ेगा और दोज़ख़ के अ़ज़ाब से उन्हें किसी भी तरह़ और कभी कोई छुटकारा न मिलेगा जो बहुत बुरी जगह है।

ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लैहिस्सलातु वस्सलाम) की नस्ल में जब तक अल्लाह ने चाहा अहले ईमान मक्का मुअ़ज़्ज़माँ में बसते रहे जो ह़ज़रत इस्माईल (अ़लै०) की औलाद में से थे। फिर अहले मक्का मुश्रिक हो गये। कअ़बः शरीफ़ तक में उन्होंने बुत रख लिये और लात व उ़ज़्ज़ा और मनात की पूजा करने लगे। अगर इब्राहीम (अ़लै०) की यह दुआ़ कुबूल हो जाती कि जो अहले ईमान हैं उन्हें रिज़्क़ मिले, तो अहले मक्का ने जब कुफ़्र अख़्तियार किया था उसी वक़्त वह फलों से मह़रूम हो जाते, लेकिन अल्लाह तआ़ला ने अहले मक्का को हमेशा रिज़्क़ दिया मोमिनों को भी और काफ़िरों को भी।

मक्का में दुनिया भर के फल-

ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की दुआ़ की वजह से दुनिया भर से मक्का में फल आते हैं जिससे वहाँ के मक़ामी ह़ज़रात और हुज्जाज व ज़ायरीन सब खाते हैं और उन से फ़ायदा उठाते हैं। सूरः क़सस में फ़रमाया أَوَلَمْ نُمَكِّن لَّهُمْ حَرَمًا آمِنًا يُجْبَىٰ إِلَيْهِ ثَمَرَاتُ كُلِّ شَيْءٍ رِّزْقًا مِّن لَّدُنَّا وَلَٰكِنَّ أَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ (क्या हम ने उनको अम्न व अमान वाले ह़रम में जगह नहीं दी, जहाँ हर क़िस्म के फल खिंचे चले आते हैं जो हमारे पास से खाने को मिलते हैं लेकिन उन में से अक्सर लोग नहीं जानते।)

मक्का मुअ़ज़्ज़माँ के क़रीब ही शहर 'तायफ़' आबाद है, जो हरा भरा इलाक़ा है हमेशा वहाँ के तरह़-तरह़ के फल मक्का मुअ़ज़्ज़मा पहुँचते रहे हैं और दुनिया के तमाम इलाक़ों से मक्का मुअ़ज़्ज़माँ

में तरह़-तरह़ के फल आ रहे हैं। शायद दुनिया का कोई फल ऐसा न बचा हो जो मक्का मुअ़ज़्ज़माँ न पहुँचा हो। कुछ ह़ज़रात का यह फ़रमाना है कि 'समरात' में दरख़्तों के फलों के अ़लावा मशीनों की पैदावार और दस्तकारियों से ह़ासिल होने वाला सामान भी दाख़िल है। मक्का की सरज़मीन में न काश्त है न दरख़्त है और न तिजारती चीज़ें लेकिन फिर भी इस में दुनिया भर के 'समरात' (फल) और तरह़-तरह़ की चीज़ें मिलती हैं।

मदीना मुनव्वरह के लिए मुह़म्मद (सल्ल०) की दुआ़-

ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने मक्का मुअ़ज़्ज़माँ के लिए दुआ़ की थी और ह़ज़रत मुह़म्मदुर्रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने मदीना के लिए दुआ़ की।

'सह़ीह़ मुस्लिम' में ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि अहले मदीना का यह तरीक़ा था कि जब पहला फल आता, तो नबी अकरम (सल्ल०) की ख़िद्मत में ले आते थे, आप उसे ले कर यूँ दुआ़ करते थे, "ऐ अल्लाह! तू हमारे लिए हमारे फलों में बरकत दे और हमारे लिए हमारे शहर में बरकत दे और हमारे लिए हमारे "साअ़" में बरकत दे और हमारे लिए हमारे "मुद" में बरकत दे ('साअ़' और 'मुद' उस ज़माने के पैमाने थे।) ऐ अल्लाह! बेशक इब्राहीम (अ़लै०) तेरे बन्दे तेरे ख़लील और तेरे नबी थे और मैं तेरा बन्दा और तेरा नबी हूँ। इब्राहीम (अ़लै०) ने आप से मक्का के लिए दुआ़ की थी और मैं आप से मदीना के लिए दुआ़ करता हूँ जो कुछ इब्राहीम (अ़लै०) ने मक्का के लिए माँगा, मैं उसी क़दर और उस के साथ उस जैसा मज़ीद आप से तलब करता हूँ उस के बाद आप किसी सब से छोटे बच्चे को बुलाकर वह फल दे देते थे।" और ह़ज़रत अनस (रज़ि०) से रिवायत है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने यूँ दुआ़ दी, "ऐ अल्लाह! मदीना में इस से दोगुनी बरकत कर दे जो मक्का में है।" **(सह़ीह़ मुस्लिम)**

रसूलुल्लाह (सल्ल०) की दुआ़ की वजह से पूरे आ़लम से तरह़-तरह़ के समरात व मस्नूआ़त आते हैं और खुली आँखों से बरकात देखने में आती है।

127 وَاِذْ يَرْفَعُ اِبْرٰهٖمُ الْقَوَاعِدَ مِنَ الْبَيْتِ وَاِسْمٰعِيْلُ ۭ رَبَّنَا تَقَبَّلْ مِنَّا ۭ اِنَّكَ اَنْتَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ

कअ़बः शरीफ़ की तअ़मीर-

कअ़बः शरीफ़ पहले फ़रिश्तों ने बनाया फिर ह़ज़रत आ़दम (अ़लै०) ने बनाया फिर बहुत ज़माने के बाद जब तूफ़ाने नूह़ की वजह से उसकी दीवारें टूट गईं और इ़मारत का पता तक न रहा तो ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने अपने बेटे इस्माईल (अ़लै०) को साथ लेकर 'कअ़बः शरीफ़' की बुनियाद उठाई और कअ़बः बनाया। (अल् ज़रक़ी) चूंकि जगह मालूम न थी इसलिए अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से उन को निश्चित करके उस की जगह बता दी जिस का ज़िक्र सूरः ह़ज की आयते करीमा وَاِذْ بَوَّاْنَا لِاِبْرٰهِيْمَ مَكَانَ الْبَيْتِ में फ़रमाया है। ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) के बनाये हुए कअ़बः में 'ह़तीम' का ह़िस्सा कअ़बः शरीफ़ में दाख़िल था। कुरैश-ए-मक्का ने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की बेअ़सत से पाँच साल पहले जब कअ़बः

शरीफ़ बनाया तो उनके पास ख़र्चा पूरा न होने की वजह से कअ़बः शरीफ़ का कुछ हि़स्सा बाहर छोड़ दिया, जिसे ह़तीम कहा जाता है। इस हि़स्सा में मीज़ाबे रह़मत का पानी गिरता है इस वक़्त भी आदमी के बराबर दीवारे बनी हुईं हैं जिस पर छत नहीं है।

'मुस्लिम शरीफ़' में है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने ह़ज़रत आ़इशा (रज़ियल्लाहु अ़न्हा) से फ़रमाया कि अगर यह बात न होती जो तेरी क़ौम के लोग नये-नये मुसलमान हुए हैं तो मैं कअ़बः शरीफ़ को तोड़ देता और उसे इब्राहीम (अ़लै०) की बुनियादों पर बना देता और उसका दरवाज़ा ज़मीन से लगा देता और ह़तीम को उसमें दाख़िल कर देता। **(मुस्लिम)**

दूसरी रिवायत में है, आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि मैं इस में दो दरवाज़े बना देता।

कअ़बः की तारीख़-

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने 'कअ़बः शरीफ़' को उसी तरह़ रहने दिया जिस तरह़ क़ुरैश-ए-मक्का ने बनाया था, फिर 'ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन जुबैर (रज़ि०)' ने ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की बुनियाद के अनुसार बना दिया और 'ह़तीम' को कअ़बः शरीफ़ में दाख़िल कर के दो दरवाज़े बना दिये थे। एक दाख़िल होने और दूसरा निकलने का और बिल्क़ुल ज़मीन के बराबर कर दिया जिससे अन्दर जाने के लिए ज़ीना की ज़रूरत न थी, लेकिन फिर 'ह़ज्जाज बिन यूसुफ़' ने उसी तरह़ बना दिया जैसे क़ुरैश ने बनाया था।

ह़ज़रत इमाम मालिक (रह़०) से 'ह़ज्जाज' के बाद 'ह़ारून रशीद बादशाह' ने पूछा कि हम फिर से उसी तरह़ बना दें जैसे 'अ़ब्दुल्लाह बिन जुबैर' ने बनवाया था तो उन्होंने फ़रमाया कि ऐ अमीरुल मोमिनीन! इसको बादशाहों का खिलौना न बनाइये वरना जो भी आएगा इसे तोड़ा करेगा और बनाया करेगा। इस तरह़ लोगों के दिलों में इसकी हैबत कम हो जाएगी। **(ज़िक्र नव्वी फ़ी शरहे़ मुस्लिम भाग-1 पेज नं० 429)**

'बुख़ारी भाग १, पेज नं० ४७६' पर ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने अपने बेटे इस्माईल (अ़लै०) से फ़रमाया कि बेशक अल्लाह तआ़ला ने मुझे एक काम का हुक्म दिया है उन्होंने अ़र्ज़ किया कि आप अपने रब के हुक्म की फ़रमाँबरदारी कीजिए। ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने फ़रमाया कि मेरी मदद करना। अ़र्ज़ किया कि मैं मदद करुँगा। ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने फ़रमाया कि बेशक अल्लाह तआ़ला ने मुझे हुक्म दिया है कि यहाँ एक घर बनाँऊ और एक ऊँचे टीले की ओर इशारा किया, उसके बाद दोनों ने 'बैतुल्लाह' की बुनियादें उठाना शुरु कीं।

ह़ज़रत इस्माईल (अ़लै०) पत्थर लाते और ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) तअ़मीर करते जाते थे, यहाँ तक कि जब दीवारें ऊँची हो गईं तो यह पत्थर (मक़ामे इब्राहीम) ले आये, जिस पर खड़े होकर तअ़मीर करते थे। यह पत्थर ज़ीना का काम देता था। ह़ज़रत इस्माईल (अ़लै०) उनको पत्थर देते थे और दोनों यह दुआ़ करते जाते थे। **'रब्बना तक़ब्बल मिन्ना इन्नका अन्तस्समीऊल्‌ अ़लीम'** इस तरह़ दोनों अल्लाह का घर बनाते जाते और दुआ़ करते जाते कि ऐ हमारे रब! अपने फ़ज़्ल से हमारी इस हि़क्मत और कोशिश को क़ुबूल फ़रमा क्योंकि तू हमारी दुआ़ओं का ख़ूब सुनने वाला और हमारे दिल की ह़ालत

को ख़ूब जानने वाला है।

इससे मालूम हुआ कि कोई बड़े से बड़ा अ़मल करे तो उस पर क़ुबूलियत की दुआ़ करते रहना चाहिए। **(इब्ने कसीर, भाग 1- पेज नं० 175)**

इसी तरह़ ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने कअ़बः तअ़मीर करते हुए यह दुआ़ भी की थी कि "ऐ हमारे रब! तू हमें अपना फ़रमाँबरदार बनाये रख और हमारी नस्ल में से भी एक उम्मत बना दे जो तेरी फ़रमाँबरदार हो।"

इसलिए मोमिन को चाहिए कि अल्लाह से डरता रहे और इस्लाम और ईमान की दौलत के लिए अल्लाह का हमेशा शुक्रगुज़ार रहे, उसको अल्लाह की केवल तौफ़ीक़ समझे और उसको हमेशा क़ायम करते रहने के लिए दुआ़ करता रहे।

तारीख़ से मालूम होता है कि कअ़बः 'दस बार' तअ़मीर हुआ। सब से पहले इसे फ़रिश्तों ने बनाया दूसरी बार ह़ज़रत आदम (अ़लै०) ने तीसरी बार शीश (अ़लै०) ने, चौथी बार इब्राहीम (अ़लै०) ने, पाँचवी बार क़ौमें अमालका ने, छठीं बार क़बील-ए-जुरहुम ने, सातवीं बार कुसई इब्ने किलाब ने, आठवीं बार क़ुरैश ने और आप (सल्ल०) की ज़िन्दगी में बेअ़सत से पहले नवीं बार अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर ने और दस्वीं बार ह़ज्जाज इब्ने यूसुफ़ ने।

ह़ज़रत इब्राहीम और उसके बाद की तअ़मीर तो तारीख़ में मिलती है, मगर उससे पहले की तअ़मीर क़ुर्आन व सुन्नत या तारीख़ में मौजूद नहीं है।

128 رَبَّنَا وَاجْعَلْنَا مُسْلِمَيْنِ لَكَ وَمِنْ ذُرِّيَّتِنَآ أُمَّةً مُّسْلِمَةً لَّكَ وَأَرِنَا مَنَاسِكَنَا وَتُبْ عَلَيْنَا إِنَّكَ أَنْتَ التَّوَّابُ الرَّحِيمُ ۝

कअ़बः बनाते वक़्त ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) एक यह भी दुआ़ करते जाते थे, कि ऐ हमारे परवरदिग़ार! हमको अपना और ज़्यादा फ़रमाँबरदार बना लीजिए और हमारी औलाद में से भी एक ऐसी जमाअ़त पैदा कीजिए जो आपकी फ़रमाँबरदार हो और हमको हमारे ह़ज वग़ैरह के एह़काम भी बतला दीजिए और हमारे ह़ाल पर मेहरबानी के साथ तवज्जोह रखिये, ह़क़ीक़त में आप ही तवज्जोह फ़रमाने वाले और मेहरबानी करने वाले हैं।

इस्लाम और मुस्लिम-

इसमें पहली दुआ़ यह फ़रमाई कि अल्लाह तआ़ला हमको अपना 'मुस्लिम' और फ़रमाँबरदार बन्दा बना अर्थात हमको हमेशा अपनी फ़रमाँबरदारी पर क़ायम रखना और हमेशा हमको अपनी फ़रमाँबरदारी की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाना ताकि आपकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ हमसे कभी कोई काम न हो। दूसरी दुआ़ यहाँ यह फ़रमाई कि ऐ अल्लाह! हमारी नस्ल में एक उम्मते मुस्लिमा पैदा फ़रमा यानी ऐसी उम्मत और ऐसी क़ौम पैदा कर जो तेरी फ़रमाँबरदार हो और नाम भी उस क़ौम का मुस्लिम और मुसलमान हो अर्थात सिफ़त भी उसकी इस्लाम और फ़रमाँबरदारी हो और इसी नाम और 'इस्लाम' से पुकारी जाये। यहाँ उम्मत में जिस दुआ़ का ज़िक्र है वह बनी इस्माईल ही में से है जिसमें ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) मब्अ़ूस हुए।

'मुस्लिम' वह होता है जो अल्लाह के सामने अपने आप को सुपुर्द कर दे और अल्लाह तआ़ला के हुक्म के अनुसार ज़िन्दगी बसर करे, इस तरह़ सुपुर्द करने का नाम 'इस्लाम' है "और अपने आप को अल्लाह के सामने सुपुर्द करने वाले को मुस्लिम कहते हैं" और यही ह़ज़रत आदम (अ़लै०) से लेकर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) तक सभी नबियों का दीन है।

तीसरी दुआ़ यह फ़रमाई कि ऐ हमारे परवरदिगार! हमको अपने घर की ह़ाज़िरी ह़ज व तवाफ़ वग़ैरह के अह़काम व आदाब भी बतला दीजिए ताकि अ़िबादत के कामों में हम से कोई कमी न हो। मगर हम इन्सान हैं, दरगुज़र कीजिए, बेशक आप ही बड़ी मेहरबानी करने वाले हैं। यहाँ आयत وَأَرِنَا مَنَاسِكَنَا के अल्फ़ाज़ हैं 'मनासिक' 'मन्सक' की जमा है आ़माले ह़ज को भी 'मनासिक' कहा जाता है और मक़ामाते ह़ज, अ़रफ़ात, मिना, मुज़्दल्फ़ा को भी। यहाँ दोनों माने मुराद हो सकते हैं। 'अरिना' जिस के लफ़्ज़ी माने हैं "हमें दिखला दीजिए" तो देखना आँखों से भी हो सकता है और क़ल्ब (दिल) से भी। अतः मक़ामाते ह़ज को बज़रिये जिब्रईल अमीन दिखला कर मुतअ़य्यिन कर दिया गया और अह़कामे ह़ज की तअ़लीम फ़रमा दी गई है।

तफ़्सीर इब्ने कसीर में है कि जब ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने कअ़बः की तअ़मीर पूरी कर दी तो ह़ज़रत जिब्रईल (अ़लै०) तशरीफ़ लाए और उनके हाथ पकड़कर 'सफ़ा' और 'मरवा' पर ले गये कि यह अल्लाह के शआ़यर (निशानात) में से हैं, फिर उनको मिना ले गये, फिर 'मुज़्दल्फ़ा' ले गये और फ़रमाया कि 'अल्मश्अरुल् ह़राम' है फिर उनको 'अ़रफ़ात' ले गये और अह़कामे ह़ज सिखा दिये, जब अरफ़ात ले गये तो पूछा कि मैंने जो कुछ तुमको बताया है तुमने पहचान लिया फिर इसी तरह़ तीन बार पूछा।

ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने फ़रमाया कि हाँ, पहचान लिया। ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) को ह़ज़रत जिब्रईल (अ़लै०) ने ह़ज का तरीक़ा और ह़ज के एह़काम बताये उन्होंने ह़ज का एलान आ़म कर दिया, जिसका ज़िक्र सूरः ह़ज में है।

129 رَبَّنَا وَابْعَثْ فِيهِمْ رَسُولًا مِّنْهُمْ يَتْلُوا عَلَيْهِمْ آيَاتِكَ وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَيُزَكِّيهِمْ
إِنَّكَ أَنتَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿١٢٩﴾

ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की नस्ल-

इस आयत में भी ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की दुआ़ का ज़िक्र है जो कअ़बः बनाते वक़्त यह दुआ़ भी करते जाते कि ऐ हमारे रब! इनमें से एक रसूल मब्ऊ़स फ़रमा। उस रसूल से मुराद "ह़ज़रत मुह़म्मदुर्रसूलुल्लाह (सल्ल०)" हैं जो अ़रबी भी थे और मक्की भी और ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) और ह़ज़रत इस्माईल (अ़लै०) दोनों की नस्ल में से थे। ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) के बाद जितने भी नबी मब्ऊ़स हुए सब इन्हीं की नस्ल में से थे, ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के अ़लावा सब बनी इस्ह़ाक़ (अ़लै०) में से थे, केवल आप (सल्ल०) ही बनी इस्माईल में से हैं।

'मुफ़स्सिर इब्ने कसीर' ने भाग-1 पेज नं० 184 में 'मुस्नद इमाम अह़मद' से रिवायत की है कि

'ह़ज़रत अबू उमामा (रज़ि०)' ने अ़र्ज़ किया, "या रसूलल्लाह! आप का शुरु में ज़िक्र कैसे हुआ।" आपने फ़रमाया, "मैं अपने बाप इब्राहीम (अ़लै०) की दुआ़ हूँ और ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) की बशारत हूँ और मेरी वालिदा ने जो ख़्वाब देखा था कि उनके अन्दर से नूर निकला है जिसने शाम के मह़ल्लात को रौशन कर दिया। मैं उस ख़्वाब का मज़हर हूँ।" (यह ह़दीस साह़िबे मिश्कात ने भी पेज नं० 513) शरहुस्सुन्नह ने भी नक़्ल किया है, जिसमें यह भी है कि मैं अपनी वालिदा के ख़्वाब का मज़हर हूँ जिन्होंने 'ह़मल' के वक़्त देखा था कि उनके लिए एक नूर रौशन हुआ जिससे शाम के मह़ल रौशन हो गये।)

मतलब यह है कि सबसे पहले जिन्होंने मेरा ज़िक्र किया वह ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) हैं। यहाँ तक कि आख़िर में ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) ने आप का नाम लेकर बशारत दी और बनी इस्राईल को ख़िताब किया।

يَا بَنِي إِسْرَائِيلَ إِنِّي رَسُولُ اللهِ إِلَيْكُمْ مُصَدِّقًا لِمَا بَيْنَ يَدَيَّ مِنَ التَّوْرَاةِ وَمُبَشِّرًا بِرَسُولٍ يَأْتِي مِنْ بَعْدِي اسْمُهُ أَحْمَدُ

ऐ बनी इस्राईल! बेशक मैं तुम्हारा और अल्लाह का भेजा हुआ रसूल हूँ, मेरे सामने जो तौरेत है उसकी तस्दीक़ करने वाला हूँ और एक ऐसे रसूल की बशारत देने वाला हूँ जो मेरे बाद आएगा उसका नाम 'अह़मद' होगा। आख़िर ज़माने में आप (सल्ल०) को अल्लाह ने नबी मब्अ़ूस फ़रमाया जिसके लिए इब्राहीम (अ़लै०) ने दुआ़ की थी और ईसा (अ़लै०) ने जिसकी बशारत दी थी आप का नाम 'अह़मद' भी है और 'मुह़म्मद' भी। आप पर अल्लाह तआ़ला ने नुबूव्वत और रिसालत ख़त्म फ़रमा दी और सारे आ़लम के इन्सानों के लिए क़ियामत तक के लिए आप (सल्ल०) को नबी और रसूल बना कर भेज दिया। (तिर्मिज़ी)

आप (सल्ल०) की सिफ़ात–

ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) और ह़ज़रत इस्माईल (अ़लै०) ने जिस रसूल के लिए दुआ़ की थी उसकी दुआ़ यह है– يَتْلُوْ عَلَيْهِمْ آيَاتِكَ اور يُعَلِّمُهُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَيُزَكِّيْهِمْ फ़रमाया था। सूरः आले इमरान के आठ्वें रुकूअ़ में तथा सूरः जुमअ़ में भी आपकी सिफ़ात बयान की गई हैं।

1– तिलावते किताब– वह रसूल आयातों की तिलावत करेगा। ह़क़ीक़त यह है कि क़ुर्आन अल्लाह का कलाम भी है और अल्लाह की किताब भी। अल्लाह की किताब के शब्दों का पढ़ना पढ़ाना सुनना और सुनाना, तिलावत करना, सह़ी तरीक़े पर अदा करना सब मुराद है और क़ुर्आन मजीद के अल्फ़ाज़ को मह़फ़ूज़ रखना फ़र्ज़ किफ़ाया है।

2– किताब और ह़िक्मत की तअ़लीम– रसूलुल्लाह (सल्ल०) का दूसरा काम ह़िक्मत की तअ़लीम देना फ़रमाया, जिसका मतलब यह है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) का यह भी फ़रीज़ा है कि लोगों को अल्लाह के किताब की तअ़लीम दें। अल्लाह की किताब के अल्फ़ाज़ भी सिखाएँ और माना भी समझाएँ। अ़रबी ज़बान जानना क़ुर्आन के समझने के लिए काफ़ी नहीं, क़ुर्आन की तफ़्सीर वही मोअ़तबर है जो रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने बताई और ह़ज़रात सह़ाबा इक्राम ने सीखी फिर उनसें ताबईन और सलफ़े सालिह़ीन से

होते हुए उम्मत तक पहुँची।

मुफ़स्सिर बग़वी 'मुआ़लिमुत्तन्ज़ील भाग-1, पेज नं० 116' में लिखते हैं 'अल् किताब' से 'क़ुर्आन मजीद' मुराद है और 'हिक्मत' से 'मुजाहिद' की तफ़्सीर के अनुसार 'फ़हमें क़ुर्आन' मुराद है और कुछ ह़ज़रात ने इससे अह़कामे क़ज़ा (जजों के हुक्मों को) मुराद लिये हैं और कुछ ह़ज़रात ने हिक्मत की तफ़्सीर अल् इल्म व अ़मल लिया है।

3- तज़्किया- रसूलुल्लाह (सल्ल०) का तीसरा मन्सब 'वयुज़क्कीहिम' बयान फ़रमाया है। तज़्किया लुग़त में पाक साफ़ करने को कहते हैं। रसूलुल्लाह (सल्ल०) का काम सिर्फ़ किताबुल्लाह का पढ़ा देना और समझा देना ही काफ़ी नहीं है बल्कि नुफ़ूस का तज़्किया (दिल की सफ़ाई) भी आपके ज़िम्मे था। रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने लोगों को तौह़ीद का रास्ता दिखाकर कुफ़्र शिर्क की नजासत से पाक किया। ईमान और यक़ीन दिलाया, शक से बचाया, गुनाहों की ग़न्दग़ी से दूर किया, अच्छे अख़्लाक़ और अच्छे आ़माल बताये, गुनाहों की सूची बताई और उनके दुनियवी प्रभाव और आख़िरत में उस का बदला बताया, नेकियों की सूची बताई और उनके फ़ायदे बताये, ह़सद, कन्जूसी, क़ीना, तकब्बुर, ह़िर्स, लालच, दौलत की मुह़ब्बत के नुक़्सानात बताये। अल्लाह की मुह़ब्बत और सिलह़ रह़ीमी, सख़ावत, बड़ों की ख़िदमत, यतीम के साथ रह़मदिली, तक़वा, इख़्लास, नर्मी, गुस्सा पी जाना आदि की तअ़लीम दी। इन्सान को इन्सान बनाया, हैवानियत से बचाया। आप ने फ़रमाया, "मैं अच्छे अख़्लाक़ की तक्मील के लिए भेजा गया हूँ।" **(मुवत्ता)**

नुफ़ूस का तज़्किया केवल ज़बानी तौर पर बता देने से नहीं हो जाता उसके लिए सोहबत की ज़रूरत होती है। इसलिए अल्लाह तआ़ला ने इन्सानों की तअ़लीम और तर्बियत और तज़्किया के लिए इन्सानों ही में से नबियों और रसूलों को भेजा, ताकि वह अ़मली तौर पर अपने आपका तज़्किया कर सके, ताकि उनकी सोह़बत से इन्सानों के नुफ़ूस ख़ैर की तरफ़ पलट सकें और आ़माले सालिह़ा के चाहने वाले हो जाएँ और नुफ़ूस की शरारतों को समझ कर उनसे बच सकें।

इस तरह़ जिसकी सोहबत अख़्तियार करे पहले देख ले कि वह सुन्नत का पाबन्द है या नहीं। उसमें आख़िरत की फ़िक्र कितनी है, इसको परखे बग़ैर सही तर्बियत नहीं हो सकती।

आयत नं० 130 से 138 तक

وَمَنْ يَّرْغَبُ عَنْ مِّلَّةِ اِبْرٰهٖمَ اِلَّا مَنْ سَفِهَ نَفْسَهٗ ؕ وَلَقَدِ اصْطَفَيْنٰهُ فِى الدُّنْيَا ۚ وَاِنَّهٗ فِى الْاٰخِرَةِ لَمِنَ الصّٰلِحِيْنَ ۞ اِذْ قَالَ
لَهٗ رَبُّهٗۤ اَسْلِمْ ۙ قَالَ اَسْلَمْتُ لِرَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۞ وَوَصّٰى بِهَآ اِبْرٰهٖمُ بَنِيْهِ وَيَعْقُوْبُ ؕ يٰبَنِىَّ اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰى لَكُمُ الدِّيْنَ فَلَا تَمُوْتُنَّ اِلَّا
وَاَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ ۞ اَمْ كُنْتُمْ شُهَدَآءَ اِذْ حَضَرَ يَعْقُوْبَ الْمَوْتُ ۙ اِذْ قَالَ لِبَنِيْهِ مَا تَعْبُدُوْنَ مِنْۢ بَعْدِىْ ؕ قَالُوْا نَعْبُدُ اِلٰهَكَ وَاِلٰهَ
اٰبَآئِكَ اِبْرٰهٖمَ وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ اِلٰهًا وَّاحِدًا ۚۖ وَّنَحْنُ لَهٗ مُسْلِمُوْنَ ۞ تِلْكَ اُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ ۚ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُمْ مَّا كَسَبْتُمْ ۚ وَلَا تُسْـَٔلُوْنَ
عَمَّا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۞ وَقَالُوْا كُوْنُوْا هُوْدًا اَوْ نَصٰرٰى تَهْتَدُوْا ؕ قُلْ بَلْ مِلَّةَ اِبْرٰهٖمَ حَنِيْفًا ؕ وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۞ قُوْلُوْٓا
اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْنَا وَمَآ اُنْزِلَ اِلٰٓى اِبْرٰهٖمَ وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ وَالْاَسْبَاطِ وَمَآ اُوْتِىَ مُوْسٰى وَعِيْسٰى وَمَآ اُوْتِىَ
النَّبِيُّوْنَ مِنْ رَّبِّهِمْ ۚ لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ ۖ وَنَحْنُ لَهٗ مُسْلِمُوْنَ ۞ فَاِنْ اٰمَنُوْا بِمِثْلِ مَآ اٰمَنْتُمْ بِهٖ فَقَدِ اهْتَدَوْا ۚ وَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّمَا
هُمْ فِىْ شِقَاقٍ ۚ فَسَيَكْفِيْكَهُمُ اللّٰهُ ۚ وَهُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۞ صِبْغَةَ اللّٰهِ ۚ وَمَنْ اَحْسَنُ مِنَ اللّٰهِ صِبْغَةً ۫ وَّنَحْنُ لَهٗ عٰبِدُوْنَ ۞

अनुवाद-

(130) और इब्राहीम के मज़हब से कौन फिरेगा? मगर वही जिसने अपने को मूर्ख बना लिया हो, और
'हमने' उनको दुनिया में भी चुन लिया, और आख़िरत (परलोक) में (भी) वह नेकों (सदाचारियों) में से होंगे।
(131) जब उनसे उनके रब ने फ़रमाया, ''इस्लाम ले आओ तो वह बोले,''मैं तो सारे जहान के रब की
फ़रमाँबरदारी के लिए सर झुकाता हूँ।'' (132) और इब्राहीम इसी की वसीयत कर गये अपने बेटों को, और
इसी तरह याक़ूब ने भी की, ''ऐ मेरे बेटो! अल्लाह ने इस दीन को तुम्हारे लिए पसंद फ़रमाया है, तो तुम
न मरना मगर मुसलमान हो कर (अर्थात आज्ञाकारी हो कर)। (133) (ऐ यहूद) क्या तुम मौजूद थे, जब
याक़ूब के सामने मौत आ खड़ी हुई? जब उन्होंने अपने बेटों से पूछा, ''मेरे बाद तुम किसकी इबादत करोगे?''
तो उन्होंने जवाब दिया, ''हम आपके मअ़बूद (उपास्य) और आपके बाप-दादा यानी इब्राहीम, और इस्माईल
और इस्हाक़ के मअ़बूद, की इबादत करेंगे जो अकेला मअ़बूद (उपास्य) है और हम तो उसी के फ़रमाँबरदार
(आज्ञाकारी) हैं,'' (134) यह एक गिरोह था जो गुज़र गया; जो कुछ उस गिरोह ने कमाया वह उसके लिए
है, और जो कुछ तुमने कमाया है, वह तुम्हारे लिए है; और वे जो कुछ करते रहे थे, उसके बारे में तुम से
नहीं पूछा जाएगा। (135) और कहते हैं, ''यहूदी या ईसाई हो जाओ, तो सच्चे रास्ते पर आ जाओगे।'' उनसे
कह दीजिए, ''(नहीं) बल्कि हम इब्राहीम के दीन की पैरवी करते हैं, जो 'एक' (अल्लाह) के हो रहे थे और
मुश्रिकों में से न थे।'' (136) कह दो, हम तो ईमान लाए अल्लाह पर और उस पर जो हम पर (किताब)
उतारी गई है, और उस पर जो कि इब्राहीम, और इस्माईल, और इस्हाक़, और याक़ूब, और उनकी औलाद
पर उतारी गई; और मूसा और ईसा को जो (किताब) मिली (उस पर भी); और जो (दूसरे) नबियों को 'उनके'
रब से मिला (उस पर भी); हम इनमें से किसी एक में भी फ़र्क़ (विभेद) नहीं करते, और हम उसी (एक
अल्लाह) के फ़रमाँबरदार (आज्ञाकारी) हैं।'' (137) तो अगर यह लोग भी उसी तरह ईमान ले आएँ, जिस
तरह तुम ईमान लाए हो, तो वे हिदायत (राह) पा जाएँ, और अगर वह मुँह मोड़े रहें, तो वह बड़ी मुख़ालिफ़त
में पड़े हैं; तो अल्लाह तुम्हारी ओर से उनके मुक़ाबिले में काफ़ी है और 'वह' खूब सुनता, जानता है । (138)

(कह दो कि हमारे ऊपर) "अल्लाह का रंग है, और अल्लाह से बेहतर रंग किस का हो सकता है?" और हम तो 'उसी' की अ़िबादत करने वाले हैं।

आयत नं० 130 से 138 तक की व्याख्या

130 وَمَنْ يَّرْغَبُ عَنْ مِّلَّةِ اِبْرٰهٖمَ اِلَّا مَنْ سَفِهَ نَفْسَهٗ ۭ وَلَقَدِ اصْطَفَيْنٰهُ فِي الدُّنْيَا ۚ وَاِنَّهٗ فِي الْاٰخِرَةِ لَمِنَ الصّٰلِحِيْنَ

وَمَنْ يَّرْغَبُ इब्ने औऐना ने रिवायत नक़्ल की है कि ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम ने अपने भतीजों सलमा और मुहाजिर को इस्लाम की दअ़वत दी और उन से कहा कि तुम्हें मालूम है कि अल्लाह तआ़ला ने तौरेत में यह बात बयान फ़रमाई है कि मैं इस्माईल (अ़लै०) की औलाद में से एक रसूल मब्ऊ़स करूँगा, जिन का नाम अह़मद (सल्ल०) होगा, जो उन पर ईमान लाएगा वह हिदायत पाएगा और जो उन पर ईमान नहीं लाएगा उस पर अल्लाह की लअ़नत होगी। इस दअ़वत पर सलमा (रज़ि०) ने इस्लाम क़ुबूल कर लिया और मुहाजिर ने ईमान लाने से इन्कार कर दिया, तब यह आयते करीमा नाज़िल हुई।

मिल्लते इब्राहीमी से सिर्फ़ वही शख़्स मुँह मोड़ सकता है जिस में थोड़ी सी भी अ़क्ल न हो और जो दीन की समझ से बिल्कुल कोरा हो, क्योंकि यह मिल्लत ठीक फ़ित्री दीन पर (स्वाभाविक) है। कोई सच्चा इन्सान इस से इन्कार नहीं कर सकता।

आगे इस की वजह बयान फ़रमाई कि इस मिल्लत की फ़ज़ीलत इस से ज़ाहिर होती है कि अल्लाह तआ़ला ने इसी मिल्लत की वजह से ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) को दुनिया में भी इ़ज़्ज़त व बुज़ुर्गी अ़ता फ़रमाई और रिसालत के लिए चुनकर आख़िरत में भी उनको अपनी ख़ास नेअ़मतें अ़ता फ़रमाएगा तो मक़्सद यह है कि ऐसे हिम्मत वाले नबी की मिल्लत से कौन इन्कार कर सकता है और चूंकि नबी अकरम (सल्ल०) ने मिल्लते इब्राहीमी की तस्दीक़ की है। लिहाज़ा जो शख़्स मिल्लते इस्लामिया का इन्कारी है वह मिल्लते इब्राहीमी का भी इन्कारी है।

यहाँ ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) और मिल्लते इब्राहीमी की खुसूसियत बयान करने से मक़्सूद (तात्पर्य) यही है कि यहूद, 'नसारा' को बताया जाए कि जिस पैग़म्बर को वह अपना पेशवा मानते हैं उन की मिल्लत यही थी जो नबी (सल्ल०) पेश कर रहे हैं। अगर वह ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) को अपना पेशवा मानते हैं तो उन्हें चाहिए कि वह मुह़म्मद (सल्ल०) की इत्तिबअ़ (follow) अख़्तियार कर लें और दीन-ए-इस्लाम को क़ुबूल कर लें।

131 اِذْ قَالَ لَهٗ رَبُّهٗٓ اَسْلِمْ ۙ قَالَ اَسْلَمْتُ لِرَبِّ الْعٰلَمِيْنَ

इस्लाम के माने-

اِذْ قَالَ لَهٗ رَبُّهٗٓ اَسْلِمْ ۙ قَالَ اَسْلَمْتُ لِرَبِّ الْعٰلَمِيْنَ (यानी जब उन के रब ने उन से कहा कि फ़रमाँबरदार हो

जा तो उन्होंने अ़र्ज़ किया मैं रब्बुल् आ़लमीन का फ़रमाँबरदार हूँ।)

लफ़्ज़ 'इस्लाम' का सन्धि विच्छेद सीन-लाम-मीम-है। जब यह बाब 'अफ़आ़ल' में इस्तेमाल होता है तो हुक्म मानने फ़रमाँबरदारी करने और हुक्म के सामने झुक जाने और ज़ाहिर व बातिन से फ़रमाँबरदार हो जाने पर दलालत करता है। इस का सीग़ा 'इस्म फेअ़ल' 'मुस्लिम' है, जिस की जमा मुस्लिमून और मुस्लिमीन है।

अल्लाह ख़ालिक़ सृष्टा और मालिक हैं सब उस के बन्दे हैं बन्दा अपने ख़ालिक़ का फ़रमाँबरदार हो इस से बढ़कर उसकी कोई सआ़दत नहीं है। ह़ज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह और ह़ज़रत इस्माईल ज़बीहुल्लाह (अ़लै०) कअ़बः शरीफ़ बनाते हुए दुआ़ करते जा रहे थे।

رَبَّنَا وَاجْعَلْنَا مُسْلِمَيْنِ لَكَ (कि ऐ हमारे परवरदिग़ार! तू हम को उन लोगों में से बना दे जो तेरे फ़रमाँबरदार हैं) और साथ ही यह भी दुआ़ की وَمِنْ ذُرِّيَّتِنَا أُمَّةً مُّسْلِمَةً لَّكَ (कि हमारी ज़ुर्रियत में से भी एक उम्मते मुस्लिमा बना दे।) जब अल्लाह तआ़ला ने ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) से फ़रमाया, "अपने रब के फ़रमाँबरदार हो जाओ तो उन्होंने अ़र्ज़ किया कि मैं अपने रब का फ़रमाँबरदार हूँ।" फ़रमाँबरदार तो वह थे ही, फ़रमाँबरदारी पर साबित क़दम रहने के लिए हुक्म हुआ और उन्होंने हमेशा फ़रमाँबरदार रहने का इक़रार किया और यह बता दिया कि मैं हमेशा के लिए अपने रब का फ़रमाँबरदार हूँ। लफ़्ज़ أَسْلَمْتُ لِرَبِّ الْعٰلَمِيْنَ कह कर यह बात ज़ाहिर कर दी कि चूंकि वह रब्बुल् आ़लमीन है इसलिए उसकी इताअ़त और फ़रमाँबरदारी ज़रूरी ही ज़रूरी है, जो उसकी इताअ़त और फ़रमाँबरदारी करेगा वह अपने मख़्लूक़ (सृष्टि) होने का फ़र्ज़ अदा करेगा। सूरः अनआ़म *(आयत नं० 15)* में फ़रमाया-

قُلْ إِنِّيْ أَخَافُ إِنْ عَصَيْتُ رَبِّيْ عَذَابَ يَوْمٍ عَظِيْمٍ सूरः आले इमरान *(आयत नं० 83)* में फ़रमाया-

أَفَغَيْرَ دِيْنِ اللهِ يَبْغُوْنَ وَلَهٗ أَسْلَمَ مَنْ فِي السَّمٰوٰتِ وَالْأَرْضِ طَوْعًا وَّكَرْهًا وَّإِلَيْهِ يُرْجَعُوْنَ

(क्या अल्लाह के दीन के सिवा कोई दूसरा दीन चाहते हैं। ह़ालांकि उस के लिए सब फ़रमाँबरदारी के साथ झुके हुए हैं जो भी आसमानों में और ज़मीन में हैं खुशी से और मजबूरी से और सब उस की तरफ़ लौटेंगे।)

सारी मख़्लूक़ पर लाज़िम है कि अपने ख़ालिक़ व मालिक की इताअ़त करें। ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) इम्तिह़ानात में कामियाब हुए हर मरह़ले (Occasions) से गुज़रते गये और इताअ़त व फ़रमाँबरदारी ही को अख़्तियार किये रहे और तमाम अम्बिया-ए-किराम (अ़लै०) का दीन इस्लाम था। तमाम अम्बिया-ए-किराम (अ़लै०) की दअ़वत यही थी कि अल्लाह तआ़ला को 'वह़दहु लाशरीक' (अकेला) मानें और शिर्क से बेज़ार हों और अह़काम-ए-इलाहिया पर अ़मल करें और हर तरह़ से फ़रमाँबरदार हों। चाहे कुछ हुक्मों में इख़्तिलाफ़ भी रहा हो लेकिन उसूल में सब एक और मुत्तफ़िक़ थे। इसीलिए रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया कि الانبياء اخوة من علات وامهاتهم شتى ودينهم واحد

(रवाहुल् बुख़ारी व मुस्लिम कमाफ़ी अल् मिश्कात पेज नं० 509)

दीन का नाम-

उन की अपनी-अपनी ज़बानों में इस दीन के लिए जो भी लफ़्ज़ अख़्तियार किया गया हो, हमारे रसूल हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्ल०) चूंकि अ़रबी थे और उन पर किताब भी अ़रबी में नाज़िल हुई, इसलिए लफ़्ज़ी और माना के तौर पर दीन का नाम इस्लाम है और यह लफ़्ज़ जहाँ फ़रमाँबरदारी के माने (sense) देता है वहाँ अपने तअ़रीफ़ करने वाले के एतिबार से इस बात पर भी दलालत करता है कि हक़ीक़ी सलामती दीन इस्लाम ही है। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने कैसर रोम को जो इस्लाम का दअ़वत नामा भेजा था उस में तहरीर फ़रमाया था أَسْلِمْ تَسْلِمْ يُؤْتِكَ اللهُ أَجْرَكَ مَرَّتَيْنِ (तू इस्लाम क़ुबूल कर सलामत रहेगा अल्लाह तआ़ला तुझे दोहरा अज्र अ़ता फ़रमाएगा।)

(सहीह़ बुख़ारी भाग 1, पेज नं० 5)

हज़रत इब्राहीम (अ़लै०) का रखा हुआ नाम "मुस्लिमीन"-

हज़रत इब्राहीम व इस्माईल (अ़लै०) ने जो उम्मते मुस्लिमा के लिए दुआ़ की उसकी क़ुबूलियत का मुज़ाहिरा इस तरह हुआ कि उम्मते मुहम्मदिया वजूद में आ गई और इस उम्मत के लोगों का नाम हज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने "मुस्लिमीन" रख दिया था। (حیث قال فی دعائہ امۃ مسلمۃ لک)

दीन का नाम 'इस्लाम'-

हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्ल०) के दीन का नाम इस्लाम है। दअ़वत भी फ़रमाँबरदारी की है। यही दीन अल्लाह तआ़ला के यहाँ मोअ़तबर है। जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया,

اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِىْ وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنًا (आज मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारे दीन को कामिल (Perfect) कर दिया और तुम पर अपना इनआ़म पूरा कर दिया और मैंने इस्लाम को दीन के एतिबार से तुम्हारे लिए पसंद कर लिया) और फ़रमाया اِنَّ الدِّيْنَ عِنْدَ اللهِ الْاِسْلَامُ (कि बिलाशुब्हा दीन अल्लाह तआ़ला के नज़दीक सिर्फ़ इस्लाम ही है।) और फ़रमाया,

يٰاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللهَ حَقَّ تُقٰتِهٖ وَلَا تَمُوْتُنَّ اِلَّا وَاَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ (ऐ ईमान वालों! अल्लाह तआ़ला से डरा करो जैसा कि डरने का हक़ है और सिवाय इस्लाम के और किसी हालत में मत मरना। इस से मालूम हो गया कि मुसलमान का काम बस यही है कि वह अल्लाह तआ़ला की फ़रमाँबरदारी करे, बग़ैर चूँ चरा अल्लाह तआ़ला के दीन पर अ़मल करें। अल्लाह तआ़ला की किताब पर अ़मल करे, अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की इताअ़त (अनुसरण) करे क्योंकि रसूलुल्लाह (सल्ल०) की इताअ़त अल्लाह ही की इताअ़त है। (فَقَدْ اَطَاعَ اللهَ مَنْ يُّطِعِ الرَّسُوْلَ) बहुत से लोग अपने दावे में तो मुसलमान हैं लेकिन दिल से मुसलमान नहीं। वह अपनी अ़क़्ल से इस्लाम की बातों को रद्द करते हैं और दुश्मनाने इस्लाम की सोहबतों से प्रभावित (Influenced) होकर इस्लाम पर एतिराज़ करते हैं और बहुत से लोग इस्लाम को अपने ढंग से बनाना चाहते हैं और कुछ लोग ऐसे भी हैं कि ईमान की हक़ीक़त को तोड़-मरोड़ कर पेश करते हैं। यह लोग इस्लाम वाले नहीं (केवल यह मुसलमान होने का दावा करते हैं) ऐसे लोग मिल्लते इब्राहीमिया से अलग हैं।

दीने 'इस्लाम' के अ़लावा कोई दीन क़ुबूल नहीं-

कोई नासमझ यह एतिराज़ करे कि जब ख़ालिक़ व मालिक की फ़रमाँबरदारी ही चाहिए तो दीने इस्लाम क़ुबूल करने की ज़रूरत क्या है, जिस दीन पर भी कोई शख़्स हो और उस दीन में रहते हुए अल्लाह तआ़ला की फ़रमाँबरदारी करे तो मक़्सूद ह़ासिल हो गया और वह निजात का ह़क़्दार होगा। इस जाहिलाना सवाल का जवाब यह है कि ख़ालिक़ व मालिक ने उसी को फ़रमाँबरदार क़रार दिया है जो उस के भेजे हुए दीन के मुताबिक़ उसकी फ़रमाँबरदारी करे।

ह़ज़रात अम्बिया-ए-किराम (अ़लै०) अपने-अपने ज़माने में आते रहे उन पर ईमान लाना फ़र्ज़ था, उन की किताबों और सह़ीफ़ों पर भी ईमान लाना फ़र्ज़ था और क़ियामत पर ईमान लाना भी उन तफ़्सीलात के साथ फ़र्ज़ था जो उन्होंने बताई। अल्लाह के किसी नबी से हट कर अल्लाह तआ़ला की अ़िबादत व फ़रमाँबरदारी अल्लाह के यहाँ मोअ़तबर नहीं है। किसी भी नबी का इन्कार या अल्लाह की किसी किताब का इन्कार कुफ़्र है, कुफ़्र सब से बड़ी नाफ़रमानी है, उस के होते हुए कोई अ़िबादत और कोई भी फ़रमाँबरदारी मोअ़तबर नहीं। सब से आख़िर में 'ख़ातिमुन्नबीय्यीन' (The last Prophet) "सय्यदना मुह़म्मद रसूलुल्लाह (सल्ल०)" तशरीफ़ लाए।

आप (सल्ल०) पर और आप (सल्ल०) की लाई हुए किताब पर ईमान लाना हर इन्सान पर फ़र्ज़ है। जो शख़्स आप के लाये हुए दीन से, आप की लाई हुई किताब से, आप की नुबूव्वत और रिसालत से इन्कार करेगा वह अल्लाह तआ़ला का बाग़ी और नाफ़रमान होगा। इसलिए उस की निजात का कोई रास्ता नहीं, इस्लाम के अ़लावा कोई दीन क़ुबूल नहीं। इस बारे में आयाते क़ुर्आनिया हम पिछले पेज पर पेश कर चुके हैं।

इस्लाम के अ़लावा दुनिया में जितने मज़ाहिब हैं, उन में बहुत बड़ी तअ़दाद (संख्या) में वह लोग हैं जो अल्लाह तआ़ला के लिए औलाद मानते हैं। यह सब कैसे अल्लाह तआ़ला के फ़रमाँबरदार हो सकते हैं? फिर उन लोगों में बेशर्मी, बेह़याई, सूदख़ोरी, रिश्वतखोरी, और ज़िनाकारी इतनी फैली हुई है कि यह किसी भी तरह़ फ़रमाँबरदारी के दायरे में नहीं आ सकते।

जिस क़ौम में ज़िनाकारी आ़म हो और उन के अ़क़ीदे में इतवार के दिन चर्च में पोप के माफ़ कर देने से गुनाह माफ़ हो जाते हों और छोटे पोप के गुनाह बड़े पोप माफ़ कर देता हो वह अल्लाह के हुक्म के फ़रमाँबरदार कैसे हो सकते हैं? ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) को झुठलाया, इन्जील में तह़रीफ़ (Changing) की और ह़ज़रत मुह़म्मद रसूलुल्लाह (सल्ल०) पर न सिर्फ़ यह कि ईमान नहीं लाए बल्कि आप की ज़ाते गिरामी पर एतिराज़ात भी किये और करते हैं, ऐसे लोग ख़ुदावन्द क़ुद्दूस के नाफ़रमान हैं।

132 وَوَصّٰى بِهَآ اِبْرٰهٖمُ بَنِيْهِ وَيَعْقُوْبُ ۭيٰبَنِىَّ اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰى لَكُمُ الدِّيْنَ فَلَا تَمُوْتُنَّ اِلَّا وَاَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ ۝

बेटों को वसीयत-

ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) जब तक ज़िन्दा रहे इसी मिल्लते इस्लाम पर क़ायम रहे और जब इस

दुनिया से इन्तिक़ाल का वक़्त आया तो अपने सब बेटों को इसी मिल्लते इस्लाम पर क़ायम रहने की वसीयत की जैसा कि इस आयत में बताया गया है कि इब्राहीम (अ़लै०) ने अपने बेटों को जिनमें ह़ज़रत इस्माईल (अ़लै०) और ह़ज़रत इस्ह़ाक़ (अ़लै०) भी थे। फिर इसी तरह़ ह़ज़रत इस्ह़ाक़ (अ़लै०) के बेटे याक़ूब (अ़लै०) ने वफ़ात के वक़्त अपने बेटो से कहा 'या बनी........मुस्लिमून'।

'अल्लामा वाह़िदी' इस आयत के अस्बाबे नुज़ूल में लिखते हैं कि यहूदियों ने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से कहा, "क्या आप को मालूम नहीं है कि याक़ूब (अ़लै०) ने अपनी मौत के वक़्त अपने बेटों को यह वसीयत की थी कि तुम यहूदियत पर क़ायम रहना।" उन की इस बात के जवाब में यह आयत नाज़िल हुई, "तुम लोग ह़ज़रत याक़ूब (अ़लै०) की ओर कैसे कहते हो कि उन्होंने मौत के वक़्त यहूदियत की वसीयत की थी?"

क्या तुम उनकी मौत के वक़्त उनके पास मौजूद थे। उनकी मौत के सैकड़ों साल बाद तो ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) की बेअ़सत हुई जिनके दीन को तुम यहूदियत कहते हो, फिर ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) की वफ़ात को भी सदियाँ गुज़र गईं।

अब तुम यह कह रहे हो कि याक़ूब (अ़लै०) ने यहूदियत की वसीयत की थी। तुम्हारे पास न दावा की कोई दलील (Evidense) है और न कोई गवाह (Witness)।

क़ुर्आन कहता है कि याक़ूब (अ़लै०) ने अपनी वफ़ात के वक़्त अपने बेटों से कहा, "ऐ मेरे बेटों! बेशक अल्लाह ने तुम्हारे लिए दीन इस्लाम पसन्द किया, इसके सिवा कोई दीन क़ुबूल नहीं तो तुम हरगिज़ न मरना, मगर ऐसी ह़ालत में कि तुम इस्लाम पर पूरी तरह़ क़ायम रहो यानी इस्लाम के अ़लावह और किसी ह़ालत पर जान मत देना।"

इससे भी साबित हुआ कि याक़ूब (अ़लै०) ने अपनी वफ़ात के वक़्त यहूदियत या नसरानियत (Christianity) की वसीयत नहीं की, बल्कि 'इस्लाम' पर क़ायम रहने और उसी पर मरने की वसीयत की और वह अस्ल दीन यही है जिसकी ओर आख़िरी नबी ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) क़ुर्आन के ज़रिये दअ़वत दे रहे हैं।

इस आयत से मालूम हुआ कि इन्तिक़ाल के वक़्त अपने लड़कों या छोटो को जो बात बहुत अहम हो उसकी नसीह़त व वसीयत करना पैग़म्बरों की सुन्नत है और यह भी साबित हुआ कि सबसे अहम चीज़ दीन है।

133 أَمْ كُنْتُمْ شُهَدَاءَ إِذْ حَضَرَ يَعْقُوبَ الْمَوْتُ إِذْ قَالَ لِبَنِيهِ مَا تَعْبُدُونَ مِنْ بَعْدِي قَالُوا نَعْبُدُ
إِلَٰهَكَ وَإِلَٰهَ آبَائِكَ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ وَإِسْحَاقَ إِلَٰهًا وَاحِدًا وَنَحْنُ لَهُ مُسْلِمُونَ ۝

मदीना के यहूद ने जो यह दावा किया था कि ह़ज़रत याक़ूब (अ़लै०) ने मरते वक़्त अपने बेटों को यहूदियत पर क़ायम रहने की वसीयत की थी, तो इसके जवाब में अल्लाह तआ़ला ने यहूदियों से यह फ़रमाया कि तुम को क्या मालूम, याक़ूब (अ़लै०) ने मरते वक़्त अपने औलाद को क्या वसीयत की थी? क्या तुम उनकी वफ़ात के वक़्त वहाँ मौजूद थे, इस का ज़िक्र न तो तौरेत में है और न कोई गवाह है

फिर तुम को यह कहाँ से ख़बर हुई कि याक़ूब (अ़लै०) ने इन्तिक़ाल के वक़्त अपने बेटों को यहूदियत पर क़ायम रहने की वसीयत की थी। फिर अल्लाह तआ़ला ने यही फ़रमाया कि बात यह थी कि याक़ूब (अ़लै०) ने जब अपने बेटों से पूछा, "तुम मेरे बाद किस की अ़िबादत करोगे?" तो बेटों ने जवाब दिया, "हम उस अल्लाह की अ़िबादत करेंगे जिसका कोई शरीक नहीं और जिसकी अ़िबादत ह़ज़रत इब्राहीम, ह़ज़रत इस्माईल व ह़ज़रत इस्ह़ाक़ (अ़लै०) करते आये हैं और हम उसी एक अल्लाह की अ़िबादत पर क़ायम रहेंगे।"

मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि ह़ज़रत याक़ूब (अ़लै०) को वसीयत करने की ज़रूरत पड़ी, इस सवाल व जवाब का सिल्सिला इसलिए शुरु हुआ कि उस ज़माने में ह़ज़रत याक़ूब (अ़लै०) मिस्र में थे और वहीं आप की वफ़ात हुई थी। मिस्र के बादशाह के अ़लावा आम मिस्री काफ़िर थे और बुत व सितारे बैल व बिल्ली आदि को पूजते थे तो ह़ज़रत याक़ूब (अ़लै०) को अपनी औलाद की ओर से ख़त्रा हुआ कि कहीं मिस्रियों के साथ रहने की वजह से यह भी अल्लाह के अ़लावा किसी और चीज़ की अ़िबादत न करने लगें। बेटों ने इसी ख़त्रा को समझ कर इत्मिनान दिलाया कि हम उस दीने ह़क़ पर क़ायम रहेंगे जिस पर कि हमारे बाप दादा क़ायम रहे।

134 تِلْكَ أُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ ۚ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُم مَّا كَسَبْتُمْ ۖ وَلَا تُسْأَلُونَ عَمَّا كَانُوا يَعْمَلُونَ ۝

नस्ली गर्व-

यहूदियों को इस बात पर बहुत गर्व था और अब भी है कि हम नबियों की औलाद हैं और उनके नस्ल में होने की वजह से हम अ़ज़ाब से बच जाएँगे। इस आयत में साफ़ फ़रमा दिया गया है कि उन्होंने जो कुछ किया वह उनके साथ है और तुम ने जो कुछ किया वह तुम्हारे साथ है। उनके आ़माल में से कोई हिस्सा तुम्हें नहीं मिलेगा। दूसरे के आ़माल की वजह से उम्मीद न लगाये बैठो, मतलब यह है कि अपना दीन व ईमान और नेक अ़मल अल्लाह के यहाँ काम आएगा जो मोमिन न होगा उसको मेरी रिश्तेदारी कोई फ़ायदा नहीं दे सकती। जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने अपनी रिश्तेदारी के बारे में ऐसा फ़रमा दिया तो दूसरों की क्या मजाल कि वह नसब की बुनियाद पर बख़्शे जाने की उम्मीद रखें।

मुस्लिम शरीफ़ में है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जिसका अ़मल देर लगाएगा उसका नसब जल्दी करके आगे नहीं बढ़ा देगा। **(मुस्लिम पेज नं० 345)**

इससे मालूम हुआ कि हर शख़्स के अपने आ़माल के सम्बन्ध में पूछा जाएगा।

135 وَقَالُوا كُونُوا هُودًا أَوْ نَصَارَىٰ تَهْتَدُوا ۗ قُلْ بَلْ مِلَّةَ إِبْرَاهِيمَ حَنِيفًا ۖ وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِينَ ۝

وَقَالُوا كُونُوا هُودًا أَوْ نَصَارَىٰ इब्ने अबी ह़ातिम ने सई़द या इ़करमा के वास्ते से ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि इब्ने सूरया ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से कहा, "ऐ मुह़म्मद (सल्ल०) हिदायत पर सिर्फ़ हमीं हैं, लिहाज़ा हमारी (अल् अ़याज़) इत्तिबअ़ करो तुम राहे रास्त पर आ जाओगे।" और

नसारा ने भी आप से यह कहा, "तब उन गुमराहों के सम्बन्ध में अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई कि यह लोग कहते हैं यहूदी या नसरानी हो जाओ हिदायत पा जाओगे।

यहूद के जवाब में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से कहा गया, "आप कह दीजिए कि हम तो यहूदी नसरानी कभी न होंगे, बल्कि मिल्लते इब्राहीमी यानी इस्लाम पर रहेंगे जिस में कमी का नाम नहीं और इब्राहीम (अ़लै०) मुशिरक भी न थे।" इसमें मुसलमानों को दो बातें फ़रमाई गई हैं एक तो यह कि यहूद और नसारा से साफ़ कह दिया जाए कि हरगिज़ हम तो कभी भी यहूदी या नसरानी न होंगे, बल्कि हम मिल्लते इब्राहीमी यानी ख़ालिस तौह़ीद (एकेश्वरवादी) पर क़ायम रहते हुए इस्लाम धर्म पर अ़मल करते रहेंगे।

दूसरी बात यह कही गई कि तुम्हारे दीन में शिर्क मिल गया और यहूदियत व नसरानियत शिर्क की ग़न्दगी से भर गई और मन्सूख़ भी हो गई। जैसे यहूद ह़ज़रत उज़ैर (अ़लै०) और नसारा ह़ज़रत मसीह़ (अ़लै०) को अल्लाह का बेटा कहते हैं जबकि शिर्क को हर नबी ने गुमराही बताया और इस वक़्त ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) तौह़ीद पर क़ायम हैं, इसलिए इसे मिल्लते इब्राहीमी कहा गया।

नबी करीम (सल्ल०) की नुबूव्वत से पहले अक्सर लोग शिर्क में मुब्तिला थे कुछ लोग ही तौह़ीद के मानने वाले थे। जैसे ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा से रिवायत है कि नुज़ूले वह़्य से पहले का ज़माना था कि वादी-ए-बल्दख़ में नीचे की ओर नबी (सल्ल०) की ज़ैद बिन उ़मर बिन नुफ़ैल से मुलाक़ात हुई। वहाँ आप को खाना पेश किया गया तो आप ने इस में शरीक होने से इन्कार कर दिया फिर ज़ैद ने कहा, "मैं ऐसी कोई चीज़ नहीं खाता जो तुम अपने मूर्तियों वग़ैरह के थान पर ज़ब्ह़ करते हो......." अ़लावा इस के कि ज़ैद बिन अ़म्र क़ुरैश को कहा करते थे, "अल्लाह ही तो है जिस ने जानवर को पैदा किया और उस के लिए आसमान से पानी उतारा और ज़मीन से चारा उगाया तो फिर तुम उस को अल्लाह के सिवा किसी और के नाम पर क्यों ज़ब्ह़ करते हो?

(सह़ीह़ बुख़ारी, मनाक़िबिल्अन्सार, बाब 24, ह़दीस 3826)

136 قُوْلُوْٓا اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْنَا وَمَآ اُنْزِلَ اِلٰٓى اِبْرٰهٖمَ وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ وَالْاَسْبَاطِ وَمَآ اُوْتِيَ مُوْسٰى وَعِيْسٰى وَمَآ اُوْتِيَ النَّبِيُّوْنَ مِنْ رَّبِّهِمْ ۚ لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ ۡ وَنَحْنُ لَهٗ مُسْلِمُوْنَ ۝

इस आयत में मिल्लते इब्राहीमी की तफ़सील बयान की गई है और अहले इस्लाम को यह तअ़लीम दी गई कि तुम यहूद व नसारा से कह दो कि हम ने अल्लाह को मान लिया है, वही सारी मख़्लूक़ का ख़ालिक़ व मालिक है। वह अपनी ज़ात व सिफ़ात में अकेला है न उसका कोई शरीक न साझी है न उसका कोई औलाद या बेटा, वही नफ़ा नुक़सान का मालिक है, वही ह़िसाब किताब लेने वाला है और वही बदला देने वाला है। हम ने दिल से क़ुर्आन और उन तमाम अहकाम को जो रसूलुल्लाह (सल्ल०) के ज़रिये भेजे गये, उन्हें सच्चा मान लिया और हमारा उन सह़ीफ़ों पर भी यक़ीन है जो ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) पर नाज़िल किये गये और उस पर भी जो ह़ज़रत इस्माईल (अ़लै०), ह़ज़रत इस्ह़ाक़ (अ़लै०) और ह़ज़रत

याकूब (अ़लै०) और तमाम नबियों पर नाज़िल किया। फ़रमाया हमारा उन सब पर ईमान (यक़ीन) है और ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) को जो तौरेत व इन्जील अ़ता की गई थी हम उस पर भी ईमान रखते हैं। यह किताबें आसमानी थीं और अल्लाह तआ़ला ने इनको इन्सानों की हिदायत के लिए उतारा था और यह सब पैग़म्बर, ह़क़ पर थे और केवल उन्हीं को नहीं बल्कि तमाम अल्लाह के पैग़म्बरों को हम ह़क़ जानते हैं और जो कुछ उनको दिया गया उनको भी ह़क़ मानते हैं, चाहे उनके नाम और ह़ाल हमको मालूम हों या न हों, लेकिन हम सब पर ईमान रखते हैं कि यह सब अल्लाह के पैग़म्बर थे और हम किसी पैग़म्बर या आसमानी किताब को नहीं झुठलाते। सब अपने-अपने ज़माने में ह़क़ पर थे और उनकी शरीअ़त पर उस ज़माने में अ़मल करना ज़रूरी था और हमारा मक़्सद तो अल्लाह तआ़ला की फ़रमाँबरदारी है। उसने जिस ज़माने में जिसको चाहा पैग़म्बर बनाकर भेजा और जैसा चाहा हुक्म दिया और आख़िर में हमको ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के ज़रिये शरीअ़त दी तो उसको हमने दिल से अपना लिया।

अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को इस आयत में तअ़लीम दी है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) पर जो किताब नाज़िल हुई उस पर तफ़्सील से ईमान लाएँ और पिछले नबियों पर जो किताबें नाज़िल हुईं थीं उन पर ईमान रखें और बिना किसी भेद-भाव के सब पर ईमान रखें। यहूद और नसारा की तरह़ न करे कि किसी पर ईमान का दावा करें और किसी का इन्कार करें।

ह़ज़रत इमाम बुख़ारी (रह़०) ने ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि अहले किताब तौरेत तबरानी ज़बान में पढ़ते थे और उसकी तफ़्सीर अ़रबी ज़बान में मुसलमानों को बताते थे तो आप (सल्ल०) ने बताया कि अहले किताब की न तस्दीक़ करो और न तक्ज़ीब (झुठलाओ) और न उनसे कहो कि हम तो अल्लाह पर और उसकी किताब पर ईमान ले आये हैं जो हम पर उतरी है, फिर आपने पूरी आयत पढ़ी।

1- इस आयत में वह तमाम चीज़ें समेट दी गई हैं जिन पर ईमान लाना वाजिब है, ईमान का शब्द बोला जाएगा तो अरकाने इस्लाम (इस्लाम के स्तम्भ) और आ़माले सालिह़ा सभी दाख़िल होंगे। इसी तरह़ जब केवल इस्लाम का शब्द बोला जाएगा तो उसमें ईमान दाख़िल होगा और जब दोनों एक साथ बोले जाएँगे तो ईमान दिल के इक़रार व तस्दीक़ (पुष्टि) का नाम होगा और इस्लाम ज़ाहिरी आ़माल का।

2- قُولُوٓا اٰمَنَّا अर्थात ज़बान से कहो हम ईमान ले आये, जबकि दिल उसकी तस्दीक़ कर रहा हो इसलिए कि उसके बिना सवाब व जज़ा का तसव्वुर नहीं किया जा सकता। इसी तरह़ अगर दिल के एतिक़ाद की ताईद अ़मल से नहीं होती तो वह भी बेअसर और बेफ़ायदा है। आमन्ना जमा (बहुवचन) है इसमें इशारा है इस बात की ओर कि उम्मते इस्लामिया के तमाम लोगों की ज़िम्मेदारी है कि अल्लाह की रस्सी को मज़बूती के साथ थामे रहें।

3- اٰمَنَّا بِاللّٰهِ यानी हम ईमान लाए उस अल्लाह पर, जो अकेला हर सिफ़ात के साथ है। हर नफ़्स व ऐ़ब से पाक है वही अकेला अ़िबादत का ह़क़दार है और उसका कोई शरीक नहीं। क़ुर्आन व सुन्नत

पर ईमान लाने का मतलब यह है कि मुसलमान इन दोनों में मौजूद तमाम नबियों की सिफ़ात, क़ियामत का दिन, ग़ैबी बातें और अह्कामें शरीअ़त पर ईमान रखें।

4- وَمَا أُنْزِلَ إِلَىٰ إِبْرَاهِيمَ इसका मतलब यह है कि तमाम आसमानी किताबों और तमाम नबियों पर ईमान लाना ज़रूरी है जिसकी यह दलील है।

ख़ुलासा यह है कि इन आयतों में 'दीने इस्लाम' का ह़क़ होना साबित करते हुए 'यहूद व नसारा' को दअ़वत दी गई है।

137 فَإِنْ آمَنُوا بِمِثْلِ مَا آمَنْتُمْ بِهِ فَقَدِ اهْتَدَوْا ۖ وَإِنْ تَوَلَّوْا فَإِنَّمَا هُمْ فِي شِقَاقٍ ۖ فَسَيَكْفِيكَهُمُ اللَّهُ ۚ وَهُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ

इन आयतों में बताया गया है कि ऐ मुसलमानों! अगर अहले किताब यानी यहूद उसी तरह़ ईमान ले आएँ जिस तरह़ तुम लोग ईमान लाए हो और जिसका ज़िक्र अभी हो चुका, तो वह लोग सीधी राह पर आ जाएँगे और अगर उन्होंने केवल आपकी मुख़ालिफ़त और दुश्मनी में आकर ह़क़ को न क़ुबूल किया तो अल्लाह अपने रसूल से वादा करता है कि वह अपने शर (बुराई) को आपसे दूर रखेगा।

अतः ऐसा ही हुआ कि कुछ क़त्ल कर दिये गये, कुछ क़ैद किये गये और कुछ जिलावतन किये गये और सब इधर-उधर हो गये और यह क़ुर्आन के मोअ़जिज़ात में से एक मोअ़जिज़ा है जैसा कि क़ुर्आन ने ख़बर दी थी।

बुख़ारी शरीफ़ में ह़ज़रत अबू सईद ख़ुद्री (रज़ि०) से रिवायत है कि 'बनू क़ुरैज़ा' ने जब ह़ज़रत सअ़द बिन मआ़ज़ (रज़ि०) को हकम (जज) तस्लीम कर लिया तो रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने उनको बुला भेजा, वह एक गधे पर आये। जब मस्जिद के क़रीब हुए तो रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने अन्सार से कहा, "तुम लोग अपने सरदार के लिए खड़े हो जाओ।" फिर उनको बताया कि 'बनू क़ुरैज़ा' वालों ने तुम्हें ह़कम (जज) मान लिया है तो उन्होंने फ़रमाया, "आप उनके जंग करने वालों को क़त्ल कर दें और उनकी औलाद को क़ैदी बना लें।" आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तुमने अल्लाह के फ़ैसले के अनुसार फ़ैसला किया।"

बुख़ारी शरीफ़ में दूसरी रिवायत इब्ने उ़मर (रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा) से है कि 'बनू नज़ीर' और 'बनी क़ुरैज़ा' ने मुसलमानों से जंग की तो बनू नज़ीर जिला वतन कर दिये गये और 'बनू क़ुरैज़ा' पर एह़सान करके छोड़ दिया गया, लेकिन 'बनू क़ुरैज़ा' ने फिर मुसलमानों के साथ जंग की तो उनके मर्दों को क़त्ल कर दिया गया और औ़रतों, बच्चों और उनकी ज़ायदादों को मुसलमानों में बाँट दिया गया।

सिवाय उन लोगों के जो पहले ही आकर रसूलुल्लाह (सल्ल०) से मिल गये थे। आप ने उनको अम्न दे दिया तो वह लोग मुसलमान हो गये। उसके बाद तमाम मदीना के यहूदियों को अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने जिलावतन कर दिया और मदीना को उनसे पाक कर दिया।

इस तरह़ यहूद (बनू नज़ीर) जिला वतन हुए और 'जिज़्या' देना क़ुबूल किया जबकि 'बनू क़ुरैज़ा' क़त्ल हुए। रिवायात के अनुसार ह़ज़रत उ़स्मान (रज़ि०) की शहादत के वक़्त आप क़ुर्आन की तिलावत

फ़रमा रहे थे और क़ुर्आन आप के सामने था। आप के ख़ून की छींटें فَسَيَكْفِيكَهُمُ اللّٰهُ के शब्द पर गिरीं, यह क़ुर्आन आज भी तुर्की में महफ़ूज़ है।

138 صِبْغَةَ اللّٰهِ ۚ وَمَنْ أَحْسَنُ مِنَ اللّٰهِ صِبْغَةً ۖ وَنَحْنُ لَهُ عٰبِدُوْنَ ۝

इस आयत में कहा जा रहा है कि ऐ मुसलमानों! तुम यहूद और नसारा से कह दो कि हमने अल्लाह का रंग क़ुबूल कर लिया यानी इस दीन इस्लाम के रंग में रंग गये हैं और अल्लाह के रंग से किसका रंग बेहतर है और हम उसी की बन्दगी और अ़िबादत अपनाये हुए हैं।

ईसाई बनाने का तरीक़ा-

नसारा के यहाँ यह दस्तूर था और अब भी है कि जब वह किसी को ईसाई बनाते हैं या उनके यहाँ कोई बच्चा पैदा होता है तो उस पर रंगीन पानी छिड़कते हैं या रंगदार पानी में बिठाते हैं, जिसको अब भी ईसाईयों के यहाँ 'बपतिस्मा' की रस्म कहा जाता है और ईसाई इस काम को निजात (Salvation) का ज़रिया मानते हैं। यानी उनके नज़्दीक ईसाइयत का रंग ज़ाहिरी रंगीन पानी से चढ़ता है। इसी तरह़ यह अपने बच्चों को एक ख़ास उ़मर में पहुँचने के बाद यहूदियत या नस्रानियत की तल्क़ीन करते हैं और कहते हैं कि हमने इस पर अपने मज़हब का रंग चढ़ा दिया है।

ईसाइयों ने इसके लिए एक पानी ईजाद किया था जिसमें वह अपने बच्चों को और हर उस व्यक्ति को जो उनके मज़हब में दाख़िल होना चाहता था ग़ुस्ल देते थे जिसे अ़रबी में 'सिब्ग़ह' और उर्दू में 'बपतिस्मा' कहते हैं।

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने क़ुर्आन के नाज़िल होने के ज़माने के यहूदियों और ईसाईयों को जवाब देते हुए कहा है कि तुम्हारा यह अ़मल कोई माना नहीं रखता और अल्लाह के यहाँ इसकी कोई ह़ैसियत नहीं कि ज़ाहिरी रंग से क्या दिल रंगीन हो सकता है यह पानी गर्म तो धुलकर ख़त्म हो जाता है जिसका बाद में कोई असर नहीं रहता है।

असली रंग तो अल्लाह का रंग है और वह कलिमा का रंग है जिसको अल्लाह का रंग कहना चाहिए जो इन्सान के दिल और रुह़ को रंगीन कर देगा। अल्लाह के इस पाक रंग से अच्छा और किसका रंग हो सकता है और यह रंग असली है जो निजात दिलाने वाला है न कि ज़ाहिरी रंगीन पानी में ग़ुस्ल देने से निजात हो सकती है। इसलिए अपने और अपने बच्चों को इस्लाम कें रंग में रंगे और उसको अपनी ज़िन्दग़ी में जारी करे क्योंकि जिस तरह़ रंग कपड़े के हर ह़िस्से में हो जाता है उसी तरह़ इस्लाम अपने मानने वाले की ह़ालत को बिल्कुल बदल देता है।

इस आयत में इस तरफ़ भी इशारा है कि जिस तरह रंग आँखों से मह़सूस होता है, मोमिन के दीन व ईमान की अ़लामत उसके चेहरे लिबास अ़मल और तमाम ह़रकात व मामलात व आदात से भी ज़ाहिर होना चाहिए क्योंकि मुसलमानों का अन्दुरून (Insight) दीन व ईमान के फ़िक्री रंग से रंगीन होता

है जिसकी वजह से फ़रमाँबरदारी और तौहीद का असर मुसलमानों के रंग व रेशे में पहुँच जाता है।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह का नाम बच्चा के पैदा होते ही उसके कान में पहुँचा दिया करो।" इसलिए कि पैदा होते ही नहला धुला कर बच्चा के दाहिने कान में अज़ान और बाएँ कान में इकामत कही जाती है अर्थात उस बच्चा को दुनिया में आते ही दीन-ए-फ़ितूरत (फ़ितूरी दीन इस्लाम) की तरफ़ बुलावा है और अिबादत का मतलब यही है कि अल्लाह के हुक्म की फ़रमाँबरदारी का नाम अिबादत है चाहे वह अिबादत नमाज़, रोज़ः, हज, ज़कात से हो या हुकूकुल् अिबाद (बन्दों के हक़) मामलात, तिजारत या हुकूमत व सल्तनत से हो। हर काम को दीन के रंग में ज़ाहिर और बातिन (अन्दुरून) में रंग दे।

आयत नं 139 से 141 तक

قُلْ أَتُحَاجُّونَنَا فِي اللَّهِ وَهُوَ رَبُّنَا وَرَبُّكُمْ وَلَنَا أَعْمَالُنَا وَلَكُمْ أَعْمَالُكُمْ وَنَحْنُ لَهُ مُخْلِصُونَ ۝ أَمْ تَقُولُونَ إِنَّ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ
وَإِسْحَاقَ وَيَعْقُوبَ وَالْأَسْبَاطَ كَانُوا هُودًا أَوْ نَصَارَىٰ قُلْ أَأَنْتُمْ أَعْلَمُ أَمِ اللَّهُ وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنْ كَتَمَ شَهَادَةً عِنْدَهُ مِنَ اللَّهِ وَمَا
اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ۝ تِلْكَ أُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُمْ مَا كَسَبْتُمْ وَلَا تُسْأَلُونَ عَمَّا كَانُوا يَعْمَلُونَ ۝

अनुवाद-

(139) कह दीजिए, ''क्या तुम हमसे अल्लाह के बारे में हुज्जत (कुतर्क) करते हो? हालाँकि 'वही' हमारा रब है, और तुम्हारा भी रब है; और हमारे काम हमारे लिये हैं, और तुम्हारे काम तुम्हारे लिये, और हम तो ख़ास उसी की अ़िबादत करने वाले हैं। (140) क्या तुम्हारा (यह) दावा है कि इब्राहीम और इस्माईल और इस्हाक़ और याक़ूब और उनकी औलाद यहूदी थे, या ईसाई थे?'' (ऐ पैग़म्बर! इनसे) कह दीजिए, ''क्या तुम ज़्यादा जानने वाले हो, या अल्लाह? और उससे बढ़कर ज़ालिम कौन होगा? जो उस गवाही को छिपाये जो उसके पास अल्लाह की ओर से है; और तुम्हारे करतूतों से अल्लाह बेख़बर नहीं।'' (141) वह एक गिरोह था जो गुज़र गया उन लोगों ने जो कुछ कमाया वह उनके लिए है, और तुमने जो कुछ कमाया वह तुम्हारे लिए है, उन के आ़माल के बारे में तुम से नहीं पूछा जाएगा।

आयत नं० 139 से 141 तक की व्याख्या

139 قُلْ أَتُحَاجُّونَنَا فِي اللَّهِ وَهُوَ رَبُّنَا وَرَبُّكُمْ وَلَنَا أَعْمَالُنَا وَلَكُمْ أَعْمَالُكُمْ وَنَحْنُ لَهُ مُخْلِصُونَ ۝

इन आयतों में फ़रमाया जा रहा है कि ऐ मुहम्मद (सल्ल०)! आप इन यहूद और नसारा से फ़रमा दीजिए क्या तुम लोग अब भी हम से हुज्जत कर रहे हो अल्लाह तआ़ला के मामले में कि वह हमको आख़िरत में न बख़्शेगा, जबकि वह हमारा तुम्हारा सब का रब है। इसलिए हमको हमारा किया हुआ मिलेगा और तुमको तुम्हारा किया हुआ मिलेगा।

इसमें अल्लाह तआ़ला ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से फ़रमाया, "आप फ़रमा दीजिए कि तुम कैसे लोग हो जो अल्लाह की तौहीद व इख़्लास व उसके हुक्मों पर अ़मल करने पर मुझसे झगड़ते हो जबकि वह हमारा और तुम्हारा रब है।" उसके बाद अल्लाह ने आप (सल्ल०) को तअ़लीम दी कि आप इनसे बरी होने का एलान कर दें और कह दें, "अगर तुम शिर्क पर जमे रहे तो हम एक दूसरे से बरी हैं और हम तो अपनी अ़िबादत अल्लाह ही के लिए ख़ास करते हैं।"

इस में इख़्लास की अहमियत स्पष्ट की गई है यानी हर काम सिर्फ़ अल्लाह की रज़ा के लिए करना, ऐसा ही अ़मल निजात का ज़रिया है। रसूलुल्लाह (सल्ल०) रात को इतनी लम्बी नमाज़ पढ़ते कि पांव मुबारक पर वरम आ जाता। जब आप से अ़र्ज़ किया जाता, "इतनी मशक़्क़त क्यों उठाते हैं?" तो फ़रमाते "क्या मैं (अल्लाह का) शुक्रगुज़ार बन्दा न बनूँ! **(सहीह़ बुख़ारी, अल् रिफ़ाक़, बाब 20, ह़दीस 6471)**

रसूल-ए-अकरम (सल्ल०) ने फ़रमाया, “नेक काम सहीह़ अन्दाज़ में इख़्लास के साथ करते रहो और ह़द से न बढ़ो, बल्कि दर्मियान में रहो और ख़ुश रहो (अल्लाह की रह़मत से मायूस मत हो) क्योंकि मह़ज़ अच्छे आ़माल किसी को जन्नत में नहीं ले जाएँगे।” आप से पूछा गया, “क्या आप भी” (अ़मल की बुनियाद पर जन्नत में तशरीफ़ नहीं ले जाएँगे।”) आप ने फ़रमाया “हाँ! मैं भी, मगर यह कि मुझे भी अल्लाह तआ़ला अपनी बख़्शिश और रह़मत से ढ़ांप लें।” **(सह़ीह़ बुख़ारी, बाब 18, ह़दीस, 6467)**

नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया, “अगर मेरे पास उह़द पहाड़ के बराबर भी सोना हो तो मैं उस पर ख़ुश होंगा कि लगातार तीन रातें गुज़ारने से पहले उस में एक ज़र्रह बराबर भी मेरे क़ब्ज़े में न रहे, हाँ किसी का क़र्ज़ अदा करने के लिए कुछ रख लूँ तो यह और बात है।”

(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् रिफ़ाक़ः बाबः 14 ह़दीस 6445)

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, “तुम में से कोई ऐसा है जिस को अपने वारिस का माल ख़ुद अपने माल से ज़्यादह मह़बूब हो?” मुख़ातिबीन ने अ़र्ज़ किया, “ऐ अल्लाह के रसूल! ऐसा तो हम में कोई नहीं, सब को अपना ही माल ज़्यादा प्यारा है”। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, “(तो फिर यह जान लो कि) आदमी का माल वही है जो उस ने आगे रवाना कर दिया और जो यहाँ छोड़ गया वह उस के वारिसों का है।” **(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् रिफ़ाक़, बाबः 12 ह़दीसः 6442)**

रसूल-ए-करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया, “एक (प्यासा) कुत्ता किसी कुएँ के गिर्द चक्कर काट रहा था और क़रीब था कि प्यास से दम निकल जाए इतने में बनी इस्राईल की एक फ़ाहि़शा (बदचलन) औ़रत की उस पर नज़र पड़ गई, उस ने अपना जूता उतारा और (उस में पानी भरकर) कुत्ते को पिला दिया। अल्लाह ने उसी वजह से उस की मग़्फ़िरत कर दी।” **(सह़ीह़ बुख़ारी, अह़ादीसुल् अम्बिया, बाब 54, ह़दीस 3467)**

140 أَمْ تَقُولُونَ إِنَّ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ وَإِسْحَاقَ وَيَعْقُوبَ وَالْأَسْبَاطَ كَانُوا هُودًا أَوْ نَصَارَىٰ ۗ قُلْ أَأَنْتُمْ أَعْلَمُ أَمِ اللَّهُ ۗ وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنْ كَتَمَ شَهَادَةً عِنْدَهُ مِنَ اللَّهِ ۗ وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ۝

इस आयत में बताया गया है कि यहूद और नसारा दावा करते थे कि इब्राहीम और दूसरे नबी जिनका इस आयत में ज़िक्र आया है यहूदी या नसरानी थे। अल्लाह ने उनका जवाब दिया कि तुम ज़्यादा जानते हो या अल्लाह। उसके बाद अल्लाह ने ख़बर दी कि वह लोग यहूद और नसारा नहीं थे। अल्लाह ने दूसरी जगह इब्राहीम (अ़लै०) के बारे में फ़रमाया ‘मा काना इब्राहीम........मुश्रिकीन’ कि इब्राहीम यहूदी व नसरानी नहीं थे, बल्कि वह मुआ़हिद व (एकेश्ववादी) मुसलमान थे और मुश्रिकों में नहीं थे।

وَإِذْ قَالَ مُوسَىٰ لِقَوْمِهِ إِنَّ اللَّهَ يَأْمُرُكُمْ أَنْ تَذْبَحُوا بَقَرَةً ۖ قَالُوا أَتَتَّخِذُنَا هُزُوًا ۖ قَالَ أَعُوذُ بِاللَّهِ أَنْ أَكُونَ مِنَ الْجَاهِلِينَ ۝

(सूरः आले इमरान-67)

आगे फ़रमाया गया कि ऐसे शख़्स से ज़्यादा ज़ालिम कौन होगा! जो ऐसी शहादत (निशानियों) को छुपाए जो उसके पास अल्लाह की ओर से पहुँची हो और ऐ अहले किताब! अल्लाह तआ़ला तुम्हारे किये हुए से काफ़ी नहीं अर्थात जब तौरेत व इन्जील में भी आख़िरी नबी की बशारतें (भविष्यवाणी) की जा चुकी हैं तो ऐसे व्यक्ति से बढ़कर कौन ज़ालिम हो सकता है जो ऐसी शहादत को छुपा ले और उसको

ज़ाहिर न करे और ख़ासतौर से ऐसे नबी के सम्बन्ध में जिसकी बात मानने में कामियाबी हो इसलिए तौरेत और इन्जील में तब्दीली करने से अल्लाह बेख़बर नहीं।

141 تِلْكَ أُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ ۚ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُم مَّا كَسَبْتُمْ ۖ وَلَا تُسْأَلُونَ عَمَّا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٤١﴾

इस आयत की तफ़्सीर आयत नं० 134 में गुज़र चुकी है यहाँ दोबारा ज़िक्र किया गया है कि इन्सान का अपना ही अ़मल उसके काम आएगा। केवल नबी व रसूल की तरफ़ निस्बत क़ियामत के दिन कुछ काम न आएगी इसलिए पिछले लोगों के बारे में बातें न बताओ तुमसे उनके बारे में नहीं पूछा जाएगा तुमसे तो तुम्हारे आ़माल के बारे में पूछा जाएगा, तुमसे सवाल किया जाएगा कि आख़िरी नबी ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) पर ईमान लाए थे कि नहीं, उनकी शरीअ़त पर अ़मल किया था या नहीं।

“अल्ह़म्दुलिल्लाह” यहाँ पहले पारे अलिफ़-लाम्-मीम का बयान पूरा हुआ और यहाँ तक सूरः बकरः की १४१ आयत तक की तफ़्सीर पूरी हुई। यहाँ तक मिल्लते इब्राहीमी की फ़ज़ीलत और मिल्लते इस्लाम का अफ़्ज़ल होना और ह़ज़रत मुह़म्मद रसूलुल्लाह (सल्ल०) का अफ़्ज़ल रसूल होना और आप पर और आप की किताब पर ईमान लाना ज़रूरी और निजात का ज़रिया होना बयान हुआ है।

अल्लाह तआ़ला क़ुबूल फ़रमा कर अ़मल की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

(खण्ड-2)
आयत नं० 142 से 147 तक

* سيقول السفهاء من الناس ما ولىهم عن قبلتهم التي كانوا عليها ۚ قل لله المشرق والمغرب ۚ يهدي من يشاء
الى صراط مستقيم ۝ وكذلك جعلنكم امة وسطا لتكونوا شهداء على الناس ويكون الرسول عليكم شهيدا ۗ وما جعلنا
القبلة التي كنت عليها الا لنعلم من يتبع الرسول ممن ينقلب على عقبيه ۚ وان كانت لكبيرة الا على الذين هدى الله ۗ
وما كان الله ليضيع ايمانكم ۚ ان الله بالناس لرءوف رحيم ۝ قد نرى تقلب وجهك في السماء ۖ فلنولينك قبلة ترضىها ۪
فول وجهك شطر المسجد الحرام ۚ وحيث ما كنتم فولوا وجوهكم شطره ۗ وان الذين اوتوا الكتب ليعلمون انه الحق
من ربهم ۗ وما الله بغافل عما يعملون ۝ ولئن اتيت الذين اوتوا الكتب بكل اية ما تبعوا قبلتك ۚ وما انت بتابع قبلتهم ۚ
وما بعضهم بتابع قبلة بعض ۚ ولئن اتبعت اهواءهم من بعد ما جاءك من العلم ۙ انك اذا لمن الظلمين ۝ الذين اتينهم
الكتب يعرفونه كما يعرفون ابناءهم ۖ وان فريقا منهم ليكتمون الحق وهم يعلمون ۝ الحق من ربك فلا تكونن
من الممترين ۝

अनुवाद-

(142) मूर्ख लोग कहेंगे,''यह (मुसलमान) जिस क़िब्ले पर (पहले) थे (यानी बैतुलमुक़द्दस) उससे (कअ़बे की ओर को) मुड़ जाने की क्या वजह है?'' कह दीजिए, ''पूरब और पश्चिम (सब) अल्लाह ही का है, 'वह' जिसको चाहता है सीधी राह दिखाता है।'' (143) और इसी तरह 'हमने' तुमको एक दर्मियानी उम्मत बनाया, ताकि लोगों पर तुम गवाह बनो, और रसूल तुम पर गवाह बनें, और (ऐ रसूल!) जिस क़िब्ले पर तुम थे 'हमने' उसको इसी मक़सद से ठहराया था ताकि 'हमको' मालूम हो जाए, कि कौन रसूल के अधीन रहेगा और कौन उल्टे पाँव फिरेगा; और यह बात भले ही भारी हो लेकिन उन पर नहीं, जिनको अल्लाह ने हिदायत (राह) दी है, और अल्लाह ऐसा नहीं, कि तुम्हारा ईमान अकारथ कर दे, अल्लाह तो लोगों पर बड़ा रह़म करने वाला, मेहरबान है। (144) 'हमने' देख लिया आपके चेहरे का बार-बार आसमान की ओर उठना, सो ज़रूर 'हम' आप को फेर देंगे उस क़िब्ले की ओर, जिसे आप पसंद करते हैं; अच्छा अब कर लीजिए अपना चेहरा मस्जिदे-ह़राम की ओर; और आप जहाँ कहीं भी हों, अपने चेहरे कर लिया करें उसी की ओर, और जिन लोगों को किताब दी जा चुकी है वह खूब जानते हैं कि उनके 'रब' की ओर से ह़क़ है, और अल्लाह बेख़बर नहीं उन लोगों के कर्तूतों से। (145) और अगर आप उन लोगों के सामने, जिन्हें किताब दी जा चुकी है, तमाम दलीलें ले आएँ तब भी वे आपके क़िब्ले की पैरवी न करेंगे, और न आप उनके क़िब्ले की पैरवी करने वाले हैं, और न वे आपस में एक-दूसरे के क़िब्ले को मानने वाले हैं, और अगर (कहीं) आप उन के इच्छा की पैरवी करने लगे, बाद इसके कि आपके पास इल्म आ चुका है, तो आप ज़ालिमों में हो जाएँगे। (146) जिन लोगों को 'हम' किताब दे चुके हैं, वे आपको (ऐ मुह़म्मद) पहचानते हैं, जिस तरह अपनी औलादों को पहचानते हैं; इस बात को भी पहचानते हैं, (कि मुह़म्मद (सल्ल० अल्लाह के रसूल हैं)

और उनमें से एक गिरोह जानते बूझते हक़ को छिपाता है। (147) यह आप के रब की ओर से हक़ है, आप हरगिज़ सन्देह करने वालों में से न होइएगा।

आयत नं० 142 से 147 तक की व्याख्या

142 سَيَقُولُ السُّفَهَآءُ مِنَ النَّاسِ مَا وَلّٰهُمْ عَنْ قِبْلَتِهِمُ الَّتِىْ كَانُوْا عَلَيْهَا ۚ قُلْ لِّلّٰهِ الْمَشْرِقُ وَالْمَغْرِبُ ۚ يَهْدِىْ مَنْ يَّشَآءُ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ﴿١٤٢﴾ *

سَيَقُولُ السُّفَهَآءُ इब्ने इस्हाक़, 'इस्माईल बिन अबी ख़ालिद' और 'अबू इस्हाक़' के वास्ते से हज़रत बरा (रज़ि०) से नक़्ल करते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) बैतुल् मक़्दिस की तरफ़ नमाज़ पढ़ते थे और हुक्म इलाही के इन्तिज़ार में आसमान की तरफ़ बहुत देखते थे, चुनांचे अल्लाह तआला ने हुक्म नाज़िल फ़रमा दिया, कि हम आप के मुँह का बार-बार आसमान की तरफ़ उठना देख रहे हैं, इसलिए हम आप को उसी क़िब्ला की तरफ़ मुतवज्जेह कर देंगे जिस के लिए आप की मर्ज़ी है, फिर अपना चेहरा मस्जिदे हराम की तरफ़ किया कीजिए। इस के बाद मुसलमानों में से कुछ हज़रात बोले कि जो हज़रात हम से तह़वीले क़िब्ला (क़िब्ला की तब्दीली) से पहले इन्तिक़ाल कर गये हैं काश हमें उन के मुतअ़ल्लिक़ उन की हालत का इल्म हो जाता और हम ने बैतुल् मक़्दिस की तरफ़ जो नमाज़ें पढ़ीं हैं उन का क्या हुक्म है? इस पर अल्लाह तआला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई।

وَمَا كَانَ اللّٰهُ कि अल्लाह तआला ऐसे नहीं कि तुम्हारे ईमान को ज़ाया कर दें और लोगों में से बेवक़ूफ़ कहेंगे कि जिस क़िब्ला पर यह थे उस क़िब्ला से उन्हें किस चीज़ ने तब्दील कर दिया, अल्लाह तआला ने इसी के बारे में आयते करीमा नाज़िल फ़रमा दी سَيَقُولُ السُّفَهَآءُ इसी तरह चन्द और तुर्कों (लाइनों) से यह रिवायत मरवी है।

क़िब्ला की तब्दीली-

इस आयत में मुख़ालिफ़ीन के एतिराज़ का जवाब दिया गया है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) जब तक मक्का में रहे और मक्की ज़िन्दगी में जब नमाज़ फ़र्ज़ हुई तो हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को यह हुक्म दिया गया कि नमाज़ पढ़ते वक़्त अपना चेहरा बैतुल् मक़्दिस में मौजूद सफ़रा (चट्टान) की ओर करें। अतः आप (सल्ल०) रुक्ने यमानी और ह़ज्रे अस्वद के दर्मियान कअ़बः शरीफ़ को अपने सामने करके सफ़रा की ओर रुख़ करके नमाज़ पढ़ते रहे, लेकिन हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की दिली ख़्वाहिश यही थी कि आप का क़िब्ला फिर वही हज़रत आदम (अ़लै०) और हज़रत इब्राहीम (अ़लै०) का क़िब्ला हो जाए और आप को उम्मीद भी यही थी।

मदीना की हिजरत के बाद दोनों की ओर रुख़ करके नमाज़ पढ़ने का हुक्म दिया गया और आप (सल्ल०) 16 या 17 माह इसी तरह नमाज़ पढ़ते रहे। फिर यह हुक्म आ गया कि कअ़बः की ओर रुख़

कीजिए तो आप (सल्ल०) ने लोगों के सामने ख़ुत्बः दिया और उन्हें इस बात की ख़बर दी।

क़िब्ला की तब्दीली के बाद आप (सल्ल०) ने पहली नमाज़ (नमाज़े अ़स्र) कअ़बः की ओर रुख़ करके पढ़ी। जैसा कि बरा बिन आ़ज़िब (रज़ि०) की रिवायत से पता चलता है जिसे शेख़ैन (इमाम बुख़ारी व मुस्लिम) ने रिवायत किया।

'क़ुबा' वालों को इसकी ख़बर दूसरे दिन फ़ज्र की नमाज़ में हुई, जैसा कि इब्ने उ़मर (रज़ि०) की रिवायत है जिसे शेख़ैन ने रिवायत किया है, लोगों ने नमाज़ की ह़ालत में ही अपना रुख़ मुल्के शाम से कअ़बः की ओर फेर लिया।

इस पर यहूद मुश्रिकीन और मुनाफ़िक़ीन तरह-तरह के एतिराज़ करने लगे और कहने लगे कि अल्लाह अपने एह़काम को क्यों बदलता है क्या उसको पहले से इ़ल्म नहीं था कुछ लोग कहने लगे आप अपने दीन के बारे में शक में हैं कि इनका क़िब्ला भी बदलता रहता है।

कुछ लोगों ने कहा कि बैतुल् मक़्दिस से बैतुल्लाह का रुख़ किया है इसलिए कि इन्हें अपने देश की याद ने सताया है।

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया है कि जल्द ही क़िब्ला की तब्दीली का हुक्म आपको मिलेगा तो उस वक़्त बेवक़ूफ़ लोग इस बात पर एतिराज़ करेंगे कि यह मुसलमान बैतुल् मक़्दिस की ओर से क्यों फिर गये तो गोया यह आयत क़िब्ला की तब्दीली के हुक्म के नाज़िल होने से पहले नाज़िल हुई और अल्लाह तआ़ला ने यहूद के एतिराज़ करने से पहले ही से आप (सल्ल०) को ख़बर दे दी और उसका जवाब भी बता दिया कि आप फ़रमा दीजिए कि सब दिशाएँ चाहे मश्रिक़ (East) हो या मग़्रिब (West) अल्लाह ही की मिल्क है जिसको अल्लाह चाहे सीधा रास्ता बतला दे वह जिस दिशा को चाहे क़िब्ला बना दे और जिस दिशा को चाहे ख़त्म कर दे, हमने किसी दुश्मनी की वजह से क़िब्ला को नहीं बदला बल्कि अल्लाह के हुक्म से बदला है और हम तो हुक्म के बन्दे हैं। पहले बैतुल् मक़्दिस की ओर मुँह करने का हुक्म दिया तो उधर नमाज़ पढ़ते रहे अब कअ़बः की ओर मुँह करने का हुक्म मिला तो अब उधर मुँह करेंगे क्योंकि उसके हुक्मों की फ़रमाँबरदारी ही अस्ल अ़िबादत है।

मुस्नद अह़मद की एक ह़दीस में ह़ज़रत आ़इशा (रज़ि०) से नक़्ल किया गया है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अहले किताब को मुसलमानों से ह़सद तीन चीज़ों में है-

1- हफ़्ते में एक दिन अ़िबादत को मख़्सूस करने का हुक्म सारी उम्मतों को मिला। यहूद ने सनीचर का दिन मुक़र्रर कर लिया, नसारा ने इतवार का दिन मुक़र्रर कर लिया मगर वास्तव में अल्लाह के नज़्दीक वह जुमअ़ का दिन था, जो मुसलमानों के ह़िस्से में आया।

2- दूसरे वह क़िब्ला जो तब्दीली के बाद मुसलमानों के लिए मुक़र्रर किया गया और किसी उम्मत को इसकी तौफ़ीक़ नहीं मिली।

3- तीसरे इमाम के पीछे आमीन कहना। यह तीनों चीज़ें केवल मुसलमानों को ही मिली हैं, अहले किताब इनसे मह़रूम हैं।

143 وَكَذٰلِكَ جَعَلْنٰكُمْ اُمَّةً وَّسَطًا لِّتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَى النَّاسِ وَيَكُوْنَ الرَّسُوْلُ عَلَيْكُمْ شَهِيْدًا ؕ وَمَا
جَعَلْنَا الْقِبْلَةَ الَّتِىْ كُنْتَ عَلَيْهَآ اِلَّا لِنَعْلَمَ مَنْ يَّتَّبِعُ الرَّسُوْلَ مِمَّنْ يَّنْقَلِبُ عَلٰى عَقِبَيْهِ ؕ وَاِنْ
كَانَتْ لَكَبِيْرَةً اِلَّا عَلَى الَّذِيْنَ هَدَى اللّٰهُ ؕ وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُضِيْعَ اِيْمَانَكُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ بِالنَّاسِ لَرَءُوْفٌ رَّحِيْمٌ ۝

इस आयत में अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि ऐ उम्मते मुह़म्मदिया! हमने तुमको उम्मते वस्त बनाया अर्थात तुमको एक ऐसी जमाअ़त बना दिया है जो हर पहलू से एतिदाल (संतुलन) पर है, ताकि दुनिया में इ़ज़्ज़त ह़ासिल होने के अ़लावा आख़िरत में भी तुम्हारी बड़ी इ़ज़्ज़त हो कि तुम एक बड़े मुक़द्दिमा में जिसमें एक ओर अम्बिया (अ़लै०) होंगे और दूसरी ओर उनकी मुख़ालिफ़ (विरोधी) क़ौमें होंगी। उन मुख़ालिफ़ लोगों के मुक़ाबिले में तुमको गवाह बनाया जाएगा और यह इ़ज़्ज़त दी जाएगी।

उम्मते वस्त (संतुलित उम्मत)–

इस आयत में उम्मते मुह़म्मदिया की तारीफ़ में 'उम्मते वस्त' का शब्द इस्तिमाल हुआ है। वस्त के माने औसत मोअ़तदिल (सन्तुलन) के हैं। ह़दीस शरीफ़ में इस शब्द की तफ़्सीर अद्ल से की गई है जो बेहतरीन के माना में है अर्थात इस उम्मत को मोअ़तदिल उम्मत बनाया गया है जिसके नतीजे में इस उम्मत को मैदाने ह़श्र में यह फ़ज़ीलत (Priority) ह़ासिल होगी कि तमाम नबियों की उम्मतें जब अपने नबियों की हिदायत और तब्लीग़े दीन से इन्कार कर जाएँगी और अपने नबी को झुठ्लाकर यह कहेंगी, कि न हमारे पास कोई किताब आई न हमें किसी नबी ने कोई हिदायत की, उस वक़्त उम्मते मुह़म्मदिया नबियों की तरफ़ से गवाही में पेश होगी और यह शहादत देगी कि नबियों ने हर ज़माने में अल्लाह तआ़ला की ओर से लाई हुई हिदायतों को इन्हें पहुँचाया और तब्लीग़ का ह़क़ अदा किया और अपनी-अपनी क़ौम को ह़क़ पर लाने की पूरी कोशिश की। इस पर दूसरे नबियों के काफ़िर ज़रह (बहस) करेंगे कि इस उम्मते मुह़म्मदिया का तो हमारे ज़माने में वजूद भी न था। इस उम्मत को हमारे मामलात की क्या ख़बर इसकी गवाही हमारे मामले में कैसे क़ुबूल की जा सकती है?

उम्मते मुह़म्मदिया इसका जवाब देगी कि बेशक हम तुम्हारे ज़माने में मौजूद न थे, मगर तुम्हारे वाक़िआ़त और ह़ालात की ख़बर हमें एक सच्चे रसूल ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और अल्लाह की किताब ने दी, जिस पर हम ईमान रखते हैं और उसकी ख़बरों को सच्चा समझते हैं। इसलिए हम अपनी शहादत में सच्चे हैं उस वक़्त रसूलुल्लाह (सल्ल०) तस्दीक़ फ़रमाएँगें कि बेशक उन्होंने जो कहा वह सह़ी है, अल्लाह तआ़ला की किताब और मेरी तअ़लीम के ज़रिये इनको सह़ी ह़ाल मालूम हुआ। इस गवाही के नतीजे में काफ़िर मुजरिम क़रार दिये जाएँगे।

इमाम बुख़ारी (रह़०) ने ह़ज़रत अबू सईद ख़ुद्री (रज़ि०) से रिवायत किया है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "क़ियामत के दिन अल्लाह तआ़ला नूह़ (अ़लै०) को बुलाएँगे और उन से पूछेंगे कि क्या तुम ने मेरा पैग़ाम अपनी क़ौम को पहुँचा दिया था?" तो वह कहेंगे "हाँ", फिर उन की उम्मत से पूछा जाएगा, "क्या इस ने मेरा पैग़ाम तुम्हें पहुँचा दिया था", तो वह लोग कहेंगे, "हमारे पास कोई

डराने वाला नहीं आया।" अल्लाह तआ़ला नूह़ (अ़लै०) से पूछेंगे, कौन है तुम्हारा गवाह? तो वह कहेंगे, "मुह़म्मद और उन की उम्मत"...........फिर मुसलमान गवाही देंगे कि हाँ, इन्होंने पैग़ाम पहुँचा दिया था, और मुह़म्मदुर्रसूलुल्लाह (सल्ल०) गवाही देंगे कि इन्होंने मुसलमानों को पैग़ाम पहुँचा दिया था, फिर आप ने फ़रमाया यही मतलब है अल्लाह के क़ौल وَكَذَٰلِكَ جَعَلْنَاكُمْ أُمَّةً وَسَطًا ....आयात का।

इस का एक माना यह भी है (ताकि तुम दूसरी क़ौमों को राहे ह़क़ की तरफ़ बुलाने की ज़िम्मेदारी क़ुबूल करो, जैसा कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने अल्लाह के दीन की तरफ़ दअ़वत देने की ज़िम्मेदारी संभाली है।) मुजाहिद ने इस आयत की तफ़्सीर में कहा है "ताकि तुम मुह़म्मद (सल्ल०) के लिए यहूद, नसारा और मजूसियों के सामने गवाह बनो, उन्हें दीन इस्लाम की तरफ़ बुलाओ, भलाई का हुक्म दो, और बुराई से रोको, जो दअ़वते इस्लाम की बुनियाद और उस की रुह़ है।"

क़ियामत के दिन गवाही-

इस की तशरीह़ (Explanation) में ह़दीस है, "क़ियामत के दिन ह़ज़रत नूह़ (अ़लै०) को बुलाया जाएगा तो वह कहेंगे, " मैं ह़ाज़िर हूँ ऐ मेरे परवरदिग़ार! और मैं तेरा फ़रमाँबरदार हूँ।" अल्लाह तआ़ला उन से पूछेगा, "तूने हमारा पैग़ाम पहुँचा दिया था?" वह अ़र्ज़ करेंगे, "हाँ मेरे रब!" फिर उन की क़ौम से पूछा जाएगा, "नूह़ ने हमारा पैग़ाम नहीं पहुँचा दिया था?" वह जवाब में कहेंगे, "हमारे पास तो कोई डराने वाला नहीं आया था।" इस पर अल्लाह तआ़ला नूह़ (अ़लै०) से फ़रमाएगा, "तेरे ह़क़ में कोई गवाही देने वाला है?" वह कहेंगे", ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और उन की उम्मत है।" फिर उम्मते मुह़म्मदिया शहादत देगी कि ह़ज़रत नूह़ (अ़लै०) ने यह पैग़ाम अपनी क़ौम तक पहुँचा दिया था.......... और (ऐ उम्मते मुस्लिमा!) रसूलुल्लाह (सल्ल०) तुम पर गवाह होगे..........और यही मतलब है अल्लाह तआ़ला के इस फ़रमान का। "हम ने तुम्हें अफ़्ज़ल उम्मत बनाया है ताकि तुम लोगों पर गवाह हो जाओ और रसूलुल्लाह (सल्ल०) तुम पर गवाह हों..........." **(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् तफ़्सीर, बाब 13, ह़दीस 4487)**

उ़लम-ए-तफ़्सीर ने इस आयत में यह भी लिखा है कि अल्लाह ने मुसलमानों को लोगों के बारे में गवाह बनाया है और उनकी गवाही रसूलुल्लाह (सल्ल०) की गवाही के क़ायम मक़ाम हैं।

'बुख़ारी' में ह़ज़रत अनस बिन मालिक (रज़ि०) से रिवायत है कि सह़ाबा-ए-किराम एक जनाज़े के पास से गुज़रे और उसकी अच्छाई बयान की। नबी करीम (सल्ल०) ने कहा वाजिब हो गई, फिर एक दूसरे जनाज़े के पास से गुज़रे तो उसकी बुराई बयान की। आप (सल्ल०) ने कहा वाजिब हो गई। ह़ज़रत उ़मर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) ने पूछा, "क्या वाजिब हो गई?" रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तुम लोगों ने उसकी अच्छाई बयान की तो उसके लिए जन्नत वाजिब हो गई और उसकी बुराई बयान की तो उसके लिए जहन्नम वाजिब हो गई, तुम लोग ज़मीन पर अल्लाह के गवाह हो।" **(बुख़ारी)**

इमाम ह़ाकिम ने इस ह़दीस की रिवायत में यह भी लिखा है कि आप (सल्ल०) ने यह आयत पढ़ी, इस के बाद फ़रमाया गया, "ऐ मुह़म्मद (सल्ल०)! हमने आपको पहले बैतुल् मक़्दिस की तरफ़ नमाज़

पढ़ने का हुक्म दिया, फिर कअ्बः की ओर फेर दिया, ताकि मालूम हो जाए कि कौन आप की फ़रमाँबरदारी करता है और कौन अपने दीन से बाहर हो जाता है, क्योंकि अब बैतुल् मक़्दिस के बजाय कअ्बः की ओर रुख़ कर लेना मोमिनों के अ़लावा काफ़िर और मुनाफ़िक़ों पर तो बहुत भारी पड़ेगा।"

बैतुल्लाह की तरफ़ नमाज़-

हज़रत बरा बिन आ़जिब (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) जब मदीना आये तो अपने वालिदा के रिश्तेदारों के यहाँ ठहरे। आप (सल्ल०) ने बैतुल्लाह की ओर १६ या १७ नमाज़ अदा कीं। आप को यह पसन्द था कि वह बैतुल्लाह की ओर रुख़ कर के नमाज़ अदा करें, चुनाँचे आप ने पहली नमाज़ नमाज़े अ़स्र (बैतुल्लाह की जानिब) अदा की।

आप के साथ सहाबा (रज़ि०) ने भी यह नमाज़ अदा की। जिन्होंने आप के साथ नमाज़ अदा की उन में से एक शख़्स निकला और एक मस्जिद में गया जहाँ लोग नमाज़े फ़ज्र में रुकूअ़ की हालत में थे, चुनाँचे उस ने कहा, "मैं अल्लाह को गवाह बनाकर कहता हूँ कि मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) के साथ मक्का की ओर रुख़ करके नमाज़ अदा की है चुनाँचे वह लोग बैतुल्लाह की जानिब घूम गये।" **(बुख़ारी)**

अतः ऐसा ही हुआ, उस इम्तिहान में कई लोग नाकाम रहे, कई लोग मुरतद (दीन से बाहर) हो गये और बहुत से मुनाफ़िक़ीन ने अपना निफ़ाक़ ज़ाहिर कर दिया और कहने लगे, "क्या बात है कि मुहम्मद, हमें कभी इधर फेरता है और कभी उधर?" मुश्रिकीन ने कहा, मुहम्मद को अपने दीन में शक हो गया और उन्हीं बोलियों के दर्मियान कुछ मुसलमानों ने भी कहना शुरु कर दिया कि हम ने और हमारे फ़ौत शुदा भाईयों ने जो नमाज़ें बैतुल् मक़्दिस की तरफ़ रुख़ करके पढ़ीं थीं, वह सब बेकार हो गईं। अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को इत्मिनान दिलाते हुए फ़रमाया कि तुम्हारी वह नमाज़ें बेकार नहीं हुईं, अल्लाह अपने बन्दों पर मेहरबानी और रहम करने वाला है।

नोट- यह आयत दलील है इस बात की कि आज़ा व जवारेह (शरीर के अंगो) के ज़रिये जो आ़माले सालिहा अदा किये जाते हैं, वह ईमान में दाख़िल हैं, अल्लाह तआ़ला ने बैतुल् मक़्दिस की तरफ़ रुख़ करके नमाज़ पढ़ने को "ईमान" शब्द का प्रयोग किया है।

आगे की आयत में तफ़्सीर दुर्रे मन्सूर में इस आयत की तफ़्सीर करते हुए 'सुनन तिर्मिज़ी, तब्रानी व मुस्तदरक हाकिम ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि "जब रसूलुल्लाह (सल्ल०) को नमाज़ में कअ्बः शरीफ़ की तरफ़ रुख़ करने का हुक्म दिया गया तो हज़रात सहाबा (रज़ि०) ने अ़र्ज़ किया, "या रसूलल्लाह (सल्ल०) उन लोगों का क्या हाल होगा जो बैतुल् मक़्दिस की तरफ़ नमाज़ें पढ़ते रहे" (और क़िब्ला बदलने से पहले वफ़ात पा गये।) इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई और फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला ऐसा नहीं है कि तुम्हारे ईमान को बर्बाद कर दे"।

इस आयत में 'नमाज़' को 'ईमान' फ़रमाया, इस से नमाज़ की फ़ज़ीलत मालूम हो गई।

(तर्ग़ीब भाग 1, पेज नं० 264) **(तफ़्सील के लिए देखें सूरः निसा आयत नं० 141)**

आयत के आख़िर में फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला 'ह़कीम' भी है और 'ह़ाकिम' भी। यानी इस की ह़िक्मत से वह ख़ूब वाक़िफ़ है, इसलिए कि पहले भी उसी के हुक्म से नमाज़ें पढ़ीं गईं और बाद में भी तो वह कैसे बर्बाद होंगी।

144 قَدْ نَرٰى تَقَلُّبَ وَجْهِكَ فِي السَّمَآءِ ۚ فَلَنُوَلِّيَنَّكَ قِبْلَةً تَرْضٰهَا ۪ فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ؕ وَحَيْثُ مَا كُنْتُمْ
فَوَلُّوْا وُجُوْهَكُمْ شَطْرَهٗ ؕ وَاِنَّ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ لَيَعْلَمُوْنَ اَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّهِمْ ؕ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا يَعْمَلُوْنَ ۝

बुख़ारी व मुस्लिम में 'ह़ज़रत बरा बिन आ़ज़िब (रज़ि०)' से रिवायत है कि 'बैतुल् मक़्दिस' की तरफ़ जब क़िब्ला था तो उस की तब्दीली से पहले चन्द ह़ज़रात इन्तिक़ाल फ़रमा गये और जिहाद में शहीद हो गये, हमें मालूम नहीं कि आप उन के बारे में क्या फ़रमाते हैं, तब यह आयते करीमा नाज़िल हुई وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُضِيْعَ اِيْمَانَكُمْ और इब्ने जरीर ने अपनी सनदों के साथ सुद्दी के तुरूक़ (लाइन) से रिवायत नक़्ल की है कि जब रसूलुल्लाह (सल्ल०) बैतुल् मक़्दिस की तरफ़ नमाज़ पढ़ने के बजाय कअ़बः की तरफ़ रुख़ करने लगे तो मुश्रिकों ने अहले मक्का से कहा कि अल् अ़याज़ु बिल्लाह मुह़म्मद (सल्ल०) अपने दीन में परेशान हो गये तो अपने क़िब्ले से तुम्हारी ओर मुतवज्जेह हो रहे हैं और यह बात उन्होंने समझ ली है कि तुम उन से ज़्यादा राहे रास्त पर हो और क़रीब है कि वह तुम्हारे दीन में दाख़िल हो जाएँ। इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा لِئَلَّا يَكُوْنَ لِلنَّاسِ नाज़िल फ़रमाई।

यह आयत तिलावत के एतिबार से बाद में ज़िक्र हुई है, लेकिन माने के एतिबार से पहले की है। इसलिए कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) मदीना मुनव्वरह आने के बाद अल्लाह के हुक्म के अनुसार बैतुल् मक़्दिस की ओर रुख़ करके नमाज़ पढ़ते रहे और तमन्ना करते रहे कि काश! उनका क़िब्ला मस्जिदे ह़राम हो जाता तो अल्लाह तआ़ला ने यह आयत उतारी और रसूलुल्लाह (सल्ल०) की तमन्ना पूरी हुई।

ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) जिस ज़माने में बैतुल् मक़्दिस की ओर मुँह करके नमाज़ पढ़ते थे तो सलाम फेरकर आसमान की ओर (इस इन्तिज़ार में) मुँह उठाते कि कअ़बः शरीफ़ क़िब्ला मुक़र्रर किया जाए तो यह आयत नाज़िल हुई।

इस आयत में मस्जिदे ह़राम से इस तरफ़ भी इशारा है कि कअ़बः की ओर रुख़ करना वाजिब है, न कि ख़ास कअ़बः की तरफ़। इसलिए फ़ुक़्हा फ़रमाते हैं कि कअ़बः शरीफ़ की ओर रुख़ होना काफ़ी है चाहे थोड़ा सा फ़र्क़ हो अर्थात पूरब व पश्चिम के दर्मियान जो दिशा है उसकी ओर रुख़ करके नमाज़ पढ़ने से नमाज़ हो जाएगी। यह आप ने अहले मदीना के लिए फ़रमाया क्योंकि कअ़बः शरीफ़ मदीना मुनव्वरह से उत्तर की ओर है और वहाँ से दिशा पूरब व पश्चिम के दर्मियान पड़ती है। इसमें पूरी दुनिया में बसने वाले मुसलमानों के लिए अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से बहुत आसानी है कि वह क़िब्ला की ओर नमाज़ पढ़ लें।

'मस्जिदे ह़राम' उस मस्जिद का नाम है जो कअ़बः शरीफ़ के चारों तरफ़ है। इस पर सारी उम्मत का इत्तिफ़ाक़ है, कअ़बः शरीफ़ ही क़िब्ला है, चूंकि कअ़बः शरीफ़ मस्जिद के अन्दर है इसलिए मस्जिदे

ह़राम की ओर रुख़ करने का हुक्म फ़रमाया गया है। इसमें इसी बात की ओर इशारा है कि ख़ास कअ़बः की ही ओर हर दूर और क़रीब के नमाज़ी को रुख़ करना ज़रूरी नहीं, बल्कि मस्जिदे ह़राम की ओर मुँह करने से नमाज़ हो जाएगी, लेकिन जो व्यक्ति मस्जिदे ह़राम में मौजूद है उसके लिए ज़रूरी है कि कअ़बः की ओर रुख़ करके नमाज़ पढ़े। **(तफ़सीर कुर्तुबी भाग-2 पेज नं० 159)**

आगे की आयत में यहूदियों के बारे में बताया गया है कि उनकी हठधर्मी और एतिराज़ करना ह़सद (ईर्ष्या) की बुनियाद पर है वह जानते हैं कि मुह़म्मद रसूलुल्लाह (सल्ल०) ही नबी हैं जिनकी बशारत उनकी किताबों में मौजूद है और वह बातिल का हुक्म नहीं देते। **(रुहुलू मआ़नी)**

यहूद अपने नबियों के ज़रिये जो उनकी किताबों में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की पेशीनगोई मौजूद थी और उनके उम्मत की सिफ़ात को अच्छी तरह़ जानते थे वह यह भी जानते थे कि दीन व इस्लाम जो इन्सानियत की हिदायत के लिए आख़िरी दीन होगा, वह मुह़म्मद (सल्ल०) और उनकी उम्मत का दीन होगा और उनकी सिफ़ात में यह भी पढ़ते थे कि आख़िरी नबी का क़िब्ला कअ़बः होगा, लेकिन ह़सद की वजह से जहाँ उन्होंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) की दूसरी सिफ़ात का इन्कार किया वहाँ कअ़बः के क़िब्ला होने का इन्कार किया। इसलिए अल्लाह ने उन्हें धमकी दी कि अल्लाह उनके करतूतों से ग़ाफ़िल नहीं।

इस आयत के अन्त में फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला उन लोगों के आ़माल से और उनकी ह़रकतों से ग़ाफ़िल नहीं है उसको सब कुछ मालूम है। यह लोग अपने कुफ़्र और बुरे आ़माल की सज़ा पाएँगे।

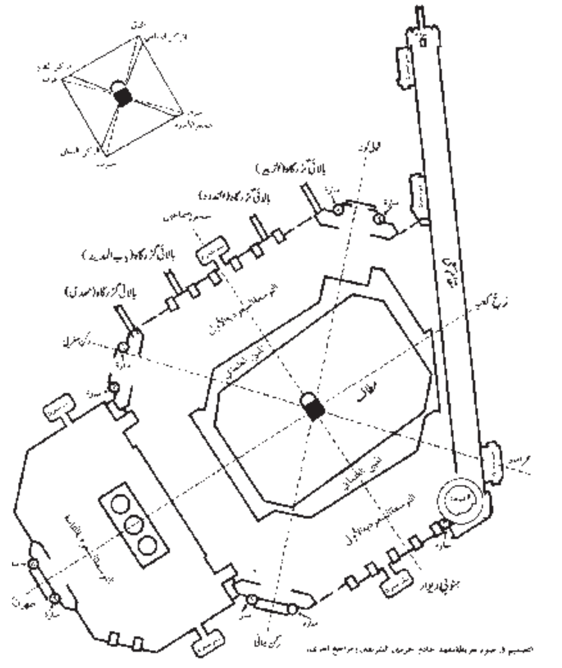

मस्जिदे हराम का नक़्शा और बीच में बैतुल्लाह शरीफ़

145 وَلَئِنْ اَتَيْتَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ بِكُلِّ اٰيَةٍ مَّا تَبِعُوْا قِبْلَتَكَ ۚ وَمَآ اَنْتَ بِتَابِعٍ قِبْلَتَهُمْ ۚ وَمَا بَعْضُهُمْ بِتَابِعٍ قِبْلَةَ بَعْضٍ ؕ وَلَئِنِ اتَّبَعْتَ اَهْوَآءَهُمْ مِّنْۢ بَعْدِ مَا جَآءَكَ مِنَ الْعِلْمِ ۙ اِنَّكَ اِذًا لَّمِنَ الظّٰلِمِيْنَ ۘ

इस आयत में अल्लाह तआला ने यहूद व नसारा के कुफ़्र, हठधर्मी और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के हर बात में मुख़ालिफ़त की ख़बर दी है और इस बात की ख़बर दी है कि अगर आप अपने दीन की सच्चाई के लिए तमाम दलीलें इकट्ठा करके इन यहूद व नसारा के सामने पेश कर दें तब भी यह आपकी फ़रमाँबरदारी नहीं करेंगे और अपनी ख़्वाहिश की ग़ुलामी से आज़ाद नहीं होंगे क्योंकि उनका कुफ़्र किसी संदेह की वजह से नहीं है जिन्हें दलायल की वजह से दूर किया जा सके। यह तो केवल अपने घमण्ड की वजह से ऐसा कर रहे हैं।

फ़िर फ़रमाया गया है कि आप के पास अल्लाह की ओर से इ़ल्म आ गया और यक़ीन है कि यही केवल अल्लाह की ओर से है और यह भी मालूम हो गया कि यह अपने ख़्वाहिशात (Desires) के पीछे चलते हैं और उन्हें हक़ क़ुबूल करने का इरादा नहीं। इसलिए अगर मान लिया जाए कि आप ने इनके ख़्वाहिशों की पैरवी कर ली तो आप उन लोगों में शुमार हो जाएँगे जो ज़ुल्म करने वाले हैं और इसमें यह भी बताया गया है कि नफ़्सानी (Materialistic Desires) पैरवी से बचने की बहुत ज़्यादा ताकीद है और यह भी बताया गया है कि अम्बिया (अ़लै०) से गुनाह होना मुम्किन नहीं क्योंकि नफ़्स का इत्तिबाअ़ और गुनाह करना ज़ालिमों का काम है और अम्बिया (अ़लै०) हर ज़ुल्म से महफ़ूज़ हैं।

(रुहुल् मआ़नी भाग-1 पेज नं० 12)

146 اَلَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ يَعْرِفُوْنَهٗ كَمَا يَعْرِفُوْنَ اَبْنَآءَهُمْ ؕ وَاِنَّ فَرِيْقًا مِّنْهُمْ لَيَكْتُمُوْنَ الْحَقَّ وَهُمْ يَعْلَمُوْنَ ۘ

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम (रज़ि०) जो यहूद के उ़लमा में से थे, हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को उन्होंने पहली ही नज़र में पहचान लिया था कि आप वाक़ई अल्लाह के रसूल हैं। उन्होंने इस्लाम क़ुबूल किया और कहने लगे कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) को पहचानना कि यह हक़ीक़त में अल्लाह के रसूल हैं, मुझे अपने बेटे के पहचानने से ज़्यादा यक़ीनी है।

हज़रत उ़मर (रज़ि०) ने फ़रमाया कि यह क्यों उन्होंने कहा कि मैं बिल्कुल यक़ीन करके गवाही देता हूँ कि मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं, लेकिन मैं इस तरह़ की गवाही अपने बेटे के बारे में नहीं दे सकता, क्योंकि मैं नहीं जानता कि औ़रतें मर्दों के पीछे क्या करती हैं। मुम्किन है मेरी बीवी ने ख़यानत की हो और मैं जिसे अपना बेटा कह रहा हूँ वह मेरा बेटा न हो। **(दुर्रे मन्सूर भाग-1-147)**

147 اَلْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ فَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْمُمْتَرِيْنَ ۧ

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और मोमिनीन के लिए इसमें और यक़ीन दिहानी है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) पर जो क़ुर्आन नाज़िल हुआ है और उन्हें जो दीन देकर भेजा गया है वही हक़ है, जिसमें किसी तरह़ कोई शक की गुन्जाइश नहीं है। इसलिए आप की उम्मत हक़ पर है इस में कोई शुब्हा न करे।

आयत नं० 148 से 157 तक

وَلِكُلٍّ وِجْهَةٌ هُوَ مُوَلِّيهَا فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرَاتِ ۚ أَيْنَ مَا تَكُونُوا يَأْتِ بِكُمُ اللَّهُ جَمِيعًا ۚ إِنَّ اللَّهَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝ وَمِنْ حَيْثُ خَرَجْتَ
فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ۖ وَإِنَّهُ لَلْحَقُّ مِنْ رَبِّكَ ۗ وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ۝ وَمِنْ حَيْثُ خَرَجْتَ فَوَلِّ وَجْهَكَ
شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ۚ وَحَيْثُ مَا كُنْتُمْ فَوَلُّوا وُجُوهَكُمْ شَطْرَهُ لِئَلَّا يَكُونَ لِلنَّاسِ عَلَيْكُمْ حُجَّةٌ إِلَّا الَّذِينَ ظَلَمُوا مِنْهُمْ فَلَا
تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِي وَلِأُتِمَّ نِعْمَتِي عَلَيْكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَهْتَدُونَ ۝ كَمَا أَرْسَلْنَا فِيكُمْ رَسُولًا مِنْكُمْ يَتْلُو عَلَيْكُمْ آيَاتِنَا وَيُزَكِّيكُمْ
وَيُعَلِّمُكُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَيُعَلِّمُكُمْ مَا لَمْ تَكُونُوا تَعْلَمُونَ ۝ فَاذْكُرُونِي أَذْكُرْكُمْ وَاشْكُرُوا لِي وَلَا تَكْفُرُونِ ۝ يَا أَيُّهَا
الَّذِينَ آمَنُوا اسْتَعِينُوا بِالصَّبْرِ وَالصَّلَاةِ ۚ إِنَّ اللَّهَ مَعَ الصَّابِرِينَ ۝ وَلَا تَقُولُوا لِمَنْ يُقْتَلُ فِي سَبِيلِ اللَّهِ أَمْوَاتٌ ۚ بَلْ أَحْيَاءٌ وَلَٰكِنْ
لَا تَشْعُرُونَ ۝ وَلَنَبْلُوَنَّكُمْ بِشَيْءٍ مِنَ الْخَوْفِ وَالْجُوعِ وَنَقْصٍ مِنَ الْأَمْوَالِ وَالْأَنْفُسِ وَالثَّمَرَاتِ ۗ وَبَشِّرِ الصَّابِرِينَ ۝ الَّذِينَ إِذَا أَصَابَتْهُمْ
مُصِيبَةٌ قَالُوا إِنَّا لِلَّهِ وَإِنَّا إِلَيْهِ رَاجِعُونَ ۝ أُولَٰئِكَ عَلَيْهِمْ صَلَوَاتٌ مِنْ رَبِّهِمْ وَرَحْمَةٌ ۖ وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُهْتَدُونَ ۝

अनुवाद-

(148) और हर एक के लिए एक दिशा है जिधर (अ़िबादत में) वह अपना मुँह करते हैं तो तुम नेकियों
में बाज़ी ले जाओ भलाइयों की ओर लपको, तुम जहाँ भी होगे अल्लाह तुम सबको पा (जमाकर) लेगा, बेशक
अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर (सामर्थ्यवान) है। (149) और आप जिस जगह से भी (बाहर) निकलें, अपना
मुँह मस्जिदे-ह़राम कअ़बः की ओर कर लिया करें; और यह आपके रब की ओर से ह़क़ बात है; और अल्लाह
उससे बेख़बर नहीं, जो कुछ तुम कर रहे हो। (150) और आप जिस जगह से भी (बाहर) निकलें, अपना
मुँह मस्जिदे-ह़राम की ओर कर लिया करें; और तुम लोग जहाँ कहीं (भी) हो अपना मुँह 'उसी की' ओर
कर लिया करो, ताकि लोगों को तुम्हारे मुक़ाबिले में हुज्जत न रह जाए सिवाय उन लोगों के, जो ज़ालिम हैं,
सो तुम उनसे न डरो बल्कि (केवल) 'मुझ' ही से डरो, ताकि 'मैं' अपना इनआ़म तुम पर पूरा करूँ और
ताकि तुम सीधी राह पर क़ायम रहो। (151) जिस तरह 'हमने' तुम्हारे दर्मियान तुम्हीं में से एक रसूल भेजा
जो तुमको हमारी आयतें पढ़ कर सुनाते, और तुम्हें पाक करते, और तुम्हें किताब और ह़िकमत की तअ़लीम
देते, और तुम्हें उसकी तअ़लीम देते जो तुम नहीं जानते थे। (152) सो तुम मुझे याद करते रहो, मैं तुम्हें
याद करता रहूँगा, और मेरी शुक्रगुज़ारी करते रहो, और नाशुक्री न करो। (153) ऐ ईमान वालो! सब्र और
नमाज़ से मदद लिया करो, बेशक अल्लाह सब्र करने वालों के साथ है। (154) और जो लोग अल्लाह की
राह में क़त्ल किये जाएँ, उनको मुर्दा न कहो, बल्कि वे ज़िन्दा हैं, लेकिन तुम्हें शोऊ़र (एह़सास) नहीं। (155)
और 'हम' तुम्हारी आज़माइश (परीक्षा) करके रहेंगे कुछ डर और भूख से, और माल व जान से, और फलों
के नुक़सान से; और (आप) सब्र करने वालों को ख़ुशख़बरी सुना दीजिए। (156) जब उन लोगों पर कोई
मुसीबत आ पड़ती है तो कहते हैं, "हम अल्लाह ही के लिए हैं, और हमें अल्लाह ही की ओर लौट कर
जाना है।" (157) यही लोग हैं जिन पर उनके रब की ओर से फ़ज़्ल (कृपा) और रह़मतें होंगी और यही
सीधी राह (पाने) वाले हैं।

आयत नं० 148 से 157 तक की व्याख्या

148 وَلِكُلٍّ وِّجْهَةٌ هُوَ مُوَلِّيهَا فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرٰتِ ۗ أَيْنَ مَا تَكُونُوا يَأْتِ بِكُمُ اللّٰهُ جَمِيعًا ۗ إِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝

इस आयत से मालूम होता है कि हर दीन व मिल्लत के लिए एक ख़ास रुख़ होता है जिधर वह अपनी अ़िबादतों में रुख़ करता है। जैसे मुसलमानों का क़िब्ला 'कअ़बः' है। इस में इस बात की ओर इशारा है कि दुनिया में विभिन्न तरीक़े पाये जाते हैं उनमें धर्म केवल दीने इस्लाम है।

इस आयत में ख़ैरात से मुराद तमाम नेक अ़ामाल हैं जिनके ज़रिये दुनिया व आख़िरत की सआ़दत ह़ासिल की जा सकती है। यानी अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को नसीह़त की है कि तुम हर भलाई की तरफ़ आगे बढ़ो क्योंकि आदमी को जब यह यक़ीन होगा कि अल्लाह उसे दोबारा ज़िन्दा करेगा और उसे अ़ामाल का बदला देगा तो वह आख़िरत की तैयारी में तेज़ी करेगा।

इस आयत में बताया गया है कि मुसलमानों का रुख़ विभिन्न शहरों में विभिन्न दिशा की ओर होता है। चारों दिशाओं (पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण) में से कोई भी दिशा मुसलमानों का क़िब्ला नहीं है बल्कि उनका क़िब्ला क़अ़बः है और कअ़बः को रुख़ करने से विभिन्न इलाक़ों के लोग विभिन्न दिशाओं की ओर नमाज़ पढ़ते हैं, लेकिन रुख़ सब का कअ़बः की ओर ही होता है। **(रुहुल् मआ़नी)**

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है कि तुम जहाँ कहीं भी हो या जिस ज़मीन पर हो अल्लाह तआ़ला तुम्हारे आ़माल का बदला देने के लिए तुम सबको जमा फ़रमाएगा, जहाँ पूरा-पूरा बदला दिया जाएगा। इसलिए अल्लाह तआ़ला को हर चीज़ पर क़ुद्रत है, ज़िन्दग़ी देना या मौत देना या जमा करना यह सब उस के लिए आसान है।

149 وَمِنْ حَيْثُ خَرَجْتَ فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ۖ وَإِنَّهُ لَلْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ ۗ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ۝

'क़िब्ला' की तब्दीली जिस समय हुई उस समय ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का क़याम (Residense) मदीना मुनव्वरह में था और चूंकि क़िब्ला का हुक्म एक बहुत बड़ा हुक्म था इसलिए सफ़र के लिए एक अलग हुक्म भी हुआ, जिसके लिए अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया, जिस की ओर क़याम में कअ़बः की ओर रुख़ होता है उसी तरह़ मदीना से या और कहीं से जिस जगह से भी आप सफ़र में बाहर जाएँ तो भी अपना चेहरा नमाज़ में मस्जिदे ह़राम यानी 'कअ़बः' की ओर रखा कीजिए।

अतः यह हुक्म सभी ह़ालातों में दिया गया और बता दिया गया कि यह अल्लाह की ओर से है और अल्लाह तआ़ला तुम्हारे किये हुए कामों की पूरी तरह़ ख़बर रखता है। फिर दोबारा कहा गया आप जिस जगह से भी सफ़र में बाहर जाएँ, तो अपना चेहरा नमाज़ में मस्जिदे ह़राम यानी 'कअ़बः' की ओर रखें।

ऊपर की बातों से किसी को यह सन्देह हो सकता था कि कहीं यह हुक्म ख़ास मुह़म्मद (सल्ल०) के लिए तो नहीं है इसलिए आगे की आयत में तमाम अहले इस्लाम को मुख़ातब करके फ़रमाया गया।

150 وَمِنْ حَيْثُ خَرَجْتَ فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ۚ وَحَيْثُ مَا كُنْتُمْ فَوَلُّوا وُجُوهَكُمْ شَطْرَهُ ۙ
لِئَلَّا يَكُونَ لِلنَّاسِ عَلَيْكُمْ حُجَّةٌ إِلَّا الَّذِينَ ظَلَمُوا مِنْهُمْ فَلَا تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِي وَلِأُتِمَّ
نِعْمَتِي عَلَيْكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَهْتَدُونَ ۝

इसी तरह तमाम मुसलमान भी सुन लें कि वह जहाँ कहीं मौजूद हों अपना चेहरा नमाज़ में उसी मस्जिदे ह़राम की तरफ़ रखा करें। फिर फ़रमाया गया तह़वीले (तब्दीली) क़िब्ला इसलिए मुक़र्रर किया जाता है ताकि इन मुख़ालिफ़ लोगों को तुम्हारे मुक़ाबिले में किसी तरह़ की गुफ़्तगू करने का मौक़ा न रहे कि अगर मुह़म्मद (सल्ल०) वही आख़िरी नबी होते तो उनकी अ़लामत तो यह भी है कि उनका असली रुख़ कअ़बः की ओर होगा और यह तो बैतुल् मक़्दिस की तरफ़ नमाज़ पढ़ते हैं इस ह़िक्मत के लिए भी हमने क़िब्ला को बदला। हाँ, मगर जो उनमें बिल्कुल ही बेइन्साफ़ हैं वह अब भी बाल की खाल निकालेंगे कि यह कैसे नबी हैं जो इतने नबियों के ख़िलाफ़ कअ़बः की ओर नमाज़ पढ़ते हैं।

लेकिन जब इस तरह़ के एतिराज़ से दीने ह़क़ को कोई नुक़्सान नहीं पहुँच सकता तो ऐसे लोगों से मत घबराइये और उनके एतिराज़ की फ़िक्र न कीजिए और मुझसे डरते रहिये कि हमारे एह़काम का विरोध न होने पाये, कि यह मुख़ालिफ़त आपको नुक़्सान पहुँचा सकती है और हमने इन सब हुक्मों पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ दी, ताकि तुम पर जो कुछ मेरा इनआ़म है वह तुमको जन्नत में दाख़िल करवा दे और दुनिया में राहे ह़क़ यानी इस्लाम पर क़ायम रहने वालों में रहो।

151 كَمَا أَرْسَلْنَا فِيكُمْ رَسُولًا مِنْكُمْ يَتْلُو عَلَيْكُمْ آيَاتِنَا وَيُزَكِّيكُمْ وَيُعَلِّمُكُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ
وَيُعَلِّمُكُمْ مَا لَمْ تَكُونُوا تَعْلَمُونَ ۝

इस आयत में फ़रमाया गया कि हमने तुमको कअ़बः की ओर नमाज़ों में रुख़ करने का हुक्म दिया है ताकि तुम पर अपनी नेअ़मतें पूरी करें, इस तरह़ कि तुम्हारे अन्दर तुम्हीं में से एक रसूल भेजा जो तुम्हें हमारी आयतें पढ़ कर सुनाता है और तुम्हारा तज़्किया (Purification) करता है। उसकी तअ़लीमात पर अ़मल करने से तुम ज़ाहिरी और बातिनी बुराई से पाक हो जाओगे। वह तुमको किताब और ह़िक्मत की तअ़लीम देता है और वह ऐसी बातें बताता है जो तुम नहीं जानते थे, जिनके जानने का रास्ता वह्य के अ़लावा कुछ नहीं था हमने अपना रसूल भेजा उस पर वह्य भेजी और वह्य के ज़रिये तुम को बहुत समझाया इसलिए तुम मेरा ज़िक्र करो, मैं तुम्हें याद करूँगा, तुम मेरा शुक्र करो और मेरी नाशुक्री न करो।

152 فَاذْكُرُونِي أَذْكُرْكُمْ وَاشْكُرُوا لِي وَلَا تَكْفُرُونِ ۝

अल्लाह का ज़िक्र-

इन एह़सानात का ह़ासिल यह है कि तुम मुझे याद करते रहो, मैं वादा करता हूँ कि मैं तुम्हें याद करता रहूँगा, मेरा शुक्र अदा करते रहो और नेअ़मतों की नाशुक्री न करो।

इमाम अह़मद और इमाम बुख़ारी ने ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत की है कि रसूलुल्लाह

(सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला कहता है मैं अपने बन्दे के साथ होता हूँ जब वह मुझे याद करता है, अगर वह मुझे अपने दिल में याद करता है तो मैं उसे अपने दिल में याद करता हूँ और अगर वह मुझे मजमा में याद करता है तो मैं उसे बेहतर मजमा में याद करता हूँ।" **(बुख़ारी)**

ज़िक्रे इलाही केवल तस्बीह़ तह़लील व तह़रीम व तक्बीर पर ही नहीं, बल्कि हर वह अ़मल जो कुर्आन व सुन्नत के अनुसार हो और जिसमें अल्लाह तआ़ला की फ़रमाँबरदारी हो वह ज़िक्रे इलाही है।

इमाम इब्ने क़य्यिम (रह०) फ़रमाते हैं कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) सबसे ज़्यादा अल्लाह को याद करने वाले थे। उनकी बातचीत उनका हुक्म अल्लाह तआ़ला के 'अस्माउस्सिफ़ात' और वादा व वअ़ीद के बारे में उनकी ह़दीसें उनका अल्लाह तआ़ला की ह़म्द व सना बयान करना, अल्लाह तआ़ला से सवाल व दुआ़, जन्नत की रग़बत दिलाना और जहन्नम से डराना, उनकी ख़ामोशी सब कुछ ज़िक्रे इलाही था। वह हर वक़्त और हर ह़ाल में उठते बैठते, सोते जागते और सफ़र व ह़जर में अल्लाह की याद में मश्ग़ूल रहते थे। **(तफ़्सील के लिए देखें सूरः इब्राहीम आयत नं० 7)**

सह़ाबा-ए-किराम (रज़ि०) जब इकट्ठा होते थे तो उनमें का एक व्यक्ति क़ुर्आन पढ़ता था और बाक़ी लोग सुनते थे। ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ह़ज़रत मूसा अश्अ़री (रज़ि०) से कहते थे **'ज़क्करना रब्बना'** कि हमें हमारे रब की याद दिलाओ तो वह क़ुर्आन पढ़ते और ह़ज़रत उमर (रज़ि०) सुनते थे।

अल्लाह तआ़ला ने ज़िक्र की फ़ज़ीलत बयान करने के बाद शुक्र का हुक्म फ़रमाया अर्थात मेरा शुक्र करो और मेरी नाशुक्री न करो। ज़िक्र के साथ शुक्र अदा करना भी ज़रूरी है। नेअ़मतों का इन्कार करना उनकी नाक़द्री करना और उनको गुनाहों में ख़र्च करना, नाशुक्री करना और अल्लाह तआ़ला की नाफ़रमानी में शैतान की फ़रमाँबरदारी करना, यह सब नाशुक्री है यानी अल्लाह की ह़म्द करना अस्ल शुक्र है जो बन्दा अल्लाह की ह़म्द बयान नहीं करता उसने अल्लाह का शुक्र नहीं किया।

(बैहक़ी व मिश्कात)

ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं, मैं अपने बन्दे के गुमान (Expectation) के मुताबिक़ उस से सुलूक (Behave) करता हूँ। जब वह मेरा ज़िक्र करता है तो मैं उसके साथ होता हूँ। अगर वह मुझे दिल में याद करता है तो मैं भी उसे दिल में याद करता हूँ। अगर वह एक हाथ मेरे क़रीब आता है तो मैं दो हाथ उसके क़रीब आता हूँ। अगर वह चल कर मेरे पास आता है तो मैं दौड़ कर उस के पास आता हूँ।" **(बुख़ारी, बाब 15, ह़दीस-7405)**

153 يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ ٱسْتَعِينُوا۟ بِٱلصَّبْرِ وَٱلصَّلَوٰةِ ۚ إِنَّ ٱللَّهَ مَعَ ٱلصَّٰبِرِينَ ۝

नमाज़ और सब्र के ज़रिये मदद-

इस आयत में अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है कि सब्र और नमाज़ के ज़रिये अल्लाह तआ़ला से मदद माँगो। शब्द सब्र के माने रुकने और ठहर जाने के हैं। शरीअ़त में यह शब्द तीन अर्थो में प्रयोग होता है-

1- अपने नफ़्स को अल्लाह तआ़ला की अ़िबादत और फ़रमाँबरदारी पर लगाये रहना।
2- अपने नफ़्स को गुनाहों से रोके रखना।
3- आफ़त या किसी तक्लीफ़ को बर्दाश्त करते हुए इस तरह़ गुज़र जाना कि अल्लाह तआ़ला पर राज़ी रहना और कोई एतिराज़ न करना और दुःख व तक्लीफ़ पर सवाब की उम्मीद रखना।

आम लोग सब्र केवल तीसरे माने के लिए ही इस्तेमाल करते हैं। पहले दो माना की ओर उनका ज़ेहन भी नहीं जाता। जबकि यह तीनों सूरतें सब्र का ह़िस्सा हैं। तीनों का ख़ुलासा यह है कि नफ़्स को दबाना और हर उस बात को रोकना जिसमें अल्लाह तआ़ला की नाफ़रमानी हो।

ह़ज़रत सुहैब (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मोमिन का मामला अ़जीब है कि उस की हर ह़ालत ख़ैर है और यह मोमिन के सिवा किसी को ह़ासिल नहीं। अगर मोमिन को ख़ुश करने वाली ह़ालत पहुँच गई तो उसने शुक्र किया जो उसके लिए बेहतर हुआ और उसको तक्लीफ़ देने वाली ह़ालत पहुँच गई तो उसने सब्र किया यह भी उसके लिए बेहतर हुआ।" **(मुस्लिम)**

सब्र के साथ नमाज़ का ज़िक्र भी फ़रमाया और नमाज़ के ज़रिये भी मदद ह़ासिल करने का हुक्म दिया। ह़ज़रत हुज़ैफ़ा (रज़ि०) से रिवायत है, "रसूलुल्लाह (सल्ल०) को जब कोई मुश्किल पेश आती तो नमाज़ में मश्गूल हो जाते थे।" **(मिश्कात)**

फ़िर फ़रमाया अल्लाह तआ़ला सब्र करने वालों के साथ है और यहाँ मअ़ीयत (साथ रहना) से मुराद वह मअ़ीयतें हैं जो अल्लाह की मुह़ब्बत, नुस्रत (मदद) और कुर्बत (निकटता) पर दलालत (Evidence) प्रत्यक्ष प्रमाण करती हैं अर्थात अल्लाह तआ़ला सब्र करने वालों के साथ है उनसे मुह़ब्बत करता है और उनकी मदद करता है और सब्र करने वालों के लिए इस से बढ़कर क्या फ़ज़ीलत हो सकती है कि अल्लाह उनके साथ है और मअ़ीयत (साथ रहना) की दूसरी क़िस्म मअ़ीयते आम्मा है यानी अल्लाह अपने इ़ल्म व क़ुदरत के ज़रिये अपने बन्दों के साथ है। जैसा कि अल्लाह ने फ़रमाया और यह मअ़ीयत (साथ रहना) तमाम मख़्लूक़ के लिए है। **(तफ़्सील के लिए देखें सूरः अल् बक़रः आयत नं० 45)**

154 وَلَا تَقُولُوا لِمَن يُقْتَلُ فِي سَبِيلِ اللَّهِ أَمْوَاتٌ ۚ بَلْ أَحْيَاءٌ وَلَٰكِن لَّا تَشْعُرُونَ

अल्लाह की फ़रमाँबरदारी करने का बड़ा नमूना अल्लाह की राह में जिहाद करना है कि आदमी अपने मालिक को राज़ी करने के लिए अपनी प्यारी जान भी कुर्बान कर देता है।

अल्लामा वाह़िदी इस आयत के नुज़ूल में लिखते हैं कि यह आयत 'बद्र' में शहीद हो जाने वाले मुसलमानों के बारे में नाज़िल हुई। जिनमें आठ ह़ज़रात अन्सार में से और छः मुहाजिरीन में से थे। शहीद हो जाने वालों के बारे में कुछ लोगों ने यूँ कहा कि फ़लाँ मर गया और दुनिया की नेअ़मत उससे ख़त्म हो गई इस पर यह आयत नाज़िल हुई।

शहीद का दर्जा-

अल्लाह के दीन के फैलाने और ह़क़ के आगे बढ़ाने में जो लोग आड़े आते हैं उनसे जिहाद और

क़िताल करना पड़ता है जब जिहाद होता है, ज़रुरी नहीं कि सब काफ़िर ही मरें उसमें बहुत से मुसलमान भी मक़्तूल हो जाते हैं, उन मुसलमानों को शहीद कहा जाता है, उनका बहुत बड़ा दर्जा है, उनकी बरज़ख़ (मरने के बाद से क़ियामत तक का ज़माना) की ज़िन्दग़ी भी दूसरों से अफ़्ज़ल है। इसलिए फ़रमाया, "जो लोग अल्लाह की राह में क़त्ल किये जाते हैं उनके बारे में यह न कहो कि वह मुर्दा हैं बल्कि वह ज़िन्दा हैं उन पर मौत तारी हुई है, लेकिन बरज़ख़ी ज़िन्दग़ी में उनका बड़ा दर्जा है।" सूरः आले इमरान के १६९ से १७१ की आयत में फ़रमाया।

बरज़ख़ की ज़िन्दग़ी में सबसे बेहतर ज़िन्दग़ी नबियों की है उनके जिस्मों को ज़मीन नहीं खाती। **'इन्नल्लाहा हर्रमा अललूअरज़ी अन् ताकुला अजसादिल् अम्बिया'** (अबूदाऊद)

इसी तरह से नबियों के दुनियावी हुक्म भी कुछ अलग हैं। जैसे उनकी वरासत तक़्सीम नहीं होती उनकी बीवियों का उनकी वफ़ात के बाद दूसरों से निकाह़ जायज़ नहीं होता। इसी तरह़ नबियों के बाद शहीद का दर्जा है उनके बाद दूसरे लोगों का। जिसके ज़रिये क़ब्र में अ़ज़ाब मिलता है या आराम, जिसकी तफ़्सीर ह़दीसों में मौजूद है।

'ह़ज़रत मस्रूक ताबई' (ताबई कहते हैं जिसने सह़ाबा को देखा हो) ने बयान फ़रमाया कि हमने अ़ब्दुल्लाह बिन मस्ऊद (रज़ि०) से इस आयत के बारे में मालूम किया तो उन्होंने फ़रमाया, "हमने इस आयत के बारे में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से मालूम किया था, जिस पर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया कि शहीदों की रूहें सब्ज़ परिन्दों के घोसलों में हैं उनके लिए किन्दील हैं जो अ़र्श के नीचे लट्की हुई हैं। यह परिन्दे जन्नत में जहाँ चाहते हैं चलते फिरते हैं फिर इन किन्दीलों में आ जाते हैं। अल्लाह तआ़ला ने उनसे फ़रमाया कि तुम कुछ ख़्वाहिश रखते हो तो उन्होंने कहा कि हम क्या ख़्वाहिश करें? (इससे ज़्यादा क्या होगा कि) हम जन्नत में जहाँ चाहते हैं फिरते हैं और खाते-पीते हैं। अल्लाह तआ़ला ने तीन बार यही सवाल किया जब उन्होंने देखा कि सवाल होता ही रहेगा और कुछ न कुछ जवाब देना ही है तो अ़र्ज़ किया ऐ हमारे रब! हम यह चाहते हैं कि हमारी रूहें दोबारा जिस्मों में वापस कर दी जाएँ ताकि हम फिर तेरी राह में क़त्ल हो जाएँ जब उन्होंने किसी और ह़ाजत का सवाल न किया तो उनको उनके ह़ाल पर छोड़ दिया गया।" **(मुस्लिम)**

शहीद के गुनाह माफ़ हो जाते हैं मगर क़र्ज़ नहीं-

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया कि शहीद का हर गुनाह माफ़ कर दिया जाता है क़र्ज़ के अ़लावा। **(मुस्लिम)**

ह़दीस में है कि जब आदमी मर जाता है तो उसका अ़मल ख़त्म हो जाता है, मगर मुजाहिद फ़ी सबीलिल्लाह का अ़मल क़ियामत तक बढ़ता रहता है। **(बुख़ारी व मुस्लिम)**

ह़दीस में शहीद की बहुत सी क़िस्में आई हैं, उसमें से एक क़िस्म शहीद की वह है जिसमें उसको गुस्ल नहीं दिया जाता और उसका ख़ून उसके जिस्म से ख़त्म नहीं होता और उसी तरह़ उसको नमाज़

पढ़कर दफ़न कर दिया जाता है। दूसरा हुक्म यह है कि वह जो कपड़े पहने हुए हो उसके कपड़ों को जिस्म से न उतारें उन्हीं ख़ून भरे कपड़ों में दफ़न किया जाए और हथियार ज़िरह पोस्तीन वग़ैरह बदन से निकाल लिया जाए इस तरह़ एह़काम के लिह़ाज़ से शहीद की चार क़िस्में हैं।

शहीद की चार क़िस्में-

1- दीन व दुनिया दोनों के लिह़ाज़ से शहीद हो, यानी बेगुस्ल व कफ़न सिर्फ़ नमाज़े जनाज़ा पढ़ कर इमाम अबू ह़नीफ़ा के नज़्दीक दफ़्न कर दिया जाए और इमाम शाफ़ई के नज़्दीक नमाज़े जनाज़ा की भी ज़रूरत नहीं कि वह खुद ही मग़फ़ूर और पाक-साफ़ है यानी मुख़्लिस मुजाहिद फ़ी सबीलिल्लाह है।

2- दूसरे सिर्फ़ आख़िरत के लिह़ाज़ से शहीद हुआ और अह़कामे दुनिया उस पर शहीद के जारी न किये जाएँ। जैसे दरिया में डूब कर मरने वाला, दस्तों के मर्ज़ और सख़्त बीमारी में हलाक होने वाला, बच्चे की विलादत में निफ़ास की ह़ालत में मरने वाली ओ़रत आख़िरत में शहीद कहलाएँगे, लेकिन मज़्कूरह दुनियवी अह़काम उन पर जारी नहीं किये जाएँगे।

3- सिर्फ़ अह़कामे दुनिया के लिह़ाज़ से शहीद समझा जाए, लेकिन ह़क़ीक़त में आख़िरत के लिह़ाज़ से शहीद न हो और उस मख़्सूस दर्जे और सवाब का मुस्तह़िक़ न हो जो शोहदा के लिए होता है। जैसे ग़ैर मुख़्लिस या रियाकार मुजाहिद।

4- चौथे जिस पर दोनों लिह़ाज़ से शहीद के अह़काम मक़्तूल पर जारी न किये जाएँ। जैसे हुकूमते इस्लामिया के ख़िलाफ़ बग़ावत में क़त्ल होने वाले या डाकाज़नी में मारे जाने वाले कि उन मक़्तूलों पर न सिर्फ़ यह कि शहीद के अह़काम जारी न होंगे बल्कि आ़म मुसलमानों के अह़काम भी उन पर जारी न होंगे। यानी दूसरों को इबरत दिलाने के लिए न उन को कफ़न दिया जाएगा, न नमाज़े जनाज़ा पढ़ी जाएगी न मुसलमानों के क़ब्रस्तान में दफ़्न किया जाएगा।

आयत के आख़िर में जो फ़रमाया गया وَلٰكِنْ لَّا تَشْعُرُوْنَ۝ यानी इस दुनिया में रहते हुए उन ह़वास के साथ बरज़ख़ की ज़िन्दगी में शोहदा को तुम समझ नहीं सकते, क्योंकि इस आ़लमे दुनिया की कैफ़ियत और हालात और हैं और मरने के बाद आ़लमे बरज़ख़ की कैफ़ियात और अह़वाल और हैं तो इस आ़लमे दुनिया में रह कर इन्सान न तो पूरी तरह़ आ़लमे बरज़ख़ की कैफ़ियात और अह़वाल को समझ सकता है और न उन को पूरी तरह़ समझ सकता है और इस की मिसाल बिलकुल उसी तरह़ है जैसा कि एक बच्चा माँ के पेट में रहते हुए पैदाइश से पहले इस आ़लमे दुनिया की कैफ़ियात और अह़वाल को नहीं समझ सकता। इसलिए कोई बात चाहे हमारी समझ में आये या न आये, जब क़ुर्आन व ह़दीस इस को बयान कर दे तो मोमिन का इस पर ईमान लाना और यक़ीन करना ज़रूरी है।

(तफ़्सील के लिए देखें सूरः आले इमरान आयत नं० 169-171)

155-157 وَلَنَبْلُوَنَّكُمْ بِشَيْءٍ مِّنَ الْخَوْفِ وَالْجُوْعِ وَنَقْصٍ مِّنَ الْاَمْوَالِ وَالْاَنْفُسِ وَالثَّمَرٰتِ ؕ وَبَشِّرِ الصّٰبِرِيْنَ۝ الَّذِيْنَ اِذَآ اَصَابَتْهُمْ مُّصِيْبَةٌ ۙ قَالُوْٓا اِنَّا لِلّٰهِ وَاِنَّآ اِلَيْهِ رٰجِعُوْنَ۝ اُولٰٓئِكَ عَلَيْهِمْ صَلَوٰتٌ مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرَحْمَةٌ ۟ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُهْتَدُوْنَ۝

दुनिया का इम्तिहान-

इस आयत में भी आज़्माइश व इम्तिहान का भी ज़िक्र फ़रमाया और 'लाम' ताकीद और 'नून' सक़ीला के साथ ताकीद (ग्रामर के शब्द) करके फ़रमाया कि हम तुम को ज़रूर से ज़रूर जाँच में डालेंगे और इम्तिहान लेंगे। कभी ख़ौफ़ होगा कभी भूख से दो चार होगे, माल कम होगा, जानें भी कम होंगी। रिश्तेदार औलाद और क़रीबी लोग फ़ौत होंगे, फलों में कमी होगी इस में तमाम हालात का ज़िक्र आ गया, दुनिया में दुश्मनों का ख़ौफ़ क़हत साली, सैलाब और ज़लूज़ले तिजारतों में नुक़्सान, मकानात का गिर जाना, माल का चोरी होना, कहीं दफ़न करके भूल जाना, रखे हुए मालों का बर्बाद हो जाना, कारख़ानों का बन्द हो जाना, मशीनों का ख़राब हो जाना, बिजली बन्द हो जाना, रिश्तेदारों और अह़बाब की मौतें होना, वबाई (Epidemic) मर्ज़ों का फैल जाना, बाग़ों में फल कम आना बहुत ज़्यादा फल आकर आंधी से गिर जाना, खेतों में कीड़ा लग जाना, टिड्डी आ जाना, इन सब की तरफ़ इशारा हो गया।

मोमिन बन्दे सब्र से काम लेते हैं जिस तरह़ की भी कोई मुसीबत पेश हो उसे अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से समझते हैं, अल्लाह की मर्ज़ी पर राज़ी रहते हैं और सवाब की उम्मीद रखते हैं। जो मुसीबतें पेश आती हैं वह गुनाहों की सज़ा के तौर पर पेश आती हैं और कफ़्फ़ारा के लिए या इम्तिहान के लिए भी दर्जात के लिए भी। क़ुर्आन मजीद से और अहादीस शरीफ़ा से यह बातें वाज़ेह़ तौर पर मालूम होती हैं।

एक ह़दीस में है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "ऐ अबू बक्र! तुम और तुम्हारे अस्ह़ाब मोमिनीन दुनिया में गुनाहों का बदला पा लेंगे यहाँ तक कि अल्लाह से इस ह़ाल में मुलाक़ात करेंगे कि कोई गुनाह बाक़ी न रहेगा, लेकिन दूसरे लोगों (यानी काफ़िर) के गुनाह जमा किये जाएँगे। यहाँ तक कि उन सब की सज़ाएँ उन को क़ियामत के दिन मिलेंगी।" **(इब्ने कसीर)**

दुनिया की तक्लीफ़-

ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला जिस के साथ ख़ैर का इरादा फ़रमाते हैं उसे तक्लीफ़ में शामिल (Involve) फ़रमा देते हैं।"

(सह़ीह़ बुख़ारी भाग 1, पेज नं० 443)

एक ह़दीस में है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, "बेशक जब बन्दे के लिए अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से कोई दर्जा मुक़र्रर कर दिया गया, जिस दर्जे में वह अपने अ़मल की वजह से न पहुँच सकता हो तो अल्लाह तआ़ला उस को जिस्म, या माल में, या औलाद में (तक्लीफ़ों के साथ) मुब्तिला फ़रमा देते हैं फिर इस पर उस को सब्र दे देते हैं यहाँ तक कि उसे उसी दर्जे में पहुँचा देते हैं जो पहले से उस के लिए तय फ़रमा दिया था।" **(अह़मद व अबूदाऊद कमा फ़िल् मिश्कात पेज नं० 137)**

ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, "मुसलमान को जो भी कोई तक्लीफ़ मर्ज़, फ़िक्र, रंज, ग़म पहुँच जाए, यहाँ तक कि अगर कांटा भी लग जाए तो अल्लाह तआ़ला उस के ज़रिये उस के गुनाहों का कफ़्फ़ारा बना देते हैं।" **(सह़ीह़ बुख़ारी भाग 2, पेज नं० 442)**

एक सहाबिया थीं, हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) उन के पास तशरीफ़ ले गये वह कपकपा रही थीं। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, “क्या बात है, क्यों कपकपा रही हो?” उन्होंने कहा, “इस का बुरा हो बुख़ार चढ़ गया है।” आप ने फ़रमाया, “बुख़ार को बुरा न कहो क्योंकि वह आदम की ख़ताओं को उसी तरह़ ख़त्म कर देता है जैसे भट्टी लोहे के मैल-कुचैल को ख़त्म कर देती है।” **(सह़ीह़ मुस्लिम)**

हज़रत अनस (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, “जब अल्लाह तआ़ला अपने बन्दे के साथ ख़ैर का इरादा फ़रमाते हैं तो उस को दुनिया ही में सज़ा दे देते हैं और जब अल्लाह तआ़ला किसी बन्दे के साथ शर (बुराई) का इरादा फ़रमाते हैं तो उस के गुनाहों की सज़ा को रोके रखते हैं। यहाँ तक कि उस को क़ियामत के दिन पूरी सज़ा दे देंगे।” **(तिर्मिज़ी)**

हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, “मोमिन मर्द और मोमिन औ़रत को जान माल और औलाद में बराबर तक्लीफ़ पहुँचती रहती है। यहाँ तक कि अल्लाह तआ़ला उस से इस ह़ाल में मुलाक़ात करेगा कि उस का कोई गुनाह भी बाक़ी न रहा होगा।” **(तिर्मिज़ी)**

हज़रत अनस (रज़ि०) से रिवाायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, “जिस मुसलमान के तीन बच्चे बालिग़ (Mature) होने से पहले फ़ौत (Expire) हो गये हों तो अल्लाह तआ़ला उन बच्चों पर रहमत फ़रमाने की वजह से इस मुसलमान को (यानी उन के वालिद को) जन्नत में दाख़िल फ़रमा देंगे।” **(बुख़ारी)**

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि०) ने बयान फ़रमाया, “एक मर्तबः औ़रतें जमा हुईं। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने उन के सामने नसीह़त की बातें फ़रमाईं और यह भी फ़रमाया कि जिस के तीन बच्चे फ़ौत हो गये वह उस के लिए दोज़ख़ से बचाने के लिए आड़ बन जाएँगे। एक औ़रत ने कहा कि अगर किसी के दो बच्चे फ़ौत हुए हों तो आप ने फ़रमाया कि अगर किसी के दो बच्चे भी फ़ौत हुए हों तो उस का भी यही हुक्म है।” **(बुख़ारी)**

सुनन तिर्मिज़ी में है कि जब बन्दे का कोई बच्चा फ़ौत हो जाता है तो अल्लाह तआ़ला अपने फ़रिश्तों से फ़रमाते हैं, “तुम ने मेरे बन्दे के बच्चे को क़ब्ज़ कर लिया।” वह कहते हैं, ‘हाँ!’ फिर अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं, “तुम ने उस के दिल के टुकड़े को क़ब्ज़ कर लिया।” वह कहते हैं, ‘हाँ!’ अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं, “मेरे बन्दे ने क्या कहा?” वह अ़र्ज़ करते हैं, “उस ने आप की तअ़रीफ़ की और **‘इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन’** पढ़ा।” इस पर अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं, “मेरे बन्दे के लिए जन्नत में एक घर बना दो और उस का नाम ‘बैतुल ह़म्द’ रख दो।”

एक ह़दीस में इर्शाद है कि मुसलमान मर्द या औ़रत को, अगर कोई तक्लीफ़ पहुँच जाए और उसको बाद में याद करे चाहे उस को काफ़ी ज़माना गुज़र चुका हो और उस वक़्त फिर **‘इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन’** पढ़े तो अल्लाह तआ़ला उस को फिर उसी जैसा अज्र अ़ता फ़रमाते हैं जैसा कि उस दिन अ़ता फ़रमाया था जिस दिन उस को मुसीबत पहुँची थी। **(रवाहु अह़मद व बैहक़ी)**

मुसीबतों में सब्र-

हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, “जब तुम में से किसी की जूती का तस्मा (फ़ीता या बद्धी) टूट जाए तब भी **‘इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन’** पढ़े, क्योंकि यह भी मुसीबतों में से एक मुसीबत है।” **(मिश्कात)**

हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, “जिस ने मुसीबत के वक़्त **‘इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन’** पढ़ा तो अल्लाह तआ़ला उसकी मुसीबत की तलाफ़ी फ़रमा देंगे और उसकी आख़िरत अच्छी करेंगे और उस को उस चीज़ के बदले अच्छी चीज़ अ़ता फ़रमाएँगे।” **(दुर्रे मन्सूर)**

(सहीह़ बुख़ारी पेज नं० 171 भाग 1) और सही मुस्लिम में एक क़िस्सा लिखा है जो हज़रत अनस (रज़ि०) से रिवायत है वह फ़रमाते हैं, “एक मर्तबः रसूल (सल्ल०) का एक औ़रत के पास से गुज़र हुआ वह एक क़ब्र के पास रो रही थी आप (सल्ल०) ने उस से फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला से डर और सब्र कर, उस औ़रत ने आप को पहचाना नहीं, कहने लगी कि हटो मुझे छोड़ दो क्योंकि तुम्हें वह मुसीबत नहीं पहुँची जो मुझे पहुँची है। (अगर तुम्हें ऐसी मुसीबत पहुँचती तो पता चलता, कैसी मुसीबत है उस के बाद आप तशरीफ़ ले गये) उस औ़रत से किसी ने कहा कि (तुझे मालूम है किस को तूने बेढंगा जवाब दे दिया है) आप नबी करीम (सल्ल०) थे। यह सुन कर वह औ़रत आप (सल्ल०) के पास हाज़िर हुई, दरवाज़े पर पहुँची तो वहाँ दरबान (चौकीदार) न पाये (हालाँकि उस को ख़याल था कि आप बहुत ठाठ-बाट से रहते होंगे और आप (सल्ल०) के दरवाज़े पर बादशाहों की तरह़ दरबान होंगे यह देखकर हैरत में रह गई कि मुह़म्मद (सल्ल०) की कैसी सादा ज़िन्दगी है) कहने लगी, “या रसूलल्लाह (सल्ल०) मैं आप को पहचानी नहीं (इसलिए ऐसा जवाब दिया)।” आप ने फ़रमाया, “असली सब्र वही है जो ताज़ा-ताज़ा मुसीबत के मौक़े पर हो।” (क्योंकि वक़्त गुज़र जाने पर ख़ुद ही सब्र आ जाता है।)

सब्र की ह़क़ीक़त-

इस ह़दीस में उसी ख़ास बात की तरफ़ तवज्जोह दिलाई गई है कि क़ुर्आन व ह़दीस में जो सब्र की फ़ज़ीलतें हैं उस से वह सब्र मुराद है जो ऐन मुसीबत और तक्लीफ़ के वक़्त हो। नया-नया हाद्सा हुआ हो, अचानक किसी की मौत हो गई हो या रक़म खो गई हो जिससे दिल रंजीदा हो उस वक़्त अगर हम ने सब्र कर लिया तो उस सब्र की बहुत बड़ी फ़ज़ीलत है। बल्कि ह़क़ीक़त में सब्र ही वह है जो दिल दुःखी होने के वक़्त हो, क्योंकि जैसे-जैसे वक़्त गुज़रता जाता है मुसीबत का एह़सास कम होता जाता है। यहाँ तक कि कुछ दिन बाद तक्लीफ़ का बिल्कुल एह़सास नहीं रहता। वक़्त गुज़र जाने पर जब मुसीबत भूल भुलैया हो जाती है तो यह न कोई सब्र है और न उसकी कोई फ़ज़ीलत है, इस में मोमिन काफ़िर सब बराबर हैं। जिस सब्र पर मोमिन से अज्र का वादा है उस से वही सब्र मुराद है जो उस वक़्त हो जब कि ग़म ताज़ा हो, दिल बेचैन हो तबीअ़त बेक़रार हो, बुरे-बुरे वस्वसे आ रहे हों, ज़बान अल्लाह

पाक पर एतिराज़ करने के लिए खुलना चाहती हो, नफ़्स ख़िलाफ़ शरअ़ कामों पर उभरता हो, ऐसी ह़ालत में सब्र करना अज्र है।

किसी के इन्तिक़ाल पर रोना पीटना–

नोट– जिस तरह़ ज़बान से बुरे कलिमात निकालना मना है और बेसब्री है उसी तरह़ अ़मल से कोई ऐसी ह़रकत करना जो सब्र के ख़िलाफ़ हो या ग़ैर मुस्लिमों का तरीक़ा हो उस को करना मना है। लोगों की आ़दत है कि मुसीबत दुःख तक्लीफ़ के वक़्त ख़ास तौर से जब कोई बच्चा फ़ौत हो जाता है तो अपने चेहरे पर तमांचे मारते हैं। दीवार पर सर देकर मारते हैं गिरेबान फाड़ते हैं, जाहिलाना अल्फ़ाज़ ज़बान से निकालते हैं और कहते हैं कि मेरा ही बच्चा रह गया था उसे अल्लाह ने मौत दी। यह सब जिहालत है और अल्लाह तआ़ला पर एतिराज़ करना कुफ़्र है।

ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, “वह हम में से नहीं है जो चेहरों पर तमांचे मारे और गिरेबान फाड़े और जाहिलियत की दुहाई दे।” **(सह़ीह़ मुस्लिम)**

कुछ इलाक़ों में लोग मरने वाले के ग़म में बाल मुंडवा देते हैं और ख़ासतौर से औ़रतें तो बहुत ही चीखती हैं। रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, “मैं इस से बरी हूँ जो (किसी की मौत पर) सर मूंडे आवाज़ें बुलन्द करे और कपड़े फाड़े।” **(सह़ीह़ मुस्लिम)**

औ़रतों की आ़दत होती है कि रिश्तेदारों की मौत पर चीखती और चिल्लाती हैं। घर से बाहर आवाज़ें जाती हैं और साल छः महीने तक जो भी कोई मेहमान आता है उस के सामने ज़बरदस्ती रोना जैसा चेहरा बनाती हैं और नौह़ा करना उन की एक ख़ास आ़दत है और मय्यित को पुकार कर कहती हैं कि ऐ मेरे प्यारे जवान बेटे! तुझे क्या हो गया मुझे किस के लिए छोड़ा तू ऐसा था, वैसा था।

ह़दीस में है, “अल्लाह की लअ़नत हो नौह़ा करने वाली पर और उसका नौह़ा सुनने वाली पर।” **(अबूदाऊद)**

‘रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने ‘नौह़ा’ (सोग) करने वाली औ़रत पर लअ़नत फ़रमाई है और साथ ही ‘नौह़ा’ सुनने वालों पर क्योंकि ‘नौह़ा’ करने वाली का ‘नौह़ा’ सुनने के लिए जो औ़रतें जमा हों वह ही ‘नौह़ा’ का सबब बनती हैं।’ इसलिए कि आ़मतौर से ‘नौह़ा’ करने वाली औ़रत तन्हाई में ‘नौह़ा’ नहीं करती।

“मुस्लिम शरीफ़ में है कि नौह़ा करने वाली मौत से पहले तौबः न करेगी तो वह इस ह़ाल में उठाई जाएगी कि उसके बदन में एक कुर्ता क़ित्‌रान का होगा और एक कुर्ता खुजली का होगा।”

अ़रब में क़ित्‌रान एक दरख़्त का पानी होता था जिस को खुजली वाले बदन पर लगाते थे उसकी ख़ासियत तेज़ाब जैसी थी उस से खुजली जल जाती थी जिससे आराम मिल जाता था। ‘नौह़ा’ करने वाली के जिस्म पर क़ियामत के दिन अव्वल तो खुजली मुसल्लत की जाएगी। दुनिया में रिवाज है कि जब किसी को ‘एग्ज़ीमा’ और ‘दाद’ हो जाता है तो उस पर तेज़ाब लगा देते हैं। इस से जो तक्लीफ़ होती है बयान

से बाहर है और यह तक्लीफ़ दुनिया में होती है। आख़िरत की तक्लीफ़ दुनिया की तक्लीफ़ों से कहीं ज़्यादा है (अल् अयाज़ु बिल्लाह) फिर दुनिया में जो तेज़ाब लगाते हों उस से 'एग्ज़ीमा' और 'दाद' अच्छा हो जाता है, लेकिन आख़िरत में चूंकि अ़ज़ाब देना मक़्सूद होगा, इसलिए क़ित्‌रान लगा होने से खुजली नहीं जाएगी बल्कि और शदीद तक्लीफ़ होती रहेगी।

नोट- बहुत से लोग जो आराम व राहत और दुःख व तक्लीफ़ की हिक्मत और इस बारे में क़ानून-ए-इलाही को नहीं जानते बहुत सी बेतुकी बातें कह जाते हैं कि जहान की सारी मुसीबतें मुसलमानों पर ही आ पड़ी हैं। कभी कहते हैं कि काफ़िरों को महल (बिल्डिंगें) और मुसलमानों को सिर्फ़ वादा हूर का। कभी कहते हैं कि अल्लाह तआ़ला ने ग़ैरों को ख़ूब नवाज़ा है और अपनों को फ़क्र व फ़ाक़ा और दूसरी मुसीबतों में मुब्तिला कर रखा है।

यह जाहिल इतनी बात नहीं जानते कि अपना होने की वजह से तो मुसलमानों को तक्लीफ़ों में मुब्तिला फ़रमाया जाता है ताकि उन के गुनाह माफ़ हों, दर्जात बुलन्द हों और आख़िरत में गुनाहों पर सज़ा न हो। हक़ीक़त में यह बहुत बड़ी मेहरबानी है कि दुनिया की थोड़ी बहुत तक्लीफ़ में मुब्तिला फ़रमा कर आख़िरत के सख़्त अ़ज़ाब से बचा दिया जाता है और काफ़िरों को चूंकि आख़िरत में कोई नेअ़मत नहीं मिलनी, कोई आराम नसीब नहीं होना बल्कि उन के लिए सिर्फ़ अ़ज़ाब ही अ़ज़ाब है, इसलिए उन को दुनिया ज़्यादा दे दी जाती है और उन पर मुसीबतें कम आती हैं। अगर किसी काफ़िर ने ख़िद्‌मते ख़ल्क़ वग़ैरह का कोई काम किया, तो उस का बदला उस को इस दुनिया में दे दिया जाता है, लेकिन आख़िरत में उसे ज़रा सी भी ख़ैर और मामूली सा भी आराम न मिलेगा और हमेशा दोज़ख़ में रहेगा।

सहीह़ बुख़ारी में ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) से रिवायत है उन्होंने बयान फ़रमाया, "रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्‌मत में ह़ाज़िर हुआ तो क्या देखता हूँ कि आप एक चटाई पर लेटे हुए हैं। चटाई और आप के जिस्म के दर्मियान कोई बिस्तर नहीं है। चटाई की बनावट ने आप के मुबारक पहलू में निशान डाल दिये हैं। आप (सल्ल०) ऐसे तकिये से टेक लगाये हुए हैं जो चमड़े का है, जिस के अन्दर खजूर की छाल भरी हुई है, मैंने अ़र्ज़ किया, 'या रसूलल्लाह, आप अल्लाह से दुआ़ कीजिए अल्लाह तआ़ला आप की उम्मत को ख़ूब माल दे दें क्योंकि फ़ारस और रोम में लोगों को वुसअ़त दी गई है और वह अल्लाह की अ़िबादत भी नहीं करते।' आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, 'ऐ इब्ने ख़त्ताब! क्या तुम (अभी तक) इसी (सोच विचार) में पड़े हो (तुम्हें मालूम नहीं) कि उन लोगों को उम्दह चीजें इस दुनिया में दे दी गई हैं।' (आख़िरत में उन को कुछ नहीं मिलना।)

एक रिवायत में है कि आप ने यूँ फ़रमाया, "क्या तुम इस पर राज़ी नहीं हो कि उन के लिए दुनिया और हमारे लिए आख़िरत हो।" **(मिश्कातुल् मसाबीह़)**

आयत नं० 158 से 167 तक

إِنَّ الصَّفَا وَالْمَرْوَةَ مِنْ شَعَائِرِ اللَّهِ ۖ فَمَنْ حَجَّ الْبَيْتَ أَوِ اعْتَمَرَ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِ أَنْ يَطَّوَّفَ بِهِمَا ۚ وَمَنْ تَطَوَّعَ خَيْرًا فَإِنَّ اللَّهَ شَاكِرٌ
عَلِيمٌ ۝ إِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ مَا أَنْزَلْنَا مِنَ الْبَيِّنَاتِ وَالْهُدَىٰ مِنْ بَعْدِ مَا بَيَّنَّاهُ لِلنَّاسِ فِي الْكِتَابِ ۙ أُولَٰئِكَ يَلْعَنُهُمُ اللَّهُ وَيَلْعَنُهُمُ
اللَّاعِنُونَ ۝ إِلَّا الَّذِينَ تَابُوا وَأَصْلَحُوا وَبَيَّنُوا فَأُولَٰئِكَ أَتُوبُ عَلَيْهِمْ ۚ وَأَنَا التَّوَّابُ الرَّحِيمُ ۝ إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا وَمَاتُوا وَهُمْ
كُفَّارٌ أُولَٰئِكَ عَلَيْهِمْ لَعْنَةُ اللَّهِ وَالْمَلَائِكَةِ وَالنَّاسِ أَجْمَعِينَ ۝ خَالِدِينَ فِيهَا ۖ لَا يُخَفَّفُ عَنْهُمُ الْعَذَابُ وَلَا هُمْ يُنْظَرُونَ ۝ وَإِلَٰهُكُمْ
إِلَٰهٌ وَاحِدٌ ۖ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الرَّحْمَٰنُ الرَّحِيمُ ۝ إِنَّ فِي خَلْقِ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ وَاخْتِلَافِ اللَّيْلِ وَالنَّهَارِ وَالْفُلْكِ الَّتِي
تَجْرِي فِي الْبَحْرِ بِمَا يَنْفَعُ النَّاسَ وَمَا أَنْزَلَ اللَّهُ مِنَ السَّمَاءِ مِنْ مَاءٍ فَأَحْيَا بِهِ الْأَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا وَبَثَّ فِيهَا مِنْ كُلِّ
دَابَّةٍ وَتَصْرِيفِ الرِّيَاحِ وَالسَّحَابِ الْمُسَخَّرِ بَيْنَ السَّمَاءِ وَالْأَرْضِ لَآيَاتٍ لِقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ۝ وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَتَّخِذُ مِنْ
دُونِ اللَّهِ أَنْدَادًا يُحِبُّونَهُمْ كَحُبِّ اللَّهِ ۖ وَالَّذِينَ آمَنُوا أَشَدُّ حُبًّا لِلَّهِ ۗ وَلَوْ يَرَى الَّذِينَ ظَلَمُوا إِذْ يَرَوْنَ الْعَذَابَ أَنَّ الْقُوَّةَ لِلَّهِ جَمِيعًا
وَأَنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعَذَابِ ۝ إِذْ تَبَرَّأَ الَّذِينَ اتُّبِعُوا مِنَ الَّذِينَ اتَّبَعُوا وَرَأَوُا الْعَذَابَ وَتَقَطَّعَتْ بِهِمُ الْأَسْبَابُ ۝ وَقَالَ الَّذِينَ
اتَّبَعُوا لَوْ أَنَّ لَنَا كَرَّةً فَنَتَبَرَّأَ مِنْهُمْ كَمَا تَبَرَّءُوا مِنَّا ۗ كَذَٰلِكَ يُرِيهِمُ اللَّهُ أَعْمَالَهُمْ حَسَرَاتٍ عَلَيْهِمْ ۖ وَمَا هُمْ بِخَارِجِينَ مِنَ النَّارِ ۝

अनुवाद-

(158) बेशक सफ़ा और मर्वः (नामी पहाड़) अल्लाह की निशानियों में से हैं तो जो व्यक्ति कअ़बः का ह़ज या उ़मरः करे, उस पर इन दोनों के बीच फेरे (सई) करने में कुछ गुनाह नहीं; और जो ख़ुशदिली से नेक काम करे, तो अल्लाह बड़ी क़द्र करने वाला, जानने वाला है। (159) जो लोग छिपाते हैं उस चीज़ को, जो 'हम' खुली हुई निशानियों और हिदायतों (निर्देशों) में से उतार चुके हैं, बाद इसके कि 'हम' उसे लोगों के लिए अल्लाह की किताब में खोल चुके हैं, यही लोग हैं कि अल्लाह उन पर लानत करता है और तमाम लोग लानत करते हैं; (160) सिवाय उनके जिन्होंने तौबः कर ली, और सुधार कर लिया, और साफ़-साफ़ बयान कर दिया तो उनकी तौबः क़ुबूल कर लेता हूँ, और 'मैं' बड़ा तौबः क़ुबूल करने वाला, रह़म वाला हूँ; (161) जिन लोगों ने कुफ़्र (इन्कार) किया, और कुफ़्र ही की ह़ालत में मर गये; उन पर अल्लाह की, फ़रिश्तों की, और तमाम इन्सानों की लानत है; (162) वे इस (लानत) में हमेशा-हमेश रहेंगे, न उनके अ़ज़ाब में कमी होगी और न उनको मोहलत ही मिलेगी। (163) और तुम्हारा इलाह, (पूज्य) एक ही इलाह है, 'उस' रह़मान और रह़ीम (करूणामय और दयावान) के सिवा कोई इलाह(पूज्य) नहीं। (164) बेशक आसमानों और ज़मीन को पैदा करने में, और रात-दिन के आने-जाने में, और किश्तियों में, जो लोगों के फ़ायदे की चीज़ें समुद्र में लेकर चलती हैं, और बारिश में जिसको अल्लाह ने आसमान से बरसाया; फिर उसके ज़रिये ज़मीन को, उसके मर जाने के बाद ज़िन्दा किया, और उसमें हर क़िस्म के जानदार (जीवधारी) फैलाए; और हवाओं के फेरने में, और बादल में जो(अल्लाह के हुक्म से) आसमान और धरती के बीच काम में लगे हैं, (इन सब में) अक्लमन्दों (बुद्धिमानों) के लिए निशानियाँ हैं। (165) और लोगों में कुछ ऐसे भी हैं जो अल्लाह के सिवा और को भी बराबर (समवर्ती पूज्य) ठहराते हैं; कि जैसी मुहब्बत अल्लाह से रखनी चाहिए, वैसी मुहब्बत

उनसे रखते हैं; और ईमान वाले जो हैं, उनको तो सबसे बढ़कर अल्लाह ही से मुहब्बत होती है; और क्या ही अच्छा होता कि इन ज़ालिमों को सुझाई दे जाता जो उस समय सुझाई देगा, जब अ़ज़ाब उनके सामने होगा; कि सारी ताक़त अल्लाह ही के अधीन है, और यह कि अल्लाह सख़्त अ़ज़ाब देने वाला है; (166) उस वक़्त (कुफ़्र के) अगुवाकार अपने पीछे चलने वालों से अलग हो जाएँगे और (अपनी आँखों से) अ़ज़ाब देख लेंगे, और उनके आपसी सम्बन्ध टूट जाएँगे; (167) और पीछे चलने वाले कह उठेंगे, ''क्या ही अच्छा होता! कि हमको फिर एक बार लौटकर दुनिया में जाने को मिल जाता,तो जैसे यह हमसे बेज़ार (विरक्त) हो गये, इसी तरह हम भी इनसे बेज़ार हो जाते''। यूँ तो अल्लाह उनके कारनामे सामने लाएगा, कि उनको ह़सरत होगी और वे आग से कभी निकल न सकेंगे।

आयत नं० 158 से 167 तक की व्याख्या

158 إِنَّ الصَّفَا وَالْمَرْوَةَ مِن شَعَآئِرِ اللَّهِ ۖ فَمَنْ حَجَّ الْبَيْتَ أَوِ اعْتَمَرَ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِ أَن يَطَّوَّفَ بِهِمَا ۚ وَمَن تَطَوَّعَ خَيْرًا فَإِنَّ اللَّهَ شَاكِرٌ عَلِيمٌ ﴿١٥٨﴾

फ़रमाने इलाही إِنَّ الصَّفَا وَالْمَرْوَةَ इमाम बुख़ारी व मुस्लिम और उन के अ़लावा दूसरे मुह़द्दिसीन ने बवास्ता उ़रवह (रज़ि०) ह़ज़रत आ़इशा (रज़ियल्लाहु अ़न्हा) से रिवायत नक़्ल की है, ह़ज़रत उरवह (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि मैंने ह़ज़रत आ़इशा (रज़ियल्लाहु अ़न्हा) से अ़र्ज़ किया, "आप अल्लाह तआ़ला के फ़रमान إِنَّ الصَّفَا وَالْمَرْوَةَ के बारे में क्या फ़रमाती हैं मैं तो यह समझता हूँ कि अगर कोई शख़्स इन दोनों के दर्मियान सअ़ी न करे तो उस पर कोई गुनाह नहीं, ह़ज़रत आ़इशा (रज़ियल्लाहु अ़न्हा) बोलीं भाँजे यह तुम ने ग़लत बात बयान की है अगर आयत के यही माने होते हैं जो तुम समझते हो فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِ أَن يَطَّوَّفَ के बजाय आयते करीमा में أَن لَّا يَطَّوَّفَ होता।

और यह आयते करीमा इस वास्ते नाज़िल की गई है कि अन्सार इस्लाम क़ुबूल करने से पहले 'मनात' नामी बुत के नाम का एह़राम बाँधा करते थे, चुनांचे जब वह एह़राम बाँधते तो 'सफ़ा' व 'मरवह' पहाड़ी पर दौड़ना बुरा समझते, तो इस के मुतअ़ल्लिक़ उन्होंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से दर्याफ़्त किया और अ़र्ज़ किया, "या रसूलल्लाह (सल्ल०) हम जाहिलियत में 'सफ़ा' व 'मरवह' पर सअ़ी करने को बुरा समझते थे तो अल्लाह तआ़ला ने इस के बारे में हुक्म नाज़िल फ़रमाया कि 'सफ़ा' व 'मरवा' यादगार ख़ुदावन्दी हैं, सो जो शख़्स ह़ज करे बैतुल्लाह का या उ़मरह करे, उस पर ज़रा भी गुनाह नहीं।"

और इमाम बुख़ारी (रह़०) ने आ़सिम बिन सुलेमान से नक़्ल किया है, फ़रमाते हैं, "मैंने ह़ज़रत अनस (रज़ि०) से 'सफ़ा' और 'मरवह' के बारे में दर्याफ़्त किया और कहा कि हम उन के दर्मियान सअ़ी करना उमूरे जाहिलियत में से समझते थे, जब इस्लाम की दौलत आई तो हम उस से रुक गये, इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा إِنَّ الصَّفَا नाज़िल फ़रमाई।"

इमाम ह़ाकिम ने ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि शयातीन ज़माने जाहिलियत में 'सफ़ा' व 'मरवह' के दर्मियान रात के वक़्त दौड़ते थे और उन दोनों पहाड़ों के दर्मियान बुत रखे हुए

थे, जब इस्लाम की दौलत आई तो मुसलमानों ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! हम 'सफ़ा' व 'मरवह' के दर्मियान 'सअ़ी' नहीं करेंगे क्योंकि हम यह चीज़ ज़माने जाहिलियत में किया करते थे, इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई।

इब्ने जरीर और इब्ने अबी हातिम ने सअ़ीद या इक्रमा के वास्ते से हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है फ़रमाते हैं, "मुआ़ज़ बिन जबल (रज़ि०), सअ़द बिन मुआ़ज़ (रज़ि०) और ख़ारजा बिन ज़ैद (रज़ि०) ने यहूद के उ़लमा की जमाअ़त से तौरेत की कुछ बातों के मुतअ़ल्लिक़ दर्याफ़्त किया तो यहूदियों ने उन हज़रात से इन बातों को छुपा लिया और उन के बयान करने से इन्कार किया इस पर अल्लाह तआ़ला ने उन यहूदियों के बारे में यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई।" إِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ
(तफ़सीर इब्ने अ़ब्बास)

आ़सिम बिन सुलेमान (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अनस बिन मालिक (रज़ि०) से इस आयत के बारे में पूछा तो उन्होंने कहा, "इब्दिता-ए-इस्लाम में हम सब उसे जाहिलियत की रस्म समझते थे, लिहाज़ा उसे छोड़ दिया तब यह आयत नाज़िल हुई।" **(बुख़ारी)**

अल्लाह तआ़ला ने इस आयत में ख़बर दी है कि 'सफ़ा' और 'मरवह' दोनों पहाड़ियाँ उस के दीन की निशानियों में से हैं, इसलिए जो कोई बैतुल्लाह का 'हज' करे या 'उ़मरह' करे, उस के लिए इन दोनों के दर्मियान सअ़ी करने में कोई हर्ज नहीं है।

उम्मे सल्मा रज़ियल्लाहु अ़न्हा कहती हैं कि मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) को यह कहते हुए सुना, "अगर किसी मुसलमान को कोई मुसीबत पहुँचे और उस पर वह यह कहे जिस को अल्लाह ने हुक्म दिया है। ***"इन्ना लिल्लाहि वइन्ना इलैहि राजिऊन" "अल्लाहुम्मः अजिरनी फ़ी मुसीबति फ़ख़्लुफ़ ली ख़ैरम मिन्हा"*** (ऐ अल्लाह! मेरी परेशानी का मुझे सवाब दे और मुझे इस का बदल अ़ता फ़रमाए) तो अल्लाह तआ़ला उसे इस से बेहतर अ़ता फ़रमाते हैं।" वह कहती हैं, "जब अबू सल्मा फ़ौत हुए तो मैंने सोचा कि अबू सल्मा से कौन बेहतर हो सकता है, जिस का घराना मदीना हिजरत करने वालों में पहला है (बहरहाल) मैंने यह कलिमात पढ़ लिये तो अल्लाह ने मुझे नेअ़मुल् बदल के तौर पर रसूलुल्लाह (सल्ल०) अ़ता फ़रमा दिये।" **(मुस्लिम)**

हज़रत उ़रवह (रज़ि०) से रिवायत है कि मैंने उम्मुल् मोमिनीन हज़रत आ़इशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से पूछा (उस वक़्त मैं कम उ़म्र था), "क्या आप ने अल्लाह के इस कलाम पर ग़ौर किया है? (إِنَّ الصَّفَا ......) मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि अगर कोई सफ़ा-मरवह का तवाफ़ न करे तो कोई हर्ज नहीं है।"

हज़रत आ़इशा (रज़ियल्लाहु अ़न्हा) ने कहा, "बिल्कुल नहीं, अगर ऐसा होता जैसे तुम कहते हो तो आयत यूँ होती فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِ أَنْ يَطُوفَ بِهِمَا।" **(बुख़ारी)**

इस आयते करीमा का शाने नुज़ूल (आयत के नाज़िल होने का कारण) यह बयान किया गया है कि 'औस व ख़ज़रज' के लोग इस्लाम से पहले (मनात) बुत की अ़िबादत करते थे, जो 'मुशल्लल' नामी स्थान

में था, और उस का 'तल्बिया' पढ़ते थे और जो लोग उस बुत का 'तल्बिया' पढ़ते थे वह 'सफ़ा' व 'मरवह' के दर्मियान 'सअ़ी' (दौड़ने) को गुनाह समझते थे, इसलिए इस्लाम लाने के बाद उन्होंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से पूछा, "हम लोग जाहिलियत के दौर में सफ़ा व मरवह के दर्मियान 'सअ़ी' को गुनाह समझते थे, अब इस बारे में इस्लाम का क्या हुक्म है? तब कुर्आन की यह आयत नाज़िल हुई।

'इमाम जुहरी', अबू बक्र बिन अ़ब्दुर्रहमान से एक दूसरी रिवायत बयान करते हैं कि कुछ लोग 'सफ़ा' व 'मरवह' के दर्मियान 'सअ़ी' को दौरे जाहिलियत का अ़मल समझते थे और अन्सार के कुछ लोगों ने कहा, "हमें बैतुल्लाह के 'तवाफ़' का हुक्म तो दिया गया है, मगर 'सफ़ा' व 'मरवह' के दर्मियान 'सअ़ी' का नहीं तो यह आयत नाज़िल हुई।"

एक और रिवायत है कि 'सफ़ा व मरवह' दोनों पहाड़ियों पर 'असाफ़' और 'नायला' नाम के दो बुत थे, दौरे जाहिलियत में लोग उन दोनों के दर्मियान दौड़ते थे, इस्लाम लाने के बाद दोनों बुतों को फेंक दिया गया तो लोगों ने कहा, "सअ़ी दोनों बुतों के लिए थी, इसलिए 'सअ़ी' करना बन्द कर दिया।" उस पर अल्लाह ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई,

हज़रत अबूबक्र बिन अ़ब्दुर्रहमान (रज़ि०) कहते हैं कि मुम्किन है इन तमाम ही क़िस्म के लोगों के बारे में यह आयत उतरी हो।

'सहीह मुस्लिम' में हज़रत जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह (रज़ि०) से रिवायत है, "रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने बैतुल्लाह के तवाफ़ के बाद 'सफ़ा व मरवह' के दर्मियान 'सअ़ी' की और फ़रमाया 'सअ़ी' करो, क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे ऊपर 'सअ़ी' को वाजिब क़रार दिया है।" और हज़रत आ़इशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने फ़रमाया, "सफ़ा व मरवा के दर्मियान 'तवाफ़' रसूलुल्लाह (सल्ल०) की सुन्नत है, इसलिए किसी के लिए उसे छोड़ देना जायज़ नहीं।" **(सहीहैन)**

नोट-

'सफ़ा व मरवह' के दर्मियान 'सअ़ी' हज़रत हाजिरा (अ़लै०) की दौड़ की यादगार है। जब खाना और पानी ख़त्म हो गया और अपने बच्चे को प्यास के मारे बिलबिलाते देखा तो सख़्त परेशानी की हालत में अल्लाह के सामने आजिज़ी व इन्किसारी के साथ दोनों पहाड़ियों के दर्मियान दौड़ लगाने लगीं, उस पर अल्लाह की रहमत जोश में आई और 'ज़मज़म' का चश्मा (स्रोत) फूट पड़ा, और उन की परेशानी दूर हुई।

इसलिए सअ़ी करने वाले को चाहिए कि दिल में अल्लाह के सामने अपनी ज़िल्लत व मोहताजी का ख़याल करे, अपने गुनाहों से माफ़ी माँगता रहे, और दुआ़ करता रहे कि अल्लाह उस के दिल की हालत बेहतर बना दे और उस के ऐबों को दूर कर दे।

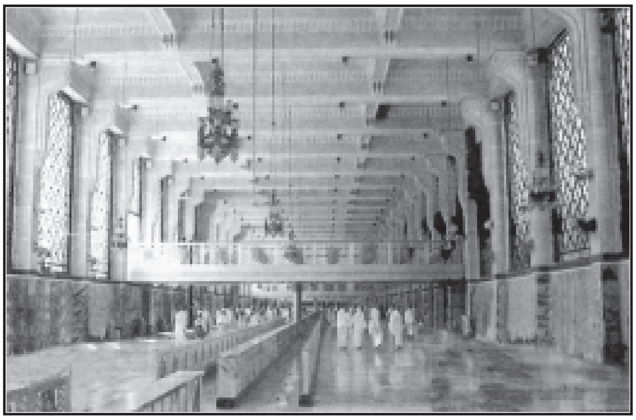

सफ़ा और मरवह के दौरान सअ़ी की जगह

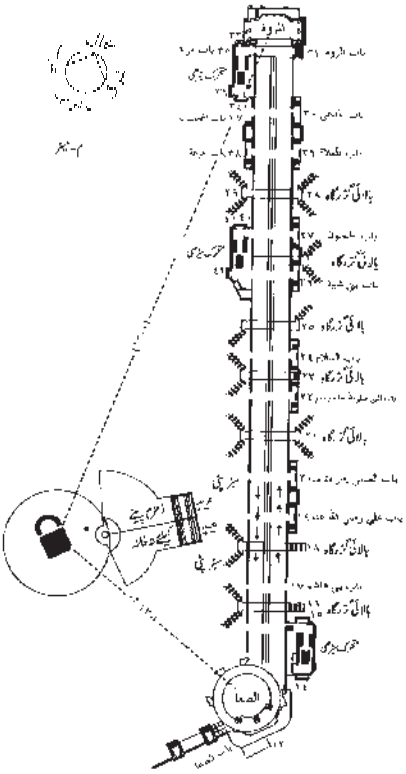

सफ़ा और मरवह के दौरान सअ़ी की जगह का नक़्शा

159 إِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ مَا أَنزَلْنَا مِنَ الْبَيِّنَاتِ وَالْهُدَىٰ مِن بَعْدِ مَا بَيَّنَّاهُ لِلنَّاسِ فِي الْكِتَابِ ۙ أُولَٰئِكَ يَلْعَنُهُمُ اللَّهُ وَيَلْعَنُهُمُ اللَّاعِنُونَ ۝

इस आयत में उन लोगों के लिए सख़्त वअ़ीद है, जो रसूलों के ज़रिये भेजी गई हिदायत व रहनुमाई को लोगों से छिपाते हैं। यह आयत तो यहूद व नसारा के उन उ़लमा के बारे में नाज़िल हुई थी जिन्होंने नबी करीम (सल्ल०) की सच्चाई की निशानियों को छिपाया था, लेकिन इस का हुक्म आ़म है, हर वह शख़्स जो अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से नाज़िल शुदा ह़क़ की निशानियों को छिपाएगा, वह इस वअ़ीद में शामिल होगा। ह़क़ को छुपाने का इतना बड़ा जुर्म है कि अल्लाह तआ़ला ऐसे लोगों को अपनी रह़मत व क़ुर्बत से दूर कर देता है और सारी दुनिया की लअ़नत उन पर बरसने लगती है।

160 إِلَّا الَّذِينَ تَابُوا وَأَصْلَحُوا وَبَيَّنُوا فَأُولَٰئِكَ أَتُوبُ عَلَيْهِمْ ۚ وَأَنَا التَّوَّابُ الرَّحِيمُ ۝

इस आयत में कहा गया है कि जो अपने गुनाहों से तौबः करेगा और अपना सुधार कर के ह़क़ की जो बात छुपाई थी उसे लोगों के सामने बयान कर देगा तो अल्लाह तआ़ला उस की तौबः क़ुबूल कर लेगा।

161 إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا وَمَاتُوا وَهُمْ كُفَّارٌ أُولَٰئِكَ عَلَيْهِمْ لَعْنَةُ اللَّهِ وَالْمَلَائِكَةِ وَالنَّاسِ أَجْمَعِينَ ۝

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने ख़बर दी है कि जो अल्लाह तआ़ला का इन्कार करेगा और उसी ह़ाल में उसकी मौत आ जाएगी, तो उस पर अल्लाह, उस के फ़रिश्तों और तमाम इन्सानों की लअ़नत होगी और जहन्नम उस का हमेशा के लिए ठिकाना बन जाएगा। न अ़ज़ाब में कमी की जाएगी और न अल्लाह उस पर रह़मत की निगाह डालेगा।

162 خَالِدِينَ فِيهَا ۖ لَا يُخَفَّفُ عَنْهُمُ الْعَذَابُ وَلَا هُمْ يُنظَرُونَ ۝

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने ख़बर दी है कि उस के अ़लावा कोई मअ़बूद नहीं, वह अपनी ज़ात व सिफ़ात में अकेला है, कोई उस का शरीक नहीं, उस के अ़लावा कोई ख़ालिक़ (पैदा करने वाला) नहीं, इसलिए अ़िबादत की तमाम सूरतें सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला के साथ ख़ास हैं।

163 وَإِلَٰهُكُمْ إِلَٰهٌ وَاحِدٌ ۖ لَّا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الرَّحْمَٰنُ الرَّحِيمُ ۝

अल्लाह तआ़ला ने अपनी वह़दानियत (एकेश्वरवाद) की दलील बयान करने के बाद इस आयत में विस्तार से दलायल का ज़िक्र फ़रमाया है और इन्सान को दअ़वते फ़िक्र दी है कि ज़रा इन निशानियों में ग़ौर करो, क्या यह अल्लाह के क़ादिर होने के दलायल नहीं हैं?

आसमान की बुलन्दी, उस की वुस्अ़त, उस में सूरज, चाँद और सितारों की दुनिया, ज़मीन की पस्ती, उस का हमवार होना, उस के पहाड़, उस के समुद्रों, उस की आबादियाँ और नफ़ा बख़्श चीज़ें, रात व दिन की गर्दिश, गर्मी, सर्दी, मौसम का एतिदाल, रात और दिन का छोटा बड़ा होना, कश्तियों और जहाज़ों का समुद्रों में सामान लेकर चलना, समुद्रों और हवाओं का जारी रहना, आसमान से बारिश का नुज़ूल, जिस से मुर्दा ज़मीन में जान आ जाती है और मुख़्तलिफ़ क़िस्म के पेड़-पौधे और खाने की चीज़ों का पैदा होना, ज़मीन में मुख़्तलिफ़ क़िस्म के जानवर और इन्सान के लिए उन की तस्ख़ीर, हवाओं का चलना, ठंडी, गर्मी और हवाओं का बदलना, बादलों का बारिश का पानी लेकर चलना, जो अल्लाह के हुक्म से दुनिया के गोशे-गोशे में पहुँचते रहते हैं। यह सारी चीज़ें अल्लाह के वजूद और उस की क़ुद्रत पर दलालत करती हैं और हर साह़िबे अ़क़्ल को अल्लाह पर ईमान लाने के लिए यह निशानियाँ काफ़ी हैं।

164 إِنَّ فِي خَلْقِ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ وَاخْتِلَافِ اللَّيْلِ وَالنَّهَارِ وَالْفُلْكِ الَّتِي تَجْرِي فِي الْبَحْرِ بِمَا يَنفَعُ
النَّاسَ وَمَا أَنزَلَ اللَّهُ مِنَ السَّمَاءِ مِن مَّاءٍ فَأَحْيَا بِهِ الْأَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا وَبَثَّ فِيهَا مِن كُلِّ دَابَّةٍ
وَتَصْرِيفِ الرِّيَاحِ وَالسَّحَابِ الْمُسَخَّرِ بَيْنَ السَّمَاءِ وَالْأَرْضِ لَآيَاتٍ لِّقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ۝

अल्लाह तआ़ला ने अपने वजूद, अपनी क़ुद्रत, अपनी तौह़ीद और अपनी रह़मत की निशानियाँ इसलिए बयान कर दी हैं, ताकि बन्दे सिर्फ़ उस की अ़िबादत करें और सिर्फ़ उसी से मुह़ब्बत करें, उस की अ़िबादत और उसकी मुह़ब्बत में किसी दूसरे को शरीक न बनाएँ।

लेकिन मुशिरकीन का ह़ाल इस से अलग होता है, वह अल्लाह के बजाय दूसरों की अ़िबादत करते

हैं, और अपने मअ़बूदों से ऐसी मुह़ब्बत करते हैं जैसी अल्लाह से की जानी चाहिए और जो सच्चे ईमान वाले होते हैं, वह सही इ़ल्म रखने की वजह से अल्लाह के साथ किसी को शरीक नहीं बनाते, सिर्फ़ उसी की इ़बादत करते हैं, उसी पर भरोसा करते है और ज़िन्दग़ी के तमाम कामों में सिर्फ़ अल्लाह ही की जानिब से पनाह लेते हैं।

"शरहुल् मनाज़िल" बाबुत्तौबः में शिर्क की दो क़िस्में बयान की हैं, जिसमें एक क़िस्म इस तरह़ है- **'शिर्क अकबर'** और **'शिर्क अस्ग़र'** शिर्क अकबर को अल्लाह तआ़ला बग़ैर तौबः के माफ़ नहीं करता और "वह यह है कि बन्दा किसी को अल्लाह का शरीक बना ले और उस से वैसी ही मुह़ब्बत करे जैसी अल्लाह से की जानी चाहिए।" और यह वह शिर्क है, जिस में मुश्रिकीन अपने झूठे मअ़बूदों (उपास्यों) को रब्बुल् आ़लमीन (पालनकर्ता) के बराबर क़रार देते थे और यह बराबरी मुह़ब्बत, तअ़ज़ीम और इ़बादत में होती है।

जैसा कि अक्सर मुश्रिकीन का ह़ाल है! बल्कि अक्सर मुश्रिकीन तो अपने मअ़बूदों से अल्लाह के मुक़ाबिले में ज़्यादा मुह़ब्बत करते हैं और उन को याद करके ज़्यादा ख़ुश होते हैं। अगर उन के मअ़बूदों और उन का जिन्हें उन्होंने अपना मअ़बूद बना लिया है, कोई शख़्स अदब व एह़तिराम के साथ नाम नहीं लेता, तो इतना नाराज़ होते हैं जितना कि वह अल्लाह का नाम बेअदबी से लेने वाले पर नहीं होते और अगर कोई अल्लाह के मुक़र्रर किये हुए ह़ुदूद को पामाल करता है तो उन के कानों पर जूँ तक नहीं रेंगती, बल्कि थोड़ी सी दुनियावी लालच के लिए फ़ौरन ख़ुश हो जाते हैं, जैसा कि कुछ हुआ ही नहीं था।

165 وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّتَّخِذُ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ اَنْدَادًا يُّحِبُّوْنَهُمْ كَحُبِّ اللّٰهِ ؕ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَشَدُّ حُبًّا لِّلّٰهِ ؕ
وَلَوْ يَرَى الَّذِيْنَ ظَلَمُوْٓا اِذْ يَرَوْنَ الْعَذَابَ ۙ اَنَّ الْقُوَّةَ لِلّٰهِ جَمِيْعًا ۙ وَّاَنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعَذَابِ ۝

इस में मुश्रिकीन के लिए धमकी है कि जब वह ज़ालिम, अ़ज़ाब को अपनी आँखों से देख लेंगे और अपने आप को इस में गिरफ़्तार पाएँगे, तब शायद उन्हें यक़ीन हो जाएगा कि अस्ली बादशाहत सिर्फ़ अल्लाह के लिए है और आसमान व ज़मीन के दर्मियान एक तिन्का भी उस से बाहर नहीं।

(तफ़्सील के लिए देखें अल् ज़ुमर आयत नं० 45)

ह़ज़रत इब्ने मसऊद (रज़ि०) से रिवायत है, नबी करीम (सल्ल०) ने एक बात फ़रमाई और मैंने दूसरी। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जो शख़्स इस ह़ाल में मर गया कि किसी को अल्लाह का शरीक समझता रहा तो वह आग में दाख़िल होगा।" और मैं (अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद इस मुबारक क़ौल की तश्रीह़ में) कहता हूँ, "जिस शख़्स को मौत इस ह़ाल में आई कि उस ने अल्लाह के साथ किसी को शरीक नहीं किया तो वह जन्नत में जाएगा।" **(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् तफ़्सीर, बाब 22, ह़दीस 4497)**

166 اِذْ تَبَرَّاَ الَّذِيْنَ اتُّبِعُوْا مِنَ الَّذِيْنَ اتَّبَعُوْا وَرَاَوُا الْعَذَابَ وَتَقَطَّعَتْ بِهِمُ الْاَسْبَابُ ۝

क़ियामत के दिन मुश्रिकीन के लिए वई़द बयान की गई है, उस दिन मुश्रिकीन के बातिल मअ़बूदान जिन्हें पूजा गया था, जब अ़ज़ाब को अपनी आँखों के सामने देखेंगे तो अपनी इ़बादत करने वालों

से बरी होने का इज़्हार करेंगे और तमाम रिश्ते कट जाएँगे जिन की बुनियाद पर वह जमा होते थे।

167 وَقَالَ الَّذِينَ اتَّبَعُوا لَوْ أَنَّ لَنَا كَرَّةً فَنَتَبَرَّأَ مِنْهُمْ كَمَا تَبَرَّءُوا مِنَّا ۗ كَذَٰلِكَ يُرِيهِمُ اللَّهُ أَعْمَالَهُمْ حَسَرَاتٍ
عَلَيْهِمْ ۖ وَمَا هُمْ بِخَارِجِينَ مِنَ النَّارِ

जब क़ियामत के दिन मुश्रिकीन देखेंगे कि उन के मअ़बूदाने बातिल ने उन से बरी होने का एलान कर दिया है तो दुनिया में अपने किये पर नदामत का इज़्हार करेंगे और कहेंगे, “ऐ काश! हम दुबारा दुनिया में लौटा दिये जाते, तो उन से हम भी बरी हो जाते और एक अल्लाह की अ़िबादत करते।” लेकिन वह अपने क़ौल में झूठे होंगे बल्कि अगर उन्हें लौटा दिया जाता तो फिर वही करते जो पहले कर रहे थे। जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने इस के बारे में बता दिया है और कहा, “अल्लाह तआ़ला उन के बुरे आ़माल उन के सामने पेश कर देगा, जिन्हें वह ह़स्रत व अफ़्सोस की निगाहों से देखेंगे, लेकिन उस वक़्त पछताने से कुछ नहीं होगा।” अब तो जहन्नम ही ठिकाना होगा, जहाँ से वह कभी भी नहीं निकल पाएँगे।

आयत नं० 168 से 176 तक

يَا أَيُّهَا النَّاسُ كُلُوا مِمَّا فِي الْأَرْضِ حَلَالًا طَيِّبًا وَلَا تَتَّبِعُوا خُطُوَاتِ الشَّيْطَانِ ۚ إِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُبِينٌ ﴿١٦٨﴾ إِنَّمَا يَأْمُرُكُمْ بِالسُّوءِ
وَالْفَحْشَاءِ وَأَنْ تَقُولُوا عَلَى اللَّهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿١٦٩﴾ وَإِذَا قِيلَ لَهُمُ اتَّبِعُوا مَا أَنْزَلَ اللَّهُ قَالُوا بَلْ نَتَّبِعُ مَا أَلْفَيْنَا عَلَيْهِ
آبَاءَنَا ۗ أَوَلَوْ كَانَ آبَاؤُهُمْ لَا يَعْقِلُونَ شَيْئًا وَلَا يَهْتَدُونَ ﴿١٧٠﴾ وَمَثَلُ الَّذِينَ كَفَرُوا كَمَثَلِ الَّذِي يَنْعِقُ بِمَا لَا يَسْمَعُ إِلَّا دُعَاءً
وَنِدَاءً ۚ صُمٌّ بُكْمٌ عُمْيٌ فَهُمْ لَا يَعْقِلُونَ ﴿١٧١﴾ يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُلُوا مِنْ طَيِّبَاتِ مَا رَزَقْنَاكُمْ وَاشْكُرُوا لِلَّهِ إِنْ كُنْتُمْ
إِيَّاهُ تَعْبُدُونَ ﴿١٧٢﴾ إِنَّمَا حَرَّمَ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةَ وَالدَّمَ وَلَحْمَ الْخِنْزِيرِ وَمَا أُهِلَّ بِهِ لِغَيْرِ اللَّهِ ۖ فَمَنِ اضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَلَا عَادٍ فَلَا
إِثْمَ عَلَيْهِ ۚ إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿١٧٣﴾ إِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ مَا أَنْزَلَ اللَّهُ مِنَ الْكِتَابِ وَيَشْتَرُونَ بِهِ ثَمَنًا قَلِيلًا ۙ أُولَٰئِكَ مَا يَأْكُلُونَ
فِي بُطُونِهِمْ إِلَّا النَّارَ وَلَا يُكَلِّمُهُمُ اللَّهُ يَوْمَ الْقِيَامَةِ وَلَا يُزَكِّيهِمْ وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ﴿١٧٤﴾ أُولَٰئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الضَّلَالَةَ بِالْهُدَىٰ
وَالْعَذَابَ بِالْمَغْفِرَةِ ۚ فَمَا أَصْبَرَهُمْ عَلَى النَّارِ ﴿١٧٥﴾ ذَٰلِكَ بِأَنَّ اللَّهَ نَزَّلَ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ ۗ وَإِنَّ الَّذِينَ اخْتَلَفُوا فِي الْكِتَابِ لَفِي شِقَاقٍ بَعِيدٍ ﴿١٧٦﴾

अनुवाद-

(168) ऐ इन्सानो! ज़मीन में जो चीज़ें हलाल और शुद्ध हैं उनमें से खाओ; और शैतान के पद्चिन्हों पर मत चलो, वह तुम्हारा खुला हुआ दुश्मन है; (169) वह तो तुम्हें बुराई और बेशर्मी ही का हुक्म देगा, और इसका कि तुम अल्लाह पर ऐसी बातें गढ़ लो जिसका तुम इल्म भी नहीं रखते। (170) और जब उनसे कहा जाता है, ''जो अल्लाह ने उतारा है उस पर चलो,'' तो जवाब में कहते हैं, ''नहीं, हम तो उसी पर चलेंगे जिस पर हमने अपने बाप-दादा को पाया है।'' भला अगर उनके बाप-दादा कुछ समझ न रखते रहे हों! और न सच्चे मार्ग पर चलते रहे हों (तब भी यह उन्हीं की पैरवी करेंगे।) (171) और इन इन्कार करने वालों (काफ़िरों) की मिसाल ऐसी है जैसे कोई उस बात को चीखे, जो उसे स्वयं भी एक पुकार और आवाज़ के सिवा कुछ और सुनाई न दे; (ये लोग) बहरे हैं, गूँगे हैं, अन्धे हैं, सो (कुछ) नहीं समझते। (172) ऐ ईमान वालो! पाक चीज़ों में से जो कुछ 'हमने' तुम्हें दिया है खाओ (पियो) और अल्लाह का शुक्र अदा करते रहो, अगर तुम 'उसकी' अिबादत करते हो; (173) 'उसने' तो तुम पर केवल मुर्दार(मरा हुआ जानवर) और ख़ून, और सुअ़र का गोश्त, और जिस (जानवर) पर अल्लाह के सिवा किसी और का नाम लिया गया हो (अर्थात भेंट चढ़ाया गया हो तो) हराम ठहराया है, फिर जो बहुत मजबूर और विवश हो, (परन्तु) नाफ़रमानी (अवज्ञा) करने वाला और हद से बढ़ जाने वाला न हो, तो उस पर कोई गुनाह नहीं; बेशक अल्लाह माफ़ करने वाला, रहम वाला है। (174) जो लोग उन आदेशों को, जो अल्लाह ने अपनी किताब (तौरात) में उतारे; छिपाते हैं, और उसके बदले थोड़ी सी क़ीमत का सौदा करते हैं, वे इसके सिवा कुछ नहीं! कि अपने पेटों में अंगारे भरते हैं, और क़ियामत के दिन अल्लाह उनसे बात भी नहीं करेगा और न उनको (गुनाहों से) पाक करेगा, और उनको बड़ा ही दुःख देने वाला अ़ज़ाब होगा; (175) यही लोग हैं जिन्होंने हिदायत (मार्गदर्शन) के बदले गुमराही मोल ली, और मग़्फ़िरत (मुक्ति) के बदले अ़ज़ाब मोल लिया, यह आग को कैसे बर्दाशत करने वाले हैं। (176) यह (अ़ज़ाब) इसलिए होगा कि अल्लाह ने तो हक़ के साथ किताब उतारी, और जिन लोगों ने किताब के मामले में इख़्तिलाफ़ (मतभेद) किया, वह हठधर्मी और विरोध में बहुत दूर निकल गये।

आयत नं० 168 से 176 तक की व्याख्या

168 يَا أَيُّهَا النَّاسُ كُلُوا مِمَّا فِي الْأَرْضِ حَلَالًا طَيِّبًا وَلَا تَتَّبِعُوا خُطُوَاتِ الشَّيْطَانِ ۚ إِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُبِينٌ

जब यह बयान हो चुका है कि अल्लाह के सिवा कोई मअ़बूद नहीं और वही हर चीज़ का पैदा करने वाला है, तो अब यह बयान किया जा रहा है कि वही अकेला रोज़ी देने वाला है और उसी ने इन्सानों के लिए ज़मीन पर मौजूद हर हलाल और पाक (यानी जो लज़ीज़ हो और जिस्म व अ़क़्ल के लिए नुक़्सानदेह न हो) को 'मुबाह़' क़रार दिया है और शैतान के नक़्शे क़दम पर चलने से मना फ़रमाया है, इसलिए कि शैतान के बहकावे में आकर दौरे जाहिलियत वाले कई क़िस्म के जानवरों को बुतों की तरफ़ मुख़्तलिफ़ अन्दाज़ में मन्सूब करते और उन का गोश्त खाना ह़राम समझते थे, इस की तफ़्सील सूरः माइदा आयत नं० १०३ में आएगी।

169 إِنَّمَا يَأْمُرُكُمْ بِالسُّوءِ وَالْفَحْشَاءِ وَأَنْ تَقُولُوا عَلَى اللَّهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ

यहाँ मक़्सद शैतान से नफ़रत दिलाना है। जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने दूसरी जगह फ़रमाया है,
إِنَّ الشَّيْطَانَ لَكُمْ عَدُوٌّ فَاتَّخِذُوهُ عَدُوًّا ۚ إِنَّمَا يَدْعُو حِزْبَهُ لِيَكُونُوا مِنْ أَصْحَابِ السَّعِيرِ (सूरः फ़ातिरः 6)
कि शैतान बेशक तुम्हारा दुश्मन है, सो तुम भी उस को दुश्मन ही समझो, वह तो केवल अपने गिरोह को इसलिए बुलाता है ताकि वह दोज़ख़ में जा पड़ें।

170 وَإِذَا قِيلَ لَهُمُ اتَّبِعُوا مَا أَنْزَلَ اللَّهُ قَالُوا بَلْ نَتَّبِعُ مَا أَلْفَيْنَا عَلَيْهِ آبَاءَنَا ۗ أَوَلَوْ كَانَ آبَاؤُهُمْ لَا يَعْقِلُونَ شَيْئًا وَلَا يَهْتَدُونَ

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने काफ़िरों को जानवरों से तश्बीह (संज्ञा) दी है कि जिस तरह़ चरवाहा जब अपने जानवरों को आवाज़ देता है तो वह जानवर सिर्फ़ आवाज़ सुन पाते हैं, मगर उस के माना कुछ नहीं समझते। यही ह़ाल उन काफ़िरों का है कि अल्लाह तआ़ला उन्हें राहे हिदायत पर चलने के लिए पुकारता है, क़ुर्आन उतारता है और उसके रसूल (सल्ल०) उसे खोल-खोल कर बयान करते हैं, लेकिन वह कुछ भी नहीं समझ पाते, इसलिए कि अ़क़्ल सह़ीह़ से वह मह़रूम हैं, वह बहरे हैं कि कुछ भी नहीं सुन पाते, गूंगे हैं कि ह़क़ की आवाज़ का जवाब नहीं दे पाते और अन्धे हैं कि हज़ारों दलीलों के बावजूद सच्चाई उन की आँखों से ओझल है।

171 وَمَثَلُ الَّذِينَ كَفَرُوا كَمَثَلِ الَّذِي يَنْعِقُ بِمَا لَا يَسْمَعُ إِلَّا دُعَاءً وَنِدَاءً ۚ صُمٌّ بُكْمٌ عُمْيٌ فَهُمْ لَا يَعْقِلُونَ

आयत नं० (168) में अल्लाह तआ़ला ने आ़म इन्सानों को ख़िताब करके कहा कि ह़लाल व तय्यिब रोज़ी खाओ। इस आयत में ख़िताब मोमिनीन के साथ ख़ास है, क्योंकि अपने ईमान की बदौलत यही लोग अल्लाह के हुक्मों से सही तरीक़े से फ़ायदा उठा सकते हैं, इसीलिए अल्लाह तआ़ला ने मोमिनों को पाकीज़ा

रोज़ी खाने और उस का शुक्र अदा करते रहने का हुक्म दिया है। जैसा कि अल्लाह ने अम्बिया को हुक्म दिया और फ़रमाया يَاَيُّهَا الرُّسُلُ كُلُوْا مِنَ الطَّيِّبٰتِ وَاعْمَلُوْا صَالِحًا (सूरः मूमिनून-51)

यानी ऐ मेरे रसूलो! पाकीज़ह रोज़ी खाओ और अ़मल सालेह़ करो।

172 يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُلُوْا مِنْ طَيِّبٰتِ مَا رَزَقْنٰكُمْ وَاشْكُرُوْا لِلّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ اِيَّاهُ تَعْبُدُوْنَ۝

इन से मुराद वह ह़लाल चीज़ें हैं जिन की ह़िल्लत वाज़ेह़ हो। ह़दीस में है "ह़लाल भी वाज़ेह़ है और ह़राम भी और इन दोनों के दर्मियान बाज़ चीज़ें मुतशाबेह (सन्देह या जिसमें स्पष्ट हुक्म न हो) हैं, जिन्हें बहुत से लोग नहीं जानते (कि ह़लाल या ह़राम?) बस जो शख़्स शुब्हे में डालने वाली चीज़ों से बच गया, उस ने अपने दीन और अपनी इ़ज़्ज़त को बचा लिया......और जो इन में पड़ गया कि वह उन चरवाहे की तरह़ है जिस ने अपने मवेशियों को चरने के लिए किसी चरागाह के पास छोड़ रखा है और क़रीब है कि वह उस चरागाह के अन्दर घुस जाएँ, तो ख़बरदार! हर बादशाह का एक रख (मम्नूअ़ इलाक़ा) है। सुन लो कि अल्लाह का रख (मम्नूआ़ इलाक़ा उस की ज़मीन में) उस के मुह़र्रिमात (ह़राम किर्दा चीज़ें) हैं.....और जान लो कि जिस्म में गोश्त का एक लोथड़ा है वह ठीक हो जाए तो जिस्म ठीक रहता है और बिगड़ जाए तो सारा जिस्म बिगड़ जाता है और सुन लो कि वह (लोथड़ा) इन्सान का दिल है।"

(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् ईमान, बाबः 39 ह़दीसः 52)

ह़राम खाने का वबाल-

ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "बेशक अल्लाह पाक है और वह पाक ही (माल, क़ौल व अ़मल) को क़ुबूल फ़रमाता है।" (फ़िर फ़रमाया ह़लाल खाने के बारे में) अल्लाह तआ़ला ने पैग़म्बरों को जो हुक्म फ़रमाया है वही मोमिनीन को हुक्म फ़रमाया। पैग़म्बरों को ख़िताब करते हुए फ़रमाया, "ऐ रसूलों! तय्यिब चीज़ खाओ और नेक काम करो और मोमिनीन को ख़िताब करते हुए फ़रमाया कि ऐ ईमान वालो! जो पाक चीज़ें हम ने तुम को दी हैं उन में से खाओ। उस के बाद ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने ऐसे शख़्स का ज़िक्र फ़रमाया जो लम्बा सफ़र कर रहा हो, उस के बाल बिखरे हुए जिस्म पर गर्द गुबार अटा हो और वह आसमान की तरफ़ हाथ फैलाए या रब या रब कह कर दुआ़ करता हो, यह शख़्स दुआ़ तो कर रहा है और ह़ाल यह है कि उस का खाना ह़राम है, पीना ह़राम है और पहनना ह़राम है और उस को ह़राम ग़िज़ा दी गई है बस इन ह़ालात की वजह से उसकी दुआ़ क्योंकर क़ुबूल होगी।" **(सह़ीह़ मुस्लिम भाग 1, पेज नं० 326)**

मुसाफ़िर और परेशान ह़ाल होने के बावजूद ऐसे शख़्स की दुआ़ क़ुबूल नहीं होती जिस का खाना पहनना ह़राम हो, आज कल बहुत सी दुआ़एँ की जाती हैं, लेकिन दुआ़एँ क़ुबूल नहीं होतीं। लोग शिकायतें करते फिरते हैं कि दुआ़ओं का इस क़दर एहतिमाम किया और इतनी बार दुआ़ की, लेकिन दुआ़ क़ुबूल नहीं होती। शिकायत करने वाले को चाहिए कि वह अपना ह़ाल देखें, अपनी ज़िन्दग़ी का जायज़ा लें, हर शख़्स ग़ौर करे कि मैं ह़लाल कितना खाता हूँ और ह़राम कितना, कपड़ा जो पहनता हूँ वह ह़लाल

आमदनी से है या हराम से। अगर रोज़ी हराम है या लिबास हराम है तो उस को छोड़ दें, खाने और पहनने को हदीस शरीफ़ में बतौर मिसाल ज़िक्र फ़रमाया है। ओढ़ना, बिछौना, रिहाइश का मकान, घर की चीज़ें अगर हराम की हों तो वह भी लिबास के हुक्म में ही हैं, उनका इस्तिमाल भी हराम है।

हराम कमाई की चन्द सूरतें-

रिश्वत आजकल बहुत आ़म है सब को मालूम है कि रिश्वत का माल हराम है। रिश्वत का नाम हदिया तोहफ़ा रख लिया जाए तब भी हराम ही रहती है। जो लोग हुकूमत के किसी जायज़ शोबे में काम करते हैं और रिश्वत लेते हैं उन की रिश्वत तो हराम ही है तन्ख़्वाह भी हलाल नहीं, इसलिए कि जिस काम के लिए हुकूमत ने उन को दफ़्तर में बिठाया है वह काम उन्होंने नहीं किया। रिश्वत लेने के लिए उन उसूल व क़वायद के ख़िलाफ़ काम किया जिस काम के लिए मुक़र्रर किये गये हैं।

सूद कम हो या ज़्यादा अ़वाम से लिया जाए या किसी भी इदारा से वह सब हराम है, चाहे इस का नाम नफ़ा रख लिया जाए, हर वह मुलाज़िमत हराम है जिस में गुनाह किया जाता हो, क्योंकि गुनाह करना और गुनाह की मदद करना दोनों हराम हैं इसलिए गुनाह की उजरत भी हराम है और गुनाह पर मदद करने की उजरत भी हराम है। हराम चीज़ों की तिजारत हराम है और इस पर नफ़ा भी हराम है 'शराब', 'ख़िंज़ीर' ख़ून, मुरदार गोश्त, तस्वीरें, मूर्तियाँ इन सब चीज़ों की ख़रीद व फ़रोख़्त हराम है और इन की क़ीमत और नफ़ा भी हराम है जितने भी टैक्स हैं सब का वसूल करना भी हराम है और उसकी तन्ख़्वाह भी हराम है।

'बीमा' पालीसी सरासर 'क़िमार', यानी 'जुआ' है। ज़िन्दगी का बीमा हो या अमवाले तिजारत का, कारख़ानों का या, गाड़ियों का, यह सब हराम है और उन में अपनी जमा की हुई रक़म से ज़्यादा जो कुछ मिले वह सब हराम है। जितने भी जुआ के तरीक़े हैं 'घुड़दौड़' वग़ैरह उन की आमदनी भी हराम है। ग़सब, चोरी, डाकाज़नी के ज़रिये जो कुछ हासिल किया जाए वह सब हराम है, लोगों को अग़वा करके जो उन से रक़म हासिल की जाए वह भी हराम है। जो लोग पीरी मुरीदी का कारोबार करते हैं उन को अहले हक़ और अहले इर्शाद समझ कर जो कुछ दिया जाता है (हालांकि वह हक़ीक़त में ऐसे नहीं हैं) उन के लिए वह सब हराम है।

मीरास शरीअ़त के मुताबिक़ तक़्सीम नहीं की जाती। जिस वारिस के क़ब्ज़े में जो माल आ जाता है वही अपना बना कर बैठ जाता है। मरने वाले के बेटे अपनी बहनों और माँओं को मीरास नहीं देते और चूंकि मीरास तक़्सीम नहीं होती इसलिए यतीमों के हिस्से का माल भी खाते हैं। शरअ़न जो दूसरों का माल है उस को अपनी मिल्कियत और काम में लाना हराम है और ख़ुशी से जो माल न दिया गया हो, चाहे देने वाले ने बज़ाहिर किसी दबाव में ख़ामोशी अख़्तियार कर ली हो वह माल भी हराम है। यह थोड़ी सी तफ़्सील है, हराम के शोअ़बे बहुत से हैं, हर शख़्स को अपनी आमदनी और ख़र्च के बारे में सोचना चाहिए।

ह़राम माल का वबाल-

बहुत से लोग यह समझते हैं कि ह़राम आमदनी में से सद्क़ा कर दिया जाए तो बाक़ी माल ह़लाल हो जाता है। ह़राम सद्क़ा करना तो और गुनाह है वह मक़्बूल ही नहीं होता। ह़दीस शरीफ़ में फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला सिर्फ़ पाकीज़ा ही को क़ुबूल फ़रमाते हैं।" जो सद्क़ा ख़ुद ही क़ुबूल नहीं उस के ज़रिये बाक़ी माल कैसे ह़लाल हो जाएगा! जो सद्क़ा दिया वह भी वबाल और जो बाक़ी माल है वह भी वबाल और आख़िरत के अ़ज़ाब का ज़रिया है।

ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) रसूलुल्लाह (सल्ल०) का इर्शाद नक़्ल फ़रमाते हैं, "जो भी बन्दा ह़राम माल से कमाएगा फिर उसमें से सद्क़ः करेगा तो वह क़ुबूल न होगा और उस में से ख़र्च करेगा तो उस के लिए उस में बरकत न होगी और जो कुछ अपने पीछे छोड़ कर जाएगा तो वह उस के दोज़ख़ में जाने का ज़रिया होगा। बेशक अल्लाह तआ़ला बुराई को बुराई के ज़रिये नहीं मिटाते लेकिन बुराई को नेकी के ज़रिये मिटाते हैं। बेशक ख़बीस, ख़बीस को नहीं हटाता।"

(रवाहु अह़मद कमा फ़िल् मिश्कात पेज नं० 242)

ह़ज़रत जाबिर (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, "जन्नत में वह गोश्त दाख़िल न होगा जो ह़राम से पला बढ़ा हो और हर वह गोश्त जो ह़राम से पला बढ़ा हो दोज़ख़ की आग उसकी ज़्यादा मुस्तह़िक़ है।" **(मिश्कात)**

एक ह़दीस में है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, "जन्नत में वह जिस्म दाख़िल न होगा जिस को ह़राम ग़िज़ा दी गई हो।" **(मिश्कात पेज नं० 243)**

एक और ह़दीस में इर्शाद है कि जिस ने दस दिरहम का कपड़ा ख़रीदा और उस में एक दिरहम ह़राम का था तो अल्लाह तआ़ला उसकी कोई भी नमाज़ क़ुबूल न फ़रमाएगा जब तक कि वह कपड़ा उस के बदन पर रहेगा। **(मिश्कात पेज नं० 243)**

173 إِنَّمَا حَرَّمَ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةَ وَالدَّمَ وَلَحْمَ الْخِنزِيرِ وَمَا أُهِلَّ بِهِ لِغَيْرِ اللَّهِ ۖ فَمَنِ اضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَلَا
عَادٍ فَلَا إِثْمَ عَلَيْهِ ۚ إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝

ह़राम जानवरों का ज़िक्र-

इस आयते शरीफ़ा में मुर्दा जानवर (जो अपनी मौत से बग़ैर ज़ब्ह़ किये मर जाए) ख़ून और ख़िंज़ीर के गोश्त खाने को ह़राम कहा है। जिन जानवरों पर ज़िब्ह़ करते वक़्त अल्लाह के अ़लावा किसी और का नाम लिया गया हो, उन चीज़ों के खाने का अ़रब के मुश्रिकों में रिवाज था और उन के अ़लावा ह़लाल चीज़ें भी खाते थे। उन के रिवाज की चीज़ों में जो चीज़ें ह़राम थीं उसूली तौर पर उन की ह़ुरमत बयान फ़रमाई और जो चीज़ें यहाँ ज़िक्र की गई हैं इन के अ़लावा भी ह़राम चीज़ें हैं, जिस का ज़िक्र दूसरी आयात और अह़ादीस में होगा।

सुअर एक नजिस (अपवित्र) जानवर है जिसका सब से प्रिय भोजन गंदगी और कूड़ा-करकट है, पाकीज़ा तबीअ़त इस से नफ़रत करती है। इस के अ़लावा इसका गोश्त हानिकारक है।

आधुनिक चिकित्सा शास्त्र (Modern Medicine) के ह़िसाब से इस (सुअर) का खाना हर भूभाग में और विशेष रूप से गर्म देशों में अत्यन्त हानिकारक है और वैज्ञानिक प्रयोगों ने सिद्ध किया है कि सुअर का गोश्त खाने से एक विशेष प्रकार के कीड़े पैदा हो जाते हैं जो बड़े खतरनाक और जानलेवा होते हैं और नहीं कहा जा सकता कि आने वाले समय में इस से सम्बन्धित और क्या नये मत सामने आएँगे। विशेषज्ञों का यह कहना है कि सुअर का गोश्त हमेशा खाते रहने से ग़ैरत कम हो जाती है।

(इस्लाम में ह़लाल और ह़राम, पृष्ठ 63, लेखक यूसुफ़ करज़ावी)

तौरेत में भी सुअर को ह़राम ठहराया गया है-

“फिर सुअर जो चिरे खुरों वाला होता है परन्तु पागुर नहीं करता इस कारण वह तुम्हारे लिए अशुद्ध होता है। तुम न तो इन का मांस खाना और न इन की खाल छूना। **(व्यवस्थाविवरण 14:7)**

जान बचाने की सूरत में ह़राम चीज़ें-

सूरः माइदा में कुछ ह़राम चीज़ों का बयान है। मगर पूरी तफ़्सील इन्शा अल्लाह सूरः माइदा ही की तफ़्सीर में लिखी जाएगी। यहाँ यह जो फ़रमाया कि فَمَنِ اضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَّلَا عَادٍ فَلَآ اِثْمَ عَلَيْهِ इस का मतलब यह है कि जो शख़्स भूख से ऐसा परेशान हो रहा हो कि जान पर बन रही हो और उस के पास ह़लाल चीज़ों में से खाने को कुछ भी न हो तो वह ह़राम चीज़ों में से अपनी जान बचाने के लिए इतना खा ले जिस से वह मौत से बच जाए।

सिर्फ़ इतना ही खाये जिस से जान बच जाए उस से आगे न बढ़े और लज़्ज़त का तालिब न हो। जैसे- अगर भूख से जान जा रही हो तो शराब पीने और सुअर खाने की इजाज़त को बहाना बनाकर यह न सोचे कि अब तो इजाज़त मिल ही गई है ख़ूब मज़े से खाओ पियो और पेट भर के ख़िंज़ीर का गोश्त खा लूँ, फिर कभी मौक़ा मिले या न मिले, ऐसा आदमी बाग़ी और ह़द से आगे बढ़ने वाला है। अगर लज़्ज़त के लिए खाएगा या ज़रूरी मिक़्दार से ज़्यादा खाएगा तो गुनाहगार होगा और لَآ اِثْمَ عَلَيْهِ फ़रमा कर यह बताया कि अगर जान बचाने की मजबूरी में थोड़ा सा खाने की जो इजाज़त है वह दर्जा माफ़ी में है, यूँ न कहा जाएगा कि यह चीज़ ह़लाल हो गई। यूँ कहेंगे कि इस का खाना ह़लाल हो गया।

ह़राम चीज़ ह़राम ही है। बहुत से लोग योरोप, अमरीका और आस्ट्रेलिया में बिला तकल्लुफ़ शराब पीते हैं, ख़िंज़ीर खाते हैं और उन जानवरों का गोश्त खाते हैं जो शरई तरीक़े पर ह़लाल नहीं किये गये और जब उन से बात होती है तो कह देते हैं कि हम मजबूर हैं और लफ़्ज़ فَمَنِ اضْطُرَّ का सहारा लेते हैं। ह़ालाँकि इज़तिरार और मजबूरी उन को कहीं से भी नहीं है। इन मुल्कों में सैकड़ों क़िस्म की चीज़ें मिलती हैं मछली, अण्डे, दूध भी है और इन्तिज़ाम करने से ह़लाल गोश्त भी मिल जाता है। ऐसी ह़ालत में ह़राम खाना-पीना किसी भी तरह़ ह़लाल नहीं है और वाक़ई कोई शख़्स मजबूर हो जिस की जान ही जा रही हो खाने को कुछ भी न मिल रहा हो तो वह जान बचाने के लिए ज़रा सा खा सकता है, मगर पेट भर-भर कर रोज़ाना ह़राम खाना और पीना उस के ह़राम होने में कोई शक नहीं।

कुछ लोगों ने बताया कि हम तो सुअर का गोश्त ‘बिस्मिल्लाह’ पढ़ कर खा लेते हैं। ‘अल् अ़याज़ु बिल्लाह’ ‘बिस्मिल्लाह’ पढ़ने से ह़राम ह़लाल नहीं हो जाता बल्कि ह़राम पर ‘बिस्मिल्लाह’ पढ़ने से ईमान

जाने का ख़तरा है। फिर यह बात भी ग़ौर करने की है कि मुसलमान को किसी ऐसे मुल्क में रहने की क्या मुसीबत है जहाँ हलाल न मिलता हो, हराम ही खाना पड़ता हो। मतलब दुनिया की हविस ही ऐसे मुल्कों में ले जाती है और हराम खिलवाती है। **(तफ़्सील के लिए देखें सूरः अनआम आयत नं० 144)**

174 إِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ مَا أَنزَلَ اللَّهُ مِنَ الْكِتَابِ وَيَشْتَرُونَ بِهِ ثَمَنًا قَلِيلًا ۙ أُولَٰئِكَ مَا يَأْكُلُونَ فِي بُطُونِهِمْ إِلَّا النَّارَ وَلَا يُكَلِّمُهُمُ اللَّهُ يَوْمَ الْقِيَامَةِ وَلَا يُزَكِّيهِمْ وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ

इब्ने जरीर ने इक्रमा से नक़्ल किया है कि यह आयते करीमा إِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ और वह आयत जो सूरः आले इमरान में है إِنَّ الَّذِينَ يَشْتَرُونَ दोनों आयतें यहूदियों के बारे में नाज़िल हुई हैं।

सअ़लबी ने बवास्ता 'कल्बी', अबू सालेह और हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि यह आयते करीमा यहूद के उ़लमा और उन के बड़ों के बारे में नाज़िल हुई है क्योंकि वह अपने ग़रीबों से हदिये और तोहफ़े लिया करते थे और इस बात की उम्मीद रखते थे कि नबी अकरम (सल्ल०) उन ही में मब्ऊस (भेजे जाएँगे) होंगे। जब रसूल (सल्ल०) उन के अ़लावा दूसरों में से मब्ऊस हो गये, तो उन्हें अपने ज़वाल और अपने तोहफ़े के ख़त्म हो जाने का डर हुआ। इस पर उन्होंने रसूल (सल्ल०) के अवसाफ़ में (जो कि तौरेत में मज़्कूर थे) तब्दीली कर दी और फिर वह तब्दील शुदा अवसाफ़ (Attributes) अपनी क़ौम के सामने बयान किये और बोले कि वह नबी जो अख़ीर ज़माने में मबऊस होंगे, उन की जो सिफ़त है इन नबी में नहीं पाई जाती। इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा إِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ नाज़िल फ़रमाई। **(तफ़्सीर इब्ने अ़ब्बास)**

हक़ को छिपाने वालों के लिए वई़द का इसमें दोबारा ज़िक्र है, ताकि उम्मते मुस्लिमा के लोग इससे बच जाएँ। यहूद ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की उन सिफ़ात को छिपाया जो आप की रिसालत पर दलालत करती थीं ताकि अ़रबों पर उनकी बड़ाई क़ायम रहे और जो तोहफ़े उन्हें मिला करते थे वह मिला करें। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि यह लोग अपने पेटों में जहन्नम की आग भर रहे हैं और क़ियामत के दिन अल्लाह के ग़ज़ब की वजह से उनसे बात भी न करेगा और उनके लिए दर्दनाक अ़ज़ाब है।

175 أُولَٰئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الضَّلَالَةَ بِالْهُدَىٰ وَالْعَذَابَ بِالْمَغْفِرَةِ ۚ فَمَا أَصْبَرَهُمْ عَلَى النَّارِ

इस आयत में बताया गया है कि इन काफ़िरों ने हिदायत के बदले गुमराही और मग़्फ़िरत के बदले आग का अ़ज़ाब कुबूल कर लिया है। यह लोग क़ियामत के दिन ऐसे सख़्त दर्दनाक अ़ज़ाब में मुब्तिला होंगे कि देखने वाले उनके सब्र पर हैरत करेंगे कि यह लोग इतना दर्दनाक अ़ज़ाब कैसे बर्दाश्त कर रहे हैं।

176 ذَٰلِكَ بِأَنَّ اللَّهَ نَزَّلَ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ ۗ وَإِنَّ الَّذِينَ اخْتَلَفُوا فِي الْكِتَابِ لَفِي شِقَاقٍ بَعِيدٍ

इस आयत में बताया गया है कि यह लोग ऐसे सख़्त अ़ज़ाब में डाले जाएँगे कि अल्लाह तआ़ला ने तो किताबें इसलिए उतारी थीं कि हक़ ज़ाहिर हो और बातिल ख़त्म हो, लेकिन इन लोगों ने अल्लाह की किताब का मज़ाक़ उड़ाया और कुर्आन के बारे में इख़्तिलाफ़ किया, किसी ने कहा कि यह जादू है, किसी ने कहा कि यह कहावत है और किसी ने कहा कि यह गुज़रे हुए ज़माने की कहानियाँ हैं। इस तरह वह हक़ से कोसों दूर हो कर अ़ज़ाब के हक़्दार हो गये।

आयत नं० 177 से 182 तक

لَيْسَ الْبِرَّ أَنْ تُوَلُّوا وُجُوهَكُمْ قِبَلَ الْمَشْرِقِ وَالْمَغْرِبِ وَلَٰكِنَّ الْبِرَّ مَنْ آمَنَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَالْمَلَائِكَةِ وَالْكِتَابِ وَالنَّبِيِّينَ
وَآتَى الْمَالَ عَلَىٰ حُبِّهِ ذَوِي الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسَاكِينَ وَابْنَ السَّبِيلِ وَالسَّائِلِينَ وَفِي الرِّقَابِ وَأَقَامَ الصَّلَاةَ وَآتَى الزَّكَاةَ
وَالْمُوفُونَ بِعَهْدِهِمْ إِذَا عَاهَدُوا وَالصَّابِرِينَ فِي الْبَأْسَاءِ وَالضَّرَّاءِ وَحِينَ الْبَأْسِ أُولَٰئِكَ الَّذِينَ صَدَقُوا وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُتَّقُونَ ۝
يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِصَاصُ فِي الْقَتْلَى الْحُرُّ بِالْحُرِّ وَالْعَبْدُ بِالْعَبْدِ وَالْأُنْثَىٰ بِالْأُنْثَىٰ فَمَنْ عُفِيَ لَهُ مِنْ أَخِيهِ
شَيْءٌ فَاتِّبَاعٌ بِالْمَعْرُوفِ وَأَدَاءٌ إِلَيْهِ بِإِحْسَانٍ ذَٰلِكَ تَخْفِيفٌ مِنْ رَبِّكُمْ وَرَحْمَةٌ فَمَنِ اعْتَدَىٰ بَعْدَ ذَٰلِكَ فَلَهُ عَذَابٌ
أَلِيمٌ ۝ وَلَكُمْ فِي الْقِصَاصِ حَيَاةٌ يَا أُولِي الْأَلْبَابِ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ۝ كُتِبَ عَلَيْكُمْ إِذَا حَضَرَ أَحَدَكُمُ الْمَوْتُ إِنْ تَرَكَ خَيْرًا
الْوَصِيَّةُ لِلْوَالِدَيْنِ وَالْأَقْرَبِينَ بِالْمَعْرُوفِ حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِينَ ۝ فَمَنْ بَدَّلَهُ بَعْدَمَا سَمِعَهُ فَإِنَّمَا إِثْمُهُ عَلَى الَّذِينَ
يُبَدِّلُونَهُ إِنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝ فَمَنْ خَافَ مِنْ مُوصٍ جَنَفًا أَوْ إِثْمًا فَأَصْلَحَ بَيْنَهُمْ فَلَا إِثْمَ عَلَيْهِ إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ۝

अनुवाद-

(177) भलाई केवल यही नहीं कि तुम अपना चेहरा पूरब या पश्चिम की ओर कर लो; बल्कि भलाई तो यह है कि जो अल्लाह पर, और आख़िरत के दिन पर, और फ़रिश्तों पर, और (अल्लाह की) किताब पर, और नबियों पर ईमान लाए; और अल्लाह की मुहब्बत में अपना माल नातेदारों और यतीमों (अनाथों) और मुहताजों और मुसाफ़िरों और माँगने वालों को और (गुलामी आदि की क़ैद से लोगों की) गर्दनों के छुड़ाने में ख़र्च करें, और नमाज़ क़ायम करें, और ज़कात दें, और जब (किसी) बात का इक़रार या अ़हद (वचन) करें तो अपना अ़हद पूरा करे, और तंगी में, और मुसीबत और लड़ाई के समय जमा (दृढ़) रहे; यही लोग सच्चे हैं और यही लोग परहेज़गार (संयमी) हैं। (178) ऐ ईमान वालो! फर्ज़ किया गया तुम पर, कि क़त्ल किये गये लोगों के ख़ून का बदला(क़िसास) दिलाओ, आज़ाद, (क़ातिल हो तो उस) के बदले आज़ाद और गुलाम(ख़ूनी हो तो उस) के बदले गुलाम, और औ़रत (ख़ूनी हो तो उस) के बदले औ़रत से क़िसास (ख़ून का बदला) लिया जाए, अगर क़ातिल को भाई चारे के ख़याल से कुछ माफ़ी दी जाए, तो भले तरीक़े से एहसान मानकर, "ख़ून बहा" की रक़म अच्छे तरीक़े से अदा करे; यह तुम्हारे रब की ओर से एक छूट और मेहरबानी है, फिर इसके बाद भी जो ज़्यादती करे तो उसके लिए दर्दनाक (दुखद) अ़ज़ाब है; (179) और इसी तरह क़िसास (के हुक्म) में तुम्हारी ज़िन्दगी (सुरक्षित) है, ऐ अक़्ल वालों! ताकि तुम(ख़ून ख़राबे से) बचो। (180) तुम पर फ़र्ज़ (अनिवार्य) किया गया है कि जब तुम में से कोई मरने लगे और (वह अपने पीछे) माल छोड़ रहा हो, तो अपने माँ-बाप और अपने क़रीबी रिश्तेदारों के लिए अच्छे तरीक़े से (नियमानुसार) वसीयत कर जाए, परहेज़गारों पर यह एक हक़ है। (181) तो जो व्यक्ति (वसीयत को) सुनने के बाद बदल डाले, तो उस (के बदलने) का गुनाह बदलने वाले पर होगा, बेशक अल्लाह सुनने वाला जानने वाला है; (182) फिर जिस वसीयत करने वाले को न्याय से किसी तरह के हटने, या हक़ मारने का डर हो, तो उनके (वारिसों के) बीच सुधार की व्यवस्था कर दे, तो उस पर कोई गुनाह नहीं; बेशक अल्लाह तआ़ला माफ़ करने वाला, रह़म वाला है।

आयत नं० 177 से 182 तक की व्याख्या

177 لَيْسَ الْبِرَّ اَنْ تُوَلُّوْا وُجُوْهَكُمْ قِبَلَ الْمَشْرِقِ وَالْمَغْرِبِ وَلٰكِنَّ الْبِرَّ مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ
وَالْمَلٰٓئِكَةِ وَالْكِتٰبِ وَالنَّبِيّٖنَ ۚ وَاٰتَى الْمَالَ عَلٰى حُبِّهٖ ذَوِي الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنَ وَابْنَ
السَّبِيْلِ ۙ وَالسَّآئِلِيْنَ وَفِي الرِّقَابِ ۚ وَاَقَامَ الصَّلٰوةَ وَاٰتَى الزَّكٰوةَ ۚ وَالْمُوْفُوْنَ بِعَهْدِهِمْ اِذَا عٰهَدُوْا ۚ
وَالصّٰبِرِيْنَ فِي الْبَاْسَآءِ وَالضَّرَّآءِ وَحِيْنَ الْبَاْسِ ؕ اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ صَدَقُوْا ؕ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُتَّقُوْنَ ﴿۱۷۷﴾

لَيْسَ الْبِرَّ अ़ब्दुर्रज़्ज़ाक़ बवास्ता मअ़मर, क़तादा से नक़्ल करते हैं, कि यहूदी मग़्रिब (पश्चिम) की तरफ़ अपना मुँह कर के और 'नसारा' मश्रिक़ (पूरब) की तरफ़ मुँह कर के नमाज़ पढ़ते थे। इस पर यह आयते करीमा नाज़िल हुई कि नेकी इस का नाम नहीं कि मग़्रिब और मश्रिक़ की तरफ़ अपना मुँह कर लो और इब्ने अबी ह़ातिम ने भी अबू अल् आ़लिया से इसी तरह़ की रिवायत नक़्ल की है।

'इब्ने जरीर' और 'इब्ने मुन्ज़िर' ने 'क़तादा' से रिवायत नक़्ल की है, बयान करते हैं कि हम से बयान किया गया है कि एक शख़्स ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से नेकी के बारे में दर्याफ़्त किया इस पर यह आयते करीमा لَيْسَ الْبِرَّ नाज़िल हुई, रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने उस शख़्स को बुलाकर उस के सामने यह आयत तिलावत फ़रमाई।

यह वाक़िआ़ फ़रायज़ के अह़काम नाज़िल होने से पहले का है, कि जब इन्सान सिर्फ़ इस बात की गवाही दे देता कि अल्लाह तआ़ला के अ़लावा और कोई मअ़बूद नहीं और इस बात की गवाही दे देता कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) उस के बन्दे और रसूल हैं, तो ऐसे शख़्स की मग़्फ़िरत की उम्मीद हो जाती थी, फिर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा لَيْسَ الْبِرَّ नाज़िल फ़रमाई। **(तफ़्सीर इब्ने अ़ब्बास)**

क़िब्ला की तब्दीली-

मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि यह आयत यहूद और नसारा के जवाब में उस वक़्त नाज़िल हुई जब उन्होंने क़िब्ला के बदलने के बाद इस्लाम और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के विषय में तरह़-तरह़ की बातें करना शुरु कर दीं थी और यह भी लिखा है कि यह बात भी हो सकती है कि क़िब्ला के बदलने के बाद मुसलमानों ने अपनी ख़ुशी का इज़्हार किया हो तो यह आयत उतरी, 'कि नेकी यह नहीं है कि आदमी पूरब या पश्चिम की ओर अपना रुख़ फेर ले, बल्कि नेक वह है जो अल्लाह पर अपना ईमान लाए और आख़िरत के दिन पर और अपनी उन तफ़्सीलात पर ईमान लाए जिनकी ख़बर अल्लाह और उसके रसूल ने दी और फ़रिश्तों पर उन तमाम तफ़्सीलात के साथ ईमान लाए जिसकी ख़बर अल्लाह और उसके रसूल ने दी और तमाम किताबों पर ईमान लाए जिन्हें अल्लाह ने अपने रसूलों पर नाज़िल कीं और क़ुर्आन मजीद पर और तमाम नबियों पर और ख़ासतौर से ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) पर।

माल के ख़र्च करने का ज़िक्र- इसी तरह़ नेकी वह है जो अपना बेहतरीन माल रिश्तेदारों,

यतीमों, मिस्कीनों, मुसाफ़िरों और मांगने वालों और गुलामों को आज़ाद कराने पर ख़र्च करे और जिसने नमाज़ क़ायम की, ज़कात अदा की अल्लाह और बन्दों से किये हुए वादों को पूरा किया, जिसने तक्लीफ़ और मुसीबत के वक़्त, दुश्मनाने इस्लाम से जिहाद करते हुए सब्र से काम लिया। यही लोग अपने ईमान में सच्चे हैं इसलिए कि इनके क़ौल और फ़ेअ़ल (कथनी और करनी) ने ईमान के सच्चाई की तस्दीक़ की' और इन्होंने साबित कर दिया कि ख़ौफ़ व दहशत हालात नहीं बदल सकते क्योंकि जो कोई ईमान के बाद यह सिफ़ात रखे वह अपने ईमान में सच्चा है और यही लोग हक़ीक़त में परहेज़गार हैं। इसलिए कि इन लोगों ने हराम को छोड़ दिया और नेक कामों को अपना लिया।

ऊपर जिस माल के ख़र्च करने का ज़िक्र फ़रमाया गया है वह ज़कात (धर्मदान) के अ़लावा है क्योंकि ज़कात की अदाएगी का हुक्म आगे आ रहा है यह तो माल के हक़ का ज़िक्र था जो शरीअ़त के तय किये हुए फ़र्ज़, यानी ज़कात के अ़लावा था या यह कि यह तो हुकूक़ुल् इ़बाद में नेकी हासिल करने का बयान है आगे हुकूक़ुल्लाह यानी अ़िबादात का ज़िक्र है। अ़िबादात में फ़रायज़ जिस्मानी में नमाज़ थी और माली अ़िबादात में ज़कात अहम थी।

178 يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِصَاصُ فِى الْقَتْلٰى ؕ اَلْحُرُّ بِالْحُرِّ وَ الْعَبْدُ بِالْعَبْدِ وَ الْاُنْثٰى
بِالْاُنْثٰى ؕ فَمَنْ عُفِىَ لَهٗ مِنْ اَخِيْهِ شَىْءٌ فَاتِّبَاعٌۢ بِالْمَعْرُوْفِ وَاَدَآءٌ اِلَيْهِ بِاِحْسَانٍ ؕ ذٰلِكَ تَخْفِيْفٌ
مِّنْ رَّبِّكُمْ وَرَحْمَةٌ ؕ فَمَنِ اعْتَدٰى بَعْدَ ذٰلِكَ فَلَهٗ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝

क़िसास (ख़ून का बदला) में इन्साफ़ करने का हुक्म-

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने ईमान वालों को हुक्म दिया है कि वह क़िसास (ख़ून के बदले) का हुक्म लागू करने में इन्साफ़ से काम लें। आज़ाद को आज़ाद के बदले में गुलाम को गुलाम के बदले में और औ़रत को औ़रत के बदले में क़त्ल करें। अल्लाह के हुक्मों को बदलकर अपनी इच्छा के अनुसार न कर लें।

क़िसास का शब्दिक अर्थ मुमासलत (बराबरी) के हैं। मुराद यह है कि जितना ज़ुल्म-ज़्यादती किसी ने किसी से किया हो तो उतना ही बदला उससे लेना जायज़ है उससे ज़्यादा जायज़ नहीं और शरीअ़त में कहा जाता है क़त्ल करने या ज़ख़्म लगाने की उस सज़ा को जिसमें बराबरी की गई हो।

इस तरह क़िसास का मतलब यह हुआ कि इन्सान के साथ वही किया जाएगा जो उसने दूसरे के साथ किया हो। यहूदी धर्म में क़त्ल की सज़ा केवल क़त्ल ही थी माफ़ी की सूरत न थी। ईसाइयों के यहाँ केवल माफ़ी का ही क़ानून था। क़िसास यानी बदला का कोई क़ानून न था। अ़रब में जाहिलियत के ज़माने में क़िसास और माफ़ करना दोनों चीज़ें मौजूद थीं मगर इनमें बहुत ज़ुल्म से काम लिया जाता था। अगर क़ातिल कोई मामूली आदमी होता और जिसका क़त्ल हुआ बड़ा ख़ानदानी शख़्स होता जो उस क़ातिल के कई आदमी क़त्ल कर दिये जाते, इसी तरह बड़े लोग अपने ज़ख़्मों की 'दियत' (माल की शक्ल में बदला) दोगुनी तीन गुनी वसूल करते।

क़त्ल के बदले क़त्ल-

मुफ़स्सिरीन ने इस आयत के नाज़िल होने की वजह ‘बनू कुरैजा’ व ‘बनू नज़ीर’ के ‘क़िसास’ व ‘दियत’ (बदले) से सम्बन्धित इन्साफ़ के तरीक़े को बताया है। बनू नज़ीर ने जाहिलियत के ज़माने में बनू कुरैज़ा से जंग की और ग़ालिब आ गये थे। उसके बाद से कोई बनू नज़ीरी किसी बनू कुरैज़ा के बदले में क़त्ल नहीं किया जाता था, बल्कि एक सौ वसक़ (15 हज़ार किलोग्राम) खजूर के बदले बनू नज़ीरी क़ातिल को दे दिया जाता था। इसके ख़िलाफ़ ‘कुरैज़ी’ ‘नज़ीरी’ के बदले क़त्ल किया जाता था और अगर फ़िद्या पर आपस में इत्तिफ़ाक़ हो जाता तो बनू कुरैज़ा वालों को दो सौ वसक़ (लगभग 30 हज़ार किलोग्राम) खजूर देनी पड़ती थी। इस तरह का ज़ुल्म बराबर हो रहा था इसलिए अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को क़िसास में इन्साफ़ करने का हुक्म दिया और कहा कि आज़ाद के बदले आज़ाद को और औ़रत के बदले औ़रत को क़त्ल किया जाएगा। हाँ, अगर मक़्तूल का वली क़ातिल को माफ़ कर देता है और दियत (रक़म) लेने पर राज़ी हो जाता है या मक़्तूल के वारिस माफ़ कर देते हैं तो क़िसास ख़त्म हो जाएगा और दियत वाजिब होगी।

ऐसी सूरत में मक़्तूल के वारिसों को चाहिए कि क़ातिल को सहूलत दे और उसकी ताक़त से ज़्यादा उस पर बोझ न डाले। इसी तरह़ क़ातिल को चाहिए कि दियत (बदला) अदा करने में देर न करे और न अपने किसी अ़मल से मक़्तूल के वली को ज़ेहनी तक्लीफ़ पहुँचाए। अब अगर मक़्तूल के वारिसों को माफ़ करने के बाद या दियत लेने के बाद क़ातिल को क़त्ल कर देते हैं तो दुनिया में उनसे क़िसास बदला (जान के बदले जान) लिया जाएगा और आख़िरत में उनका ठिकाना जहन्नम होगा।

एक के बदले केवल एक क़त्ल किया जाएगा-

यहाँ इस आयत में दो हुक्म हैं। पहला क़िसास यानी बराबर का बदला लिया जाए। ज़माने जहालियत की तरह़ एक के बदले दो या चार या ज़्यादा को क़त्ल न किया जाए। न ऐसा हो कि ग़ुलाम के क़त्ल का बदला न लिया जाए और अमीर, ग़रीब, शरीफ में किसी की कुछ रिआ़यत न की जाए, यानी जान के लिहाज़ से सब आपस में एक दूसरे के बराबर हैं। यहाँ एक बात यह भी समझ लेना चाहिए कि मक़्तूलीन में केवल क़िसास यानी जान लेने के एतिबार से बराबरी है, क़त्ल की कैफ़ियत में बराबरी नहीं। जैसे- यह जायज़ नहीं कि आग से जला कर मार डालने वाले को आग ही में जला कर मारा जाए या पानी में डुबो कर मार डालने वाले को, उसी तरह़ पानी में डिबो कर मारा जाए या किसी ने किसी को जादू से मारा है तो उस को भी जादू ही से मारा जाए तो ऐसा नहीं, इसीलिए आयत में **“फ़िल् क़त्ल”** फ़रमाया **“फ़िल् क़त्ली”** नहीं फ़रमाया, मक़्तूलीन में बराबरी है कैफ़ियत-ए-क़त्ल में बराबरी नहीं।

क़िसास (बदला) लेने का अधिकार और दियत की मिक़्दार-

क़िसास लेना ह़ाकिम के अख़्तियार में है। न यह कि हर शख़्स अपने-आप इस पर अ़मल करे,

ऐसा करने से और फ़ित्ना व फ़साद ज़्यादा होगा। क़िसास उस सूरत में है जबकि क़ातिल ने जानबूझकर इरादा से क़त्ल किया हो और क़त्ल ख़तूअन (यानी ग़लती से) या भूल चूक में हो जाए तो क़िसास नहीं। जैसे- गोली शेर पर लगाना चाहता था, मगर ग़लती से किसी आदमी को लग गई, यह क़त्ल अ़मदन (जानबूझकर) नहीं बल्कि ग़लती से है। इस सूरत में क़िसास तो नहीं मगर ख़ून बहा जिस को 'दियत' कहते हैं देना पड़ता है और दियत यानी ख़ून बहा शरीअ़त में अगर ऊँटों से अदा करे तो 'एक सौ ऊँट' हैं। ऊँटों की उ़मर वग़ैरह के सम्बन्ध में तफ़्सील फ़िक़ः की किताबों में मौजूद है।

अगर सोने में अदा करे तो एक हज़ार दीनार और अगर चाँदी में अदा करें तो दस हज़ार दिरहम जैसा कि हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ीअ़ साहब (रह०) ने अपनी तफ़्सीर में लिखा है दिरहम आजकल के वज़न के एतिबार से लगभग साढ़े तीन माशा चाँदी का होता है तो पूरी 'दियत' दो हज़ार नौ सौ सोलह (2916) तोला आठ माशा चाँदी होगी, यानी 36 सेर- 36 तोला- 8 माशा अगर बजाय इस शरई मुक़र्ररह ख़ून बहा के दूसरे किसी क़िस्म के माल पर क़ातिल और वरसा मक़्तूल में आपसी मसालेहत (Resolve) हो जाए तो ऊँट, सोने या चाँदी के दूसरे कोई जिन्स ग़ल्ला, कपड़ा, घोड़ा, मकान, दुकान, ज़ायदाद, मोटर गाड़ी वग़ैरह हो तब भी क़िसास ख़त्म हो जाएगा और यह तय किया हुआ माल या उस माल की क़ीमत अदा करनी पड़ेगी, चाहे वह मुक़र्ररह ख़ून बहा से ज़्यादा क़ीमत की हो या कम की सब जायज़ है।

अगर बदले में वही तीन चीज़ें हों यानी ऊँट, दीनार, दिरहम तो ऊपर दी गई मिक़्दार के अनुसार पाबन्दी करनी होगी। यहाँ आयत में एक हुक्म तो क़िसास का हुआ, दूसरा हुक्म यह है कि अगर क़ातिल को मक़्तूल के वारिस बिल्कुल माफ़ कर दें या चन्द वारिसों में से बाज़ बिल्कुल माफ़ कर दें या बाज़ मुआवज़ा माली या दियत शरई लेकर क़िसास से दस्तेबरदार हो जाएँ तो क़ातिल को चाहिए कि वह मुआवज़ा ख़ुशी के साथ अदा कर दे। यहाँ अल्लाह तआ़ला उम्मते मुस्लिमा पर अपना एह़सान और मेहरबानी होना बयान फ़रमाते हैं कि यह इजाज़त कि क़त्ल अ़मदन (जान-बूझकर) में चाहे क़िसास ख़ून बहा यानी दियत शरई ले, चाहे माफ़ कर दे।

यह अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से सहूलत और मेहरबानी है क़ातिल और वारिसाने मक़्तूल दोनों पर जो पहली उम्मतों पर न थी। यहूदियों पर ख़ास क़िसास मुक़र्रर था और नसारा पर दियत मुक़र्रर था। इस्लाम में अल्लाह तआ़ला ने क़ातिल को क़त्ल किये जाने के अ़लावा माफ़ करने का तरीक़ा भी मुक़र्रर किया जो अल्लाह तआ़ला की इन्सानों पर मेहरबानी है।

179 وَلَكُمْ فِي الْقِصَاصِ حَيٰوةٌ يّٰاُولِي الْاَلْبَابِ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِصَاصُ فِي الْقَتْلٰى 'इब्ने अबी हातिम' ने 'सईद बिन जुबैर (रज़ि०)' से नक़्ल किया है, कि इस्लाम से पहले ज़माने जाहिलियत में दो क़बीलों में मामूली सी चीज़ के बारे में आपस में लड़ाई हुई, जिस में लोग क़त्ल और ज़ख़्मी भी हुए, यहाँ तक कि ग़ुलाम और औ़रतें तक क़त्ल हो गईं, तो बाज़ ने बाज़ से किसी क़िस्म का कोई मुताल्बा नहीं किया, यहाँ तक कि सब मुसलमान हो गये,

तो हर एक क़बीला दूसरे क़बीले पर अपने लोगों का और माल का मुताल्बा करता था।

चुनांचे दोनो क़बीलों ने क़समें खाईं फिर उस चीज़ पर राज़ी हुए कि हमारे ग़ुलाम के बदले उन का आज़ाद और हमारी औरत के बदले उन का मर्द क़त्ल किया जाए, इस पर अल्लाह तआला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई कि आज़ाद, आज़ाद के बदले और ग़ुलाम, ग़ुलाम के बदले और औरत, औरत के बदले क़त्ल की जाए।

क़ानून 'क़िसास' रह़मत है-

'क़िसास' का क़ानून जारी करने और उस को लागू करने में बहुत बड़ी ज़िन्दगी है। इस बात को وَلَكُمْ فِي الْقِصَاصِ حَيٰوةٌ में बयान फ़रमाया है। क़िसास में बज़ाहिर क़ातिल की मौत है, लेकिन उसे उम्मत के ह़क़ में बड़ी ज़िन्दगी अ़ता फ़रमाई, क्योंकि जब क़िसास का क़ानून लागू होगा तो क़ातिल भी क़त्ल करने से बचेगा और हर शख़्स के कुन्बे और क़बीले के लोग इस बात के फ़िक्रमन्द होंगे कि हमारे किसी व्यक्ति से कोई शख़्स क़त्ल न हो जाए। मुफ़स्सिर 'इब्ने कसीर' लिखते हैं कि आइम्मा अरबअ़ (चारों इमामों) और जम्हूर (अक्सर लोगों) का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि अगर एक शख़्स को कुछ लोगों ने मिल कर क़त्ल कर दिया तो उन सब को उस एक मक़्तूल के बदले में क़त्ल किया जाएगा।

ह़ज़रत सईद बिन अल् मुसय्यिब (रह़०) ने बयान फ़रमाया कि पाँच या सात आदमियों ने किसी एक शख़्स को तन्हाई में छुपे तौर पर क़त्ल कर दिया था तो ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने उन पाँचों या सातों आदमियों को एक शख़्स के क़िसास में क़त्ल कर दिया और फ़रमाया कि अगर शहर 'सनआ़' के सारे आदमी मिल कर भी उस एक आदमी को क़त्ल करते तो मैं उन सब को क़त्ल कर देता। **(बुख़ारी)**

क़िसास एक इन्साफ़ है-

क़िसास का क़ानून लागू होने से और उस पर अ़मल करने से बहुत सी जानें बचती हैं और लोग एक दूसरे को क़त्ल करने से बाज़ रहते हैं इसलिए क़िसास को बड़ी ज़िन्दगी का ज़रिया बताया। बहुत से जाहिल लोग क़िसास के क़ानून को ज़ुल्म कहते हैं। यह लोग ज़ुल्म का माने भी नहीं जानते, ज़ुल्म करने वाला तो क़ातिल है जिस ने नाह़क़ (जानबूझकर) किसी को क़त्ल किया, क़त्ल के बदले में क़ातिल को क़त्ल कर देना ऐ़न इन्साफ़ है इस को ज़ुल्म की संज्ञा देना जिहालत और ह़िमाक़त है यह कहते हैं कि क़ातिल को क़त्ल न किया जाए बल्कि जेल में डाल दिया जाए और यह नहीं समझते कि इस से तो और ज़्यादा क़ातिल की हिम्मत बढ़ जाएगी।

आदमी समझता है कि क़त्ल तो कर ही दूँ, थोड़ी बहुत जेल भुगत लूँगा। जिन का मिज़ाज क़त्ल, ग़ारतगरी, डकैती और फ़ित्ना फ़साद का है वह जेल से बिल्कुल नहीं डरते, जेल की दीवारें फांद कर और खिड़कियाँ तोड़ कर भाग जाते हैं। जिन लोगों के नज़्दीक इन्सान की जानों की क़ीमत नहीं है वह लोग क़िसास को अच्छा नहीं समझते, उन्हें क़ातिल पर रह़म आता है आ़म लोगों की जानों पर रह़म नहीं आता। 'सुनन अबूदाऊद' में है जिस ने जानबूझकर क़त्ल किया तो उस में क़िसास है और जो शख़्स

क़िसास लागू करने के बारे में आड़े आ जाए तो उस पर अल्लाह की लअ़नत है और फ़रिश्तों की लअ़नत है और सब इन्सानों की लअ़नत है। **(किताबुल् हिदायात)**

क़िसास या दियत माफ़ करना हुकूमत के अख़्तियार में नहीं-

दुनिया में एक यह जाहिलाना क़ानून लागू है कि मुल्क का हाकिम क़ातिल की दरख़्वास्त पर अपने ज़ाती व पार्टी के फ़ायदे को सामने रखकर क़ातिल को माफ़ कर देता है, यह शरीअ़ते इस्लामिया के बिल्कुल ख़िलाफ़ है। मक़्तूल के वारिसों को हक़ है कि माफ़ करें या 'क़िसास' लें, या 'दियत' लें, किसी अमीर या वज़ीर या सदर या बादशाह को माफ़ी देने का और वारिसों का हक़ माफ़ करने का बिल्कुल अख़्तियार नहीं है। जो भी हुकूमत ऐसा करेगी वह क़ुर्आन के क़ानून के ख़िलाफ़ होगी और सज़ा की मुस्तहिक़ होगी।

180 كُتِبَ عَلَيْكُمْ إِذَا حَضَرَ أَحَدَكُمُ الْمَوْتُ إِنْ تَرَكَ خَيْرًا ۖ الْوَصِيَّةُ لِلْوَالِدَيْنِ وَالْأَقْرَبِينَ
بِالْمَعْرُوفِ ۖ حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِينَ ۝

माँ-बाप और रिश्तेदारों के लिए माल की वसीयत-

इस आयत में माँ-बाप और रिश्तेदारों के लिए माल की वसीयत करना फ़र्ज़ क़रार दिया गया है। जब किसी की मौत के आसार मालूम होने लगें तो वह वसीयत कर दे, लेकिन मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि इस वसीयत की फ़र्ज़ियत बाद में मन्सूख़ (ख़त्म) हो गई।

'वसीयत' के शब्दिक माने 'हुक्म देना' और 'नसीहत' करना है। शरीअ़त की रोशनी में इस से मुराद वह हिदायतें होती हैं जो मरने वाला अपने पीछे रहने वालों को कर जाता है जो उस की मौत के बाद पूरी की जाती हैं वसीयत कई क़िस्म की होती हैं।

वसीयत की क़िस्में-

1- कुछ वसीयत वाजिब होती हैं, जैसे- किसी की अमानत या क़र्ज़ (या ज़कात वाजिबुल) अदा करने की वसीयत।
2- कुछ वसीयत मुस्तहब होती हैं, जैसे- किसी नेक काम के लिए वसीयत करना।
3- कुछ वसीयत सिर्फ़ मुबाह होती है, जैसे-किसी जायज़ काम के लिए वसीयत करना।
4- कुछ वसीयत ऐसी होती है जिस का पूरा करना शरीअ़त में मना है, जैसे- कोई किसी नाजायज़ और हराम काम के लिए वसीयत कर जाए।
5- कुछ वसीयत मौक़ूफ़ (फ़िस्क) कहलाती है जिस को पूरा करने के लिए बाज़ शरई शरायत का लिहाज़ रखना ज़रुरी होता है।

जैसे- मरने वाला अपने तर्के (छोड़े हुए माल) के तीसरे हिस्से से ज़्यादा की वसीयत कर जाए। ऐसी वसीयत वारिसों की रज़ामन्दी पर पूरी की जाती है।

इस्लामी शरीअ़त में जब तक वारिसों के हिस्से मुतअ़य्यन (तय) न हुए थे, यह हुक्म था कि 'तर्के'

के एक तिहाई माल में यानी तिहाई माल तक मरने वाला अपने वालिदैन और रिश्तेदारों को जितना मुनासिब समझे वसीयत कर जाए। इतना तो उन लोगों का हक़ था बाक़ी जो रहता वह औलाद का हक़ होता था। अतः इन आयात में इर्शाद होता है।

क़रीबी रिश्तेदारों के लिए वसीयत-

"तुम पर फ़र्ज़ किया जाता है कि जब किसी को मौत के आसार नज़्दीक मालूम होने लगे, बशर्ते कि कुछ माल भी तर्के में छोड़ा हो तो अपने वालिदैन और दूसरे रिश्तेदारों के लिए पूरे माल से एक तिहाई माल की वसीयत कर जाए तो इसी का नाम वसीयत है जिन को ख़ुदा का ख़ौफ़ है उन के ज़िम्मे यह ज़रूरी किया जाता है।"

अधिकतर मुफ़स्सिरीन कहते हैं कि यह आयत मन्सूख़ है यानी वसीयत करने का हुक्म वालिदैन और क़रीबी रिश्तेदारों के लिए उस वक़्त तक था जब तक कि आयत मीरास नाज़िल नहीं हुई थी और इसी लिए नबी करीम (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया था कि-

"एक मुसलमान के लिए मुनासिब नहीं कि उस पर तीन रातें गुज़रें और उस के पास वसीयत नामा लिखा हुआ न हो" और इस वसीयत की फ़र्ज़ियत इसलिए हुई थी कि मरने वाले के तमाम माल के मालिक मय्यित के लड़के हो जाया करते थे, माँ बाप व दूसरे रिश्तेदार महरूम रह जाया करते थे।

बस जब आयत मीरास नाज़िल हुई और मय्यित के वारिसों के हुक़ूक़ तर्के में से अल्लाह तआ़ला ने तय फ़रमा दिये तो यह हुक्म मन्सूख़ (ख़त्म) हो गया। इसी लिए हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला ने हर हक़दार का हक़ मुक़र्रर कर दिया है। अब किसी वारिस के लिए वसीयत ज़रूरी नहीं।" इस आयत में माँ-बाप और क़रीबी रिश्तेदारों को जो हुक्म हो रहा है वह मीरास के हुक्म होने से पहले वाजिब था। इस तरह मीरास के हुक्म ने इस वसीयत के हुक्म को मन्सूख़ (ख़त्म) कर दिया है, हर वारिस अपना मुक़र्रर हिस्सा बिना वसीयत ले लेने का हक़दार है जो उसको शरीअ़त के मुताबिक़ मिलता है। इस्लामी शरीअ़त में क़ुर्आन व हदीस के अनुसार मीरास के एहकाम को बड़ी अहमियत हासिल है। जिसका ज़िक्र मीरास की आयत में किया जाएगा।

मय्यित के माल की तक़्सीम-

एक ज़रूरी मस्ला यह भी समझ लिया जाए कि तीन चीज़ें ऐसी हैं जिनका ख़र्च विरासत के बट्वारे से पहले होता है उनमें माल ख़र्च करने के बाद जो कुछ बाक़ी बचता है उसमें विरासत जारी होती है और वारिसों का हक़ होता है। अगर मय्यित का छोड़ा हुआ माल इन चीज़ों में ख़त्म हो जाए तो वारिसों को कुछ न मिलेगा वह तीन चीज़ें यह हैं,

1- मय्यित के कफ़न-दफ़न में ख़र्च किया जाए।

2- मय्यित का क़र्ज़ अदा किया जाए।

3- वसीयत अगर किसी जायज़ चीज़ की मय्यित ने की हो तो वह पूरी की जाए। मगर क़र्ज़ अदा करने के बाद वह भी उसके तिहाई हिस्से में ही वसीयत लागू होगी। क़र्ज़ और वसीयत में माल ख़र्च करने के बाद जो बाक़ी बचेगा उसमें वारिसों को हिस्सा दिया जाएगा।

फ़र्ज़ की वसीयत-

वसीयत करने में पहले फ़रायज़ को अदा किया जाएगा। जैसे- अगर वसीयत करने वाले पर हज फ़र्ज़ था, मगर नहीं किया या उसके ज़िम्मे ज़कात फ़र्ज़ हुई थी और उसने नहीं दी या कफ़्फ़ारा वाजिब था, मगर अदा नहीं किया तो इन चीज़ों की अदाएगी पहले की जाएगी। अगर उसने फ़रायज़ और वाजिबात के साथ ग़ैर वाजिब और ग़ैर फ़र्ज़ कामों की वसीयत की तब भी वारिसों की यह ज़िम्मेदारी है कि फ़रायज़ और वाजिबात को पहले अदा करे, चाहे उसने वसीयत में इन बातों का ज़िक्र बाद में किया हो।

गुनाह की वसीयत-

किसी भी गुनाह की वसीयत करना हलाल नहीं है, अगर कोई व्यक्ति गुनाहों में माल ख़र्च करने की वसीयत कर दे तो वह वसीयत लागू नहीं होगी। इसी तरह शिर्क और बिद्अ़त के कामों के लिए कोई वसीयत कर दे तो वह भी लागू नहीं होगी।

वसीयत में देर न करे-

इन्सान दुनिया में रहता है तो लोगों से वास्ता पड़ता है, किसी से कुछ लेता है, किसी को कुछ देता है, कुछ वाजिब हुक़ूक़ होते हैं, किसी से क़र्ज़ लिए होता है, किसी की अमानतें रखी हुई होती हैं और मौत का कुछ पता नहीं कब आ जाए। इसलिए यह ज़रूरी है कि वसीयत लिखी हुई हर वक़्त तैयार रहे जिसका जो कुछ हक़ है या क़र्ज़ा है, या अमानते हैं, या दीनी फ़रायज़ और वाजिबात हैं जिनकी अदाएगी बाक़ी हैं, उन सबको किसी कापी वग़ैरह पर लिखकर रखे रहे ताकि वसीयत तैयार रहे, अचानक मौत आ जाए तो वारिसीन उन सबको अदा कर दें।

"हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जिस मुसलमान के पास कोई चीज़ हो, जिसकी वसीयत करना हो तो उसके लिए यह बात ठीक नहीं है कि दो रातें गुज़र जाएँ और उसकी वसीयत उसके पास लिखी हुई न हो।" **(बुख़ारी)**

हज़रत जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जिस व्यक्ति की वसीयत पर मौत आई अर्थात वसीयत करके मरा तो वह सही रास्ते पर, सुन्नत, तक़्वा, शहादत और बख़्शे हुए हालत में मरा"। **(सुनन इब्ने माजा, पेज नं० 194)**

विरासत के अहकाम के लिए देखें आयत मीरास। **(सूरः अन् निसा-11-12)**

181 فَمَنْ بَدَّلَهُ بَعْدَ مَا سَمِعَهُ فَإِنَّمَا إِثْمُهُ عَلَى الَّذِينَ يُبَدِّلُونَهُ إِنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ

जब वसीयत करने वाला वसीयत कर गया तो अब उसके वारिसों के लिए ज़रूरी है कि वसीयत को सही़ तरीक़े से अदा करे। जैसे उसने फ़ुक़रा व मसाकीन (भिखारी व ज़रूरतमन्द) के लिए वसीयत की है उन्हें मालूम भी नहीं कि उन्होंने हमारे लिए कोई वसीयत की है। इसलिए कि वारिस छुपा सकते हैं और वसीयत को अदल-बदल सकते हैं। इसलिए यहाँ इस आयत में फ़रमाया गया है कि अगर कोई वसीयत में तब्दीली करेगा तो गुनाहगार होगा और आख़िरत में उसके बारे में सवाल होगा।

नोट- अगर किसी पर ज़कात फ़र्ज़ हो और अदा किये बग़ैर मर जाए तो वह गुनाहगार होगा और ज़कात रोकने वालों के हुक्म में दाख़िल होगा और अगर उसने ज़कात के अदाएगी की वसीयत कर दी और वरसा ने वसीयत को पूरा न किया तो वह गुनाह से बरी हो गया और अब वसीयत बदलने वाला गुनाहगार होगा, लेकिन अगर वसीयत शरीअ़त के ख़िलाफ़ की गई हो तो उसका बदल देना (वाजिब) ज़रूरी है।

182 فَمَنْ خَافَ مِنْ مُّوْصٍ جَنَفًا اَوْ اِثْمًا فَاَصْلَحَ بَيْنَهُمْ فَلَآ اِثْمَ عَلَيْهِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝

ग़लत वसीयत के बदलने में गुनाह नहीं-

कभी-कभी ऐसा होता हैं कि वसीयत करने वाला ग़लती से वसीयत में ऐसा तरीक़ा अपना लेता है जिसमें किसी वारिस या किसी दूसरे रिश्तेदार की ओर ज़्यादा मायल हो जाता है और वसीयत में इन्साफ़ बाक़ी नहीं रहता। अगर ऐसी कोई सूरत हो जाए और किसी को मालूम हो जाए कि ऐसी वसीयत की है या ऐसी वसीयत करने का इरादा किया है तो वह बीच में पड़कर उसके दर्मियान (इस्लाह) सुधार कर दे और उनको सही़ तरीक़ा बता दे जो शरीअ़त के अनुसार दुरुस्त हो या कोई हा़किम उसको बदल दे तो उसको बदलने में कोई गुनाह नहीं। जो शख़्स ऐसा करेगा अल्लाह उसको माफ़ फ़रमाएगा।

कुछ लोग बेटों को मीरास से मह़रूम करने के लिए ज़िन्दगी ही में किसी एक बेटे के नाम ज़ायदाद कर देते हैं ताकि दूसरी औलाद मह़रूम हो जाए और भी तरह़-तरह़ की वसीयतें करते हैं जिससे गुनाहगार होते हैं। हाँ, वारिस को अपने मीरास से तक़्सीम करने के लिए किसी को माल हि़बा (तोह़फ़ा में) देना जायज़ है।

❖

आयत नं० 183 से 187 तक

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ كَمَا كُتِبَ عَلَى الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ۙ۝ اَيَّامًا مَّعْدُوْدٰتٍ ؕ فَمَنْ كَانَ
مِنْكُمْ مَّرِيْضًا اَوْ عَلٰى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِّنْ اَيَّامٍ اُخَرَ ؕ وَعَلَى الَّذِيْنَ يُطِيْقُوْنَهٗ فِدْيَةٌ طَعَامُ مِسْكِيْنٍ ؕ فَمَنْ تَطَوَّعَ خَيْرًا فَهُوَ خَيْرٌ لَّهٗ ؕ
وَاَنْ تَصُوْمُوْا خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝ شَهْرُ رَمَضَانَ الَّذِىْۤ اُنْزِلَ فِيْهِ الْقُرْاٰنُ هُدًى لِّلنَّاسِ وَبَيِّنٰتٍ مِّنَ الْهُدٰى وَالْفُرْقَانِ ۚ
فَمَنْ شَهِدَ مِنْكُمُ الشَّهْرَ فَلْيَصُمْهُ ؕ وَمَنْ كَانَ مَرِيْضًا اَوْ عَلٰى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِّنْ اَيَّامٍ اُخَرَ ؕ يُرِيْدُ اللّٰهُ بِكُمُ الْيُسْرَ وَلَا يُرِيْدُ بِكُمُ
الْعُسْرَ وَلِتُكْمِلُوا الْعِدَّةَ وَلِتُكَبِّرُوا اللّٰهَ عَلٰى مَا هَدٰٮكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝ وَاِذَا سَاَلَكَ عِبَادِىْ عَنِّىْ فَاِنِّىْ قَرِيْبٌ ؕ اُجِيْبُ
دَعْوَةَ الدَّاعِ اِذَا دَعَانِ فَلْيَسْتَجِيْبُوْا لِىْ وَلْيُؤْمِنُوْا بِىْ لَعَلَّهُمْ يَرْشُدُوْنَ ۝ اُحِلَّ لَـكُمْ لَيْلَةَ الصِّيَامِ الرَّفَثُ اِلٰى نِسَآٮِٕكُمْ ؕ
هُنَّ لِبَاسٌ لَّـكُمْ وَاَنْتُمْ لِبَاسٌ لَّهُنَّ ؕ عَلِمَ اللّٰهُ اَنَّكُمْ كُنْتُمْ تَخْتَانُوْنَ اَنْفُسَكُمْ فَتَابَ عَلَيْكُمْ وَعَفَا عَنْكُمْ ۚ فَالْـٰٔنَ بَاشِرُوْهُنَّ
وَابْتَغُوْا مَا كَتَبَ اللّٰهُ لَـكُمْ ۚ وَكُلُوْا وَاشْرَبُوْا حَتّٰى يَتَبَيَّنَ لَـكُمُ الْخَيْطُ الْاَبْيَضُ مِنَ الْخَيْطِ الْاَسْوَدِ مِنَ الْفَجْرِ ثُمَّ اَتِمُّوا الصِّيَامَ
اِلَى الَّيْلِ ۚ وَلَا تُبَاشِرُوْهُنَّ وَاَنْتُمْ عٰكِفُوْنَ فِى الْمَسٰجِدِ ؕ تِلْكَ حُدُوْدُ اللّٰهِ فَلَا تَقْرَبُوْهَا ؕ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ اٰيٰتِهٖ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ
يَتَّقُوْنَ ۝

अनुवाद-

(183) ऐ ईमान वालो! तुम पर रोज़े फ़र्ज़ (अनिवार्य) किये गये, जिस तरह तुम से पहले लोगों पर फ़र्ज़ किये गये थे, ताकि तुम मुत्तक़ी (परहेज़गार) बन जाओ; (184) (यह रोज़े) गिनती के कुछ दिन हैं, तो जो आदमी तुम में से बीमार हो, या सफ़र में हो, तो दूसरे दिनों में रोज़ों की गिनती पूरी कर ले; और जो (खिलाने का) कुदरत (सामर्थ्य) रखते हों, उनके ज़िम्मे बदले में, एक मुहताज का खाना है; तो जो अपनी खुशी से कुछ और नेकी करे, तो यह उसके लिए बेहतर है; और यह कि तुम रोज़ः रखो तो तुम्हारे लिए बहुत बेहतर है, अगर तुम समझो। (185) रमज़ान का महीना वह है, जिसमें क़ुर्आन उतारा गया, जो इन्सानों के लिए हिदायत (रहनुमा) है; और जिसमें हिदायत (रहनुमाई) और हक़ व बातिल (सत्य-असत्य) में अन्तर करने के प्रमाण हैं, तो तुम में से जो कोई इस महीना को पाए उसे चाहिए कि (पूरे महीने का) रोज़ः रखे, और जो बीमार हो या सफ़र में हो तो दूसरे दिनों में उसकी गिनती पूरी कर ले, अल्लाह तुम्हारे साथ आसानी चाहता है, और सख़्ती नहीं चाहता; और (यह आसानी का हुक्म) इसलिए (दिया गया है) कि तुम रोज़ों की गिनती पूरी कर लो; और इस एह़सान के बदले, कि अल्लाह ने तुमको हिदायत (रहनुमाई) दी; तो अल्लाह की बड़ाई बयान करो, और ताकि तुम शुक्रगुज़ार बन जाओ। (186) और (ऐ मुहम्मद)! जब तुमसे मेरे बन्दे 'मेरे' सम्बन्ध में पूछें, तो (कह दो कि) 'मैं' तो (तुम्हारे) क़रीब ही हूँ; पुकारने वाले की पुकार का जवाब देता हूँ, जब वह मुझे पुकारता है; तो उनको चाहिए कि 'मेरे' हुक्मों को मानें, और 'मुझ' पर ईमान लाएँ ताकि हिदायत(सत्य मार्ग) पा लें। (187) रोज़ों की रातों में तुम्हारे लिए अपनी औ़रतों के पास जाना जायज़ कर दिया गया है, वह तुम्हारी लिबास (परिधान) हैं, और तुम उनके लिबास हो, अल्लाह को मालूम है, कि तुम (उनके पास जाने से) अपने ह़क़ में ख़ियानत (कपट) कर रहे थे तो 'उसने' तुम पर मेहरबानी की और तुम्हारी ह़रकतों को दरगुज़र किया; तो अब तुम उनसे मिलो-जुलो (अर्थात रोज़ा के अ़लावा हर समय में सम्भोग कर

सकते हो) और अल्लाह ने जो कुछ तुम्हारे लिए लिख दिया है, उसे तलाश करो; और खाओ पियो, यहाँ तक कि सुबह़ की सफ़ेद धारी (उषाकाल, रात की) काली धारी से स्पष्ट नज़र आने लगे; फिर रोज़ः (रखकर) रात तक पूरा करो; और जब तुम मस्जिदों में 'एतिकाफ़' की ह़ालत में हो, तो तुम उनसे न मिलो (अर्थात सम्भोग न करो), यह अल्लाह की बाँधी हुई सीमाएँ हैं, तो उनके क़रीब भी न जाओ, इसी तरह़ अल्लाह अपनी निशानियाँ लोगों के लिए खोल-खोलकर बयान करता है, ताकि वह परहेज़गार (डर रखने वाले) बन जाएँ।

आयत नं० 183 से 187 तक की व्याख्या

183 يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ كَمَا كُتِبَ عَلَى الَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ۝

रोज़ः का हुक्म-

नमाज़ और रोज़ः दोनों शारीरिक अ़िबादतें हैं, ज़कात माली अ़िबादत है और ह़ज में माल भी ख़र्च होता है, शारीरिक मेह़नत भी होती है इसलिए वह शारीरिक अ़िबादत भी है और माली अ़िबादत भी। नमाज़ तो नुबूव्वत के पाँचवें साल मक्का मुअ़ज़्ज़माँ ही में फ़र्ज़ हो गई थी जो शबे मेराज में दी गई और रमज़ान शरीफ़ के रोज़े हिजरत के बाद मदीना मुनव्वरह में 2 हिज्री में फ़र्ज़ हुए। जिस तरह़ नमाज़ और ज़कात पहली उम्मतों पर फ़र्ज़ थी, उसी तरह़ रोज़े भी उन पर फ़र्ज़ थे كَمَا كُتِبَ عَلَى الَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ में यह बताया कि रोज़े कोई नई चीज़ नहीं हैं यह पहली उम्मतों पर भी फ़र्ज़ हुए थे उन्होंने भी रोज़े रखे थे तुम भी रखो।

रोज़ः की फ़र्ज़ियत-

"रोज़ः" ह़ज़रत आदम (अ़लै०) से लेकर ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) तक हर उम्मत पर फ़र्ज़ थे। हाँ, रोज़ों की संख्या और उसके रखने के दिन अलग-अलग रहे। जब नबी करीम (सल्ल०) मदीना मुनव्वरह तशरीफ़ लाए तो हर महीने तीन रोज़े रखते थे और यौमे आ़शूरा यानी मुहर्रम की दस तारीख़ का रोज़ः भी रखते थे। फिर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाकर रमज़ान के रोज़े तमाम मुसलमानों पर फ़र्ज़ कर दिये मगर शुरु में यह हुक्म था कि जो चाहे रोज़े रखे और जो ताक़त होने के बावजूद रोज़े न रखे तो वह फ़िद्या (बदला) दे दे।

रोज़ः में तब्दीली-

सुनन अबी दाऊद भाग-1 पेज नं० 74 पर है कि जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) मदीना आये तो आप (सल्ल०) पर हर माह तीन दिन के रोज़े रखने का हुक्म हुआ। फिर रमज़ान के रोज़े का हुक्म हुआ चूंकि लोगों की आ़दत न थी और रोज़ः रखना उनके लिए भारी था, इसलिए उन्हें यह इजाज़त थी कि ताक़त होते हुए भी जो व्यक्ति रोज़ः न रखे वह हर रोज़ः के बदले एक मिस्कीन (ग़रीबों) को खाना

खिला दे। फिर जब यह आयत उतरी فَمَن شَهِدَ مِنكُمُ الشَّهْرَ فَلْيَصُمْهُ यानी जो शख़्स इस माहे रमज़ान में मौजूद हो उस को ज़रूर इस में रोज़ः रखना चाहिए। फिर तीसरी तब्दीली यह हुई कि शुरु में खाना पीना और औ़रतों से सोह़बत करना सोने से पहले-पहले जायज़ था, अगर कोई सो जाता तो फिर चाहे रात ही में जागे, लेकिन खाना पीना और हमबिस्तरी उस के लिए मना थी, यानी सोने से दूसरा रोजः शुरु हो जाता था। फिर आयत أُحِلَّ لَكُمْ لَيْلَةَ الصِّيَامِ नाज़िल हुई और फिर मग़्रिब के बाद से लेकर सुबह़ सादिक़ तक रमज़ान की रातों में खाने-पीने और हमबिस्तरी की इजाज़त दे दी गई।

184 أَيَّامًا مَّعْدُودَاتٍ ۚ فَمَن كَانَ مِنكُم مَّرِيضًا أَوْ عَلَىٰ سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِّنْ أَيَّامٍ أُخَرَ ۚ وَعَلَى الَّذِينَ يُطِيقُونَهُ
فِدْيَةٌ طَعَامُ مِسْكِينٍ ۖ فَمَن تَطَوَّعَ خَيْرًا فَهُوَ خَيْرٌ لَّهُ ۚ وَأَن تَصُومُوا خَيْرٌ لَّكُمْ ۖ إِن كُنتُمْ تَعْلَمُونَ

وَعَلَى الَّذِينَ يُطِيقُونَهُ इब्ने सअ़द ने तब्क़ात में मुजाहिद से नक़्ल किया है कि यह आयते करीमा 'क़ैस बिन सायब' के बारे में नाज़िल हुई है कि रोज़ः खोल दो और हर एक रोज़ः के बदले में एक मिस्कीन को खाना खिला दे।

रोज़ः में रिआ़यत-

'बुख़ारी' में ह़ज़रत इब्ने अबी लैला से रिवायत है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के सहाबा ने हमसे बयान किया कि रमज़ान के रोज़े नाज़िल हुए तो रोज़ः रखना उन पर भारी पड़ता था, फिर जो व्यक्ति रोज़ाना एक मिस्कीन को खाना खिला देता वह बावजूद ताक़त होने के रोज़ः छोड़ देता था, इनको इसकी इजाज़त दी गई थी। फिर इस हुक्म को وَأَن تَصُومُوا خَيْرٌ لَّكُمْ ने मन्सूख़ (ख़त्म) कर दिया और सब को रोज़े रखने का हुक्म दिया गया।

ह़ज़रत इब्ने उमर (रज़ि०) ने भी فِدْيَةٌ طَعَامُ مِسْكِينٍ तिलावत की और फ़रमाया, "यह इजाज़त मन्सूख़ (ख़त्म) हो चुकी है"। इन रिवायात से मालूम हुआ कि रोज़ः रखने की ताक़त होते हुए रोज़ः न रखकर फ़िद्या देने की इजाज़त नहीं है। अब तो रोज़ः ही रखना होगा और इसमें जो भी तक्लीफ़ हो उसे बर्दाश्त करना होगा।

हाँ, जो व्यक्ति बिल्कुल ही रोज़ः न रख सकता हो उसके लिए फ़िद्या (बदला देने) का हुक्म है और इसमें यह भी फ़रमाया गया कि-

فَمَن تَطَوَّعَ خَيْرًا فَهُوَ خَيْرٌ لَّهُ इसका मतलब यह है कि पूरे रमज़ान के रोज़े फ़र्ज़ किये गये हैं। इन फ़र्ज़ रोज़ों के अ़लावा अगर कोई व्यक्ति अपनी खुशी से नफ़्ल रोज़े रख ले, मगर यह उसके लिए बेहतर है।

रोज़ः में तर्ग़ीब-

आख़िर में फ़रमाया गया कि وَأَن تَصُومُوا خَيْرٌ لَّكُمْ अल्लामा 'अबू बक्र ह़िसास' फ़रमाते हैं कि इसका सम्बन्ध उन लोगों से है जिनको शुरु में तन्दुरुस्त और मुक़ीम होने के बावजूद रोज़ः न रखने और उसकी जगह फ़िद्या देने की इजाज़त दी गई थी, मगर यह फ़रमाया कि रोज़ः रखना बेहतर है।

'अल्लामा हि़सास' यह भी फ़रमाते हैं कि हो सकता है इसका सम्बन्ध اَلَّذِيْنَ يُطِيْقُوْنَهٗ से भी हो और मुसाफ़िरों से भी हो क्योंकि इससे पहले भी ज़िक्र आ चुका है कि मुसाफ़िर और मरीज़ रमज़ान में रोज़ः न रखकर बाद में क़ज़ा कर सकते हैं। उनके लिए भी फ़रमाया कि वह भी रमज़ान में ही रोज़ः रख लें तो बेहतर है इससे मालूम हुआ कि सफ़र में रोज़ः रखना न रखने से बेहतर है।

185 شَهْرُ رَمَضَانَ الَّذِيْٓ اُنْزِلَ فِيْهِ الْقُرْاٰنُ هُدًى لِّلنَّاسِ وَبَيِّنٰتٍ مِّنَ الْهُدٰى وَالْفُرْقَانِ ۚ فَمَنْ شَهِدَ مِنْكُمُ الشَّهْرَ فَلْيَصُمْهُ ۗ وَمَنْ كَانَ مَرِيْضًا اَوْ عَلٰى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِّنْ اَيَّامٍ اُخَرَ ۗ يُرِيْدُ اللّٰهُ بِكُمُ الْيُسْرَ وَلَا يُرِيْدُ بِكُمُ الْعُسْرَ ۡ وَلِتُكْمِلُوا الْعِدَّةَ وَلِتُكَبِّرُوا اللّٰهَ عَلٰى مَا هَدٰىكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝

पिछली आयत में हुक्म हुआ था اَيَّامًا مَّعْدُوْدٰتٍ अर्थात थोड़े दिनों रोज़ः रख लिया करो, अब इस आयत में अल्लाह तआ़ला उस का ज़िक्र फ़रमाते हैं कि थोड़े दिन जिस में रोज़े का हुक्म हुआ है वह रमज़ान का महीना है।

रमज़ान के रोज़ों में सहूलत-

पिछली आयत में बताया जा चुका है कि रमज़ान के रोज़ों की फ़र्ज़ियत पहले नाज़िल हुई तो उसमें यह सहूलत थी कि जो बीमार हो और उस के लिए रोज़ः रखना दुश्वार हो या मुसाफ़िर हो तो उसके लिए अख़्तियार है कि रोज़ः रखे या न रखे और जितने रोज़ः छोड़े उतने ही रमज़ान के बाद और दिनों में गिन के रख ले और दूसरी सहूलत यह भी थी कि जो लोग रोज़ः रखने की ताक़त तो रखते थे, मगर शुरु में चूंकि रोज़ः की आ़दत न थी इसलिए एक माह लगातार रोज़े रखना मुश्किल था तो यह सहूलत फ़रमा दी गई थी कि चाहें रोज़ः रखें या रोज़े का फ़िद्या दें कि एक रोज़ः के बदले एक मिस्कीन (फ़क़ीर) को दो वक़्त पेट भर कर खाना खिलाएँ। कुछ दिनों के बाद जब लोग रोज़े के आदी हो गये तो यह इजाज़त ख़त्म कर दी गई।

इस आयत में रमज़ान की फ़ज़ीलत बयान की गई है कि अल्लाह ने इस महीने में अपनी किताबें नाज़िल कीं और क़ुर्आन मजीद भी इसी माह में नाज़िल हुआ जिसका ज़िक्र सूरः क़द्र में फ़रमाया गया है कि शबे क़द्र में लौहे-महफ़ूज़ में पूरा क़ुर्आन मजीद आसमाने दुनिया में नाज़िल किया गया और बैतुल इ़ज़्ज़त में रख दिया गया, फिर वहाँ से ह़ज़रत जिब्राईल (अ़लै०) थोड़ा-थोड़ा, हुक्म के अनुसार 23 साल तक लाते रहे। **(तफ़्सीर क़ुर्तुबी)**

एक बद्दू नबी करीम (सल्ल०) की ख़िद्मत में ह़ाज़िर हुआ और पूछा, "ऐ अल्लाह के रसूल! मुझे बताएँ कि अल्लाह ने मुझ पर कितनी नमाज़ें फ़र्ज़ की हैं?" आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "पाँच, अल्बत्ता तू इस के अ़लावा भी कुछ नवाफ़िल पढ़ना चाहे तो तेरी मर्ज़ी"। फिर उस ने पूछा, "यह बताएँ कि अल्लाह ने मुझ पर कितने रोज़े फ़र्ज़ किये हैं?" आप ने फ़रमाया "(पूरे) माह रमज़ान के सिवाय यह कि तू नफ़्ली रोज़े भी रखना चाहे।" "फिर उस ने सवाल किया, "मुझ पर ज़कात कितनी फ़र्ज़ है?" इस के बाद रावी ने कहा, "रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने उसे इस्लाम के उसूल बता दिये।" तो उस बद्दू ने कहा, "उस अल्लाह

की क़सम! जिस ने आप को इ़ज़्ज़त से नवाज़ा है मैं न तो कोई नफ़्ली अ़िबादत करुँगा और न उस अ़िबादत में ज़र्रह भर कमी करुँगा जो अल्लाह ने मुझ पर फ़र्ज़ की हैं।" इस पर रसूल-ए-अक्रम (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अगर यह अपने क़ौल में सच्चा है तो मुराद को पहुँच गया या जन्नत में दाख़िल हो गया।" **(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् सौम, बाब 1, ह़दीस 1891)**

क़ुर्आन तमाम इन्सानों के लिए हिदायत है-

इसमें फ़रमाया गया هُدًى لِّلنَّاسِ अर्थात यह क़ुर्आन तमाम इन्सानों के लिए हिदायत का ज़रिया है। हर व्यक्ति अपने मालिक की मर्ज़ी के अनुसार ज़िन्दगी गुज़ारने का रास्ता केवल क़ुर्आन ही से मालूम कर सकता है। यह इन्सानी ज़िन्दगी को सीधे रास्ते की ओर चलाने का ज़रिया है।

दूसरी ख़ुसूसियत क़ुर्आन की यह फ़रमाई بَيِّنٰتٍ مِّنَ الْهُدٰى है कि क़ुर्आन में हिदायत की साफ़-साफ़ दलीलें और रहनुमाई मौजूद हैं।

अल् फ़ुर्क़ान-

तीसरी ख़ुसूसियत यह फ़रमाई कि الْفُرْقَانِ 'अल् फ़ुर्क़ान' ह़क़ और बातिल को अलग करने वाली है। इसकी हिदायतें ऐसी हैं कि ह़क़ और बातिल के दर्मियान अन्तर करती हैं और इन्सान सच और झूठ सही और ग़लत, ह़क़ और बातिल में फ़ैसला करता है। फिर फ़रमाया فَمَنْ شَهِدَ مِنْكُمُ الشَّهْرَ فَلْيَصُمْهُ इसमें आ़क़िल व बालिग़ मुसलमान मर्द व औ़रत पर रमज़ान के रोज़ों की फ़र्ज़ियत फ़रमा दिया, मगर मुसाफ़िर मरीज़ और ह़मल वाली औ़रत और दूध पिलाने वाली औ़रत को इजाज़त दी गई है कि वह रमज़ान का रोज़ः न रखे बाद में उसकी क़ज़ा पूरी कर लें। इसी तरह़ हैज़ व निफ़ास वाली औ़रत को हुक्म है कि रमज़ान में रोज़े न रखें, बाद में पूरा कर लें। जिसकी तफ़्सील ह़दीस और फ़िक़ः की किताबों में मिल सकती है।

रमज़ान का एह़तिराम-

इसी तरह़ फ़ुक़हा (उ़लमा) ने लिखा है कि रमज़ान के दिन में बेरोज़ेदार नाबालिग़, बालिग़ हो जाए या कोई हैज़ वाली औ़रत पाक हो जाए तो वह रमज़ान के एह़तिराम में शाम तक न खाये न पिये। इससे भी मालूम होता है कि जो आदमी ऐसे इलाक़े में पहुँच गया जहाँ अभी रमज़ान बाक़ी है तो उसे चाहिए कि वह रमज़ान का एह़तिराम करे। एह़तिराम की दो सूरते हैं।

एक यह कि रोज़ः न रखे और खाये पिये और दूसरी सूरत यह है कि रोज़ः से रहे और यह रोज़ः रखना इस आयत के अनुसार है, इसलिए ऐसे व्यक्ति को रोज़ः ही रखना चाहिए। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला तुम्हारे साथ आसानी करना चाहता है, तुम्हारे लिए मुश्किल का इरादा नहीं करता।" इसी तरह नमाज़ों में भी आसानी रखी है कि अगर खड़े होकर नमाज़ नहीं पढ़ सकता तो लेटकर, बैठकर पढ़ सकता है। रुकूअ़ व सज्दः अगर नहीं कर सकता है तो इशारा के साथ अपनी ताक़त

के अनुसार जिस तरह् मुम्किन हो नमाज़ पढ़ ले। ज़कात में भी एक निसाब मुक़र्रर किया गया है और वह भी जब कि साल गुज़र जाए, कुल माल का चालीसवाँ हि़स्सा वाजिब होता है। इसी तरह ह़ज हर व्यक्ति पर फ़र्ज़ नहीं जो मक्का तक सवारी पर आने जाने की ताक़त रखता हो, साथ ही सफ़र ख़र्च भी हो और बच्चों का ज़रूरी ख़र्चा छोड़ जाए तब ह़ज फ़र्ज़ होता है, वह भी ज़िन्दगी में केवल एक बार।

रमज़ान फ़र्ज़ होने के बावजूद मरीज़ मुसाफ़िर, बूढ़ा, ह़ामिला औ़रत और दूध पिलाने वाली औ़रत के लिए आसानियाँ हैं जो ऊपर ज़िक्र हुई।

आगे की आयत में फ़रमाया गया وَلِتُكَبِّرُوا اللّٰهَ ह़ज़रत ज़ैद बिन अस्लम (रज़ि०) ने फ़रमाया, “इससे ईद के दिन की तक्बीरें मुराद हैं” और ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) ने फ़रमाया, “इससे चाँद देखते वक़्त अल्लाहु अकबर कहना मुराद है।” उसके बाद फ़रमाया, “तुम अल्लाह का शुक्र अदा करो कि आसानी अल्लाह की नेअ़मत है और इस नेअ़मत की क़द्रदानी करो।”

186 وَاِذَا سَاَلَكَ عِبَادِیْ عَنِّیْ فَاِنِّیْ قَرِیْبٌ ؕ اُجِیْبُ دَعْوَةَ الدَّاعِ اِذَا دَعَانِ فَلْیَسْتَجِیْبُوْا لِیْ
وَلْیُؤْمِنُوْا بِیْ لَعَلَّهُمْ یَرْشُدُوْنَ ۝

ह़ज़रत मुआ़विया बिन जैद (रज़ि०) से नक़्ल किया गया है कि एक अअ़राबी रसूल (सल्ल०) की ख़िद्मत में ह़ाज़िर हुआ और अ़र्ज़ किया, “हमारा परवरदिग़ार क़रीब है कि हम उस से सरगोशी करें या दूर है कि उसे पुकारें।” आप ने ख़ामोशी अख़्तियार फ़रमाई, “इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई।”

कि जब आप से मेरे बन्दे मेरे बारे में दर्याफ़्त करें तो आप फ़रमा दीजिए, “मैं बहुत क़रीब हूँ।” और ‘अ़ब्दुर्रज़्ज़ाक़’ ने ‘ह़सन’ से नक़्ल किया है कि सहाबा ने रसूल (सल्ल०) से दर्याफ़्त किया, “हमारा परवरदिग़ार कहाँ है?” इस पर यह आयते करीमा नाज़िल हुई, यह ह़दीस मुरसल है और दीगर तुरुक से भी मरवी है।

इब्ने अ़साकिर ने ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि रसूल (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, दुआ़ में आ़जिज़ (मायूसी) मत हो, इसलिए अल्लाह तआ़ला ने मुझ पर यह आयत नाज़िल फ़रमाई है कि मुझ से माँगों मैं तुम्हारी दुआ़ क़ुबूल करुँगा। ह़ाज़िरीन में से एक शख़्स बोला, “या रसूलल्लाह (सल्ल०) हमारा परवरदिगार दुआ़ को सुनता है या और क्या सूरत है।” इस पर यह आयते करीमा नाज़िल हुई।

पहली आयत में अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को नसीह़त की थी कि रमज़ान के रोज़े पूरे कर लेने के बाद तक्बीर कहो और अल्लाह का शुक्र अदा करो, कि उस ने रमज़ान जैसा बा-बरकत महीना अ़ता किया और उस में रोज़े रखने की तौफ़ीक़ बख़्शी और अब इस आयत में अल्लाह ने ख़बर दी कि वह अल्लाह, जिसे वह याद करेंगे और जिस का शुक्र अदा करेंगे उन से क़रीब है। अल्लाह तआ़ला ने दूसरी जगह फ़रमाया وَنَحْنُ اَقْرَبُ اِلَیْهِ مِنْ حَبْلِ الْوَرِیْدِ ۝ कि हम इन्सान से उस के गर्दन की रग से ज़्यादा क़रीब हैं। **(क़ाफ़-16)**

ह़दीस में है “अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है कि जो शख़्स मेरे किसी दोस्त से दुश्मनी रखता है तो

वह सुन ले कि मैं उसके ख़िलाफ़ एलाने जंग करता हूँ और मेरा बन्दा जिन अ़िबादात के ज़रिये से मेरा क़ुर्ब हा़सिल करता है उन में से कोई अ़िबादत मुझे उस से ज़्यादा पसन्द नहीं है जो मैंने उस पर फ़र्ज़ की है। (यानी अ़िबादात में मुझे फ़रायज़ की उ़म्दह और मुस्तक़िल अदाएगी सब से ज़्यादा पसन्द है) और मेरा बन्दा (इस के अ़लावा) नफ़्ली अ़िबादत कर के मुझ से इतना क़रीब हो जाता है कि मैं उस से मुहब्बत करने लगता हूँ, चुनांचे मैं उस का कान हो जाता हूँ जिस से वह सुनता है और उस की आँख हो जाता हूँ जिस से वह देखता है और उस का हाथ हो जाता हूँ जिस से वह पकड़ता है और उस का पांव हो जाता हूँ जिस से वह चलता है और अगर वह मुझ से कुछ मांगता है तो उसे देता हूँ और अगर किसी से मेरी पनाह चाहता है तो मैं उसे पनाह देता हूँ और मुझे किसी काम में जिसे मैं करना चाहता हूँ इतना तरद्दुद (संदेह) नहीं होता जितना कि मोमिन की जान लेने में होता है। (क्योंकि) वह मौत को (जिस्मानी तक्लीफ़ की वजह से) नागवार रखता है और ख़ुद मुझे भी उसे तक्लीफ़ देना बुरा लगता है।”

(सही़ह़ बुख़ारी, अल् रिफ़ाक़, बाब 38, ह़दीस 6502)

दुआ़-

उ़लम-ए-तफ़्सीर ने यह भी कहा है कि रोज़ों के अह़काम के दर्मियान दुआ़ के ज़िक्र से मक़्सूद इस तरफ़ इशारा है कि रमज़ान में दुआ़ की बड़ी अहमियत है। ‘अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर’ इफ़्तार के वक़्त अपने तमाम बाल बच्चों के साथ दुआ़ किया करते थे, इसलिए कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया है, “रोज़ेदार के इफ़्तार के वक़्त की दुआ़ क़ुबूल होती है।”

एक और ह़दीस में है कि तीन आदमी की दुआ़ रद् नहीं की जाती- ‘इमाम आ़दिल की,’ ‘रोज़ेदार की’ और ‘मज़्लूम’ की। **(मुस्नद अह़मद, तिर्मिज़ी, नसई, इब्ने माजा)**

इब्ने जरीर और इब्ने अबी ह़ातिम ने रिवायत की है, “एक आदमी रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास आया और पूछा, “ऐ अल्लाह के रसूल! क्या हमारा रब क़रीब है ताकि हम उस से सरगोशी करें या दूर है ताकि उसे पुकारें?” नबी करीम (सल्ल०) ख़ामोश रहे, यहाँ तक कि यह आयत नाज़िल हुई।

(तफ़्सील के लिए देखें सूरः क़ाफ़-16)

अल्लाह अपने बन्दों से क़रीब है, इसलिए कि वह रक़ीब है, ज़ाहिर व पोशीदा को जानता है, दिलों के भेद जानता है, वह अपने पुकारने वालों से क़रीब है और उन की पुकार को सुनता है। जो बन्दा अपने रब को दिल से पुकारता है, और कोई चीज़ दुआ़ की क़ुबूलियत में रुकावट नहीं होती, तो अल्लाह तआ़ला उस की दुआ़ क़ुबूल करता है। ख़ासतौर से अगर क़ुबूलियत दुआ़ के दीनी अस्बाब भी मौजूद हों यानी बन्दा अल्लाह के हुक्मों का पाबन्द हो और अल्लाह तआ़ला पर उस का ईमान और यक़ीन हो।

दुआ़ की क़ुबूलियत का तरीक़ा-

1- नबी करीम (सल्ल०) ने सज्दे में दुआ़ करने का हुक्म दिया है। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, “बहुत मुम्किन है कि तुम्हारे सज्दे की दुआ़ क़ुबूल हो जाए।” **(मुस्लिम)**

2- क़ुबूलियते दुआ़ की छः शर्तें हैं, अगर वह पूरी न हों तो दुआ़ क़ुबूल नहीं होती।

(I) दुआ़ अल्लाह तआ़ला के अस्मा-ए-हुस्ना के वास्ते से की जाए। (II) नियत में इख़्लास हो। (III) दुआ़ करने वाला अपनी कमज़ोरी व मोह़ताजी का इज़्हार करे। (IV) किसी गुनाह की दुआ़ न करे। (V) किसी ऐसी चीज़ के लिए दुआ़ न करे जिस के ज़रिये अल्लाह की नाफ़रमानी पर मदद लेनी चाहे। (VI) उसे यक़ीन हो कि अल्लाह ने अगर उसे किसी दुनियावी फ़ायदे से मह़रूम रखा है तो यह भी अल्लाह की नेअ़मत है, बिल्कुल उस नेअ़मत की तरह़ जो अल्लाह ने उसे दिया है।

दुआ़ मुसीबतों के टालने का ज़रिया है-

मुसीबतों को टालने का सब से मज़बूत ज़रिया दुआ़ है, लेकिन कभी वह अपना असर नहीं दिखा पाती या तो इसलिए कि दुआ़ किसी ऐसी चीज़ के लिए होती है जो अल्लाह को नापसन्द है, या दुआ़ के वक़्त पूरी तवज्जोह नहीं होती, या दुआ़ करने वाले की रोज़ी ह़राम हो, या वह ज़ालिम हो, या उस के दिल पर गुनाहों का पर्दा पड़ा हो या ग़फ़्लत और खेल-तमाशा में मुब्तिला हो।

दुआ़ मोमिन का हथियार है-

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया है, "दुआ़, मोमिन का हथियार और दीन का सुतून है और आसमान व ज़मीन का नूर है"। **(मुस्तदरक ह़ाकिम)**

दुआ़ का मामला किसी मुसीबत वाले के साथ तीन तरह़ का होता है, या तो दुआ़ मुसीबत से ज़्यादा क़वी होती है तो उसे दूर कर देती है, या कमज़ोर होती है तो मुसीबत ग़ालिब आ जाती है और बन्दे को पहुँच जाती है। (लेकिन कभी-कभी दुआ़ कमज़ोर होने के बावजूद मुसीबत को हल्की कर देती है) या दोनों एक दूसरे का मुक़ाबला करती रहती हैं और एक दूसरे को असर करने से रोकती हैं।

दुआ़ वाला हलाक नहीं होता-

दुआ़ बार-बार और ख़ूब रो-रो कर करनी चाहिए। रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "दुआ़ करने से न थको, इसलिए कि जो आदमी दुआ़ करता रहता है वह हलाक नहीं होता"। **(मुस्तदरक ह़ाकिम)**

दुआ़ की क़ुबूलियत के अवक़ात-

दुआ़ की क़ुबूलियत के छः मशहूर अवक़ात हैं। I- आख़िरी तिहाई रात में। II- अज़ान के वक़्त। III- अज़ान और इक़ामत के दर्मियान। IV- फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद। V- जुमे के दिन इमाम के मेम्बर पर जाने के बाद से नमाज़ ख़त्म होने तक। VI- जुमअ़ के दिन अ़स्र की नमाज़ के बाद आख़िरी वक़्त।

187 أُحِلَّ لَكُمْ لَيْلَةَ الصِّيَامِ الرَّفَثُ إِلَىٰ نِسَائِكُمْ ۚ هُنَّ لِبَاسٌ لَّكُمْ وَأَنتُمْ لِبَاسٌ لَّهُنَّ ۗ عَلِمَ اللَّهُ أَنَّكُمْ كُنتُمْ
تَخْتَانُونَ أَنفُسَكُمْ فَتَابَ عَلَيْكُمْ وَعَفَا عَنكُمْ ۖ فَالْآنَ بَاشِرُوهُنَّ وَابْتَغُوا مَا كَتَبَ اللَّهُ لَكُمْ ۚ وَكُلُوا وَاشْرَبُوا
حَتَّىٰ يَتَبَيَّنَ لَكُمُ الْخَيْطُ الْأَبْيَضُ مِنَ الْخَيْطِ الْأَسْوَدِ مِنَ الْفَجْرِ ۖ ثُمَّ أَتِمُّوا الصِّيَامَ إِلَى اللَّيْلِ ۚ وَلَا تُبَاشِرُوهُنَّ
وَأَنتُمْ عَاكِفُونَ فِي الْمَسَاجِدِ ۗ تِلْكَ حُدُودُ اللَّهِ فَلَا تَقْرَبُوهَا ۗ كَذَٰلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ آيَاتِهِ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ ﴿١٨٧﴾

इब्ने जरीर ने अ़ता बिन अबी रिबाह़ से नक़्ल किया है कि उन्हें यह बात पहुँची है कि जिस वक़्त यह आयते करीमा नाज़िल हुई कि तुम्हारे परवरदिग़ार फ़रमाते हैं कि मुझे पुकारो मैं तुम्हारी दुआ़ को क़ुबूल करता हूँ तो सहाबा (रज़ि०) ने अ़र्ज़ किया कि यह हमें मालूम नहीं कि हम किस वक़्त दुआ़ माँगें इस पर यह आयते करीमा नाज़िल हुई।

أُحِلَّ لَكُمْ لَيْلَةَ الصِّيَامِ الرَّفَثُ इमाम अह़मद, अबू दाऊद और इमाम ह़ाकिम ने अ़ब्दुर्रह़मान बिन अबी लैला के वास्ते से ह़ज़रत मुआ़ज़ बिन जबल (रज़ि०) से रिवायत नक़्ल की है कि सह़ाबा-ए-किराम रात को सोने से पहले खा पी लेते थे और बीवियों के पास चले जाया करते थे और जब सो जाते तो इन तमाम चीज़ों से रुक जाया करते थे। **(अबूदाऊद)**

सोने से पहले रोज़े में खाने-पीने की इजाज़त-

शुरु में अहले किताब की तरह़ मुसलमानों को भी रोज़ों के दिनों में रात के वक़्त सोने से पहले खाने-पीने और बीवियों से हमबिस्तरी की इजाज़त थी, लेकिन अगर सो जाने के बाद आँख खुले तो फिर खाने-पीने और बीवियों से हमबिस्तरी की इजाज़त न थी। इस से सह़ाबा-ए-किराम (रज़ि०) को कुछ परेशानी हुई और बाज़ से कोताही हो गई और नादिम होकर रसूल (सल्ल०) की ख़िद्‌मत में ह़ाज़िर होकर तौबः किया, उन की नदामत पर अल्लाह तआ़ला ने रह़मत फ़रमाई और यह आयत नाज़िल हुई।

अतः इस आयत के शाने नुज़ूल में है कि "एक ग़रीब अन्सारी सह़ाबी (रज़ि०) दिन भर के रोज़े से मज़दूरी करके थके हुए इफ़्तार के वक़्त घर पहुँचे तो घर में इफ़्तार के बाद खाने को कुछ तैयार न था। बीवी ने कहा कि मैं इन्तिज़ाम करके कुछ लाती हूँ जब वह वापस आये तो दिन भर की थकान की वजह से सो गये। अब बेदार हुए तो खाना ह़राम हो चुका था और चूंकि उस वक़्त रात में सोने की वजह से खाने की इजाज़त न थी इसलिए खाना न खाया और उसी तरह़ अगला रोज़ः रख लिया। अगला रोज़ः रखने की वजह से कमज़ोरी का बहुत ज़्यादा एह़सास हुआ जिस की वजह से उन का बुरा ह़ाल हो गया, तो रसूलुल्लाह (सल्ल०) को ख़बर दी गई। इसी तरह़ दूसरे वाक़िआत भी हुए, कुछ सह़ाबा ने रसूल (सल्ल०) की ख़िद्‌मत में अ़र्ज़ किया कि जज़्बात के ग़ल्बे में आने के बाद उन्होंने अपनी बीवियों से हमबिस्तरी की और उस पर नदामत के साथ मअ़ज़रत की, तब यह आयत नाज़िल हुई जिस में अल्लाह तआ़ला ने वुसअ़त दी और पहला हुक्म मन्सूख़ (रद्द) करके गुरुब आफ़ताब (सूरज के डूबने) के बाद से सुबह़ सादिक़ तक पूरी रात खाने-पीने और हमबिस्तरी की इजाज़त दे दी गई, चाहे सो कर उठने के बाद ही हो।

सोने के बाद खाने की इजाज़त-

यहाँ इस आयत में أُحِلَّ لَكُمْ (ह़लाल कर दिया गया तुम्हारे वास्ते।) इससे मालूम हुआ कि जो चीज़ इस आयत के ज़रिये ह़लाल की गई वह इस से पहले ह़राम थी और इस आयत ने जिस हुक्म को मन्सूख़ किया यानी सो जाने के बाद खाने-पीने और बीवी से हमबिस्तरी की हुरमत को वह हुक्म क़ुर्आन में कहीं नहीं है। रसूलुल्लाह (सल्ल०) की तअ़लीम से सह़ाबा किराम (रज़ि०) इस हुक्म पर अ़मल करते थे। इस

से साफ़ साबित हुआ कि सुन्नत से साबित शुदा बाज़ एह्काम को क़ुर्आन के ज़रिये भी मन्सूख़ (ख़त्म) किया जा सकता है और शरई एह्काम के सुबूत के लिए रसूले करीम (सल्ल०) का इर्शाद भी क़ुर्आन के हुक्म जैसा है।

दूसरी बात यहाँ आयत में मियाँ-बीवी को एक दूसरे का लिबास फ़रमाया गया। जिस से इस क़रीबी रिश्ते को ज़ाहिर किया गया है जो उन्हें अल्लाह तआ़ला की इजाज़त और हुक्म से एक दूसरे को ह़ासिल है। यह लिबास की क़ुर्आनी तशबीह (संज्ञा) मियाँ-बीवी में कई तरह़ मौजूद है। जैसे-उन के पास आपस के क़रीबी तअल्लुक़ात, एक दूसरे की आपस में मोह़ताजी, जिस्मानी एतिबार से एक दूसरे का क़ुर्ब। एक दूसरे के लिए ज़ेबो ज़ीनत और इत्मिनान व सुकून राह़त व आसाइश का होना और सब से बढ़कर यह कि एक दूसरे के इन्तिहाई राज़दार होने के बावजूद पर्दापोशी करना।

इस से यह भी साबित हुआ कि शरीअ़ते इस्लामिया फ़ित्री जज़्बात व ख़्वाहिशात को सिरे से मिटाना नहीं चाहती बल्कि तमाम काम अल्लाह तआ़ला की मर्ज़ी और उस के हुक्म के मुताबिक़ ढ़ालना चाहती है।

फिर यहाँ आयत में فَالْـٰٔنَ بَاشِرُوْهُنَّ (सो जब इजाज़त हो गई तो अब उन से यानी बीवियों से मुलाक़ात) के साथ यह भी हिदायत फ़रमाई गई وَابْتَغُوْا مَا كَتَبَ اللّٰهُ لَكُمْ (और अल्लाह तआ़ला ने जो तुम्हारे लिए लिख दिया है तलब करो।) 'इब्तिग़ा' के माने हैं किसी चीज़ के तलब करने और ह़ासिल करने की कोशिश करना مَا كَتَبَ اللّٰهُ (जो अल्लाह ने लिख दिया है) इस से मुराद औलाद व नस्ल है, तो यहाँ इजाज़त के साथ यानी एक इशारा यह भी फ़रमा दिया कि अपनी बीवियों के पास औलाद पैदा करने की ग़र्ज़ से जाना चाहिए। मुबाशिरत के अ़मल से इन्सानी लज़्ज़त भी ह़ासिल होती है, लेकिन इस्लाम ने इस अ़मल का ख़ास मक़सद हुसूले औलाद और नस्ल की बढ़ौतरी रखा है। क़ुर्आन मजीद के इस हिदायत से वाज़ेह हो गया कि **"मनअ़ ह़म्ल"** और **"ज़ब्ते तौलीद"** (बच्चे की पैदाईश को रोकना) और ख़ानदानी मन्सूबा बन्दी की तह़रीक इस्लामी तअ़लीम के ख़िलाफ़ है।

इस आयत में जो सुबह़ सादिक़ तक खाने पीने का हुक्म है। इस से मालूम हुआ कि बग़ैर सह़री खाए हुए रोज़ः मुसल्सल रखते चले जाना शरीअ़त में नापसन्दीदह है। सय्यदना अ़दी इब्ने अबी ह़ातिम (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने रात को एक सफ़ेद डोरी और एक काली डोरी अपने तकिये के नीचे रख ली, उन्हें देखता रहा मगर तमीज़ न हुई। जब सुबह़ हुई तो आप (सल्ल०) से अ़र्ज़ किया, "या रसूलल्लाह मैंने अपने तकिये के नीचे दो डोरियाँ रखी थीं"। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तुम्हारा तकिया तो बहुत बड़ा है जिस के नीचे सफ़ेद डोरी और काली डोरी आ गई"। **(बुख़ारी)**

एतिकाफ़-

फिर इस आयत में जो 'एतिकाफ़ फ़िल् मस्जिद' को फ़रमाया तो यह हुक्म ख़ास मर्दों के लिए है। औरतों का एतिकाफ़ बजाय मस्जिद के घर के किसी गोशे में हो सकता है।

आयत के अख़ीर में यह तम्बीह की गई है कि यह तमाम उसूल व क़वानीन, ह़दें और बन्दिशें अल्लाह ने मुक़र्रर की हैं, जो बड़ी ह़िक्मत वाले इ़ल्म वाले हैं।

आयत नं० 188 से 196 तक

وَلَا تَأْكُلُوٓا أَمْوَالَكُم بَيْنَكُم بِالْبَاطِلِ وَتُدْلُوا بِهَآ إِلَى الْحُكَّامِ لِتَأْكُلُوا فَرِيقًا مِّنْ أَمْوَالِ النَّاسِ بِالْإِثْمِ وَأَنتُمْ تَعْلَمُونَ ۝ يَسْـَٔلُونَكَ
عَنِ الْأَهِلَّةِ ۖ قُلْ هِيَ مَوَاقِيتُ لِلنَّاسِ وَالْحَجِّ ۗ وَلَيْسَ الْبِرُّ بِأَن تَأْتُوا الْبُيُوتَ مِن ظُهُورِهَا وَلَٰكِنَّ الْبِرَّ مَنِ اتَّقَىٰ ۗ وَأْتُوا الْبُيُوتَ
مِنْ أَبْوَابِهَا ۚ وَاتَّقُوا اللَّهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ۝ وَقَاتِلُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ الَّذِينَ يُقَاتِلُونَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوٓا ۚ إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِينَ ۝
وَاقْتُلُوهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوهُمْ وَأَخْرِجُوهُم مِّنْ حَيْثُ أَخْرَجُوكُمْ ۚ وَالْفِتْنَةُ أَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ ۚ وَلَا تُقَاتِلُوهُمْ عِندَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ حَتَّىٰ
يُقَاتِلُوكُمْ فِيهِ ۖ فَإِن قَاتَلُوكُمْ فَاقْتُلُوهُمْ ۗ كَذَٰلِكَ جَزَآءُ الْكَافِرِينَ ۝ فَإِنِ انتَهَوْا فَإِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝ وَقَاتِلُوهُمْ حَتَّىٰ لَا تَكُونَ
فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ لِلَّهِ ۖ فَإِنِ انتَهَوْا فَلَا عُدْوَانَ إِلَّا عَلَى الظَّالِمِينَ ۝ الشَّهْرُ الْحَرَامُ بِالشَّهْرِ الْحَرَامِ وَالْحُرُمَاتُ قِصَاصٌ ۚ فَمَنِ
اعْتَدَىٰ عَلَيْكُمْ فَاعْتَدُوا عَلَيْهِ بِمِثْلِ مَا اعْتَدَىٰ عَلَيْكُمْ ۚ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاعْلَمُوٓا أَنَّ اللَّهَ مَعَ الْمُتَّقِينَ ۝ وَأَنفِقُوا فِي سَبِيلِ
اللَّهِ وَلَا تُلْقُوا بِأَيْدِيكُمْ إِلَى التَّهْلُكَةِ ۛ وَأَحْسِنُوٓا ۛ إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ ۝ وَأَتِمُّوا الْحَجَّ وَالْعُمْرَةَ لِلَّهِ ۚ فَإِنْ أُحْصِرْتُمْ فَمَا
اسْتَيْسَرَ مِنَ الْهَدْيِ ۖ وَلَا تَحْلِقُوا رُءُوسَكُمْ حَتَّىٰ يَبْلُغَ الْهَدْيُ مَحِلَّهُ ۚ فَمَن كَانَ مِنكُم مَّرِيضًا أَوْ بِهِ أَذًى مِّن رَّأْسِهِ فَفِدْيَةٌ
مِّن صِيَامٍ أَوْ صَدَقَةٍ أَوْ نُسُكٍ ۚ فَإِذَآ أَمِنتُمْ فَمَن تَمَتَّعَ بِالْعُمْرَةِ إِلَى الْحَجِّ فَمَا اسْتَيْسَرَ مِنَ الْهَدْيِ ۚ فَمَن لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ
ثَلَاثَةِ أَيَّامٍ فِي الْحَجِّ وَسَبْعَةٍ إِذَا رَجَعْتُمْ ۗ تِلْكَ عَشَرَةٌ كَامِلَةٌ ۗ ذَٰلِكَ لِمَن لَّمْ يَكُنْ أَهْلُهُ حَاضِرِي الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ۚ وَاتَّقُوا
اللَّهَ وَاعْلَمُوٓا أَنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ۝

अनुवाद-

(188) और एक-दूसरे का माल आपस में नाहक़ (अवैध रूप से) न खाओ, और न उन्हें हाकिमों के पास ले जाओ कि हक़ मारकर (रिश्वत लेकर) लोगों के कुछ माल जानते बूझते हड़प लो। (189) लोग आप से नये चाँद (के घटने बढ़ने) के बारे में पूछते हैं, कह दीजिए, "यह लोगों के (वक़्त बताने के) लिए और हज का समय जानने का ज़रिया हैं।" और नेकी यह नहीं, कि तुम घरों में उनके पिछवाड़े से आओ, और नेकी तो उसकी है जो डर रखे; और तुम घरों में उनके दरवाज़ों से आओ और अल्लाह से डरते रहो,ताकि तुम कामियाब हो सको। (190) और तुम अल्लाह की राह में लड़ो उन लोगों से जो तुम से लड़ते हैं, मगर ज़्यादती (अत्याचार) न करना कि अल्लाह ज़्यादती करने वालों को पसंद नहीं करता; (191) और (ऐसे काफ़िरों को जो ज़ुल्म कर रहे हैं) उनको जहाँ कहीं पाओ क़त्ल करो, और उनको निकाल दो, जहाँ से उन्होंने तुम्हें निकाला; और (इसलिए कि) फ़ित्ना (उत्पीड़न) पैदा करना क़त्ल से भी बढ़कर है, और उनसे मस्जिदे ह़राम (कअ़बः) के पास न लड़ना, जब तक कि वे उस जगह तुमसे न लड़ें; फिर अगर वे खुद ही तुम से लड़ें, तो उन्हें क़त्ल करो, यही काफ़िरों (सच्चाई का इन्कार करने वालों) की सज़ा है; (मगर जो न लड़ें उन्हें केवल काफ़िर होने की वजह से मारा या परेशान न किया जाए) (192) फिर अगर वह (ज़ुल्म से) रुक जाएँ, तो अल्लाह माफ़ करने वाला, मेहरबान है; (193) और उनसे लड़ो (जिन काफ़िरों ने ज़ुल्म किया) यहाँ तक कि फ़ित्ना (ज़ुल्म) बाक़ी न रहे और दीन अल्लाह के लिए हो जाए, फिर अगर वे (ज़ुल्म से)बाज़ आ जाएँ तो ज़ालिमों के सिवा किसी पर ज़्यादती न करो। (194) बड़ाई वाला (प्रतिष्ठित) महीना बराबर है, बड़ाई वाले महीने के, और सम्मान रखने में बदला है; फिर अगर जिसने तुम पर ज़्यादती की, तो (केवल उसी को)

तुम भी उसके ज़्यादती की सज़ा दो, जैसा उसने तुम पर ज़्यादती की है; और अल्लाह से डरते रहो, और जान लो! कि अल्लाह डरने वालों (परहेज़गारों) के साथ है। (195) और अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करो और अपने आपको तबाही में न डालो, और अच्छे से अच्छा तरीक़ा अपनाओ; बेशक अल्लाह नेकी करने वालों को पसंद करता है। (196) और हज और उ़मरः अल्लाह के लिए पूरा करो फिर अगर तुम रोक दिये जाओ, (या घिर जाओ) तो तुम पर कुर्बानी का जानवर ज़बूह़ करना है; जो आसानी से मिले; और अपने सरों को न मुडाओ जब तक कि कुर्बानी का जानवर अपने ठिकाने न पहुँच जाए; फिर अगर जो तुम में बीमार हो या उसके सर में कुछ तकलीफ़ हो, (सर मुड़ा ले) तो उसके बदले रोज़े रखे या सदक़ः दे या कुर्बानी के रूप में फ़िद्या (दान) दे, फिर जब तुम अम्न की ह़ालत में हो जाओ तो जो हज तक उमरे का फ़ायदा उठाना चाहे- तो जो कुर्बानी का जानवर आसानी से मिले पेश करे- फिर जिसको कुर्बानी का जानवर न मिले, तो वह तीन रोज़े हज के दिनों में रखे, और सात रोज़े जब वापस हो, यह पूरे दस हुए; यह हुक्म उस व्यक्ति के लिए है जिसके बाल-बच्चे मस्जिदे ह़राम के पास न रहते हों, और अल्लाह से डरते रहो और जान लो! कि अल्लाह की सज़ा (दण्ड) बहुत सख़्त है।

आयत नं० 188 से 196 तक की व्याख्या

188-189 وَلَا تَأْكُلُوٓا أَمْوَالَكُم بَيْنَكُم بِالْبَاطِلِ وَتُدْلُوا بِهَآ إِلَى الْحُكَّامِ لِتَأْكُلُوا فَرِيقًا مِّنْ أَمْوَالِ النَّاسِ بِالْإِثْمِ وَأَنتُمْ تَعْلَمُونَ ۝ يَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْأَهِلَّةِ ۖ قُلْ هِىَ مَوَٰقِيتُ لِلنَّاسِ وَالْحَجِّ ۗ وَلَيْسَ الْبِرُّ بِأَن تَأْتُوا الْبُيُوتَ مِن ظُهُورِهَا وَلَٰكِنَّ الْبِرَّ مَنِ اتَّقَىٰ ۗ وَأْتُوا الْبُيُوتَ مِنْ أَبْوَابِهَا ۚ وَاتَّقُوا اللَّهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ۝

وَلَا تَأْكُلُوٓا ‘इब्ने अबी ह़ातिम’ ने ‘सईद बिन जुबैर’ से नक़्ल किया है कि ‘उमरउल् क़ैस बिन आ़बिस’ और ‘अ़ब्दान बिन अशरअ़ ह़ज़रमी’ दोनों में एक ज़मीन के बारे में झगड़ा हुआ तो उमरउल् क़ैस ने क़सम खाने का इरादा किया, इस पर यह आयते करीमा नाज़िल हुई कि नाह़क़ तरीक़े पर एक दूसरे का माल मत खाओ।

يَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْأَهِلَّةِ ‘इब्ने अबी ह़ातिम’ ने इक्रमा के वास्ते से ‘ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास’ (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि लोगों ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से चाँद के बारे में दर्याफ़्त किया, “इस पर यह आयत नाज़िल हुई और ‘इब्ने अबी ह़ातिम’ ने ‘अबू अल् आ़लिया’ से नक़्ल किया है फ़रमाते हैं, “हमें यह बात पहुँची है कि सह़ाबा (रज़ि०) ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह (सल्ल०) अल्लाह तआ़ला ने चाँद को क्यों पैदा किया है, इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई।”

‘अबू नईम’ और ‘इब्ने असाकिर’ ने तारीख़ दमिश्क में सुद्दी सग़ीर, अबू सालेह़ के वास्ते से ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है फ़रमाते हैं, “मुआ़ज़ बिन जबल और ‘सअ़ल्बा बिन ग़ानम’ ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह (सल्ल०) यह क्या बात है कि पहले चाँद धागे की तरह़ बारीक नज़र आता है फिर बढ़ता रहता है यहाँ तक कि पूरा हो जाता है और रुकता और घूमता है और फिर कम और बारीक

होता रहता है, यहाँ तक कि फिर पिछली हालत पर पहुँच जाता है और एक हालत पर बाक़ी नहीं रहता।" इस पर यह आयते करीमा नाज़िल हुई कि आप से चाँद के बारे में दर्याफ़्त करते हैं।

(तफ़्सीर इब्ने अ़ब्बास)

ह़राम किसी के कहने से ह़लाल नहीं होता-

इस आयते करीमा में अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को आपस में एक दूसरे का माल नाजायज़ तौर पर खाने से मना फ़रमाया और यह बताया, कि अगर क़ाज़ी रिश्वत लेकर नाह़क़ फ़ैसला कर देता है तो इस फ़ैसले से ह़राम ह़लाल नहीं हो जाता।

'इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा' कहते हैं कि यह आयत उस आदमी के बारे में है जिस के ज़िम्मे किसी का माल हो और माल वाले के पास कोई दलील न हो और वह आदमी इन्कार कर दे और मामला ह़ाकिम के पास ले जाए ताकि फ़ैसला उस के ह़क़ में हो जाए, ह़ालाँकि वह जानता है कि वह गुनाहगार है और ह़राम खाने पर तुला हुआ है।

ह़राम माल की शक्लें-

नोट- लोगों का माल ह़राम तौर पर खाने की बहुत सी शक्लें हैं। जैसे किसी का माल दबा लेना, चोरी करना, अमानत में ख़यानत करना, सूद खाना, जुआ का माल खाना, ख़रीद व फ़रोख़्त में धोका देना, ऐसे काम की उजरत लेना जिसे ठीक से अन्जाम नहीं दिया, अ़िबादत पर उजरत लेना, ज़कात, सद्क़ः, वक़्फ़ और वसीयत का माल नाह़क़ लेना। यह और इस क़िस्म की वह तमाम सूरतें जिन में लोगों का माल नाह़क़ खाया जा रहा हो, "खाना ह़राम" है, जो किसी तरह़ भी जायज़ नहीं है।

ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर बिन अ़ास (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "रिश्वत लेने वाला और देने वाला दोनों लअ़नती हैं।" (अबूदाऊद)

وَلَيْسَ الْبِرُّ इमाम बुख़ारी (रह़०) ने ह़ज़रत बरा (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि ज़माने जाहिलियत में जब लोग एह़राम बाँधते तो अपने घरों में पीछे की तरफ़ से दाख़िल होते थे। इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई कि इस में कोई फ़ज़ीलत नहीं कि अपने घरों में पीछे की तरफ़ से आओ।

चाँद के ज़रिये तारीख़-

इसमें अल्लाह तआ़ला ने बयान किया है कि चाँद के ज़रिये लोग अपनी ज़रूरियाते ज़िन्दगी के अवक़ात मुक़र्रर करते हैं। फ़र्ज़, रोज़ः, इफ़्तार, ह़ज, उजरतें, माहवारी के अय्याम, अ़ौरतों की इद्दत और बहुत सी शर्तों की मुद्दत, यह सारी चीज़ें चाँद ही के ज़रिये मालूम होती हैं।

तारीख़ इन्सानी ज़िन्दगी की एक अहम ज़रूरत है। दुनिया में शम्सी कैलेन्डर अर्थात सूर्य द्वारा निर्धारित तारीख़ों का ज़्यादा रिवाज है। इसकी बुनियाद ह़िसाब और मैथ पर है। इस में ग़लती का इम्कान ज़्यादा है, लेकिन इस्लाम में शुरु ही से कैलेन्डर के बारे में रूयते ह़िलाल (चाँद के देखने) को माना है

क्योंकि इसमें ग़लती का इम्कान नहीं के बराबर है। जिसे क़ुर्आन मजीद की इस सूरः में और इसके अ़लावा सूरः यूनुस आयत नं० 5 और सूरः यासीन आयत नं० 39 में इस की तरफ़ ख़ास इशारा कर के इस्लामी कैलेन्डर को क़मरी (चाँद के) हिसाब से रखने का हुक्म दिया है और सूरः तौबः आयत नं० 36 में इस्लामी महीनों की तअ़दाद **'बारह'** बताते हुए उसमें से **'चार'** को क़ाबिले एह़तिराम क़रार देते हुए यह ह़क़ीक़त बयान की है कि यह क़मरी तारीख़ इन्सानी तारीख़ में शुरु से ही जारी रही है, चाहे ह़ज़रत आदम (अ़लै०) का तूफ़ाने नूह़ का हो या इब्राहीम (अ़लै०) का आग में जलाया जाना ह़ज़रत यूसुफ़ (अ़लै०) का और बनी इस्राईल व ह़ज़रत दाऊद (अ़लै०) व ह़ज़रत सुलेमान (अ़लै०) व ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) का दौर सब क़मरी तारीख़ें ही इस्तेमाल करते थे इसी तरह़ आमुल् फ़ील का सन् मशहूर हैं, लेकिन क़ुरैश तअ़मीरे कअ़बः आतिशे ख़लील और वाक़िया फ़ील से अपनी तारीख़ मानते थे।

आप (सल्ल०) जब हिजरत कर के मदीना तशरीफ़ लाए तो यहाँ कोई सन् रायज न था। सह़ाबा-ए-किराम (रज़ियल्लाहु अ़न्हुम अजमईन) वाकिया हिजरत से हर माह अपनी तारीख़ शुमार करने लगे। इस तरह़ साल का नाम उस साल के अहम वाक़िये से करते। जैसे- हिजरत का साल "سنة الاذن بالرحيل" (सनतुल्इज़्नि बिर्रिह़ाल) दूसरे साल का नाम "سنة الامر بالقتال" (सनतुल् अम्र बिल्क़िताल) तीसरे साल का नाम "سنة التمحيص" (सनतुल् मह़ीस) इसी तरह़ और सालों के नाम अहम तारीख़ी वाक़ियात पर रखे गये। फिर यह सिल्सिला ख़त्म हो गया।

ह़ज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) का पूरा दौर और ह़ज़रत उ़मर फ़ारूक़ (रज़ि०) के दौर के शुरुआ़ती चार साल इस तरह़ गुज़रे कि मुसलमानों के दर्मियान कोई सन् रायज न था, लेकिन जब ह़ज़रत उ़मर फ़ारूक़ (रज़ि०) का इस्लामी शासन बढ़ गया तो शासन से सम्बन्धित काम और माली बट्वारे के लिए तारीख़ की सख़्त ज़रूरत महसूस की जाने लगी। अतः गवर्नर 'बसरा' ह़ज़रत 'अबू मूसा अशअ़री (रज़ि०)' ने ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) को लिखा कि आप के ख़ुतूत हमारे पास आते हैं और उस पर कोई तारीख़ नहीं लिखी होती जिससे इसमें हुक्मों की वज़ाह़त (स्पष्टीकरण) में दुश्वारी होती है। इसी तरह़ ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) के पास एक चेक आया जिसमें अदाएगी का वक़्त 'शाबान' लिखा हुआ था।

'ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०)' ने कहा कि कौन सा 'शाबान'? वह जिससे हम गुज़र रहे हैं या वह जो गुज़र गया या वह जो आइन्दा आएगा। अचानक उसी वक़्त एक नव मुस्लिम बादशाह ह़ज़रत हुर्मज़ान (रह़०) दरबारे फ़ारूक़ी में ह़ाज़िर हुए उन्होंने कहा कि हमारे यहाँ जो हिसाब है उसको "माहरोज़" कहते हैं और उसमें महीना और साल दोनों का ज़िक्र होता है। ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) को तारीख़ लिखने का यह तरीक़ा बहुत पसन्द आया और फ़रमाया कि तुम लोग भी अपनी तारीख़ इसी तरह़ लिखो।

इस्लामी तारीख़ की शुरुआ़त-

ह़ज़रत उ़मर फ़ारूक़ (रज़ि०) ने इस्लामी तारीख़ को तय करने के लिए रबीअ़उलव्वल की १६ हिज्री में 'मुहाजिरीन' व अन्सार सह़ाबा की एक मजलिस (मीटिंग) की जिसमें बहुत से सह़ाबा-ए-किराम ने अपने-अपने मश्वरे दिये। इस्लामी कैलेन्डर को किसी ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) की विलादत से किसी

ने कहा आप (सल्ल०) की बेअ़सते नबवी से और किसी ने हिजरते नबवी के वाक़िया से और किसी ने आप (सल्ल०) की वफ़ात से कहा, लेकिन ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) ने यह तज्वीज़ (राय) रखी कि हिजरते नबवी के वाक़िये से इस्लामी तारीख़ शुरु की जानी चाहिए, जो ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) को बहुत पसन्द आई और सब के इत्तिफ़ाक़ (सहमति) से सन् हिज्री मन्ज़ूर कर लिया गया क्योंकि हिजरत का वाक़िया तारीख़े इस्लामी की शुरुआ़त है। उसके बाद उस पर ग़ौर किया गया कि इस्लामी सन् हिज्री को किस महीने से शुरु किया जाए। इसमें भी कई राएँ पेश हुईं लेकिन ह़ज़रत उ़स्माने ग़नी (रज़ि०) ने तज्वीज़ (राय) रखी कि मुह़र्रम के महीने से इस्लामी साल की शुरुआ़त की जाए और यही राय ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) की भी थी।

ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने भी इसी को पसन्द किया, क्योंकि हिजरत की पहली बुनियाद बैअ़ते उक़्बा-ए-ऊला इसी माह़ मुबारक में हुई थी। अतः इसी पर सबका इत्तिफ़ाक़ (सहमति) हो गया। इस तरह ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने हुक्म जारी फ़रमाया और तमाम आ़लमे इस्लामी में यह तारीख़ रायज हो गई।

इस्लामी कैलेन्डर दीने इस्लाम का "शआ़यर" है। इसलिए कि तमाम अम्बिया (अ़लै०) की शरीअ़तों में तारीख़ का ह़िसाब रात से होता है और अम्बिया (अ़लै०) की शरीअ़तों में क़मरी महीने का ही एतिबार होता है।

अतः तमाम आसमानी मज़ाहिब में ह़िसाब क़मरी महीनों से सूरज डूबने के बाद से तारीख़ की शुरुआ़त होती है। इस्लामी अ़िबादात में क़मरी ह़िसाब का एतिबार है। अल्बत्ता दुनियावी मामले में शम्सी ह़िसाब की गुन्जाइश है।

इमाम कुर्तुबी (रह़०) ने इब्ने अ़रबी के ह़वाले से नक़्ल किया है कि शम्सी ह़िसाब दुनियावी नफ़े के लिए है और क़मरी ह़िसाब अ़िबादत के लिए है। **(मआ़रिफुल कुर्आन भाग 4 पेज नं० 58)**

190-193

وَقَاتِلُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ الَّذِينَ يُقَاتِلُونَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوا ۚ إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِينَ ۝ وَاقْتُلُوهُمْ
حَيْثُ ثَقِفْتُمُوهُمْ وَأَخْرِجُوهُمْ مِنْ حَيْثُ أَخْرَجُوكُمْ ۚ وَالْفِتْنَةُ أَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ ۚ وَلَا تُقَاتِلُوهُمْ عِنْدَ
الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ حَتَّىٰ يُقَاتِلُوكُمْ فِيهِ ۖ فَإِنْ قَاتَلُوكُمْ فَاقْتُلُوهُمْ ۗ كَذَٰلِكَ جَزَاءُ الْكَافِرِينَ ۝ فَإِنِ انْتَهَوْا
فَإِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ۝ وَقَاتِلُوهُمْ حَتَّىٰ لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ لِلَّهِ ۖ فَإِنِ انْتَهَوْا فَلَا
عُدْوَانَ إِلَّا عَلَى الظَّالِمِينَ ۝

अल्लाह की राह में क़िताल करने का हुक्म

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) हिजरत के छठवें साल अपने सह़ाबा के साथ उ़मरह करने के लिए मदीना मुनव्वरह से रवाना हुए। जब मक्का क़रीब आया तो मक़ामे 'हुदैबिया' पर मुश्रिकीन-ए-मक्का ने आप (सल्ल०) को रोक दिया और मक्का में दाख़िल न होने दिया। बड़ी मुश्किल के बाद उन्होंने इस साल के लिए चन्द शर्तों पर 'सुलह़' कर ली, उन में से एक शर्त यह भी थी कि इस साल उ़मरह नहीं कर सकते

आइन्दा साल उ़मरह के लिए तशरीफ़ लाएँ और उस वक़्त मक्का में तीन दिन से ज़्यादा नहीं ठहरेंगे, यह 'ज़ीक़अ़दः' का महीना था। फिर आप आइन्दा साल माह 'ज़ीक़अ़दः' ही में उ़मरह की क़ज़ा के लिए तशरीफ़ लाए तो उस वक़्त चार महीनों (1) ज़ीकअ़दः (2) ज़िलहिज्ज (3) मुहर्रम (4) रजब में क़िताल करना और जंग करना मना था। इन चार महीनों में 'ज़ीकअ़दः' का महीना भी शामिल था।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि यह आयत उस मौक़े पर नाज़िल हुई, जबकि रसूलुल्लाह (सल्ल०) उ़मरह की क़ज़ा के लिए अपने सहाबा के साथ 7 हि० में तशरीफ़ ले गये थे। हज़रात सहाबा को यह अन्देशा हुआ कि मुम्किन है कुरैश-ए-मक्का सुलह के शर्तों की ख़िलाफ़वर्ज़ी कर बैठें और इस मर्तबा भी मस्जिदे हराम तक न पहुँचने दें और जंग पर आमादा हो जाएँ। अगर ऐसा हुआ तो हमें भी जंग करना पड़ेगी और यह उस महीने में होगा जिस में जंग करना हराम है और हम जवाबी कार्रवाई न करें तो मग़लूब (हार जाएँगे) होंगे। इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई और क़िताल करने की इजाज़त दे दी।

जिहाद का अर्थ-

जिहाद के लफ़्ज़ी मअ़ने "कोशिश करने" (Effort, Struggle) के हैं। शरीअ़त की इस्तिलाह (Sense) में जिहाद का पारिभाषिक अर्थ होता है हक़ (इस्लाम) की उन्नति और उसके प्रचार व प्रसार तथा उस की रक्षा के लिए हर तरह की कोशिश और कुर्बानी को बर्दाश्त करना, जानी व माली और दिमाग़ी हर तरह की कुव्वतों को जो अल्लाह की ओर से बन्दों को मिली हैं, इस राह में ख़र्च करके यहाँ तक कि इस के लिए अपनी और अपने बीवी-बच्चों, रिश्तेदारों परिवार व क़ौम की जान तक को कुर्बान कर देना, हक़ का विरोध करने वालों और दुश्मनों की तमाम कोशिशों को तोड़ना और उन की ओर से किये गये हमलों को रोकना और उसके लिए युद्ध के मैदान में अगर लड़ना पड़े तो पूरी तरह तैयार रहना। हदीस में है-

"जो शख़्स इस हाल में दुनिया से रुख़सत हुआ कि न तो उस ने कभी जिहाद किया और न उस के दिल में कभी इस का ख़याल आया तो वह निफ़ाक़ की मौत मरा।"

(सहीह़ मुस्लिम, अल् इमारह, हदीस 1910)

हज़रत इब्ने मसऊद (रज़ि०) ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से पूछा, "ऐ अल्लाह के रसूल! कौन सा अ़मल सब से अफ़ज़ल है?" इर्शाद फ़रमाया, "नमाज़ को उस के मुक़र्ररह वक़्त पर अदा करना।" मैंने दर्याफ़्त किया, "इस के बाद?" फ़रमाया, "वालिदैन से अच्छा सुलूक करना।" मैंने अ़र्ज़ किया, "और इस के बाद?" फ़रमाया, "अल्लाह की राह में जिहाद करना।" **(सहीह़ बुख़ारी अल् जिहाद, बाब 1, हदीस 2782)**

ज़ुल्म व ज़्यादती की इजाज़त नहीं-

अल्लाह तआ़ला ने यह भी इर्शाद फ़रमाया कि जो लोग तुम से क़िताल करते हैं उन से क़िताल करो, और साथ ही यह भी फ़रमाया कि ज़्यादती मत करो, बेशक अल्लाह तआ़ला ज़्यादती करने वालों को पसन्द नहीं फ़रमाता। शरीअ़ते इस्लामिया में हर चीज़ के हुदूद हैं, उसूल हैं, आदाब हैं और अख़्लाक़ हैं, क़त्ल

और क़िताल के भी उसूल हैं।

जंग पर जाने वालों के लिए ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की नसीह़त-

ह़ज़रत ह़सन बसरी ने फ़रमाया कि لَا تَعْتَدُوْا के उ़मूम में वह सब बातें दाख़िल हो गईं जो जंग के मौक़े पर मना हैं। जैसे- 'मुस्ला' करना (किसी मक़्तूल के नाक कान काट देना सूरत बिगाड़ देना) माले ग़नीमत में ख़यानत करना, औ़रतों बच्चों और उन बूढ़ों को क़त्ल करना जो न जंग करते हों न जंग के मामलात में कोई राय या मश्वरह देते हों और न राहिबों को क़त्ल करना न बिला वजह दरख़्तों को जलाना और न जानवरों को क़त्ल करना। **(तफ़्सीर इब्ने कसीर)**

सह़ीह़ मुस्लिम में है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) जब किसी लश्कर या किसी फ़ौजी दस्ते का किसी को अमीर बना कर भेजते तो ख़ास कर उस को अल्लाह तआ़ला से डरने की और जो मुसलमान साथ जा रहे हों उन को आपस में अच्छा बर्ताव करने की वसीयत फ़रमाते थे।

फिर फ़रमाते थे कि अल्लाह का नाम लेकर अल्लाह की राह में जिहाद करो। जो शख़्स अल्लाह को न मानता हो उस से जंग करना, माले ग़नीमत में ख़यानत न करना, ग़ारतग़िरी न करना, किसी का नाक-कान न काटना और न किसी बच्चे को क़त्ल करना।

कुछ रिवायात में है कि एक मर्तबः जिहाद के मौक़े पर एक औ़रत क़त्ल की हुई पाई गई। इस का इ़ल्म जब रसूलुल्लाह (सल्ल०) को हुआ, तो आप ने औ़रतों और बच्चों के क़त्ल करने को मना फ़रमाया।
(सह़ीह़ बुख़ारी)

फिर फ़रमाया وَاقْتُلُوْهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوْهُمْ (कि उन को क़त्ल करो जहाँ भी पाओ) यानी चाहे ह़रम ही में क्यों न हो وَاَخْرِجُوْهُمْ مِّنْ حَيْثُ اَخْرَجُوْكُمْ (और उन को निकाल दो जहाँ से उन्होंने तुम को निकाला) यानी तुम्हें मक्का मुअ़ज़्ज़माँ छोड़ कर हिज्रत पर मजबूर किया।

नोट- यहाँ जहाँ पाओ क़त्ल करो का मतलब यह नहीं है कि किसी भी काफ़िर को जहाँ पाओ क़त्ल करो बल्कि मतलब यह है कि अगर कअ़बः के पास या ह़रम में भी अगर कोई लड़ता है तो फिर तुम भी उस से वहाँ लड़ सकते हो।

फ़ित्ना करना क़त्ल से ज़्यादा सख़्त है-

फ़रमाया اَلْفِتْنَةُ اَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ (और फ़ित्ना क़त्ल से ज़्यादा सख़्त है) फ़ित्ना से मुराद शिर्क है। 'साह़िबे रूहुल मआ़नी' लिखते हैं कि सह़ाबा के दिलों में जो यह बात आ रही थी कि ह़रम में उन को किस तरह़ क़त्ल करेंगे जबकि ह़रम का एह़तिराम ज़रूरी है। उन के इस वस्वसे का जवाब दिया गया है कि जिस काम में यह लोग ख़ुद लगे हुए हैं यानी अल्लाह के साथ शिर्क और वह भी ह़रम में जो क़त्ल करने से ज़्यादा सख़्त है, लिहाज़ा तुम उसकी परवाह न करो कि ह़रम में क़त्ल व क़िताल हो जाएगा।

क़िताल-

फिर फ़रमाया وَلَا تُقٰتِلُوْهُمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ حَتّٰى يُقٰتِلُوْكُمْ فِيْهِ ۚ فَاِنْ قٰتَلُوْكُمْ فَاقْتُلُوْهُمْ ۗ كَذٰلِكَ جَزَآءُ الْكٰفِرِيْنَ

(और उन से जंग मत करो मस्जिदे ह़राम के पास जब तक कि वह तुम से उस में ख़ुद न लड़ें। सो अगर वह तुम से जंग करें तो तुम उन को क़त्ल कर दो, यही बदला है काफ़िरों का।) इस में मुसलमानों को पहले क़िताल की मुमानिअ़त फ़रमाई कि मस्जिदे ह़राम के क़रीब ख़ुद क़त्ल व क़िताल की शुरुआ़त न करना जब तक कि वह तुम से क़िताल शुरु न करें, अगर वह ह़रम की ह़ुरमत की परवाह न करें तो तुम भी उन को क़त्ल कर दो।

इस के बाद फ़रमाया فَإِنِ انْتَهَوْا فَإِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ यानी अगर मुशिरकीन कुफ़्र और शिर्क से बाज़ आ जाएँ और इस्लाम क़ुबूल कर लें तो अल्लाह तआ़ला बख़्शने वाला मेहरबान है। वह सब की तौबः क़ुबूल फ़रमाता है।

क़िताल कब तक होना चाहिए-

फिर फ़रमाया وَقَاتِلُوهُمْ حَتَّىٰ لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ لِلَّهِ (यानी काफ़िरों से यहाँ तक जंग करो कि फ़ित्ना बाक़ी न रहे और सारा दीन अल्लाह ही के लिए हो जाए) इस में क़िताल की ज़रूरत और उस का मक़्सद बयान फ़रमाया गया है। शिर्क और कुफ़्र बद्तरीन गुनाह और अपने ख़ालिक़ व मालिक के साथ बग़ावत है। दुनिया में शिर्क को मिटाने के लिए कोशिश करते रहें, यहाँ तक कि लोग अल्लाह को मानने लगें।

क़िताल करने में नियत-

मालूम हुआ कि क़िताल की ज़रूरत कुफ़्र और शिर्क को मिटाने के लिए है और क़िताल करने वालों को यह भी बता दिया कि क़िताल और जिहाद में यह नियत रखें कि अल्लाह तआ़ला के हुक्म का बोल-बाला हो उस का दीन बलन्द हो, दुनिया से उस के बाग़ी ख़त्म हों और ह़क़ीक़त में वह अल्लाह की राह में जिहाद करने वाला है जो अल्लाह की बात बुलन्द करने के लिए क़िताल करे।

एक आदमी नबी अकरम (सल्ल०) की ख़िद्मत में ह़ाज़िर हुआ और उस ने सवाल किया, कि एक आदमी माले ग़नीमत के लिए क़िताल करता है, एक शोहरत के लिए लड़ता है और एक इसलिए लड़ता है कि लोग उसकी बहादुरी के क़ायल हो जाएँ तो उन में फ़ी सबीलिल्लाह लड़ने वाला कौन है? नबी अकरम (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, "जो शख़्स इसलिए लड़ता हो कि अल्लाह की बात ऊँची हो तो वह 'फ़ी सबीलिल्लाह' लड़ने वाला है।" **(सह़ीह़ बुख़ारी भाग 1, पेज नं० 394)**

सूरः तौबः में अदा-ए-जिज़्या की सूरत में जंग बन्द कर लेने का ज़िक्र है। यहाँ चूँकि मुशिरकीने अ़रब का ज़िक्र नहीं फ़रमाया और यह भी मुम्किन है कि जिज़्या का क़ानून बाद में नाज़िल हुआ हो।

फ़ित्नों को दबाने के लिए-

यह जो फ़रमाया وَقَاتِلُوهُمْ حَتَّىٰ لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ لِلَّهِ इस में वाज़ेह तौर पर फ़रमा दिया कि क़िताल फ़ित्ना ख़त्म करने के लिए है। शब्द फ़ित्ना आ़म है सब से बड़ा फ़ित्ना कुफ़्र और शिर्क है और

इस के अ़लावा फ़िस्क़ व फ़ुजूर के फ़ित्ने भी उठते रहते हैं, कभी मुसलमान आपस में लड़ते हैं इस में कभी-कभी पूरे तौर पर किसी जमाअ़त के बारे में हक़ और नाहक़ का फ़ैसला करना मुश्किल हो जाता है और कभी-कभी जंग में शरीक होने पर मौजूदा फ़ित्ना ज़्यादा हो जाता है।

सहीह़ बुख़ारी में है ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा की ख़िद्मत में दो आदमी आये, यह ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर (रज़ि०) से जंग व जिदाल करने का ज़माना था, उन दोनों ने अर्ज़ किया, "लोग ज़ाया हो रहे हैं, और आप ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) के बेटे हैं, और रसूलुल्लाह (सल्ल०) के सहाबी हैं। आप जंग में ह़िस्सा क्यों नहीं लेते?" ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर (रज़ि०) ने उन दोनों से कहा, "बेशक अल्लाह तआ़ला ने (मुसलमान) भाई का क़त्ल ह़राम क़रार दिया है"।

(फिर मैं कैसे शिरकत करुँ मुम्किन है मुझ से कोई नाह़क़ क़त्ल हो जाए) उन दोनों ने कहा, "क्या अल्लाह तआ़ला ने यह नहीं फ़रमाया وَقٰتِلُوْهُمْ حَتّٰى لَا تَكُوْنَ فِتْنَةٌ (कि उन से जंग करो यहाँ तक कि फ़ित्ना बाक़ी न रहे।") ह़ज़रत इब्ने उ़मर (रज़ि०) ने फ़रमाया, "हम ने दुश्मनाने दीन से यहाँ तक जंग की कि फ़ित्ना बाक़ी न रहा और दीन अल्लाह ही के लिए हो गया <u>और तुम चाहते हो कि यहाँ तक जंग करो कि फ़ित्ना वजूद में आ जाए और दीन ग़ैरुल्लाह के लिए हो जाए।"</u> (इसलिए कि तुम्हारी जंग अल्लाह के लिए नहीं है मैं इस में कैसे शिरकत करुँ?)

आज क़त्ल व क़िताल की कसरत है। इस्लाम का दावा करने वाले लोग और जमाअ़तें दुश्मनाने दीन के उभारने पर आपस में लड़ती रहती हैं। मुसलमानों को मुसलमान क़त्ल कर डालते हैं, पहली बात तो क़त्ल मुस्लिम ह़राम है जो बहुत बड़ा गुनाह है जिस की सज़ा आख़िरत में बहुत सख़्त है फिर इस से कुफ़्र और अहले कुफ़्र को मदद होती है और दुश्मन के मुक़ाबिले में मुसलमानों में कमज़ोरी आती है। यह वही फ़ित्ना है जिस के पेशेनज़र 'ह़ज़रत इब्ने उ़मर रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा' क़िताल में ह़िस्सा लेने से बाज़ रहे और फ़रमाया कि क़ुर्आन ने तो यह फ़रमाया है कि यहाँ तक जंग करो कि फ़ित्ना न रहे और तुम इसलिए लड़ते हो कि फ़ित्ना हो। तमाम मुसलमान ह़ज़रत इब्ने उ़मर (रज़ि०) की बात को समझें और आपसी क़त्ल व क़िताल करके दुनिया व आख़िरत के अ़ज़ाब और वबाल के ह़क़दार न बनें।

जो मुश्रिक ज़ुल्म का रास्ता छोड़ दे उन को क़त्ल करना जायज़ नहीं-

यह फ़रमाया فَاِنِ انْتَهَوْا فَلَا عُدْوَانَ اِلَّا عَلَى الظّٰلِمِيْنَ इस में यह बताया कि काफ़िर और मुश्रिक अगर इस्लाम क़ुबूल कर लें तो फिर उन को क़त्ल करना जायज़ नहीं। अगर इस्लाम क़ुबूल करने के बाद तुम ने उन को क़त्ल किया तो तुम ज़ालिम हो जाओगे और तुम सज़ा के मुस्तह़िक़ होगे, क्योंकि ज़ालिम ही गिरिफ़्त के मुस्तह़िक़ होते हैं और यह माने भी हैं कि जब उन्होंने इस्लाम क़ुबूल कर लिया तो उन पर सख़्ती करने का मौक़ा न रहा, सख़्ती तो ज़ालिमों पर होती है।

लफ़्ज़ उ़द्वान का तर्जुमा ज़्यादती किया गया है, जो इस का लफ़्ज़ी तर्जुमः है। 'तअ़दी' और 'एअ़तिदा' का माद्दह (Root) भी यही है जो लोग इस्लाम क़ुबूल न करें, कुफ़्र पर कमर बाँधे रहें और

ज़ुल्म व ज़्यादती करें तो तुम उन को इस ज़्यादती की सज़ा दे सकते हो, उन्होंने ज़्यादती की है तो तुम भी ज़्यादती कर सकते हो। मुसलमानों की तरफ़ से जो उन पर क़त्ल और ग़ारतग़री की सूरत में सज़ा होगी उसे उद्वान फ़रमाया। जैसे मुहावरा में कह देते हैं कि फ़लाँ ज़्यादती करे तो तुम भी ज़्यादती करो हालाँकि ज़्यादती का जवाब ज़्यादती नहीं होता। **(बग़वी वल् बैज़ावी)**

जिहाद की आयतों पर आपत्ति

जिहाद और युद्ध व लड़ाई से सम्बन्धित क़ुर्आन मजीद की किसी आयत पर किसी को अगर वास्तव में कोई आपत्ति हो तो उसे चाहिए कि जिस आयत पर आपत्ति हो, उससे पूर्व की कुछ आयतों को और उसके बाद की कुछ आयतों के एक साथ मिलाकर पढ़ें।

इस तरह आ़मतौर पर आपत्ति स्वतः समाप्त हो जाएगी और यह बात स्पष्ट हो जाएगी कि क़ुर्आन ने जहाँ भी युद्ध करने या किसी को मृत्युदंड देने का आदेश दिया है, वे या तो युद्ध सम्बन्धी आदेश हैं या फिर न्याय और धरती पर शान्ति स्थापना करने की अनिवार्य अपेक्षाओं की हैसियत से निर्देश दिए गए हैं। और यह बात किसी भी समाज या देश में आपत्तिजनक नहीं समझी जाती, बल्कि देश में सुरक्षा, शान्ति और न्याय की स्थापना के लिए अनिवार्य ठहराई जाती है।

दंगे फ़साद-

दंगे-फ़साद का अवसर हो या चुनाव के समय बूथ (Booth) पर क़ब्ज़ा करने का, आतंकवादियों का मामला हो या किसी देश का किसी देश पर फ़ौजी हमले का, हर समाज और हर देश में ऐसे उपद्रवजनक तत्वों को देखते ही मारने (Shoot at Sight) के आदेश दिये जाते हैं। कोई भी इस कार्यवाही को अत्याचार या हिंसा नहीं कहता। स्वयं हमारे देश में भी ऐसा ही होता है और सम्बन्धित अधिकारियों को वैधानिक तौर पर ऐसा करने का अधिकार प्राप्त होता है।

क़ुर्आन मजीद में जहाँ कहीं भी इस तरह के निर्देश दिए गए हैं, वहाँ अगर उनके सन्दर्भ को देखा जाए तो मालूम होगा कि ये निर्देश उपयुर्क्त परिस्थितियों में ही दिये गये हैं। उदाहरणस्वरूप यहाँ केवल कुछ नमूने प्रस्तुत किये जाते हैं।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَمَا لَكُمْ لَا تُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ وَالْمُسْتَضْعَفِينَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَآءِ وَالْوِلْدَانِ الَّذِينَ يَقُولُونَ رَبَّنَآ اَخْرِجْنَا
مِنْ هٰذِهِ الْقَرْيَةِ الظَّالِمِ اَهْلُهَا ۚ وَاجْعَلْ لَّنَا مِنْ لَّدُنْكَ وَلِيًّا ۚ وَّاجْعَلْ لَّنَا مِنْ لَّدُنْكَ نَصِيرًا ۝

अनुवाद-

और तुम्हें क्या हुआ है कि अल्लाह की राह में उन कमज़ोर मर्दों, औ़रतों, और बच्चों के लिए जंग नहीं करते, जो दुआ़एँ किया करते हैं, "ऐ हमारे रब! 'तू' हमें इस बस्ती से

निकाल, जिसके रहने वाले ज़ालिम हैं, और हमारे लिए अपनी क़ुदरत से कोई दोस्त (समर्थक) पैदा कर दे, और हमारे लिए अपनी ओर से 'तू' कोई मददगार खड़ा कर दे"।

(सूर निसा-75)

पवित्र क़ुर्आन में युद्ध का आदेश

पवित्र क़ुर्आन की जिस आयत में सबसे पहले युद्ध की अनुमति मिली वह यह है।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

युद्ध की अनुमति की पहली आयत यह है-

أُذِنَ لِلَّذِينَ يُقَاتَلُونَ بِأَنَّهُمْ ظُلِمُوا ۚ وَإِنَّ اللَّهَ عَلَىٰ نَصْرِهِمْ لَقَدِيرٌ ﴿٣٩﴾ الَّذِينَ أُخْرِجُوا مِن دِيَارِهِم
بِغَيْرِ حَقٍّ إِلَّا أَن يَقُولُوا رَبُّنَا اللَّهُ ۗ وَلَوْلَا دَفْعُ اللَّهِ النَّاسَ بَعْضَهُم بِبَعْضٍ لَّهُدِّمَتْ صَوَامِعُ
وَبِيَعٌ وَصَلَوَاتٌ وَمَسَاجِدُ يُذْكَرُ فِيهَا اسْمُ اللَّهِ كَثِيرًا ۗ وَلَيَنصُرَنَّ اللَّهُ مَن يَنصُرُهُ ۗ إِنَّ
اللَّهَ لَقَوِيٌّ عَزِيزٌ ﴿٤٠﴾ الَّذِينَ إِن مَّكَّنَّاهُمْ فِي الْأَرْضِ أَقَامُوا الصَّلَاةَ وَآتَوُا الزَّكَاةَ وَأَمَرُوا
بِالْمَعْرُوفِ وَنَهَوْا عَنِ الْمُنكَرِ ۗ وَلِلَّهِ عَاقِبَةُ الْأُمُورِ ﴿٤١﴾ (सूरः हज आयत 39-41)

अनुवाद-

(उन लोगों को) इजाज़त दी जाती है जिनके विरूद्ध युद्ध किया जा रहा है, क्योंकि उन पर ज़ुल्म हो रहा है, और अल्लाह उनकी मदद करने पर क़ादिर (सामर्थ्य) है; (यह वे लोग हैं) जो अपने घरों से नाहक़ निकाले गये, केवल इस बात पर कि वे कहते हैं, "हमारा 'रब' अल्लाह है," अगर अल्लाह लोगों को एक-दूसरे से न हटाता रहता, तो खानकाहें (मठ), और गिरजा, और यहूदी प्रार्थना भवन, और मस्जिदें जिनमें अल्लाह का खूब नाम लिया जाता है, सब ढा दिये जाते, और अल्लाह उसकी ज़रूर मदद करेगा, जो 'उसकी' मदद करेगा; बेशक अल्लाह बड़ा ज़बर्दस्त, ताक़त वाला है; तो यह वे लोग हैं कि अगर धरती पर 'हम' इन्हें सत्ता दें, तो वे नमाज़ क़ायम करेंगे, और ज़कात देंगे, और भली बात का हुक्म करेंगे और बुराइयों से रोकेंगे; और सब मामलों का अंजाम तो अल्लाह ही के हाथ में है। **(सूरः हज आयत नं० 39-41)**

व्याख्या-

यह पहली आयत है जो अनुमति क़िताल (जंग की इजाज़त) के बारे में नाज़िल (उतरी) हुई है। इससे पहले क़ुरैशे मक्का (मक्का की प्रसिद्ध जाति) का यह ज़ुल्म बयान कर दिया था कि उन्होंने मुसलमानों पर हज की राह बन्द कर दी है जिसका उन्हें कोई हक़ नहीं। अब यहाँ साफ़-साफ़ लफ़्ज़ों (शब्दों) में वाज़ेह कर दिया कि क़िताल (जंग) की इजाज़त की वजह क्या है, फ़रमायाः-

मज़्लूम का ह़क़्

"बेअन्नलहुम जुलेमु" इसलिए कि मुसलमान मज़्लूम हैं और मज़्लूम का ह़क़् है कि ज़ालिम के मुक़ाबले में अपना बचाव करें।

यह मज़्लूम तेरह वर्ष तक कुरैशे मक्का के जुल्म व तशद्दुद का निशाना रहे, बिल आख़िर तर्के वतन (स्वदेश त्याग) पर मजबूर हुए। लेकिन ग़ुर्बत (विदेश) में भी चैन से न बैठने दिया गया। उनके ख़िलाफ़ जंग का एलान कर दिया गया, आख़िर इन का क़ुसूर क्या था। सिर्फ़ यह कि वह कहते थे 'रब्बुनल्लाह' हम अपने यक़ीन के मुताबिक़ अपने परवरदिग़ार को याद करना चाहते हैं, हम दूसरों को मजबूर नहीं करते कि हमारा धर्म स्वीकार कर लें, लेकिन दूसरे हमें क्यों मजबूर करते हैं कि अपने विश्वास को छोड़ दें।

इसके बाद वाज़ेह किया है कि यह मज़्लूमों का क़ुद्रती ह़क़् है अगर वह इस ह़क़् से महरूम (वंचित) कर दिये जायें तो दुनिया में इन्सानी जुल्मों इस्तब्दाद (ज़बरदस्ती) की मुदाफ़िअ़त (प्रतिकार) का कोई सामान बाक़ी न रहे। जिस गिरोह की बन पड़े दूसरे गिरोह के एतिक़ाद व अ़मल की आज़ादी हमेशा के लिए पामाल (पद दलित) कर दे, चुनांचे फ़रमाया-

यहाँ अल्लाह ने एक जमाअ़त के जुल्म व तशद्दुद को दिफ़ा कराने का निज़ाम (व्यवस्था) क़ायम कर रखा है अगर यह सिल्सिल-ए-मुदाफ़िअ़त (एक के द्वारा दूसरे की रक्षा का काम) न होता, तो दुनिया में ख़ुदा परस्ती का ख़ात्मा (अन्त) हो जाता। किसी गिरोह की इ़बादतगाह इन्सानी जुल्मों से मह़फ़ूज़ न रहती।

क़ुर्आन के अनुसार मुसलमानों के सत्ता व हुकूमत का अस्ली मक़्सद क्या था फ़रमाया-

इन मज़्लूम मुसलमानों के क़दम जम गये तो यह क्या करेंगे? यानी यह नमाज़ क़ायम करें, ज़कात अदा करें, नेकी का हुक्म दें, बुराईयों से रोकें और जुल्म और बुरे अ़मल की जगह अदालत व नेकी की हुकूमत क़ायम हो जाए (यानी न्याय और पुण्य का राज स्थापित हो जाए।)

ह़क़ीक़त-

"यहाँ यह ह़क़ीक़त भी स्पष्ट कर दी कि क़ुर्आन ने जंग का हुक्म इसलिए नहीं दिया है कि मुसलमान दूसरों पर चढ़ दौड़ें बल्कि इसलिए कि मज़्लूमों और बेकसों (अत्याचार पीड़ितों और निःसहाय लोगों) की ह़िमायत करें और उन्हें ज़ालिमों के पंजे से मुक्ति दिलायें। इसलिए वह बार-बार कहता है कि अल्लाह की राह में लड़ो, यानी अपनी नफ़्सानी ख़्वाहिशों (मनो आकांक्षाओं) के लिए नहीं बल्कि अल्लाह के अ़द्ल व इन्साफ़ के क़याम (स्थापना) के लिये लड़ो।" **(तर्जुमानुल क़ुर्आन प्रथम भाग पृ० 371)**

ऊपर क़ुर्आन की जो आयतें प्रस्तुत की हैं उस आयत के बाद की कुछ आयतें भी यहाँ प्रस्तुत हैं जिनमें वस्तुस्थिति और अधिक स्पष्ट हो जाती हैं-

जिहाद कब और किससे

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَقَاتِلُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ الَّذِينَ يُقَاتِلُونَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوا ۚ إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِينَ ۝ وَاقْتُلُوهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوهُمْ
وَأَخْرِجُوهُم مِّنْ حَيْثُ أَخْرَجُوكُمْ ۚ وَالْفِتْنَةُ أَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ ۚ وَلَا تُقَاتِلُوهُمْ عِندَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ حَتَّىٰ يُقَاتِلُوكُمْ فِيهِ ۖ
فَإِن قَاتَلُوكُمْ فَاقْتُلُوهُمْ ۗ كَذَٰلِكَ جَزَاءُ الْكَافِرِينَ ۝ فَإِنِ انتَهَوْا فَإِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝ وَقَاتِلُوهُمْ حَتَّىٰ لَا تَكُونَ
فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ لِلَّهِ ۖ فَإِنِ انتَهَوْا فَلَا عُدْوَانَ إِلَّا عَلَى الظَّالِمِينَ ۝

अनुवाद-

"और तुम अल्लाह की राह में लड़ो उन लोगों से जो तुम से लड़ते हैं, मगर ज़्यादती (अत्याचार) न करना कि अल्लाह ज़्यादती करने वालों को पसंद नहीं करता; और (ऐसे काफ़िरों को जो ज़ुल्म कर रहे हैं) उनको जहाँ कहीं पाओ क़त्ल करो, और उनको निकाल दो, जहाँ से उन्होंने तुम्हें निकाला; और (इसलिए कि) फ़ित्ना (उत्पीड़न) पैदा करना क़त्ल से भी बढ़कर है, और उनसे मस्जिदे ह़राम (कअ़बः) के पास न लड़ना, जब तक कि वे उस जगह तुमसे न लड़ें; फिर अगर वे खुद ही तुम से लड़ें, तो उन्हें क़त्ल करो, यही काफ़िरों (सच्चाई का इन्कार करने वालों) की सज़ा है; (मगर जो न लड़ें उन्हें केवल काफ़िर होने की वजह से मारा या परेशान न किया जाए) फिर अगर वह (ज़ुल्म से) रूक जाएँ, तो अल्लाह माफ़ करने वाला, मेहरबान है; और उनसे लड़ो (जिन काफ़िरों ने ज़ुल्म किया) यहाँ तक कि फ़ित्ना (ज़ुल्म) बाकी न रहे और दीन अल्लाह के लिए हो जाए, फिर अगर वे (ज़ुल्म से)बाज़ आ जाएँ तो ज़ालिमों के सिवा किसी पर ज़्यादती न करो। बड़ाई वाला (प्रतिष्ठित) महीना बराबर है, बड़ाई वाले महीने के, और सम्मान रखने में बदला है; फिर अगर जिसने तुम पर ज़्यादती की, तो (केवल उसी को) तुम भी उसके ज़्यादती की सज़ा दो, जैसा उसने तुम पर ज़्यादती की है; और अल्लाह से डरते रहो, और जान लो! कि अल्लाह डरने वालों (परहेज़गारों) के साथ है। **(सूरः बकरः-190-194)**

व्याख्या-

यह आदेश मुसलमानों को उस समय दिया गया जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने मदीना आने के बाद मक्का के लोगों से एक सन्धि की जिसे सुल्हे-हुदैबिया के नाम से जाना जाता है उसी सन्धि की शर्त के अनुसार रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने सहाब-ए-किराम (साथियों) के साथ इस उमरा की क़ज़ा पूरी करने का इरादा किया, "जिसे एक वर्ष पूर्व कुरैशे मक्का ने यह कह कर रोक दिया था कि आप अगले वर्ष उमरा कर सकते हैं। परन्तु ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के साथियों को यह ख़याल आया कि काफ़िर अत्याचारियों की सन्धि का कोई भरोसा नहीं यदि वह उस वर्ष भी रोकने लगें तो हमें क्या करना चाहिए इस पर यह

अनुमति अल्लाह की ओर से दी गयी कि यदि वह युद्ध करने लगें तो तुम्हें भी अनुमति है कि जहां पाओ उन को क़त्ल करो और जिस प्रकार उन्होंने मुसलमानों को मक्का से निकाला, तुम भी उनको मक्का से निकाल दो। (क़ुर्तुबी)

इस्लाम पर आपत्ति करने वालों ने क़ुर्आन मजीद की उपर्युक्त आयतों को पूर्ण रूप से पेश करने के बजाए अपने घृणित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उनके बीच में से वाक्य निकाल कर नक़्ल किये हैं कि-

काफ़िरों को कहाँ और कब क़त्ल करो

"काफ़िरों को जहाँ पाओ क़त्ल करो," "फ़ित्ना क़त्ल से ज़्यादा बुरा है," "तुम उनसे बराबर युद्ध किये जाओ यहां तक कि फ़ित्ना बाक़ी न रहे और धर्म केवल अल्लाह के लिए हो जाए।"....... आदि।

हालाँकि कोई भी न्यायप्रिय व्यक्ति क़ुर्आन की इन सम्पूर्ण आयतों को एक साथ मिलाकर पढ़ेगा और उन हालात को अपने सामने रखेगा जिनमें यह बात कही जा रही है तो वह कदापि, वह निष्कर्ष नहीं निकाल सकता, जो आपत्ति करने वाले, हमारे इन नादान भाईयों ने निकाला है और कहते हैं कि क़ुर्आन मुसलमानों को यह आदेश देता है कि ग़ैर-मुस्लिमों को क़त्ल कर दिया जाए।

क़त्ल का कारण-

वास्तविकता यह है कि क़ुर्आन मजीद में कुफ़्र (इन्कार) करने वालों और शिर्क करने वालों से युद्ध और लड़ाई करने की जो बात कही गई है वह इस वजह से नहीं है कि वे शिर्क करने वाले या कुफ़्र (इन्कार) करने वाले हैं, बल्कि यह निर्देश इसलिए दिया गया है कि इन लोगों ने ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और उनके अनुयायी मुसलमानों का जीना दूभर कर दिया था।

अत्याचार की एक झलक

मक्का के काफ़िर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और उनके अनुयाइयों पर तरह-तरह के अत्याचार करते थे। दहकते अँगारों पर उन्हें नंगी पीठ लिटाकर भारी पत्थर रख देते थे, तपती हुई रेत में नंगा करके उन्हें घसीटते थे, लोहे की गर्म छड़ों से उनके शरीर को दाग़ देते थे, उनकी औरतों के साथ अत्यन्त घिनौना और अपमानजनक व्यवहार करते थे।

इन दुष्टों का गुस्सा यहाँ तक बढ़ गया था कि ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की हत्या कर डालने की असफ़ल साज़िश तक इन्होंने कर डाली। इन दुष्टों का ईशदूत और उसके अनुयायियों को उनके अपने घरों से निकल जाने पर विवश कर दिया था और उस पर आर्थिक सितम यह कर रहे थे कि ईमानवालों ने इन दुष्टों के अत्याचारों से बचने के लिए जिन जगहों और देशों में पनाह ले रखी थी ये दुष्ट वहां भी बार-बार उन पर हमला करते थे।

ये लोग ईमानवालों का बिल्कुल सफ़ाया कर देने पर तत्पर थे तथा अन्य क़बीलों, गिरोहों और क़ौमों

से भी अपने इन घृणित और दुष्टतापूर्ण उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता लेते थे।

मक्का के विधर्मी महाईशदूत ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का अपमान करते थे, कअ्बः में नमाज़ नहीं पढ़ने देते थे, मिथ्या विचार करके आपके विरुद्ध लोगों को बहकाते और भड़काते थे और मुसलमानों पर भयंकर अत्याचार करते थे आपका और आपके परिवार का बहिष्कार किया जो तीन वर्ष तक जारी रहा, इसका बहिष्कार भी ऐसी निर्दयतापूर्ण था कि बहिष्कृत परिवार तक मुट्ठी भर खाद्य सामग्री नहीं पहुँच पाती थी बच्चे भूखों मरते थे, रोते बिलखते थे। जीवन रक्षा के लिए वृक्षों के पत्ते और सूखे चमड़े भिगोकर और घास तक खानी पड़ी थी। कितने हृदय हीन थे विरोधी! उद्देश्य यह था कि महाईशदूत सत्य धर्म का प्रचार त्याग करने पर बाध्य हो जाएँ, शत्रु इस प्रकार एक दो वर्ष नहीं 13 वर्ष तक विरोध तथा अत्याचार करते रहे अंत में उन्होंने महाईशदूत की हत्या करने की योजना बनाई, रात्रि में आपका घर घेर लिया कि आप बाहर निकलें तो आप की हत्या कर दें।

आप (सल्ल०) के जान के दुश्मन-

आप ईशदूत थे, ईश्वर आपका रक्षक था आप शत्रुओं के बीच से निकले और मदीना पहुँच गए जहाँ के निवासी मुसलमान हो चुके थे और उनके सरदारों में यह तय हो चुका था कि आप मक्का त्याग करके मदीना चले आएँ।

अत्याचारी इतने पर ही संतुष्ट एवं शान्त न हुए उन्होंने मदीने पर चढ़ाई कर दी। इन आयतों में ऐसे ही विधर्मी शत्रुओं से युद्ध करने की आज्ञा दी गई है, क्या यह आज्ञा अनुचित है?

ऐसे शत्रुओं से भी युद्ध की आज्ञा देते हुए मुसलमानों को चेतावनी दी गई है कि तुमको युद्ध की अवस्था में भी ज़्यादती करना! अर्थात तुम्हारा कोई काम अत्याचार पूर्ण न हो, याद रखो ईश्वर ज़्यादती करने वालों को पसंद नहीं करता।

ज़्यादती क्या है-

ज़्यादती की मनाही के अन्तर्गत हर वह कार्य और व्यवहार आ जाता है जो अनुचित, अनैतिक तथा न्याय विरुद्ध हो। मुसलमानों को आदेश दिया गया है कि उन लोगों से युद्ध निषिद्ध है जो तुम्हारे धर्म में विध्न बाधा नहीं डालते। स्त्रियों, बालकों, बूढ़ों तथा आहतों पर हाथ न उठाना, खेतियों और पशुओं को निरर्थक हानि न पहुँचाना, अपनी शारीरिक शक्ति का वहीं प्रयोग करना जहाँ वह अनिवार्य हो और उसी सीमा तक करना जितने की आवश्यकता हो इससे अधिक नहीं। इस आदेश का उद्देश्य यह था कि इस्लाम से पहले अ़रब निवासी यह सब अमानुषिक कार्य करते थे।

जब शत्रु का शान्ति का विचार ही न हो, वह लड़ने ही पर कटिबद्ध हो तो ऐसी अवस्था में लड़ने के सिवा मार्ग ही कौन सा रह जाता है! इसलिये कहा गया है कि जहाँ भी उससे सामना हो जाए, और जहाँ से भी उसने तुमको निकाला है तुम उसे निकाल दो।

रक्तपात-

रक्तपात कोई प्रिय कार्य नहीं है परन्तु जब शत्रु कर्म धर्म में विघ्न बाधा डालें, विद्या, ज्ञान, उक्ति और प्रमाण द्वारा अपने विचार सत्य सिद्ध करने के स्थान पर बलपूर्वक लोगों को सत्य मार्ग से रोकें और उन पर अपना विचार तथा अपना विश्वास अनाधिकार लादना चाहें तो यह हत्या से भी अधिक अमानुषिक कार्य है। ऐसे अत्यचारी शत्रुओं से युद्ध करना ही कल्याणकारी है।

कअ़बः की मर्यादा-

कअ़बः के क्षेत्र में युद्ध निषिद्ध है परन्तु मक्का के विधर्मी अपनी शक्ति के घमण्ड में कअ़बः की मर्यादा का भी विचार नहीं रखते थे। इसलिए मुसलमानों से कहा गया कि तुम स्वयं को कअ़बः के क्षेत्र के अन्तर्गत युद्ध में पहल न करो, परन्तु शत्रु न माने, लड़े तो फिर तुम भी उनसे लड़ो।

युद्ध का परित्याग-

ऐसे विधर्मी अत्याचारी तथा दुष्ट शत्रुओं के सम्बन्ध में भी मुसलमानों से कहा गया है कि यदि वह युद्ध का परित्याग कर दें तो ईश्वर बड़ा क्षमाशील तथा दयावान है। इस पवित्र शैली में मुसलमानों को नैतिकता की उच्चकोटि की बात बताई गई है। इसका तात्पर्य यह है कि क्षमा शीलता और दयालुता ईश्वर का महान गुण है इसलिए मुसलमानों में भी यह गुण विद्यमान होना चाहिए। यदि शत्रु युद्ध का परित्याग कर दें तो फिर प्रतिकार की भावना से तुम्हारा लड़ना उचित नहीं। तुम्हारा उद्देश्य धर्म मार्ग की बाधा का दूर कर देना है, अतः शत्रु धर्म के मार्ग से हट जाएँ तो तुम भी अपना हाथ रोक लो।

बाधा को दूर करने के लिए-

अन्त में फिर कहा गया है कि तुम्हारी लड़ाई तो धर्म के मार्ग से बाधा को हटाने के लिए है अतः तुमको उसी समय तक लड़ना है, जब तक बाधा हट न जाए और जब बाधा हट जाए और धर्म ईश्वर के लिए हो जाए अर्थात उसकी भक्ति, उपासना उसकी आज्ञा पालन में कोई बाधा न रह जाए, शत्रु युद्ध से रुक जाए तो तुम भी हाथ रोक लो लड़ाई का विधान तो अत्यचारियों ही के लिए है।

विचारणीय प्रश्न-

ग़ैर मुस्लिम भाई विचार करें कि युद्ध सम्बन्धी ऐसा नियम किस धर्म, किस विधान अथवा किस शास्त्र में है? विरोधियों ने ऐसी पवित्र शिक्षा को भ्रष्ट प्रचार करके क्या से क्या बना दिया?

यह तथ्य ईशदूत के ह़ालात और क़ुर्आन की उन आयतों की पृष्ठभूमि और सन्दर्भ से बिल्कुल स्पष्ट है जिनमें युद्ध और लड़ाई की बात की गई है।

ये सारे अत्याचार ईशदूत ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और उनके अनुयायियों पर केवल इसलिए करते थे कि ये लोग ईश्वर को एक मानते और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को ईशदूत स्वीकार करते थे। वे ईश्वर के आदेशानुसार जीवन व्यतीत करते, शराब, जुआ, अश्लीलता, लड़कियों पर अत्याचार करने,

लड़ाई-झगड़ा और अन्य सामाजिक और नैतिक बुराईयों से दूर रहते थे।

तनिक ईमानदारी से विचार करें कि क्या ऐसे दुष्टों और अत्याचारियों पर फूलों की बारिश करने का निर्देश देना चाहिए?

मृत्यु दण्ड-

क़ुर्आन मजीद में स्वयं अत्यन्त स्पष्ट रूप से बार-बार यह बात बताई गई है कि किसी व्यक्ति को भी इस्लाम स्वीकार कराने के लिए विवश नहीं किया जा सकता और न ही किसी व्यक्ति को इस्लाम स्वीकार न करने के कारण मृत्यु-दण्ड अथवा कोई सज़ा दी जा सकती है।

अगर कोई व्यक्ति ज़ोर-ज़बरदस्ती से इस्लाम स्वीकार कर भी लें तो उसकी यह स्वीकृति और उसका यह ईमान विश्वास के योग्य न होगा।

मुसलमान बनने के लिए दिल से राज़ी होना है

परमेश्वर के निकट तो सिरे से ऐसा ईमान मान्य ही नहीं है, क्योंकि ईमान के लिए अनिवार्य शर्त दिल की आमादगी और इच्छा है। तलवार से या बलपूर्वक यह कार्य नहीं किया जा सकता। क़ुर्आन ने अपनी शिक्षा और सन्देश को प्रमाणों सहित अत्यन्त स्पष्ट रूप में पेश करने के बाद इन्सान को उसे स्वीकार या अस्वीकार करने की पूर्ण स्वतंत्रता दी है।

एक आवश्यक स्पष्टीकरण-

यहाँ यह बात भी स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए कि युद्ध या दण्ड सम्बन्धी ये आदेश क़ुर्आन ने अपने अनुयायियों को व्यक्तिगत रूप से अलग-अलग नहीं दिए हैं, बल्कि ये निर्देश इस्लामी राज्य और सत्ताधारी वर्ग को दिए गए हैं तथा इनको व्यावहारिक रूप देने के लिए एक न्यायिक और प्रशासनिक प्रणाली भी दी गई है।

कितने अफ़सोस की बात है कि आपत्ति और आक्षेप करने वाले अपनी बात को इस ढंग से पेश करते हैं, मानो प्रत्येक मुसलमान को व्यक्तिगत रूप में किसी को मृत्युदण्ड देने या किसी उपद्रवी की हत्या करने का अधिकार और आदेश क़ुर्आन ने दिया है। आक्षेपकर्त्ताओं की यह नीति सत्य और न्याय की अपेक्षाओं के विरुद्ध और उन्हें मुँह चिढ़ानेवाली है।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَقَاتِلُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ الَّذِينَ يُقَاتِلُونَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوا ۚ إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِينَ ﴿١٩٠﴾

अनुवाद-

"और तुम अल्लाह की राह में लड़ो उन लोगों से जो तुम से लड़ते हैं, मगर ज़्यादती (अत्याचार) न करना कि अल्लाह ज़्यादती करने वालों को पसंद नहीं करता;" **(सूरः बक़रः 190)**

इस प्रकार की कुछ आयतों को लेकर इस्लाम के विरुद्ध बड़ा प्रचार किया गया हैं और इस्लाम के प्रति बड़ा भ्रम फैलाया गया है। कुर्आन ने मुसलमानों को आदेश दिया है कि काफ़िरों को जहाँ पाओ उनकी गर्दन मार दो, इस प्रचार की वास्तविकता क्या है? इसका स्पष्ट हो जाना भी आवश्यक है।

जिहाद पर आक्षेप-

एक साहब ने कुर्आन के दो भयंकर आदेश "जिहाद और जिज़्या", यह शीर्षक देकर लिखा है-

"अर्थात क़त्ल करो उन लोगों को जो ख़ुदा और क़ियामत के दिन पर ईमान नहीं रखते और उन वस्तुओं को ह़राम नहीं समझते जिन्हें ख़ुदा ने और उसके रसूल ने ह़राम किया है, और न सच्चे दीन अर्थात् इस्लाम को मंज़ूर करते हैं चाहे वह किताब वाले हों अर्थात यहूदी और ईसाई यहाँ तक कि ज़लील होकर वे अपने हाथ से जिज़्या देने लगें।"

जिहाद का आदेश शत्रुओं के साथ

जिहाद और जिज़्या का यह आदेश न सब यहूदियों के लिये है न सब ईसाईयों के लिए और न दूसरे सब ग़ैर मुस्लिमों के लिए यह आदेश केवल उनके लिये है जो इस्लाम और मुसलमानों के शत्रु हों जिनसे मुसलमानों का युद्ध चल रहा हो। यदि वह युद्ध करते हुए यह अनुभव करें कि वह पराजित हो जाएँगें और मुसलमान उनके नगर अथवा दुर्ग में प्रवेश करके उस पर अधिकार कर लेंगे तो जिज़्या देना स्वीकार करके मुसलमानों की रक्षा प्राप्त कर सकते हैं। क्या कोई धर्म कहता है कि घातक शत्रुओं को आज़ाद छोड़ दिया जाए कि वह जब अवसर पाएँ आघात पहुँचाते रहें?

इस्लाम केवल धर्म भेद की वजह से, न किसी सम्प्रदाय से लड़ने की अनुमति देता है और न किसी की ह़त्या करने की। उपरोक्त आयतें और ऐसी सभी आयतें शत्रुओं के सम्बन्ध में हैं।

अल्लाह ने ऐसे विधर्मी मक्का निवासियों से लड़ने की आज्ञा देकर कौन सी संकीर्णतापूर्ण तथा अनुदार शिक्षा दी है जो अस्त्र-शस्त्र द्वारा इस्लाम तथा मुसलमानों का उन्मूलन कर देना चाहते थे?

विधर्मियों से युद्ध-

क्या श्री रामचन्द्रजी और श्रीकृष्णजी ने दुष्ट विधर्मियों से युद्ध नहीं किये? हम पवित्र कुर्आन की उस आयत से जिसमें 'फ़ित्ना' का शब्द आया है, उससे भी भलीभाँति स्पष्ट हो जाता है कि फ़ित्ना की वास्तविकता क्या है और जिनसे लड़ने की अनुमति दी गई वह कितने अत्याचारी थे।

उन लोगों से युद्ध करने का आदेश दिया गया है? जो मुसलमानों से युद्ध कर रहे थे और जिन्होंने मुसलमानों को उनके देश से निकाल दिया था फिर भी मुसलमानों के धर्ममार्ग में बाधक बने हुए थे युद्ध का त्याग नहीं करते थे। उनके प्रति भी अल्लाह ने मुसलमानों को चेतावनी दी है कि यदि वह युद्ध का परित्याग कर दें तो तुम भी युद्ध का परित्याग कर दो ज़्यादती मत करो। अल्लाह ज़्यादती करने वालों को पसन्द नहीं करता, उन्होंने जो अत्याचार किये हैं अल्लाह उन्हें भी क्षमा करेगा वह अति दयावान है।

यह है इस्लाम और मुसलमानों के शत्रुओं का 'फ़ित्ना', परन्तु विधर्मियों के समर्थक तथा इस्लाम के विरोधी लोगों ने 'फ़ितना' की व्याख्या इस प्रकार की है।

फ़ित्ना की व्याख्या

"फ़ित्ना शब्द का अर्थ तो होता है उपद्रव परन्तु उपद्रव या झगड़ा था किस बात पर? मूर्ति पूजा पर, क़ुरैश मूर्ति पूजक थे हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) मूर्ति पूजा को बुरा कहते थे, अतः क़ुरैश उनका विरोध करते थे।"

ऊपर की पंक्ति कितनी मिथ्यापूर्ण और अन्याय संगत वकालत है मक्के के मूर्ति पूजकों की। मानो बात इतनी ही थी "हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) मूर्ति पूजा को बुरा कहते थे, अतः क़ुरैश उनका विरोध करते थे।"

इसकी वास्तविकता को बे डकारे हजम कर गए कि महाईशदूत शान्ति पूर्ण भाव से इस्लाम का प्रचार कर रहे थे और मक्का के क़ुरैश अपनी बहु संख्या, शक्ति तथा युद्ध के द्वारा मुसलमानों को उनके धर्माचरण में विध्न बाधा ही नहीं डाल रहे थे बल्कि इस्लाम को समाप्त भी कर देना चाहते थे।

यह था फ़ित्ना मक्का के मूर्तिपूजकों का, परन्तु लोगों ने उनकी वकालत उन वकीलों की तरह की है जो हत्यारों को भी निर्दोष सिद्ध करते हैं। अतः आयत का अन्तिम भाग छोड़ दिया जिससे मक्का निवासियों का अपराध स्पष्ट हो जाता है आयत का अन्तिम भाग यह है-

"फिर यदि वह अपनी ज़्यादती से बाज़ आ जाएँ तो अल्लाह उनके कर्मो को देखता है वह उनके नेक कर्मो का फल अवश्य देगा।"

युद्ध की परिस्थितयाँ

क़ुर्आन की इस आयत में युद्ध से सम्बन्धित ऐसे क़ीमती, उपयोगी और कल्याणकारी सिद्धान्त बयान किए गए हैं, जिनका इन्कार नहीं किया जा सकता। ऐसे सिद्धान्त केवल वास्तविक परमेश्वर की ओर से ही हो सकते हैं-

ईश्वरीय मार्ग के लिए युद्ध-

इस्लामी राज्य को इस नियम का पाबन्द बनाया गया है कि युद्ध केवल ईश्वरीय मार्ग ही में किया जा सकता है अर्थात युद्ध न तो अपने आर्थिक उद्देश्यों और हितों की पूर्ति के लिए हो, न अपना प्रभुत्व स्थापित करने के लिए। ईश्वरीय मार्ग का मतलब है सत्य व न्याय का मार्ग, अमन व शान्ति की स्थापना, अपने वास्तविक प्रभु की इच्छा और उसकी बताई हुई बातों पर अ़मल के लिए।

युद्ध-

युद्ध के लिए जो सक्रिय हों केवल उन्हीं लोगों से युद्ध करने की अनुमति दी गई है जो युद्ध करने पर तुले हों या जिन्होंने हक़ के ख़िलाफ़ युद्ध छेड़ दिया हो।

युद्ध सम्बन्धी सीमाओं का पालन करना अनिवार्य

अगर युद्ध की नौबत आ जाए तब भी युद्ध की कुछ सीमाएँ और मर्यादाएँ क़ुर्आन ने निश्चित की हैं जिनको ध्यान में रखना ज़रूरी होता है और उनका उल्लंघन करने वाले लोगों को सावधान किया गया है कि परमेश्वर ऐसे लोगों को पसन्द नहीं करता।

जैसे- "दुश्मनों की औरतों, बच्चों, बूढ़ों तथा ज़ख़्मियों पर हाथ न उठाया जाए। जो लोग पूजा-पाठ और उपासना में व्यस्त हैं उन्हें किसी प्रकार की हानि न पहुँचाई जाए। फ़सलों और पेड़ों को नष्ट न किया जाए और जानवरों को न मारा जाए। दुश्मनों की लाशों के अंग न काटे जाएँ आदि।"

युद्ध के समय की सीमाओं और निर्देशों की पाबन्दी न करने पर परमेश्वर ने यह चेतावनी दी है कि तुम्हारी सारी मेहनत और सारी क़ुर्बानियाँ निरर्थक सिद्ध होंगी, बल्कि उल्टे तुम अपराधी और ईश्वरीय प्रकोप के भागी होगे।

194 اَلشَّهْرُ الْحَرَامُ بِالشَّهْرِ الْحَرَامِ وَالْحُرُمٰتُ قِصَاصٌ ؕ فَمَنِ اعْتَدٰى عَلَيْكُمْ فَاعْتَدُوْا عَلَيْهِ بِمِثْلِ مَا اعْتَدٰى عَلَيْكُمْ ۪ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّقِيْنَ ۝

मुशिरकीन की ज़्यादती का जवाब

सुलह़ की शर्तों के मुताबिक़ जब नबी अकरम (सल्ल०) अपने सहाबा (रज़ि०) के साथ 7 हि० में ऊ़मरतुल् क़ज़ा (क़जा ऊ़मरह) के लिए तशरीफ़ ले गये तो यह माह 'ज़ीक़अ़दा' का था। मुशिरकीने मक्का से मुसलमानों को ख़त्रा था कि कहीं मुआ़हिदे की पाबन्दी न करें और ह़मला कर दें। अगर उन्होंने ह़मला किया तो हुरमत वाले महीने और ह़रम में जंग करनी पड़ेगी और ऐसे में जगह और ज़माना दोनों की हुरमत में फ़र्क़ आएगा। ह़रम के बारे में तो अल्लाह तआ़ला ने पहली आयत में इर्शाद फ़रमाया कि- وَلَا تُقٰتِلُوْهُمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ حَتّٰى يُقٰتِلُوْكُمْ فِيْهِ और महीने की हुरमत के बारे में इस आयत में इर्शाद हो रहा है कि अगर जंग करनी पड़े तो तुम जंग कर लेना और हुरमत वाला महीना हुरमत वाले महीने के बदले में हो जाएगा। यानी मुशिरकीन हुरमत वाले महीने का एह़तिराम करें तो तुम भी एह़तिराम करो और उन से जंग न करो। अगर वह बेहुरमती कर बैठें तो तुम भी जवाबी कार्रवाई करो और यह जो फ़रमाया وَالْحُرُمٰتُ قِصَاصٌ इस का मतलब यह है कि हुरमत बदले की चीज़ें हैं, जो लोग तुम्हारे साथ इन हुरमतों की रिआ़यत करें तो तुम भी उनकी रिआ़यत करो जिस ने ह़रम और माहे ह़राम में जंग करने को ह़राम क़रार दिया है, उसी की तरफ़ से जवाबी कार्रवाई करने और दिफ़ा करने की इजाज़त भी दी गई है तो अब हैरानी परेशानी की कोई ज़रूरत नहीं।

फिर फ़रमाया فَمَنِ اعْتَدٰى عَلَيْكُمْ فَاعْتَدُوْا عَلَيْهِ بِمِثْلِ مَا اعْتَدٰى عَلَيْكُمْ (यानी जो शख़्स तुम पर ज़्यादती करे तो तुम भी उस पर उतनी ही ज़्यादती करो जितनी ज़्यादती उस ने तुम पर की है।) जिस मौक़े पर यह आयत नाज़िल हुई (यानी ऊ़मरतुल् क़िसास, जिस में दुश्मनों के ह़मले का ख़त्रा था।)

इस के बारे में बता दिया कि ज़्यादती करने वाले पर उतनी ही ज़्यादती कर सकते हो जितनी वह ज़्यादती करे। आयत का नुज़ूल अगरचे ख़ास मौक़े पर था, लेकिन इन अल्फ़ाज़ से क़ानून बता दिया कि जितनी ज़्यादती किसी ने की हो उस से उतना ही बदला ले सकते हो, अगर उस से ज़्यादा कुछ किया तो फिर तुम ज़्यादती करने वाले हो जाओगे।

अल्लाह तआला मुत्तक़ियों के साथ है-

आख़िर में फ़रमाया وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّقِيْنَ (यानी बदला लेने में और हर मौक़े पर गुनाह से बचो) और अल्लाह से डरो। जिस चीज़ की इजाज़त नहीं उसे न करो और यह भी समझ लो कि तक़्वा अख़्तियार करने वालों का बहुत बड़ा मक़ाम है और वह यह कि अल्लाह तआला उन के साथ है। अगर किसी मौक़े पर नफ़्स के उभार की वजह से ज़्यादती करने का तक़ाज़ा हो और शरई मुमानिअ़त की वजह से उस से परहेज़ किया जाए तो अल्लाह तआला दुनिया व आख़िरत में उस का बदला देंगे।

195 وَاَنْفِقُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَلَا تُلْقُوْا بِاَيْدِيْكُمْ اِلَى التَّهْلُكَةِ ۛ وَاَحْسِنُوْا ۛ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ

हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि यह आयते करीमा 'सुलह़ हुदैबिया' के बारे में नाज़िल हुई है और वाक़िआ यह है कि जब रसूलुल्लाह (सल्ल०) बैतुल्लाह में दाख़िले से रोक दिये गये थे, फिर आप ने मुश्रिकीने मक्का से इस बात पर सुलह़ कर ली कि अगले साल आकर 'उ़मरः क़ज़ा' कर लेंगे, जब अगला साल आया तो आप ने और आप के सह़ाबा-ए-किराम (रज़ि०) ने उ़मरः क़ज़ा की तैयारी की और इस बात का ख़ौफ़ हुआ कि कहीं कुफ़्फ़ार वादा पूरा न करें और फिर मस्जिदे ह़राम में दाख़िला से रोक दें और क़िताल करने लगें तो क्या किया जाएगा इसलिए कि सह़ाबा-ए-किराम को ह़ज के महीनों में क़िताल पसन्द नहीं था। इस पर अल्लाह तआला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई और 'इब्ने जरीर' ने 'क़तादा' से नक़्ल किया है कि रसूल (सल्ल०) और आप के सहाबा-ए-किराम 'ज़ीक़अ़दा' के महीने में उ़मरह का एह़राम बाँधकर और क़ुर्बानी का जानवर साथ लेकर रवाना हुए जब मक़ामे हुदैबिया पर पहुँचे तो मुश्रिकीन ने आप को रोक दिया।

रसूल (सल्ल०) ने मुश्रिकीने मक्का से इस बात पर सुलह़ कर ली कि इस साल वापस जाते हैं और आइन्दा साल आकर उ़मरह करेंगे, फिर आप (सल्ल०) ने अगले साल उमरह का एह़राम बांधकर मक्का मुकर्रमा में दाख़िल हुए और तीन रातों तक वहाँ क़ियाम किया। मुश्रिकीन को इस बात पर फ़ख़्र था कि उन्होंने रसूल (सल्ल०) को वापस कर दिया, अल्लाह तआला ने उन का यह पूरा वाक़िआ बयान किया और रसूल (सल्ल०) को मक्का मुकर्रमा में उसी महीने के अन्दर दाख़िल फ़रमाया जिस महीने में कुफ़्फ़ार ने आप को वापस किया था, चुनांचे ह़क़ तआला ने यह हुक्म नाज़िल फ़रमाया اَلشَّهْرُ الْحَرَامُ بِالشَّهْرِ الْحَرَامِ "हुरमत वाला महीना है, हुरमत वाले महीने के और यह हुरमतें तो बदले की चीज़ें हैं।"

وَاَنْفِقُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ इमाम बुख़ारी (रह़०) ने ह़ज़रत हुज़ैफ़ा (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि आयते करीमा नफ़्क़ा के बारे में नाज़िल हुई है और इमाम अबू दाऊद, तिर्मिज़ी ने सेह़त के साथ और इमाम

हाकिम और 'इब्ने हब्बान' ने 'अबू अय्यूब' से रिवायत नक़्ल की है, उन्होंने फ़रमाया, "ऐ गिरोह अन्सार! यह आयते करीमा हमारे बारे में नाज़िल हुई है, कि जब अल्लाह तआला ने इस्लाम को इ़ज़्ज़त अता फ़रमा दी और उस के मददगार ज़्यादा हो गये, तो हम में से बाज़ ने बाज़ ख़ुफ़िया तरीक़े पर यह कहा कि हमारे माल यूँ ही ज़ाया हो रहे हैं और अब अल्लाह तआला ने इस्लाम को इ़ज़्ज़त दे दी है।"

तो अगर अब हम अपने अम्वाल का ख़याल करें और ज़ाया होने से उन की हिफ़ाज़त करें तो बेहतर है तब अल्लाह तआला ने हमारी बातों की तर्दीद में यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई कि अल्लाह तआला के रास्ते में माल भी ख़र्च करो और अपने आप को हलाकत में मुब्तिला न करो।

इमाम तबरानी ने सनद सहीह के साथ 'नोअमान बिन बशीर' से रिवायत नक़्ल की है कि इन्सान से गुनाह हो जाता है तो वह अपने दिल में कहता है कि अल्लाह तआला मेरी मग़्फ़िरत नहीं फ़रमाएगा, इस पर अल्लाह तआला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई कि अपने को हलाकत में मत डालो और इस हदीस के लिए एक और शहादत मौजूद है जिस को इमाम हाकिम ने हज़रत बरा (रज़ि०) से नक़्ल किया है। **(लुबाबुन्नुक़ूल फ़ी अस्बाबिन्नुज़ूल)**

अपने को हलाकत में डालने की मुमानिअ़त

'मुस्तदरक हाकिम' (भाग 3, पेज नं० 275) में अबू इमरान से रिवायत नक़्ल की है उन्होंने बयान किया कि हम कुस्तुनतुनिया में थे और अमीरुल् मुमिनीन की तरफ़ से मिस्र में उक़्बा बिन आमिर जुहनी और शाम में 'फ़ुज़ाला' थे। रोमियों की एक बहुत बड़ी टुकड़ी (जंग करने के लिए) सामने आई। मुसलमानों ने भी उनके सामने एक टुकड़ी बना ली एक मुसलमान ने रोमियों की टुकड़ी पर हमला कर दिया।

यहाँ तक कि वह उन में घुस गये, फिर वापस निकल आये तो लोग कहने लगे कि उस ने तो अपने को हलाकत में डाल दिया। इस पर हज़रत अबू अय्यूब अन्सारी (रज़ि०) ने फ़रमाया, "ऐ लोगों! तुम इस आयत का मतलब ग़लत लेते हो (इस का यह मतलब नहीं कि दुश्मनों से क़िताल न करो और उन पर हमला न करो।) यह आयत अन्सार के बारे में नाज़िल हुई जब अल्लाह तआला ने अपने दीन को ग़ल्बा दे दिया और उस के मददगार बहुत हो गये तो कुछ अन्सार ने यूँ कहा कि हमारे माल ज़ाया हो गये, लिहाज़ा अब अगर हम मालों की देखभाल के लिए घरों में मुक़ीम रहे (तो शायद कुछ हर्ज न हो) तब अल्लाह तआला ने हमारे इरादों की तर्दीद फ़रमाई और आयते करीमा وَاَنْفِقُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ नाज़िल फ़रमाई जिस से मालूम हो गया कि मालों की देखभाल के लिए घरों में बैठने में हलाकत है। बस हम को जिहाद करने का हुक्म हुआ।"

हज़रत अबू अय्यूब (रज़ि०) मौत तक बराबर अल्लाह की राह में जिहाद करते रहे। सुनन तिर्मिज़ी किताबुत्तफ़्सीर (तफ़्सीर सूरः बक़रः) में भी यह वाक़िआ थोड़े से इख़्तिलाफ़ के साथ है। इस में यह अल्फ़ाज़ हैं فلو اقمنا فی اموالنا واصلحنا ما ضاع منها (कि अगर हम अपने मालों में क़याम करते और उन में जो ख़राबी आ गई है उसे ठीक कर लेते तो अच्छा होता।) इस पर अल्लाह तआला

ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई जिस से वाज़ेह हुआ कि हलाकत मालों की देखभाल और उन की इस्लाह के लिए घरों में मुक़ीम होने और जिहाद छोड़ने में है। आयत के शाने नुज़ूल से मालूम हुआ कि अल्लाह के दुश्मनों के साथ जिहाद करते रहने और अल्लाह की राह में माल ख़र्च करते रहने में इस्लाम और मुसलमानों की इज़्ज़त और ग़ल्बा है और उस को छोड़ने में हलाकत है।

जिहाद की अहमियत और ज़रुरत-

रसूल-ए-अकरम (सल्ल०) ने फ़रमाया, “मुझे (अल्लाह की तरफ़ से) हुक्म हुआ है कि मैं लोगों के ख़िलाफ़ जिहाद करता रहूँ यहाँ तक कि वह गवाही दें कि अल्लाह के सिवा कोई मअ़बूद नहीं और मुह़म्मद (सल्ल०) अल्लाह के रसूल हैं और वह नमाज़ क़ायम करें और ज़कात दें। बस अगर वह ऐसा करने लगें तो उन्होंने अपनी जानों और मालों को मुझ से बचा लिया। हाँ, मगर इस्लाम का ह़क़ नहीं टलेगा (जैसे क़त्ल नाह़क़ में क़ातिल का क़िसास में क़त्ल किया जाना या मुन्किर ज़कात का क़त्ल वग़ैरह।) और उन (के दिल की बातों) का ह़िसाब अल्लाह के ज़िम्मे है।” **(सह़ीह़ बुख़ारी, अलू ईमान, बाब 17 ह़दीस 25)**

ह़क़ीक़त में जिहाद बहुत बड़ी चीज़ है। इस में बहुत बड़ी इज़्ज़त है, इस से अल्लाह की मदद आती है इस्लाम और मुसलमानों का ग़ल्बा होता है। तारीख़ खुलफ़ा (पेज नं० 87) में ह़ज़रत अबू बक्र (रज़ि०) की बह़वाला तब्रानी (अलू मोअ़जमुलू औसत) से ह़दीस नक़्ल की है। (जिस क़ौम ने जिहाद को छोड़ दिया उस पर अल्लाह तआ़ला आम अ़ज़ाब भेज देंगे।) जब से मुसलमानों ने ‘फ़ी सबीलिल्लाह’ जिहाद करना छोड़ दिया है उसकी वजह से उ़मूमी अ़ज़ाब भी देख रहे हैं।

मुसलमान जिहाद की तरफ़ मुतवज्जेह नहीं, आपस में लड़ते हैं या वतन और ज़बान के लिए लड़ते हैं। अल्लाह की रज़ा के लिए और अल्लाह की बात ऊँची करने के लिए जंग करने का ध्यान भी नहीं होता। दुश्मन पीट देता है और जब एक दुश्मन दूसरे दुश्मन को मुसलमान का मुल्क दिलवाता है तो उसी के पास फ़रियाद ले कर चले जाते हैं और उसी के फ़ैसलों पर राज़ी हो जाते हैं इस तरह़ हलाकत में पड़ रहे हैं। अल्लाह की राह में जो जान व माल ख़र्च करने का हुक्म है मुसलमानों का कोई मुल्क उस पर अ़मल करने को तैयार नहीं।

यह जो फ़रमाया وَلَا تُلْقُوا بِأَيْدِيكُمْ إِلَى التَّهْلُكَةِ इसकी एक तफ़्सीर तो वही है जो शाने नुज़ूल से मालूम हुई और ह़ज़रत अबू अय्यूब अन्सारी (रज़ि०) से बयान फ़रमाई, लेकिन मुफ़स्सिरीन ने इस की और भी कई चीज़ें ज़िक्र की हैं और अल्फ़ाज़ के उ़मूम के एतिबार से बहुत सी सूरतें इस में शामिल हैं। माल के ख़र्च करने में इस्राफ़ करना, हलाल ज़रिये मआ़श को ज़ाया करना, ख़ुदकुशी करना, क़स्दन और अ़मदन ऐसे काम करना जिस में हलाकत हो, जिन जगहों पर माल ख़र्च करना फ़र्ज़ या वाजिब है वहाँ ख़र्च करने से जान चुराना, गुनाहों में मुब्तिला रहना, तौबः न करना और इस तरह़ की बहुत सी सूरतें हैं जो जान को हलाकत में डालने में आती हैं वह सब मना हैं।

सिफ़ते एह़सान अख़्तियार करने का हुक्म-

आयत के आख़िर में फ़रमाया وَأَحْسِنُوا إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ ۝ लफ़्ज़ أَحْسِنُوا बाब अफ़आ़ल से अम्र का

सीग़ा है और 'एह़सान' हुस्न से बना है। हुस्न 'ख़ूबी' और अच्छाई को कहते हैं और एह़सान किसी काम को अच्छे तरीक़े पर अन्जाम देने को कहा जाता है। जो काम किये जाएँ उन की शरायत और अदब का ख़याल रखा जाए ताकि उन में सिफ़ते एह़सान पैदा हो जाए और ख़ूबी के साथ एह़सान देना सच हो जाए।

ह़दीस जिब्रईल में है कि उन्होंने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से जब सवाल किया कि एह़सान क्या चीज़ है तो आप ने अ़िबादत का एह़सान बता दिया और फ़रमाया

(एह़सान यह है कि तुम अल्लाह की इस तरह अ़िबादत करो यानी उसे देख रहे हो और अगर तुम उस को नहीं देख रहे हो तो वह तुम्हें देख ही रहा है) ज़कात को सिफ़ते एह़सान के साथ अदा करें दिखावा न हो, रद्दी माल न दें जिस को दें उस पर एह़सान न धरें ख़ुशदिली के साथ दें पूरी ज़कात निकालें। ह़ज में जिनायात (गुनाह या एह़राम के ख़िलाफ़) न करें, जंग व जिदाल से परहेज़ करें, ह़ज करके नाम करना मक़्सद न हो। रोज़े रखें, ग़ीबत और गाली-गलौज से रोज़ः की ह़िफ़ाज़त करें, यह सब सिफ़त एह़सान में शामिल है इन्सानी ज़रूरत के लिए जानवरों के ज़ब्ह़ करने की इजाज़त दी गई, लेकिन इस में भी सिफ़ते एह़सान क़ायम रखने का हुक्म फ़रमाया है।

ह़ज़रत शद्दाद बिन औस (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी अक्रम (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया कि बिलाशुब्हा अल्लाह तआ़ला ने हर चीज़ के बारे में ख़ूबी अख़्तियार करने का हुक्म फ़रमाया, सो जब तुम (किसी को शरीअ़त की इजाज़त से) क़त्ल करो तो क़त्ल करने में ख़ूबी अख़्तियार करो। (जैसे- चेहरा न बिगाड़ो) और जब तुम ज़ब्ह़ करने लगो तो ख़ूबी के साथ ज़ब्ह़ करो अपनी छुरी को तेज़ कर लो अपने जानवरों को आराम पहुँचाओ। **(सह़ीह़ मुस्लिम)**

اللہ کانک تراہ فانہ یراک

196 وَأَتِمُّوا الْحَجَّ وَالْعُمْرَةَ لِلَّهِ ۚ فَإِنْ أُحْصِرْتُمْ فَمَا اسْتَيْسَرَ مِنَ الْهَدْيِ ۖ وَلَا تَحْلِقُوا رُءُوسَكُمْ حَتَّىٰ يَبْلُغَ الْهَدْيُ مَحِلَّهُ ۚ فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَرِيضًا أَوْ بِهِ أَذًى مِنْ رَأْسِهِ فَفِدْيَةٌ مِنْ صِيَامٍ أَوْ صَدَقَةٍ أَوْ نُسُكٍ ۚ فَإِذَا أَمِنْتُمْ فَمَنْ تَمَتَّعَ بِالْعُمْرَةِ إِلَى الْحَجِّ فَمَا اسْتَيْسَرَ مِنَ الْهَدْيِ ۚ فَمَنْ لَمْ يَجِدْ فَصِيَامُ ثَلَاثَةِ أَيَّامٍ فِي الْحَجِّ وَسَبْعَةٍ إِذَا رَجَعْتُمْ ۗ تِلْكَ عَشَرَةٌ كَامِلَةٌ ۗ ذَٰلِكَ لِمَنْ لَمْ يَكُنْ أَهْلُهُ حَاضِرِي الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ۚ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَرِيضًا इमाम बुख़ारी (रह़०) ने 'कअ़ब बिन अ़ज्रह' से नक़्ल किया है कि उन से अल्लाह तआ़ला का फ़रमान فَفِدْيَةٌ مِنْ صِيَامٍ के बारे में दर्याफ़्त किया गया, वह बोले कि मुझे रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्मत में लाया गया और जुएँ मेरे सर से झड़ रही थीं, आप ने फ़रमाया कि मैं देख रहा हूँ इस मशक़्क़त व तक्लीफ़ में तुम गिरफ़्तार हो रहे हो कोई बकरी तुम्हारे पास है?

मैंने अ़र्ज़ किया नहीं आप ने फ़रमाया तो तीन रोज़े रखो या छः मिस्कीनों को खाना खिलाओ हर एक मिस्कीन को आधा खाने को दो और उस के बाद सर मुंडा लो। ह़ज़रत कअ़ब फ़रमाते हैं इस के

बाद ख़ुसूसी तौर पर यह आयते करीमा मेरे लिए नाज़िल हो गई और अब यह आयत तुम सब के लिए है।

'इमाम अह़मद' ने ह़ज़रत कअ़ब (रज़ि०) से रिवायत नक़्ल की है, फ़रमाते हैं कि हम रसूलुल्लाह (सल्ल०) के साथ मक़ामे हुदैबिया में एह़राम की ह़ालत में थे मुश्रिकीन ने हमें रोक दिया था और मेरी जुएँ बकसरत हो रही थीं, यहाँ तक कि मेरे चेहरे पर गिर रही थीं, रसूल (सल्ल०) का गुज़र मेरे पास से हुआ, आप ने फ़रमाया कि क्या तेरे सर की जुएँ तुझे तक्लीफ़ पहुँचा रही हैं? चुनाँचे आप ने सर मुंडाने का हुक्म दिया, इस पर यह आयते करीमा नाज़िल हुई فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَرِيضًا, और 'वाह़िदी' ने 'अ़ता' के वास्ते से ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत नक़्ल की है फ़रमाते हैं कि जब हम ने हुदैबिया में पड़ाव किया तो 'कअ़ब बिन अ़ज्रह' अपनी जुवों को अपने चेहरे पर से झाड़ते हुए आये और अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह (सल्ल०)! इन जुओं ने तो मुझे खा लिया है, तो उसी वक़्त यह आयते करीमा فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ नाज़िल हुई। **(लुबाबुन्नुक़ूल फ़ी अस्बाबिन्नुज़ूल)**

ह़ज व उ़मरा पूरा न कर सके तो-

ह़दीस में ह़ज और उ़मरे की बड़ी फ़ज़ीलत आई है। इस्लाम क़ुबूल करते ही तमाम पिछले गुनाह धुल जाते हैं, अल्लाह की राह में हिजरत और ह़ज की भी यही फ़ज़ीलत है। ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर (रज़ि०) फ़रमाते हैं, ह़ज और उ़मरह हर मुसलमान पर वाजिब है। ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा का इर्शाद है, "इस आयत में उ़मरे का बयान ह़ज के ज़िम्न में आया है।" रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "एक उ़मरे से दूसरे तक जितने गुनाह हों उ़मरह उन सब का कफ़्फ़ारा है और जिस ह़ज को अल्लाह क़ुबूल फ़रमा ले उस का अज्र तो बस जन्नत ही है।"

(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् उ़मरह, बाब 1, ह़दीस 1773)

यह आयत चूँकि वाक़िआ हुदैबिया में नाज़िल हुई जो 6 हिजरी में हुआ। जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और आप के सह़ाबा-ए-किराम (रज़ि०) उ़मरह का एह़राम बाँधे हुए थे और कुफ़्फ़ारे मक्का ने मक्का में दाख़िल होने और उ़मरह अदा करने से रोक दिया था तो अब यह सवाल पैदा हुआ कि अगर एह़राम बाँधने के बाद कोई मजबूरी और माज़ूरी पेश आ जाए और ह़ज व उमरह अदा न कर सकें तो क्या करें? चुनाँचे आयत में 'मुह़स्सिर' का हुक्म बतलाया जाता है। 'मुह़स्सिर' उसे कहते हैं जिस ने ह़ज या उ़मरह का एह़राम बाँधा हो, मगर किसी मजबूरी से पूरा न कर सका हो, जैसे- बीमारी की वजह से एह़राम बाँध लेने के बाद बैतुल्लाह न पहुँच सके या किसी दुश्मन ने रास्ता रोक लिया या कोई मौसमी और दूसरी रुकावट हो गई।

'कअ़ब बिन उज्जह' से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया तुम्हें जुओं वग़ैरह की तक्लीफ़ है तो तुम अपना सर मुंडवाओ, तीन रोज़े रखो या 6 मिस्कीनों को खाना खिलाओ या बकरी ज़ब्ह़ करो। **(बुख़ारी)**

अल्लाह तआ़ला इस आयत में इर्शाद फ़रमाता हैः-

क़ुर्बानी के जानवर का हुक्म- फिर अगर किसी दुश्मन की ओर से या किसी मर्ज़ की वजह

से हज व उमरह के पूरा करने से रोक दिया जाए तो इस हालत में यह हुक्म है कि कुर्बानी का जानवर जो कुछ मुयस्सर हो ज़ब्ह करे और हज व उमरह की जो सूरत बना रखी थी रोक दे। (उस को एहराम खोलना कहते हैं जिस का तरीक़ा शरअ में सर मुंडाना है बाल कटा देने का भी यही असर है) और अपने सरों को एहराम की ग़र्ज़ से उस वक़्त तक मुंडवाओ जब तक कि वह कुर्बानी का जानवर जिस के ज़ब्ह का इस हालत में हुक्म था अपने मौक़े पर न पहुँच जाए और वह मौक़ा हरम है (कि कुर्बानी का जानवर वहाँ अगर खुद न जा सके तो किसी के ज़रिये भेजा जाए और ज़ब्ह किया जाए यानी जब तक यह जानवर हरम में न पहुँचे और वहाँ उसकी कुर्बानी न कर दी जाए उस वक़्त तक यह रुका हुआ शख़्स यानी 'मुहस्सिर' सर नहीं मुंडा सकता और एहराम नहीं खोल सकता। इस आम हुक्म में माज़ूर और मरीज़ के लिए अल्लाह तआला ने एक रिआयत मुक़र्रर फ़रमाई और इर्शाद फ़रमाया है।)

फ़िद्या की मिक़्दार-

"अगर कोई बीमार हो या सर में कुछ ज़ख़्म, दर्द या जुएँ वग़ैरह की तक्लीफ़ हो और इस बीमारी या तक्लीफ़ की वजह से पहले ही सर मुंडाने की जरूरत पड़ जाए तो ऐसे को इजाज़त है कि वह सर मुंडा कर फ़िद्या यानी उस का शरई बदला दे दे, चाहे तीन रोज़ः रखे या छः मिस्कीनों को खाना खिलाए। एक मिस्कीन को सद्क़-ए-फ़ित्र के बराबर देना होगा यानी आधा 'साअ' गेहूँ ख़ैरात के तौर पर दे देने या कम से कम एक बकरी ज़ब्ह कर देने से अदा होगा।"

यह तो 'मुहस्सिर' और मरीज़ से सम्बन्धित एहकाम हज व उमरह के बयान फ़रमाये गये हैं और आयत के इस हिस्से में मसायल हैं, जो फ़िक़ः हन्फ़ी के मुताबिक़ हैं।

1- जिस शख़्स को इस्तिताअत हो उस पर तो हज फ़र्ज़ है और जिस शख़्स को इस्तिताअत न हो और वह शुरु कर दे, यानी एहराम बाँध ले तो उस पर पूरा करना फ़र्ज़ हो जाता है और उमरह करना फ़र्ज़ व वाजिब नहीं बल्कि 'सुन्नते मोअक्किदह' है। अलबत्ता 'उमरह' शुरु कर देने से यानी जब उमरह का एहराम बाँध लिया तो उस का भी पूरा करना वाजिब हो जाता है। **(बयानुल् क़ुर्आन)**

2- अगर हज व उमरह किसी उज़्र से पूरा न कर सके चाहे रास्ते में बद्अमनी हो गई या बीमारी ने मजबूर कर दिया तो ऐसे शख़्स को चाहिए कि किसी मोअतबर शख़्स से कह दे कि फ़लाँ तारीख़ में 'हद्दे हरम' के अन्दर मेरी तरफ़ से एक जानवर यानी कम से कम एक बकरी कुर्बानी कर देना और 'क़िरान' व 'तमत्तोअ' में जिन का ज़िक्र आगे आ रहा है बकरी ज़ब्ह कर देना और जब वह तारीख़ आये और गुमान ग़ालिब हो कि अब जानवर 'हद्दे हरम' में ज़ब्ह हो गया होगा तो सर मुंडा दे या बाल कटा दे। इस से एहराम खुल जाएगा और जो काम एहराम बाँधने से रोक दिये गये थे वह सब दुरुस्त हो जाएँगे। फिर इस हज या उमरह को क़ज़ा करना पड़ेगा।

3- सर मुंडवाने का हुक्म या तमाम बाल कतरवाने का हुक्म सिर्फ़ मर्दों के लिए है, औरतों के लिए नहीं। औरत को सर मुंडाना हराम है वह सिर्फ़ एक अंगुल बाल काट ले।

4- अगर कोई हज या उमरह का एहराम बाँधने के बाद पूरा नहीं कर पाया या कोई बीमारी की वजह

से तक्लीफ़ से सर मुंडाने की ज़रूरत पड़ी तो उसको तीन बातों का अख़्तियार है।

I- चाहे सर मुंडा कर तीन रोज़े रखे।

II- चाहे छः मिस्कीनों को हर-हर मिस्कीन को सद्क़-ए-फ़ित्र के बराबर ग़ल्ला (गेहूँ या जौ) दे दे, मगर एक मिस्कीन को एक ही हिस्सा देना चाहिए। अगर एक मिस्कीन को दो हिस्सा दिये तो एक ही शुमार होगा।

III- एक बकरी ज़िब्ह़ करके मिस्कीनों को तक़्सीम कर दे, मगर ज़िब्ह़ के लिए ह़द्दे ह़रम में ही करेगा यह हुक्म यह रोज़ः व सद्क़ः के लिए मुक़र्रर नहीं।

ऊपर के एह़काम 'मुहस्सिर' के सम्बन्ध में बयान किये गये अर्थात जिसने ह़ज व उमरह का एह़राम बाँधा मगर किसी मजबूरी की वजह से पूरा न कर सका या मरीज़ हो गया हो या किसी तक्लीफ़ की वजह से सर मुंडाना चाहता हो। आगे की आयत में अम्न की ह़ालत में ह़ज व उ़मरह की क़ुर्बानी के कुछ मसायल का ज़िक्र फ़रमाया जाता है और इर्शाद होता है।

'उमरह' की क़ुर्बानी के मसायल-

फिर जब तुम अम्न की ह़ालत में हो चाहे पहले ही से कोई ख़ौफ़ व टकराव पेश न आया हो या होकर चला गया हो तो इस सूरत में ह़ज व उ़मरह के मुतअ़ल्लिक़ क़ुर्बानी करना हर एक के ज़िम्मे नहीं बल्कि ख़ास जो शख़्स उ़मरह से हो और उस को ह़ज के साथ मिला लिया हो, यानी ह़ज के दिनों में उ़मरह भी किया हो तो उसके लिए ज़रूरी है कि जो कुछ क़ुर्बानी हो सके ज़िब्ह़ करे और जिसने उ़मरह किया हो या केवल ह़ज किया हो उस पर ह़ज व उ़मरह के सम्बन्ध में कोई क़ुर्बानी नहीं। फिर ह़ज के दिनों में ह़ज व उ़मरह को जमा करने वालों में से जिस व्यक्ति को क़ुर्बानी का जानवर ज़िब्ह़ करने की ताक़त न हो तो उसके ज़िम्मे क़ुर्बानी के तीन दिनों के रोज़े हैं।

ह़ज के दिनो में जबकि ह़ज से तुम्हारे लौटने का वक़्त आ जाए चाहे ह़ज कर चुको चाहे लौटना हो या वहाँ रहना हो, यह पूरे दस दिनों के रोज़े हुए और यह भी याद रखो कि अभी जो ह़ज और उ़मरह को मिलाने का ज़िक्र हुआ है यह मिलाना हर एक को दुरुस्त नहीं बल्कि ख़ास उस व्यक्ति के लिए है जिसके घर वाले मस्जिदे ह़राम यानी कअ़बः के क़रीब में न रहते हों और इन सब के एह़काम में अल्लाह से डरते रहो।

आयत के इस ह़िस्सा से सम्बन्धित फ़िक़ः ह़न्फ़ी के मसायल इस तरह़ हैं-

ह़ज की तीन क़िस्में-

(i) इफ़राद- ह़ज के दिनों में केवल ह़ज किया जाए।

(ii) तमत्तोअ़- ह़ज के दिनों में पहले उ़मरह का एह़राम बाँध कर उ़मरह करे, फिर दोबारा ह़ज का एह़राम बाँध कर ह़ज करे।

(iii) किरान- उ़मरह व ह़ज दोनों की नियत से एह़राम बांधे और एक ही एह़राम से, पहले उ़मरह करें, फिर ह़ज करे।

'इफ़राद', 'तमत्तोअ़' और 'किरान' में कु़र्बानी का हु़क्म-

1- 'तमत्तोअ़' और 'किरान' में एक जानवर ज़िब्ह़ करना कु़र्बानी के ज़माने में हु़दूदे ह़रम के अन्दर वाजिब है और इफ़राद में कु़र्बानी वाजिब नहीं।

2- 'तमत्तोअ़' व 'किरान' में जिसको कु़र्बानी की कु़द्रत न हो उसके बदले दस रोज़े रखने ज़रूरी हैं। ३ रोज़े तो दस्वीं ज़िल्ह़िज्जा से पहले ख़त्म कर दे और जब ह़ज कर चुके तो सात रोज़े उस वक़्त रख ले चाहे वतन आकर रख ले या वहाँ रख ले और अगर दस्वीं ज़िल्ह़िज्जा से पहले तीन रोज़े न रख सके तो फिर कु़र्बानी ही करना वाजिब है।

3- इफ़राद ह़ज हर व्यक्ति के लिए जायज़ है। तमत्तोअ़ व क़िरान केवल उन लोगों के लिए जायज़ है जो 'मीक़ात' के हु़दूद से बाहर रहते हों। 'मीक़ात' उन जगहों को कहते हैं जहाँ से मक्का जाने वालों के लिए एह़राम बाँधना ह़ज या उ़मरह के लिए वाजिब होता है।

ऊपर की आयत में अल्लाह तआ़ला ने आख़िर में फ़रमा दिया कि अल्लाह के हु़क्मों की पाबन्दी रखो और अगर कोई ख़िलाफ़वर्ज़ी करोगे तो याद रखो कि अल्लाह का अ़ज़ाब सख़्त है और वह सख़्त सज़ा देने वाला है।

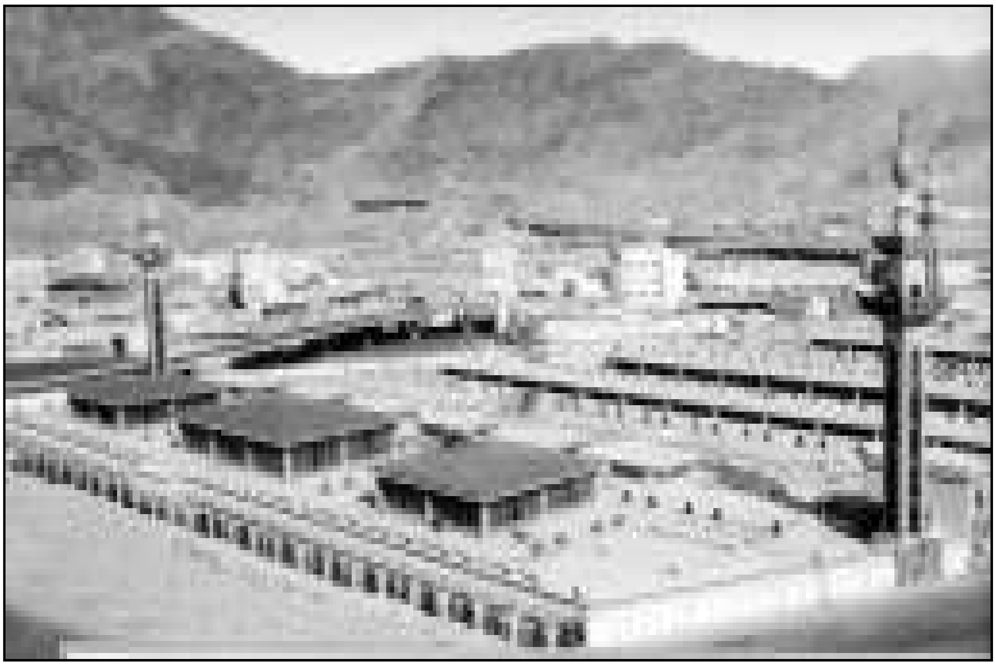

मिना में मस्जिदे ख़ैफ़

मिना में आग प्रूफ़ ख़ेमे

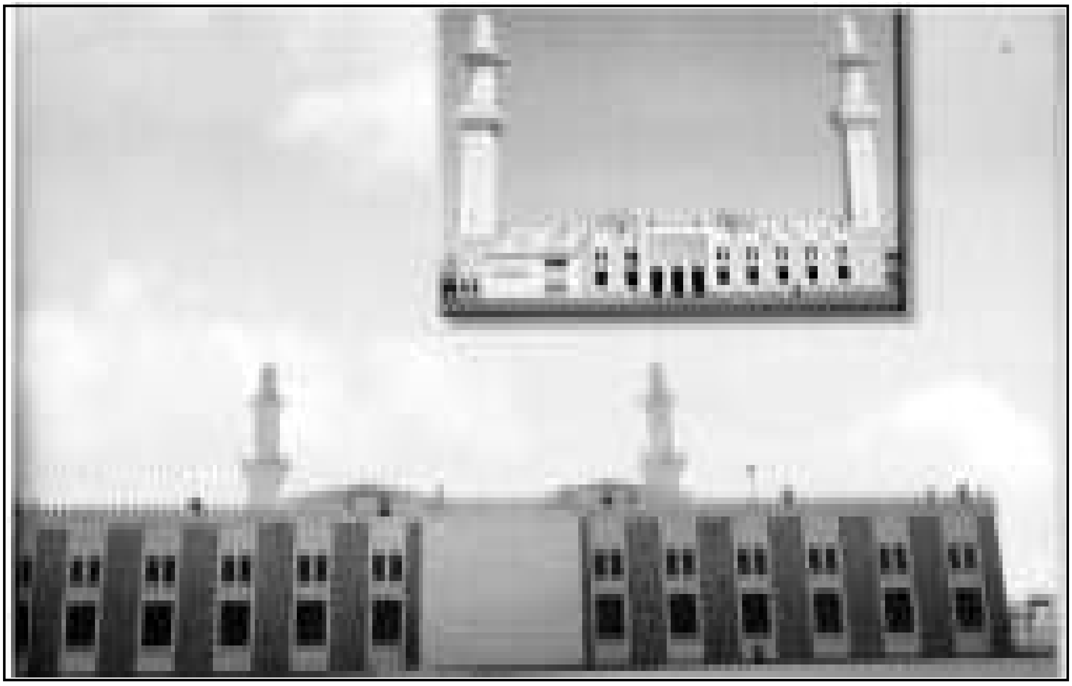

मुज़्दल्फ़ा की मस्जिद

अ़रफ़ात में मस्जिदे नमूरह

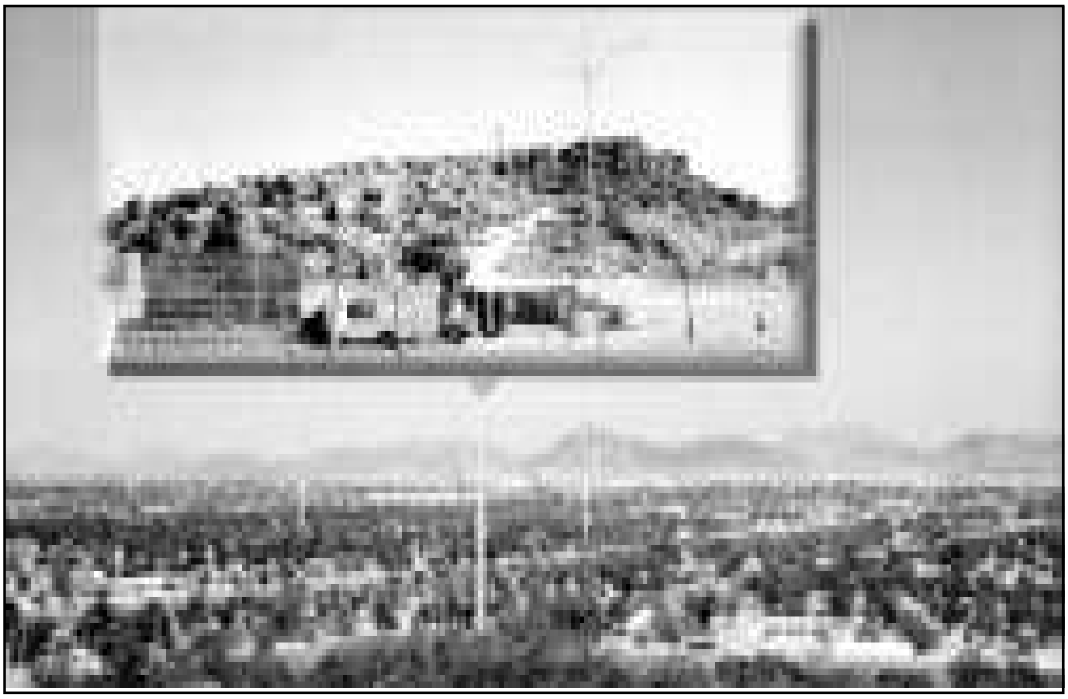

मैदाने अ़रफ़ात और जबले रह़मत

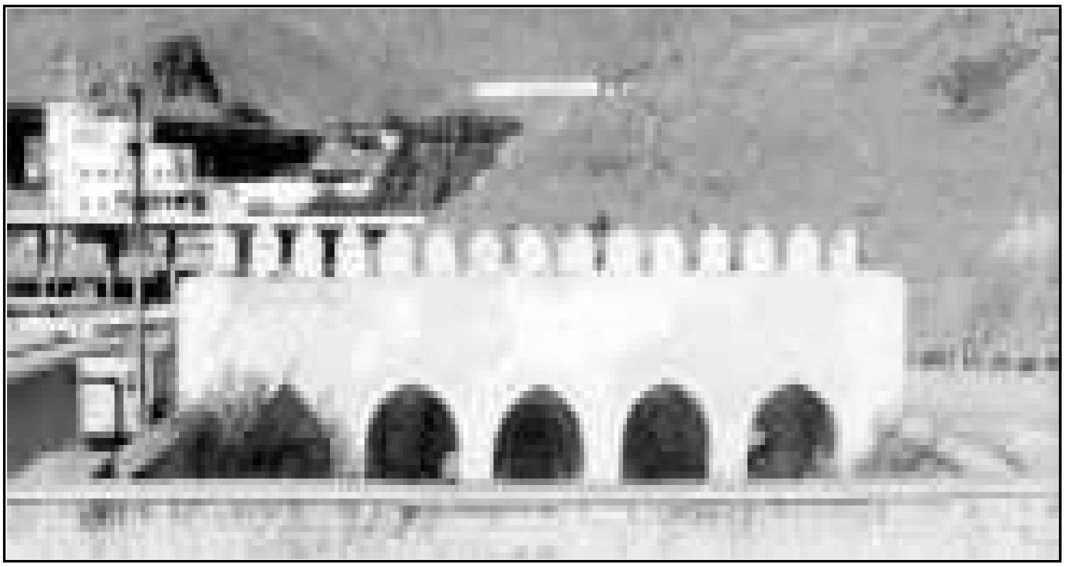

मिना में मस्जिद बैअ़ते उ़क़्बा

मस्जिदे ह़राम

आयत नं० 197 से 207 तक

اَلْحَجُّ اَشْهُرٌ مَّعْلُوْمٰتٌ ۚ فَمَنْ فَرَضَ فِيْهِنَّ الْحَجَّ فَلَا رَفَثَ وَلَا فُسُوْقَ ۙ وَلَا جِدَالَ فِي الْحَجِّ ؕ وَمَا تَفْعَلُوْا مِنْ خَيْرٍ يَّعْلَمْهُ اللّٰهُ ؕ
وَتَزَوَّدُوْا فَاِنَّ خَيْرَ الزَّادِ التَّقْوٰى ۚ وَاتَّقُوْنِ يٰٓاُولِي الْاَلْبَابِ ۝ لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَبْتَغُوْا فَضْلًا مِّنْ رَّبِّكُمْ ؕ فَاِذَآ اَفَضْتُمْ
مِّنْ عَرَفٰتٍ فَاذْكُرُوا اللّٰهَ عِنْدَ الْمَشْعَرِ الْحَرَامِ ۪ وَاذْكُرُوْهُ كَمَا هَدٰىكُمْ ۚ وَاِنْ كُنْتُمْ مِّنْ قَبْلِهٖ لَمِنَ الضَّآلِّيْنَ ۝ ثُمَّ اَفِيْضُوْا مِنْ
حَيْثُ اَفَاضَ النَّاسُ وَاسْتَغْفِرُوا اللّٰهَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝ فَاِذَا قَضَيْتُمْ مَّنَاسِكَكُمْ فَاذْكُرُوا اللّٰهَ كَذِكْرِكُمْ اٰبَآءَكُمْ
اَوْ اَشَدَّ ذِكْرًا ؕ فَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّقُوْلُ رَبَّنَآ اٰتِنَا فِي الدُّنْيَا وَمَا لَهٗ فِي الْاٰخِرَةِ مِنْ خَلَاقٍ ۝ وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّقُوْلُ رَبَّنَآ اٰتِنَا
فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِي الْاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ ۝ اُولٰٓئِكَ لَهُمْ نَصِيْبٌ مِّمَّا كَسَبُوْا ؕ وَاللّٰهُ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ۝
وَاذْكُرُوا اللّٰهَ فِيْٓ اَيَّامٍ مَّعْدُوْدٰتٍ ؕ فَمَنْ تَعَجَّلَ فِيْ يَوْمَيْنِ فَلَآ اِثْمَ عَلَيْهِ ۚ وَمَنْ تَاَخَّرَ فَلَآ اِثْمَ عَلَيْهِ ۙ لِمَنِ اتَّقٰى ؕ وَاتَّقُوا
اللّٰهَ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّكُمْ اِلَيْهِ تُحْشَرُوْنَ ۝ وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يُّعْجِبُكَ قَوْلُهٗ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَيُشْهِدُ اللّٰهَ عَلٰى مَا فِيْ قَلْبِهٖ ۙ
وَهُوَ اَلَدُّ الْخِصَامِ ۝ وَاِذَا تَوَلّٰى سَعٰى فِي الْاَرْضِ لِيُفْسِدَ فِيْهَا وَيُهْلِكَ الْحَرْثَ وَالنَّسْلَ ؕ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الْفَسَادَ ۝ وَاِذَا قِيْلَ
لَهُ اتَّقِ اللّٰهَ اَخَذَتْهُ الْعِزَّةُ بِالْاِثْمِ فَحَسْبُهٗ جَهَنَّمُ ؕ وَلَبِئْسَ الْمِهَادُ ۝ وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّشْرِيْ نَفْسَهُ ابْتِغَآءَ مَرْضَاتِ اللّٰهِ ؕ
وَاللّٰهُ رَءُوْفٌ ۢ بِالْعِبَادِ ۝

अनुवाद-

(197) हज के (कुछ) महीने मालूम (निश्चित) हैं तो जो व्यक्ति अपने ऊपर हज को लाज़िम (नियत) कर ले, तो फिर हज में न कोई बुरी बात (कामवासना की) होने पाए और न कोई बेहुक्मी की, और न कोई झगड़े की; और भलाई का तुम जो भी काम करोगे, वह अल्लाह को मालूम हो जाएगा; और (हज पर जाने से पहले) सफ़र का सामान साथ में ले लिया करो, और सबसे अच्छा सामान तो 'परहेज़गारी है, और ऐ अक़्ल वालों! 'मुझसे' ही डरा करो। (198) तुम्हारे लिए इसमें कोई गुनाह नहीं कि तुम अपने रब का फ़ज़्ल (रोज़ी) तलाश करो; फिर जब अ़रफ़ात से लौटो तो 'मशअ़रिल ह़राम' (मुज़दलफ़ा) के पास ठहर कर अल्लाह को याद करो, और उसे याद करो जैसा कि उसने तुम्हें बताया है; और इससे पहले तुम लोग (इन तरीक़ों से) अंजान थे; (199) फिर जहाँ से और लोग वापस हों, वहीं से तुम भी वापस हो, और अल्लाह से माफ़ी चाहो, बेशक अल्लाह बहुत माफ़ करने वाला, रह़म वाला है; (200) फिर जब ह़ज के कामों को पूरा कर चुको, तो अल्लाह को याद करो, जिस तरह तुम अपने बाप-दादा को याद किया करते थे, बल्कि उससे भी ज़्यादा याद करो; फिर कुछ लोग ऐसे हैं, जो कहते हैं, ''ऐ हमारे रब! हमको (जो देना हो) दुनिया में दे,'' और ऐसे लोगों का आख़िरत (परलोक) में कोई ह़िस्सा नहीं; (201) और उन में कुछ ऐसे हैं, जो दुआ़एँ माँगते हैं, ''कि ऐ हमारे रब! हमें दुनिया में भी भलाई दे,'' और आख़िरत में भी भलाई दे, और हमें आग के अ़ज़ाब से बचाए रखना। (202) यही लोग हैं जिन्हें ह़िस्सा (अच्छा बदला) मिल कर रहेगा, उसके बदले में जो इन्होंने अ़मल कर रखा है, और अल्लाह जल्द ह़िसाब लेने वाला है। (203) और गिनती के (मिना में ठहरने के) दिनों में अल्लाह को याद करते रहो, फिर जो कोई जल्दी करके दो ही दिन में कूच करे, तो इस में भी उस पर कोई गुनाह नहीं, और जो बाद में ठहरा रहे, उस पर भी कोई गुनाह नहीं यह उस के लिए है जो डरता

रहता है; और तुम लोग अल्लाह से डरते रहो, और जाने रहो! कि तुम (सब) उसी के पास इकट्ठा किये जाओगे। (204) और लोगों में कुछ तो ऐसे हैं कि उनकी बातें तुमको दुनिया में भली मालूम होती हैं, इस (खोट) के बावजूद जो उसके दिल में होती हैं; वह अल्लाह को गवाह बनाता है, हालाँकि वह सख़्त झगड़ालू (दुश्मन) है; (205) और जब लौटता है, तो इस दौड़ धूप में रहता है कि धरती पर फसाद पैदा करे, और खेती और जानवरों को तबाह करे, जबकि अल्लाह फ़साद को पसंद नहीं करता; (206) और जब उससे कहा जाता है, "अल्लाह से डरो," तो उसका घमण्ड उसे और गुनाह पर आमादा करता है; फिर ऐसे को दोज़ख काफ़ी है और वह बहुत बुरा ठिकाना है; (207) और इन्सानों में कुछ ऐसे भी होते हैं, जो अल्लाह को राज़ी करने के लिए अपनी जान खपा देता है, और अल्लाह भी अपने (ऐसे) बन्दों के प्रति बड़ी शफ़्क़त (ममता) रखता है।

आयत नं० 197 से 207 तक की व्याख्या

197 اَلْحَجُّ اَشْهُرٌ مَّعْلُوْمٰتٌ ۚ فَمَنْ فَرَضَ فِيْهِنَّ الْحَجَّ فَلَا رَفَثَ وَلَا فُسُوْقَ ۙ وَلَا جِدَالَ فِي الْحَجِّ ؕ وَمَا تَفْعَلُوْا مِنْ خَيْرٍ يَّعْلَمْهُ اللّٰهُ ؕ وَتَزَوَّدُوْا فَاِنَّ خَيْرَ الزَّادِ التَّقْوٰى ۚ وَاتَّقُوْنِ يٰٓاُولِي الْاَلْبَابِ ﴿۱۹۷﴾

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि अहले यमन हज के लिए आते तो ज़ादे राह साथ न लाते और कहते कि हम तवक्कुल करने वाले हैं तो अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई। (बुख़ारी)

हज़ का महीना-

अ़रब में जाहिलियत से लेकर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) तक यही महीने मुक़र्रर हैं। इससे मालूम हुआ कि हज के लिए कुछ महीने मुक़र्रर हैं जो मश्हूर हैं। अर्थात "पहली शव्वाल से दस ज़िल्हिज्जा तक का ज़माना। आगे हज का एहराम बांधने वाले के लिए कुछ आदाब और एहकाम बयान किये जाते हैं और फ़रमाया जाता है कि जो व्यक्ति इन दिनों में, अपने ज़िम्मे हज मुक़र्रर कर ले यानी हज का एहराम बाँधा ले तो उस व्यक्ति को न कोई ग़लत बात करना जायज़ है न कोई बेहुक्मी जायज़ है और न किसी तरह का झगड़ा बल्कि उसको चाहिए कि हर वक़्त नेक ही कामों में लगा रहे और जो नेक काम किया जाए अल्लाह तआ़ला को उसकी ख़बर रहती है, तो उसका बदला तुमको देगा।

इन आयतों में हालते एहराम में जिन चीज़ों से परहेज़ करने को कहा गया है वह तीन चीज़ें हैं:-

1- रफ़स 2- फ़ुसूक़ 3- जिदाल

1- रफ़स- 'रफ़स' इसमें औ़रतों से मेल-मिलाप करना, औ़रतों से बेपर्दा होना, औ़रतों की तरफ़ देखना और औ़रतों से बेहिजाबी की बातें करना सब शामिल है। 'मोहरिम' यानी एहराम बाँधने वाले को यह सब बातें हराम और मना हैं।

2- फ़ुसूक़- फ़ुसूक का मतलब नाफ़रमानी के हैं, जो आम अर्थ के एतिबार से तमाम गुनाहों पर शामिल है। मगर कुछ मुफ़स्सिरीन ने लिखा है, फ़ुसूक़ से वह तमाम काम जो ह़ालते एह़राम में मना हैं नाजायज़ है, यानी वह चीज़ें जो अस्ल में तो ह़राम नहीं, मगर एह़राम की वजह से नाजायज़ हो जाती हैं वह छः चीज़ें हैं जिनको मह़ज़ूराते एह़राम कहते हैं।

1- बीवी के साथ मुबाशिरत (सम्भोग) और उससे सम्बन्धित तमाम काम।

2- ख़ुश्बू का इस्तिमाल।

3- बदन से बाल दूर करना या नाख़ून काटना।

4- जानवरों का शिकार करना।

5- सिले हुए कपड़े पहनना।

6- सर और चेहरे को ढ़ांकना।

7- सर का ढ़ांकना केवल मर्दों के लिए मना है अ़ौरतों के लिए नहीं।

8- चेहरा का ढ़ांकना ह़ालते एह़राम में अ़ौरतों के लिए मना है।

3- जिदाल- आपस में लड़ाई झगड़ा फ़ुसूक़ व गुनाह तो हर ह़ाल में बुरा है, लेकिन ह़ालते एह़राम में उसका गुनाह और ज़्यादा बढ़ जाता है।

यही तीनों चीज़ें हैं जो ह़ज के मौक़े पर बहुत पेश आती हैं।

आगे एक और हिदायत दी गई है कि ह़ज को जब जाने लगो तो ख़र्च ज़रूर साथ ले लिया करो, सब से बड़ी बात और ख़ूबी ख़र्च में किसी के सामने हाथ फैलाने से बचे रहना है। फिर आख़िर की आयत में फ़रमाया अल्लाह से डरते रहने और तक़्वा अख़्तियार करने का हुक्म दिया गया है और यह हुक्म बार-बार क़ुर्आन में आया है चाहे ह़लाल व ह़राम के मसायल का ज़िक्र हो या निकाह और तलाक़ के काम हों या जिहाद व क़िताल का बयान हो या वसीयत और वरसा की तक़्सीम का ज़िक्र हो या आपसी मेलजोल का ज़िक्र हो या यतीम और मिस्कीन के माल व दौलत या क़िसास का हुक्म हो या रोज़ः, ह़ज उ़मरा का ज़िक्र हो। हर जगह अल्लाह से डरते रहना और परहेज़गारी अपनाते रहने का हुक्म दिया गया है।

198 لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَبْتَغُوْا فَضْلًا مِّنْ رَّبِّكُمْ ؕ فَاِذَآ اَفَضْتُمْ مِّنْ عَرَفٰتٍ فَاذْكُرُوا اللّٰهَ عِنْدَ الْمَشْعَرِ
الْحَرَامِ ۪ وَاذْكُرُوْهُ كَمَا هَدٰىكُمْ ۚ وَاِنْ كُنْتُمْ مِّنْ قَبْلِهٖ لَمِنَ الضَّآلِّيْنَ ﴿۱۹۸﴾

ह़ज में तिजारत-

इस हुक्म के शाने नुज़ूल के सिल्सिले में लिखा है कि जाहिलियत के ज़माने में मुश्रिकीने अ़रब ने जिस तरह़ तमाम अ़िबादतें और मामलात को गढ़ लिया था, उसी तरह़ ह़ज में भी तरह़-तरह़ के काम करते थे। ह़ज के ज़माने में जब मिना में जमा होते तो उनके ख़ास-ख़ास बाज़ार लगते थे, ह़ज के मौसम में ख़ूब तिजारत हुआ करती थी।

सय्यदना इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) फ़रमाते हैं, "अक्काज़ और ज़ुलू हिजाज जाहिलियत के बाज़ार थे। लोगों ने दौराने हज तिजारत को गुनाह जाना इस पर उन्होंने आप (सल्ल०) से पूछा तो यह आयत नाज़िल हुई।" **(बुख़ारी)**

सय्यदना अ़ब्दुर्रहमान (रज़ि०) बिन अव्वाम फ़रमाते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमायाः-

"हज अ़रफ़ा ही है जो जमा (यौमे अ़रफ़ा और ईद के दर्मियान) की रात तुलूअ़ फ़ज्र से पहले पहुँच गया उसे हज मिल गया।" **(अ़हमद)**

अबू क़तादा अन्सारी (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि आप (सल्ल०) से यौमे अ़रफ़ा के रोज़े के मुतअ़ल्लिक़ सवाल किया गया। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "पिछले और अगले एक साल के गुनाहों का कफ़्फ़ारा है।" **(बुख़ारी)**

सय्यदह आ़ईशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत है कि क़ुरैश और उनके तरीक़े पर चलने वाले लोग (अ़रफ़ात के बजाय) मुज़्दल्फ़ा में उक़ूफ़ किया करते। उन लोगों को 'लम्स' कहते थे जबकि बाक़ी अ़रब अ़रफ़ात का 'उक़ूफ़' करते। जब इस्लाम की रौशनी फैली तो अल्लाह तआ़ला ने नबी (सल्ल०) को हुक्म दिया कि अ़रफ़ात जाएँ और वहाँ ठहरें और वहाँ से लौट कर मुज़्दल्फ़ा आएँ ثُمَّ أَفِيضُوا مِنْ حَيْثُ أَفَاضَ النَّاسُ से यही मुराद है। **(बुख़ारी)**

जब हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने पुरानी तमाम रस्मों को ख़त्म किया तो उन्हें यह ख़याल हुआ कि हज के ज़माने में तिजारत करना या मज़दूरी करके कुछ कमा लेना यह भी जाहिलियत की पैदावार है, इसलिए शायद इस्लाम में इसकी इजाज़त न हो। यहाँ तक कि एक साहब हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर (रज़ि०) के पास आये और यह सवाल किया कि हमारा पेशा पहले से यह है कि हम ऊँट किराये पर चलाते हैं, कुछ लोग हमारे ऊँट हज के लिए किराये पर लेते हैं और हम उन के साथ जाते हैं, हज भी करते हैं तो क्या इस तरह रोज़ी कमाने के साथ क्या हमारा हज होगा?

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर (रज़ि०) ने फ़रमाया, "एक शख़्स रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुआ था और आप (सल्ल०) से सवाल किया था जो तुम मुझ से कर रहे हो। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने उस शख़्स को उस वक़्त कोई जवाब न दिया यहाँ तक कि यह हुक्म नाज़िल हुआ لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ أَنْ تَبْتَغُوا فَضْلًا مِنْ رَبِّكُمْ उस वक़्त रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने उस शख़्स को बुलवाया और फ़रमाया तुम्हारा हज सही है।"

इस हुक्म में यह बात वाज़ेह (Clear) कर दी गई कि अगर कोई शख़्स दौराने हज कोई ख़रीद व फ़रोख़्त, मज़दूरी या तिजारत करके कुछ नफ़ा उठा ले या कुछ कमा ले तो इस में कोई गुनाह नहीं, यह इजाज़त के दर्जे में है और ऐसी कमाई में कोई गुनाह नहीं, इसलिए इन अल्फ़ाज़ से इशारा इस तरफ़ है कि ऐसा करने में कोई गुनाह नहीं, मगर इस से भी बचा जाए तो बेहतर है क्योंकि इख़्लास में कमी आती है।

उ़लमा ने लिखा है कि इस में भी बेहतर यह है कि ख़ास उन पाँच दिनों में जिस में 'मनासिक-ए-हज' अदा किये जाते हैं उन में कोई तिजारत वग़ैरह का काम न करे, बल्कि उन दिनों को

ख़ालिस अ़िबादत व ज़िक्रे इलाही में गुज़ारें। इसी वजह से कुछ उ़लमा ने ख़ास उन पाँच अय्यामे ह़ज में तिजारत व मज़दूरी को मना भी फ़रमाया है।

यहाँ فَضْلًا مِّنْ رَّبِّكُمْ फ़रमा कर यह भी बतला दिया, कि जो रिज़्क़ या फ़ायदा तुम्हें ह़ासिल होता है यह केवल अपनी ज़ाती कोशिश या मेह़नत का नतीजा नहीं बल्कि यह अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल है कि वह अपनी रह़मत से तुम्हें देता है।

अ़रफ़ात और मुज़्दल्फ़ा का क़ियाम-

जब तुम अ़रफ़ात में ठहर कर वहाँ से वापस आने लगो तो 'मशअ़रे ह़राम' के पास यानी मुज़्दल्फ़ा में रात को क़ियाम करके अल्लाह तआ़ला की याद करो और याद करने के तरीक़े में अपनी राय को दख़ल मत दो, बल्कि उस तरह़ याद करो जिस तरह़ तुम को अल्लाह तआ़ला ने बतला रखा है और ह़क़ीक़त में इस से पहले तुम नावाक़िफ़ ही थे।

यहाँ अह़कामे ह़ज के सिलसिले में बतलाया गया है कि अ़रफ़ात से वापसी में रात को मुज़्दल्फ़ा में क़ियाम और उस का ख़ास ज़िक्र वाजिब है। अ़रफ़ात मक्का मुअ़ज़्ज़माँ से 12 मील के फ़ासले पर कई मील के रक़्बे का एक बड़ा वसीअ़ (Wide) मैदान है यह मैदान हुदूदे ह़रम से बाहर है। हुज्जाज का इस मैदाने अ़रफ़ात में 9 ज़िलूह़िज्जा को पहुँचना और ज़वाले आफ़्ताब से मग़्रिब तक यहाँ क़ियाम करना ह़ज में फ़र्ज़ है, जिस के फ़ौत होने का कोई कफ़्फ़ारा और फ़िद्या नहीं हो सकता।

इस मैदाने अ़रफ़ात में एक पहाड़ी भी है जिस का नाम जबल-ए-रह़मत है। उस के नीचे एक तरफ़ बड़े-बड़े काले पत्थर हैं, जिन के क़रीब 'ह़ज्जुल विदाअ़' में रसूलुल्लाह (सल्ल०) खड़े हुए थे। पूरे साल यह मैदाने अ़रफ़ात बिल्कुल सुनसान पड़ा रहता है, मगर 9 ज़िलूह़िज्जा को ह़ाजियों की आमद से लाखों लोगों का इज्तिमाअ़ हो जाता है।

ह़ज के पाँच दिन-

8 ज़िलूह़िज्जा की दोपहर तक मक्का मुअ़ज़्ज़माँ से 'मिना' आ जाते हैं। 'मिना' हुदूदे ह़रम में मक्का मुअ़ज़्ज़माँ से लगभग तीन मील दूर है। पाँच नमाज़ें यानी ८ ज़िलूह़िज्जा की ज़ुह्र, अ़स्र, मग़्रिब, अ़िशा और 9 ज़िलूह़िज्जा को फ़ज्र की नमाज़ मिना में अदा की जाती हैं।

9 ज़िलूह़िज्ज को तुलूअ़ आफ़्ताब के बाद 'मिना' से 'अ़रफ़ात' को रवाना हो जाते हैं और ज़वाल से पहले अ़रफ़ात के मैदान में पहुँच जाते हैं और सूरज ग़ुरूब होने तक यहाँ क़ियाम करते हैं।

अ़रफ़ात के मैदान में क़ियाम का यह सारा वक़्त तिलावते क़ुर्आन, ज़िक्रे इलाही, ह़म्द व सना, तस्बीह़ व तम्हीद, दुरूद शरीफ़, तौबः, इस्तिग़फ़ार और आ़जिज़ी के साथ दुआ़ओं के माँगने में गुज़ारा जाता है और ग़ुरूबे आफ़्ताब तक यह मैदान अल्लाह की रह़मतों का ख़ास मज़हर बना रहता है। सूरज के ग़ुरूब होते ही इस मैदान को छोड़ देने का हुक्म है बग़ैर नमाज़ मग़्रिब पढ़े हुए, नमाज़ मग़्रिब 'अ़रफ़ात' में पढ़ने का हुक्म नहीं बल्कि मग़्रिब और अ़िशा की नमाज़ें 'मुज़्दल्फ़ा' पहुँचकर अ़िशा के वक़्त इकट्ठा अदा की जाती हैं। इसी 'मुज़्दल्फ़ा' को जो हुदूदे ह़रम में है और मक्का मुअ़ज़्ज़माँ से ६ मील के फ़ासले पर

है مَشْعَرَ الْحَرَامِ भी कहते हैं, जिस का ज़िक्र यहाँ आयत में आया है। 'मशअ़र' के माने 'शआ़र' और 'अ़लामत' के हैं और ह़राम के माने मोह़तरम व मुक़द्दस के हैं। इस मुज़्दल्फ़ा के मैदान में हुज्जाज को रात गुज़ारना और मग़्रिब व अ़िशा की दोनों नमाज़ों को एक साथ मुज़्दल्फ़ा में पढ़ना वाजिब है।

हुज्जाज के लिए यह 'मुज़्दल्फ़ा' की रात शबे क़द्र की रात से कम अफ़ज़ल नहीं। हुज्जाज के क़ाफ़िले, इसी मुज़्दल्फ़ा से गुज़रते हैं और जिन को अल्लाह तआ़ला ह़िम्मत और तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाते हैं वह यह सारी रात अ़िबादत, तौबः, इस्तिग़फ़ार, ज़िक्रे इलाही और दुआ़ओं में गुज़ारते हैं फिर सुबह़ सादिक़ के बाद नमाज़ फ़ज्र मुज़्दल्फ़ा में अदा कर के सूरज के तुलूअ़ होने के बाद हुज्जाज मिना की वापसी के लिए रवाना हो जाते हैं। मुज़्दल्फ़ा में अल्लाह तआ़ला को याद करना जैसा कि आयत में हुक्म है हर तरह़ का ज़िक्रुल्लाह शामिल है, मगर ख़ुसूसियत से दोनों नमाज़ों यानी मग़्रिब और अ़िशा को एक साथ अदा करना उस जगह की मख़्सूस अ़िबादत है।

मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि आयत में وَاذْكُرُوهُ كَمَا هَدٰىكُمْ है कि अल्लाह तआ़ला ने अपनी याद और ज़िक्र के लिए जो तरीक़ा बतलाया है उसी तरह़ उस को याद करो यानी अपनी राय और क़यास को दख़ल न दो। राय और क़यास का तक़ाज़ा तो यह था कि मग़्रिब की नमाज़ मग़्रिब के वक़्त में पढ़ी जाती और अ़िशा की नमाज़ अ़िशा के वक़्त में, लेकिन उस रोज़ और उस मक़ाम पर अल्लाह तआ़ला का यही हुक्म है और यही पसन्द है कि मग़्रिब की नमाज़ देर कर के अ़िशा के साथ पढ़ी जाए।

अ़िबादत अल्लाह का हुक्म है-

मालूम हुआ कि हर अ़िबादत के ख़ास आदाब हैं जो रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने बतलाए और सिखलाए हैं। इन तरीक़ों को छोड़कर अपनी तरफ़ से अ़िबादत को गढ़ लेना और नई सूरतें क़ायम कर लेना सख़्त गुनाह है। दुनिया और दुनिया वालों को गुमराह करने के लिए शैतान का सबसे बड़ा ह़मला यही रहा है कि उन्हें ह़क़ीक़ी राहे अ़िबादत से हटा कर मनगढ़त तरीक़ों में उलझा देता है। जाहिलियत के ज़माने में लोग बेशुमार रस्मों और ग़लत अ़क़ीदों में उलझे हुए थे और वह यह समझते थे कि उन के लिए अपने बनाये हुए मख़्सूस तरीक़े अल्लाह तआ़ला के कुर्ब का ज़रिया हो सकते हैं, लेकिन क़ुर्आन की इस आयत ने पूरी तरह़ उन ग़लतफ़हमियों (Misconceptions) को झुठला दिया और यह फ़रमा दिया कि इस से पहले तुम नावाक़िफ़ थे। क़ुर्आन करीम ने यह भी वाज़ेह कर दिया कि जब तक इन्सान अल्लाह की दी हुई रौशनी और हिदायत से काम न ले और उस की भेजी हुई वह्य से रह़नुमाई न ह़ासिल करे और उस की नाज़िल की हुई तअ़लीम पर अ़मल न करे और उस के नबी (सल्ल०) के बतलाए हुए तरीक़ों को न अपनाये वह भटकता ही रहेगा।

199 ثُمَّ اَفِيْضُوْا مِنْ حَيْثُ اَفَاضَ النَّاسُ وَاسْتَغْفِرُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝

لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ इमाम बुख़ारी (रह़०) ने ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि 'अक्काज़' और 'मुज़ैना' ज़माने जाहिलियत के बाज़ार थे, लोग ह़ज के ज़माने में उन बाज़ारों में आकर

तिजारत किया करते थे, सहाबा-ए-किराम (रज़ि०) ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से इस के बारे में दर्याफ़्त किया, जिस पर यह आयते करीमा नाज़िल हुई कि हज के दिनों में तिजारत करने में कोई गुनाह नहीं।

ह़ज के बाद-

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने आ़माले ह़ज से फ़राग़त के बाद ज़िक्र का हुक्म दिया है, कि अल्लाह की तौफ़ीक़ से यह अ़ज़ीम अि़बादत पूरी हो गई तो उस का शुक्र बजा लाना चाहिए। अहले जाहिलियत का दस्तूर था कि 'मुज़्दल्फ़ा' से 'मिना' वापसी के बाद 'जमरह' के पास मेला लगाते और अपने बाप-दादों की शान में क़सीदे पढ़ते, ह़ालाँकि होना तो यह चाहिए था कि अल्लाह को याद करते, इसीलिए अल्लाह ने मुसलमानों की इस्लाह़ की और उन्हें तअ़लीम दी कि वह अल्लाह को याद करें, इसलिए कि ज़िक्र व शुक्र का वही अकेला ह़क़्दार है। कंकरी मारने के बाद जब हुज्जाज क़ुर्बानी करके बाल मुंडवाएँ, तवाफ़े ज़ियारत और सफ़ा व मरवह की सअ़ी से फ़ारिग़ होकर मिना में क़याम करें और अल्लाह के ज़िक्र में मश्ग़ूल रहें।

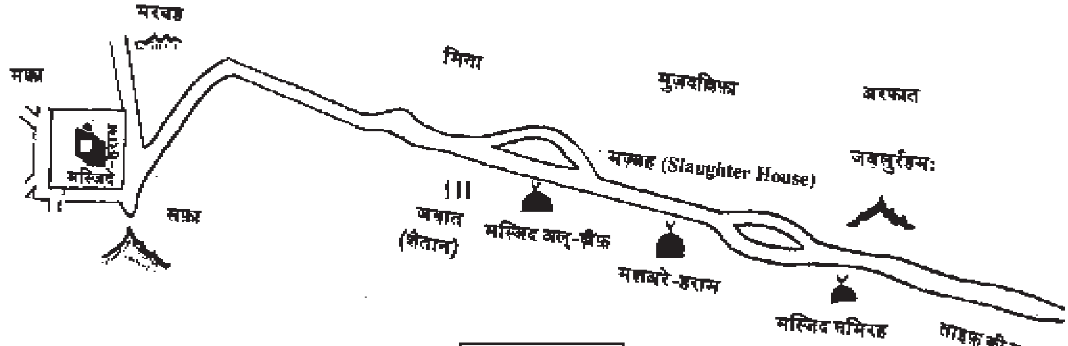

हज का स्थल

200 فَإِذَا قَضَيْتُم مَّنَاسِكَكُمْ فَاذْكُرُوا اللَّهَ كَذِكْرِكُمْ آبَاءَكُمْ أَوْ أَشَدَّ ذِكْرًا ۗ فَمِنَ النَّاسِ مَن يَقُولُ رَبَّنَا آتِنَا فِي الدُّنْيَا وَمَا لَهُ فِي الْآخِرَةِ مِنْ خَلَاقٍ ۝

इस्तिग़फ़ार और कसरते ज़िक्र-

इस्तिग़फ़ार और कसरते ज़िक्र की नसीह़त के बाद अल्लाह तआ़ला ने दुआ़ की तरफ़ तवज्जोह दिलाई, इसलिए कि कसरते ज़िक्र के बाद, दुआ़ की कुबूलियत की ज़्यादा उम्मीद होती है और उन लोगों की मज़म्मत की जिनकी ज़िन्दगी का मक़्सद पहले दुनिया ह़ासिल करना होता है और उन की तअ़रीफ़ की जिनका मक़्सद आख़िरत की कामियाबी और जहन्नम की आग से नजात ह़ासिल करना होता है।

इब्ने अ़ब्बास (रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा) से रिवायत है कि कुछ आ़राबी (देहाती) लोग अ़रफ़ात में अल्लाह से दुनियावी फ़ायदे माँगते और आख़िरत का कोई ज़िक्र नहीं करते, कुछ ने कहा कि मुश्रिकीने अ़रब ऐसा करते थे, किसी ने कहा कि कुछ मुसलमान ही ऐसा करते थे कि अपनी दुनिया संवारने की दुआ़ करते और आख़िरत को भुला देते, उन्हीं लोगों के ह़ालात के पेशेनज़र यह आयत नाज़िल हुई।

यानी आख़िरत की कामियाबी का कोई हिस्सा उन को नहीं मिलेगा, सिवाय यह कि वह तौबः करें और अल्लाह उन्हें माफ़ कर दे।

201 وَمِنْهُمْ مَنْ يَقُوْلُ رَبَّنَآ اٰتِنَا فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِي الْاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ ۝

فَاِذَا قَضَيْتُمْ مَّنَاسِكَكُمْ इब्ने अबी हातिम ने इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि ज़माने जाहिलियत वाले हज के ज़माने में खड़े होते थे, चुनाँचे उन में से हर एक शख़्स कहता था कि मेरा बाप खाना खिलाता था, लोगों को सवार कराता था और दूसरों की तरफ़ से दियतों को अदा करता था, ग़र्ज़ कि अपने आबा व अज्दाद के तज़्किरे के अ़लावा और कोई उन के पास ज़िक्र नहीं था, तो इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई कि जब तुम अपने आ़माले हज पूरे करो तो अल्लाह तआ़ला का ख़ूब ज़िक्र किया करो।

और इब्ने हातिम (रज़ि०) ने 'इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०)' से नक़्ल किया है कि अ़रबों की एक जमाअ़त 'उक़ूफ़' की जगह आती और कहती ऐ अल्लाह! इस साल को बारिश और सब्ज़ व शादाबी और ख़ूबसूरतियों वाला कर दे, आख़िरत के किसी भी चीज़ का ज़िक्र नहीं करते थे। अल्लाह तआ़ला ने उन लोगों के बारे में यह आयत नाज़िल फ़रमाई कि कुछ लोग कहते हैं कि हमारे परवरदिग़ार हमें दुनिया ही में दे दे, ऐसे लोगों के लिए आख़िरत में कोई हिस्सा नहीं।

इस जमाअ़त के बाद दूसरी जमाअ़त मोमिनों की आती और वह यह दुआ़ माँगती-

رَبَّنَآ اٰتِنَا فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِي الْاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ **(लुबाबुन्नुकूल फ़ी अस्बाबिन्नुज़ूल)**

दुनिया व आख़िरत के लिए दुआ़-

इस दुआ़ में दुनिया व आख़िरत की हर भलाई जमा कर दी गई है और हर शर से अल्लाह की पनाह माँगी गई है। "दुनिया में भलाई" हर दुनियावी ख़ैर को शामिल है और "आख़िरत की भलाई" में सब से बेहतर अल्लाह की रज़ा और जन्नत का दाख़िला है।

अहादीस में इस दुआ़ की बड़ी फ़ज़ीलत आई है। इमाम बुख़ारी (रह०) ने हज़रत अनस बिन मालिक (रज़ि०) से रिवायत की है कि "रसूलुल्लाह (सल्ल०) कसरत से यह दुआ़ करते थे।" अबूदाऊद की रिवायत है, "रसूलुल्लाह (सल्ल०) 'रुक्ने यमानी' और 'हज्रे अस्वद' के दर्मियान यही दुआ़ करते थे।"

इमाम अहमद और इमाम मुस्लिम ने हज़रत अनस बिन मालिक (रज़ि०) से रिवायत किया है, "आप (सल्ल०) ने एक मरीज़ की अ़यादत की जो सूख कर काँटा हो गया था, आप ने उसे यही दुआ़ करने की नसीहत की, उस ने ऐसा ही किया और उस की बीमारी दूर हो गई।"

202 اُولٰٓئِكَ لَهُمْ نَصِيْبٌ مِّمَّا كَسَبُوْا ۭ وَاللّٰهُ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ۝

अल्लाह तआ़ला का वादा है कि जो लोग दुनिया व आख़िरत के कामियाबी की दुआ़ करते हैं, अल्लाह उन की दुआ़ क़ुबूल करता है और अगर पूरी दुआ़ क़ुबूल नहीं होती तो उस का एक हिस्सा ज़रूर उन्हें मिलता है। आयत में "कसबू" से मुराद दुआ़ करना है।

203 وَاذْكُرُوا اللّٰهَ فِيْٓ اَيَّامٍ مَّعْدُوْدٰتٍ ۭ فَمَنْ تَعَجَّلَ فِيْ يَوْمَيْنِ فَلَآ اِثْمَ عَلَيْهِ ۚ وَمَنْ تَاَخَّرَ فَلَآ اِثْمَ عَلَيْهِ ۙ لِمَنِ اتَّقٰى ۭ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّكُمْ اِلَيْهِ تُحْشَرُوْنَ

अय्यामे तशरीक में तक्बीर का हुक्म-

इस आयत में पहले तो यह फ़रमाया कि चन्द दिनों में अल्लाह का ज़िक्र करो। इन दिनों से 'अय्यामे तशरीक' मुराद हैं जिन में क़ुर्बानियाँ की जाती हैं और हुज्जाज का मिना में क़याम होता है और 'जमरह' को कंकरियाँ मारी जाती हैं। इस से पहले मुज़्दल्फ़ा में ज़िक्र करने का हुक्म फ़रमाया और अ़रफ़ात में तो ज़िक्र और दुआ़ ही है। हज़रत आ़इशा रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हा से रिवायत है कि नबी करीम (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, "जमरह को कंकरियाँ मारना और सफ़ा मरवह़ की सई़ करना अल्लाह का ज़िक्र क़ायम करने के लिए शुरु किया गया है।" **(तिर्मिज़ी)**

और तफ़्सीर 'मुआ़लिमुत्तन्ज़ील' में लिखा है, (यानी इन दोनों के ज़िक्र में से यह भी है कि इन में तक्बीर कही जाए) "फिर लिखा है कि ह़ज़रत उ़मर और अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर रज़ियल्लाहु अ़न्हुम नमाज़ों के बाद मिना में तक्बीर कहते थे, मजलिस में भी और बिस्तर पर होते हुए भी और रास्ते में भी।"

फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद तक्बीर वाजिब है-

तक्बीर तशरीक़ भी इन दिनों में कही जाएगी। मिना में मौजूद हों या अपने वतन में मुक़ीम, फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद इस का पढ़ना वाजिब है। मर्द ज़ोर से तक्बीर तशरीक़ पढ़ें और औरतें आहिस्ता कहें।

यह तक्बीर 'नवीं तारीख़' की फ़ज्र से लेकर 'तेरहवीं तारीख़' की अ़स्र तक पढ़ी जाएगी। ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) से इसी तरह़ मन्क़ूल है। अय्यामे तशरीक़ में ख़ुसूसियत के साथ अल्लाह तआ़ला के ज़िक्र का एहतिमाम करना चाहिए। इन दिनों में रोज़ः रखना मना है। फ़रमाया रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने **لا تصوموا فی هذه الأيام فانها ايام أكل و شرب و ذكر الله** यानी इन दिनों में रोज़ः न रखो क्योंकि यह दिन खाने पीने और अल्लाह का ज़िक्र करने के हैं। **(सहीह़ मुस्लिम)**

रमि-जिमार का हुक्म-

ज़िक्र का हुक्म फ़रमाने के बाद 'रमि-जिमार' के कुछ मसायल बयान फ़रमाए गये जिस की तशरीह़ (Explanation) यह है कि दस्वीं ज़िल्हिज्ज को सिर्फ़ बड़े 'जमरह' की रमि की जाती है। इस का वक़्त सूरज निकलने के बाद से लेकर आने वाली सुबह़ सादिक़ तक है, लेकिन रात में कंकरियाँ मारना कुव्वत और सेह़त वालों के लिए मकरुह है।

कंकरियों के मारने का वक़्त-

"ग्यारह और बारह तारीख़ को कंकरियाँ मारने का वक़्त ज़वाले आफ़्ताब के बाद से शुरु होता है और वह आने वाली सुबह़ सादिक़ तक रहता है।" कुव्वत व सेह़त वालों के लिए रमि करना इन दोनों की रातों में भी मकरुह है।

ग्यारहवीं और बारहवीं तारीख़ को तीनों जमरात की रमि की जाती है। दस, ग्यारह और बारह ज़िल्हिज्जा की रमि करना वाजिब है। (मिना में छोटे-छोटे तीन खम्बे या निशान बने हुए हैं, उन को जमरात कहते हैं।)

जमरह-

पहला जमरह मस्जिदे ख़ैफ़ के क़रीब है उस को 'जमरह ऊला' और 'जमरह सुग़रा' कहते हैं। उस के बाद जो 'जमरह' है उसे 'जमरह वुस्ता' कहते हैं। फिर उस के बाद जो जमरह है उस को 'जमरह कुबरा' और 'जमरह उख़रा' और 'जमरतुल् उक़्बा' भी कहते हैं। उस के क़रीब मिना की हद ख़त्म हो जाती है। इन तीनों जमरात के नीचे जड़ में दायरे बने हुए हैं, उन दायरों में कंकरियाँ गिरना ज़रूरी हैं। हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को इन तीनों जगह शैतान ने वस्वसे डाल कर बहलाने की कोशिश की थी। आप ने उस को कंकरियाँ मारी थीं, कंकरियाँ मारना उसी की यादगार है।

हर कंकरी के साथ **"बिस्मिल्लाहि अल्लाहु अकबर रग़मन् लिश्शैतानि वरिज़न लिर्रह़मान"** पढ़े (मैं अल्लाह का नाम लेकर रमि करता हूँ, अल्लाह सब से बड़ा है, यह रमि शैतान को ज़लील करने के लिए और रह़मान को राज़ी करने के लिए है।)

13 ज़िल्हिज्जा की रमि छोड़ देना जायज़ है-

इन दो दिनों (ग्यारह बारह तारीख़) की रमि करने के बाद अगर कोई शख़्स चाहे कि मिना से चला जाए और तेरहवीं तारीख़ की रमि न करे तो इसकी इजाज़त है। इसी को फ़रमाया-
فَمَنْ تَعَجَّلَ فِيْ يَوْمَيْنِ فَلَآ اِثْمَ عَلَيْهِ लेकिन अफ़्ज़ल यह है कि मिना में ठहरा रहे और तेरहवीं तारीख़ की रमि करके मिना से रवाना हो। रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने 'ह़ज्जतुल् विदाअ़' के मौक़े पर तेरहवीं तारीख़ की रमि भी की थी, जैसा कि ग्यारह बारह तारीख़ को ज़वाल के बाद और रमि की तेरहवीं तारीख़ को रमि का वक़्त सिर्फ़ ग़ुरूब आफ़ताब तक है।

फ़ुक़हा ने लिखा है कि बारहवीं तारीख़ को अगर मिना में होते हुए सूरज ग़ुरूब हो जाए तो तेरहवीं की रमि छोड़ कर जाना मकरुह है और अगर मिना में होते हुए तेरहवीं की सुबह़ हो जाए तो तेरहवीं की रमि करना भी वाजिब हो जाता है। अगर कोई शख़्स ग्यारह, बारह की रमि करके चले जाने की इजाज़त होते हुए मिना में ठहरा रहे और तेरहवीं की रमि करके जाए उस के बारे में फ़रमाया, وَمَنْ تَاَخَّرَ فَلَآ اِثْمَ عَلَيْهِ لِمَنِ اتَّقٰى (और जो शख़्स देर करे तो उस पर कोई गुनाह नहीं है।)

साह़िबे रूहुल् मआ़नी लिखते हैं कि लफ़्ज़ فَلَآ اِثْمَ عَلَيْهِ जो दो जगह आया है इस से दोनों बातों में अख़्तियार देना मक़्सूद है कि दस्वीं तारीख़ के बाद दो दिन की रमि कर के चला जाए तो इस को अख़्तियार है और तीसरे दिन की रमि के लिए ठहर जाए और मिना से रवानगी में देर करे तो इस को अख़्तियार है।

इस पर यह जो सवाल होता है कि जब 'तेरहवीं' तारीख़ की रमि करके जाना अफ़्ज़ल है तो उस

के बारे में فَلَآ اِثۡمَ عَلَيۡهِ के बजाय ऐसा लफ़्ज़ होना चाहिए था जो फ़ज़ीलत पर दलालत करता। उस के जवाब में साहिबे रूहुल् मआनी लिखते हैं कि इस से फ़ज़ीलत की नफ़ी नहीं होती (क्योंकि जो चीज़ अफ़ज़ल होती है فَلَآ اِثۡمَ عَلَيۡهِ इस पर भी सादिक़ आता है) लेकिन यह बात फिर भी क़ाबिले तवज्जोह है कि 'नफ़ीउल इस्म' को दोनों जगह क्यों अख़्तियार किया गया।

इस बारे में साहिबे रूहुल् मआनी लिखते हैं कि "अहले जाहिलियत की तर्दीद करने के लिए यह तरीक़ा अपनाया है क्योंकि वह आपस में इख़्तिलाफ़ करते थे।" कुछ लोग कहते थे जल्दी करना गुनाह है और कुछ कहते थे कि देर करना गुनाह है।

साहिबे मुआलिमुत्तन्ज़ील ने (भाग 1 पेज नं० 79) आयत की तफ़्सीर में कुछ हज़रात से यूँ नक़्ल किया है कि हज करने वाले पर कोई गुनाह बाक़ी नहीं रहेगा, चाहे बारह तारीख़ को रमि करके चला जाए और चाहे तेरहवीं की रमि के लिए ठहर जाए और इस की ताईद के लिए हदीस من حج لله ولم يرفث ولم يفسق पेश की है और फिर यह फ़रमाया कि यह हज़रत अली (रज़ि०) और हज़रत इब्ने मसऊद (रज़ि०) का क़ौल है।

इस माने को लेने से لِمَنِ اتَّقٰى का तअ़ल्लुक़ वाज़ेह हो जाता है जिस का मतलब यह होगा कि जल्दी करे या देर करे कोई गुनाह बाक़ी न रहेगा, बशर्ते कि उस हज में तक़्वा अख़्तियार किया हो और गुनाहों से बचा हो।

साहिबे मुआलिमुत्तन्ज़ील ने हज़रत इब्ने मसऊद (रज़ि०) का क़ौल انما جعلت مغفرة الذنوب لمن اتقى الله تعالى فى حجه इस माने की ताईद के लिए नक़्ल किया है और हज़रत अबू आ़लिया से لِمَنِ اتَّقٰى की तफ़्सीर करते हुए यह भी लिखा है ذهب ائمة لمن اتقى فيه بقى من عمره (यानी बाज़ आइम्मा ने لِمَنِ اتَّقٰى का माना यह किया है कि हज करने के बाद बाक़ी उ़मर में गुनाहों से बचता रहे।

204 وَمِنَ النَّاسِ مَنۡ يُّعۡجِبُكَ قَوۡلُهٗ فِى الۡحَيٰوةِ الدُّنۡيَا وَيُشۡهِدُ اللّٰهَ عَلٰى مَا فِىۡ قَلۡبِهٖۙ وَهُوَ اَلَدُّ الۡخِصَامِ‏

'इब्ने जरीर' ने 'सुद्दी' के हवाले से नक़्ल किया है कि यह आयत 'अख़्नस बिन शरीक़' के बारे में नाज़िल हुई थी। उस शख़्स ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास आकर अपने मुसलमान होने का एलान किया, हालांकि वह दिल से काफ़िर था।

इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा की एक रिवायत के मुताबिक़ यह आयत मुनाफ़िक़ीन की एक जमाअ़त के बारे में नाज़िल हुई थी, जिन्होंने ख़ुबैब (रज़ि०) और उनके साथियों का मज़ाक़ उड़ाया था। बहरहाल मशहूर क़ायदे के मुताबिक़ क़ुर्आन व सुन्नत की बातें तमाम हालात के लिए होती है किसी ख़ास सबब के लिए नहीं। यह आयत हर उस शख़्स पर सादिक़ आती है जो इस्लाम के अ़क़ीदे को सही तरीक़े से क़ुबूल नहीं करता, लेकिन दुनियवी हालात के लिए एलान करता फिरता है कि वह भी मुसलमान है।

आयत का मफ़हूम यह है कि कुछ ऐसे मुनाफ़िक़ीन होते हैं जो मुसलमानों को ख़ुश करने के लिए चिकनी-चुपड़ी बातें करते हैं और अल्लाह को अपने बारे में गवाह बनाते हैं, हालांकि वह झूठ को सच

साबित करने के लिए पूरी कोशिश करते हैं। जैसा कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मुनाफ़िक़ की तीन निशानियाँ हैं, जब बात करता है तो झूठ बोलता है, जब वादा करता है तो धोका देता है और जब झगड़ता है तो गाली-गलौज पर उतर आता है।" **(मुत्तफ़क़ अ़लैहि)**

205 وَإِذَا تَوَلَّىٰ سَعَىٰ فِي الْأَرْضِ لِيُفْسِدَ فِيهَا وَيُهْلِكَ الْحَرْثَ وَالنَّسْلَ ۗ وَاللَّهُ لَا يُحِبُّ الْفَسَادَ ۝

यानी जब मुसलमानों के पास से ग़ैर मुस्लिमों के पास वापस जाता है तब उस की साजिश ज़ाहिर होती है और इमाम के बारे में लोगों के दिलों में सन्देह पैदा करता है, कुफ़्र की मज़बूती के लिए साज़िशें करता है और मुसलमानों की हर क़िस्म के बर्बादी की फ़िक्र में रहता है। खेती और जानवरों के हलाक करने का यही मतलब है।

सय्यदा आ़इशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह के यहाँ सब से ज़्यादा नापसन्दीदा लोग झगड़ा करने वाले हैं।" **(बुख़ारी)**

206 وَإِذَا قِيلَ لَهُ اتَّقِ اللَّهَ أَخَذَتْهُ الْعِزَّةُ بِالْإِثْمِ ۚ فَحَسْبُهُ جَهَنَّمُ ۚ وَلَبِئْسَ الْمِهَادُ ۝

यानी जब उस फ़ाजिर से कहा जाता है कि अल्लाह से डरो और अपने कहने और करने में अलगाव से बाज़ आ जाओ, तो मारे घमंड व गुरूर के फटा पड़ता है और नसीहत क़ुबूल नहीं करता। ऐसे लोगों का अन्जाम अल्लाह ने बता दिया है कि उन के कुफ़्र व निफ़ाक़ और घमंड व गुरूर के बदले जहन्नम उन के लिए काफ़ी है, जो बहुत बुरा ठिकाना है। हाकिम ने लिखा है कि सब से बड़ा गुनाह यह है कि किसी को कहा जाए कि अल्लाह से डरो, तो वह जवाब में कहे कि "तुम अपनी फ़िक्र करो।"

207 وَمِنَ النَّاسِ مَن يَشْرِي نَفْسَهُ ابْتِغَاءَ مَرْضَاتِ اللَّهِ ۗ وَاللَّهُ رَءُوفٌ بِالْعِبَادِ ۝

मोमिनों की सिफ़ात-

मुनाफ़िक़ीन की सिफ़ात बयान करने के बाद मोमिनीन सालिहीन की सिफ़ात बयान की जा रही हैं, ताकि बन्दा मुनाफ़िक़ीन की सिफ़ात से बचे और सालिहीन की सिफ़ात अपने अन्दर पैदा करे।

इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा से रिवायत है, "यह आयत हज़रत सुहैब रूमी के बारे में नाज़िल हुई थी। जब मक्का से हिजरत के वक़्त कुफ़्फ़ारे क़ुरैश ने उन्हें घेर लिया था कि अपना माल लेकर नहीं जा सकते, अगर माल छोड़ कर जाना हो तो जा सकते हो, तो उन्होंने अपनी सारी ज़ायदाद अहले मक्का के हवाले कर दी और सिर्फ़ ईमान लेकर मदीना के लिए रवाना हो गये। उन के मदीना पहुँचने से पहले यह आयत नाज़िल हो गयी। जब रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने उन्हें देखा तो कहा कि **"रबीआ़ रबीआ़ रबीआ़ रबीआ़।"** **(मुस्तदरक हाकिम, तबक़ात इब्ने सअ़द)**

यहाँ भी वही बात कही जाएगी कि क़ुर्आन व सुन्नत की बातें आ़म हालात के लिए होती है ख़ास सबब के लिए नहीं। इसलिए यह आयत हर मुजाहिद फ़ी सबीलिल्लाह के लिए है, जो अल्लाह की रज़ा हासिल करने के लिए अपनी जान व माल की क़ुर्बानी पेश कर दे।

आयत नं० 208 से 215 तक

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا ٱدْخُلُوا فِى ٱلسِّلْمِ كَآفَّةً وَلَا تَتَّبِعُوا خُطُوَٰتِ ٱلشَّيْطَٰنِ إِنَّهُۥ لَكُمْ عَدُوٌّ مُّبِينٌ ﴿٢٠٨﴾ فَإِن زَلَلْتُم مِّنۢ بَعْدِ مَا جَآءَتْكُمُ
ٱلْبَيِّنَٰتُ فَٱعْلَمُوٓا أَنَّ ٱللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٢٠٩﴾ هَلْ يَنظُرُونَ إِلَّآ أَن يَأْتِيَهُمُ ٱللَّهُ فِى ظُلَلٍ مِّنَ ٱلْغَمَامِ وَٱلْمَلَٰٓئِكَةُ وَقُضِىَ ٱلْأَمْرُ
وَإِلَى ٱللَّهِ تُرْجَعُ ٱلْأُمُورُ ﴿٢١٠﴾ سَلْ بَنِىٓ إِسْرَٰٓءِيلَ كَمْ ءَاتَيْنَٰهُم مِّنْ ءَايَةٍۭ بَيِّنَةٍ وَمَن يُبَدِّلْ نِعْمَةَ ٱللَّهِ مِنۢ بَعْدِ مَا جَآءَتْهُ فَإِنَّ
ٱللَّهَ شَدِيدُ ٱلْعِقَابِ ﴿٢١١﴾ زُيِّنَ لِلَّذِينَ كَفَرُوا ٱلْحَيَوٰةُ ٱلدُّنْيَا وَيَسْخَرُونَ مِنَ ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا وَٱلَّذِينَ ٱتَّقَوْا فَوْقَهُمْ يَوْمَ ٱلْقِيَٰمَةِ
وَٱللَّهُ يَرْزُقُ مَن يَشَآءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٢١٢﴾ كَانَ ٱلنَّاسُ أُمَّةً وَٰحِدَةً فَبَعَثَ ٱللَّهُ ٱلنَّبِيِّۦنَ مُبَشِّرِينَ وَمُنذِرِينَ وَأَنزَلَ مَعَهُمُ
ٱلْكِتَٰبَ بِٱلْحَقِّ لِيَحْكُمَ بَيْنَ ٱلنَّاسِ فِيمَا ٱخْتَلَفُوا فِيهِ وَمَا ٱخْتَلَفَ فِيهِ إِلَّا ٱلَّذِينَ أُوتُوهُ مِنۢ بَعْدِ مَا جَآءَتْهُمُ ٱلْبَيِّنَٰتُ
بَغْيًۢا بَيْنَهُمْ فَهَدَى ٱللَّهُ ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا لِمَا ٱخْتَلَفُوا فِيهِ مِنَ ٱلْحَقِّ بِإِذْنِهِۦ وَٱللَّهُ يَهْدِى مَن يَشَآءُ إِلَىٰ صِرَٰطٍ مُّسْتَقِيمٍ ﴿٢١٣﴾ أَمْ
حَسِبْتُمْ أَن تَدْخُلُوا ٱلْجَنَّةَ وَلَمَّا يَأْتِكُم مَّثَلُ ٱلَّذِينَ خَلَوْا مِن قَبْلِكُم مَّسَّتْهُمُ ٱلْبَأْسَآءُ وَٱلضَّرَّآءُ وَزُلْزِلُوا حَتَّىٰ يَقُولَ
ٱلرَّسُولُ وَٱلَّذِينَ ءَامَنُوا مَعَهُۥ مَتَىٰ نَصْرُ ٱللَّهِ أَلَآ إِنَّ نَصْرَ ٱللَّهِ قَرِيبٌ ﴿٢١٤﴾ يَسْـَٔلُونَكَ مَاذَا يُنفِقُونَ قُلْ مَآ أَنفَقْتُم مِّنْ خَيْرٍ فَلِلْوَٰلِدَيْنِ
وَٱلْأَقْرَبِينَ وَٱلْيَتَٰمَىٰ وَٱلْمَسَٰكِينِ وَٱبْنِ ٱلسَّبِيلِ وَمَا تَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ فَإِنَّ ٱللَّهَ بِهِۦ عَلِيمٌ ﴿٢١٥﴾

अनुवाद-

(208) ऐ ईमान वालों! इस्लाम में पूरे-पूरे दाख़िल हो जाओ, और शैतान के क़दमों पर न चलो; वह
तुम्हारा खुला दुश्मन है; (209) फिर अगर तुम इन स्पष्ट दलीलों के बाद भी, जो तुम्हारे पास आ चुकी हैं,
फिसल जाओ, तो जान लो कि अल्लाह ज़बरदस्त (प्रभुत्वशाली) हिक़मत वाला है। (210) क्या यह लोग
इन्तिज़ार कर रहे हैं कि इनके पास अल्लाह बादलों की छायों में सामने आ जाएं, और फ़रिश्ते भी और
(उसका) क़िस्सा ही ख़त्म हो जाए; और सारे मामले तो अल्लाह ही की ओर लौटते हैं। (211) बनी इस्राईल
से पूछो! ''हमने'' उन्हें कितनी खुली हुई निशानियाँ दीं और जो व्यक्ति अल्लाह की नेअ़मत को इसके बाद
कि वह उसे पहुँच चुकी हों, बदल डाले, तो अल्लाह भी सज़ा देने में बड़ा सख़्त है।'' (212) जो लोग
काफ़िर (इन्कार करने वाले) हैं दुनिया की ज़िन्दगी उनकी नज़र में भली कर दी गई है; और वे ईमान वालों
की हँसी उड़ाते हैं; हालाँकि जो लोग परहेज़गार (संयमी) हैं उनके दर्जे क़ियामत के दिन उनसे बढ़ कर होंगे,
और अल्लाह जिसे चाहता है, बेहिसाब रोज़ी देता है। (213) सारे इन्सान एक ही उम्मत (अर्थात एक ही
दीन पर) थे (उन्होंने मत-मतान्तर पैदा किये), तो अल्लाह ने नबियों (सन्देशवाहकों) को भेजा, जो ख़ुशख़बरी
देते थे, और सचेत करते थे; और उनके साथ सच्ची किताबें भेजीं, ताकि जिन बातों में लोग मतभेद करते
थे उन बातों का (वह किताब) फ़ैसला कर दे; और उन्हीं लोगों ने, जिनको वह (किताब) मिली थी, आपस
की ज़िद से किताब में मतभेद किया, बावजूद इसके कि उनको खुले हुए हुक्म पहुँच चुके थे; फिर वह सच्चा
रास्ता, जिसमें लोग मतभेद कर रहे थे, अल्लाह ने अपनी मेहरबानी से ईमान वालों को दिखला दिया, और
अल्लाह जिसको चाहता है सच्ची राह पर चला देता है। (214) क्या तुम यह समझते हो कि जन्नत में (यूँ
ही) दाख़िल हो जाओगे, हालाँकि (अभी) तुम पर उन लोगों जैसी हालत नहीं पेश आई जैसी तुमसे पहले के
लोगों पर पेश आई थी, कि उन पर तंगियाँ और तकलीफ़ें आईं, और उन्हें हिला (झिंझोड़) दिया गया, यहाँ

तक कि रसूल (सन्देष्टा) बोल उठे, और ईमान वाले भी जो उनके साथ थे, (आख़िर) ''अल्लाह की मदद कब आएगी?'' (ढारस बाँधते हुए कहा गया) ''जान लो कि, अल्लाह की मदद बहुत क़रीब है।'' (215) (ऐ रसूल) लोग आपसे पूछते हैं ''क्या ख़र्च करें?'' कह दीजिए, (जो चाहे ख़र्च करें मगर) ''जो माल खर्च करना चाहो तो वह (दर्जा-ब-दर्जा हक़ वालों जैसे) माँ बाप पर, और क़रीबी रिश्तेदारों पर, और यतीमों पर, और मुहताजों पर, और मुसाफ़िरों पर, और जो भलाई तुम करोगे अल्लाह उसको जानता है''।

आयत नं० 208 से 215 तक की व्याख्या

208-209 يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ ٱدْخُلُوا۟ فِى ٱلسِّلْمِ كَآفَّةً وَلَا تَتَّبِعُوا۟ خُطُوَٰتِ ٱلشَّيْطَٰنِ ۚ إِنَّهُۥ لَكُمْ عَدُوٌّ مُّبِينٌ ۝ فَإِن زَلَلْتُم مِّنۢ بَعْدِ مَا جَآءَتْكُمُ ٱلْبَيِّنَٰتُ فَٱعْلَمُوٓا۟ أَنَّ ٱللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ इब्ने जरीर (रज़ि०) ने इक्रमा (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम (रज़ि०) और सअ़ल्बा (रज़ि०), इब्ने यामीन (रज़ि०), असद बिन कअ़ब (रज़ि०), सईद बिन अ़म्र (रज़ि०) और क़ैस बिन ज़ैद (रज़ि०) अहले किताब में से इन सब हज़रात ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से अ़र्ज़ किया, "या रसूलल्लाह (सल्ल०) शम्बा के दिन की हम तअ़ज़ीम करते हैं, हमें उस के तअ़ज़ीम की इजाज़त दीजिए और तौरेत भी अल्लाह तआ़ला की किताब है, हमें तौरेत पर अ़मल करने की इजाज़त दीजिए। इस पर यह आयते करीमा नाज़िल हुई कि ऐ ईमान वालो! इस्लाम में पूरे-पूरे दाख़िल हो जाओ।"

इस्लाम में पूरे-पूरे दाख़िल होने का हुक्म-

आयत के शाने नुज़ूल (Cause of revelation) के बारे में लिखा है कि कुछ सहाबा (रज़ि०) जो पहले यहूदी थे उन्होंने सनीचर के दिन की तअ़ज़ीम (सम्मान) को बाक़ी रखना चाहा, जो हज़रत मूसा (अ़लै०) की शरीअ़त में थी और ऊँट का गोश्त खाने से परहेज़ करना चाहा, क्योंकि वह यहूदियत के ज़माने में नहीं खाते थे, उन्होंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से अ़र्ज़ किया कि तौरेत भी तो अल्लाह तआ़ला की किताब है, हम इस को तहज्जुद की नमाज़ में पढ़ लिया करें (कुर्आन मजीद की जगह) इस पर यह आयतें नाज़िल हुईं और हुक्म फ़रमाया कि इस्लाम में पूरे-पूरे दाख़िल हो जाओ। कुर्आन के आने के बाद अब कोई शरीअ़त बाक़ी नहीं रही।

हज़रत जाबिर (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, "बिलाशुब्हा मैं तुम्हारे पास ख़ूब रौशन और साफ़ शरीअ़त लेकर आया हूँ। अगर मूसा भी ज़िन्दा होते तो उन के लिए भी इस के सिवा कोई गुन्जाइश न थी कि वह मेरी इत्तिबाअ़ करें।" **(मुआ़लिमुत्तन्ज़ील भाग 1 पेज नं० 183)**

हज़रत जाबिर (रज़ि०) की रिवायत मुस्नद अहमद और शोबुल ईमान लिल् बैहक़ी में भी है। **(मिश्कात पेज नं० 30)**

हर शख़्स इस्लाम के अह़काम का पाबन्द है-

इस आयत में हुक्म दिया गया है कि इस्लाम में पूरे-पूरे दाख़िल हो जाओ। इस्लाम के अह़काम को

पूरा-पूरा कुबूल करो और उस के तमाम हुक्मों पर अ़मल करो, ह़ाकिम हो या मह़कूम, बड़ा हो या छोटा, शहरी हो या देहाती, ताजिर हो या कारीगर, कारख़ानेदार, मज़दूर हो या किसान, सब इस्लाम पर पूरी तरह़ चलें और दूसरे का मुँह न देखें कि वह चले तो मैं भी चलूँ, हर एक अपनी ज़िम्मेदारी को सामने रखे। बहुत से लोगों ने यह तरीक़ा बना रखा है कि नमाज़, रोज़ः और इनके अ़लावा दो चार कामों तक ही इस्लाम को सीमित रखते हैं। इस के अ़लावा मुआ़शरत, तिजारत, सियासत और ज़िन्दगी के दूसरे तमाम विभागों में इस्लाम के अह़काम की परवाह नहीं करते जिस तरह़ चाहें तिजारत करते हैं और जो भी चीज़ सामने आ जाए ख़रीद लेते या बेच देते हैं, जहाँ चाहें मुलाज़िम हो जाते हैं।

ह़राम ह़लाल का कुछ ख़याल नहीं किया जाता, शादी में ग़ैर शरई तरीक़े को अख़्तियार करते हैं। जिस से खुला गुनाह कबीरा करते हैं और यह समझते हैं कि ख़ुशी के मौक़े पर हम पर कोई शरई पाबन्दी नहीं। ह़राम ह़लाल की बह़सों को फ़ुज़ूल समझते हैं, कोई आ़लिम अगर बता दे कि तुम्हारी मुलाज़िमत ह़राम है या तिजारत में सूद है तो कहते हैं कि मौलवी तरक़्क़ी से रोकते हैं। इन लोगों के दीन में चन्द तसव्वुरात और आ़माल के अ़लावा और कोई भी पाबन्दी नहीं है। अपने दीन को उन्हीं के दीन से जोड़ लेते हैं (अलुअ़याज़ु बिल्लाह) हमारा दीन जामेअ़ (Perfect) है, कामिल है, मुकम्मल है जो इन्सानी ज़िन्दगी के तमाम भागों पर ह़ावी है, इन्सानी ज़िन्दगी का कोई विभाग ऐसा नहीं जिस के एह़काम तफ़्सील के साथ इस्लाम में न बताये गये हों। कुछ अह़काम पर अ़मल करना और कुछ को छोड़ देना यह वही चीज़ है जिस को सूरः बक़रः के रुकूअ़ नं० 10 में यहूदियों से ख़िताब करते हुए फ़रमाया है कि-

(क्या किताब के कुछ ह़िस्से पर ईमान लाते हो और कुछ ह़िस्से के मुन्किर होते हो) बहुत से लोग ऐसे हैं जो मुसलमान होने के सिर्फ़ दावेदार हैं, इस्लाम के फ़रायज़ तक पर अ़मल नहीं करते और कुछ लोगों को दीनदारी का ख़याल है, लेकिन उनकी दीनदारी नमाज़ तक या एक दो आ़माल तक सीमित है। अगर तवज्जोह दिलाई जाए कि ह़राम मुलाज़िमत छोड़ दो तो तैयार नहीं, अगर यूँ कहा जाए कि सूद का लेन-देन न करो तो आमादा नहीं, अगर यूँ कहो कि ह़राम चीज़ें फ़रोख़्त न करो तो कहते हैं कि यह रोज़ी का मामला है उस को कैसे छोड़ दें? उनकी जाहिलाना बात का मतलब यह है कि रोज़ी कमाने में गोया पूरे आज़ाद हैं।

मुस्लिम हुकूमतें-

जिन मुल्कों में मुसलमानों की हुकूमते हैं वहाँ के ज़िम्मेदार उन्हीं तरीक़ों पर हुकूमतें चलाते हैं जो काफ़िरों से सीखे हैं, कचेहरियों में काफ़िराना और ज़ालिमाना क़ानून के मुताबिक़ फ़ैसले होते हैं। इस्लाम के क़ानून का नाम आ जाए तो कानों पर हाथ धरते हैं और अ़जीब बात यह है कि काफ़िराना काम के बावजूद इस के दावेदार हैं कि हम मुसलमान हैं! इस्लाम पर पूरी तरह़ अ़मल न करना, कुछ अहकाम को मानना कुछ को छोड़ना यह सब शैतानी ह़रकत हैं। इस्लाम में पूरा-पूरा दाख़िल होने का हुक्म देने के बाद यह भी फ़रमाया وَلَا تَتَّبِعُوا خُطُوٰتِ الشَّيْطٰنِ शैतान के क़दमों के पीछे न चलो और साथ में यह भी

फ़रमाया إِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُّبِينٌ (कि शैतान तुम्हारा खुला दुश्मन है।) लोग शैतान को बुरा भी कहते हैं और उस पर लअ़नत भी भेजते हैं और उस के बताये हुए तरीक़ों को अख़्तियार भी करते हैं। यह अ़जीब तरीक़ा है। फिर फ़रमाया,

فَإِن زَلَلْتُم مِّن بَعْدِ مَا جَاءَتْكُمُ الْبَيِّنَاتُ فَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ (सो अगर तुम लग़्ज़िश खा जाओ उस के बाद कि तुम्हारे पास वाज़ेह दलीलें आ चुकी हैं, तो जान लो कि अल्लाह तआ़ला ज़बरदस्त हिक्मत वाला है।)

इस आयत में बताया कि साफ़ सुबूत आ जाने के बाद भी इस्लाम में दाख़िल न हो तो उस को मामूली बात न समझना। यह अल्लाह तआ़ला की बग़ावत है, वह ग़ालिब है उस के अ़ज़ाब और इन्तिक़ाम से बच नहीं सकते और वह हकीम भी है अपनी हिकमत के मुताबिक़ वह सज़ा देने में जल्दी न करे तो इस से धोका न खाना और यह न समझना कि गिरफ़्त न होगी और बदले से बचे रहोगे।

210 هَلْ يَنظُرُونَ إِلَّا أَن يَأْتِيَهُمُ اللَّهُ فِي ظُلَلٍ مِّنَ الْغَمَامِ وَالْمَلَائِكَةُ وَقُضِيَ الْأَمْرُ ۚ وَإِلَى اللَّهِ تُرْجَعُ الْأُمُورُ

हक़ क़ुबूल न करने पर वअ़ीद-

जो लोग खुली दलीलों के बाद भी दीने इस्लाम में दाख़िल नहीं होते, उन्हें क्या इन्तिज़ार है? उन के रहन-सहन से मालूम होता है कि वह बस इसी का इन्तिज़ार कर रहे हैं कि अल्लाह और उस के फ़रिश्ते बादलों के सायबानों में आ जाएँ और उनको उन के कुफ़्र की सज़ा मिल जाए और सारा फ़ैसला हो जाए। फिर आगे इस्लाम क़ुबूल करने का मौक़ा ही नहीं है, क्योंकि अ़ज़ाब सामने आने के बाद इस्लाम क़ुबूल नहीं होता। फिर फ़रमाया कि तमाम हुक्म अल्लाह तआ़ला ही की तरफ़ लौटाये जाएँगे। वह हाकिम है रोज़े जज़ा (Day of Judgement) का, उस दिन कोई भी साहिबे अख़्तियार न होगा। वह हक़ के साथ फ़ैसला करेगा, अहले कुफ़्र के बारे में हमेशा अ़ज़ाब का फ़ैसला होगा, इसलिए अपना अन्जाम सोच लें।

211 سَلْ بَنِي إِسْرَائِيلَ كَمْ آتَيْنَاهُم مِّنْ آيَةٍ بَيِّنَةٍ ۗ وَمَن يُبَدِّلْ نِعْمَةَ اللَّهِ مِن بَعْدِ مَا جَاءَتْهُ
فَإِنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ

इस आयत करीमा में अल्लाह तआ़ला ने बनी इस्राईल की, उन के कुफ़्र व सरकशी की वजह से तंज किया है कि अल्लाह तआ़ला ने उन की हिदायत के लिए अम्बिया व रसूल भेजे और उन के साथ बहुत सी खुली निशानियाँ और साफ़ प्रमाण भेजे, ताकि उन्हें देखकर ईमान ले आएँ। यदेबैज़ा (सफ़ेद हाथ) अ़सा-ए-मूसा, समुन्दर का फट्ना, पत्थरों से चश्मों का जारी होना, मैदाने तीह में बादल का साया, मन्न व सलूवा और इसी क़िस्म की और भी दलीलें अल्लाह तआ़ला ने उन्हें राहे रास्त पर लाने के लिए भेजीं, लेकिन कोई फ़ायदा न हुआ और ईमान के बदले कुफ़्र को क़ुबूल कर लिया और जहन्नम के अ़ज़ाब के हक़्दार बने।

212 زُيِّنَ لِلَّذِينَ كَفَرُوا الْحَيَاةُ الدُّنْيَا وَيَسْخَرُونَ مِنَ الَّذِينَ آمَنُوا ۘ وَالَّذِينَ اتَّقَوْا فَوْقَهُمْ يَوْمَ

الْقِيٰمَةِ ۭ وَاللّٰهُ يَرْزُقُ مَنْ يَّشَاۗءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ۝

काफ़िरों की दुनियावी ज़िन्दग़ी-

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने बताया कि काफ़िरों के लिए दुनिया की ज़िन्दग़ी को ख़ुशरंग बना दिया गया है, जिस पर वह ख़ुश और मुतमइन हैं, दौलत जमा करते हैं और उसे अल्लाह की राह में ख़र्च नहीं करते, मुसलमानों का मज़ाक़ उड़ाते हैं कि वह फ़क़ीर हैं और यह समझते हैं कि दुनियावी माल व मताअ़ ही ह़क़ीक़ी सआ़दत है और जो इस से मह़रूम है वह शक़ी व बद्बख़्त है, लेकिन अहले ईमान दुनिया से एहतियात करते हैं और जो माल वह ह़ासिल करते हैं उसे अल्लाह की राह में ख़र्च करते रहते हैं। इसलिए क़ियामत के दिन उन का मक़ाम जन्नत और कुफ़्फ़ार का ठिकाना जहन्नम होगा। वह 'अ़िल्लियीन' में होंगे और कुफ़्फ़ार 'अस्फ़लुस्साफ़िलीन' में।

और चाहे दुनियावी रिज़्क़ हो या आख़िरत की नेअ़मते, अल्लाह की मर्ज़ी के बग़ैर किसी को कुछ भी ह़ासिल नहीं हो सकती, इसलिए कि कायनात और उस का ज़र्रह-ज़र्रह उस के तसर्रुफ़ में है, वह जिसे चाहता है बे-ह़िसाब रोज़ी देता है। इसीलिए अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला जिसे चाहता है बे-ह़िसाब रोज़ी देता है।"

213 كَانَ النَّاسُ اُمَّةً وَّاحِدَةً ۣ فَبَعَثَ اللّٰهُ النَّبِيّٖنَ مُبَشِّرِيْنَ وَ مُنْذِرِيْنَ ۠ وَاَنْزَلَ مَعَهُمُ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ لِيَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ فِيْمَا اخْتَلَفُوْا فِيْهِ ۭ وَمَا اخْتَلَفَ فِيْهِ اِلَّا الَّذِيْنَ اُوْتُوْهُ مِنْۢ بَعْدِ مَا جَاۗءَتْهُمُ الْبَيِّنٰتُ بَغْيًۢا بَيْنَهُمْ ۚ فَهَدَى اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لِمَا اخْتَلَفُوْا فِيْهِ مِنَ الْحَقِّ بِاِذْنِهٖ ۭ وَاللّٰهُ يَهْدِيْ مَنْ يَّشَاۗءُ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝

इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा कहते हैं कि आदम और नूह़ अ़लैहिमुस्सलाम के दर्मियान दस सदियों की मुद्दत थी। इस पूरी मुद्दत में लोग एक ही शरीअ़त पर क़ायम रहे। फिर उन के दर्मियान ज़माने के साथ अ़क़ायद में बदलाव हो गया तो अल्लाह तआ़ला ने उन को राहे रास्त पर लाने के लिए अम्बिया-ए-किराम को भेजा, जिन्होंने अल्लाह की बन्दगी करने वालों को दुनिया व आख़िरत की कामियाबी और जन्नत की ख़ुशख़बरी दी और उस की नाफ़रमानी करने वालों को दुनिया व आख़िरत की नाकामी, मह़रूमी, ज़िल्लत व रुस्वाई और जहन्नम से डराया और अम्बिया के साथ किताबें भेजीं जिन में सच्ची ख़बरें और एह़कामात थे, जो उसूल में इख़्तिलाफ़ करने वालों के दर्मियान फ़ैसले का दर्जा रखती थीं।

यहूद व नसारा के इख़्तिलाफ़ात-

यहूद व नसारा ने अल्लाह की किताबों में (सब कुछ जानने के बावजूद) इख़्तिलाफ़ किया और उस की वजह उन का आपस का ह़सद था, लेकिन अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को अपने फ़ज़्ल व करम से ह़क़ की तरफ़ हिदायत दी। वह तमाम आसमानी किताबों पर ईमान लाए, फिर क़ुर्आन पर ईमान लाए, और इन तमाम कामों में संतुलन (Balance) की राह अख़्तियार की जिन में यहूद व नसारा ने इख़्तिलाफ़ (Confrontation) किया था और अल्लाह जिसे चाहता है अपनी सीधी राह की तरफ़ हिदायत देता है।

'मुसन्नफ़ अ़ब्दुल रज़्ज़ाक़' में ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया, "हम मुसलमान ज़माने के एतिबार से आख़िर में आये हैं, क़ियामत के दिन पहले लोगों में से होंगे, हम लोग सब से पहले जन्नत में दाख़िल होंगे, ह़ालांकि अहले किताब को हम से पहले किताब मिली है और हमें बाद में किताब मिली, लेकिन अल्लाह ने हमें ह़क़ की तरफ़ अपने फ़ज़्ल व करम से हिदायत दी।" लोगों ने जुमअ़ के दिन के बारे में आपस में इख़्तिलाफ़ किया, तो अल्लाह ने हमें हिदायत दी और हम ने जुमअ़ का दिन अख़्तियार कर लिया और लोग हमारे ताबेअ़ बन गये, यानी हफ़्ते का दिन यहूद ने अख़्तियार कर लिया और नसारा ने इतवार का दिन।

सय्यदना सौबान (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, मैं "ख़ातिमुन्नबीय्यीन हूँ। मेरे बाद कोई नबी नहीं आएगा, मेरी उम्मत का एक गिरोह हमेशा ह़क़ पर क़ायम रहेगा। उन का कोई मुख़ालिफ़ उन्हें नुक़्सान नहीं पहुँचा सकेगा यहाँ तक कि अल्लाह का हुक्म आ जाएगा।" **(मुस्लिम)**

214 أَمْ حَسِبْتُمْ أَنْ تَدْخُلُوا الْجَنَّةَ وَلَمَّا يَأْتِكُمْ مَثَلُ الَّذِينَ خَلَوْا مِنْ قَبْلِكُمْ ۖ مَسَّتْهُمُ الْبَأْسَاءُ وَالضَّرَّاءُ وَزُلْزِلُوا حَتَّىٰ يَقُولَ الرَّسُولُ وَالَّذِينَ آمَنُوا مَعَهُ مَتَىٰ نَصْرُ اللَّهِ ۗ أَلَا إِنَّ نَصْرَ اللَّهِ قَرِيبٌ

أَمْ حَسِبْتُمْ أَنْ تَدْخُلُوا الْجَنَّةَ 'अ़ब्दुर्रज़्ज़ाक़', 'मअ़मर' और क़तादा बयान करते हैं कि यह आयते करीमा 'ग़ज़्व-ए-अह़ज़ाब' के बारे में नाज़िल हुई है, उस रोज़ रसूलुल्लाह (सल्ल०) को बहुत सख़्तियों और परेशानियों का सामना करना पड़ा।

يَسْأَلُونَكَ مَاذَا يُنْفِقُونَ इब्ने जरीर ने इब्ने जुरैज (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि मुसलमानों ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से दर्याफ़्त किया, "हम अपने मालों को कहाँ ख़र्च करें, इस पर यह आयते करीमा नाज़िल हुई।" और इब्ने मुन्ज़िर ने अबू ह़ब्बान से नक़्ल किया है कि अ़म्र बिन जमूह़ (रज़ि०) ने रसूल (सल्ल०) से दर्याफ़्त किया, "हम अपने मालों को किस तरह़ और कहाँ ख़र्च करें इस पर यह आयत नाज़िल हुई।" **(लुबाबुन्नुक़ूल फ़ी अस्बाबिन्नुज़ूल)**

मोमिनों की आज़माइश-

इस में अल्लाह तआ़ला ने ख़बर दी है कि वह अपने मोमिन बन्दों का इम्तिह़ान लेता है और जिस का जिस दर्जे का ईमान होता है उसी दर्जे का इम्तिह़ान भी होता है। पिछले अम्बिया और मोमिनीन के साथ यही अल्लाह की सुन्नत रही है और अल्लाह की यह सुन्नत बदल नहीं सकती। जो भी अल्लाह के दीन पर चलेगा उस की आज़माइश होनी ज़रूरी है, तो जो लोग सब्र के साथ जमे रहेंगे, अल्लाह तआ़ला उन्हें इ़ज़्ज़त नसीब फ़रमाएगा और जो लोग आज़माइश में पूरे नहीं उतरेंगे और दुनियावी परेशानियों को अ़ज़ाबे आख़िरत समझ लेंगे, उन्हें आख़िरत में मह़रूमियों और नाकामियों का मुँह देखना पड़ेगा।

अल्लाह ने मुसलमानों को ख़िताब करके फ़रमाया कि तुम ने यह कैसे समझ लिया कि बग़ैर इम्तिह़ान व आज़माइश से गुज़रे हुए जन्नत में दाख़िल हो जाओगे, ह़ालांकि अभी तक तुम्हारी वैसी आज़माइश ही

नहीं हुई जैसी आज़माइश पिछले अम्बिया और मोमिनीन की हुई। उन पर जो मुसीबतें आईं उन की सख़्ती का अन्दाज़ा इस से लगाया जा सकता है कि अम्बिया और उन पर ईमान लाने वाले तक्लीफ़ से चीख़ पड़े कि ऐ अल्लाह! अब तो अपनी मदद भेज दे और जब उन का इम्तिहान हो चुका तो अल्लाह ने कहा कि हाँ, अब अल्लाह की मदद मेरे मोमिन व सालेह़ बन्दों से क़रीब है, क्योंकि अल्लाह तो हर चीज़ पर हर वक़्त क़ादिर है। अल्लाह तो आज़माना चाहता था कि अ़मल से कौन सच्चा है।

बुख़ारी ने 'ख़ब्बाब बिन अल्अरत' (रज़ि०) से रिवायत की है, "रसूलुल्लाह (सल्ल०) कअ़बः के साये में एक चादर को तकिया बनाये बैठे थे और मुश्रिकीन की ज़्यादती इन्तिहा को पहुँच रही थी, तो हम ने कहा कि अब तो हमारे लिए अल्लाह की मदद माँगिए, अब तो हमारे लिए दुआ़ कीजिए?" तो आप ने फ़रमाया, "पहले ज़माने में मुसलमान आदमी को पकड़ लिया जाता था और गढ़ा खोद कर गाड़ दिया जाता था, लेकिन यह अ़ज़ाब उसे उस के दीन से नहीं फेरता था। अल्लाह की क़सम, अल्लाह तआ़ला इस दीन को पूरा करेगा, यहाँ तक एक सवार 'सनआ़' नामी स्थान से 'हज़रमूत' तक जाएगा और उसे अल्लाह के अ़लावह किसी का डर नहीं होगा या चरवाहा अपनी बकरियों के बारे में भेड़िया से डरेगा, लेकिन तुम लोग जल्दी कर रहे हो।" **(बुख़ारी)**

इसी तरह़ की एक दूसरी ह़दीस में है-

ख़ब्बाब इब्ने अरत (रज़ि०) फ़रमाते हैं, "एक बार आप (सल्ल०) कअ़बः के साये में अपनी चादर के साथ टेक लगाये बैठे थे। मैंने कहा आप अल्लाह से दुआ़ क्यों नहीं करते? यह सुनते ही आप तकिया छोड़कर सीधे बैठ गये और आपका चेहरा ग़ुस्से से सुर्ख़ हो गया।" आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तुम से पहले ऐसे लोग गुज़र चुके हैं जिनके गोश्त और पुट्ठों में हड्डियों तक कंघियाँ चलाई जातीं, मगर वह अपने सच्चे दीन से नहीं फिरते थे और आरा उनके सर के दर्मियान रखकर चलाया जाता और वह टुकड़े कर दिये जाते मगर वह अपने सच्चे दीन से नहीं फिरते थे और अल्लाह अपने इस काम को ज़रूर पूरा करके रहेगा यहाँ तक कि, एक शख़्स सनआ़ से सवार होकर 'हज़रमूत' तक चला जाएगा और अल्लाह के सिवा उसे किसी चीज़ का डर न होगा।" **(बुख़ारी)**

215 يَسْـَٔلُوْنَكَ مَاذَا يُنْفِقُوْنَ ۥ قُلْ مَآ اَنْفَقْتُمْ مِّنْ خَيْرٍ فَلِلْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِيْنَ وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنِ
وَابْنِ السَّبِيْلِ ۭ وَمَا تَفْعَلُوْا مِنْ خَيْرٍ فَاِنَّ اللّٰهَ بِهٖ عَلِيْمٌ

अल्लाह की राह में ख़र्च-

लोगों ने नबी करीम (सल्ल०) से पूछा, "वह अपने माल में से अल्लाह की राह में क्या ख़र्च करें तो अल्लाह तआ़ला ने उन लोगों को जवाब दिया और उन की रहनुमाई फ़रमाई कि वह कोई भी ह़लाल माल अल्लाह की राह में ख़र्च कर सकते हैं, चाहे थोड़ा हो या ज़्यादा। इस के बाद आप (सल्ल०) ने उन्हें बताया कि इस सवाल से ज़्यादा अहम यह जानना है कि माल किन पर ख़र्च किया जाए। अतः उन्हें तअ़लीम दी कि इन्सान की नेकी और हुस्ने सुलूक के सब से ज़्यादा ह़क़दार उस के वालिदैन हैं, उन पर

ख़र्च करना और उन के साथ हुस्ने सुलूक सब से बड़ी नेकी है और उन के ज़रूरतमन्द होने के बावजूद उन पर ख़र्च न करना उन की सब से बड़ी नाफ़रमानी है।

'मुस्नद अहमद' में है, नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अपनी माँ और बाप पर ख़र्च करो, अपनी बहन और भाई पर ख़र्च करो, उस के बाद क़रीबी रिश्तेदारों पर। वालिदैन के बाद दूसरे रिश्तेदारों, यतीम, मसाकीन व फ़ुक़रा और उन मुसाफ़िरों पर ख़र्च करना चाहिए जिन का रास्ते का खाना-पीना आदि ख़त्म हो गया हो और अपनी मन्ज़िल तक पहुँचने के लिए पैसों के मुहताज हों।"

इस तफ़्सील के बाद अल्लाह तआला ने बड़ी वजह अलूजमाल फ़रमाया कि ऐ मुसलमानो! तुम जो भी करो चाहे उन लोगों के साथ, जिन का ज़िक्र ऊपर आ चुका या, औरों के साथ, तो अल्लाह उसे जानता है और उस का बेहतरीन बदला तुम्हें अ़ता फ़रमाएगा। जैसा कि अल्लाह ने फ़रमाया है فَاسْتَجَابَ لَهُمْ رَبُّهُمْ اَنِّىْ لَاۤ اُضِيْعُ عَمَلَ عَامِلٍ مِّنْكُمْ مِّنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى (सूरः आले इमरान-195) कि मर्द हो या औ़रत, मैं किसी की मेह़नत को ज़ाये नहीं करता।

आयत नं० 216 से 221 तक

كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ وَهُوَ كُرْهٌ لَّكُمْ ۚ وَعَسَىٰ أَن تَكْرَهُوا شَيْئًا وَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۖ وَعَسَىٰ أَن تُحِبُّوا شَيْئًا وَهُوَ شَرٌّ لَّكُمْ ۗ
وَاللَّهُ يَعْلَمُ وَأَنتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ۝ يَسْأَلُونَكَ عَنِ الشَّهْرِ الْحَرَامِ قِتَالٍ فِيهِ ۖ قُلْ قِتَالٌ فِيهِ كَبِيرٌ ۖ وَصَدٌّ عَن سَبِيلِ اللَّهِ وَ
كُفْرٌ بِهِ وَالْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَإِخْرَاجُ أَهْلِهِ مِنْهُ أَكْبَرُ عِندَ اللَّهِ ۚ وَالْفِتْنَةُ أَكْبَرُ مِنَ الْقَتْلِ ۗ وَلَا يَزَالُونَ يُقَاتِلُونَكُمْ حَتَّىٰ
يَرُدُّوكُمْ عَن دِينِكُمْ إِنِ اسْتَطَاعُوا ۚ وَمَن يَرْتَدِدْ مِنكُمْ عَن دِينِهِ فَيَمُتْ وَهُوَ كَافِرٌ فَأُولَٰئِكَ حَبِطَتْ أَعْمَالُهُمْ فِي
الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ ۖ وَأُولَٰئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ ۖ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝ إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَالَّذِينَ هَاجَرُوا وَجَاهَدُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ
أُولَٰئِكَ يَرْجُونَ رَحْمَتَ اللَّهِ ۚ وَاللَّهُ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝ يَسْأَلُونَكَ عَنِ الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ ۖ قُلْ فِيهِمَا إِثْمٌ كَبِيرٌ وَمَنَافِعُ لِلنَّاسِ وَإِثْمُهُمَا
أَكْبَرُ مِن نَّفْعِهِمَا ۗ وَيَسْأَلُونَكَ مَاذَا يُنفِقُونَ قُلِ الْعَفْوَ ۗ كَذَٰلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ لَكُمُ الْآيَاتِ لَعَلَّكُمْ تَتَفَكَّرُونَ ۝ فِي الدُّنْيَا
وَالْآخِرَةِ ۗ وَيَسْأَلُونَكَ عَنِ الْيَتَامَىٰ ۖ قُلْ إِصْلَاحٌ لَّهُمْ خَيْرٌ ۖ وَإِن تُخَالِطُوهُمْ فَإِخْوَانُكُمْ ۚ وَاللَّهُ يَعْلَمُ الْمُفْسِدَ مِنَ الْمُصْلِحِ ۚ وَلَوْ شَاءَ
اللَّهُ لَأَعْنَتَكُمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝ وَلَا تَنكِحُوا الْمُشْرِكَاتِ حَتَّىٰ يُؤْمِنَّ ۚ وَلَأَمَةٌ مُّؤْمِنَةٌ خَيْرٌ مِّن مُّشْرِكَةٍ وَلَوْ أَعْجَبَتْكُمْ ۗ
وَلَا تُنكِحُوا الْمُشْرِكِينَ حَتَّىٰ يُؤْمِنُوا ۚ وَلَعَبْدٌ مُّؤْمِنٌ خَيْرٌ مِّن مُّشْرِكٍ وَلَوْ أَعْجَبَكُمْ ۗ أُولَٰئِكَ يَدْعُونَ إِلَى النَّارِ ۖ وَاللَّهُ يَدْعُو إِلَى
الْجَنَّةِ وَالْمَغْفِرَةِ بِإِذْنِهِ ۖ وَيُبَيِّنُ آيَاتِهِ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُونَ ۝

अनुवाद-

(216) तुम पर क़िताल (धर्म युद्ध) फ़र्ज़ (अनिवार्य) किया गया है, और वह तुम्हें नापसंद तो होगा, मगर हो सकता है कि कोई चीज़ तुम्हें नापसंद हो, और वह तुम्हारे लिए भली हो; और हो सकता है कि कोई चीज़ तुम्हें पसंद हो और वह तुम्हारे लिए बुरी हो; और अल्लाह ही जानता है तुम नहीं जानते। (217) लोग आपसे अदब वाले (प्रतिष्ठित) महीने में युद्ध के विषय में पूछते हैं, कह दीजिए, ''उसमें लड़ना बड़ी (गंभीर) बात है; और अल्लाह के रास्ते से रोकना, और उसके साथ कुफ़्र (अविश्वास) करना है, मस्जिदे ह़राम (कअ़बः) से रोकना और उसके रहने वालों को वहाँ से निकाल देना; अल्लाह के नज़दीक उससे भी बड़ा (गुनाह) है, और फ़ित्ना पैदा करना क़त्ल से भी बढ़कर (बुरा) है,'' और यह लोग (काफ़िर) तो हमेशा तुमसे लड़ते ही रहेंगे, और इनका बस चले तो वे तुम को तुम्हारे दीन से फेर ही दें; और जो तुममें से अपने दीन से फिर जाए, और उसी ह़ालते कुफ़्र (इन्कारी की ह़ालत) पर मर जाए, तो यही लोग हैं कि उनके आ़माल (कर्म) दुनिया व आख़िरत में बर्बाद हो जाएँगे, और यही लोग दोज़ख़ी हैं जिसमें वे हमेशा रहेंगे। (218) जो लोग ईमान लाए और अल्लाह की राह में हिजरत की (घर-बार छोड़ा) और जिहाद किया; तो वही लोग अल्लाह की रह़मत (दयालुता) के उम्मीदवार हैं, और अल्लाह बड़ा माफ़ करने वाला (क्षमाशील), मेहरबान है। (219) लोग आप से शराब और जुएँ के बारे में पूछते हैं, कह दीजिए, ''इनमें बड़ा गुनाह (नुक़सान) है, अगर्चे लोगों के लिए कुछ फ़ायदे भी हैं, लेकिन उनका गुनाह (नुक़सान) उनके फ़ायदे से कहीं ज़्यादा है,'' और आप से पूछते हैं, (अल्लाह की राह में) ''क्या ख़र्च करें? बता दीजिए, ''जितना आसान हो।'' इसी तरह़ अल्लाह तुम लोगों से खोल-खोलकर अपनी आयतें बयान करता है ताकि तुम सोचो; (220) दुनिया और आख़िरत की बातों में;

और (लोग) आप से यतीमों के बारे में पूछते हैं, कह दीजिए, ''उनके सुधार के लिए (जो भी तरीक़ा अपनाया जाए) अच्छा है, और अगर तुम उन्हें अपने साथ (नाते और ख़र्च में) सम्मिलित कर लो तो वे तुम्हारे भाई हैं,'' और अल्लाह बिगाड़ने वालों और संवारने वालों को (खूब) जानता है; और अगर अल्लाह चाहता तो तुम को तकलीफ़ में डाल देता, बेशक अल्लाह ज़बर्दस्त (प्रभुत्वशाली), हिक्मत वाला है। (221) और मुश्रिक (बहुदेववादी) औरतें जब तक ईमान न लाएँ उनसे निकाह न करो, एक ईमान वाली बांदी(दासी) मुश्रिक औरत से कहीं बेहतर है, चाहे वह तुम्हें कितनी ही अच्छी क्यों न लगे; और (ईमान वाली औरतों का) मुश्रिक मर्दों से निकाह न करो, जब तक कि वे ईमान न लाएँ, एक ईमान वाला गुलाम आज़ाद मुश्रिक से कहीं बेहतर है, चाहे वह तुम्हें कितना ही अच्छा क्यों न लगे; ये (शिर्क वाले) आग की ओर बुलाते हैं, और अल्लाह अपने हुक्म से जन्नत और माफ़ी (क्षमा) की ओर बुलाता है, और वह अपनी आयतें लोगों के सामने खोल-खोलकर बयान करता है, ताकि नसीहत हासिल करें।

आयत नं० 216 से 221 तक की व्याख्या

216 كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ وَهُوَ كُرْهٌ لَّكُمْ ۚ وَعَسَىٰ أَن تَكْرَهُوا شَيْئًا وَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۖ وَعَسَىٰ أَن تُحِبُّوا شَيْئًا وَهُوَ شَرٌّ لَّكُمْ ۗ وَاللَّهُ يَعْلَمُ وَأَنتُمْ لَا تَعْلَمُونَ

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) जब तक मक्का में थे तो जंगे मुदाफ़िआना (defensive fight) की भी इजाज़त नहीं थी बल्कि सब्र व बर्दाशत का हुक्म था। फिर हिजरत फ़रमा कर मदीना तशरीफ़ लाए तो दुश्मनों से मुदाफ़िअ़त (defensive fight) की इजाज़त मिल गई कि जो कुफ़्फ़ार तुम से लड़ें तुम भी उनसे लड़ो यानी सिर्फ़ उन कुफ़्फ़ार से क़िताल की इजाज़त हुई जो अहले इस्लाम से क़िताल करें। इस के बावजूद जब कुफ़्फ़ार अपने ज़ुल्म और ज़्यादतियों से बाज़ न आये तो आमतौर पर कुफ़्फ़ार से क़िताल की इजाज़त हो गई और जिहाद फ़र्ज़ हुआ। इस आयत में इर्शाद होता है-

जिहाद फ़र्ज़ है-

كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ यानी तुम पर क़िताल (धर्म युद्ध) फ़र्ज़ किया गया। इन शब्दों से यह मालूम होता है कि जिहाद हर मुसलमान पर फ़र्ज़ है, मगर रसूले करीम (सल्ल०) के इर्शाद से मालूम होता है कि यह फ़रीज़ा फ़र्ज़े ऐन के तौर पर हर मुस्लिम पर नाफ़िज़ नहीं बल्कि 'फ़र्ज़े किफ़ाया' (अर्थात कुछ लोगों के करने से अदा हो जाएगा) है। अर्थात अगर मुसलमानों की एक जमाअ़त इस फ़र्ज़ को अदा कर दे तो बाक़ी मुसलमान बरी समझे जाएँगे। हाँ, अगर किसी वक़्त दुनिया के किसी मुल्क में कोई जमाअ़त भी फ़रीज़ा जिहाद अदा करने वाली न रहे तो सब मुसलमान फ़र्ज़ छोड़ने के गुनाहगार हो जाएँगे। जिहाद के 'फ़र्ज़े ऐन' या 'फ़र्ज़े किफ़ाया' होने के मुतअ़ल्लिक़ मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ीअ़ साहब (रह०) ने अपनी तफ़सीर 'मआरिफ़ुल क़ुर्आन' में जो तहक़ीक़ लिखी है वह यह है-

"हदीस में रसूल-ए-करीम (सल्ल०) के **"अल्‌जिहादु माज़िन इला यौमिल् क़ियामह"** का यह

मतलब है कि "क़ियामत तक ऐसी जमाअ़त का मौजूद रहना ज़रूरी है, जो फ़रीज़-ए-जिहाद अदा करती रहे।"

तमाम मुसलमानों की शिरकत ज़रूरी नहीं-

وَمَا كَانَ الْمُؤْمِنُونَ لِيَنْفِرُوا كَافَّةً ۚ فَلَوْلَا نَفَرَ مِنْ كُلِّ فِرْقَةٍ مِنْهُمْ طَائِفَةٌ لِيَتَفَقَّهُوا فِي الدِّينِ (सूरः तौबः 122)

(और मुसलमानों को यह न चाहिए कि सब के सब निकल खड़े हों। सो ऐसा क्यों न किया जाए कि उन की हर बड़ी जमाअ़त में से एक छोटी जमाअ़त जाया करे ताकि बाक़ी लोग दीन की समझ हासिल करते रहें)। इस आयत में ख़ुद क़ुर्आने करीम ने यह तक़्सीम पेश फ़रमाई कि कुछ मुसलमान जिहाद करें और कुछ दीनी शिक्षा में लगे रहें और यह तभी हो सकता है जब कि जिहाद 'फ़र्ज़े ऐ़न' न हो बल्कि 'फ़र्ज़ किफ़ाया' हो।

माँ-बाप की ख़िद्मत से जिहाद का सवाब-

'सहीह़ बुख़ारी' व 'मुस्लिम' की ह़दीस है कि एक शख़्स ने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से जिहाद में जाने की इजाज़त चाही तो आप (सल्ल०) ने उस से दर्याफ़्त किया, "क्या तुम्हारे माँ-बाप ज़िन्दा हैं?" उस ने अ़र्ज़ किया, "जी हाँ, ज़िन्दा हैं।" आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "फिर जाओ, माँ-बाप की ख़िद्मत करके जिहाद का सवाब ह़ासिल करो।"

इस से भी यही मालूम हुआ कि जिहाद फ़र्ज़ किफ़ाया हो। जब मुसलमानों की एक जमाअ़त फ़रीज़-ए-जिहाद को क़ायम किये हुए हो तो बाक़ी मुसलमान दूसरी ख़िद्मतों और दीनी कामों में लग सकते हैं। हाँ, अगर किसी वक़्त मुसलमानों का अमीर ज़रूरत समझ कर आ़म जिहाद का हुक्म दे और सब मुसलमानों को जिहाद में शिरकत की दअ़वत दें तो फिर फ़र्ज़े ऐ़न हो जाता है। क़ुर्आन करीम में सूरः तौबः में इर्शाद फ़रमाया-

आम जिहाद का हुक्म-

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا مَا لَكُمْ إِذَا قِيلَ لَكُمُ انْفِرُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ اثَّاقَلْتُمْ إِلَى الْأَرْضِ ۚ

"ऐ ईमान वालो! तुम लोगों को क्या हुआ कि जब तुम से कहा जाता है कि अल्लाह की राह में निकलो तो ज़मीन को लगे जाते हो।"

इस आयत में इसी आ़म जिहाद का हुक्म है। इसी तरह़ अगर किसी वक़्त कुफ़्फ़ार किसी इस्लामी मुल्क पर ह़मलाआवर हों और मुदाफ़िअ़त (Defense) करने वाली जमाअ़त उन की मुदाफ़िअ़त पर पूरी तरह़ क़ादिर और काफ़ी न हो तो उस वक़्त भी यह फ़रीज़ा उस जमाअ़त के बाद क़रीब के मुसलमानों पर ज़रूरी हो जाता है और अगर वह न कर सकते हों तो उन के पास वाले मुसलमानों पर यहाँ तक कि पूरी दुनिया में हर मुस्लिम पर ऐसे वक़्त में जिहाद 'फ़र्ज़े ऐ़न' हो जाता है। क़ुर्आन मजीद की इस आयात से 'जम्हूर फ़ुक़्हा व मुह़द्दिसीन' ने यह हुक्म बताया है कि आ़म ह़ालात में जिहाद 'फ़र्ज़ किफ़ाया' है।

क़र्ज़ अदा करने की ताकीद-

"जिस शख़्स के ज़िम्मे किसी का क़र्ज़ हो उस के लिए जब तक क़र्ज़ अदा न कर दे इस फ़र्ज़ किफ़ाया में हिस्सा लेना दुरुस्त नहीं। हाँ, अगर किसी वक़्त आ़म हुक्म के सबब या कुफ़्फ़ार के हमले की वजह से जिहाद फ़र्ज़े ऐन हो जाए तो उस वक़्त फिर न वालिदैन की इजाज़त शर्त है, न शौहर की, न क़र्ज़ख़्वाह की।"

जिहाद नापसंद न होना चाहिए-

दीन के दुश्मनों के साथ जिहाद का हुक्म दिया गया है और जिहाद की तर्ग़ीब के लिए फ़रमाया गया कि हो सकता है कि कुछ चीज़ें अपने ज़ाहिरी और माद्दी नुक़्सान की वजह से तुम्हें नापसन्द हों और तुम उन्हें अच्छा न समझते हो, मगर अन्जाम के लिहाज़ से और फ़ायदे के लिहाज़ से वह तुम्हारे लिए ख़ैर व बरकत और कामियाबी का ज़रिया हो। जैसे- जिहाद व क़िताल ही को ले लीजिए जो बज़ाहिर क़त्ल व ख़ूनरेज़ी और माल व जान के नुक़्सान से मुम्किन है तुम्हें नापसंद हो, मगर इस का अन्जाम बेहतर है क्योंकि जिहाद ही से तुम ग़ाज़ियों और शहीदों के दर्जात हासिल कर सकते हो।

इसी तरह़ यह भी मुम्किन है कि एक चीज़ के ज़ाहिरी फ़ायदे की वजह से तुम उसे पसन्द करो मगर हक़ीक़त में वह चीज़ तुम्हारे हक़ में सख़्त नुक़्सानदेह हो। जैसे-

जिहाद में शिरकत न करने और आराम व राहत से घर बैठने को पसन्द करो इसलिए कि इस तरह़ माल व जान मह़फ़ूज़ रहेगा, लेकिन दरअस्ल जिहाद को छोड़ने में तुम्हारा सरासर नुक़्सान व आख़िरत का ख़सारा है क्योंकि इस तरह़ तुम काफ़िरों के हाथों ज़लील हो जाओगे, वह तुम्हारा सत्यानाश कर देंगे, माल लूट लेंगे, औ़रतों और बच्चों को ग़ुलाम बना लेंगे। तुम्हारे शहरों पर क़ब्ज़ा कर लेंगे और तुम्हें दीन व दुनिया से मिटा डालेंगे और यह भी समझ लीजिए कि तमाम मस्लहतें व अस्बाब व मुस्तह़बात की तर्तीब अल्लाह तआ़ला ही जानते हैं क्योंकि अल्लाह तआ़ला का इ़ल्म कामिल और हर चीज़ पर ह़ावी है।

इन्सान का इ़ल्म नाक़िस और मह़दूद (अधूरा व सीमित) है, लिहाज़ा अल्लाह तआ़ला ने जिहाद का जो हुक्म दिया है, उस में यक़ीनन मुसलमानों की भलाई व बेहतरी है इसलिए जो कुछ अल्लाह का हुक्म हो जाए उसी में मसलह़त समझ कर मान लेना चाहिए।

खुलासा यह है कि जिहाद व क़िताल में चाहे बज़ाहिर जान व माल का नुक़्सान नज़र आता हो, लेकिन जब ह़क़ायक़ व नतायज सामने आएँगे तो राज़ खुलेगा कि यह नुक़्सान हरगिज़ नुक़्सान न था बल्कि सरासर नफ़ा और हमेशा की राह़त का सामान था।

217 يَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الشَّهْرِ الْحَرَامِ قِتَالٍ فِيهِ ۖ قُلْ قِتَالٌ فِيهِ كَبِيرٌ ۖ وَصَدٌّ عَن سَبِيلِ اللَّهِ وَكُفْرٌ بِهِ وَالْمَسْجِدِ
الْحَرَامِ وَإِخْرَاجُ أَهْلِهِ مِنْهُ أَكْبَرُ عِندَ اللَّهِ ۚ وَالْفِتْنَةُ أَكْبَرُ مِنَ الْقَتْلِ ۗ وَلَا يَزَالُونَ يُقَاتِلُونَكُمْ حَتَّىٰ
يَرُدُّوكُمْ عَن دِينِكُمْ إِنِ اسْتَطَاعُوا ۚ وَمَن يَرْتَدِدْ مِنكُمْ عَن دِينِهِ فَيَمُتْ وَهُوَ كَافِرٌ فَأُولَٰئِكَ
حَبِطَتْ أَعْمَالُهُمْ فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ ۖ وَأُولَٰئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ ۖ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝

يَسْأَلُونَكَ عَنِ الشَّهْرِ الْحَرَامِ इब्ने जरीर, इब्ने अबी हातिम व तब्रानी ने कबीर में और इमाम बैहक़ी ने अपनी सुनन में हज़रत जुन्दुब बिन अ़ब्दुल्लाह से रिवायत नक़्ल की है कि रसूल (सल्ल०) ने एक लश्कर रवाना फ़रमाया और उस पर 'अ़ब्दुल्लाह बिन जहश' को अमीर बनाया।

उन हज़रात को इब्ने हज़रमी मिला, उन्होंने उस को क़त्ल कर दिया और उन को यह मालूम नहीं था कि यह महीना 'रजब' का है या 'जमादिलूआख़िर' का, तो मुश्रिकीन ने मुसलमानों से कहा कि इन लोगों ने हराम महीने में क़िताल किया है। इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई, कि आप से शहर हराम में क़िताल करने के बारे में दर्याफ़्त करते हैं, फिर बाद में कुछ हज़रात बोले कि अगर उन लोगों को इस में गुनाह नहीं होगा तो सवाब भी नहीं मिलेगा। इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَالَّذِينَ هَاجَرُوا और 'इब्ने मुन्ज़िर' ने इस रिवायत को उ़स्मान बिन अ़ता और अ़ता के वास्ते से हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है, जिस की तफ़्सीर يَسْأَلُونَكَ عَنِ الْخَمْرِ सूरः माइदा में आएगी।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है وَيَسْأَلُونَكَ مَاذَا يُنْفِقُونَ इब्ने अबी हातिम ने सईद या इक्रमा के वास्ते से हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि जब 'फ़ी सबीलिल्लाह' ख़र्च करने का हुक्म दिया गया तो सहाबा-ए-किराम की एक जमाअ़त रसूल (सल्ल०) की ख़िद्मत में हाज़िर हुई और अ़र्ज़ किया कि हमें मालूम नहीं किस क़िस्म के नफ़्क़े का हमारे माल में हुक्म दिया गया है सो हम क्या ख़र्च करें। इस पर यह आयत नाज़िल हुई وَيَسْأَلُونَكَ مَاذَا يُنْفِقُونَ और इब्ने अबी हातिम ने यह्या से नक़्ल किया है कि उन्हें यह बात पहुँची है कि हज़रत मआ़ज़ (रज़ि०) और सअ़लबा (रज़ि०) रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्मत में हाज़िर हुए और अ़र्ज़ किया, "या रसूलल्लाह (सल्ल०) हमारे पास ग़ुलाम भी हैं और घर वाले भी तो हम अपने माल में से क्या ख़र्च करें, इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई।" **(तफ़्सीर इब्ने अ़ब्बास)**

जिहाद ही से सम्बन्धित एक ख़ास वाक़िये के सिल्सिले में इस आयत का नुज़ूल हुआ और जिहाद से सम्बन्धित जो सवाल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से किया गया था उस का जवाब इर्शाद हुआ।

जिस सिल्सिले में आयत का नुज़ूल हुआ वह वाक़िया यह था। जैसा कि हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने जंगे बद्र से दो माह पहले जमादिलू आख़िर २ हि० में अपने फूफीज़ाद भाई हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन जह्श (रज़ि०) की अगुवाई में आठ या बारह मुहाजिरीन की एक जमाअ़त को जिस में सिवाय मुहाजिरीन के और कोई न था, मदीना से काफ़िरों के मुक़ाबले में जाने का हुक्म दिया, फिर हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन जह्श (रज़ि०) को एक ख़त लिख कर दिया और यह फ़रमाया कि जब दो दिन का सफ़र तय कर लो तब इस ख़त को खोलना और अपने साथियों को सुना देना मगर किसी पर ज़बरदस्ती न करना। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन जह्श (रज़ि०) वहाँ से रवाना हुए और दो दिन का सफ़र तय करने के बाद एक मन्ज़िल पर पड़ाव किया।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन जह्श (रज़ि०) ने इस हुक्मनामे को पढ़ते ही **'समेअ़ना व वअ़ताअ़तना'**

कहा और ख़त अपने साथियों को सुनाया और यह भी कह दिया कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने मुझे यह फ़रमाया था कि किसी पर ज़बरदस्ती न करना। अब जिस को शहादत का शौक़ और जज़्बा हो वह मेरे साथ चले और जिस का जी चाहे वह लौट जाए।

यह सुनकर सब दिल व जान से राज़ी हो गये और एक शख़्स भी वापस होने के लिए राज़ी न हुआ। मक्का मुकर्रमा और तायफ़ के दर्मियान जब मक़ामे नख़्ला में जाकर उतरे तो अभी ठहरने भी न पाये थे कि इतने में क़ुरैश का काफ़िला दिखाई दिया जो तायफ़ के तिजारत का माल ज़ैतून का तेल, किशमिश और चमड़े वग़ैरह लेकर आ रहा था, मुसलमानों ने उन पर हमला किया। कुफ़्फ़ार के क़ाफ़िले का एक व्यक्ति क़त्ल हुआ और दो को गिरफ़्तार किया।

सहाबा-ए-किराम क़ैदियों और सामान के ऊँट को लेकर मदीना मुनव्वरह हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की ख़िद्मत में हाज़िर हुए। इस क़ाफ़िले पर हमले का वाक़िआ जिस रोज़ हुआ वह माहे रजब की पहली तारीख़ थी, लेकिन सहाबा-ए-किराम इस को 'जमादिउस्सानी' की तीस्वीं तारीख़ समझे हुए थे मगर चाँद २९ का हो चुका था जिस का उन मुजाहिदीन सहाबा को इल्म न था।

हज़रत इब्राहीम (अ़लै०) के वक़्त से अ़रब में दस्तूर चला आ रहा था कि चार महीने यानी ज़ीक़अ़दह, ज़िल्हिज्ज, मुहर्रम और रजब यह हुरमत के महीने समझे जाते थे और उन में आपसी क़त्ल व क़िताल और जंग व जिदाल को जायज़ नहीं समझते थे और इन महीनों में किसी पर चढ़ाई करने को बुरा जानते थे। इसलिए कुफ़्फ़ार ने इस वाक़िये पर तन्ज़ किया कि मुसलमानों ने हराम महीने यानी रजब की हुरमत का भी ख़याल न किया। मुसलमानों को इस की फ़िक्र हुई कि हम ने हराम महीने यानी माहे 'रजब' में क़त्ल करके बड़ा गुनाह किया और बाज़ रिवायात में है कि बाज़ कुफ़्फ़ारे क़ुरैश ने भी हाज़िर होकर एतिराज़न रसूल (सल्ल०) से सवाल किया, इस पर यह आयत नाज़िल हुई।

हुरमत के चार महीने-

इस आयत से 'अश्हुर' व 'हुरुम' यानी चार माह (1) 'ज़ीक़अ़दह' (2) 'ज़िल्हिज्ज' (3) 'मुहर्रम' (4) 'रजब' में क़िताल की मुमानिअ़त साबित होती है, मगर अक्सर मुफ़स्सिरीन व फ़ुक़्हा का कहना है कि यह हुक्म मन्सूख़ (ख़त्म) है और अब किसी महीने में क़िताल मना नहीं और कुछ मुफ़स्सिरीन का कहना है कि यह हुक्म मन्सूख़ (ख़त्म) नहीं हुआ है और हराम महीने की हुरमत अब भी मौजूद है। इस बह्स से सम्बन्धित क़ुर्आन करीम की दूसरी आयात और अहादीस की रिवायात ज़िक्र करके और मुफ़स्सिरीन-ए-किराम के क़ौल को ज़ाहिर करके हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ीअ़ साहब (रह०) ने अपनी तफ़्सीर मआ़रिफ़ुल क़ुर्आन में ख़ुलासा इस तरह किया है-

> "ख़ुलासा यह हुआ कि क़िताल की शुरुआ़त तो इन महीनों में हमेशा के लिए हराम है मगर जब कुफ़्फ़ार इन महीनों में हमला करें तो मुदाफ़िआ़ना क़िताल की मुसलमानों को भी इजाज़त है। जैसा कि एक रिवायत हज़रत जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह

(रज़ि०) की है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) किसी हुरमत वाले महीने में उस वक़्त तक क़िताल न करते थे जब तक क़िताल की शुरुआत कुफ़्फ़ार की तरफ़ से न हो जाए।"

जो इस आयत में इर्शाद फ़रमाया गया वह यह कि माहे हराम में जंग करना बुरा है, लेकिन इस से भी ज़्यादा बुरी वह बातें हैं और वह गुनाह बड़े और सख़्त हैं जो ख़ुद कुफ़्फ़ार करते हैं तो कुफ़्फ़ार ख़ुद अपनी हालत पर नज़र नहीं करते और मुसलमानों की एक ग़लती पर जो अन्जाने में हो गई तान व तश्नीअ़ की बौछार कर रहे हैं और मुसलमानों के माहे रजब में जंग करने के मुक़ाबिले में कुफ़्फ़ार के बड़े और सख़्त गुनाह यहाँ इस आयत में पाँच बतलाए गये हैं।

1- 'सद्दू अ़न् सबीलिल्लाह'-

(अल्लाह की राह से रोकना) यानी लोगों को इस्लाम (दीने हक़) क़ुबूल करने से रोकना और जो इस्लाम क़ुबूल कर लें उन्हें सख़्त तक्लीफ़ें पहुँचाना। इसी तरह मक्का से अहले इस्लाम निकलने का इरादा करते तो मक्का के काफ़िर उन्हें रोकते।

2- 'कुफ़्रुम् बिहि'-

(अल्लाह से कुफ़्र करना) यानी अल्लाह की हस्ती और सिफ़ात का इन्कार करना।

3- 'मस्जिदे हराम यानी ख़ान-ए-कअ़बः'-

अल्लाह का घर जो अ़िबादत के लिए है, कुफ़्फ़ार मुसलमानों को इस में दाख़िल होने और अ़िबादत करने से रोकते थे।

4- 'इख़्राजु अहलिहि मिन्हु'-

(यानी मक्का वालों को वहाँ से निकाल देना)- कुफ़्फ़ारे मक्का ने दीने हक़ को क़ुबूल करने वालों पर इतनी सख़्तियाँ और ज़ुल्म व ज़्यादती की कि बेचारे मज़लूम मुसलमानों को वहाँ से निकलने पर मजबूर कर दिया और उन को घर-बार छोड़ कर हिज्रत करनी पड़ी।

5- 'वला यज़ालूना युक़ातिलूनकुम'-

(यानी कुफ़्फ़ार तो तुम से हमेशा लड़ते ही रहेंगे यहाँ तक कि तुम को तुम्हारे दीन इस्लाम से फेर दें।) यानी अगर उन के अख़्तियार और क़ाबू में हो तो तुम को फिर दोबारा काफ़िर बना लें। यानी कुफ़्फ़ारे मक्का जिन्होंने अहले इस्लाम के अन्जाने में रजब में क़िताल करने पर तान किया था उन को कहा गया कि तुम ख़ुद अपनी हालत को देखो कि कैसे बुरे हो! इन पाँच गुनाहों में मुब्तिला हो जो इस अन्जाने क़त्ल से बहुत बढ़ा हुआ है।

मुरतद (Apostate) का हुक्म

आयत के आख़िर में इस्लाम क़ुबूल कर लेने के बाद कुफ़्र और इरतिदाद अख़्तियार करने वालों के लिए हुक्म फ़रमा कर अहले इस्लाम को होशियार कर दिया गया है कि अगर कोई कुफ़्फ़ार व मुशिरकीन के कहने सुनने से अपने दीने ह़क़ यानी इस्लाम से फिर जाओगे और फिर तौबः के बग़ैर कुफ़्र ही पर मर जाओगे तो उस के आ़माल दुनिया और आख़िरत में सब बर्बाद हो जाएँगे। मुरतद के दुनिया में आ़माल ज़ाया होने से यह मुराद है कि इस्लाम की वजह से जो जान व माल मह़फ़ूज़ थे वह मह़फ़ूज़ न रहेंगे, मुसलमान बीवी उस के निकाह़ से निकल जाएगी, मुसलमान की मीरास से उस को ह़िस्सा नहीं मिलेगा मरने के बाद अहले इस्लाम उस के जनाज़ा की न नमाज़ पढ़ेंगे, न मुसलमानों के क़ब्रस्तान में दफ़्न हो सकेगा और आख़िरत में आ़माल का ज़ाया होना यह है कि किसी नेक अ़मल पर कोई सवाब नहीं मिलेगा और हमेशा के लिए जहन्नम की सज़ा होगी कि उसे कभी भी जहन्नम से निकलना नसीब न होगा।

मुरतद की सज़ा-

मुरतद अ़निल् इस्लाम (इस्लाम से फिर जाने) की सज़ा क़त्ल है मर्द के लिए, और अगर औ़रत है तो उ़म्र क़ैद की सज़ा दी जाएगी यानी हमेशा क़ैद ख़ाने में बन्द रहेगी।

सह़ाबा को जब यह इत्मिनान हो गया कि हमारी इस ग़लती पर कोई पकड़ नहीं तो रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्मत में अ़र्ज़ किया, "या रसूलल्लाह! क्या हमारा यह सफ़र जिहाद में शुमार होगा और क्या इस पर हम को सवाब मिलेगा?" इस पर अगली आयत नाज़िल हुई जिस में सह़ाबा-ए-किराम को ख़ुशख़बरी दी गई है कि उन्हें अल्लाह की रह़मत से ज़रूर ह़िस्सा मिलेगा।

218 إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَالَّذِينَ هَاجَرُوا وَجَاهَدُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ أُولَٰئِكَ يَرْجُونَ رَحْمَتَ اللَّهِ ۚ وَاللَّهُ غَفُورٌ رَحِيمٌ

अल्लाह की रह़मत-

पिछली आयत के नुज़ूल से उन मुहाजिरीन सह़ाबा-ए-किराम (रज़ियल्लाहु अ़न्हुम) को यह तो मालूम हो गया कि ह़राम महीने यानी माहे 'रजब' में अन्जाने से जो एक मुश्रिक का क़त्ल हो गया था उस पर उन को कोई गुनाह नहीं हुआ, मगर फिर भी उन लोगों को यह तरद्दुद था कि मालूम नहीं इस जिहाद का सवाब भी मिलता है या नहीं। तो उन मुहाजिरीन सह़ाबा-ए-किराम की बशारत और तसल्ली के लिए इस आयत का नुज़ूल हुआ जिस में बताया गया कि जो लोग ईमान लाए और हिजरत की और अल्लाह के वास्ते दीन के दुश्मनों से लड़े, अपनी कोई ग़र्ज़ इस में न थी वह बेशक अल्लाह की रह़मत के उम्मीद और सवाब के ह़क़्दार हैं और अल्लाह तआ़ला ऐसे मुख़्लिसीन को अपनी रह़मत से मह़रूम नहीं रखते, इस आयत में इर्शाद होता है-

"ह़क़ीक़त में जो लोग ईमान लाए हों और जिन लोगों ने ख़ुदा की राह में तर्के वतन

किया हो यानी हिजरत की हो ऐसे लोग तो रहमते ख़ुदावन्दी के उम्मीदवार हुआ करते हैं यानी तुम लोगों में यह सिफ़ात ईमान व हिजरत की मौजूद हैं। अब रहा इस जिहाद ख़ास का सवाब सो चूंकि तुम्हारी नियत तो जिहाद ही की थी, लिहाज़ा हमारे नज़्दीक वह भी जिहाद ही शुमार है। फिर उन सिफ़ात के होते हुए तुम क्यों नाउम्मीद होते हो और अल्लाह तआला इस ग़ल्ती को माफ़ कर देंगे और तुम पर रहम फ़रमाएँगे।"

इस आयत के नाज़िल होने के बाद वह माले ग़नीमत, जो हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन जहश (रज़ि०) मदीना मुनव्वरह लाए थे और जो अभी तक उसी तरह वह्य के इन्तिज़ार में रखा हुआ था, आयत के नाज़िल होने के बाद रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने ख़ुमुस अर्थात (पाँचवाँ हिस्सा) निकाल कर बक़िया तक़्सीम कर दिया।

आयत के अख़ीर में وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ फ़रमाया और मग़्फ़िरत के साथ रहमत का ज़िक्र करके ईमान वालों को मज़ीद इत्मिनान दिला दिया कि ग़ल्ती की माफ़ी के साथ-साथ इस जिहाद में अज्र व सवाब भी मिलेगा।

मगर यहाँ यह भी क़ाबिले ग़ौर है कि यह बशारत ईमान वालों को उस हिज्रत और जिहाद पर दी गई है जो **'फ़ी सबीलिल्लाह'** हो, न कि आम तर्के वतन और जंग व क़िताल पर। यानी हिजरत व जिहाद बजाय ख़ुद कैसे ही मुजाहिदा सही, लेकिन अल्लाह तआला के यहाँ क़ुबूल तभी होगा जब कि ख़ुदा की राह में हो और दीने ख़ुदा के वास्ते से हो, इख़्लास के साथ केवल अल्लाह के वास्ते हो। वतन, क़ौम, मुल्क व नस्ल के नाम पर जानें देने वाले और बड़ी से बड़ी मुसीबतें झेल जाने वाले, क़ुर्बानी देने वाले तो हर क़ौम में मिल जाएँगे, मगर **'फ़ी सबीलिल्लाह'** की सिफ़ात से खाली हों तो इस्लाम में और दीन में उन का कोई हिस्सा नहीं।

जिहाद-

'जिहाद' के माने 'जुहद' कोशिश करने के हैं, शरीअ़त में इस का मतलब है, एला-ए-कलिमतुल्लाह (यानी अल्लाह का बोल-बाला करने) के लिए कोशिश। अगर यह मक़्सूद न हो बल्कि केवल माल व ज़र मत्लूब हो या हक़ व बातिल से वतन और क़ौम की हिमायत मक़्सूद हो, या अपनी बहादुरी और शुजाअ़त का इज़्हार मन्ज़ूर हो तो अल्लाह और उस के रसूल के नज़्दीक वह जिहाद नहीं। जिहाद तो वह है कि जो केवल अल्लाह की रज़ा और ख़ुशनूदी के लिए हो, दुनियावी और नफ़्सानी ग़र्ज़ से पाक हो।

'बुख़ारी' और 'मुस्लिम' में हज़रत उ़मर फ़ारूक़ (रज़ि०) से रिवायत है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया कि तमाम अ़मलों की बुनियाद नियतों पर है। जिस शख़्स ने जिस चीज़ की नियत की वही उस को मिलेगा। जिस ने अल्लाह और रसूल की तरफ़ हिजरत की नियत की, उस की हिजरत अल्लाह और रसूल ही के लिए होगी और जिसने दुनिया हासिल करने या किसी औ़रत से निकाह करने

के लिए हिजरत की उस की हिजरत उसी काम के लिए होगी।

बाज़ रिवायत में आया है कि एक शख़्स ने एक औरत के वास्ते जिस का नाम 'उम्मे क़ैस' था, मदीना की तरफ़ हिजरत की। सहाबा ने यह हाल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से बताया तो उस वक़्त रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने यह हदीस इर्शाद फ़रमाई ऐसी हिजरत का कोई सवाब नहीं, जो ख़ालिस नियत से न हो और नियत दिल के इरादे का नाम है। हिजरत दीन में बहुत आला अिबादत है, लेकिन बिना ख़ालिस नियत के और 'फ़ी सबीलिल्लाह' न होने के उस की कुछ हक़ीक़त नहीं। इसी तरह दूसरी अिबादात को क़यास करना चाहिए कि अगर केवल अल्लाह के वास्ते है तो सही है वरना बेरुह समझना चाहिए। इमाम शाफ़ई (रह०) से रिवायत है कि इस हदीस को दीन में कस्रत से यानी हर जगह दख़्ल है। अिबादात, मामलात, आदात, मुबाहात, बग़ैर सही नियत के कोई अमल व अिबादात में सवाब नहीं।

जिहाद की तीन क़िस्में-

क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में लफ़्ज़ 'जिहाद' जिस माने में इस्तेमाल हुआ है और क़ुर्आन व हदीस में जिस का अज्र व सवाब बयान किया गया है उस जिहाद की तीन क़िस्में 'फ़ी सबीलिल्लाह' में शामिल हैं उस की तशरीह करते हुए उलमा ने लिखा है कि जिहाद की तीन क़िस्में हैं।

1- एक खुले दुश्मन का मुक़ाबला।

2- दूसरे शैतान और उस के पैदा किये हुए ख़यालात का मुक़ाबिला।

3- तीसरे खुद अपने नफ़्स की नाजायज़ ख़्वाहिशात का मुक़ाबला।

खुलासा यह है कि "जो चीज़ भी अल्लाह तआला की फ़रमाँबरदारी के रास्ते में रुकावट हो उस का मुक़ाबिला जिहाद है" और यह रुकावट आदतन नहीं तीन तरीक़ों से होती है इसलिए जिहाद की तीन क़िस्में हो गईं। इमाम राग़िब (रह०) ने तीन क़िस्में बयान करने के बाद फ़रमाया कि इर्शादे क़ुर्आनी **'वजाहिदू फ़िल्लाहि हक़्क़ा जिहादिही'** (यानी जिहाद करो अल्लाह की राह में पूरा जिहाद) यह जिहाद की तीनों क़िस्मों को शामिल है।

ख़्वाहिशात का मुक़ाबिला-

बाज़ रिवायात हदीस में नफ़्स की नाजायज़ ख़्वाहिशात के मुक़ाबिला को इसीलिए जिहाद क़रार दिया है क्योंकि क़ुर्आने करीम की कई आयतों में जिहाद के लिए माल ख़र्च करने को भी जिहाद फ़रमाया है।

एक हदीस में ज़बान के जिहाद को भी जिहाद क़रार दिया है और क़लम चूंकि अदा-ए-मज़मून में ज़बान ही के हुक्म में है, इसलिए क़लमी दिफ़ाअ को भी उलमा ने जिहाद में शामिल फ़रमाया है।

उलम-ए-उम्मत ने हदीस **'इन्नमलू आमालु बिन्नियात'** कि आमाल का मदार नियतों पर है उस को एक चौथाई इस्लाम क़रार दिया है क्योंकि इस्लामी तअलीमात का बड़ा हिस्सा इस पर क़ायम है। वह आलिम जो दुनिया की शोहरत और नाम व नमूद के लिए इल्मी ख़िद्मात अन्जाम देता है, या वह ग़ाज़ी जो जिहाद में शोहरत व इनआम के लिए जांबाज़ी करता और शहीद हो जाता है, और वह शख़्स जो

नाम व नमूद के लिए दीनी ख़िद्मात में बड़ी फ़य्याज़ी से माल ख़र्च करता है इन तीनों के सम्बन्ध में सही ह़दीस में रसूलुल्लाह (सल्ल०) का इर्शाद है कि उन को क़ियामत के रोज़ यह कह कर जहन्नम में डाल दिया जाएगा कि तूने जिस मक़्सद के लिए इ़ल्म दीन को इस्तेमाल किया या जिस मक़्सद के लिए जान दी या जिस मक़्सद के लिए माल ख़र्च किया वह मक़्सद तुझे दुनिया में मिल गया कि लोगों में तेरे आ़लिम होने की शोहरत हुई या तुझे ग़ाज़ी और शहीद के नाम से पुकारा गया या माल ख़र्च करने की बिना पर तुझे सख़ी और फ़य्याज़ कहा गया, जो मक़्सद तेरा था वह मिल गया अब यहाँ हम से क्या चाहते हो।

219 يَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ ۭ قُلْ فِيْهِمَآ اِثْمٌ كَبِيْرٌ وَّمَنَافِعُ لِلنَّاسِ ۡ وَاِثْمُهُمَآ اَكْبَرُ مِنْ نَّفْعِهِمَا ۭ وَيَسْـَٔلُوْنَكَ
مَاذَا يُنْفِقُوْنَ ڛ قُلِ الْعَفْوَ ۭ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ الْاٰيٰتِ لَعَلَّكُمْ تَتَفَكَّرُوْنَ ۝

शराब और जुए की मुमानियत-

आयत के इस ह़िस्से में सह़ाबा (रज़ि०) का सवाल ख़म्र और मैसिर यानी शराब और जुए के सम्बन्ध में था, जिस का जवाब अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से यहाँ दिया गया।

ख़म्र के लफ़्ज़ी माने किसी चीज़ को ढ़ांप लेना है। दुपट्टा या ओढ़नी को ख़म्र इसीलिए कहते हैं कि वह सर को ढ़ांप लेती है। शराब को ख़म्र इसी लिए कहा गया कि इस से इन्सानी अ़क़्ल पर पर्दा पड़ता है और इन्सान के ह़वास दुरुस्त तौर पर बाक़ी नहीं रहते।

मैसिर (क़िमार या जुवा) यह लफ़्ज़ अपने वसीअ़ माने में आया है और जुए की तमाम क़िस्मों पर ह़ावी है, चाहे वह किसी सूरत और किसी नाम से हो।

इस्लाम से पहले अ़रब में मुद्दतों से शराब और जुए का आ़म दस्तूर और रिवाज था। अहले अ़रब इन दोनों चीज़ों के बहुत ज़्यादा दिलदादह थे, हर छोटा-बड़ा इतना शराब पीता था कि यानी शराब उन की घुट्टी में पड़ी हुई थी और जुए की क़िस्मों का भी कोई शुमार न था, पूरे अ़रब में चन्द लोग ही इस से मह़रूम रहे होंगे। जब नबी करीम (सल्ल०) हिज्रत फ़रमा कर मदीना तशरीफ़ लाए तो अहले मदीना में भी शराब व क़िमार का रिवाज था। कुछ सह़ाबा-ए-किराम को इस के ग़ल्ती का ज़्यादा एह़सास हुआ और ह़ज़रत उ़मर फ़ारूक़ (रज़ि०), ह़ज़रत मुआ़ज़ बिन जबल और चन्द अन्सारी सह़ाबा ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ख़िद्मत में ह़ाज़िर हुए और अ़र्ज़ किया कि शराब और जुआ इन्सान की अ़क़्ल को ख़राब करते हैं और माल भी बर्बाद करते हैं, उन के बारे में आप का क्या इर्शाद है?

पहला क़दम-

सह़ाबा के सवाल के जवाब में यह आयत नाज़िल हुई। यह पहली आयत है जिस में शराब और जुए से मुसलमानों को रोकने का पहला क़दम उठाया गया। इस आयत में शराब और जुए को साफ़ तौर पर ह़राम तो नहीं कहा गया, मगर इस की ख़राबियाँ और नुक़्सानात ज़ाहिर कर के गोया उस को छोड़ने के लिए एक तरह़ का मश्वरह दिया गया।

शराब के नुक़्सानात-

यहाँ इस आयत में यह तो नहीं कहा गया कि इन दोनों चीज़ों का इस्तेमाल गुनाह है बल्कि यह बताया गया कि इन के इस्तेमाल से दूसरी बातें गुनाह की पैदा हो जाती हैं। जैसे- शराब से अ़क़्ल खो जाती है, सेह़त बर्बाद हो जाती है, गन्दग़ी की तरफ़ रुझान होता है, ह़राम कारी की तरफ़ तबीअ़त मायल होती है और जुए से माल की ह़िर्स व मुह़ब्बत बढ़ जाती है जो अस्ल जड़ है तमाम ख़राबियों की। यह दोनों इन्सान की माली ह़ालत को तबाह कर देते हैं अगरचे उन में कुछ दुनियवी फ़ायदे भी साथ लगे हुए हैं। जैसे- बदन को कुछ नफ़ा पहुँचे या एक तरह़ की वक़्ती राह़त ह़ासिल हो या उस की ख़रीद व फ़रोख़्त से तिजारती नफ़ा हो। इसी तरह़ जुए में मुम्किन है जीत हो जाए और बिना मेह़नत माल हाथ लग जाए लेकिन इन फ़ायदे के मुक़ाबिले में नुक़्सानात कहीं ज़्यादा हैं। यूँ तो ज़ाहिरी नफ़ा और नुक़्सान से दुनिया की कोई चीज़ ख़ाली नहीं, लेकिन नफ़ा और नुक़्सान को तौलना चाहिए। अगर नुक़्सान ज़्यादा है तो उस चीज़ को छोड़ देना चाहिए, चाहे कुछ फ़ायदे का पहलू भी इस में हो, और जिस चीज़ में नफ़ा हो उस को ले लेना चाहिए चाहे उस में कुछ ह़र्ज व नुक़्सान हो।

तो यहाँ मक़्सद इस आयत से इन दोनों चीज़ों की बुराई बयान करना नहीं था, बल्कि दूसरी ख़राबियों का ज़रिया बतलाना था और इस तरह़ इन दोनों के छोड़ने का मश्वरह दिया गया। अतः इस आयत को सुनकर कुछ सह़ाबा ने तो फ़ौरन दोनों को छोड़ दिया कि ह़राम नहीं कहा गया, मगर बुराई और गुनाह का ज़रिया तो साबित ही हुआ और कुछ ने ख़याल किया कि इस आयत ने शराब को ह़राम तो नहीं किया इसलिए हम इस का एहतिमाम करेंगे कि इस से बुराई न हो तो फिर शराब में कोई हर्ज नहीं। इसलिए इस आयत के नुज़ूल के बाद भी कुछ लोग शराब इस्तेमाल करते रहे।

इस के बाद मदीना में एक रोज़ यह वाक़िआ़ पेश आया कि ह़ज़रत अ़ब्दुर्रह़मान बिन औ़फ़ (रज़ि०) ने सह़ाबा-ए-किराम में से अपने कुछ दोस्तों की दअ़वत की, खाने के बाद शराब पी गई। इसी ह़ाल में नमाज़ मग़्रिब का वक़्त आ गया सब नमाज़ के लिए खड़े हो गये। एक साह़ब को इमाम बनाया, उन्होंने नशे की ह़ालत में जो तिलावत शुरु की तो सूरः قُلْ يَاأَيُّهَا الْكَافِرُونَ को ग़लत पढ़ा। इस वाक़िआ़ के बाद यह आयत नाज़िल हुई يَاأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَقْرَبُوا الصَّلَاةَ وَأَنْتُمْ سُكَارَىٰ (सूरः निसा-43)

ऐ ईमान वालों! तुम नशे की ह़ालत में नमाज़ के पास न जाओ। इस हुक्म से नमाज़ के वक़्त केवल शराब की मुमानिअ़त कर दी गई।

शराब को मुकम्मल रोकने का सबब-

नमाज़ के अ़लावा बाक़ी वक़्तों में शराब पीने की इजाज़त रही। कुछ सह़ाबा ने यह ख़याल करके कि जब नशे की ह़ालत में नमाज़ की मुमानिअ़त हो गई तो ऐसी चीज़ के पास न जाना चाहिए जो इन्सान को नमाज़ से मह़रूम कर दे, दूसरे वक़्तों में नमाज़ के शराब की हुरमत साफ़ तौर पर नाज़िल नहीं हुई थी इसलिए कुछ लोग अब भी नमाज़ के अ़लावा दूसरे वक़्तों में पीते रहे यहाँ तक कि एक और वाक़िआ़

पेश आया कि कुछ सहाबा-ए-किराम की एक जगह दअ़वत हुई। खाने के बाद जब दस्तूर के अनुसार शराब का दौर चला और नशे की हालत में शेर व शायरी शुरु हुई जिस में आपस में तक्रार की नौबत आई और एक अन्सारी नौजवान ने गुस्से में एक दूसरे सहाबी के सर पर ऊँट के जबड़े की हड्डी मारी जिस से उन को बड़ा ज़ख़्म आ गया और उन्होंने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से आकर शिकायात की, उस वक़्त हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने दुआ फ़रमाई, "या अल्लाह शराब के बारे में हमें कोई वाज़ेह बयान और क़ानून अ़ता फ़रमा दे।" इस पर शराब के विषय में सूरः माइदा की यह आयत नाज़िल हुई जिस में शराब को बिल्कुल हराम क़रार दे दिया गया।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّمَا الْخَمْرُ وَالْمَيْسِرُ وَالْاَنْصَابُ وَالْاَزْلَامُ رِجْسٌ مِّنْ عَمَلِ الشَّيْطٰنِ فَاجْتَنِبُوْهُ
لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝ اِنَّمَا يُرِيْدُ الشَّيْطٰنُ اَنْ يُّوْقِعَ بَيْنَكُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَآءَ فِي الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ وَيَصُدَّكُمْ
عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ وَعَنِ الصَّلٰوةِ ۚ فَهَلْ اَنْتُمْ مُّنْتَهُوْنَ ۝

"ऐ ईमान वालों! शराब और जुआ और बुत और पाँसे तो बस निरी गन्दी बातें हैं शैतान के कामों में से हैं सो इन से बचे रहो ताकि तुम कामियाब हो। शैतान तो बस यही चाहता है कि तुम्हारे दर्मियान आपस में दुश्मनी और बुग्ज़, शराब और जुए के ज़रिये से डाल दे और तुम्हें अल्लाह की याद और नमाज़ से रोक दे तो क्या अब भी तुम बाज़ न आओगे।"

शराब की हुरमत-

इन आयतों में साफ़-साफ़ शराब की हुरमत और मुमानिअ़त नाज़िल हो गई और यही आख़िरी हुक्म रहा और पहले एह्काम को मन्सूख़ कर दिया। इन आयात के नाज़िल होते ही शराब के तमाम बर्तन तोड़ दिये गये, मदीना के गली-कूचों में शराब बहने लगी और तमाम मुसलमानों ने शराब से तुरन्त तौबः ही नहीं की बल्कि बेज़ार और सख़्त नफ़रत करने लगे। इस तरह ३ हिज्री में इस्लाम में शराब की मुकम्मल बन्दिश हो गई और एक ऐसी बुराई से जो अ़रब की घुट्टी में पड़ी हुई थी हमेशा के लिए निजात मिल गई। इस का तफ़्सीली बयान सूरः माइदा की इन आयतों में होगा। यहाँ सहाबा-ए-किराम के सवाल के जवाब में शराब और जुए के विषय में बयान था। आगे कुछ दूसरे सवालात और जवाबात ज़िक्र फ़रमाए गये है।

शराब एक 'मादक' पदार्थ है जो नशा पैदा करता है। इनके कुप्रभाव बुद्धि और शरीर दोनों पर पड़ते हैं और यह मानव के आध्यात्मिक तथा नैतिक जीवन के लिए ख़तरनाक होने के अ़लावा ख़ानदान, समाज और क़ौम के लिए भयानक तबाही लाते हैं। यद्यपि शराब से थोड़े वक़्त के लिए कुछ फ़ायदा भी पहुँचता है जैसे शरीर में इसके पहुँचने से आदमी अपनी कार्यक्षमता में वृद्धि का आभास करने लगता है और किसी काम को कर गुज़रना उसके लिए आसान सा होता है, किन्तु यह न केवल नैतिकता की दृष्टि से अत्यन्त हानिकारक है बल्कि भौतिकता की दृष्टि से भी यह बड़ी भयानक चीज़ है। नीचे हम "इन्साइक्लोपीडिया आफ़ रेलीजन एण्ड एथिक्स" से कुछ उद्धरण प्रस्तुत करते हैं जिन से शराब के

नुक़्सानात पर प्रकाश पड़ता है।

इस से अन्दाज़ा होगा कि क़ुर्आन से शराब को हराम ठहरा कर इन्सान को किन-किन हानियों, क्षतियों एवं गंदगियों से बचाना चाहा है।

EXTRACTS FROM ENCYLOPAEDIA OF RELIGION AND ETHICS VOL.1. ALCOHAL

When enough alcohol is taken to produce intoxication; judegment, self control, perception, and the other higher faculities are affected first with greater facility in thought and speech, there as in a certain disregard of the environment, a quiet person may become lively and witty unwanted confidences are given and there may be assertiveness and quarrelsomeness, Singing, shouting and other noisy demonstrations indicated the free play of the emotions...Such persons may suffer from an insane or alcholic heredity...An automatic dreamstate, in which complicated, Many criminal actions may be performed quite unconciously is sometimes induced by acute alcohlism. **(P.300)**

Self respect becomes impaired and by selfishness, neglect of wife, childern and other dependents loosning of self control and want of truthfulness, the moral detarioration is signalized. **(P.300)**

It is estimated that in this country (U.K.) alcohol accounts for 100,000 to 120,000 deaths per annum. **(P.301)**

Alchol is a poison for protoplasm.

Large number of psychometric experiments under conditions of the greatest accuracy prove that alchohol in small doses exercise a distinctly paralyzing effect on the working of the brain. **(P.299)**

The amount of work is increased and more easily performed, but after a brief period extending almost to 20 to 30 minutes, there comes a prolonged reaction, so that the total effects is distinctly disadvantageous. **(P.299)**

On the whole experiments show that alcohal does not strengthen the heart but rather the reverse. **(P.300)**

There is universal testimony as to the close relationship between excessive drinking and breaches of the moral law & laws of the state. This is a direct consequence of the higher faculities, intellectual and moral, and the resulting free play given to the lower inclinations. Alcohol cannot only be a direct cause of crime, but it acts powerfully along with other conditions such as hereditary nervous weakness or instability of the brain. **(P.301)**

रसायन विज्ञान के आधार पर यह बात स्पष्ट है कि एल्कोहल (शराब) एक प्रकार से विलायक (जिसमें कोई चीज़ घुले) का काम करती है। ख़ासतौर से वसा (Fat) के लिए यह बहुत अच्छा विलायक (Solvent) है। यह पोषक पर्दाथ (Nutrient) न होकर बल्कि बैक्टीरिया द्वारा शकर (Sugar) को पचाने (Digest) के दौरान पैदा होने वाला अन्य पदार्थ (By-product) है। इस आधार पर यह इन्सानों के लिए

एक हानिकारक (Harmful) पर्दाथ है। यकृत (Liver) इसे फ़ौरन तोड़ने लगता है अर्थात इस के द्वारा उत्पन्न होने वाले कुप्रभाव को ख़त्म करने के लिए इसे तोड़ देता है, जिसे डीटाक्सीफ़िकेशन (Detoxification) कहते हैं। इस का फ़ायदा सिर्फ़ इतना है कि शरीर में पैदा होने वाले कुछ मेटाबोलाइट (Metabolite) को घोल देता है। इसके अनेकों कुप्रभाव हैं जिसमें से कुछ निम्नवत है-

शराब के सेवन से पैदा होने वाली बीमारियों की संक्षिप्त सूची

● यकृत का सूत्रण रोग (Cirrhosis of Liver) यह शराब के सेवन से पैदा होने वाली प्रमुख बीमारी है।

● ग्रासनली (oesophegous) का कैंसर, सिर, यकृत और आंतों आदि का कैंसर।

● Oesophagitis, Gastritis, Pancreatitis, Hepatitis ये सारी बीमारियाँ शराब के सेवन से पैदा हो सकती हैं।

● Cardiomyopathy , Hypertension, Coronary atherosclerosis, Angina और Heart attack पड़ने की संभावना शराब के सेवन से कई गुना बढ़ जाती है।

● Peripheral neuropathy, Cortical Atrophy, Cerebellar Atrophy आदि प्रमुख Syndromes हैं जो शराब की देन हैं।

● शराब के सेवन से शरीर में Thiamine की कमी हो जाती है, जिससे Wernicke–KorsaKoff रोग पैदा होता है, जिससे वर्तमान चीज़ों की स्मरण शक्ति और अतीत की घटनाओं की स्मरण शक्ति का ह्रास हो जाता है तथा अन्य प्रकार के पक्षाघात रोग पैदा हो जाते हैं।

● Beri-Beri, Pellagra आदि बीमारियाँ शराबियों में सामान्य रूप से पाई जाती है।

● Delerium Tremors एक घातक Complication है जो शराब के सेवन करने वालों के बार-बार Infection के बीच या आपरेशन के बाद पैदा होता है। यह बीमारी परहेज़ के दौरान या उसके बाद भी अपना प्रभाव छोड़ती है। अच्छे इलाज के बावजूद भी यह मौत का कारण बन जाती है।

● अनेक Endocrine disorders का संबंध शराब पीने से है। Myxoedema से लेकर Hyperthyroidism तथा Flouride crusting Syndrome तक तमाम बीमारियाँ शराब के दुष्प्रभावों के रूप में प्रकट होती हैं।

● रक्त से सम्बन्धित अनेक बीमारियाँ शराब के सेवन का ही परिणाम हैं। जैसे- Macrocytic anemia, Zeive's syndrome, Jaundice, Hyperlipidemia, Thrombocytopenia आदि।

● Metronidazole (Metrogyl/Flagyl) गोली जिसका आमतौर पर प्रयोग होता है। अगर यह गोली शराब के साथ ली जाए तो Drug Interaction के कारण शरीर के विभिन्न अंगों पर इसके भयावाह दुष्प्रभाव आते हैं।

● शराबियों के शरीर की रोगों से लड़ने की क्षमता (Immunological defense system) कमज़ोर हो जाती है। इसी कारण शराबियों के अन्दर बार-बार Infection का होना आम बात है।

● शराब के नशे में धुत होने के बाद शराब पीने वाला आमतौर पर उल्टी (Vomit) करता है जिसके कारण Cough reflexes जो सुरक्षा की दृष्टि से ज़रूरी होते हैं, उनको बड़ा नुक़्सान पहुँचता है। इस तरह़ कभी-कभी उल्टी फेफड़ों में चली जाती है और वह निमोनिया और Lung Abcess का कारण बनती है। कई बार इसकी वजह से घुटन पैदा होती है जिससे कि आदमी मर जाता है।

EXTRACTED FROM— ***Books of Medicine— Davidson, Kumar & Clarck***
Books of Pathology— Robbins, Harsh mohan
Books of Pharmacology— K. D. Tripathi

पाचन क्रिया पर प्रभाव (Effect on Digestive System)-

इस का सब से पहला दुष्प्रभाव (Harmful-effect) मुँह से ही शुरु हो जाता है। वह यह की मुँह में पाये जाने वाले लार (Saliva) में अनेकों माइक्रो फ़्लोरा (Microflora) पाये जाते हैं, जो मुँह के माहौल में सिंब्योसिस (Symbiosis) का काम करते हैं यह माइक्रोफ़्लोरा शराब की वजह से नष्ट होने लगते हैं, लगातार शराब पीने वालों के मुँह से आने वाली बदबू इन्हीं फ़्लोरा के नष्ट होने के कारण होती है। जब यह फ़्लोरा ख़त्म होने लगते हैं तो मसूढ़ों में अनेक प्रकार का संक्रामक रोग (Infection) हो जाता है। अतः इस बद्बू से ज़ख़्म व ख़ून आने लगता है।

मुँह के बाद गले और भोजन की नाली (Oesophagous) का नम्बर आता है। यह अंग अत्यन्त संवेदनशील (Sensitive) होते हैं। वह भी इसलिए कि इन पर अत्यन्त संवेदनशील (Super-sensitive) म्यूकस की तह (Mucous Membrane) होती है। शराब का सेवन करने से पर्त, प्रभावित होती है। जिस की वजह से गले में जलन की शिकायत होने लगती है। इसके अ़लावह लगातार सेवन से इनमें कैंसर (Cancer) भी हो जाते हैं।

यह बात तो बहुत मशहूर है कि शराब की वजह से गैस्ट्राइटिस (Gastritis) हो जाती है। यह इसलिए होती है कि शराब वसा को अपने अन्दर घोल डालती है चूंकि अमाशय (Stomach) की अन्दुरूनी सतह लिपिड से घिरी होती है जो इसे सुरक्षात्मक तह (Protective layer) प्रदान कराती है लगातार शराब के सेवन से यह लिपिड शराब में घुलने लगते हैं और पेट में बनने वाला हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (Hydrochloric Acid) इस की दीवारों में ज़ख़्म कर देता है जिस की वजह से पेट में अनेकों बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं और पाचन क्रिया बुरी तरह़ प्रभावित होती है।

इस के अ़लावा हम यह भी देखते हैं कि शराबी अन्दर से बड़े ही कमज़ोर हो जाते हैं तो यह इसलिए होता है कि शरीर में वह चीज़ें जिससे ख़ून बनता है वह यकृत में नहीं बन पाता, यदि हमें इनके बाहरी भाग बहुत ही बेहतर क्यों न समझ में आएँ पर ये अन्दर से बहुत कमज़ोर हो जाते हैं और हड्डियों में पाये जाने वाला गूदा (Bone Marrow) काफ़ी कम हो जाता है। इसकी नसों में लिपिड के जमने की वजह से ही बाहर से ख़ून से भरी नज़र आती है। चूंकि यकृत में ही इमियुनो ग्लोबुलिन (Immunoglobulin)

बनता है जो शरीर को सुरक्षा प्रदान करता है, शराबियों में इसका बनना कम हो जाता है। इसलिए यह तमाम संक्रमण (Infection) का शिकार हो जाते हैं। कभी-कभी शराबियों के यकृत बुरी तरह़ से प्रभावित हो जाते हैं और ये बेहोश होकर मृत्यु का शिकार हो जाते हैं।

रक्त संचरण पर प्रभाव (Effect on Blood Circulation)

यकृत (Liver) जहाँ अनेकों कार्य करता है उन्हीं में महत्त्वपूर्ण कार्य यह भी है कि यह वसा को तोड़ता है जिसकी वजह से ख़ून में लिपिड की मात्रा नियंत्रित रहती है। शराबियों में यकृत यह महत्त्वपूर्ण कार्य सही ढंग से नहीं कर पाता जिस की वजह से लिपिड नसों के अन्दर की दीवारों पर जमा होकर इसे सख़्त कर देती है। लिपिड के जमने से नसों का सुराख़ (Arterial Lumen) कम हो जाता है। इसलिए दिल पर अतिरिक्त (Extra) बल पड़ता है जिस से रक्त चाप बढ़ जाता है जिसे (Hypertension) हाइपरटेन्शन कहते हैं। इस की वजह से शरीर में बीमारियों की श्रृंखला (chain) शुरु हो जाती है। इसके अ़लावा दिल की मांसपेशियँा भी प्रभावित होती हैं। एल्कोहल (Alcohol) चूंकि जल्द ही जल जाता है इसलिए ख़ून का बहाव भी इस से प्रभावित होता है। अक्सर यह देखा गया है कि शराबी की मौत या तो यकृत (Liver) की खराबी या हार्ट अटैक (Heart Attack) से होती है।

कुछ लोगों का यह भी सोचना है कि अगर थोड़ा पिये तो क्या ख़राबी है। मालूम होना चाहिए कि गुर्दे जो कि ख़ून के सफ़ाई के आख़िरी अंग हैं एक बहुत ही संवेदनशील (Sensitive) रासायनिक प्रक्रिया से कार्य करते हैं यह एक मानी हुई बात है कि शराब की कम मात्रा इस संवेदनशील प्रक्रिया को बर्बाद कर देती है। इसलिए देखा गया है कि अक्सर शराब पीने वालों के गुर्दे ख़राब हो जाते हैं।

Effect on Nervous System

एल्कोहल न्यूरान में प्रवेश कर जाते हैं क्योंकि इस की बाह्य पर्त (External Layer) लिपिड से बनी होती है और एल्कोहल लिपिड को आसानी से पार कर जाता है। इस के कारण संवेदना (Impulse) को आगे बढ़ने में पेरशानी होती है। शराब इन कोशिकाओं को बहुत प्रभावित करती है जिस की वजह से कई अन्य बीमारियँा हो जाती हैं। इस के असर से बच्चे और जवान बेहद प्रभावित होते हैं। जिस से अनेकों बीमारियँा हो जाती हैं। जैसे- शब्दों का भूलना (Amnesia) कपकपी (Tremor) कोर्सकोन सिन्डरोम (Korsakoff syndrome) आदि।

शराब के सेवन का बुरा प्रभाव जननाँगो पर भी पड़ता है। शराब के सेवन से मर्द नपुंसकता (Infertility) का शिकार हो सकते हैं। औरतें यदि गर्भावस्था में शराब का सेवन करें तो गर्भ को बहुत नुक़्सान पहुँचता है। Foetal Alcohal syndrome चिकित्सा क्षेत्रों में एक ज्ञात तथ्य है।

सामाजिक प्रभाव (Social Effect)

यह बात तो बिलकुल साफ़ है कि किस प्रकार शराब पीकर लोग सब से पहले अपने को और इस

के बाद अन्य लोगों को अपनी चपेट में ले लेते हैं।

1- शराबी को बहुत जल्द गुस्सा आता है जिस की वजह से समाज में दूसरों को प्रभावित करता है।

2- शराब के आदी (Habitual) लोगों को शराब मिलना ही चाहिए चाहे इसके लिए उन्हें अपराध ही क्यों न करना पड़े, इसलिए कई बार चोरी, डकैती, राहजनी आदि के समाचार सुने जाते हैं।

3- शराबियों में अ़जीब सी सुस्ती, काहिली व कमज़ोरी आ जाती है, अतः इन के कार्य प्रभावित होते हैं।

4- शराब की वजह से आपस में हमदर्दी ख़त्म हो जाती है जिसकी वजह से पूरा समाज प्रभावित होता है।

5- शराबी कई अन्य अपराधों को करता है उन में एक नशे की ह़ालत में गाड़ी चलाना बहुत अहम है और पश्चिमी देशों में यह बहुत साधारण सी घटना बन गई है।

इसलिए यह बात अब पूरी तरह़ समझ में आ सकती है कि शराब को क्यों अल्लाह पाक ने ह़राम क़रार दिया है। वास्तव में अल्लाह ने इस पर पाबन्दी लगाकर इन्सानियत पर बड़ा रह़म किया है।

जुआ नैतिक और आर्थिक हानियों एवं नुक़्सानात के आधार पर हराम ठहराया गया है। इसके नुक़्सान निम्न हैं।

(1) जुआ इन्सान को भाग्य एवं संयोग और केवल आरज़ुओं पर भरोसा करना सिखाता है। व्यवहारिक प्रयत्न, परिश्रम, एवं संघर्ष तथा उन साधनों पर भरोसा करना नहीं सिखाता जिन्हें अल्लाह ने उसके लिए ही पैदा फ़रमाया है और उसे अपनाने का आदेश दिया है। इस्लाम चाहता है कि इन्सान फल को उचित साधनों एवं प्रयत्नों द्वारा प्राप्त करे।

(2) जुआ लोगों का माल अवैध तरीक़े से खाने जैसा है।

(3) इस से जुआ खेलने वालों के बीच में विद्वेषएवं शत्रुता फैलती है, हारने वाला य़द्यपि ख़ामोशी अपनाता है मगर उसकी ख़ामोशी द्ववेषएवं क्रोध से भरी होती है।

(4) जुए का शौक़ किसी व्यक्ति के लिए ही नहीं, समाज के लिए भी ख़तरनाक है। जुआरी अपनी आत्मा और अपने परिवार की ज़िम्मेदारियों की तरफ़ से बेपरवाह हो जाता है। ऐसे लोगों से कुछ भी सम्भव है। वे अपने दीन अपनी इ़ज़्ज़त और अपने देश को भी स्वार्थ के लिए बेच सकते हैं।

(5) क़ुर्आन ने शराब और जुए को एक जगह रख कर इस वास्तविकता को दर्शाया है कि दोनों चीज़ें, व्यक्ति, परिवार, देश और नैतिकता (अख़्लाक़) सब के लिए समान रूप से हानिकारक है। जुआरी का मामला शराबी से बहुत मिलता-जुलता है, बल्कि बहुत कम ऐसा होता है कि एक का अस्तित्व दूसरे के बग़ैर पाया जाए। **(यूसुफ़ क़रज़ावई की इस्लाम में ह़लाल और ह़राम में का सारांश, पृष्ठ 374)**

EXTRACTS FROM ENCYCLOPAEDIA OF RELIGION AND ETHICS VOL. GAMBLING

On the Aryan races gambling has a speacial hold. A famous hymn of the Rigveda (x34) vividly sets forth the woe of the ruined gambler, and the length to which gambling was carried in India is well illustrated by the episode of Nala and Damyanti in the

Mahabharata (iii 59-61) where the prince loses all that he has...... Sanskrit Literature abounds in allusions to the evils of play. **(P.64)**

The vicious tendency of gambling has never been called in question. Lord beaconsfield spoke of it as a vast engine of national demoralisation . **(P.166)**

The economic aspect needs no discussion. Gambling add nothing to the wealth to the community. **(P.166)**

Though it is in society that the temptation comes, gambling itself is anti-social it is as ***Herbert Spencer says***, It is a kind of action by which pleasure is obtained at the cost of the pain to another. The happiness of the winner implies the misery of the loser. This kind of action therefore is essentially anti-social, it scars the sympathies, cultivates a hard ego-ism, and so produces a general detarioration of character, it is habit intrinsically savage....in an atmosphere of brotherhood no form of gambling could exist. **(P.166)**

There are only three ways in which property can be legitimately acquired by gift, by labour, and by exchange. Gambling stands outside all of these.

Its motive is however carefully disguised covetousness. It is an attempt to get prop-erty without paying the price for it. It is violation of law of eqvivalents. It is kind of robbery by mutual agreements, but it is still robbery, just as duelling which is murder by mutual agreement is still treated as murder. It is begotten of convetousness, it leads to idleness, it is moreover an appeal to chance it concentrates attention upon luck and threby withdraws, attention from worthier objects of life.

इस सूरः में सहाबा-ए-किराम (रज़ि०) के सवालात और उन के जवाबात का जो सिलसिला चल रहा है, वह पिछली आयत में शराब और जुए के सवाल के सम्बन्ध में अल्लाह तआला की तरफ़ से इस का जवाब था। इसी सिलसिले में कुछ आयात पहले सहाबा-ए-किराम का सवाल وَيَسْـَٔلُونَكَ مَاذَا يُنفِقُونَ ۖ पहले भी गुज़र चुका है और इन्हीं अल्फ़ाज़ के साथ फिर वही सवाल यहाँ दोहराया गया है। लेकिन इस एक ही सवाल का जवाब पहले कुछ और दिया गया था और अब इस आयत में कुछ और दिया गया है।

इसलिए पहले यह समझ लिया जाए कि एक ही सवाल के दो मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) जवाब किस हिक्मत की वजह से हैं और यह हिक्मत उन हालात व वाक़िआत में ग़ौर करने से वाज़ेह (स्पष्ट) हो जाती है, जिन हालात में यह आयत नाज़िल हुई हैं।

पिछला सवाल وَيَسْـَٔلُونَكَ مَاذَا يُنفِقُونَ ۖ का शाने नुज़ूल (Cause of Revelation) यह था कि कुछ सहाबा-ए-किराम ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से यह सवाल किया था कि हम अपने मालों में से क्या ख़र्च करें और कहाँ ख़र्च करें? इस सवाल के दो हिस्से थे, एक यह कि माल में से क्या और कितना ख़र्च करें और दूसरे यह कि इस को कहाँ ख़र्च करें, किन लोगों को दें? इसलिए इसका जवाब यह था कि जो कुछ भी तुम को अल्लाह के लिए ख़र्च करना हो उस के हक़दार माँ-बाप, रिश्तेदार, यतीम, मिस्कीन और मुसाफ़िर हैं और जो कुछ भी तुम ख़र्च करोगे अल्लाह तआला को उस की खूब ख़बर है। यानी अल्लाह तआला की तरफ़ से तुम पर कोई पाबन्दी नहीं कि माल की उतनी ही मिक़्दार ख़र्च करो बल्कि जो कुछ

भी अपनी क्षमता के मुताबिक़ ख़र्च करोगे, अल्लाह तआला के पास उस का अज्र सवाब पाओगे।

लेकिन इस आयत का शाने नुज़ूल यह है कि जब कुर्आन में मुसलमानों को इस का हुक्म दिया कि अपने माल, अल्लाह तआला की राह में ख़र्च करें तो कुछ सहाबा-ए-किराम हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की ख़िद्मत में हाज़िर हुए और अर्ज़ किया कि 'इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह' का हुक्म जो हमें मिला है हम उस की वज़ाहत (व्याख्या) चाहते हैं कि कौन सा माल और कौन सी चीज़ अल्लाह की राह में ख़र्च किया करें? एक रिवायत में है कि हज़रत मुआज़ बिन जबल (रज़ि०) और हज़रत सअ्लबा (रज़ि०) रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्मत में आये और अर्ज़ किया कि हुज़ूर हमारे गुलाम भी हैं, बाल बच्चे भी हैं और हम मालदार भी हैं। अल्लाह तआला अपने बन्दों को अपनी राह में ख़र्च करने का हुक्म देता है तो बताइये कि हम ख़ैर-ख़ैरात में कितना ख़र्च किया करें कुछ अल्लाह की राह में दें? यानी यहाँ सवाल यह था कि हम क्या चीज़ और कितना माल ख़र्च करें? इस का जवाब अल्लाह तआला की तरफ़ से इर्शाद हुआ قُلِ الْعَفْوَ अफ़ू की कई तफ़ासीर की गई हैं।

लेकिन सब का ख़ुलासा यह है कि जो चीज़ भी तुम्हारी ज़रूरियात से ज़ायद हो, तुम्हारे ज़िन्दगी की ज़रूरियात से बचने और जिस के ख़र्च करने से ख़ुद परेशान होकर दुनियावी तक्लीफ़ में पड़ जाए या किसी का हक़ ज़ाया करके आख़िरत की तकलीफ़ में न पड़े तो उसे ख़र्च करें।

यह बात सवाल ही से ज़ाहिर है कि यहाँ ख़र्च करने से मुराद सद्क़ाते वाजिबा यानी ज़कात, सदक-ए-फ़ित्र या (खेती का दस्वाँ हिस्सा) वग़ैरह नहीं क्योंकि इन की तअ्दाद की तफ़्सीलात तो रसूलुल्लाह (सल्ल०) के ज़रिये बयान कर दी गई हैं। यह सवाल आ़म सद्क़ात और नफ़्ली ख़ैर-ख़ैरात के विषय में है जिस के जवाब में इर्शाद हुआ कि जो अपनी ज़रूरत व हाजत से ज़्यादा हो वह अल्लाह की राह में ख़र्च करो। **(तफ़्सील के लिए देखें सूरः अन्निसा-42 और सूरः अल् माइदा 90-91)**

हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि आप ने फ़रमाया, "अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि ऐ इब्ने आदम! ख़र्च कर मैं तुझ पर ख़र्च करूँगा।" **(बुख़ारी)**

220 فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ؕ وَيَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الْيَتٰمٰى ؕ قُلْ اِصْلَاحٌ لَّهُمْ خَيْرٌ ؕ وَاِنْ تُخَالِطُوْهُمْ فَاِخْوَانُكُمْ ؕ وَاللّٰهُ
يَعْلَمُ الْمُفْسِدَ مِنَ الْمُصْلِحِ ؕ وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَاَعْنَتَكُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ۝

अल्लाह तआला फ़रमाता है وَيَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الْيَتٰمٰى इमाम अबू दाऊद और इमाम हाकिम वग़ैरह ने हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि जिस वक़्त وَلَا تَقْرَبُوْا مَالَ الْيَتِيْمِ اِنَّ الَّذِيْنَ يَاْكُلُوْنَ اَمْوَالَ الْيَتٰمٰى यह आयतें नाज़िल हुईं, जिस के ज़ेरे परवरिश कोई यतीम था, उस ने जाकर यतीम का खाना अपने खाने से और उस का पीना अपने पीने से जुदा कर दिया और अपने खाने से ज़्यादा यतीम के खाने की चीज़ रखना शुरु कर दिया कि दूसरे वह उस को खा लेता या ज़ाया कर देता, मगर यह चीज़ सहाबा-ए-किराम के लिए मुश्किल हो गई, उन्होंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से इस चीज़ का ज़िक्र किया, जिस पर अल्लाह तआला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई।

इर्शाद होता है **"कज़ालिका युबय्यिनुल्लाहु लकुमुल् आयाती लअ़ल्लकुम ततफ़क्करून फ़िद् दुनिया वल् आख़िरह"** (अल्लाह तआ़ला इसी तरह़ अह़काम को साफ़-साफ़ बयान फ़रमाते हैं ताकि तुमको उन अह़काम का इ़ल्म हो जाए और इस इ़ल्म की वजह से हर अ़मल करने से पहले दुनिया व आख़िरत के मामलात में सोच लिया करो) और सोच कर हर मामले में उन अह़काम के मुताबिक़ अ़मल किया करो। तफ़्सील इस हुक्म की यह है कि-

1- किसी गुनाह में माल ख़र्च करना बिल्कुल नाजायज़ है।

2- दीन के कामों में अगर वह दीन के काम वाजिब और फ़र्ज़ के दर्जे में हों जैसे- ज़कात वग़ैरह तो ख़र्च करना फ़र्ज़ व वाजिब है।

3- दीन के काम अगर नफ़्ली हैं जैसे- मामूली ख़ैरात, तो इस तरह़ देने से अगर घर के लोगों का इस में ह़क़ ज़ाया होता हो तो ख़र्च करना नाजायज़ है और अगर किसी का ह़क़ ज़ाया नहीं होता, लेकिन ख़ुद परेशान होकर सब्र न कर सके तो भी नाजायज़ है और अगर न किसी का ह़क़ ज़ाया होता हो और न ख़ुद बेसब्री और परेशानी में मुब्तिला हो तो फिर ख़र्च करना जायज़ है।

4- इसी तरह़ अगर वह न दीन का काम हो और न गुनाह का बल्कि मुबाह़ हो तो जैसी नियत होगी वैसा हुक्म होगा जैसे- फल, पार्क आदि। मुबाह़ात में अगर नियत क़ुव्वत और जज़्बा अ़िबादत का हो तो सवाब और बाइसे अज्र होगा और अगर नियत गुनाह की हो तो गुनाह और अगर सिर्फ़ दिल ख़ुश करना हो तो मुबाह़ है यानी न सवाब होगा न गुनाह।

इस आयत में सहाबा-ए-किराम का सवाल यतीमों के विषय में था।

यतीम के विषय में हुक्म-

"जो लोग ज़ुल्म से यतीमों का माल हड़प कर जाते हैं वह ह़क़ीक़त में अपने पेट में आग भरते हैं। **(सूरः अन् निसा-10)**

"और यतीम के माल के क़रीब भी न जाओ मगर बेहतर तरीक़े से।" **(सूरः अल् अन्आ़म-153)**

यतामा-

यतीम लफ़्ज़ की जमा है और यतीम से मुराद वह नाबालिग़ लड़का या लड़की हैं जिस के सर से बाप या माँ का या दोनों का साया उठ गया हो। बाप के मर जाने से अगर बच्चा यतीम हुआ तो उस की यतीमी और भी ज़्यादा क़ाबिले रह़म हो जाती है।

चूंकि शुरु में पूरी तरह़ यतीमों का ह़क़ देने में एहतियात न थी इसलिए पहले क़ुर्आने करीम में यह हुक्म हुआ था وَلَا تَقْرَبُوا مَالَ الْيَتِيمِ إِلَّا بِالَّتِي هِيَ أَحْسَنُ **(सूरः बनी इस्राईल-34)**

यानी जो लोग ज़ुल्म से यतीमों का माल खा जाते हैं वह अपने पेट में आग भर रहे हैं और वह भड़कती हुई जहन्नम में जल्द ही दाख़िल होंगे।

सह़ाबा-ए-किराम (रज़ि०) जो अल्लाह के हुक्म पर जान क़ुर्बान करने वाले थे और अल्लाह तआ़ला

के अह़काम के ख़िलाफ़वर्ज़ी से इन्तिहाई डरने वाले थे। इन आयतों के नुज़ूल से सख़्त ख़ौफ़ज़दह हो गये और जिस के पास कोई यतीम बच्चा और उस का माल था और वह घर के सब आदमियों के साथ खाने-पीने में शरीक रखा जाता था तो उन को यह ख़तूरा पैदा हो गया कि हर वक़्त तो इस की निगरानी मुश्किल है कि यतीम बच्चे ने कितना खाया पिया।

जितना माल उस का है वह दूसरे के ह़िस्से से कम हो या ज़्यादा हो गया हो तो यह वअ़ीद शदीद है, जो ऊपर की आयत में फ़रमाई गई। इसलिए इन आयतों को सुनकर उन सह़ाबा ने जो यतीमों के वली (संरक्षक) थे, डर के मारे इतनी एह़तियात करने लगे कि यतीमों का खाना भी अलग पकवाते, अलग रखवाते और अगर उन के लिए जो खाना पकाया गया था बच जाता तो उसे दूसरे वक़्त उसी यतीम को खिलाया जाता या सड़ कर खराब हो जाता। इस तरह़ एक तरफ़ तो यतीमों का नुक़्सान होने लगा। दूसरी तरफ़ यतीम के ज़िम्मेदार तंग होते कि कब तक इस तरह़ एक ही घर में अलग रखा जाए। अ़लैह़िदा इन्तिज़ाम से यतीम के ज़िम्मेदार को भी तक्लीफ़ होती थी इसलिए ऐसे लोगों ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्मत में ह़ाज़िर होकर अ़र्ज़ किया और पूरी बात मालूम करने के लिए 'यतामा' के बारे में सवाल उठाया। इस पर यह आयत नाज़िल हुई और नेक नियती और अमानतदारी के साथ यतीमों के माल को अपने माल में मिला लेने की इजाज़त दे दी गई।

यतीमों का माल शामिल रखना दुरुस्त है-

इस आयत में है कि जो चीज़ ख़राब होने या गलने सड़ने वाली हो उस में नेक नियती से अपने साथ यतीम का ख़र्च अन्दाज़ा से शामिल रखना दुरुस्त है और दूसरी चीज़ों का ह़िसाब अलग रखना वाजिब है। फिर चूंकि आयत के नाज़िल होने के वक़्त अक्सर मुसलमानों के पास मुसलमान ही यतीम थे।

इसलिए إِخْوَانُكُمْ यहाँ फ़रमाया वरना अगर दूसरे मज़हब का यतीम बच्चा भी अपनी तर्बियत में हो तो उस का भी यही हुक्म है और इस की दलील दूसरी आयात व ह़दीस में मौजूद हैं बल्कि ग़ैर मुस्लिम यतीम के साथ इतनी रिआ़यत और करनी होगी कि उस की मज़हबी आज़ादी पर कोई रोक नहीं लगाई जाएगी यानी बालिग़ हो जाने के बाद अपनी परवरिश का दबाव डाल कर और ह़क़ इस्तेमाल करके उस पर इस्लाम क़ुबूल करने के लिए जब्र और ज़ोर डालना जायज़ न होगा बल्कि आज़ादाना राय क़ायम करने का उस को पूरा-पूरा ह़क़ होगा।

मक़्सूद आयत का यतीम की कामियाबी और ख़ैरख़्वाही की तअ़लीम देना है और इस में इस बात की भी सराह़त है कि अल्लाह तआ़ला आ़लिमुल् ग़ैब है, नेक नियती और बद्नियती से वह ख़ूब वाक़िफ़ है।

221 وَلَا تَنكِحُوا الْمُشْرِكَٰتِ حَتَّىٰ يُؤْمِنَّ ۚ وَلَأَمَةٌ مُّؤْمِنَةٌ خَيْرٌ مِّن مُّشْرِكَةٍ وَلَوْ أَعْجَبَتْكُمْ ۗ وَلَا تُنكِحُوا
الْمُشْرِكِينَ حَتَّىٰ يُؤْمِنُوا ۚ وَلَعَبْدٌ مُّؤْمِنٌ خَيْرٌ مِّن مُّشْرِكٍ وَلَوْ أَعْجَبَكُمْ ۗ أُولَٰٓئِكَ يَدْعُونَ إِلَى النَّارِ ۖ
وَاللَّهُ يَدْعُوٓا إِلَى الْجَنَّةِ وَالْمَغْفِرَةِ بِإِذْنِهِ ۖ وَيُبَيِّنُ ءَايَٰتِهِ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُونَ ۝

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है وَيَسْأَلُونَكَ عَنِ الْمَحِيضِ इमाम मुस्लिम और तिर्मिज़ी ने ह़ज़रत अनस (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि यहूदियों में से जब किसी औ़रत को हैज़ (माहवारी) आता था तो यहूदी उस के साथ न अपने घरों में खाते थे और न उस के साथ लेटते थे, तो सहा़बा-ए-किराम ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से इस चीज़ के बारे में दर्याफ़्त किया उस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई यानी सोह़बत करने के अ़लावा हर एक चीज़ कर सकते हो।

मुसलमान मर्दों का निकाह़ काफ़िर औ़रतों से-

एक और अहम मस्ला इस आयत में ज़िक्र किया गया है कि मुसलमान मर्दों का निकाह़ काफ़िर औ़रतों से और मुसलमान औ़रतों का निकाह़ काफ़िर मर्दों के साथ का क्या हुक्म है?

शुरु में मुसलमान मर्द और काफ़िर औ़रत और इसी तरह़ मुसलमान औ़रत व काफ़िर मर्द दोनों सूरतें निकाह़ की जायज़ थीं, इस आयत से इस बात को मन्सूख़ कर दिया गया। इस आयत के शाने नुज़ूल के सिलसिले में लिखा है कि यह आयत एक सहा़बी ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि यह आयत ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन रवाह़ा (रज़ि०) के बारे में नाज़िल हुई। उन की एक काले रंग की बाँदी थी एक बार किसी बात पर गुस्सा होकर उस के तमांचा मार दिया तो उस बांदी ने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ख़िद्मत में ह़ाज़िर होकर शिकायत की।

इधर जब अ़ब्दुल्लाह बिन रवाह़ा (रज़ि०) का गुस्सा दूर हुआ तो इस ह़रकत पर शर्मिन्दा हुए और रसूल (सल्ल०) की ख़िद्मत में ह़ाज़िर होकर अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह (सल्ल०), मुझ से यह ग़लती हो गई। उस की तलाफ़ी यह हो सकती है कि उस को आज़ाद करके निकाह़ में ले आऊँ। रसूल (सल्ल०) के मश्वरे से उस मोमिना बांदी को आज़ाद करके ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह ने उस से निकाह़ कर लिया। लोगों ने तअ़ना देना शुरु किया कि एक काली कलूटी बांदी से निकाह़ कर लिया तो इस पर यह आयत नाज़िल हुई। मुम्किन है कि दोनों वाक़िआ़त सबबे नुज़ूल हों चुनांचे इस आयत में इर्शाद होता है-

> "और निकाह़ मत करो काफ़िर औ़रतों के साथ जब तक वह मुसलमान न हो जाएँ और मुसलमान औ़रत चाहे वह लौंडी ही क्यों न हो वह हज़ार दर्जे बेहतर है काफ़िर औ़रतों से। वह काफ़िर औ़रत माल या जमाल की वजह से तुम को अच्छी ही मालूम हो मगर वाक़िये में फिर भी मुसलमान औ़रत ही उस से अच्छी है और इसी तरह़ अपने अख़्तियार की औ़रतों को काफ़िरों के निकाह़ में मत दो जब तक कि वह मुसलमान न हो जाएँ, और मुसलमान मर्द चाहे ग़ुलाम ही क्यों न हों वह हज़ार दर्जे बेहतर है काफ़िर मर्द से, वह काफ़िर मर्द बेवजह माल या जाह के तुम को अच्छा ही मालूम हो, मगर फिर भी वाक़िये में मुसलमान ही मर्द उस से अच्छा है।" आगे इस हुक्म की वजह इर्शाद होती है,
>
> "और वजह काफ़िरों से निक़ाह करने की मुमानिअ़त की यह है कि काफ़िर लोग जहन्नम में जाने की तर्ग़ीब (शिक्षा) देते हैं क्योंकि वह कुफ़्र की तर्ग़ीब देते हैं और कुफ़्र का अन्जाम जहन्नम है और अल्लाह तआ़ला जन्नत और मग़्फ़िरत (क्षमा) के ह़ासिल करने की तर्ग़ीब

देते हैं अपने हुक्म से और अल्लाह तआ़ला इस वास्ते लोगों को अपने हुक्मों को बतला देते हैं ताकि वह लोग नसीह़त पर अ़मल करें और जन्नत व मग़्फ़िरत यानी माफ़ी के ह़क़्दार हो जाएँ।"

इस आयत के नुज़ूल से पहले मुसलमान मर्द और काफ़िर औ़रत और इस के अपोज़िट दोनों सूरतों में जो शादी ब्याह का रिवाज अ़रब में था वह इस आयत के नाज़िल होने के बाद ख़त्म हो गया, इस आयत में दो हुक्म फ़रमाए गये-

पहला हुक्म- मुसलमान मर्द का निकाह़ काफ़िर औ़रत से न किया जाए।

दूसरा हुक्म- मुसलमान औ़रत का निकाह़ काफ़िर मर्द से न किया जाए।

मुसलमान मर्द का काफ़िरा औ़रत से निकाह़-

पहले हुक्म की तफ़्सील यह है कि काफ़िरा से तो अब भी मुसलमान मर्द का निकाह़ जायज़ नहीं। अतः हिन्दू औ़रत या आतिश परस्त औ़रत से निकाह़ मुसलमान का नहीं हो सकता। अल्बत्ता सह़ी माने में अगर औ़रत किताबिया यानी अल्लाह की ओर से नाज़िल होने वाली किसी किताब को मानती हो। जैसे- यहूदिया, नसरानिया हो तो उस का सूरः माइदा की आयत وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ (यानी पारसा औ़रतें उन लोगों में से भी जो तुम से पहले किताबे आसमानी दी गई हैं मानती हैं वह तुम्हारे लिए ह़लाल हैं।) मुसलमान मर्द से निकाह़ दुरुस्त हो जाता है बशर्ते कि वह किताबिया औ़रत इस्लाम से मुरतद होकर यहूदी या नसरानी न हुई हो। यानी किताबी औ़रत से निकाह़ दुरुस्त है लेकिन अच्छा नहीं। ह़दीस में दीनदार औ़रत से निकाह़ करने का हुक्म है तो बद्दीन औ़रत का ह़ासिल करना नापसंदीदह है और यहाँ एक बात अच्छी तरह़ समझ लेनी चाहिए कि जो लोग अहले किताब यानी यहूद या नसारा समझे जाते हों लेकिन उनके अ़क़ीदे मालूम करने से अहले किताब साबित न हों तो उन की औ़रतों से निकाह़ दुरुस्त नहीं। जैसे आजकल अंग्रेज़ों को ईसाई समझा जाता है, ह़ालाँकि तह़क़ीक़ से बाज़ के अक़ायद बिल्कुल काफ़िराना साबित होते हैं कि वह न ख़ुदा की ज़ात के क़ायल, न ईसा (अ़लै०) की नुबूव्वत के मोअ़तक़िद (आस्था रखने वाले) न इन्जील की निस्बत आसमानी किताब होने का एतिक़ाद (आस्था) तो ऐसे लोग जो ह़क़ीक़त में दहरिया (कम्निस्ट) हैं ऐसी औ़रतों से निकाह़ दुरुस्त नहीं।

मुसलमान औ़रत का निकाह़ काफ़िर मर्द से न किया जाए-

दूसरे हुक्म की तशरीह़ यह है कि मुसलमान औ़रत का निकाह़ किसी काफ़िर से चाहे वह किताबी हो या ग़ैर किताबी नाजायज़ है, बल्कि पहले से भी अगर निकाह़ हुआ हो तो दोनों मर्द औ़रत में से एक के काफ़िर दूसरे के मुसलमान होने की सूरत में निकाह़ बाक़ी नहीं रहेगा जिस की कई सूरते हैं। जैसे-

(1) कोई मर्द काफ़िर हो जाए जबकि उसके निकाह़ में पहले से कोई मुसलमान औ़रत थी तो निकाह़ फ़ौरन टूट जाएगा और यह मुसलमान औ़रत इद्दत पूरी करके दूसरे मुसलमान से निकाह़ कर सकती है।

(2) इसी तरह़ कोई काफ़िर औ़रत मुसलमान हो जाए और वह पहले से किसी काफ़िर मर्द के निकाह़ मे हो और वह मर्द इस्लाम क़ुबूल न करे, तो उसी वक़्त वह निकाह़ टूट जाएगा। अल्बत्ता इस में इतनी तफ़्सील है कि अगर वह जगह दारुस्सलाम (इस्लामी हुकूमत) हो तो मर्द से पूछेंगे कि तू इस्लाम क़ुबूल करता है या नहीं, अगर वह इस्लाम क़ुबूल कर ले तो निकाह़ न टूटेगा और अगर इन्कार कर दे तो टूट जाएगा और अगर वह जगह दारुल ह़र्ब (जहाँ जिहाद करना ज़रूरी हो) है, तो शौहर (पति) से पूछने की कोई जरूरत नहीं, बल्कि औ़रत के इस्लाम लाने के बाद जब तीन ह़ैज़ (माहवारी) गुज़र जाएँ या ह़ैज़ न आता हो तो, जब तीन महीने गुज़र जाएँ या ह़ामिला (गर्भवती) हो तो जब बच्चा पैदा हो जाए तो यह औ़रत उस शौहर के निकाह़ से बाहर हो जाएगी और हर सूरत में निकाह़ टूटने के बाद फिर इद्दत वाजिब होगी। बहरहाल जिस वक़्त से निकाह़ टूटा है उस वक़्त से तलाक़ की इद्दत यानी चार माह दस दिन जो तलाक़ के बाद दूसरे निकाह़ से पहले की समय सीमा है, पूरी कर के दूसरे मर्द से निकाह़ कर सकती है।

उ़लमा ने लिखा है कि आज कल माद्दियत (Materialism) और साइंस के अस्रात से न सिर्फ़ यह कि यहूद व नसारा अपने मज़ाहिब पर बाक़ी नहीं रहते बल्कि बहुत से मुसलमान कहलाने वाले योरोपीय संस्कृति को मानने वाले नौजवान भी मुल्ह़िदाना ख़यालात (कम्यूनिस्ट) और काफ़िराना नज़रियात (Attitude) के शिकार हो गये हैं कि न अल्लाह और रसूल पर उन का अ़क़ीदा, न शरीअ़त के क़ानून और आख़िरत के क़ायल, तो ऐसों से मुसलमान औ़रत का निकाह़ दुरुस्त नहीं और अगर निकाह़ के बाद ऐसे अ़क़ायद हो जाएँ तो भी निकाह़ टूट जाएगा। इसलिए निहायत ज़रूरी है कि पहले एक दूसरे के अ़क़ायद की तरफ़ से इत्मिनान कर लेना चाहिए तब निकाह़ किया जाए और अगर निकाह़ के बाद पति के काफ़िराना अ़क़ायद साबित हो जाएँ तो दीनदार औ़रत पर उस से अलग होना वाजिब है और सरपरस्तों को औ़रत की मदद करना ज़रूरी है।

यहाँ काफ़िर व मुश्रिक औ़रतों से निकाह़ करने को मना फ़रमाया गया है और मुश्रिक व काफ़िर मर्दों से मुसलमान औ़रतों का निकाह़ नाजायज़ क़रार दिया गया और साथ ही यह भी बतला दिया गया कि काफ़िर कितना ही ख़ूबसूरत, धन दौलत, इ़ज़्ज़ज व हुकूमत वाला हो, मगर वह एक फ़क़ीर मोमिन के बराबर नहीं हो सकता और जो हुक्म यहाँ अल्लाह ने दिया उस की वजह यह भी बयान फ़रमा दी गई कि काफ़िर इन्सान ख़ुदा की नाफ़रमानी, अल्लाह से कुफ़्र व सरकशी और गुनाह की दअ़वत देता है जिस का नतीजा जहन्नम है और अल्लाह तआ़ला इन्सानों को दअ़वत देते हैं अपनी जन्नत और मग़्फ़िरत की तरफ़ और वह चाहते हैं कि तुम ऐसे आ़माल व अ़क़ीदे अपनाओ, जिन से तुम्हारी मग़्फ़िरत हो जाए और तुम जन्नत में दाख़िल हो जाओ।

आख़ीर में यह भी फ़रमा दिया कि लोगों के सामने अल्लाह तआ़ला अपने अह़काम व क़ानून खोल-खोलकर बयान फ़रमाते हैं ताकि लोग उन की ह़िक्मत पर ग़ौर करके नसीह़त ह़ासिल करें और उन पर अ़मल कर के इस्लाम व ईमान की क़द्र करें और सब के सब पूरी तरह़ शरई़ क़ानून के पाबन्द हो जाएँ।

आयत नं० 222 से 229 तक

وَيَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْمَحِيضِ ۖ قُلْ هُوَ أَذًى فَاعْتَزِلُوا النِّسَاءَ فِي الْمَحِيضِ ۖ وَلَا تَقْرَبُوهُنَّ حَتَّىٰ يَطْهُرْنَ ۖ فَإِذَا تَطَهَّرْنَ فَأْتُوهُنَّ مِنْ
حَيْثُ أَمَرَكُمُ اللَّهُ ۚ إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ التَّوَّابِينَ وَيُحِبُّ الْمُتَطَهِّرِينَ ۝ نِسَاؤُكُمْ حَرْثٌ لَكُمْ فَأْتُوا حَرْثَكُمْ أَنَّىٰ شِئْتُمْ ۖ وَقَدِّمُوا
لِأَنْفُسِكُمْ ۚ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاعْلَمُوا أَنَّكُمْ مُلَاقُوهُ ۗ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ ۝ وَلَا تَجْعَلُوا اللَّهَ عُرْضَةً لِأَيْمَانِكُمْ أَنْ تَبَرُّوا وَتَتَّقُوا
وَتُصْلِحُوا بَيْنَ النَّاسِ ۗ وَاللَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝ لَا يُؤَاخِذُكُمُ اللَّهُ بِاللَّغْوِ فِي أَيْمَانِكُمْ وَلَٰكِنْ يُؤَاخِذُكُمْ بِمَا كَسَبَتْ قُلُوبُكُمْ ۗ وَاللَّهُ
غَفُورٌ حَلِيمٌ ۝ لِلَّذِينَ يُؤْلُونَ مِنْ نِسَائِهِمْ تَرَبُّصُ أَرْبَعَةِ أَشْهُرٍ ۖ فَإِنْ فَاءُوا فَإِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ۝ وَإِنْ عَزَمُوا الطَّلَاقَ
فَإِنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝ وَالْمُطَلَّقَاتُ يَتَرَبَّصْنَ بِأَنْفُسِهِنَّ ثَلَاثَةَ قُرُوءٍ ۚ وَلَا يَحِلُّ لَهُنَّ أَنْ يَكْتُمْنَ مَا خَلَقَ اللَّهُ فِي
أَرْحَامِهِنَّ إِنْ كُنَّ يُؤْمِنَّ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ ۚ وَبُعُولَتُهُنَّ أَحَقُّ بِرَدِّهِنَّ فِي ذَٰلِكَ إِنْ أَرَادُوا إِصْلَاحًا ۚ وَلَهُنَّ مِثْلُ الَّذِي
عَلَيْهِنَّ بِالْمَعْرُوفِ ۚ وَلِلرِّجَالِ عَلَيْهِنَّ دَرَجَةٌ ۗ وَاللَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝ الطَّلَاقُ مَرَّتَانِ ۖ فَإِمْسَاكٌ بِمَعْرُوفٍ أَوْ تَسْرِيحٌ بِإِحْسَانٍ ۗ وَلَا
يَحِلُّ لَكُمْ أَنْ تَأْخُذُوا مِمَّا آتَيْتُمُوهُنَّ شَيْئًا إِلَّا أَنْ يَخَافَا أَلَّا يُقِيمَا حُدُودَ اللَّهِ ۖ فَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا يُقِيمَا حُدُودَ اللَّهِ فَلَا
جُنَاحَ عَلَيْهِمَا فِيمَا افْتَدَتْ بِهِ ۗ تِلْكَ حُدُودُ اللَّهِ فَلَا تَعْتَدُوهَا ۚ وَمَنْ يَتَعَدَّ حُدُودَ اللَّهِ فَأُولَٰئِكَ هُمُ الظَّالِمُونَ ۝

अनुवाद-

(222) और लोग आप से हैज़ (मासिक धर्म) के हुक्म के बारे में पूछते हैं, कह दीजिए, ''वह एक गन्दगी (पीड़ाजनक हालत) है, अतः इन (हैज के) दिनों में औ़रतों से अलग रहो, और जब तक पाक-साफ़ न हो जाएँ, उनके पास (सम्भोग के इरादे से) न जाओ; फिर जब वह पाक हो जाएँ, जिस तरह़ अल्लाह ने तुम्हें बताया है उनके पास जाओ।'' अल्लाह मुह़ब्बत रखता है तौबः करने वालों से और मुह़ब्बत रखता है पाक व साफ़ रहने वालों से। (223) तुम्हारी बीवियाँ (पत्नियाँ) तुम्हारी खेती हैं तो तुम अपने खेत में आओ, जिस तरह़ चाहो; और अपने बारे में आइन्दा के लिए कुछ भेजते रहो, और अल्लाह से डरते रहो, और अच्छी तरह़ जान लो कि तुम्हें उससे मिलना है, और ईमान लाने वालों को ख़ुशख़बरी सुना दीजिए। (224) और अल्लाह (के नाम) को अपनी क़समों के ज़रिये से, अपनी नेकी के और परहेज़गारी के,और लोगों के बीच मेल-मिलाप (सुधार) कराने के सिल्सिले में आड़ न बनाओ; और अल्लाह सब कुछ सुनता, जानता है; (225) अल्लाह तुम्हारी बेकार क़समों पर तुम्हारी पकड़ नहीं करेगा, लेकिन उन क़समों पर 'वह' तुम्हें ज़रूर पकड़ेगा जो तुम्हारे दिलों ने इरादा किया है, और अल्लाह बड़ा बख़्शने वाला (क्षमाशील) बर्दाश्त करने वाला (सहनशील) है। (226) जो लोग अपनी बीवियों (पत्नियों) से (सम्भोग न करने की) क़सम खा बैठें, उनको चार महीने तक की मुहलत है; फिर अगर (इस मुद्दत में) मेल कर लें, तो अल्लाह बख़्शने वाला मेहरबान है। (227) और अगर तलाक़ (ही) की ठान लें, तो भी अल्लाह (सब कुछ) सुनता-जानता है; (228) और तलाक़ वाली औरतें तीन ह़ैज़ (मासिक धर्म) गुज़रने तक अपने आप को रोके रखें; और अगर वे अल्लाह और आख़िरत (परलोक) पर यक़ीन रखती हों तो उनके लिए यह जायज़ न होगा कि, अल्लाह ने उनके रह़मों (गर्भाशयों) में जो कुछ पैदा किया हो, उसे छिपाएँ; इस बीच उनके पति सुलह़ करना चाहें, तो वे उनको वापस लेने के ज़्यादा ह़क़दार हैं; और औ़रत का ह़क़ (मर्दों पर) वैसा ही है जैसे नियमानुसार (मर्दों का) ह़क़ है, हाँ मर्दो

को औ़रतों पर फ़ज़ीलत (प्रधानता); है और अल्लाह बड़ा ज़बरदस्त, हि़कमत वाला है। (229) तलाक़ तो दो ही बार की है उसके बाद (या तो) नियम के अनुसार रख लेना है या अच्छे बर्ताव के साथ छोड़ देना है; और जो तुम उनको (महर) दे चुके हो, उसमें से तुमको कुछ भी वापस लेना जायज़ नहीं, सिवाय यह कि दोनों को डर हो कि वे अल्लाह की (निर्धारित) सीमाओं (हदों) पर क़ायम न रह सकेंगे तो अगर तुम को यह डर हो कि वे अल्लाह की सीमाओं (हदों) पर क़ायम न रहेंगे तो औ़रत जो कुछ (महर से माल) देकर छुटकारा ह़ासिल करना चाहे, उसमें उन दोनों के लिए कोई गुनाह नहीं; ये अल्लाह की निर्धारित की हुई सीमाएँ (क़ानून) हैं, अतः इनसे आगे न बढ़ो, और जो अल्लाह की सीमाओं(क़ानून) का उल्लंघन करे, तो ऐसे ही लोग ज़ालिम हैं।

आयत नं० 222 से 229 तक की व्याख्या

222-223 وَيَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْمَحِيضِ ۖ قُلْ هُوَ أَذًى فَاعْتَزِلُوا النِّسَاءَ فِي الْمَحِيضِ ۖ وَلَا تَقْرَبُوهُنَّ حَتَّىٰ يَطْهُرْنَ ۖ
فَإِذَا تَطَهَّرْنَ فَأْتُوهُنَّ مِنْ حَيْثُ أَمَرَكُمُ اللَّهُ ۚ إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ التَّوَّابِينَ وَيُحِبُّ الْمُتَطَهِّرِينَ ﴿٢٢٢﴾
نِسَاؤُكُمْ حَرْثٌ لَّكُمْ فَأْتُوا حَرْثَكُمْ أَنَّىٰ شِئْتُمْ ۖ وَقَدِّمُوا لِأَنفُسِكُمْ ۚ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاعْلَمُوا أَنَّكُم
مُّلَاقُوهُ ۗ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ ﴿٢٢٣﴾

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है نِسَاؤُكُمْ حَرْثٌ لَّكُمْ इमाम बुख़ारी व मुस्लिम अबूदाऊद और तिर्मिज़ी ने ह़ज़रत जाबिर (रज़ि०) से रिवायत नक़्ल की है कि यहूद कहा करते थे कि जब आदमी पीठ की तरफ़ से होकर शर्मगाह में सोह़बत करे तो बच्चा भेंगा पैदा होता है, इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई कि तुम्हारी बीवियाँ तुम्हारे लिए खेत की तरह़ हैं, जिस तरह़ से चाहो उन की शर्मगाहों में सोह़बत करो।

और इमाम अह़मद और तिर्मिज़ी ने ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत नक़्ल की है, "ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) रसूल (सल्ल०) की ख़िद्मत में ह़ाज़िर हुए और अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! मैं हलाक हो गया, आप (सल्ल०) ने फ़रमाया किस चीज़ ने तुम को हलाक कर दिया। अ़र्ज़ किया रात पीठ की तरफ़ से होकर मैंने अपनी बीवी के साथ सोह़बत कर ली, आप ने इस का कोई जवाब नहीं दिया। इतने में अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई।" نِسَاؤُكُمْ حَرْثٌ لَّكُمْ

यानी चाहे तुम अपनी खेतियों में सामने की तरफ़ से आओ या पीठ की तरफ़ से; बाक़ी पीछे के रास्ते (Anal Sex) में और हैज़ (Menstrual period) के ज़माने में सोह़बत करने से बचो और इब्ने जरीर, 'अबू यअ़ला' और ह़ज़रत अबू सईद ख़ुद्री (रज़ि०) से रिवायत नक़्ल की है कि एक शख़्स ने पीठ की तरफ़ से आकर अपनी बीवी के साथ सोह़बत की, लोगों ने इस चीज़ को बुरी नज़र से देखा। इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई कि نِسَاؤُكُمْ حَرْثٌ لَّكُمْ

इमाम बुख़ारी ने ह़ज़रत इब्ने उ़मर (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि यह आयत औ़रतों से उन की

पीठों की तरफ़ से सोहबत करने के बारे में नाज़िल हुई है। **(बुख़ारी)**

इमाम तबरानी ने हज़रत इब्ने उमर (रज़ि०) से रिवायत नक़्ल की है कि نِسَآؤُكُمْ حَرْثٌ لَّكُمْ रसूलुल्लाह (सल्ल०) पर यह आयत पीठ की तरफ़ से बैठ कर सोहबत करने की इजाज़त के बारे में नाज़िल हुई है।

और इमाम तबरानी ही ने हज़रत उमर (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि एक शख़्स ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) के ज़माने में अपनी बीवी के साथ पीठ की तरफ़ से आकर सोहबत कर ली थी, लोगों ने उस पर नकीर की तब अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई। यानी तुम्हारी बीवियाँ खेत की तरह़ से हैं, इसलिए जिस तरीक़े से चाहो आओ (अर्थात अपने खेत में आओ जो कि अगला (Vagina) हिस्सा है पिछला (Anus) हिस्सा खेत नहीं, क्योंकि इसमें खेत की पैदावार नहीं।)

इमाम अबूदाऊद और हाकिम ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत नक़्ल की है फ़रमाते हैं कि अल्लाह तआ़ला इब्ने उमर (रज़ि०) की मग़्फ़िरत फ़रमाये, उन को वहम हो गया है। वाक़िआ़ यह है कि अन्सार के क़बीले वाले, यहूदियों के उस क़बीले के साथ बुत परस्ती में शरीक थे और यह लोग अहले किताब को अपने से इल्म में बढ़ कर समझते थे, लिहाज़ा अक्सर बातों में अन्सार उन की पैरवी (follow) करते थे, चुनांचे अहले किताब अपनी बीवियों से सिर्फ़ एक ही तरफ़ से सोहबत करते थे और यह चीज़ औ़रत के हक़ में ज़्यादा पर्दा का बाइस होती थी और उस अन्सार के क़बीले ने भी यहूदियों से यह बात ले ली थी और क़ुरैश का क़बीला औ़रतों के साथ कई तरह़ से सोहबत करते थे और उन के सामने से और पीठ से होकर और ऐसे उन के साथ चित लेट कर लज़्ज़त हासिल किया करते थे, जब मुहाजिर मदीना मुनव्वरह आये तो मुहाजिरीन में से एक शख़्स ने एक अन्सारी औ़रत से शादी की, जब मुहाजिर ने उस औ़रत के साथ सोहबत करना चाही तो उस ने उस तरीक़े के साथ करने से इन्कार किया और बोली हमारे यहाँ तो सिर्फ़ एक ही ओर से सोहबत की जाती है, ग़र्ज़ कि उन दोनों की यह बात फैल गई, यहाँ तक कि रसूल (सल्ल०) को इस की इत्तिलअ़ हुई। इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई कि सामने की ओर से या पुश्त की ओर से होकर या बाज़ू में लेटकर जिस तरह़ चाहो औलाद पैदा होने की जगह जो अगला हिस्सा है सोहबत करो।

हाफ़िज़ इब्ने हजर अ़स्क़लानी शरह बुख़ारी में फ़रमाते हैं कि इब्ने उमर (रज़ि०) ने जो इस आयत के नुज़ूल का सबब बयान किया वह मशहूर है, और इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) को अबू सईद ख़ुदरी की रिवायत नहीं पहुँची, सिर्फ़ इब्ने उमर (रज़ि०) की पहुँची है जिस पर उन्होंने यह कलाम किया।

हज़रत अनस (रज़ि०) से रिवायत है कि यहूद हालते हैज़ में औ़रतों से बिल्कुल अलग हो जाते। उन का खाना अलग (Separate) कर देते और उन से मेल-जोल ख़त्म कर देते। सहाबा-ए-किराम (रज़ि०) ने आप (सल्ल०) से इस बारे में पूछा तो यह आयत नाज़िल हुई। **(मुस्लिम)**

हैज़ किसे कहते हैं? हैज़ उस ख़ून को कहते हैं जो औ़रतों को हर माह आता है जिसे माहवारी

(Menstruation) भी कहते हैं। क़ुर्आन करीम इन्सानी ज़िन्दगी का मुकम्मल क़ानून है। यह ज़िन्दगी के हर उस क्षेत्र में रहनुमाई करता है जिस का सम्बन्ध इन्सान की ज़िन्दगी से है और ज़ाहिर है कि इन्सान ज़िन्दगी में न सिर्फ़ खाता, पीता, सोता, जागता और कामकाज करता है बल्कि उस के अन्दर फ़ितूरतन जिन्सी भूक (Natural Sexual desire) और बीवी-शौहर वाले सम्बन्ध की भी ख़्वाहिश होती है। इसलिए ज़िन्दगी के इस क्षेत्र के सम्बन्ध में भी क़ुर्आन करीम मुनासिब हुक्म देता है और इस्लाम ने जहाँ दुनिया के सामने मोअ़तदिल (Balanced) क़ानून पेश किये हैं वहीं इस मामले में भी रहनुमाई (Guide) की है।

हायज़ा औ़रतों के सम्बन्ध में यहूद व नसारा ने संतुलन बाक़ी न रखा। यहूद इतना असंतुलित थे कि वह अपनी हायज़ा औ़रतों से बिल्कुल अलग हो जाते, न उन के साथ खाते-पीते न उन के साथ उठते बैठते न उन से बात करते।

हैज़ के ज़माने में औ़रतों के हाथ का खाना-पीना नापाक समझते थे। कुछ तो औ़रतों को हैज़ के ज़माने में घर में रखना भी पसंद न करते थे और उन को बिल्कुल अलग मकान में रखते और किसी क़िस्म का सम्बन्ध उन से न रखते थे, मजूसी धर्म वालों का भी यही हाल था, हिन्दू क़ौम में भी यही था। यहूद के बरख़िलाफ़ ईसाई इस मामले में बहुत ही नर्मी से काम लेते। हायज़ा औ़रतों से मेल-मिलाप, उठना-बैठना, खाना-पीना और हैज़ की हालत में हमबिस्तर (sexual intercourse) होने से भी परहेज़ न करते थे।

एक बार कुछ सहाबा रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्मत में हाज़िर हुए और अ़र्ज़ किया, "या रसूलल्लाह (सल्ल०) यहूदी और ईसाई तो हायज़ा औ़रतों के साथ ऐसा करते हैं। हम हैज़ की हालत में अपनी औ़रतों के साथ क्या करें, इस्लामी हुक्म से हम को समझाइए।" इस पर आयत नाज़िल हुई और ज़रूरी हुक्म बता दिये गये और दूसरी क़ौमों ने आ़मतौर पर इस प्राकृतिक नापाकी से सम्बन्धित जो बहुत असंतुलित तरीक़ा अपना रखा था, उस के ख़िलाफ़ बताया गया कि उस ज़माने में सिर्फ़ जिन्सी मेल-जोल मना है।

यहाँ इस जगह हैज़ की कोई मुद्दत (अवधि) बयान नहीं की गई कि कब से कब तक रहती है, लेकिन आइम्मा दीन (दीन के अहम उ़लमा) ने हदीसें और क़ौल, सहाबा का अ़मल और दूसरे दलायल (evidences) को सामने रखकर मुद्दत (अवधि) मुक़र्रर की है। इसलिए 'इमाम अबू हनीफ़ा (रह०)' के नज़्दीक हैज़ के कम से कम 'तीन' दिन और ज़्यादा से ज़्यादा 'दस' रोज़ हैं।

यहाँ इस आयत में हैज़ के दिनों में सिर्फ़ सोहबत (सम्भोग) को मना किया गया है बाक़ी और हुक्म यह कि हैज़ में नमाज़ न पढ़े, रोज़े न रखे, मस्जिद में न जाए, क़ुर्आन मजीद को न छुए, ख़ान-ए-कअ़बः का तवाफ़ न करे यह सब हदीसों से साबित हैं। हालते हैज़ (नापाकी की हालत) में नाफ़ से घुटने तक औ़रत के बदन को देखना और हाथ लगाना भी दुरुस्त नहीं।

अगर ग़ल्ब-ए-शहवत (Excess Sexual Desire) में हैज़ की हालत में सोहबत (Sexual intercourse) हो गई तो इस गुनाह से तौबः करना वाजिब है और अगर कुछ सद्क़ः व ख़ैरात भी दे

दे तो ज़्यादह बेहतर है। औ़रत के हैज़ के दिनों में मामूल और आ़दत में फ़र्क़ हो जाने पर हैज़ से पाकी और सोह़बत वग़ैरह के कुछ निहायत ज़रूरी और अहम मसायल शरीयत की किताबों में देख लिए जाएँ या मालूम कर लिए जाएँ वरना जानकारी न होने से गुनाह कर बैठेगा।

यहाँ आयत "فَأْتُوهُنَّ مِنْ حَيْثُ أَمَرَكُمُ اللّٰهُ" (तो उन के पास आ जाओ जिस जगह से तुम को अल्लाह तआ़ला ने इजाज़त दी है) की तफ़्सील के मुताबिक़ अपनी बीबी से भी पीछे के रास्ते से सोह़बत (Anal Sex) करना ह़राम है। ह़दीस में आता है कि मल्ऊ़न है वह शख़्स कि जो औ़रत की दुबुर यानी पाखाना के रास्ते में वती (Anal Sex) करे। एक और ह़दीस में है कि जिस ने हैज़ की ह़ालत में वती (Sex) की या दुबुर (पीछे वाले रास्ते) की ओर से सोहबत की या किसी काहिन और नुजूमी के पास गया और इस की तस्दीक़ की तो उस शख़्स ने मुह़म्मदुर्रसूलुल्लाह (सल्ल०) पर नाज़िल अह़काम का कुफ़्र किया। **(तिर्मिज़ी)**

खेत की मिसाल-

यहाँ दूसरी आयत نِسَآؤُكُمْ حَرْثٌ لَّكُمْ फ़रमाया है यानी औ़रतों को खेत जैसा फ़रमाया। यानी जिस तरह खेत में बीज (Seed) डालने से उस में विभिन्न प्रकार के गल्ले, फल, मेवे पैदा होते हैं, उसी तरह़ औ़रत के रह़म (गर्भ) में बीज (Sperm) दाख़िल करने से औलाद पैदा होती है तो बीवी से अगरचे और भी कई फ़ायदे ह़ासिल किये जाते हैं, लेकिन यहाँ आयत में इस तरफ़ इशारा है कि निकाह़ का अस्ल मक़्सद नस्ल की बढ़ौतरी और नस्ल की ह़िफ़ाज़त है, जिस तरह किसान या काश्तकार अपनी खेती को बहुत बड़ी दौलत समझ कर उससे मुह़ब्बत रखता है, उस की निगरानी करता है उस की हर तरह़ ह़िफ़ाज़त करता है, उस से पैदावार ह़ासिल करता है उसी तरह़ शौहर को चाहिए कि अपनी बीवी को अपनी सबसे क़ीमती चीज़ समझे। उस की मुनासिब निगरानी व ह़िफ़ाज़त करे और उस से औलाद ह़ासिल करे।

इस से मालूम हुआ कि इस्लाम के नज़्दीक बीवी-शौहर का रिश्ता और हमबिस्तरी (सम्भोग) का अस्ल मक़्सद औलाद ह़ासिल करना है। फिर जिस तरह़ किसान खेत जोत बो कर अल्लाह तआ़ला से अच्छी पैदावार की दुआ़ करता है, फ़सल के फलने-फूलने की दुआ़ करता है उसी तरह़ शौहर को भी अल्लाह तआ़ला से सालेह़ औलाद लेने के लिए दुआ़ करनी चाहिए।

ह़दीस शरीफ़ में आता है कि औलाद सालेह़ आदमी के लिए एक सद्क़-ए-जारिया (मरने के बाद भी जारी रहने वाला सद्क़ः) है जो मरने के बाद भी क़ायम रहता है। चुनांचे तर्ग़ीब निकाह़ के बारे में जो ह़दीसे नबवी मशहूर है उस में यह भी इर्शाद फ़रमाया गया है कि मैं क़ियामत में उम्मत की कस्रत पर फ़ख़्र करूँगा। जिस से मालूम हुआ कि तर्गीब निकाह़ से औलाद की ज़्यादती मक़्सूद है, जिस से रसूलुल्लाह (सल्ल०) को क़ियामत के दिन फ़ख़्र होगा। इस से यह बात भी ज़ाहिर हो जाती है कि औलाद को ख़त्म करने के विभिन्न रास्ते अपनाना फ़ित्रत (Nature) के ख़िलाफ़ है क्योंकि ऐसा बेवक़ूफ़ काश्तकार कौन होगा! कि खेत में बीज तो बोये मगर फ़सल और पैदावार न चाहे, पौधा उगने से पहले ही उसे उखाड़ फेंके।

जो लोग ख़ानदानी मन्सूबा बन्दी (Family Planning) के ज़रिये बच्चों की पैदाइश रोकने के दर पर हैं वह निकाह़ के अस्ल मक़्सद ही से नावाक़िफ़ हैं। उन्होंने निकाह़ (शादी) का मक़्सद सिर्फ़ जिन्सी तस्कीन (Sexual satisfaction) ही समझ रखा है। अगर ऐसा ही है तो फिर इस मामले में इन्सान और दीगर ह़ैवानों में क्या फ़र्क़ है, लेकिन यह बात तो उस की समझ में आ सकती है जिस को अल्लाह तआ़ला दीन की समझ अ़ता फ़रमाएँ, वरना हम तो यहूद व नसारा की पैरवी में बँधे हुए हैं।

यहूदी कहते थे कि अगर कोई शख़्स बीवी के पास उस के पीछे से आये तो बच्चा भेंगा पैदा होता है। **(बुख़ारी)**

सय्यदना उ़मर (रज़ि०) रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास आये और कहने लगे, "मैं हलाक हो गया"। आप (सल्ल०) कहने लगे, "तुझे किस चीज़ ने हलाक किया है?" कहने लगे, "मैंने आज अपनी सवारी फेर ली।" आप ने कुछ जवाब न दिया, यहाँ तक कि यह आयत नाज़िल हुई आगे से सोह़बत करो या पीछे से मगर दुबुर (पीछे वाले रास्ते) में या ह़ैज़ की ह़ालत में मुजामिअ़त (सम्भोग) न करो। **(तिर्मिज़ी)**

आयत के आख़िर में मर्द व औ़रत के सम्बन्ध को बयान करके दो बातों का हुक्म हो रहा है।

एक وَقَدِّمُوْا لِاَنْفُسِكُمْ दूसरे وَاتَّقُوا اللّٰهَ

وَقَدِّمُوْا لِاَنْفُسِكُمْ यानी "और अपने वास्ते आगे की तद्बीर करो" आइन्दा के लिए अपने ह़क़ में कुछ करते रहो यानी केवल लज़्ज़त परस्ती में डूबे न रहो बल्कि अपनी लज़्ज़तों को भी ताअ़त व अ़िबादत बना लो और यह उसी तरह़ बनाया जा सकता है कि तुम हर काम करते वक़्त अल्लाह के अह़काम मद्देनज़र रखो और आख़िरत का अन्जाम बेहतर बनाने की फ़िक्र करो। इस से बाज़ मुफ़स्सिरीन ने यह मुराद लिया है कि बीवी से सोह़बत (सम्भोग) के वक़्त अल्लाह का नाम लो ताकि औलाद शैतान के असर से मह़फ़ूज़ रहे। सोह़बत (सम्भोग) में नेक औलाद की नियत करो ताकि आख़िरत की खेती बने और तुम्हारे लिए दुआ़ व इस्तिग़्फ़ार करे और क़ियामत के दिन तुम्हारे काम आये। सह़ी ह़दीस में है कि जो शख़्स यह दुआ़ पढ़ कर बीवी से सोह़बत करे तो अगर इस सोह़बत के नतीजे में अल्लाह तआ़ला ने जो बच्चा अ़ता करेगा तो वह शैतान के शर से मह़फ़ूज़ रहेगा। जिसकी दुआ़ यह है,

بِسْمِ اللّٰهِ اَللّٰهُمَّ جَنِّبْنَا الشَّيْطٰنَ وَجَنِّبِ الشَّيْطٰنَ مَا رَزَقْتَنَا.

'बिस्मिल्लाहि अल्लाहुम्मा जन्निबनाश्शैताना व जन्निबिश्शैताना मा रज़क़्तना'

दूसरा हुक्म- وَاتَّقُوا اللّٰهَ का दिया गया, 'तक़्वा' यानी ख़ौफ़े ख़ुदावन्दी की ताकीद क़ुर्आन जगह-जगह और बार-बार करता है। यहाँ भी तक़्वा यानी अल्लाह से डरने का हुक्म हो रहा है। यानी मक़्सद यह है कि इन्सान ज़िन्दगी के हर ह़ाल में अल्लाह तआ़ला को याद रखे। अल्लाह के हुक्मों की पाबन्दी करे और सन्तुलित रहते हुए सीधे रास्ते पर चलता रहे।

आख़िर में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को ख़िताब करके फ़रमाया, ऐसे मोमिनीन को ख़ुशख़बरी सुना दीजिए जो अल्लाह के हुक्मों की पाबन्दी करें, अल्लाह से डरें और अल्लाह के सामने ह़ाज़िर होने का

यक़ीन रखें कि उन्हें आख़िरत में अज्रे अ़ज़ीम मिलेगा और बेहद व बेअन्दाज़ा इनआ़म व इक्राम से नवाज़ा जाएगा।

224 وَلَا تَجْعَلُوا اللّٰهَ عُرْضَةً لِّاَيْمَانِكُمْ اَنْ تَبَرُّوْا وَ تَتَّقُوْا وَ تُصْلِحُوْا بَيْنَ النَّاسِ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ

وَلَا تَجْعَلُوا اللّٰهَ عُرْضَةً لِّاَيْمَانِكُمْ इब्ने जरीर ने इब्ने जुरैज (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि यह आयत ह़ज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) के बारे में नाज़िल हुई है, कि जब उन्होंने क़सम खा ली थी।

अल्लाह तआला तुम्हारे तर्क एह़सान के बारे में क़समों को सुनता है और तुम्हारी नियतों और क़समों के कफ़्फ़ारे की अदाएगी को जानता है, तुम्हारी बेहूदा क़समों पर जैसा कि ख़रीद व फ़रोख़्त के वक़्त 'ला वल्लाहि' और 'बला वल्लाहि' तुम कहते हो कि कोई कफ़्फ़ारा नहीं, लेकिन जिन क़समों को तुम अपने दिलों में पोशीदा कर के उ़म्दह झूठ बोलते हो, उस पर अल्लाह तआ़ला आख़िरत में मुवाख़िज़ा (पकड़) जानबूझकर फ़रमाता है और अल्लाह तआ़ला तुम्हारा उन बेहूदा क़समों की जो बग़ैर इरादा के निकल जाएँ मग़्फ़िरत फरमाने वाला है और सज़ा के बारे में जानबूझकर झूठी क़समों पर जल्दी भी नहीं फ़रमाता, और यह भी कहा गया है कि गुनाह करने के लिए क़सम खाने को लग्व (बक्वास) बोलते हैं, अगर इस को छोड़ दे और अपनी क़सम का कफ़्फ़ारा अदा कर दे तो अल्लाह तआ़ला मुवाख़िज़ा नहीं फ़रमाता, वरना फिर पकड़ फ़रमा सकता है।

'ईला' और क़सम-

इस में 'ईला' यानी बीवी से जुदा रहने की क़सम खा लेना और तलाक़, इद्दत, महर, रज़ाअ़त (यानी बच्चों को दूध पिलाने की मुद्दत) और बेवा की वसीयत वग़ैरह के अह़काम बयान फ़रमाए गये हैं। इस सिलसिले में पहले इस आयात में ग़लत क़समें खाने से रुकने का हुक्म ज़ाहिर फ़रमाया जाता है जो जाहिलियत के दिनों की एक बुरी रस्म अ़रबों में रायज थी।

शुरु में अ़रबों के यहाँ यह बात मशहूर थी कि लोग जब किसी से नाराज़ हो जाते तो अल्लाह की क़सम खाकर यह कह बैठते थे कि हम फ़लाँ से न बोलेंगे, या उस से न मिलेंगे, या उस के पास न जाएँगे, या फ़लाँ लड़ने वालों के दर्मियान सुलह़ नहीं कराएँगे। यहाँ तक कि क़रीबी रिश्तेदारों में भी किसी मनमुटाव पर क़सम खा लेते कि फ़लाँ रिश्तेदार से नेक सुलूक नहीं करेंगे और फिर यह क़समें बहुत से नेक काम छोड़ने का बहाना बन जातीं।

क़सम खाने के बाद-

जब कोई कहता कि इन कामों को करना क्यों छोड़ दिया तो यही जवाब देते कि हम तो इस काम के न करने की क़सम खा चुके हैं। एक तो नेक कामों को छोड़ देना वैसा ही बुरा था, जैसे-अल्लाह तआ़ला का नाम लेकर नेक कामों से बचने की सूरत पैदा की जाए। अल्लाह तआ़ला की ज़ात रह़मान व रह़ीम है और वह बुलन्द शान वाला है, उस का नाम इस में इस्तिमाल करते थे, बड़ा बुरा अ़मल था। इसलिए इन आयतों में अल्लाह तआ़ला ने मना फ़रमाया और हुक्म दिया कि इस तरह़ अल्लाह के नाम को नेकी

और तक़्वा के कामों और लोगों के दर्मियान सुलह़ सफ़ाई कराने के लिए रुकावट न बनाओ। इन आयतों के नुज़ूल के सिल्सिले में बहुत सी रिवायतें हैं। एक रिवायत तो यह है कि-

"ह़ज़रत नोअ़मान बिन बशीर (रज़ि०) ने ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन रवाह़ा की बहन को 'तलाक़ रजई' (वह तलाक़ जिसमें दोबारा निकाह़ की ज़रूरत नहीं होती) दे दी, लेकिन कुछ दिन के बाद सुलह़ का इरादा किया और रुजूअ़ (वापसी) की ख़्वाहिश की। ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन रवाह़ा ने क़सम खा ली कि नोअ़मान से बात न करूँगा और मियाँ-बीवी में सुलह़ न होने दूँगा।"

दूसरी रिवायात यह है कि "ह़ज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) के एक ख़ाला के लड़के थे। मुनाफ़िक़ीन ने ह़ज़रत आ़इशा सिद्दीक़ा (रज़ियल्लाहु अ़न्हा) पर तोहमत का तूफ़ान खड़ा किया लेकिन ह़ज़रत आ़इशा (रज़ियल्लाहु अ़न्हा) की पाक दामिनी और इल्ज़ाम से बरी होने के मुतअ़ल्लिक़ क़ुर्आन में सराह़त आ गई जिस का तफ़्सीली बयान 'अठ्ठारहवें पारा सूरः नूर' में फ़रमाया गया है तो ह़ज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) ने क़सम खाई कि मैं जो उनको ख़र्चा दिया करता था, अब न दूँगा क्योंकि वह भी मुनाफ़िक़ों के साथ इल्ज़ाम लगाने में शरीक हो गया था। इस पर यह आयत नाज़िल हुई और ह़ज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) ने क़सम तोड़ कर कफ़्फ़ारा अदा किया।

कुछ मुफ़स्सिरीन ने यह लिखा है कि इन आयात के नाज़िल होने की कोई ख़ास वजह नहीं, बल्कि इस क़िस्म के बहुत से वाक़िआत हुए थे और लोगों का दस्तूर था कि अल्लाह की क़समें खा बैठते थे कि मैं फ़लाँ से न मिलूँगा या फ़लाँ से सुलह़ न करूँगा, या फ़लाँ शख़्स के ख़र्चे की ख़बरगीरी न करूँगा। इन सब के सम्बन्ध में इन आयतों का नुज़ूल हुआ।

क़सम के मसायल-

1- बेज़रुरत बात-बात पर क़सम खाना बहुत बुरी आ़दत है। इस में अल्लाह तआ़ला के नाम की बड़ी बेइज़्ज़ती होती है। जहाँ तक हो सके सच्ची बात पर भी क़सम न खाना चाहिए।

2- जिस ने किसी बात के करने या न करने पर अल्लाह की क़सम खा ली तो फिर उस के ख़िलाफ़ करना दुरुस्त नहीं, अगर करेगा तो क़सम तोड़ने का कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा।

3- अगर किसी ने किसी गुनाह के काम की क़सम खा ली जैसे- इस तरह़ क़सम खा कर कहा कि मैं अपने माँ-बाप से कभी न मिलूँगा तो ऐसी क़सम तोड़ देना वाजिब है तोड़ कर कफ़्फ़ारा दे देगा। अगर नहीं तोड़ेगा तो गुनाहगार होगा। जैसा कि ह़दीस में भी रसूलुल्लाह (सल्ल०) का इर्शाद है, "जो शख़्स नेक अ़मल के छोड़ने और न करने पर क़सम खा ले तो उस पर वाजिब है कि वह नेक काम करे और क़सम तोड़े और उस का कफ़्फ़ारा दे।"

4- क़सम के तोड़ने का कफ़्फ़ारा यह है कि दस मोह़ताजों को दो वक़्त खाना खिला दे या कच्चा अनाज दे-दे। गेहूँ अगर दे तो हर फ़क़ीर को सदक़-ए-फ़ित्र के बराबर यानी लगभग दो सेर और अगर जौ दे तो गेहूँ के दो गुने यानी चार सेर, या दस मिस्कीनों को कपड़ा पहना दे जिस से बदन का ज़्यादा

हिस्सा ढक जाए।

5- अगर कोई ऐसा ग़रीब है, कि न तो खाना खिला सकता है, न कपड़ा दे सकता है तो लगातार तीन रोज़े रखे। अगर बीच में किसी वजह से भी कोई रोज़ः छूट गया तो कफ़्फ़ारा अदा न होगा।

6- कफ़्फ़ारा में उन्हीं मसाकीन (जिसके पास दूसरे वक़्त का खाना न हो) को कपड़ा या खाना देना दुरुस्त है, जिन को ज़कात देना दुरुस्त है।

225 لا يؤاخذكم الله باللغو في أيمانكم ولكن يؤاخذكم بما كسبت قلوبكم والله غفور حليم

बेख़्याली की क़सम-

इस आयत में बतलाया गया है कि क़सम वह है जो दिल और इरादा से खाई जाए और जो बेकार क़सम मुँह से आ़दत के तौर पर बेख़्याली में बेइरादा ज़बान से निकल जाए और दिल को ख़बर तक न हो वह लग़ु (बेकार) है और ऐसी क़सम पर अल्लाह तआ़ला मुवाख़ज़ह (पकड़) नहीं फ़रमाते।

'लग़ु' (बेकार) यानी बेमाने क़सम की तफ़्सील यह है कि एक तो किसी गुज़री हुई बात पर झूठी क़सम बिला इरादा निकल गई या निकली तो इरादा से, मगर उसको अपने गुमान में सच समझता था। जैसे- किसी आइन्दा बात पर इस तरह़ क़सम निकल गई कि कहना चाहता था 'कुछ' मगर बेइरादा क़सम निकल गई 'कुछ और' तो इस पर न कुछ गुनाह है न कफ़्फ़ारा, मगर जिस पर गिरिफ़्त (पकड़) होने का ज़िक्र फ़रमाया गया वह, वह क़सम है जो जानबूझकर झूठी बात समझ कर खाई हो या आइन्दा किसी काम के करने न करने की जानबूझकर क़सम खाई और फिर क़सम के ख़िलाफ़वर्ज़ी की तो उस पर अल्लाह तआ़ला गिरिफ़्त फ़रमाएँगे।

इस से मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला बिला इरादा और अन्जाने में खाई गई क़सम की गिरिफ़्त नहीं फ़रमाते। हाँ, अगर दिली इरादे के साथ किसी गुनाह या ख़िलाफ़े शरीअ़त ह़रकत की जाए तो उस की पकड़ होगी।

नोट- अब आगे अपनी बीवी से अ़लैहिदा रहने की क़सम खा लेना जिस का अ़रब में उस वक़्त आम रिवाज था जिस को शरीअ़त मे "ईला" कहते हैं उस के अह़काम बताए गये हैं।

(तफ़्सील के लिए देखें अल् माइदा-89)

226 للذين يؤلون من نسائهم تربص أربعة أشهر فإن فاءو فإن الله غفور رحيم

ईला का तरीक़ा-

इन आयतों में औ़रतों ही से मुतअ़ल्लिक़ एक ख़ास क़िस्म का ज़िक्र फ़रमाया जाता है जिस को शरीअ़ते इस्लामिया में "ईला" कहते हैं। शरीअ़त की इस्तिलाह़ (ज़बान) में **"अगर कोई बीवी के पास न जाने और उस से जुदा रहने की क़सम खा ले तो उस को ईला कहा जाता है।"**

अ़रबों में ज़माने जाहिलियत में यह तरीक़ा था कि जब कोई शख़्स अपनी बीवी से नाराज़ हो जाता

और उस को नापसन्द करता तो वह उस से 'ईला' कर लेता। यानी क़सम खा लेता कि मैं अपनी बीवी से क़ुरबत (सम्भोग) नहीं करूँगा और ईला की उन के रिवाज में कोई मुद्दत मुक़र्रर न थी। इसलिए एक तरफ़ तो शौहर 'ईला' की वजह से सारी उम्र बीवी से तअ़ल्लुक़ात ख़त्म रखता, दूसरी तरफ़ वह औ़रत उस के निकाह़ से ख़ारिज भी न होती ताकि किसी दूसरे से निकाह़ कर सके। इस तरह़ यह बेचारी औ़रत बीच में फँसी रहती थी और तक्लीफ़ उठाती। जाहिलियत में औ़रत को सताने का यह एक तरीक़ा था जिस से न औ़रत बेवा होती न शौहर वाली ही रहती।

इस्लाम ने इन ख़राबियों को दूर करने के लिए जाहिलियत के "ईला" में सुधार की और उस के लिए चार माह की मुद्दत मुक़र्रर कर दी ताकि शौहर ईला के बाद इस ज़माने में अपनी बीवी से मुतअ़ल्लिक़ आख़िरी फ़ैसला करने से पहले ठंडे दिल से ख़ूब सोच समझ कर कोई राय क़ायम करे। अगर सोच विचार के बाद इस फ़ैसले पर पहुँचे कि उसे अपनी बीवी से सुलह़ कर लेनी चाहिए और दोबारा उस से निकाह़ वाले तअ़ल्लुक़ात कर लेने चाहिए, तो उसे चाहिए कि वह ईला के दिन से चार माह के अन्दर-अन्दर बीवी से तअ़ल्लुक़ात क़ायम कर ले और अपनी क़सम का कफ़्फ़ारा अदा कर दे और अगर इस ज़माने में उस ने यही तय किया कि वह अपनी बीवी से तअ़ल्लुक़ात बरक़रार रखना नहीं चाहता तो वह चार माह तक बीवी के क़रीब न जाए। चार माह का समय गुज़रने पर अपने आप औ़रत को एक 'तलाक़ बायना' हो जाएगी।

227 وَإِنْ عَزَمُوا الطَّلَاقَ فَإِنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٢٧﴾

ऊपर इन आयात में दो चीज़ों का ज़िक्र फ़रमाया गया है। एक तो 'ईला' का यानी बीवी से जुदा रहने की क़सम खा लेना जिस का ज़िक्र ऊपर हुआ, दूसरे तलाक़ का। क़ानूनी तौर पर शौहर और बीवी के आपसी सम्बन्ध बिल्कुल ख़त्म हो जाने का नाम 'तलाक़' है।

इस्लाम से पहले भी दुनिया में तलाक़ के बहुत से तरीक़े रायज थे। यहूद के यहाँ "तलाक़" के सिलसिले में कोई क़ैद या ज़िम्मेदारी न थी। मर्द का जब जी चाहता तलाक़ नामा लिख कर बीवी से छुट्कारा ह़ासिल कर लेता और बीवी भी उसी वक़्त दूसरे शौहर के साथ निकाह़ कर सकती थी। इस आज़ादी के मुक़ाबिले में नसारा ने बहुत ज़्यादा पाबन्दी और सख़्ती की, शौहर और बीवी के अलग होने की कोई गुन्जाइश ही नहीं रखी सिवाय मौत के। मियाँ-बीवी में कोई बीच की सूरत मुम्किन न थी। यह ईसाइयों में 'रोमन कैथोलिक' का मज़हब है जिन के यहाँ 'तलाक़' बिल्कुल नाजायज़ है और इस्लाम से पहले ईसाइयों में यही फ़िर्क़ा (गिरोह) मौजूद था। रसूलुल्लाह (सल्ल०) के सदियों बाद ईसाइयों का दूसरा फ़िर्क़ा 'प्रोटेस्टेंट' पैदा हुआ उस के यहाँ मियाँ-बीवी के अलगाव की इजाज़त हुई लेकिन सिर्फ़ इस सूरत में कि बीवी किसी से ज़िना (नाजायज़ सम्भोग) करे।

हिन्दू मज़हब का हाल-

यही हाल हिन्दू मज़हब का है उन के यहाँ तलाक़ कोई चीज़ ही नहीं। इन तमाम ग़ैर सन्तुलित रास्तों

के ख़िलाफ़ इस्लाम ने दर्मियान की राह अख़्तियार की और इस्लाम ने इस की इजाज़त रखी कि अगर शौहर ईमानदारी के साथ महसूस करे कि उस की ज़िन्दगी अपनी बीवी से मेल नहीं खाती या जायज़ ज़रूरतों को पूरा नहीं करती तो बजाय इस के कि वह दोनों तमाम उम्र कुढ़ते रहें और एक दूसरे से लड़ते रहें। इस से बेहतर यही है कि वह अलग-अलग हो जाएँ ताकि एक दूसरे से छुटकारा हो जाए जिस में उन को सुकून हो वह राह अख़्तियार कर लें।

ईला का हुक्म-

यहाँ आयत में 'ईला' का हुक्म बयान फ़रमाया जाता है और इर्शाद होता है।

"जो लोग क़सम खा बैठे हैं अपनी बीवियों के पास जाने से उन के लिए चार महीने तक की मोहलत है। इसलिए अगर इन चार महीनों के अन्दर यह लोग अपनी क़सम तोड़ कर औ़रत की तरफ़ रुजूअ़ (वापसी) कर लें तब तो निकाह़ बाक़ी रहेगा और अल्लाह तआ़ला ऐसी क़सम के तोड़ने का गुनाह कफ़्फ़ारा से माफ़ कर देंगे, चूंकि अब बीवी के हुक़ूक़ को अदा करने लगा, इसलिए उस पर रह़मत फ़रमाएँगे और अगर बिल्कुल छोड़ ही देने का पुख़्ता इरादा कर लिया और चार माह के अन्दर क़सम तोड़कर रुजूअ़ नहीं किया तो चार माह गुज़रते ही तलाक़ पड़ जाएगी और अल्लाह तआ़ला उन की इस क़सम को भी सुनते हैं और उन के इस पुख़्ता इरादे को भी जानते हैं, इसलिए इस के मुतअ़ल्लिक़ हुक्म फ़रमाया-

ईला यानी बीवी के पास न जाने की क़सम खा लेने की तशरीह़ फ़ुक़्हा (उ़लमा) ने इस तरह़ की है जिसकी चार सूरतें हैं।

1- एक यह कि कोई क़सम खा ले कि बीवी के पास न जाऊँगा, मगर कोई मुद्दत मुतअ़य्यन (निश्चित) न करे।
2- दूसरे यह कि चार माह की मुद्दत की क़ैद लगा दे।
3- तीसरे यह कि चार माह से ज़्यादा मुद्दत की क़ैद लगा दे।
4- चौथे यह कि चार माह से कम की मुद्दत का नाम ले।

पहली, दूसरी और तीसरी सूरत को शरीअ़त में 'ईला' कहते हैं इस का हुक्म यह है कि अगर चार माह के अन्दर अपनी क़सम तोड़ डाले और बीवी के पास चला जाए तो क़सम तोड़ने का कफ़्फ़ारा दे और निकाह़ बाक़ी रहेगा। अगर चार माह गुज़र गये और क़सम न तोड़ी तो उस औ़रत पर तलाक़ पड़ गई यानी बिना निकाह़ रुजूअ़ करना (फिर जाना, वापस आना) दुरुस्त नहीं रहा। हाँ, अगर दोनों रज़ामन्दी से फिर निकाह़ कर लें तो दुरुस्त है, ह़लाला की ज़रूरत न होगी और चौथी सूरत यानी ईला में चार माह से कम मुद्दत का नाम लिया तो इस का हुक्म यह है कि अगर क़सम तोड़े तो कफ़्फ़ारा ज़रूरी होगा और अगर क़सम पूरी कर ली तब भी निकाह़ बाक़ी रहेगा। **(बयानुल् क़ुर्आन)**

नोट- यह तो ईला के हुक्मों का बयान हुआ। आगे इसी सिल्सिले में मुतल्लिक़ा (वह औ़रत जिस को तलाक़ मिल गई हो) की इ़द्दत (वह ज़माना जिसमें औ़रत को दूसरा निकाह़ करना मना होता है) और

तलाक़ के कुछ ज़रूरी अह़काम वग़ैरह का ज़िक्र फ़रमाया गया है।

228 وَالْمُطَلَّقٰتُ يَتَرَبَّصْنَ بِاَنْفُسِهِنَّ ثَلٰثَةَ قُرُوْٓءٍ ؕ وَلَا يَحِلُّ لَهُنَّ اَنْ يَّكْتُمْنَ مَا خَلَقَ اللّٰهُ فِىْٓ
اَرْحَامِهِنَّ اِنْ كُنَّ يُؤْمِنَّ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ؕ وَبُعُوْلَتُهُنَّ اَحَقُّ بِرَدِّهِنَّ فِىْ ذٰلِكَ اِنْ اَرَادُوْٓا
اِصْلَاحًا ؕ وَلَهُنَّ مِثْلُ الَّذِىْ عَلَيْهِنَّ بِالْمَعْرُوْفِ ۪ وَلِلرِّجَالِ عَلَيْهِنَّ دَرَجَةٌ ؕ وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ۝

وَالْمُطَلَّقٰتُ يَتَرَبَّصْنَ अबू दाऊद और इब्ने अबी ह़ातिम ने अस्मा बिन्ते यज़ीद अन्सारिया (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि रसूल (सल्ल०) के ज़माने में औ़रत को तलाक़ दी जाती थी, मगर मुतल्लिक़ा के लिए इ़द्दत नहीं थी। इस पर अल्लाह तआ़ला ने तलाक़ के लिए इ़द्दत नाज़िल फ़रमाई, यानी तलाक़ दी हुई औ़रतें तीन ह़ैज़ तक इ़द्दत गुज़ारें। **(अबूदाऊद)**

सअ़लूबा ने रिवायत नक़्ल की है कि इस्माई़ल बिन अ़ब्दुल्लाह ग़िफ़ारी (रज़ि०) ने अपनी बीवी फ़नीला को नबी अकरम (सल्ल०) के ज़माने में तलाक़ दी और उन को उस का ह़ामिला होना मालूम नहीं था, फिर बाद में इस का इ़ल्म हुआ तो उन्होंने रुजूअ़ कर लिया, उस के बाद उन की बीवी ने बच्चा जना, जिस में वह ख़ुद भी मर गईं और उन का बच्चा भी मर गया इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई وَالْمُطَلَّقٰتُ। यानी जो ह़ामिला (गर्भवती) न हो वह तीन ह़ैज़ तक इ़द्दत गुज़ारें।

पिछली आयतों में 'ईला' और 'तलाक़' का ज़िक्र फ़रमाया गया था। ईला तो तलाक़ का बैक ग्राउन्ड है या कभी-कभी इरादा रुजूअ़ (पलटने) का होता है इसलिए अब मुतल्लिक़ा औ़रतों से मुतअ़ल्लिक़ इ़द्दत के एह़काम और तलाक़ के साथ रजअ़त (पलटने) के एह़काम बयान फ़रमाये जाते हैं-

तलाक़ के बाद इ़द्दत-

अ़रब में दस्तूर था कि जाहिलियत (Age of Ignorance) के दिनों में औ़रतों को तलाक़ किसी दूसरे से देकर साल-साल भर अलग रहते और इस दौरान बेचारी औ़रत निकाह़ नहीं कर सकती थी, न शौहर उस की ज़रूरतों की ख़बरगीरी करता था, इस तरह़ औ़रतों पर बड़ा ज़ुल्म होता था। औ़रत के लिए इ़द्दत के ज़माने का कोई निश्चित समय न था, अगर शौहर औ़रत को तलाक़ दे दे तो वह दूसरा निकाह़ करने के लिए कितना ज़माना इ़द्दत का गुज़ार कर आज़ाद हो जाए। इस्लाम ने जहाँ जाहिलियत की रस्मों का सुधार किया, वहीं मुताल्लिक़ा औ़रतों के इ़द्दत के बारे में भी एह़काम दिये।

ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा) से मरवी है, साबित बिन क़ैस (रज़ि०) की बीवी रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्‌मत में ह़ाज़िर हुई और अ़र्ज़ किया 'या रसूलल्लाह! मैं साबित बिन क़ैस की ज़िम्मेदारी और अख़्लाक़ पर तो कोई ऐ़ब नहीं लगाती लेकिन मैं पसन्द नहीं करती कि मुसलमान होकर शौहर की नाशुक्री का गुनाह मोल लूँ।' नबी अकरम (सल्ल०) ने फ़रमाया, 'अच्छा तो 'साबित' ने जो बाग़ तुम्हें (महर में) दिया था तुम वापस करती हो?' जी हाँ, इस पर आप (सल्ल०) ने साबित (रज़ि०)

से फ़रमाया, 'अपना बाग़ वापस ले लो और उसे तलाक़ दे दो।'

(सहीह़ बुख़ारी, अलू तलाक़, बाब 12, ह़दीस 5273)

इसे शरई इस्तिलाह़ में 'ख़ुलअ़' कहते हैं। यानी औ़रत का ख़ुद कोशिश कर के तलाक़ ह़ासिल करना, आपसी मेलजोल न होने की सूरत में तलाक़ या ख़ुलअ़ के ज़रिये से अलग होना बेहतर है।

इस आयत के शाने नुज़ूल (Cause of Revelation) के बारे में यह रिवायत आई है कि "अस्मा बिन्त यज़ीद अन्सारिया को उन के शौहर ने तलाक़ दी थी। इद्दत के लिए कोई मुद्दत मुक़र्रर न थी उन्होंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्मत में ह़ाज़िर होकर सवाल किया।" इस पर यह आयत नाज़िल हुई और अल्लाह तआ़ला ने मुतल्लिक़ा औ़रतों की इद्दत बयान फ़रमाई, इर्शाद होता है-

"और तलाक़ दी हुई औ़रतें अपने आप को निकाह़ से रोके रखें, तीन ह़ैज़ (३-माहवारी) ख़त्म होने तक (इसी रुके रहने के समय को इद्दत कहते हैं।) और उन औ़रतों को यह बात ह़लाल नहीं कि अल्लाह तआ़ला ने जो कुछ उन के रह़म (बच्चेदानी) में पैदा किया हो चाहे ह़मल (गर्भ) या ह़ैज़ उसको न छुपाए क्योंकि उस के छिपाने से इद्दत का ह़िसाब ग़लत हो जाएगा।) अगर औ़रतें अल्लाह तआ़ला पर और आख़िरत के दिन पर यक़ीन रखती हैं और उन औ़रतों के शौहर जबकि उन को 'तलाक़ रजअ़ई' मिली हो उन के बिला नये निकाह़ के फिर लौटा लेने का ह़क़ रखते हैं, इस इद्दत के अन्दर (और इस लौटा लेने को 'रजअ़त' कहते हैं) बशर्ते कि 'रजअ़त' करने से सुधार का इरादा रखते हों और सुधार का यह हुक्म इसलिए किया गया कि औ़रतों के भी हुक़ूक़ हैं मर्दों पर, जो कि वाजिब होने में उन ही हुक़ूक़ जैसे हैं जो उन औ़रतों पर हैं मर्दों के कि उनको शरई तरीक़ा से अदा किया जाए और इतनी बात ज़रूर है कि मर्दों का उनके मुक़ाबिले में कुछ दर्जा बढ़ा हुआ है और अल्लाह तआ़ला ज़बरदस्त ह़ाकिम हैं, जो अह़काम चाहें मुक़र्रर करने का ह़क़ रखते हैं और वह ह़कीम भी हैं कि निहायत ह़िक्मत के साथ अह़काम मुक़र्रर करते हैं।"

इद्दत की क़िस्में-

इस आयत में इद्दत से सम्बन्धित हुक्म बयान हुआ है जिसकी कई सूरतें हैं जैसे-

1- एक वह छोटी लड़की जो नाबालिग़ हो और उसे ह़ैज़ (माहवारी ख़ून) अभी न आता हो, उस पर इद्दत नहीं है।

2- दूसरे वह जिस को बुढ़ापे की वजह से ह़ैज़ आना बन्द हो चुका हो। अगर उस को तलाक़ हो जाए तो उस की इद्दत 'तीन माह' है जिस का बयान सूरः तलाक़ २८वें पारे में है।

3- तीसरे ह़ामिला (Pregnant) औ़रत अगर उसे तलाक़ मिल जाए या शौहर मर जाए तो उस की इद्दत वज़अ़ ह़मल (Birth) है यानी जब बच्चा पैदा हो जाए। इस का बयान भी सूरः तलाक़ २८वें पारे में है।

4- चौथे वह औ़रत जो ह़ामिला न हो उस के शौहर का इन्तिक़ाल हो जाए, उस की इद्दत चार माह दस दिन है। इस का बयान इसी सूरः बक़रः में दो रुकूअ़ बाद यानी तीस्वें रुकूअ़ में है।

5- पाँचवे वह आज़ाद औ़रत जो न हा़मिला हो, न सग़ीरा हो (यानी बालिग़ हो) जिस से ख़िलवते सही़हा (तन्हाई की मुलाक़ात या सोह़बत) हो चुकी हो अगर उसे तलाक़ मिल जाए तो उस की इद्दत तीन है़ज़ (माहवारी ख़ून) है, इस आयत में इसी इद्दत का ज़िक्र है।
6- छठे वह औ़रत जिसे ख़िल्वते सही़हा यानी तन्हाई में मुलाक़ात या सोह़बत से पहले ही तलाक़ मिल जाए, इस की कोई इद्दत नहीं। इस का हुक्म सूरः अह़ज़ाब (पारा २२) में है।
7- सातूवें शरई बांदी और लौंडी अगर मुतल्लिक़ा (तलाक़शुदा) हो और उस को है़ज़ आता हो तो उस की इद्दत दो है़ज़ है और अगर बालिग़ होने से पहले से है़ज़ न आता हो तो उस की इद्दत डेढ़ माह है।

इस तरह़ पहला हुक्म इस आयत में इद्दत के विषय में हुआ। दूसरा हुक्म औ़रत के विषय में यह दिया गया कि उस पर वाजिब है कि अपने हा़यज़ा या हा़मिला होने की हा़लत को ज़ाहिर कर दे ताकि उस के मुताबिक़ इद्दत का हि़साब हो।

तीस्रा हुक्म यहाँ आयत में 'तलाक़ रजअ़ई' को बयान फ़रमाया गया, यानी शौहर एक बार या दो बार साफ़ लफ़्ज़ से तलाक़ दे और इद्दत ख़त्म होने से पहले अगर शौहर रुजूअ़ (वापस बीवी बनाना) करना चाहे तो वह ऐसा कर सकता है। इस वापसी से पहला ही निकाह़ क़ायम रहता है और शौहर को ऐसा करने का ह़क़ पहुँचता है, चाहे औ़रत रज़ामन्द न हो तो भी, लेकिन तीसरी तलाक़ के बाद फिर रुजूअ़ (वापस) नहीं कर सकता।

औ़रतों के हुक़ूक़ मर्दों पर-

चौथा हुक्म यह है कि जिस तरह़ मर्दों के हुक़ूक़ औ़रतों के ज़िम्मे हैं उसी तरह़ औ़रतों के हुक़ूक़ मर्दों के ज़िम्मे हैं। जिस तरह़ औ़रतों पर मर्दों के हुक़ूक़ की अदाएगी ज़रूरी है, उसी तरह़ मर्दों पर औ़रतों के हुक़ूक़ का अदा करना फ़र्ज़ है। तफ़्सील इस की इस तरह़ है कि मर्द पर ख़ास हुक़ूक़ औ़रतों के यह हैं।

मर्द अपनी है़सियत के मुताबिक़ औ़रत को खाना, कपड़ा, रहने का घर और महेर दे, उसको तंग न करे। इसी तरह़ औ़रत के ज़िम्मे ख़ास हुक़ूक़ यह हैं-

मर्दों के हुक़ूक़ औ़रतों पर-

मर्द की इताअ़त और ख़िद्मत करना, नाफ़रमानी न करना, जहाँ तक हुक़ूक़ के वाजिब होने का सम्बन्ध है, दोनों मियाँ-बीवी बराबर हैं कि इस का ह़क़ उस पर वाजिब है और उस का ह़क़ इस पर वाजिब है। अल्बत्ता हुक़ूक़ के छोटे-बड़े होने में फ़र्क़ है। इस तरह़ मर्दों का औ़रतों के मुक़ाबिले में कुछ दर्जा बढ़ा हुआ है।

सही़ह़ मुस्लिम में ह़ज़रत जाबिर (रज़ि०) से एक लम्बी ह़दीस में रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने ह़ज्जतुल् विदाअ़ के अपने ख़ुत्बे में बहुत सी बातों के अ़लावा यह भी इर्शाद फ़रमाया, "लोगो! औ़रतों

के बारे में अल्लाह से डरते रहो। उन को जानबूझकर रंज (तक्लीफ़) न दो, तुम ने अल्लाह की अमान से उन को अपने क़ाबू में किया है और अल्लाह तआ़ला के हुक्म से तुम ने उन की शर्मगाहों को अपने लिए ह़लाल किया है, तुम्हारा ह़क़ उन पर यह है कि जिस को तुम न चाहो उस को तुम्हारे घर में न आने दे। अगर वह ऐसा करें तो उन को मारो। मगर, ऐसी मार न हो कि ज़ाहिर हो और औ़रतों का तुम पर दस्तूर के मुताबिक़ खाना कपड़ा देने का ह़क़ है और मैं तुम लोगों में वह चीज़ें छोड़े जाता हूँ कि उस के बाद तुम कभी गुमराह न होगे। हाँ, अगर उसको मज़बूती से पकड़े रहोगे और उस पर अ़मल करते रहोगे वह है खुदा की किताब यानी कुर्आन और मेरी सुन्नत।" **(इ़द्दत की तफ़्सील के लिए देखें सूरः अल् तलाक़-1)**

229 اَلطَّلَاقُ مَرَّتٰنِ ۪ فَاِمْسَاكٌۢ بِمَعْرُوْفٍ اَوْ تَسْرِيْحٌۢ بِاِحْسَانٍ ؕ وَلَا يَحِلُّ لَكُمْ اَنْ تَاْخُذُوْا مِمَّاۤ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ شَيْــًٔا
اِلَّاۤ اَنْ يَّخَافَاۤ اَلَّا يُقِيْمَا حُدُوْدَ اللّٰهِ ؕ فَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا يُقِيْمَا حُدُوْدَ اللّٰهِ ۙ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا فِيْمَا
افْتَدَتْ بِهٖ ؕ تِلْكَ حُدُوْدُ اللّٰهِ فَلَا تَعْتَدُوْهَا ۚ وَمَنْ يَّتَعَدَّ حُدُوْدَ اللّٰهِ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝

اَلطَّلَاقُ مَرَّتٰنِ इमाम तिर्मिज़ी, इमाम ह़ाकिम वग़ैरह ने ह़ज़रत आ़इशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से नक़्ल किया है कि आदमी अपनी बीवी को जितनी चाहता तलाक़ें दे देता था और जिस वक़्त चाहता उस से इ़द्दत में रुजूअ़ कर लेता वह फिर उसी की औ़रत रहती, चाहे उसे सौ या इस से ज़्यादा तलाक़ें दे दे। एक शख़्स ने अपनी बीवी से कहा, "अल्लाह की क़सम! मैं तुझे न कभी ऐसी तलाक़ दूँगा कि तू मुझ से जुदा हो जाए और न तुझ को सुकून से रहने ही दूँगा।" उस की बीवी ने कहा, "यह कैसे होगा।" वह बोला, "मैं तुझे तलाक़ देता रहूँगा, जब तेरी इ़द्दत ख़त्म होने वाली होगी फिर तुझ से रुजूअ़ कर लूँगा।" उस औ़रत ने जाकर रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्मत में सारा वाक़िआ़ बयान किया, आप (सल्ल०) सुनकर ख़ामोश हो गये, तब अल्लाह तआ़ला ने कुर्आन करीम की यह आयत नाज़िल फ़रमाई اَلطَّلَاقُ مَرَّتٰنِ यानी वह तलाक़ जिस में रुजूअ़ करना दुरुस्त है वह दो मर्तबः की है।

फ़रमाने खुदावन्दी وَلَا يَحِلُّ لَكُمْ इमाम अबूदाऊद ने नासिख़ व मन्सूख़ में ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि इन्सान अपनी बीवी का तमाम माल खा जाता था, चाहे उस ने उसे दिया हो या न दिया हो और यह समझता था कि इस सूरत में उस पर कोई गुनाह नहीं हैं।

तब अल्लाह तआ़ला ने यह हुक्म नाज़िल फ़रमाया, तुम्हारे लिए यह ह़लाल नहीं कि कुछ भी लो उस माल में से, जो तुम ने उन को दिया है।

अ़रब में तलाक़ की कोई गिनती तय (Fix) न थी, जो शख़्स जितनी चाहता अपनी बीवी को तलाक़ें देता और फिर इ़द्दत गुज़रने से पहले रुजूअ़ कर लेता, यानी वापस बीवी बना लेता। इसलिए कुछ लोग औ़रतों को तंग करने के लिए बार-बार ऐसा करते थे। अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमा कर उस का दरवाज़ा बन्द किया और रुजूअ़ करने की इजाज़त को दो तलाक़ों तक मह़दूद फ़रमाया। इर्शाद होता है-

दो तलाक़ देने का तरीक़ा-

اَلطَّلَاقُ مَرَّتٰنِ ۪ فَاِمْسَاكٌۢ بِمَعْرُوْفٍ اَوْ تَسْرِيْحٌۢ بِاِحْسَانٍ

वह तलाक़ जिस में रुजूअ़ करना दुरुस्त है दो मर्तबः की है। फिर दो मर्तबः तलाक़ देने के बाद दो अख़्तियार हैं, चाहे रजअ़त करके औ़रत को रख ले, उसूल के मुताबिक़ यानी रजअ़त करके उस को अपने निकाह़ में रहने दे या उस को छोड़ दे कि उस की इद्दत गुज़र जाए और जहाँ चाहे वह औ़रत निकाह़ कर ले, तो यहाँ बताया गया कि रजअ़त सिर्फ़ दो बार तलाक़ देने के बाद हो सकती है यानी दो तलाक़ तक तो अख़्तियार दिया गया है कि इद्दत के अन्दर-अन्दर मर्द चाहे तो औ़रत को फिर क़ानून के अनुसार रख ले, लेकिन इद्दत के बाद रजअ़त बाक़ी नहीं रहती। हाँ, अगर दोनों राज़ी हों तो दोबारा निकाह़ कर सकते हैं और तीसरी बार तलाक़ दे दी जाए तो फिर उन में निकाह़ भी दुरुस्त न होगा जब तक कि वह औ़रत किसी दूसरे मर्द से निकाह़ न करे और फिर वह अपनी मर्ज़ी से तलाक़ दे दे, जिस को शरीअ़त में 'हलाला' कहते हैं।

फिर ज़माने जाहिलियत की एक ज़ालिमाना रस्म यह थी कि जब कोई शख़्स अपनी बीवी को तलाक़ देता तो जो कुछ उसे दिया हुआ होता वह भी उस से छीन लेता। इस पर अल्लाह तआ़ला ने इस बद्सुलूकी से मना फ़रमाया।

तलाक़ एक शरई़ परिभाषा (Term) है जिसका अर्थ पत्नी को निकाह की बंदिश से मुक्त कर देने के हैं। इस्लाम ने वैवाहिक संबंध को मज़बूत और सुदृढ़ बनाने के लिए अत्यन्त स्पष्ट किया हैं किन्तु इस वास्तविकता को ध्यान में रखते हुए कि कुछ परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं जिनमें इस संबंध का बना रहना फ़साद पैदा होने अथवा उसके बढ़ने का कारण बन जाता है, तलाक़ की अनुमति दे दी है ताकि पति और पत्नी को कटुता एवं वैमनस्यता से परिपूर्ण जीवन व्यतीत करने पर विवश न होना पड़े। इस्लाम ने अपने वैवाहिक जीवन से संबंधित क़ानून में जहाँ तलाक़ की गुन्जाइश रखी है वहीं उसे एक अप्रिय चीज़ भी बताया है। अतः नबी (सल्ल०) का इर्शाद है-

أبغض الحلال الى الله الطلاق- (ابو داؤد)

"अल्लाह के नज़्दीक ह़लाल चीज़ों में सब से अधिक नापसंदीदा चीज़ तलाक़ है।"

यानी शरीअ़त की मंशा यह है कि पति तलाक़ देने के इस अधिकार को उसी समय इस्तेमाल करे जबकि वह अत्यन्त आवश्यक या अनिवार्य समझे। शरीअ़त ने तलाक़ का जो सही प्रारूप निर्धारित किया है उसको भी समझना ज़रूरी है। इस सिल्सिले के कुछ आदेश आगे आ रहे हैं।

यह भी स्पष्ट रहे कि इस्लाम ने जहाँ मर्द को तलाक़ का अधिकार दिया है वहीं औ़रत के लिए भी मर्द से छुट्कारा पाने की कुछ सूरतें बताई हैं। जिसमें से एक सूरत 'ख़ुलअ़' की है, जिसका हुक्म इसी आयत में मौजूद है।

तलाक़ का हुक्म ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) की शरीअ़त में मौजूद था, लेकिन अहले किताब ने इसमें बड़े अन्याय से काम लिया। यहूदियों ने इसे अत्यन्त सरल बना दिया और ईसाइयों ने अत्यन्त कठिन बना दिया। अतः वर्तमान तौरात में हैः-

"यदि कोई पुरुष किसी स्त्री को ब्याह ले और उसके बाद उसमें कुछ लज्जा की बात पाकर उस से

अप्रसन्न हो तो वह उस के लिए त्याग पत्र लिखकर और उसके हाथ में देकर उसे अपने घर से निकाल दे और जब वह उसके घर से निकल जाए तब दूसरे पुरुष की हो सकती है।" **(व्यवस्था विवरण 24:1:2)**

यहूदियों के यहाँ एक क़ायदा यह भी था कि तलाक़ देने के बाद पति उसे फिर अपनी पत्नी नहीं बना सकता था। दूसरी तरफ़ वर्तमान इंजील में है।

"इसलिए जिसे परमेश्वर ने जोड़ा है उसे मनुष्य अलग न करे, और घर में चेलों ने इस के विषय में उस से फिर पूछा। उस ने उन से कहा, जो कोई अपनी पत्नी को त्याग कर दूसरी से ब्याह करे तो वह उस पहली के विरोध में व्याभिचार करता है। यदि पत्नी अपने पति को छोड़कर दूसरे से ब्याह करे तो वह व्याभिचार करता है।" **(मरक़ुस 10:9,10,11,12)**

इस आधार पर ईसाइयों ने तलाक़ को बिल्कुल ह़राम ठहरा दिया और सिर्फ़ इस सूरत में जायज़ रखा जबकि पत्नी व्याभिचार (Adultery) में लिप्त हो। किन्तु यदि सही दृष्टिकोण से इस पर निगाह डाली जाए तो व्याभिचार के अलावा और भी कारण हैं जो तलाक़ के लिए उचित ठहराये जा सकते हैं। अतः "इन्साइक्लोपीडिया आफ़ रेलिजन ऐण्ड एथिक्स" का संकलनकर्त्ता लिखता है।

"Although it is evident that adultery affects the marriage relation more closely than any other offence, yet it may fairly be said that there are other things which may make married life so intolerable, and the perfect ideal union so impossible that if divorce or separation be allowed at all, the ground for such separation ought not in reason to be confined to the one offence of adultery........there are offence which make life so intolerable that there can be no restoration of affection, that, where the tie of affection has been absolutely destroyed, the real vinculum has been raptured and that therefore, such offeces may rightly be put in the same category as conjugal infidelity in the strict sence of the word."

(Encyclopaedia of Religion and Ethics Vol. VIII P. 438)

सारांश-

जब कि यह बात साफ़ है कि व्याभिचार तलाक़ के लिए सबसे अहम जुर्म है, लेकिन इसके अ़लावा दूसरे और बहुत से कारण हो सकते हैं जिन को अगर ध्यान में लाया जाए तो व्याभिचार के अ़लावा भी दूसरे कारण तलाक़ हो सकते हैं।

दूसरे जुर्म ऐसे हैं जिस से शादीशुदा जीवन बनाये रखना असहनीय हो जाता है, आपसी मुह़ब्बतें समाप्त हो जाती हैं, अतः इन कारणों को भी तलाक़ देने के कारण की सूची में रखना चाहिए।

अतः स्पष्ट है कि इस्लाम का दृष्टिकोण दोनों किनारों के बीच समता और न्याय का है। अतः उसने एक तरफ़ तलाक़ को अप्रिय क़रार दिया, दूसरी तरफ़ तलाक़ के अधिकार को इस्तेमाल करने के सिल्सिले में ह़द और शर्तें भी निश्चित कर दीं।

وَلَا يَحِلُّ لَكُمْ أَنْ تَأْخُذُوا مِمَّا آتَيْتُمُوهُنَّ شَيْئًا إِلَّا أَنْ يَخَافَا أَلَّا يُقِيمَا حُدُودَ اللَّهِ

(और तुम्हारे लिए यह बात ह़लाल नहीं कि बीवियों को छोड़ने के वक़्त उन से कुछ भी लो उस माल

में से, जो तुम ही ने उन को महेर में दिया था, मगर एक सूरत में ह़लाल है। वह यह कि कोई मियाँ-बीवी ऐसे हों कि दोनों को यह अन्देशा हो कि अल्लाह तआ़ला के शरई क़ानून को जो एक-दूसरे के हुक़ूक़ हैं क़ायम न कर सकेंगे) यानी ज़माने जाहिलियत (Age of Ignorance) की रस्म से मना फ़रमाया है कि जो कुछ तुम अपनी बीवियों को महेर निकाह़ के वक़्त में दे चुके हो, तलाक़ के बाद उस में से कुछ भी वापस मत लो। अल्बत्ता एक सूरत में तलाक़ के बदले मर्द को कुछ माल लेने की इजाज़त दे दी और वह यह है कि मियाँ-बीवी के सम्बन्ध इतने बिगड़ जाएँ कि उन के दर्मियान सुलह़ की कोई सूरत न निकल सके और औ़रत की तरफ़ से शरई हुदूद के मुताबिक़ आपसी हुक़ूक़ अदा करने की कोई उम्मीद न रहे, और तलाक़ देना मजबूरी हो जाए तो ऐसी सूरत में जायज़ है कि औ़रत मर्द को कुछ माल देकर तलाक़ ह़ासिल कर ले। तलाक़ की इस सूरत को शरीअ़ते इस्लामिया की इस्तिलाह़ (sense) में 'खुलअ़' कहते हैं। इसी के विषय में आगे इर्शाद है-

खुलअ़ का तरीक़ा-

فَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا یُقِیْمَا حُدُوْدَ اللّٰهِ ۙ فَلَا جُنَاحَ عَلَیْهِمَا فِیْمَا افْتَدَتْ بِهٖ ؕ

अगर तुम लोगों को यानी मियाँ-बीवी को यह ख़त्‌रा हो कि वह दोनों अल्लाह के क़ानून को क़ायम न कर सकेंगे तो दोनों पर कोई गुनाह न होगा उस माल को लेने देने में, जिस को देकर औ़रत अपनी जान छुड़ा ले।

ह़दीस शरीफ़ में है कि ह़ज़रत साबित बिन क़ैस (रज़ि०) की बीवी ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ख़िद्‌मत में ह़ाज़िर हुईं और अ़र्ज़ किया, "या रसूलल्लाह! मैं साबित बिन क़ैस के दीन अख़्लाक़ और आ़दात पर कोई ऐब नहीं लगाती मगर मैं और वह एक जगह जमा नहीं हो सकते, मैंने बहुत से लोगों को देखा तो सबसे ज़्यादा काले, छोटे क़द के बद्‌सूरत 'साबित' ही नज़र आये।" रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कि "साबित को वह बाग़ीचा वापस दे सकती हो जो उस ने तुम को दिया है।" कहा, "जी हाँ वह भी और कुछ ज़्यादा दे सकती हूँ।" रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने साबित बिन क़ैस (रज़ि०) को बुलाया, "तुम उस से वह बाग़ीचा वापस ले लो और उस को तलाक़ दे दो।" इस पर यह आयत नाज़िल हुई, यह इस्लाम में पहला 'खुलअ़' था।

'खुलअ़' में औ़रत से माल लेकर छोड़ने की दो सूरते हैं।

(1) एक 'खुलअ़' (2) दूसरा 'तलाक़ अ़लल् माल'

(1) खुलअ़ यह है कि औ़रत कहे कि तू इतने माल पर मुझ से खुलअ़ कर ले और मर्द कहे कि मुझ को मन्ज़ूर है उस के यह कहते ही 'तलाक़ बायन' हो जाएगी, चाहे लफ़्ज़ तलाक़ न कहे। माल औ़रत के ज़िम्मे देना वाजिब हो जाएगा।

(2) तलाक़ अ़लल् माल यह है कि-

"मर्द औ़रत से कहे कि तुझ को इतने माल के बदले 'तलाक़' है। उस का हुक्म यह है कि अगर औ़रत मन्ज़ूर न करे तो तलाक़ नहीं होती और अगर मन्ज़ूर कर ले तो मन्ज़ूर करते ही तलाक़ बायन

हो जाएगी और उतना माल औ़रत के ज़िम्मे वाजिब हो जाएगा।"

ख़ुलअ़ से सम्बन्धित कुछ मसायल-

1- अगर नाइत्तिफ़ाक़ी मियाँ-बीवी में हो जाए और ग़लती औ़रत की हो और ख़ुद ही दरख़्वास्त भी ख़ुलअ़ की वह करती है तो औ़रत गुनाहगार होगी और मर्द माल लेने में गुनाहगार न होगा। अलबत्ता महेर से ज़्यादा माल लेना मकरुह है।

2. अगर बिगाड़ में ग़लती मर्द की है तो ख़ुलअ़ का माल लेने से मर्द गुनाहगार होगा, कि इतना माल लेने लगे जितना कि उस ने दिया भी न हो, मगर औ़रत माल देने से गुनाहगार न होगी।

3. अगर मर्द औ़रत का क़ुसूर समझता है और औ़रत मर्द का क़ुसूर समझती है और हर एक अपनी राय में अपने को मज़लूम और दूसरे को ज़ालिम समझता है तो मर्द को रक़म लेने में गुनाह होगा और महेर से ज़्यादा लेना मकरुह है और ऐसी सूरत में औ़रत को ख़ुलअ़ की दरख़्वास्त देने में गुनाह न होगा।

4. माल के लेने में गुनाह का होना या न होना उस में तलाक़ अललमाल का हुक्म भी ख़ुलअ़ जैसा है।

5. जिस सूरत में मर्द गुनाहगार रहा हो या औ़रत गुनाहगार रही हो, सभी हालतों में ख़ुलअ़ सही व नाफ़िज़ हो जाएगा चाहे गुनाह के साथ ही हो।

तलाक़ से मुतअ़ल्लिक़ और भी बहुत सी बारीकियाँ हैं, इसलिए ज़रूरी है कि अगर तलाक़ के मसायल से वास्ता पड़े तो शरई उ़लूम (शरीअ़त का इ़ल्म) में महारत रखने वाले उ़लमा से पूछ कर मस्ला मालूम किया जाए फिर उस के मुताबिक़ अ़मल किया जाए। आयत के अख़ीर में ताकीद और तम्बीह के तौर पर इर्शाद फ़रमाया गया-

تِلْكَ حُدُوْدُ اللّٰهِ فَلَا تَعْتَدُوْهَا ۚ وَمَنْ يَّتَعَدَّ حُدُوْدَ اللّٰهِ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝

(यह सब अह़काम अल्लाह के बताये हुए क़ानून हैं, सो तुम उन से बाहर मत निकलना और जो शख़्स अल्लाह के क़ानून से बाहर निकल जाए तो ऐसे ही लोग अपना नुक़्सान करने वाले हैं) यानी यह अह़काम ख़ुदाई क़ानून हैं। इन कानूनों में ग़रीब व अमीर, शरीफ़, आ़लिम व जाहिल, बादशाह और फ़क़ीर में कोई फ़र्क़ नहीं। जो लोग अल्लाह के क़ानून से मुँह मोड़ते हैं अपने ऊपर ख़ुद ज़ुल्म करते हैं और आख़िरत का वबाल मोल लेते हैं।

यहाँ से यह बात अच्छी तरह़ साफ़ हो जाती है कि इस्लाम हमारे घरेलू और ख़ानदानी मामलात और समाज की इस्लाह़ (सुधार) व दुरुस्ती के लिए हर मामले में रहनुमाई करता है और इस्लाम यह चाहता है कि मियाँ-बीवी के सम्बन्ध और दुनिया का समाज नेकी और तक़्वा पर क़ायम हो। कोई किसी के साथ ज़ुल्म व ज़्यादती न करे, मगर जब हम इन अल्लाह के अह़काम की परवाह ही न करें तो आख़िरत में जो वबाल भुगतना होगा वह तो अलग रहा यहाँ दुनिया में भी भलाई नसीब नहीं हो सकती।

आयत नं० 230 से 234 तक

فَإِنْ طَلَّقَهَا فَلَا تَحِلُّ لَهُ مِنْ بَعْدُ حَتّٰى تَنْكِحَ زَوْجًا غَيْرَهُ ۗ فَإِنْ طَلَّقَهَا فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا أَنْ يَتَرَاجَعَا إِنْ ظَنَّا أَنْ يُقِيمَا
حُدُودَ اللّٰهِ ۗ وَتِلْكَ حُدُودُ اللّٰهِ يُبَيِّنُهَا لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ۝ وَإِذَا طَلَّقْتُمُ النِّسَاءَ فَبَلَغْنَ أَجَلَهُنَّ فَأَمْسِكُوهُنَّ بِمَعْرُوفٍ أَوْ سَرِّحُوهُنَّ
بِمَعْرُوفٍ ۚ وَلَا تُمْسِكُوهُنَّ ضِرَارًا لِتَعْتَدُوا ۚ وَمَنْ يَفْعَلْ ذٰلِكَ فَقَدْ ظَلَمَ نَفْسَهُ ۚ وَلَا تَتَّخِذُوا آيَاتِ اللّٰهِ هُزُوًا ۚ وَاذْكُرُوا
نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَمَا أَنْزَلَ عَلَيْكُمْ مِنَ الْكِتٰبِ وَالْحِكْمَةِ يَعِظُكُمْ بِهِ ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ۝
وَإِذَا طَلَّقْتُمُ النِّسَاءَ فَبَلَغْنَ أَجَلَهُنَّ فَلَا تَعْضُلُوهُنَّ أَنْ يَنْكِحْنَ أَزْوَاجَهُنَّ إِذَا تَرَاضَوْا بَيْنَهُمْ بِالْمَعْرُوفِ ۗ ذٰلِكَ يُوعَظُ بِهِ
مَنْ كَانَ مِنْكُمْ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ ۗ ذٰلِكُمْ أَزْكٰى لَكُمْ وَأَطْهَرُ ۗ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ وَأَنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ۝ وَالْوَالِدٰتُ يُرْضِعْنَ
أَوْلَادَهُنَّ حَوْلَيْنِ كَامِلَيْنِ ۖ لِمَنْ أَرَادَ أَنْ يُتِمَّ الرَّضَاعَةَ ۚ وَعَلَى الْمَوْلُودِ لَهُ رِزْقُهُنَّ وَكِسْوَتُهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ ۚ لَا تُكَلَّفُ نَفْسٌ
إِلَّا وُسْعَهَا ۚ لَا تُضَارَّ وَالِدَةٌ بِوَلَدِهَا وَلَا مَوْلُودٌ لَهُ بِوَلَدِهِ ۚ وَعَلَى الْوَارِثِ مِثْلُ ذٰلِكَ ۗ فَإِنْ أَرَادَا فِصَالًا عَنْ تَرَاضٍ مِنْهُمَا
وَتَشَاوُرٍ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا ۗ وَإِنْ أَرَدْتُمْ أَنْ تَسْتَرْضِعُوا أَوْلَادَكُمْ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ إِذَا سَلَّمْتُمْ مَا آتَيْتُمْ بِالْمَعْرُوفِ ۗ وَاتَّقُوا
اللّٰهَ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللّٰهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ۝ وَالَّذِينَ يُتَوَفَّوْنَ مِنْكُمْ وَيَذَرُونَ أَزْوَاجًا يَتَرَبَّصْنَ بِأَنْفُسِهِنَّ أَرْبَعَةَ أَشْهُرٍ
وَعَشْرًا ۖ فَإِذَا بَلَغْنَ أَجَلَهُنَّ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيمَا فَعَلْنَ فِي أَنْفُسِهِنَّ بِالْمَعْرُوفِ ۗ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرٌ ۝

अनुवाद-

(230) (दो तलाक़ों के बाद) फिर अगर वह उसे तलाक़ दे दे, तो इसके बाद वह उसके लिए जायज़ न होगी, जब तक कि वह उसके अ़लावा किसी दूसरे से निकाह़ न कर ले; हाँ अगर वह (दूसरा पति भी) उसको तलाक़ दे दे, तो दोनों पर कोई गुनाह नहीं, कि फिर मिल जाएँ, बशर्ते कि दोनों को उम्मीद हो कि अल्लाह की निर्धारित सीमाओं (क़ानून) को क़ायम रखेंगे, और यह अल्लाह की सीमाएँ (क़ानून) हैं, जिन्हें 'वह' उन लोगों के लिए बयान फ़रमाता है जो जानना चाहते हों; (231) और जब तुम औ़रतों को (दो बार) तलाक़ दे चुको और वह अपनी निश्चित अवधि (इद्दत) को पहुँच जाएँ, तो (अब या तो) उन्हें इ़ज़्ज़त के साथ रोक लो, या इ़ज़्ज़त के साथ रिहाई (विदा कर दो) दे दो, और उनको ज़्यादती पहुँचाने के इरादे से न रोके रखो, और जो कोई ऐसा करेगा, वह ख़ुद अपने ही ऊपर ज़ुल्म करेगा। और अल्लाह के हुक्मों को हंसी (मज़ाक़) न समझो, और अल्लाह की नेअ़मतें जो तुम पर हुई हैं, उसे याद करो और (उस) किताब व ह़िकमत (तत्वदर्शिता) को भी जो 'उसने' तुम पर उतारी हैं, कि उससे 'वह' तुम्हें नसीह़त करता रहता है; और अल्लाह से डरते रहो और जाने रहो, कि अल्लाह हर चीज़ का जानने वाला है; (232) और जब तुम (अपनी) औ़रतों को (तीन बार) तलाक़ दे दो और वे अपनी निर्धारित अवधि(इद्दत) को पहुँच जाएँ, तो उन्हें इस से मत रोको कि वह अपने (होने वाले दूसरे) पतियों से निकाह न करें, जबकि वह आपस में रज़ामन्दी के साथ अच्छी तरह मामला तय करें; यह नसीह़त तुममें से उसको की जा रही है, जो अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता हो, यही तुम्हारे लिए पाकीज़ा(पवित्र) और साफ़ सुथरा तरीक़ा है, और अल्लाह(सब कुछ) जानता है तुम नहीं जानते। (233) और माएँ अपनी औलाद को पूरे दो साल तक दूध पिलाएँ, यह उस व्यक्ति के

लिए है जो (तलाक़ देने के बाद अपने बच्चे को) दूध पिलाने की अवधि को पूरा करना चाहे; और (उस सूरत में) जिसका वह बच्चा है, (अर्थात बाप), उस पर नियम के अनुसार माओं को खाना,कपड़ा देना लाज़िम है; किसी व्यक्ति को तकलीफ़ नहीं दी जाती, मगर जहाँ तक उस का सामर्थ्य (अपनी समाई भर की ज़िम्मेदारी) हो; न तो माँ को उसके बच्चे की वजह से तकलीफ़ पहुँचाई जाए, और न उस (के बाप) को जिसका बच्चा है, (यानी उस के बाप को) उसके बच्चे की वजह से (तकलीफ़ दी जाए); और (दूध पिलाने और खाना कपड़ा देने की जैसी बाप पर ज़िम्मे दारी है) वैसे ही (उसके न होने पर उसके) वारिस पर भी है; फिर अगर (माता-पिता) दोनों अपनी मर्ज़ी और सलाह से (दूध) छुड़ाना चाहें, तो उन पर कुछ गुनाह नहीं; और अगर तुम अपनी औलाद को किसी (दूसरी औ़रत) से दूध पिलवाना चाहो, तो तुम पर कुछ गुनाह नहीं, बशर्ते कि जो तुमको, नियम के अनुसार, देना था (उसके) हवाले कर दो, और अल्लाह से डरते रहो, और जाने रहो कि जो कुछ भी तुम करते हो, अल्लाह उसको देख रहा है। (234) और तुममें से जो लोग मर जाएं, और अपने पीछे पत्नियाँ छोड़ जाएँ, तो वे पत्नियाँ अपने आप को, चार महीने और दस दिन तक रोके रखें; फिर जब वे अपनी निर्धारित अवधि (इद्दत) को पहुँच जाएँ, तो नियम के अनुसार, वे अपने लिए जो पसंद (निकाह) करें, उसमें तुम पर कोई गुनाह नहीं; जो कुछ तुम करते हो अल्लाह उसकी खूब ख़बर रखता है।

आयत नं० 230 से 234 तक की व्याख्या

230 فَإِنْ طَلَّقَهَا فَلَا تَحِلُّ لَهُ مِنْ بَعْدُ حَتّٰى تَنْكِحَ زَوْجًا غَيْرَهٗ ۚ فَإِنْ طَلَّقَهَا فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَآ أَنْ يَتَرَاجَعَآ إِنْ ظَنَّآ أَنْ يُقِيمَا حُدُوْدَ اللّٰهِ ۚ وَتِلْكَ حُدُوْدُ اللّٰهِ يُبَيِّنُهَا لِقَوْمٍ يَعْلَمُوْنَ ۝

وَإِذَا طَلَّقْتُمُ النِّسَآءَ इब्ने जरीर ने औ़फ़ी के वास्ते से ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से नक़्ल किया है कि आदमी अपनी बीवी को तलाक़ देता था, फिर इद्दत पूरी होने से पहले उस से रुजूअ़ कर लेता था, उस के बाद फिर उसे तलाक़ दे देता था। इसी तरह़ उस को नुक़्सान पहुँचाता और लट्काये रखता था, इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई।

पिछली आयत में मर्द को दो तलाक़ तक रुजूअ़ करने का ह़क़ बयान फ़रमाया गया था और बतला दिया गया था कि दो मर्तबः तलाक़ दे देने के बाद दो अख़्तियार हैं। चाहे रजअ़त (वापस) करके औ़रत से सुलह़ कर के रख ले, चाहे इद्दत के अन्दर रजअ़त न करके औ़रत को अच्छे तरीक़े से छोड़ दे। फिर इद्दत गुज़र जाने के बाद औ़रत जिस से चाहे निकाह़ कर ले। अब अगर किसी ने दो तलाक़ें देने के बाद तीसरी तलाक़ भी दे दी तो उस का हुक्म इस आयत में बयान फ़रमाया जाता है और इर्शाद होता है।

इद्दत में तलाक का हुक्म-

यहाँ इस आयत में तीन तलाक़ का हुक्म बयान किया गया है। दो तलाक़ों के बाद अगर रजई (तलाक़) हो तो शौहर रुजूअ़ कर सकता है, लेकिन अगर उस ने इद्दत के अन्दर तीसरी तलाक़ भी दे दी तो अब न वह इस से रुजूअ़ कर सकता है और न ही निकाह़ कर सकता है। अल्बत्ता सिर्फ़ एक

ही तरीक़ा है जिससे वह औरत दोबारा उस के निकाह़ में आ सकती है, वह यह कि औ़रत तलाक़ की इद्दत पूरी करके किसी दूसरे मर्द से निकाह़ करे और हुक़ूक़ अदा करके दूसरे शौहर के साथ रहे। फिर अगर वह दूसरा शौहर भी तलाक़ दे दे या मर जाए तो उस की इद्दत पूरी करने के बाद पहले शौहर से निकाह़ हो सकता है। इसी को शरीअ़त की इस्तिलाह़ (sense) में "ह़लाला" कहते हैं।

पहले शौहर के साथ दोबारा निकाह़ की शर्तें-

मुतल्लिक़ा (Divorced) को पहले शौहर के साथ दोबारा निकाह़ के जायज़ होने के लिए पाँच शर्तें हैं-

1- पहले शौहर की इद्दत पूरी करे।

2- इद्दत के बाद दूसरे शौहर से शरई अ़क़्द (निकाह़) करे।

3- दूसरा शौहर उस से हमबिस्तर (Sexual Intercourse) हो।

4- दूसरा शौहर उसे तलाक़ दे दे।

5- दूसरे शौहर के तलाक़ की इद्दत पूरी करे।

इन पाँच में से अगर एक शर्त भी पूरी न होगी तो पहले शौहर से उस का निकाह़ जायज़ न होगा और पहले शौहर से इस नये निकाह़ की इजाज़त उस सूरत में होगी कि पहले शौहर और औ़रत दोनों का यह गुमान ग़ालिब हो कि हम दोबारा निकाह़ के बाद एक दूसरे के हुक़ूक़ में कमी नहीं करेंगे।

इस आयत से यह साफ़ ज़ाहिर है कि तीन तलाक़ के बाद मर्द को रजअ़त का ह़क़ बाक़ी नहीं रहता चाहे वह तीन तलाक़ें अ़लैहिदा-अ़लैहिदा (अलग-अलग) दी हों या इकट्ठी दी हों। तमाम सह़ाबा और ताबिअ़ीन और आइम्मा मुजतहदीन का इस पर इजमाअ़ (इत्तिफ़ाक़ Concensus) है कि तीन तलाक़ें जिस तरह़ भी दी जाएँ चाहे एक वक़्त में अ़लैहिदा-अ़लैहिदा दी जाएँ या तीन वक़्त में दी जाएँ, वह मान्य समझी जाएँगी। इस तरह़ तीन तलाक़ों के बारे में अच्छी तरह़ समझ लेना चाहिए क्योंकि इस ज़माने के कुछ लोगों का कहना है कि तीन तलाक़ देने से एक तलाक़ पड़ती है।

इमाम अबू ह़नीफ़ा (रह़०), इमाम मालिक (रह़०), इमाम शाफ़ई (रह़०) और इमाम अह़मद बिन ह़म्बल (रह़०) की जिन की तक़्लीद और इत्तिबाअ़ पर सिवाय चन्द ज़ाहिरीन (यानी ह़दीस के ज़ाहिरी माने लेने वालों) के अ़लावा उम्मते मुह़म्मदिया के उ़लमा और फ़ुक़्हा और मुह़द्दिसीन व मुफ़स्सिरीन मुत्तफ़िक़ (agree) हैं। इन इमामों का इजमाअ़ी (सामूहिक) फ़तवा यह है कि तीन तलाक़ें देने से तीनों ही तलाक़ वाक़े हो जाती हैं, इसी को इमाम बुख़ारी (रह़०) ने अख़्तियार फ़रमाया है जिस के लिए अपनी सह़ीह़ बुख़ारी में एक ख़ास बाब (पाठ) क़ायम किया और उन तमाम शुब्ह़ात का जवाब दिया कि जो लोग तीन तलाक़ को एक तलाक़ बनाने के लिए पेश करते हैं।

इमाम क़ुर्तुबी (रह़०) ने भी तफ़्सील से जवाब दिया है जिसे अहले इ़ल्म देख सकते हैं, इसलिए चाहिए कि तीन तलाक़ के बारे में किताब व सुन्नत और इजमाअ़ सह़ाबा (अक्सर सह़ाबा की सहमति) और इज्माअ़ आइम्मा (अक्सर आइम्मा की सहमति) का इत्तिबाअ़ करें। **(मआ़रिफ़ुल क़ुर्आन)**

तलाक़ अह्सन-

अ़दद तलाक़ (तलाक़ की गिनती) के सिल्सिले में क़ुर्आन और सुन्नत के इर्शादात, तअ़लीमात, सहाबा का अ़मल और ताबिअ़ीन से अ़दद तलाक़ के विषय में जो कुछ साबित होता है उस का ख़ुलासा यह है कि जब तलाक़ देने के सिवा कोई रास्ता ही न रहे तो तलाक़ का अह़सन (बेहतर) तरीक़ा शरीअ़त में यह है कि सिर्फ़ एक तलाक़ ह़ालते तुहर (पाकी) में दे दें जिस में बीवी से मुजामिअ़त (सोह़बत) न की हो और एक तलाक़ देकर छोड़ दें। इद्दत ख़त्म होने के बाद निकाह़ अपने आप टूट जाएगा। इसे फ़ुक़्हा (ज्ञानियों) ने 'तलाक़े अह़सन' कहा है और ह़ज़रात सहाबा ने इसी तलाक़ को बेहतर तरीक़ा क़रार दिया है।

क़ुर्आन की पिछली आयत اَلطَّلَاقُ مَرَّتٰنِ से इस की भी इजाज़त निकलती है कि दो तलाक़ तक दे दी जाएँ। मगर लफ़्ज़ مَرَّتٰنِ में इस तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि दो तलाक़ एक लफ़्ज़ और एक वक़्त में न हों, बल्कि दो तुहरों (पाकी) में अलग-अलग हों।

बहरहाल दो तलाक़ों तक क़ुर्आन के अल्फ़ाज़ से साबित है, इसलिए आइम्मा का इत्तिफ़ाक़ है और फ़ुक़्हा ने इसे भी तलाक़ सुन्नत में दाख़िल किया है। जबकि तीसरी तलाक़ के ग़ैर मुस्तह़सन (बेहतर न) होने में किसी को भी इख़्तिलाफ़ नहीं। तीसरी तलाक़ का ग़ज़बनाक मकरुह होना ह़दीस में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के इर्शादात से साबित है, मगर इन सब बातों के बावजूद अगर किसी ने ऐसा क़दम उठा लिया तो उस का वही असर होना चाहिए, जो जायज़ और मुस्तह़सन तलाक़ का होता है। यानी तीन-तीन तलाक़ हो जाएँगी और रजअ़त का अख़्तियार न रहेगा। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का फ़ैसला इस पर दलील है कि बावजूद नाराज़गी के आप ने तीन तलाक़ों को लागू फ़रमा दिया जिस के बहुत से वाक़िआ़त ह़दीस की किताबों में मौजूद हैं।

मुख़ालिफ़ीन इस्लाम और ग़ैर मुस्लिमीन "तलाक़" के बारे में एतिराज़ किया करते हैं कि इस्लाम ने ऐसे मकरुह (नापसन्द) सिल्सिले को जायज़ रखा जो आपसी सम्बन्धों के ख़िलाफ़ है। इस का जवाब यह है कि इस में कोई शुब्हा नहीं कि तलाक़ मकरुह़ चीज़ है। इसी लिए ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जायज़ चीज़ों में से तलाक़ अल्लाह के नज़्दीक सब से ज़्यादा नापसन्द है और एक ह़दीस में है कि जो औ़रत बग़ैर किसी शरअ़ी वजह के तलाक़ लेगी उस पर जन्नत की ख़ुशबू ह़राम हो जाएगी"।

मगर इस में भी कोई शुब्हा नहीं कि मियाँ-बीवी को तमाम उ़म्र मिलकर गुज़ारनी पड़ती है और यह भी ज़ाहिर है कि एक दूसरों की आ़दतों का मिलना ज़रुरी और लाज़मी नहीं। इस के अ़लावा न मालूम कितनी ऐसी सख़्त जरूरतें हो जाती हैं कि जिन का इलाज सिवाय तलाक़ के कुछ और नहीं, इसलिए शरीअ़ते इस्लामिया ने न तो यहूद की तरह़ छूट दिया कि ख़्वाह मख़्वाह ज़रा सी बात पर तलाक़ देने की इजाज़त दी, बल्कि पहले यूँ फ़रमाया कि औ़रतों की कज ख़ुल्क़ी (टेढ़ेपन) पर सब्र किया करो। उन के साथ नेक सुलूक और एह़सान के साथ पेश आया करो। औ़रतों को समझाया करो कि तुम पर मर्दों की इताअ़त और ख़ैर-ख़्वाही लाज़िम है। उस के बाद शदीद ज़रूरत और मजबूरी के दर्जे में तलाक़ की

इजाज़त दी, मगर उस के साथ फिर भी यह बातें सामने रखें ताकि मिलाप, सुलह़ व इत्तिफ़ाक़ मुम्किन हो सके।

तलाक़ देने की ह़ालत-

(1) पहले यह कि तुहर यानी औ़रत को पाकी (Non-menstrual Period) की ह़ालत में तलाक़ दे।

(2) दूसरे यह कि तीन तलाक़ एक बार में न दे, शायद बीच में मिलाप हो जाए और ग़ुस्सा ठंडा हो जाए।

(3) तीसरे इद्दत के बाद भी मिलाप का रास्ता रखा और दोबारा रजअ़त (वापसी) की इजाज़त दी।

इस्लाम ने न तो यहूद की तरह़ सख़्त रखा और न ईसाईयों की तरह़ नर्म। इस्लाम एक फ़ित्री दीन मज़हब (Natural Religion) है, इन्सान की पूरी ज़िन्दग़ी का एक मुकम्मल दस्तूरे अ़मल (System of life) है, दुनिया और आख़िरत की ज़िन्दगी की कामियाबी का ज़ामिन (witness) है और ज़िन्दगी का कोई ऐसा मस्ला नहीं जिस का ह़ल न बताता हो और कोई ऐसा पहलू नहीं जिस के बारे में अह़काम नाफ़िज़ (लागू) न करता हो।

इसलिए इस्लाम ने इन्सानी फ़ित्रत (Human nature) के मुख़्तलिफ़ पहलुओं को ध्यान में रखकर मजबूरी की ह़ालत में तलाक़ को जायज़ क़रार दिया है और बीवी-शौहर के तअ़ल्लुक़ात (Relations) के अहमियत की बिना पर शरीअ़त ने कुछ अह़काम और पाबन्दियाँ नाफ़िज़ की हैं, जो इन्सानी फ़ित्रत के मुताबिक़ हैं। इसीलिए इन तलाक़ के मसायल के दौरान अल्लाह तआ़ला बार-बार क़ुर्आन ह़कीम में हुदूदुल्लाह के पाबन्दी की ताकीद फ़रमाते हैं-

وَتِلْكَ حُدُوْدُ اللّٰهِ يُبَيِّنُهَا لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ۝

(यह ह़दें अल्लाह की बाँधी हुई हैं, इन्हें समझदार आदमियों के लिए अल्लाह तआ़ला साफ़-साफ़ बयान करते हैं।)

यानी तलाक़ से मुतअ़ल्लिक़ अह़काम व मसायल अल्लाह के क़ायम किये हुए क़ानून हैं और अल्लाह तआ़ला ने समझदार लोगों के फ़ायदे के लिए बयान किया है, ताकि वह इस के फ़ायदों पर ग़ौर करें कि इन अह़काम में क्या मस्लहतें हैं।

231 وَاِذَا طَلَّقْتُمُ النِّسَآءَ فَبَلَغْنَ اَجَلَهُنَّ فَاَمْسِكُوْهُنَّ بِمَعْرُوْفٍ اَوْ سَرِّحُوْهُنَّ بِمَعْرُوْفٍ ۪ وَلَا تُمْسِكُوْهُنَّ ضِرَارًا
لِّتَعْتَدُوْا ۚ وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ فَقَدْ ظَلَمَ نَفْسَهٗ ۚ وَلَا تَتَّخِذُوْٓا اٰيٰتِ اللّٰهِ هُزُوًا ۚ وَّاذْكُرُوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ
وَمَآ اَنْزَلَ عَلَيْكُمْ مِّنَ الْكِتٰبِ وَالْحِكْمَةِ يَعِظُكُمْ بِهٖ ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ۝

इस [illegible] या है कि रजअ़त औ़रत को तक्लीफ़ पहुँचाने और उन पर ज़ुल्म व ज़्यादती करने की ग़र्ज़ से न हो। जैसा कि जाहिलियत का तरीक़ा था कि बीवी को सताने की नियत से तलाक़ देते, फिर जब औ़रत की इद्दत पूरी होने के क़रीब होती तो रजअ़त कर लेते और फिर तलाक़ दे देते और इसी तरह़ करते रहते कि बेचारी

औ़रत न उस के पास आराम, चैन व सुकून की ज़िन्दगी गुज़ार सकती और न ही किसी दूसरे मर्द से निकाह़ कर सकती।

अल्लाह तआ़ला ने इस से मना फ़रमाया और हुक्म दिया कि अगर रजई तलाक़ दी हुई औ़रत को वापस लाना चाहो तो अच्छी नियत से वापस लाओ। औ़रत को तंग करने और उसे तक्लीफ़ पहुँचाने के लिए ऐसा न करो और जो केवल बीवी को तंग करने के लिए अपने पास रोकेगा तो वह ज़ालिम होगा और वह इस बद्सुलूकी की सज़ा दुनिया व आख़िरत में पाएगा।

"और जब तुम ने औ़रतों को रज़ई तलाक़ दी हो, फिर वह अपनी इद्दत गुज़ारने के क़रीब हो जाएँ और इद्दत ख़त्म न हुई हो तो तुम पर वाजिब है कि या तो उन को शरीअ़त के मुताबिक़ रजअ़त करके निकाह़ में रहने दो, या शरीअ़त के मुताबिक़ उन को रिहाई दो और उन को तक्लीफ़ पहुँचाने के लिए मत रखो इस इरादे से कि उन पर ज़ुल्म किया करोगे और जो शख़्स ऐसा बर्ताव करेगा वह अपना ही नुक़्सान करेगा क्योंकि ज़ुल्म की सज़ा भुगतेगा।"

तलाक़ ख़ूबी के साथ हो-

आयत के इस ह़िस्से में यह क़ानून बयान किया गया है कि जब शौहर एक या दो तलाक़ बीवी को दे दे और आख़िरी तीसरी बार तलाक़ न दी हो तो अगर वह रुजूअ़ करना चाहे तो कर सकता है और अगर रुजूअ़ न करना चाहे और मामला ख़त्म करना चाहे तो ख़ूबी के साथ छोड़ सकता है। यह कि औ़रत को रोकना या छोड़ना, जो भी हो ख़ूबी के साथ हो और इस में औ़रत को नुक़्सान पहुँचाना मक़्सद न हो। शौहर इन दो रास्तों में से जो रास्ता भी अख़्तियार करना चाहे कर सकता है। ज़रूरी चीज़ यह है कि वह दस्तूर और शरीअ़त के मुताबिक़ हो यानी अगर वह औ़रत को अपने पास रखना चाहे तो इज़्ज़त के साथ दोबारा लौटाए और अगर उस से तअ़ल्लुक़ तोड़ लेना चाहे तो बड़ी शराफ़त और इज़्ज़त के साथ घर से रुख़सत कर दे। दोनों सूरतें अच्छे मामले के साथ हों वरना जो लोग (ह़क़ मारते) हैं और केवल सताने के लिए दोबारा औ़रत को वापस ले लेते हैं तो वह औ़रत की हक़्तल्फ़ी का वबाल अपनी गर्दन पर रखते हैं और अ़ज़ाब-ए-आख़िरत (परलोक की सज़ा) मोल लेते हैं।

आयत में आगे इर्शाद होता है-

"और अल्लाह तआ़ला के अह़काम को लहू व लइब (खेल तमाशा) की तरह़ मत समझो कि जिस तरह़ जी चाहा कर लिया और जो चाहा न किया और अल्लाह तआ़ला की तुम पर जो नेअ़मतें हैं उन को याद करो और ख़ासतौर से इस किताब और ह़िक्मत की बातों को जो अल्लाह ने तुम पर इस हैसियत से नाज़िल फ़रमाई हैं कि तुम को उन के ज़रिये से नसीह़त फ़रमाते हैं और अल्लाह तआ़ला से डरते रहो और यक़ीन रखो कि अल्लाह तआ़ला हर चीज़ को ख़ूब जानते हैं"।

तम्बीह और ताकीद के लिए तीन हुक्म

1- पहला हुक्म यह है وَلَا تَتَّخِذُوٓا اٰيٰتِ اللّٰهِ هُزُوًا अल्लाह तआ़ाला की आयात को खेल न बनाओ यानी अल्लाह तआ़ाला के अह़काम को हंसी मज़ाक़ न समझो। यहाँ खेल बनाने की एक तफ़्सीर तो मुफ़स्सिरीन ने यह की है कि निकाह़ व तलाक़ के लिए अल्लाह तआ़ाला ने जो ह़दें, क़ानून, शरायत व पाबन्दी मुक़र्रर कर दी हैं उन हुक्मों को खेल-तमाशा मत समझो।

अल्लाह के हुक्मों को मज़ाक़ न समझो कि जैसा चाहा कर लिया और जैसा चाहा न किया, बल्कि सारे अह़काम पर पूरी तरह़ पाबन्द हो जाओ और दूसरी तफ़्सीर यह है जो अबूदाऊद की रिवायत में है कि ज़माने जाहिलियत में कुछ लोग तलाक़ देकर या ग़ुलाम आज़ाद करके फिर जाते और कहते थे कि मैंने हंसी मज़ाक़ में ऐसा कह दिया था, बीवी को तलाक़ या ग़ुलाम को आज़ाद करने की नियत न थी।

मज़ाक़ में तलाक़-

इस पर यह हुक्म नाज़िल हुआ जिस ने यह फ़ैसला कर दिया कि तलाक़ व निकाह़ को अगर किसी ने खेल या मज़ाक़ में भी पूरा कर दिया तो वह लागू हो जाएगा, नियत न करने का बहाना क़ाबिले तस्लीम न होगा। इसी तरह़ एक ह़दीस में ह़ज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया कि तीन चीज़ें ऐसी हैं जिन में हँसी के तौर पर करना या ह़क़ीक़त में करना दोनों बराबर हैं:-

एक तलाक़, दूसरे इताक़ (यानी ग़ुलाम या बाँदी की आज़ादी) तीसरे निकाह़ और एक ह़दीस में तीन चीज़ें यह हैं- एक 'निकाह़', दूसरे 'तलाक़' और तीसरे 'रजअ़त' फ़रमाई, यानी यह तीन चीज़ें ऐसी हैं कि जिन को जानबूझकर और इरादा से कहना और हंसी मज़ाक़ के तौर पर कहना बराबर हैं। इसलिए इन तीनों चीज़ों का हुक्म शरअ़ी यही है कि दो मर्द व औ़रत अगर हंसी मज़ाक़ में भी गवाहों के सामने निकाह़ का ईजाब व क़ुबूल कर लें तो भी निकाह़ हो जाता है।

इसी तरह़ अगर बिना इरादे के हँसी में सरीह़ तौर पर तलाक़ दे दे तो तलाक़ हो जाती है या रजअ़त करे तो रजअ़त हो जाती है। ऐसे ही किसी ग़ुलाम बाँदी को हँसी में आज़ाद करने को कह दे तो ग़ुलाम बाँदी आज़ाद हो जाते हैं।

इस हुक्म وَلَا تَتَّخِذُوٓا اٰيٰتِ اللّٰهِ هُزُوًا और अल्लाह तआ़ाला के अह़काम को खेल तमाशा मत समझो कि तफ़रीह़ में मज़ाक़ उड़ाओ, जो अल्लाह के हुक्मों के साथ मज़ाक करे तो वह काफ़िर हो जाता है। अ़क़ीदा के साथ हो तब तो हो ही जाता है, लेकिन सही अ़क़ीदा के साथ अगर न हो तब भी कुफ़्र है, क्योंकि दीन की तह़क़ीर (अपमान) जो बुनियादे कुफ़्र है दोनों सूरतों में ह़ासिल है, तो यहाँ कमतरी से अल्लाह के हुक्मों को लापरवाही के साथ अ़मल न करना मुराद है। इसी को यहाँ इस्तिहज़ा (मज़ाक़ में) फ़रमा दिया गया है।

2- दूसरे हुक्म وَاذْكُرُوا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ में इर्शाद फ़रमाया गया यानी अल्लाह तआ़ाला की जो

नेअ़मतें तुम पर हैं उन को याद करो, यानी तुम पहले गुमराह थे, अल्लाह तआ़ला ने अपने रसूल (सल्ल०) को मब्अ़ूस (Arise) फ़रमाकर नूर-ए-हिदायत से तुम्हारे दिलों को रौशन किया, ज़िल्लत के बाद इज़्ज़त और कमज़ोरी के बाद कुव्वत दी, बुरी आ़दतों की जगह अच्छी आ़दतें।

यह सब अल्लाह तआ़ला की नेअ़मतें हैं, उन का शुक्र वाजिब है और सब से बढ़कर इस क़ुर्आन को नाज़िल फ़रमाकर हिक्मत और नसीहत की बातें तुम को सिखाई और उन की पैरवी करने की तुम को हिदायत की, लिहाज़ा तुम को एहतिमाम से अह़कामे इलाहिया (अल्लाह के हुक्मों) को पूरा करना चाहिए।

3- तीसरा हुक्म وَ اتَّقُوا اللّٰہَ फ़रमाया गया कि अल्लाह तआ़ला से डरते रहो क्योंकि "जान लो, समझ लो, यक़ीन रखो कि अल्लाह तआ़ला हर चीज़ को ख़ूब जानते हैं।

यह क़ुर्आन करीम का हिक्मत भरा ख़ास अन्दाज़े बयान है कि हर क़ानून के पीछे अल्लाह का ख़ौफ़ और आख़िरत का हिसाब याद दिलाया जाता है कि जिन के होते हुए कोई इन्सान जो इन्सानियत के जुमले से बाहर न हो जानबूझ कर अल्लाह के क़ानून के ख़िलाफ़ सरकशी कर ही नहीं सकता। अल्लाह तआ़ला अपने तमाम अह़काम व क़ानून के पैरवी की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

232 وَاِذَا طَلَّقْتُمُ النِّسَآءَ فَبَلَغْنَ اَجَلَهُنَّ فَلَا تَعْضُلُوْهُنَّ اَنْ يَّنْكِحْنَ اَزْوَاجَهُنَّ اِذَا تَرَاضَوْا
بَيْنَهُمْ بِالْمَعْرُوْفِ ذٰلِكَ يُوْعَظُ بِهٖ مَنْ كَانَ مِنْكُمْ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ذٰلِكُمْ اَزْكٰى
لَكُمْ وَ اَطْهَرُ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ وَاَنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ ﴿۲۳۲﴾

और जब औ़रतों को 'एक तलाक़' या 'दो तलाक़ें' दे दो, फिर उन की इ़द्दत पूरी हो जाए और अपने पहले शौहरों के पास महेर और नये निकाह़ के साथ जाना चाहें तो उन को अपने पहले शौहर से निकाह़ करने से मत मना करो और يَعْضُلُوْهُنَّ ज़ाद के ज़ेर के साथ हो तो मतलब यह है कि उन को मत रोको जबकि वह आपस में महेर और निकाह़ जदीद के साथ इत्तिफ़ाक़ कर लें।

इन बातों से नसीह़त की जाती है और यह बातें तुम्हारे लिए सुधार का ज़रिया हैं और उन औ़रतों के दिलों को बद्‌गुमानी और अ़दावत से पाक करने वाली हैं और अल्लाह तआ़ला अच्छी तरह़ जानता है कि औ़रत को शौहर से किस क़दर मुह़ब्बत है और तुम यह नहीं जानते।

सय्यदना मअ़क़िल बिन यसार (रज़ि०) कहते हैं, "मेरी बहन (जमीला) को उनके शौहर (आ़सिम {रज़ि०} बिन अ़दी) ने तलाक़ (रजअ़ई) दी, मगर रुजूअ़ न किया यहाँ तक कि पूरी इ़द्दत गुज़र गई। फिर इ़द्दत गुज़रने के बाद दोबारा निकाह़ के लिए मुझे पैग़ाम भेजा (जबकि मुझे और भी पैग़ाम आ चुके थे।) मैंने ग़ैरत और गुस्से से उसे बुरा भला कहा और इन्कार किया और क़सम खा ली कि अब निकाह़ न होने दूँगा। उस वक़्त अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई और मैंने इस हुक्म के आगे सर-ए-तस्लीम (Surrender) ख़म कर दिया और क़सम का कफ़्फ़ारा अदा कर दिया।" **(बुख़ारी)**

अ़रबों में ज़माने जाहिलियत की एक रस्म यह भी थी कि कुछ लोग अपनी तलाक़शुदा बीवियों की दूसरी शादी नहीं करने देते थे इसलिए कि इसे अपनी बेइ़ज़्ज़ती समझते थे। इस तरह़ औ़रतों पर भी

ज़ुल्म किया जाता था।

अल्लाह तआ़ला ने इस रस्म को तोड़ने का इस आयत में हुक्म फ़रमाया और अ़ौरतों के साथ इस ज़ालिमाना सुलूक को बन्द फ़रमाया जो उस वक़्त आ़मतौर से तलाक़शुदा अ़ौरतों से किया जाता था, या अब भी कुछ जगह ऐसी ही ज़्यादती औ़रतों पर की जाती है कि उन को दूसरी शादी करने से रोका जाता है।

इस आयत में ख़िताब उन शौहरों से भी है जिन्होंने तलाक़ दी है और अ़ौरत के सरपरस्तों (औलिया) से भी इर्शाद होता है-

> "और जब तुम में ऐसे लोग पाये जाएँगे कि वह अपनी बीवियों को तलाक़ दे दें फिर वह अ़ौरतें अपनी इद्दत पूरी कर चुकें और इद्दत पूरी करके किसी से निकाह़ करना चाहें चाहे पहले ही शौहर से या किसी दूसरे से, तो तुम उन को इस बात से मत रोको कि वह अपने चुने हुए शौहरों से चाहे वह पहला हो या दूसरा, निकाह़ कर लें जब कि आपसी रज़ामन्दी हो जाए शरई क़ायदे के मुताबिक़।"

यहाँ ख़िताब आ़म (General) है चाहे शौहर ही दूसरी जगह निकाह़ से रोके या अ़ौरत के भाई बहन। उन को हुक्म होता है कि जब तुम अ़ौरतों को एक दो तलाक़े रजअ़ई दे चुको और उन की इद्दत का ज़माना ख़त्म हो जाए तो अब अगर उन के शौहर और वह आपस के नये निकाह़ करने पर ख़ुश व रज़ामन्द हों तो उन को अ़ौरत के वली नहीं रोक सकते, लेकिन शर्त यह है कि यह रज़ामन्दी शरई क़ायदे के मुताबिक़ हो, अगर शरई क़ायदे के मुताबिक़ न हो जैसे-

1- नाजायज़ तौर पर आपस में ख़ुफ़िया निकाह़ करना चाहे।
2- या इद्दत के दिनों में दूसरे शौहर से निकाह़ का इरादा हो।
3- या अ़ौरत बिला इजाज़त अपने औलिया के अपने कुफ़ु (हमपल्ला) के ख़िलाफ़ दूसरे कुफ़ु (Status) में निकाह़ करना चाहे।
4- या अ़ौरत अपने मेहर से कम पर निकाह़ करना चाहे, जिस का असर ख़ानदान पर पड़ता हो, जिस का उसको ह़क़ नहीं।
5- या अगर पहले शौहर से अ़ौरत निकाह़ करना चाहती हो तो लाज़िम है कि तीन तलाक़ें मर्द ने न दी हों वरना बग़ैर ह़लाला के निकाह़ दुरुस्त नहीं। इसके ख़िलाफ़ शरअ़ी सूरतों में तो हर मुसलमान को ख़ासतौर से उन क़रीबी रिश्तेदारों को जिन का तअ़ल्लुक़ मर्द और अ़ौरत से हो, रोकने का ह़क़ ह़ासिल है बल्कि पूरी कोशिश से ऐसे निकाह़ को रोकना वाजिब है।

लेकिन अगर रज़ामन्दी शरई एह़काम और क़ायदे के मुताबिक़ हो तो अ़ौरत व मर्द को निकाह़ से रोकने का किसी को ह़क़ नहीं। इस हुक्म को बयान फ़रमाकर आयत में आगे इर्शाद होता है-

"इस से नसीह़त की जाती है उस शख़्स को, जो तुम में से अल्लाह तआ़ला पर ईमान और क़ियामत के दिन पर यक़ीन रखता हो यानी मानने की उन्हीं से उम्मीद है और यूँ तो नसीह़त सब ही

को है। इस नसीहत का कुबूल करना तुम्हारे लिए ज़्यादा सफ़ाई और ज़्यादा पाकी की बात है और अल्लाह तआ़ला मस्लहतों को जानते हैं और तुम नहीं जानते, इसलिए अल्लाह तआ़ला के हुक्म के सामने अपनी राय मत चलाया करो।"

यहाँ आयत के आख़ीर में तीन नसीहतें फ़रमाईं-

1- एक यह कि अह़काम उन लोगों के लिए है जो अल्लाह और क़ियामत के दिन पर ईमान रखते हैं। इस में इशारा इस तरफ़ फ़रमा दिया गया है कि अल्लाह पर और क़ियामत पर ईमान रखने का लाज़मी नतीजा यह है कि आदमी अल्लाह के हुक्मों का पूरा पाबन्द हो और जो लोग अल्लाह के हुक्मों निकाह़, तलाक़ आदि में कोताही या उस के ख़िलाफ़वर्ज़ी करते हैं वह समझ लें और जान लें कि उन के ईमान में कमज़ोरी है।

2- दूसरे शब्दों में फ़रमाया गया है कि इन अह़काम की पाबन्दी तुम्हारे लिए पाकी और सफ़ाई का ज़रिया हैं। इस में साफ़ इशारा हो गया कि इन हुक्मों के ख़िलाफ़वर्ज़ी का नतीजा गुनाहों की दल-दल में डूबना और फ़ित्ना फ़साद है। अल्लाह के हुक्मों का मानना और उन पर अ़मल करना गुनाहों से पाक होने का और पाक रहने का ज़रिया है तो ऐसे मौक़े पर जबकि मर्द व औ़रत आपस में एक दूसरे की तरफ़ मायल (आकर्षित) हों तो वहाँ सफ़ाई और पाकी इसी में है कि निकाह़ से न रोका जाए वरना ख़राबी, फ़ित्ना फ़साद में फंसने का अन्देशा है कि कहीं वह अन्दुरूनी तअ़ल्लुक़ात (Physical intimacy) पैदा न कर लें जिस से बद्नामी, इ़ज़्ज़त की बर्बादी और दुनिया व आख़िरत दोनों बर्बाद हो जाएँ, लिहाज़ा मुनासिब यही है कि उन का निकाह़ आपस में होने दिया जाए क्योंकि अगर जवान लड़कियों को निकाह़ से रोका गया तो एक तरफ़ तो उन पर ज़ुल्म और उन की ह़क़तल्फ़ी है दूसरी तरफ़ उन की इ़ज़्ज़त को ख़तरे में डालना है और हो न हो अगर वह कोई गुनाह कर बैठे तो उस का वबाल उन लोगों पर भी होगा जिन्होंने उन को शरई निकाह़ से रोका।

3- तीसरे यह कि तुम्हारी मस्लहतों को अल्लाह तआ़ला जानते हैं तुम नहीं जानते यानी अल्लाह तआ़ला तुम्हारी मस्लहतों और फ़ायदों से ख़ूब वाक़िफ़ हैं उन की रिआ़यत करके अह़काम देते हैं। इसलिए तुम्हारा भला और बेहतरी इसी में है कि तुम अल्लाह तआ़ला के बताये हुए क़ानून और दिये हुए अह़काम की ईमानदारी से पाबन्दी करो वरना उस के ख़िलाफ़ करने में तक्लीफ़ गुमराही और हलाकत है।

इस आयत के तहत ह़ज़रत मुफ़्ती मुह़म्मद शफ़ीअ़ साह़ब (रह़०) अपनी तफ़्सीर मआ़रिफ़ुल् क़ुर्आन में लिखते हैं।

"क़ुर्आन करीम ने इस जगह एक क़ानून पेश फ़रमाया कि तलाक़शुदा औ़रतों को अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ निकाह़ से रोकना जुर्म है। इस क़ानून को बयान फ़रमाने के बाद इस पर अ़मल करने को सहल और उसके लिए लोगों के ज़ेहनों को हमवार (तैयार) करने के लिए तीन बातें इर्शाद फ़रमाईं जिन से पहले शब्द में लफ़्ज़ क़ियामत के ह़िसाब और जरायम की सज़ा से डर कर इन्सान को इस क़ानून पर अ़मल करने के लिए आमादा फ़रमाया। दूसरे शब्द में इस क़ानून की ख़िलाफ़वर्ज़ी में जो मफ़ासिद और

इन्सानियत के लिए नुक़्सानात हैं उन को बतला कर क़ानून की पाबन्दी के लिए तैयार किया।

तीसरे शब्द में इर्शाद फ़रमाया कि तुम्हारी अपनी मस्लहत भी इसी में है कि अल्लाह तआ़ला के बताये हुए क़ानून की पाबन्दी करो। उसके ख़िलाफ़ करने में अगर तुम कोई मस्लहत सोचते हो तो वह तुम्हारी बेख़बरी का नतीजा है।"

क़ुर्आन करीम का यह अन्दाज़ सिर्फ़ यहीं नहीं बल्कि तमाम अह़काम में जारी है कि एक क़ानून बताया जाता है तो उसके साथ ही अल्लाह तआ़ला और आख़िरत के हिसाब व अ़ज़ाब से डराया जाता है। हर क़ानून के आगे पीछे **'वत्तक़ुल्लाहा या इन्नल्लाहा बिमा तअ़मलूना बसीर'** वग़ैरह शब्द लगे हुए होते हैं।

क़ुर्आन करीम सारी दुनिया और क़ियामत तक आने वाली नस्लों के लिए एक पूर्ण जीवन व्यवस्था (Complete Code of life) और ज़िन्दगी के सभी विभागों के लिए बेहतरीन है। इस में भी सज़ाओं का बयान है लेकिन यह सारी दुनिया के क़ानून की किताबों से निराली है। इस का अन्दाज़ आर्डर देने से ज़्यादा नसीह़त देने वाला है। इस में हर क़ानून के बयान के साथ इस की भी कोशिश की गई है कि कोई इन्सान इस क़ानून की ख़िलाफ़वर्ज़ी करके सज़ा पाने वाला न बने।

दुनिया की हुकूमतों की तरह़ नहीं कि उन्होंने एक क़ानून बना दिया और पेश कर दिया। जो कोई इस क़ानून की ख़िलाफ़वर्ज़ी करता है वह अपनी सज़ा भुगतता है। इस के अ़लावा इस ख़ास अन्दाज़े बयान से एक तो बड़ा फ़ायदा यह है कि इस को देखने सुनने के बाद इन्सान क़ानून की पाबन्दी सिर्फ़ इस बिना पर नहीं करता कि अगर ख़िलाफ़ करेगा तो दुनिया में उस को कोई सज़ा मिल जाएगी बल्कि दुनिया की सज़ा से ज़्यादा अल्लाह तआ़ला की नाराज़गी और आख़िरत की सज़ा की फ़िक्र होती है। इसी फ़िक्र की बिना पर उस का ज़ाहिर व बातिन ख़ुफ़िया व एलानिया बराबर हो जाता है। वह किसी ऐसी जगह में भी क़ानून की ख़िलाफ़वर्ज़ी नहीं कर सकता जहाँ किसी ज़ाहिरी या ख़ुफ़िया पुलिस की भी पहुँच न हो क्योंकि उस का अ़क़ीदा (Faith) है कि अल्लाह तआ़ला हर जगह और हर वक़्त ह़ाज़िर व नाज़िर और ज़र्रह-ज़र्रह से बाख़बर हैं।

यही वजह है कि क़ुर्आनी तअ़लीम ने जो इन्सानी समाज तैयार किया था, हर मुसलमान उसकी पाबन्दी को अपनी ज़िन्दगी का मक़्सद समझता था। क़ुर्आनी हुकूमत की यही ख़ास बात है कि इस में एक तरफ़ क़ानून के हुदूद (Boundaries) का ज़िक्र है, तो दूसरी तरफ़ सज़ा व इनआ़म (डर व लालच) के ज़रिये इन्सान के अख़्लाक़ व किरदार को ऐसा बुलन्द किया गया है कि क़ानूनी हुदूद उस के लिए एक स्वाभाविक (Natural) चीज़ बन जाती हैं। जिस के सामने वह अपने जज़्बात और तमाम नफ़्सानी ख़्वाहिशात (Materialistic Desires) को पीछे डाल देता है।

दुनिया की हुकूमतों और क़ौमों की तारीख़ और उन के जुर्म व सज़ा की घटनाओं पर ज़रा गहरी नज़र डालिये तो मालूम होगा कि सिर्फ़ क़ानून से कभी किसी क़ौम या फ़र्द का सुधार नहीं हुआ। पुलिस और फ़ौज से कभी जरायम को नहीं रोका जा सका। जब तक कि क़ानून के साथ अल्लाह का ख़ौफ़ व

बड़ाई का सिक्का उसके दिल पर न बैठे।

जरायम से रोकने वाली चीज़ वास्तव में ख़ौफ़े ख़ुदा और हिसाबे आख़िरत है, यह न हो तो कोई व्यक्ति किसी से जरायम को छुड़ा नहीं सकता।

233 وَالْوَالِدٰتُ يُرْضِعْنَ اَوْلَادَهُنَّ حَوْلَيْنِ كَامِلَيْنِ لِمَنْ اَرَادَ اَنْ يُّتِمَّ الرَّضَاعَةَ ۭ وَعَلَى الْمَوْلُوْدِ لَهٗ رِزْقُهُنَّ
وَكِسْوَتُهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ ۭ لَا تُكَلَّفُ نَفْسٌ اِلَّا وُسْعَهَا ۚ لَا تُضَاۗرَّ وَالِدَةٌۢ بِوَلَدِھَا وَلَا مَوْلُوْدٌ لَّهٗ بِوَلَدِهٖ ۤ
وَعَلَي الْوَارِثِ مِثْلُ ذٰلِكَ ۚ فَاِنْ اَرَادَا فِصَالًا عَنْ تَرَاضٍ مِّنْهُمَا وَتَشَاوُرٍ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا ۭ وَاِنْ اَرَدْتُّمْ
اَنْ تَسْتَرْضِعُوْٓا اَوْلَادَكُمْ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اِذَا سَلَّمْتُمْ مَّآ اٰتَيْتُمْ بِالْمَعْرُوْفِ ۭ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ بِمَا
تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ ۝

दूध पिलाने का हक़्-

'तलाक़' के बाद अक्सर यही देखा जाता है कि मर्द व औ़रत के दर्मियान एक क़िस्म की दुश्मनी और नफ़रत पैदा हो जाती है। अगर ऐसी हालत में तलाक़ हो गई हो कि औ़रत की गोद में छोटा सा बच्चा भी हो तो बच्चे की परवरिश और दूध पिलाने और पिलवाने के मामलात भी सामने आ जाते हैं और मर्द व औ़रत के दर्मियान झगड़े व फ़साद का ज़रिया हो जाते हैं। पहले शौहर को बच्चे की परवरिश में परेशानी आती है। मर्द चाहता है कि बच्चे को माँ से छीन कर किसी और औ़रत से दूध पिलवाये इस तरह ग़रीब माँ तड़पती है और कभी औ़रत बच्चे को दूध पिलाने के लिए इसलिए इन्कार करती है कि ज़ाहिर में मर्द के पास कोई दूध पिलाने वाली दूसरी औ़रत मौजूद नहीं। मर्द मजबूर होकर मेरी ख़ुशामद करेगा और जो मुआ़वज़ा माँगूगी वह मजबूरन देगा। या औ़रत किसी दूसरे शौहर से निकाह़ करने की वजह से इस बच्चे की तरफ़ से बेरुख़ी (Avoid) करती है और उस को दूध पिलाने से इन्कार करती है, इसलिए इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने ऐसे मोअ़तदिल (सन्तुलित) अह़काम बयान फ़रमा दिये कि जो मर्द व औ़रत दोनों के लिए मुनासिब और आसान हैं और इस आयत में तमाम बातों का ऐसा फ़ैसला फ़रमा दिया कि जिस से झगड़े या फ़साद या किसी एक पर ज़ुल्म व ज़्यादती का रास्ता न रहे। अतः इस आयत में इर्शाद होता है-

दूध पिलाने की मुद्दत-

"और माएँ अपने बच्चों को दो साल पूरा दूध पिलाया करें (चाहे निकाह़ बाक़ी हो या तलाक़ हो चुकी हो।) यह मुद्दत उसके लिए है जो किसी छोटे बच्चे को पालना चाहे (और चाहे तो दो साल से कम मुद्दत में दूध छुड़ा दे यह भी ठीक है) और जिस का नसब के एतिबार से बच्चा है यानी बाप के ज़िम्मे है उन बच्चे की माँओ का खाना व कपड़ा चाहे वह निकाह़ मे हों या इद्दत में।

किसी शख़्स को अल्लाह की तरफ़ से कोई हुक्म नहीं दिया जाता मगर उस के बर्दाश्त के मुताबिक़ (यानी औ़रतों को दूध पिलाना आसान था उन को इस का हुक्म दिया गया और मर्दों को ख़र्च करना आसान है, इसलिए उन को इस का हुक्म दिया गया) आगे इर्शाद है।

किसी माँ को तक्लीफ़ न पहुँचाना चाहिए उस के बच्चे की वजह से, और न किसी बाप को तक्लीफ़ देनी चाहिए उस के बच्चे की वजह से, (यानी बच्चे के माँ-बाप आपस में किसी बात पर ज़िद्दम ज़िद्दी न करें। जैसे माँ दूध पिलाने से माज़ूर (मजबूर) और बाप उस पर यह समझ कर ज़बरदस्ती करे कि आख़िर उस का भी तो बच्चा है, झक मारकर दूध पिला देगी या यह कि बाप ग़रीब है और माँ को कोई माज़ूरी भी नहीं, फिर दूध पिलाने से यह समझ कर इन्कार करे कि उसका भी तो बच्चा है झक मार कर किसी से पिलवाएगा।) आगे इर्शाद है और अगर बाप ज़िन्दा न हो तो बच्चे की परवरिश का इन्तिज़ाम उसके मह़रम रिश्तेदार (जिस से निकाह़ ह़राम हो) के ज़िम्मे है, जो शरअ़न बच्चे के वारिस होने का ह़क़ रखते हों।

अगर दोनों माँ-बाप दो साल से कम में दूध छुड़वाना चाहें अपनी आपसी रज़ामन्दी और मश्वरे से तो दोनों पर कोई गुनाह नहीं और अगर तुम लोग माँ के होते हुए भी किसी मस्लह़ते ज़रूरिया से (मस्लन यह कि माँ का दूध अच्छा नहीं बच्चे को नुक़्सान होगा) अपने बच्चों को किसी और अन्ना का दूध पिलवाना चाहो तब भी तुम पर कोई गुनाह नहीं जबकि उन के ह़वाले कर दो जो कुछ उन को देना तय किया है चाहे पहले या बाद में जिस तरह़ मुआ़हिदा हो जाए {और अगर उजरत (मेहनताना) नौकरानी या दूध पिलाने वाली को न आगे दे न पीछे तो यह बात नहीं कि तुम पर कोई गुनाह नहीं बल्कि उजरत न देने का गुनाह लाज़िम आएगा।} आख़िर में इर्शाद होता है और अल्लाह तआ़ला से इन सब एह़काम के बारे में डरते रहो और यक़ीन रखो कि अल्लाह तआ़ला तुम्हारे किये हुए कामों को ख़ूब देख रहे हैं।

इस आयत के शरई मसायल-

1- माँ अगर किसी वजह से माज़ूर न हो तो उसके ज़िम्मे वाजिब है कि बच्चे को दूध पिला दे, चाहे वह निकाह़ में हो या इद्दत में और ऐसी माँ को उजरत लेना दुरुस्त नहीं।

2- और अगर तलाक़ के बाद इद्दत गुज़र चुकी हो तो अब मुतल्लिक़ा औ़रत पर बिला उजरत बच्चे को दूध पिलाना वाजिब नहीं।

3- अगर माँ दूध पिलाने से इन्कार करे तो समझा जाएगा कि वह माज़ूर होगी इसलिए उस पर जब्र नहीं किया जाएगा। अल्बत्ता अगर बच्चा किसी और का दूध पीता ही नहीं न ऊपर का ही दूध पीता है, तो माँ को मजबूर किया जाएगा कि बच्चे को दूध पिलाये।

4- माँ दूध पिलाना चाहती है और उसके दूध में कोई ख़राबी नहीं तो बाप को जायज़ नहीं कि उस को पिलाने न दे और दूसरी अन्ना का पिलवाये।

5- माँ दूध पिलाने पर रज़ामन्द हो, लेकिन उस का दूध बच्चे को नुक़्सानदेह हो तो बाप को जायज़ है कि उस को दूध न पिलाने दे और किसी दूसरी औरत का पिलवाये।

6- माँ दूध पिलाने की उजरत माँगती है जबकि वह शौहर के निकाह़ में हो या तलाक़ हो गई हो, लेकिन

इद्दत न गुज़री हो। इन दोनों सूरतों में माँ को उजरत लेना जायज़ नहीं।

7- और अगर तलाक़ के बाद इद्दत गुज़र गई फिर उजूरत मांगती है तो बाप को उजूरत देना पड़ेगी।

8- अगर तलाक़ के बाद इद्दत गुज़र जाए और वह औरत उजरत माँगती है तो बाप अगर दूसरी अन्ना से उतनी ही उजूरत पर पिलवाना चाहे तब तो माँ मुक़द्दम (को प्राथमिकता) है। दूसरी अन्ना से पिलवाने का हक़ नहीं है और अगर दूसरी अन्ना इस माँ से कम उजूरत पर राज़ी है तो माँ को यह हक़ हासिल नहीं कि ख़ुद पिलाये और उजूरत ज़्यादा ले। अलबत्ता अगर माँ दरख़्वास्त करे तो इतना हक़ रखती है कि उस अन्ना को इस के पास रखा जाए ताकि बच्चे से जुदाई न हो।

बच्चे के ख़र्च की ज़िम्मेदारी-

9- बाप के होते हुए बच्चे की परवरिश का ख़र्च सिर्फ़ बाप के ज़िम्मे है और जब बाप मर जाए तो इस में तफ़्सील यह है कि अगर बच्चा माल का मालिक है तब तो उसी माल से उस का ख़र्च होगा और अगर माल का मालिक नहीं है तो उस के मालदार अ़ज़ीज़ों में जो उस के महरम हैं (यानी उस बच्चे से उस का ऐसा रिश्ता हो कि अगर इस रिश्तेदार और बच्चे में से एक को मर्द और एक को औरत फ़र्ज़ करें तो आपस में निकाह़ दुरुस्त न हो) और महरम होने के अ़लावा शरअ़न उस के मरने के बाद मीरास में हिस्सा भी मिले। यानी अगर यह बच्चा मर जाए तो महरम रिश्तेदारों में देखा जाएगा कि उस का माल मीरास में किस-किस को कितना-कितना पहुँचता है। बस ऐसे महरम वारिस रिश्तेदारों के ज़िम्मे उस बच्चे का ख़र्च वाजिब होगा और उन रिश्तेदारों में माँ भी दाख़िल है। जैसे एक ऐसे बच्चे की एक माँ है, एक दादा है तो उस के ख़र्च का एक तिहाई माँ के ज़िम्मे है और दो तिहाई दादा के ज़िम्मे क्योंकि दोनों महरम भी हैं और बच्चे की मीरास इसी हिसाब से पा सकते हैं।

10- पूरी मुद्दते रज़ाअ़त यानी बच्चे को दूध पिलाने की मुद्दत दो साल है। जब तक कोई ख़ास रुकावट न हो बच्चे का हक़ है कि यह मुद्दत पूरी की जाए। अलबत्ता क़ुर्आन करीम की दूसरी आयत وَحَمۡلُهُۥ وَفِصَٰلُهُۥ ثَلَٰثُونَ شَهۡرًا (सूरः अहक़ाफ़-15) की बिना पर इमाम अबू ह़नीफ़ा (रह०) के नज़्दीक अगर तीस महीने यानी ढ़ाई साल के अ़र्से में भी दूध पिला दिया तो रज़ाअ़त (दूध पिलाना) के हुक्म लागू हो जाएँगे और अगर बच्चे की कमज़ोरी वग़ैरह की वजह से ऐसा किया गया तो गुनाह भी न होगा, लेकिन ढ़ाई साल पूरे होने के बाद बच्चे को माँ का दूध पिलाना ह़राम है।

'अ़ल्लामा अ़ब्दुल हक़' मुफ़स्सिर देहलवी अपनी 'तफ़्सीर हक़्क़ानी' में लिखते हैं कि सूरः बक़रः की इस आयत से इमाम शाफ़ई, 'अ़लक़मा', 'शोअ़बी' और 'ज़ुहरी' ने दो साल रज़ाअ़त की मुद्दत क़रार दी है और यही राय हज़रत अ़ली (रज़ि०), इब्ने मसऊद (रज़ि०) और इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) की है और साहिबैन का भी यही मज़हब है।

इमाम अबू ह़नीफ़ा (रह०) के नज़्दीक ढ़ाई साल तक है। उन की दलील यह आयत है وَحَمۡلُهُۥ وَفِصَٰلُهُۥ ثَلَٰثُونَ شَهۡرًا (सूरः अहक़ाफ़-15) (और उस का हमल और उस का फ़िसाल यानी दूध छुड़ाई

तीस माह है) और सूरः बक़रः की इस आयत में दो बरस कामिल हैं तो सिर्फ़ उजरत रज़ाअ़त के लिए हैं और दूसरे आइम्मा इस लफ़्ज़ وَحَمْلُهٗ وَفِصٰلُهٗ ثَلٰثُوْنَ شَهْرًا (सूरः अह्क़ाफ़-15) का जवाब यह देते हैं कि इस में ह़मल और फ़िसाल यानी दूध छुड़ाई, हर एक की मुस्तक़िल मुद्दत नहीं बयान की बल्कि दोनों की एक साथ मुद्दत है, जिस से ह़मल की कम से कम मुद्दत छः महीने और रज़ाअ़त की दो बरस लिए गये हैं। अह़ादीस और आसारे सह़ाबा फ़रीक़ैन की ताईद करते हैं। **(तफ़्सीर ह़क़्क़ानी)**

जम्हूर उलमा के नज़्दीक दूध पिलाने की मुद्दत (यानी मुद्दते रज़ाअ़त) दो साल है और निकाह़ के लिए जो रिश्ते नसब के एतिबार से ह़राम हैं वह रिश्ते दूध की वजह से भी ह़राम हो जाते हैं, लेकिन इमाम अबू ह़नीफ़ा (रह़०) का क़ौल है कि अगर ढ़ाई साल के अन्दर-अन्दर भी दूध पिया हो तब भी निकाह़ दुरुस्त नहीं। अल्बत्ता अगर ढ़ाई बरस के बाद दूध पिया हो तो उस का बिल्कुल एतिबार नहीं, और सब के नज़्दीक निकाह़ दुरुस्त है।

11- अगर बच्चे के माँ-बाप आपस की रज़ामन्दी से यह इरादा करें कि बच्चे को मुद्दते रज़ाअ़त यानी दो साल से पहले दूध छुड़ा दें चाहे माल की कमी या बच्चे की बीमारी की वजह से तो इस में भी कोई गुनाह नहीं।

12- अन्ना यानी जिस औ़रत को दूध पिलाने पर रखा जाए उस से मामला तन्ख़्वाह या उजरत का पूरी सफ़ाई के साथ तय कर लिया जाए कि बाद में कोई झगड़ा न हो और फिर वक़्त मुक़र्ररह (निर्धारित समय) पर तय की हुई उजरत उस को अदा भी कर दे, इस में टाल मटोल या कमी न करे।

यहाँ अह़काम-ए-रज़ाअ़त बयान करने के बाद अख़ीर में फिर क़ुर्आन ने अपने मख़्सूस अन्दाज़ और उस्लूब के साथ क़ानून पर अ़मल को आसान करने और हर ह़ाल में उन का पाबन्द रखने के लिए अल्लाह तआ़ला के ख़ौफ़ और उसके इ़ल्म का तसव्वुर सामने कर दिया और وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ फ़रमा कर तम्बीह़ (चेतावनी) फ़रमा दी कि यह समझ लो कि अल्लाह तआ़ला तुम्हारे खुले और छुपे, ज़ाहिर व ग़ायब को पूरी तरह़ देख रहे हैं और तुम्हारे दिलों के छुपे हुए इरादों और नियतों से बाख़बर हैं। अगर किसी ने इन हुक्मों की ख़िलाफ़वर्ज़ी की तो वह सज़ा का ह़क़्दार होगा।

(तफ़्सील के लिए देखें सूरः अन्निसा 12 और अल् बक़रः 234)

234 وَالَّذِيْنَ يُتَوَفَّوْنَ مِنْكُمْ وَيَذَرُوْنَ اَزْوَاجًا يَّتَرَبَّصْنَ بِاَنْفُسِهِنَّ اَرْبَعَةَ اَشْهُرٍ وَّعَشْرًا ۚ فَاِذَا بَلَغْنَ اَجَلَهُنَّ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيْمَا فَعَلْنَ فِيْٓ اَنْفُسِهِنَّ بِالْمَعْرُوْفِ ۭ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرٌ ۝

वफ़ात की मुद्दत-

इस आयत में इद्दत वफ़ात को फ़रमाया जाता है। औ़रत की इद्दत तीन तरह़ की होती है।

1- इद्दत तलाक़- इस के हुक्म और मुद्दत का बयान पिछली आयत नं० 228 में हो चुका है।

2- इद्दत ह़ामिला औ़रत की- जिस का शौहर मर गया हो। इस का हुक्म सूरः तलाक़ पारा नं० 28 में बयान किया गया है कि ह़ामिला की इद्दत वज़अ़ ह़मल यानी बच्चे की विलादत तक है।

3- इद्दते वफ़ात- जिस औ़रत का शौहर मर जाए और वह औ़रत ह़ामिला भी न हो तो उस का बयान इस आयत में फ़रमाया गया है चुनांचे इर्शाद होता है-

"और जो लोग तुम में वफ़ात पा जाते हैं और बीवियाँ छोड़ जाते हैं। वह बीवियाँ अपने आप को निकाह़ वग़ैरह से रोके रखें चार महीने और दस दिन।"

इस आयत के हुक्म के मुताबिक़ उस बेवा (widow) की इद्दत जो ह़ामिला न हो चार माह और दस दिन है और अगर ह़ामिला हो तो बच्चा पैदा होने तक उस की इद्दत है चाहे जनाज़ा ले जाने से पहले ही बच्चा पैदा हो जाए या चार माह दस दिन से ज़्यादा अ़र्से में जब भी बच्चे की पैदाइश हो।

अ़रबों के जमा़ने जाहिलियत में इद्दत की रस्म साल भर तक की थी और शुरु में भी औ़रतों के लिए यही एक साल की इद्दत का हुक्म था। जब तक वारिसों के विरासत का ह़िस्सा मुक़र्रर न हुआ था और मीरास की आयत उस वक़्त तक नाज़िल नहीं हुई थी। जैसा कि इसी सूरत के अगले रुकूअ़ में यहाँ से पाँच आयात के बाद हुक्म मौजूद है।

وَالَّذِيْنَ يُتَوَفَّوْنَ مِنْكُمْ وَيَذَرُوْنَ اَزْوَاجًا ۖۚ وَّصِيَّةً لِّاَزْوَاجِهِمْ مَّتَاعًا اِلَى الْحَوْلِ غَيْرَ اِخْرَاجٍ

(और जो लोग वफ़ात पा जाते हैं तुम में से और छोड़ जाते हैं बीवियों को, वह वसीयत कर जाया करें अपनी उन बीवियों के वास्ते, एक साल तक फ़ायदा उठाने के इस तौर पर कि वह घर से न निकाली जाएँ।)

यह एक साला इद्दत का हुक्म मन्सूख़ हो गया और अब बेवा वग़ैरह ग़ैर ह़ामिला की इद्दत चार माह दस दिन मुक़र्रर हो गई कि इस चार माह दस दिन के ज़माने में बेवा नये निकाह़ से परहेज़ रखें यानी ज़ेब व ज़ीनत और बनाव श्रंगार खुशबू आदि के इस्तेमाल से अलग रहें और बिना किसी अहम ज़रूरत उस घर से बाहर न निकलें जिस घर में शौहर ने वफ़ात पाई है। और यह मालूम हो जाए कि शौहर का बच्चा पेट में है या नहीं, अगर मालूम हो जाए कि वह ह़ामिला है तो उस की इद्दत बदल जाएगी और वज़अ़ ह़मल (बच्चे की पैदाइश) तक उस की इद्दत का ज़माना होगा और जब इद्दत मुक़र्रह का ज़माना ख़त्म हो जाए तो अब औ़रत के वरसा या क़रीबी अ़ज़ीज़ व रिश्तेदार किसी को ह़क़ नहीं कि बेवा को उस के अपने ज़ाती निकाह़ के ह़क़ से रोकें। वह आज़ाद है, ज़ेब व ज़ीनत कर सकती है, ख़ुशबू वग़ैरह इस्तेमाल कर सकती है और नया निकाह़ कर सकती है, लेकिन यह तमाम काम शरई तरीक़े पर होने चाहिए और अब अगर कोई रोकेगा और औ़रत को उस के जायज़ ह़क़ से मह़रूम करेगा तो इस आयत के अख़ीर में وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرٌ फ़रमा कर तम्बीह फ़रमा दी कि अल्लाह तआ़ला को बन्दों के तमाम आ़माल की ख़बर है। वह हर एक के ज़ाहिर व बातिन के जानने वाले हैं। इसलिए उस के अह़काम की मुख़ालिफ़त मत करो वरना वह सज़ा देगा। तो यहाँ बेवा औ़रतों के दूसरे निकाह़ का हुक्म बयान हुआ है कि इद्दत के बाद अगर वह अपनी मर्ज़ी से किसी से शरई निकाह़ करना चाहे तो उस बेवा के वली वारिस को इस से नहीं रोकना चाहिए, बशर्ते कि वह अपने कुफ़ू (Status) में निकाह़ करें। ग़ैर कुफ़ू में निकाह़ करने से रिश्तेदारों को रोकने का ह़क़ है।

इस क़ुर्आनी हुक्म के होते हुए भी बाज़ जगह बेवा औ़रतों पर बिरादरी की रस्म व रिवाज या अपने ख़ानदान की ज़िल्लत के एह़सास की बिना पर बेवा औ़रतों पर ज़ुल्म किया जाता है कि कुछ औ़रतें जवानी में बेवा हो जाती हैं, मगर उन को उम्र भर शौहर के बग़ैर रहना पड़ता है और बेवा के वारिस उसे दूसरे निकाह़ की इजाज़त नहीं देते जो सरासर जिहालत ज़ुल्म और अल्लाह तआ़ला के हुक्म की नाफ़रमानी है।

इद्दत से मुतअ़ल्लिक़ चन्द ज़रुरी मसायल-

1- जिस औ़रत के शौहर का इन्तिक़ाल हो जाए उस को इद्दत के अन्दर ख़ुशबू लगाना, श्रृंगार करना, जैसे- ज़ेवर या रेशमी कपड़े पहनना, सुर्मा और तेल, बिला ज़रूरत दवा लगाना, मेंहदी लगाना, रंगीन कपड़े पहनना दुरुस्त नहीं।

2- अगर चाँदरात को शौहर की वफ़ात हुई तब तो यह महीने चाहे 29 दिन के हों या 30 दिन के चाँद के ह़िसाब से पूरे किये जाएँगे और अगर चाँदरात के बाद वफ़ात हुई तो यह सब महीने 30–30 के ह़िसाब से पूरे किये जाएँगे। बस कुल 130 दिन पूरे करने होंगे और जिस वक़्त वफ़ात हुई हो जब यह मुद्दत गुज़र कर वही वक़्त आएगा तो इद्दत ख़त्म हो जाएगी।

3- शौहर के इन्तिक़ाल के वक़्त औ़रत जिस घर में रहा करती थी उसी घर में इद्दत गुज़ारना चाहिए, बाहर निकलना दुरुस्त नहीं। अलबत्ता अगर कोई ग़रीब औ़रत है जिस के पास गुज़ारे के लिए ख़र्च नहीं और उस ने खाना पकाने की नौकरी कर ली तो उस का जाना और निकलना दुरुस्त है, लेकिन रात को अपने ही घर में रहना होगा।

4- बेवा पूरे घर में जहाँ जी चाहे रह सकती है। बाज़ जगह यह जो दस्तूर है कि ख़ास एक जगह मुक़र्रर करके रहती हैं कि ग़मज़दह की चारपाई और ख़ुद ग़मज़दह वहाँ से टलने नहीं पाती। यह ज़्यादती है, शरअ़न ऐसी कोई पाबन्दी नहीं।

5- किसी के शौहर का इन्तिक़ाल हो गया मगर औ़रत को ख़बर नहीं मिली। चार महीने दस दिन गुजरने के बाद ख़बर आई तो उस की इद्दत पूरी हो चुकी, अब जब से ख़बर मिली है तब से इद्दत में बैठना ज़रूरी नहीं। इसी तरह़ अगर शौहर ने तलाक़ दे दी, मगर औ़रत को न मालूम हुआ बहुत दिनों बाद ख़बर मिली। जितनी इद्दत उसके ज़िम्मे थी वह ख़बर मिलने से पहले ही गुज़र चुकी तो उस की भी इद्दत पूरी हो गई, अब इद्दत में बैठना वाजिब नहीं।

6- शौहर की वफ़ात के इद्दत में अगर औ़रत ह़ामिला थी और शौहर के मरने के दो चार घड़ी बाद ही बच्चा पैदा हो गया तब भी इद्दत ख़त्म हो गई।

7- पहले बाज़ मुसलमान घरों में यह दस्तूर था कि शौहर के मरने के बाद औ़रत साल भर तक इद्दत में बैठी रहती, यह बिल्कुल नाजायज़ और ह़राम है। एक ह़दीस में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, “जो मुसलमान औ़रत अल्लाह तआ़ला और क़ियामत के दिन पर ईमान रखती हो उस को

तीन दिन से ज़्यादा किसी के ग़म में सोग करना जायज़ नहीं। मगर शौहर के लिए चार महीने और दस दिन"। (मिश्कात)

8- मरने की इद्दत में औ़रत को रोटी कपड़ा का इन्तिज़ाम अपने पास से करना होगा।

9- किसी काम के लिए औ़रत अपने घर से बाहर कहीं गई थी, या अपनी पड़ोसन के घर गई थी कि इतने में उस का शौहर मर गया तो अब फ़ौरन वहाँ से चली आये और जिस घर में रहती थी वहीं रहे।

10- किसी मर्द ने अपनी बीमारी में औ़रत को तलाक़ बाएन (तीन तलाक़ें) दे दी और तलाक़ की इद्दत अभी पूरी न होने पाई थी कि मर्द मर गया तो देखना चाहिए कि तलाक़ की इद्दत बैठने में ज़्यादा दिन लगेंगे या मौत की इद्दत पूरी करने में जिस इद्दत में ज़्यादा दिन लगेंगे वह इद्दत औ़रत पूरी करेगी।

आयत नं० 235 से 242 तक

وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيمَا عَرَّضْتُمْ بِهِ مِنْ خِطْبَةِ النِّسَاءِ أَوْ أَكْنَنْتُمْ فِي أَنْفُسِكُمْ ۚ عَلِمَ اللَّهُ أَنَّكُمْ سَتَذْكُرُونَهُنَّ وَلَٰكِنْ لَا تُوَاعِدُوهُنَّ سِرًّا
إِلَّا أَنْ تَقُولُوا قَوْلًا مَعْرُوفًا ۚ وَلَا تَعْزِمُوا عُقْدَةَ النِّكَاحِ حَتَّىٰ يَبْلُغَ الْكِتَابُ أَجَلَهُ ۚ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ مَا فِي أَنْفُسِكُمْ فَاحْذَرُوهُ ۚ
وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ غَفُورٌ حَلِيمٌ ﴿٢٣٥﴾ لَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ إِنْ طَلَّقْتُمُ النِّسَاءَ مَا لَمْ تَمَسُّوهُنَّ أَوْ تَفْرِضُوا لَهُنَّ فَرِيضَةً ۚ وَمَتِّعُوهُنَّ عَلَى
الْمُوسِعِ قَدَرُهُ وَعَلَى الْمُقْتِرِ قَدَرُهُ مَتَاعًا بِالْمَعْرُوفِ ۖ حَقًّا عَلَى الْمُحْسِنِينَ ﴿٢٣٦﴾ وَإِنْ طَلَّقْتُمُوهُنَّ مِنْ قَبْلِ أَنْ تَمَسُّوهُنَّ وَقَدْ
فَرَضْتُمْ لَهُنَّ فَرِيضَةً فَنِصْفُ مَا فَرَضْتُمْ إِلَّا أَنْ يَعْفُونَ أَوْ يَعْفُوَ الَّذِي بِيَدِهِ عُقْدَةُ النِّكَاحِ ۚ وَأَنْ تَعْفُوا أَقْرَبُ
لِلتَّقْوَىٰ ۚ وَلَا تَنْسَوُا الْفَضْلَ بَيْنَكُمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ﴿٢٣٧﴾ حَافِظُوا عَلَى الصَّلَوَاتِ وَالصَّلَاةِ الْوُسْطَىٰ وَقُومُوا لِلَّهِ
قَانِتِينَ ﴿٢٣٨﴾ فَإِنْ خِفْتُمْ فَرِجَالًا أَوْ رُكْبَانًا ۖ فَإِذَا أَمِنْتُمْ فَاذْكُرُوا اللَّهَ كَمَا عَلَّمَكُمْ مَا لَمْ تَكُونُوا تَعْلَمُونَ ﴿٢٣٩﴾ وَالَّذِينَ يُتَوَفَّوْنَ
مِنْكُمْ وَيَذَرُونَ أَزْوَاجًا وَصِيَّةً لِأَزْوَاجِهِمْ مَتَاعًا إِلَى الْحَوْلِ غَيْرَ إِخْرَاجٍ ۚ فَإِنْ خَرَجْنَ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِي مَا فَعَلْنَ
فِي أَنْفُسِهِنَّ مِنْ مَعْرُوفٍ ۗ وَاللَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٢٤٠﴾ وَلِلْمُطَلَّقَاتِ مَتَاعٌ بِالْمَعْرُوفِ ۖ حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِينَ ﴿٢٤١﴾ كَذَٰلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ
لَكُمْ آيَاتِهِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ﴿٢٤٢﴾

अनुवाद-

(235) और तुम पर कोई गुनाह नहीं, कि तुम उन (इद्दत वाली) औ़रतों के निकाह़ का पैग़ाम देने के बारे में कोई बात इशारों से कहो, या (यह इरादा) अपने दिलों ही में छिपा कर रखो, अल्लाह को तो मालूम है, कि तुम उन औ़रतों को याद करोगे, परन्तु छिपकर उनसे कोई वादा न करो, मगर हाँ कोई बात जायज़ तौर पर अच्छे तरीक़े से (कहना चाहो तो संकेत से) कह दो और जब तक इद्दत की निर्धारित अवधि न पूरी हो जाए, निकाह की बात पक्की न करो, और जाने रहो कि जो कुछ तुम्हारे दिलों में है अल्लाह उसे (ख़ूब) जानता है, तो उसी से डरते रहो, और जाने रहो कि अल्लाह बख़्शने वाला (अत्यन्त क्षमाशील) सहनशील है। (236) तुम पर कोई गुनाह नहीं कि तुम उन पत्नियों को जिन्हें तुमने न हाथ लगाया, और न उनके लिए 'महर' निश्चित किया, तलाक़ दे दो, तो नियम के अनुसार उन्हें कुछ ख़र्च दे दो, सामर्थ्य वाले अपनी हैसियत के अनुसार और बेसामर्थ्य वाले अपनी हैसियत के अनुसार उनको ख़र्च दें; जैसा कि दस्तूर है, यह नेक लोगों पर एक तरह़ का ह़क़ है। (237) और अगर हमबिस्तरी (सम्भोग) करने से पहले और महर निश्चित करने के बाद औ़रतों को तलाक़ दो, तो जो कुछ तुमने निश्चित किया था उसका आधा देना होगा, सिवाय उस सूरत में कि पत्नियां आधा महर खुद ही छोड़ दें; या (मर्द) जिसके हाथ में निकाह के सम्बन्ध की बातें हैं, वह (अपना हक़्) छोड़ दे, और अगर अपना हक़् छोड़ दो, तो यह परहेज़गारी के ज़्यादा क़रीब है, और अपने बीच इस भलाई के विचार को मत भूलो, जो (कुछ तुम) करते हो, बेशक अल्लाह तुम्हारे सब कामों को देख रहा है। (238) (सभी) नमाज़ों की पाबन्दी रखो और (विशेष रूप से) दर्मियानी नमाज़ (अ़स्र) की, और अल्लाह के आगे आजिज़ी (भक्तभाव) से खड़े रहा करो; (239) फिर अगर तुमको (दुश्मन का) डर हो तो पैदल हो या सवार (हर हाल में नमाज़ पढ़ लो) फिर जब तुम निश्चिन्त हो जाओ, तो जिस तरह अल्लाह ने तुम को (नमाज़) सिखाया है, जिसको तुम पहले नहीं जानते थे, (उसी तरह) अल्लाह को याद करो। (240) और जो लोग तुम

में से मर जाएँ और पत्नियाँ छोड़ जाएँ, तो (उन के लिए ज़रूरी है कि) अपनी पत्नियों के हक़ में वे वसीयत कर जाएँ; कि घर से निकाले बिना एक साल तक खर्चा (खाना पीना आदि) दिया जाए, लेकिन अगर वे खुद ही निकल जाएँ तो जायज़ तौर पर जो कुछ भी अपने हक़ में करें उनका तुम पर कुछ गुनाह नहीं, और अल्लाह ज़बरदस्त (प्रभुत्वशाली), हिकमत वाला है। (241) और तलाक़ पाई हुई औ़रतों को नियमानुसार (इद्दत की अवधि में), खर्च भी मिलना चाहिए, यह डर रखने वालों पर एक हक़ है; (242) अल्लाह इसी तरह तुम्हारे लिए खोल- खोल कर अपनी आयतें (हुक्मों को) बयान करता है, ताकि तुम समझ से काम लो।

आयत नं० 235 से 242 तक की व्याख्या

235 وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيمَا عَرَّضْتُم بِهِ مِنْ خِطْبَةِ النِّسَاءِ أَوْ أَكْنَنتُمْ فِي أَنفُسِكُمْ ۚ عَلِمَ اللَّهُ أَنَّكُمْ سَتَذْكُرُونَهُنَّ
وَلَٰكِن لَّا تُوَاعِدُوهُنَّ سِرًّا إِلَّا أَن تَقُولُوا قَوْلًا مَّعْرُوفًا ۚ وَلَا تَعْزِمُوا عُقْدَةَ النِّكَاحِ حَتَّىٰ يَبْلُغَ الْكِتَابُ
أَجَلَهُ ۚ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ مَا فِي أَنفُسِكُمْ فَاحْذَرُوهُ ۚ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ غَفُورٌ حَلِيمٌ ﴿٢٣٥﴾

निकाह़ का पैग़ाम-

इस आयत में ऐसी औ़रतों से जो कि इद्दत के ज़माने में हों उन से दूसरा निकाह़ या निकाह़ का वादा या निकाह़ के पैग़ाम के अह़काम बतलाए गये हैं और वह यह कि इद्दत के अन्दर-अन्दर निकाह़ का वादा और निकाह़ का सरीह़ पैग़ाम तो जायज़ नहीं। अल्बत्ता निकाह़ का इशारा करना जायज़ है और वजह इस हुक्म की ज़ाहिरन यही है कि किसी के मरते ही उस की बेवा से निकाह़ का पैग़ाम देना एक तरह़ की बेमुरव्वती है, यानी पैग़ाम देने वाला उस की मौत के इन्तिज़ार में था।

इसी तरह़ इद्दत के अन्दर औ़रत के निकाह़ के मुतअ़ल्लिक़ बातचीत करना बेवफ़ाई पर दलालत करता है कि पहले शौहर के मरते ही उस के ह़क़ को भूल गई और पिछले निकाह़ की इ़ज़्ज़त व हुरमत का कोई लिहाज़ न किया कि जिस के घर में इद्दत गुज़ार रही है और जिस की मीरास तक़्सीम करा रही है उस के मरते ही निकाह़ की बातचीत कर रही है, यानी यह औ़रत अपने शौहर के मरने ही के इन्तिज़ार में थी। फिर इन्सानी फ़ित्रत (Human Nature) के जो तक़ाज़े हैं और जो मर्द औ़रत में क़ुद्रतन (Naturally) रखे गये हैं उन की रिआ़यत भी इस दीने फ़ित्रत में ज़रूरी है। इसलिए इस आयत में उन बातों की ओर जामेअ़ अह़काम बयान फ़रमाये जाते हैं, अतः आयत में इर्शाद होता है-

> "और तुम पर कोई गुनाह नहीं होगा उन औ़रतों को जो कि इद्दते वफ़ात में हैं। पैग़ाम निकाह़ देने के बारे में कोई बात इशारतन कहो (जैसे यह कि मुझ को एक नेक औ़रत की ज़रुरत है और मिस्ल उस के) या अपने दिल में आइन्दा निकाह़ कर लेने के इरादे को पोशीदा (गुप्त) रखो जब भी गुनाह नहीं और वजह इस इजाज़त की यह है कि अल्लाह तआ़ला को यह बात मालूम है कि तुम उन औ़रतों का ज़रूर ज़िक्र करोगे, लेकिन उन से

साफ़ लफ़्ज़ों में निकाह़ का वादा और गुफ़्तगू मत करो मगर यह कि कोई बात क़ायदे के मुवाफ़िक़ कहो तो हर्ज नहीं। (और वह बात क़ायदे के मुवाफ़िक़ यही है कि इशारतन कहो) और तुम तअ़ल्लुक़ निकाह़ का फ़िल्ह़ाल इरादा भी मत करो यहाँ तक कि इ़द्दत मुक़र्ररह पूरी हो जाए और यक़ीन रखो इस का कि अल्लाह तआ़ला को मालूम है तुम्हारे दिलों की बात भी। तो अल्लाह तआ़ला से डरते रहा करो और नाजायज़ काम का दिल में इरादा भी मत किया करो और यह भी यक़ीन रखो कि अल्लाह तआ़ला माफ़ भी करने वाले हैं। (सो अगर किसी नाजायज़ काम का इरादा किया था फिर तौबः कर ली तो वह माफ़ कर देते हैं और ह़लीम भी हैं (सो अगर तौबः न करने वाले को सज़ा न दें तो इस की वजह ह़िल्म समझो, धोखा मत खाओ।)

यहाँ इस आयत में इ़द्दत के अन्दर चार तरह़ के काम हैं। दो ज़बान के और दो दिल के और हर एक का हुक्म अलग-अलग है।

1- इ़द्दत ही में ज़बान से बिल्कुल खुले अल्फ़ाज़ में बेवा को निकाह़ का पैग़ाम देना यह नाजायज़ और ह़राम है।

2- इ़द्दत ही में ज़बान से इशारतन व किनायतन यह जायज़ और इस की इजाज़त है।

3- इ़द्दत ही में दिल से यह इरादा करना कि अभी यानी इ़द्दत के अन्दर ही निकाह़ कर लेंगे यह भी ह़राम है क्योंकि इ़द्दत के अन्दर निकाह़ करना ह़राम है।

4- इ़द्दत ही में दिल से यह इरादा करना कि इ़द्दत के बाद निकाह़ करेंगे यह जायज़ है।

ह़ज़रत थानवी (रह़०) ने यहाँ लिखा है कि जो औ़रत तलाक़ बायन की इ़द्दत में हो उस का भी यही हुक्म है।

وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا فِيْٓ اَنْفُسِكُمْ فَاحْذَرُوْهُ ۚ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ حَلِيْمٌ ۝

“और यक़ीन रखो इस का कि अल्लाह तआ़ला को इत्तिलाअ़ है तुम्हारे दिलों के बात की, सो अल्लाह तआ़ला से डरते रहो और यह भी यक़ीन रखो कि अल्लाह तआ़ला ‘ग़फ़ूर’ हैं ‘ह़लीम’ हैं।”

यानी तुम यक़ीन रखो कि जो कुछ तुम्हारे दिलों में है अल्लाह तआ़ला उस से भी वाक़िफ़ है लिहाज़ा तुम को इस से डरना चाहिए और औ़रतों के मुतअ़ल्लिक़ कोई बद्नियती दिल में न रखनी चाहिए और न उस से ख़राब मामला करना चाहिए और अल्लाह के हुक्मों की पूरी-पूरी फ़रमाँबरदारी और पाबन्दी करनी चाहिए। अल्लाह तआ़ला की पर्दापोशी से धोखे में न पड़ना चाहिए और सज़ा में देर हो तो दिलेर न होना चाहिए।

236 لَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اِنْ طَلَّقْتُمُ النِّسَآءَ مَا لَمْ تَمَسُّوْهُنَّ اَوْ تَفْرِضُوْا لَهُنَّ فَرِيْضَةً ۚۖ وَّمَتِّعُوْهُنَّ عَلَى الْمُوْسِعِ
قَدَرُهٗ وَعَلَى الْمُقْتِرِ قَدَرُهٗ ۚ مَتَاعًا بِالْمَعْرُوْفِ ۚ حَقًّا عَلَى الْمُحْسِنِيْنَ ۝

इस आयत में तलाक़शुदा औ़रतों के एह़काम बयान फ़रमाये गये हैं। जिन औ़रतों को तलाक़ दी जाती

है उन की चार क़िस्में हैं-

1- यह कि निकाह़ के वक़्त महेर मुतअ़य्यन (निश्चित) हुआ था और फिर ख़िल्वत (तन्हाई) के बाद उन को तलाक़ दी गई हो तो इस सूरत में शौहर को तमाम महेर देना होगा जो निकाह़ के वक़्त मुक़र्रर हुआ था। इस का हुक्म पाँचवें पारे की इब्तिदाई आयत सूरः निसा में आया है और इसी रुकूअ़ के अख़ीर में भी।

2- यह कि बेवक़्त महेर तो मुतअ़य्यन (निश्चित) हुआ था, मगर ख़िल्वत (तन्हाई) से पहले ही तलाक़ हो गई तो इस सूरत में शौहर को आधा महेर देना लाज़िम होगा। जैसा कि आयत नं० 237 में हुक्म है।

3- यह कि निकाह़ के वक़्त न महेर तय हुआ था और न ख़िल्वत (तन्हाई) की नौबत आई। ख़िल्वत (तन्हाई) से पहले ही तलाक़ दे दी, ऐसी सूरत में शौहर के ज़िम्मे महेर की अदाएगी नहीं बल्कि दस्तूर के मुताबिक़ और शौहर अपनी हैसियत के मुताबिक़ कुछ ख़र्चा औ़रत को दे जो कम से कम एक जोड़ा तीन कपड़ों का वाजिब है। यह हुक्म इसी आयत की तफ़्सीर में मौजूद है।

4- यह कि महेर तो मुक़र्रर न हुआ था, मगर ख़िल्वत (तन्हाई) के बाद तलाक़ दी। ऐसी सूरत में 'महेर मिस्ल' देना पड़ेगा यानी औ़रत के ख़ानदान की औ़रतों का जो महेर हो।

इन चार क़िस्मों से तलाक़शुदा औ़रतों के महेर की अदाएगी के बारे में इर्शाद होता है-

> "तुम पर महेर का कुछ मुवाख़ज़ा नहीं, अगर बीवियों को ऐसी ह़ालत में तलाक़ दे दो कि उन को तुम ने हाथ न लगाया हो और न उन के लिए कुछ महेर मुक़र्रर किया हो तो ऐसी सूरत में महेर अपने ज़िम्मे मत समझो और सिर्फ़ उन को एक फ़ायदा पहुँचाओ। साह़िबे वुस्अ़त (Capable) के ज़िम्मे उस की हैसियत के मुताबिक़ है और तंग दस्त के ज़िम्मे उस की हैसियत के मुताबिक़ है, एक ख़ास क़िस्म का फ़ायदा पहुँचाना जो क़ायदे के मुताबिक़ वाजिब है, ख़ुश मामला लोगों पर यानी सब मुसलमानों पर।"

यहाँ आयत में लफ़्ज़ **'मत्तिअ़ूहुन्ना'** फ़रमाया गया है, जिस का उर्दू तर्जुमा है "उन को फ़ायदा पहुँचाओ।" यह लफ़्ज़ मताअ़ से है और मताअ़ लुग़त में उस चीज़ को कहते हैं जिस से थोड़ी देर फ़ायदा ह़ासिल हो, इसीलिए दुनिया को मताअ़ कहते हैं। अह़ादीसे नबवी (सल्ल०) की रौशनी में उ़लमा-ए-मुफ़स्सिरीन ने इस से मुराद कम से कम तीन कपड़े यानी एक जोड़ा लिया है लेकिन यह हुक्म सब मर्दों के लिए एक जैसा नहीं है बल्कि मर्द की वुस्अ़त व तंगदस्ती यानी माली ह़ालत के एतिबार से है। जो लोग दौलतमन्द फ़राख़दस्त हैं उन को अपनी हैसियत के मुताबिक़ जोड़ा देना चाहिए।

महेर की मिक़्दार-

यहाँ एक मस्ला यह भी समझ लेना चाहिए कि अगर निकाह़ के वक़्त महेर मुक़र्रर न किया जाए तो निकाह़ हो जाता है, लेकिन महेर बहरह़ाल देना पड़ेगा। ह़न्फ़िया के नज़्दीक कम से कम महेर की

तअ़दाद दस दिरहम चाँदी की क़ीमत है। इसलिए औ़रत की कम से कम महेर की मिक़्दार ह़न्फ़िया के नज़्दीक राय्ज़ुल वक़्त वज़न के मुताबिक़ दो तोला साढ़े सात माशा चाँदी या उस की क़ीमत होती है।

(औज़ाने शरअ़िया पेज नं० 16)

ह़ज़रत मुह़म्मद शफ़ीअ़ साह़ब (रह़०) के मुताबिक़ अगर कोई इस से कम महेर मुक़र्रर करे तब भी इतना ही देना वाजिब होगा और ज़्यादा महेर की कोई ह़द शरीअ़त ने मुक़र्रर नहीं की। जिस क़दर देने की जिस में इस्तिआ़त (Capability) हो उतना महेर बाँध सकता है, मगर मुनासिब इसमें भी इत्तिबा-ए-सुन्नत ही है।

इस आयत से सम्बन्धित मसायल-

1- अगर किसी औ़रत को क़ुरबत व ख़िल्वत सह़ीह़ा के पहले मर्द तलाक़ दे दे और महेर निकाह़ के वक़्त निश्चित न हुआ हो तो महेर कुछ नहीं देना पड़ता बल्कि एक जोड़ा कपड़ा देना वाजिब है।

2- इस जोड़े में मर्द की ह़ैसियत देखी जाएगी है यानी मर्द को अपनी माली ह़ैसियत के मुताबिक़ जोड़ा देना होगा।

237 وَإِنْ طَلَّقْتُمُوهُنَّ مِنْ قَبْلِ أَنْ تَمَسُّوهُنَّ وَقَدْ فَرَضْتُمْ لَهُنَّ فَرِيضَةً فَنِصْفُ مَا فَرَضْتُمْ إِلَّا
أَنْ يَعْفُونَ أَوْ يَعْفُوَ الَّذِي بِيَدِهِ عُقْدَةُ النِّكَاحِ ۚ وَأَنْ تَعْفُوا أَقْرَبُ لِلتَّقْوَىٰ ۚ وَلَا تَنْسَوُا
الْفَضْلَ بَيْنَكُمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ۝

"और अगर तुम उन बीवियों को तलाक़ दो इसके पहले कि उन को हाथ लगाओ और उन के लिए कुछ महेर भी मुक़र्रर कर चुके हो तो ऐसी सूरत में जितना महेर तुम ने मुक़र्रर किया है उस का आधा वाजिब है (और आधा माफ़ है) मगर दो सूरतें इस हुक्म से अलग हैं।

✱ एक सूरत यह कि वह औ़रतें अपना आधा महेर माफ़ कर दें तो इस सूरत में आधा महेर भी वाजिब न होगा।

✱ दूसरी सूरत यह है कि वह शख़्स रिआ़यत कर दे जिस के हाथ में निकाह़ का तअ़ल्लुक़ रखना और तोड़ना है। यानी शौहर पूरा महेर उस को दे दे तो इस सूरत में शौहर की मर्ज़ी से पूरा ही महेर अदा करना लाज़िम होगा, और ऐ अहले हुक़ूक़! तुम्हारा अपने हुक़ूक़ को माफ़ कर देना बदला लेने से ज़्यादा बेहतर है (क्योंकि माफ़ करने से सवाब मिलता है और सवाब का काम करना ज़ाहिर है कि तक़्वे की बात है) और आपस में एह़सान और रिआ़यत करने से ग़फ़्लत मत करो (बल्कि हर शख़्स एक दूसरे के साथ रिआ़यत करने का ख़याल रखा करे) बिलाशुब्हा अल्लाह तआ़ला तुम्हारे सब कामों को ख़ूब देख रहा है।

इस आयत से सम्बन्धित मस्ला यह हुआ कि जिस औ़रत का 'महेर' निकाह़ के वक़्त मुक़र्रर हुआ हो और उस को क़ुरबत या सम्भोग के पहले तलाक़ दे दी हो तो मुक़र्रर किये हुए महेर का आधा मर्द के ज़िम्मे अदा करना वाजिब होगा। अल्बत्ता औ़रत अगर माफ़ कर दे या मर्द पूरा महेर दे दे तो यह

अपने इच्छा की बात है।

यहाँ पहली आयत के आख़िर में حَقًّا عَلَى الْمُحْسِنِيْنَ (यानी यह लाज़िम है नेकी करने वालों पर) और दूसरी आयत के ख़ात्मे पर وَلَا تَنْسَوُا الْفَضْلَ بَيْنَكُمْ (यानी आपस में एहसान और रिआयत करने से ग़फ़्लत मत करो।) फ़रमा कर इशारा इस बात की तरफ़ है कि औरतों के हुक़ूक़ में जहाँ तक हो सके मर्द को रिआयत और एहसान से काम लेना चाहिए और यह क़ुर्आनी तअलीमात में पसंदीदा है कि तलाक़ के मौक़े पर भी आपस में अच्छे व्यवहार, मुरव्वत और रिआयत की तअलीम दी जाती है जिस से यह साफ़ ज़ाहिर होता है कि हालते नशा और नागवारी में भी तक़्वा का लिहाज़ और हुस्ने अख़्लाक़, माफ़ी व एहसान का मामला रखना चाहिए।

238 حٰفِظُوْا عَلَى الصَّلَوٰتِ وَالصَّلٰوةِ الْوُسْطٰى ۚ وَقُوْمُوْا لِلّٰهِ قٰنِتِيْنَ ۝

حٰفِظُوْا عَلَى الصَّلَوٰتِ इमाम अहमद और बुख़ारी (रज़ि०) ने अपनी तारीख़ में, अबूदाऊद व बैहक़ी और इब्ने जरीर ने ज़ैद बिन साबित (रज़ि०) से रिवायत नक़्ल की है कि रसूल-ए-अकरम (सल्ल०) ज़ुह्र की नमाज़ शिद्दते गर्मी के वक़्त पढ़ा करते थे (और उस गर्मी के वक़्त) यह नमाज़ सहाबा-ए-किराम पर सब नमाज़ों से ज़्यादा गिराँ होती थी। इस पर यह आयत नाज़िल हुई कि पाँचों नमाज़ों को और ख़ुसूसियत के साथ दर्मियानी नमाज़ यानी ज़ुह्र का एहतिमाम करो।

इमाम अहमद, नसई और इब्ने जरीर ने ज़ैद बिन साबित से रिवायत नक़्ल की है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ठीक दोपहर के वक़्त ज़ुह्र की नमाज़ पढ़ा करते थे और आप के पीछे सिर्फ़ एक दो सफ़ें होती थीं और लोग उस वक़्त क़ैलुल्ला और अपनी तिजारतों में मसरूफ़ (Busy) रहते थे, उस वक़्त अल्लाह तआला ने यह आयते करीमा नाज़िल फ़रमाई, حٰفِظُوْا عَلَى الصَّلَوٰتِ

हदीस के प्रसिद्ध व्याख्याकारों ने ज़ैद बिन अरक़म से रिवायत नक़्ल की है, “हम रसूलुल्लाह (सल्ल०) के ज़माने में नमाज़ में बात कर लिया करते थे, यहाँ तक कि हम में से कोई भी जो उस के पास खड़ा होता था नमाज़ में उस से बातचीत कर लिया करता था तब यह आयत नाज़िल हुई وَقُوْمُوْا لِلّٰهِ यानी अल्लाह के सामने आ़जिज़ (Reverently) बने हुए खड़े रहो, इस के बाद हम बातचीत करने से रोक दिये गये।

इब्ने जरीर ने मुजाहिद से नक़्ल किया है कि सहाबा-ए-किराम नमाज़ में बातचीत कर लिया करते थे यहाँ तक कि कोई शख़्स अपने भाई को किसी ज़रूरत के बारे में भी बता दिया करता था, तब अल्लाह तआला ने यह आयत وَقُوْمُوْا لِلّٰهِ قٰنِتِيْنَ नाज़िल फ़रमाई। **(तफ़्सीर इब्ने अ़ब्बास)**

इन आयतों में इर्शाद होता है-

“हिफ़ाज़त करो सब नमाज़ों की और दर्मियान वाली नमाज़..................

यहाँ नमाज़ की हिफ़ाज़त व देखभाल का जो हुक्म दिया गया है वह यह है कि नमाज़ों को अपने वक़्तों पर अदा किया जाए और नमाज़ के अरकान, वाजिबात, सुनन और मुस्तहबात का पूरा-पूरा लिहाज़

रखा जाए। फिर तमाम नमाज़ों की और सलातुल् वुस्ता की ह़िफ़ाज़त का ख़ास हुक्म दिया गया है।

सलाते वुस्ता यानी बीच वाली नमाज़ से कौन सी नमाज़ मुराद है? उ़लमा-ए-मुफ़स्सिरीन का क़ौल बाज़ अह़ादीस की दलील से यह है कि बीच वाली नमाज़ अ़स्र है क्योंकि इस के एक तरफ़ वह नमाज़ें दिन की हैं यानी 'फ़ज्र' व 'ज़ुह्र' और एक तरफ़ दो नमाज़ें रात की हैं यानी 'मग़्रिब' व 'अ़िशा' तो इस बीच वाली नमाज़ की ताकीद ख़ुसूसियत के साथ इसलिए फ़रमाई गई कि अक्सर लोगों को यह वक़्त काम की भीड़-भाड़ और मशग़ूलियत का होता है और यहाँ यह जो फ़रमाया وَقُومُوا لِلّٰهِ قٰنِتِينَ (और खड़े हुआ करो अल्लाह के सामने आ़जिज़ बने हुए) और आ़जिज़ी की तफ़्सीर ह़दीस में ख़ामोशी के साथ आई है। इसी आयत से नमाज़ में बातें करने पर रोक हुई और वह जो बाज़ अह़ादीस में है कि नमाज़ में सह़ाबा या ख़ुद ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने कोई इशारा किया, या बात की, या चले तो यह सब इस आयत के नाज़िल होने से पहले की बातें हैं।

सय्यदना अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "सलातुल् वुस्ता, सलातुल् अ़स्र है।" **(तिर्मिज़ी)**

अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जिस की सलातुल् अ़स्र फ़ौत हो गई मानों उस का जान व माल ही तबाह हो गया। **(बुख़ारी)**

यज़ीद बिन अरक़म से रिवायत है कि आप के ज़माने में हम नमाज़ में बातें किया करते थे कोई अपने साथी से मतलब की बात (नमाज़ ही में) करता यहाँ तक कि यह आयत नाज़िल हुई। **(बुख़ारी)**

239 فَإِنْ خِفْتُمْ فَرِجَالًا أَوْ رُكْبَانًا ۖ فَإِذَا أَمِنتُمْ فَاذْكُرُوا اللَّهَ كَمَا عَلَّمَكُم مَّا لَمْ تَكُونُوا تَعْلَمُونَ ﴿٢٣٩﴾

अब नमाज़ की अहमियत का अन्दाज़ा इस से लगाइये कि ऐसी शदीद ह़ालत में जब दुश्मन से मुक़ाबला हो और जब कि जानों का ख़त्रा हो उस वक़्त भी नमाज़ टाली नहीं गई, बल्कि नमाज़ खड़े-खड़े या सवारी पर बैठे-बैठे पढ़े। उस वक़्त न रुकूअ़ व सुजूद का लिहाज़ ज़रूरी है न क़िब्ला की तरफ़ होने का। अल्बत्ता इशारे से नमाज़ सह़ी जब होगी जब एक जगह खड़ा हो सके और उस में सज्दे का इशारा रुकूअ़ से ज़्यादा हुआ करे और अगर खड़ा रहना भी मुम्किन न हो बल्कि चलना फ़िरना और दौड़ना भागना हो रहा हो, अ़मल कसीर (वह काम जिससे नमाज़ टूट जाती है) की वजह से ह़न्फ़िया के नज़्दीक नमाज़ मुवख़्ख़र (देरी से) कर दी जाएगी। जैसा कि सह़ाबा-ए-किराम (रज़ि०) और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने जंगे अह़ज़ाब में किया था जैसा कि बुख़ारी और मुस्लिम में रिवायत है कि मुश्रिकों ने हम को 'सलाते वुस्ता' से रोक दिया। **(तफ़्सील के लिए देखें सूरः अन् निसा-101, 102)**

यह वाक़िआ़ जंगे अह़ज़ाब में नमाज़-ए-अ़स्र का है और जब जंग या ख़ौफ़ की ह़ालत न हो, अम्न चैन हो तो फिर उन्हीं अरकान व शरायत के साथ नमाज़ की अदाएगी का हुक्म है जो तअ़लीम की गई हैं यानी क़िब्ला की तरफ़ रुख़ हो, रुकूअ़, सुजूद, क़ियाम सब करें।

सह़ीह़ अह़ादीस की रौशनी में इस की तअ़दाद चार और दो के अ़लावा एक रकअ़त पढ़ने का सुबूत

भी मिलता है। अहादीस में इस की मुख़्तलिफ़ सूरतें ज़िक्र हुई हैं। एक ह़दीस में है कि रसूल (सल्ल०) ने एक गिरोह को दो रकअ़त नमाज़ (ख़ौफ़) पढ़ाई (जबकि दूसरा गिरोह दुश्मन के मुक़ाबिल रहा) फिर यह (पहला गिरोह) हट गया (और दुश्मन के मुक़ाबिल हो गया) और दूसरे गिरोह को दो रकअ़त नमाज़ पढ़ाई तो (इस तरह़) नबी करीम (सल्ल०) की चार रकअ़त नमाज़ हुई और दूसरे लोगों की दो-दो रकअ़त हुई। **(सह़ीह़ मुस्लिम, सलातुल् मुसाफ़िरीन, ह़दीस 843)**

यहाँ नमाज़ की ह़िफ़ाज़त से आगाह फ़रमाया गया ताकि नमाज़ की मुहाफ़िज़त नापसंदीदा कामों से बचाए और अगर नापसन्दीदा काम हो जाएँ तो नमाज़ उस का कफ़्फ़ारा बन सके।

नोट- अब आगे फिर बेवा औ़रत (widow) से सम्बन्धित और तलाक़ दी हुई औ़रत के साथ व्यवहार करने के मसायल का ज़िक्र है।

240 وَالَّذِينَ يُتَوَفَّوْنَ مِنكُمْ وَيَذَرُونَ أَزْوَاجًا وَصِيَّةً لِأَزْوَاجِهِم مَّتَاعًا إِلَى الْحَوْلِ غَيْرَ إِخْرَاجٍ ۚ
فَإِنْ خَرَجْنَ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِي مَا فَعَلْنَ فِي أَنفُسِهِنَّ مِن مَّعْرُوفٍ ۗ وَاللَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٢٤٠﴾

हुक्मे इलाही وَالَّذِينَ يُتَوَفَّوْنَ مِنكُمْ इस्ह़ाक़ बिन राह्वय ने अपनी तफ़्सीर में मक़ातिल बिन ह़ब्बान से नक़्ल किया है कि एक शख़्स अहले तायफ़ में से मदीना मुनव्वरह आ गया। उस की औलाद, मर्द व औ़रतें और माँ-बाप भी थे, वह मदीना मुनव्वरह में इन्तिक़ाल कर गया। इस चीज़ की रसूल (सल्ल०) को इत्तिलअ़ दी गई, आप ने उस के वालिदैन और औलाद को वसूल के मुताबिक़ माल दे दिया मगर उस की बीवी को कुछ नहीं दिया, अल्बत्ता उस के वारिसों को हुक्म दिया कि उस के शौहर के माल में से एक साल तक उस को ख़र्च दिया जाए, इस पर यह आयत नाज़िल हुई।

ज़माने जाहिलियत में अ़रबों में बेवा की इद्दत का रिवाज एक साल का था। कुछ वारिसीन बेचारी बेवा को दौराने इद्दत ही घर से निकाल कर बाहर कर देते थे और रोज़ी-रोटी कुछ न देते थे। वह बेवा उस ज़माने इद्दत में न तो नया निकाह़ कर सकती थी और न उस की रोज़ी-रोटी का कोई ज़रिया होता था। शुरु में भी औ़रत की इद्दत एक साल थी और औ़रत के लिए उस वक़्त तक कोई मीरास न थी। फिर बाद में बेवा की इद्दत का ज़माना चार माह दस रोज़ मुक़र्रर हुआ। जैसा कि इसी सूरः के पिछले रुकूअ़ 234 में हुक्म था (वह बीवियाँ अपने आप को रोके रखें चार महीने दस दिन।)

उस वक़्त तक आयत मीरास नाज़िल नहीं हुई थी और बेवा का कोई शरई़ ह़िस्सा तर्के (मय्यित के छोड़े हुए माल) में मुक़र्रर न हुआ था, इसलिए यह रिआ़यत रखी गई कि बेवा अगर अपने इन्तिक़ाल किये हुए शौहर के तर्के के घर में रहना चाहे तो साल भर तक उस को रहने का ह़क़ ह़ासिल है और इन्तिक़ाल किये हुए शौहर के तर्के ही से साल भर तक उस को 'नान व नफ़्क़ा' (खाना और कपड़ा) और 'सुकूनत' (रिहाईश) का मकान मिलेगा। कोई उन को इस ह़क़ से रोक नहीं सकता था। इस पहली आयत में इसी का बयान है और शौहरों को हुक्म था कि इस तरह़ की वसीयत कर जाया करें।

हाँ, अगर चार माह दस रोज़ इद्दत गुज़ारने के बाद बेवा बाक़ी दिनों में शौहर के घर में रहना चाहे

तो उस को अख़्तियार है कि इस मुद्दत यानी 'चार माह दस रोज़' के बाद जहाँ चाहे चली जाए और जिस से चाहे निकाह़ कर सकती है।

जब आयत मीरास नाज़िल हो गई और शौहर के तर्के में बीवी के लिए चौथा या आठवाँ ह़िस्सा मुक़र्रर कर दिया गया। यानी शौहर की औलाद होने की सूरत में आठवाँ ह़िस्सा और औलाद न होने की सूरत में छोड़े हुए माल का चौथाई ह़िस्सा, तो साल भर के रहने खाने का हुक्म जो इस तफ़्सीर में था मन्सूख़ (ख़त्म) हो गया। इसलिए अक्सर मुफ़स्सिरीन और फ़ुक़हा के नज़्दीक यह आयत मन्सूख़ है और इद्दत वाली आयत और मीरास वाली आयत उस की 'नासिख़' है।

सही बुख़ारी में है कि ह़ज़रत इब्ने ज़ुबैर (रज़ि०) ने ह़ज़रत उ़स्माने ग़नी (रज़ि०) से कहा, "जब यह आयत मन्सूख़ हो चुकी है तो फिर उसे आप क़ुर्आने करीम में क्यों लिखवा रहे हैं।" ह़ज़रत उ़स्मान (रज़ि०) ने जवाब में फ़रमाया, "भतीजे जिस तरह़ पिछली आयत में यह मौजूद है यहाँ भी यह मौजूद रहेगी। हम कोई हेरफेर नहीं कर सकते।"

(तफ़्सील के लिए देखे सूरः अल् बक़रः 234 और आयत मीरास अन् निसा 12)

इस आयत का हुक्म शुरु में था और बाद में दूसरी आयतों से मन्सूख़ हो गया। इस से मालूम हुआ कि जो लोग मरने के क़रीब हों उन पर लाज़िम है कि अपनी बीवियों से सम्बन्धित वारिसों को वसीयत कर दें कि बेवा को साल भर तक नान व नफ़्क़ा (खाना, कपड़ा) और सकूनत (रिहाईश) का मकान देना। उन को निकाल न देना जैसा कि जाहिलियत में दस्तूर था। हाँ, अगर वह अपनी ख़ुशी से इद्दत का ज़माना चार माह दस दिन गुज़ार कर खुशी से चली जाएँ और शरीअ़त के अनुसार अपनी मर्ज़ी से जहाँ चाहे निकाह़ कर लें।

पहली आयत की तफ़्सीर में यही मज़्मून बयान फ़रमाया गया है, और इर्शाद होता है-

> "और जो लोग वफ़ात पा जाते हैं तुम में से और छोड़ जाते हैं बीवियों को, उन के ज़िम्मे लाज़िम है कि वह वसीयत कर जाया करें अपनी बीवियों के वास्ते एक साल तक नान व नफ़्क़ा (खाना और कपड़ा) और घर में सुकूनत (रिहाईश) रखने से नफ़ा होने की इस तौर पर कि वह घर से निकाली न जाएँ। हाँ, अगर इद्दत गुज़ार कर (यानी चार माह दस दिन या वज़अ़ ह़मल के बाद) खुद निकल जाएँ तो तुम को कोई गुनाह नहीं, उस क़ायदे की बात में जिस को अपने बारे में तज्वीज़ करें। जैसे निकाह़ वग़ैरह और अल्लाह तआ़ला ज़बरदस्त ह़िक्मत वाले हैं, चाहे तुम्हारी समझ में वह ह़िक्मतें न आ सकें।"

इस हुक्म से रस्मे जाहिलियत को ग़लत फ़रमाया, औ़रत के हुक़ूक़ का तह़फ़्फ़ुज़ (Protection) फ़रमाया। औ़रत को मुख़्तार (Capable) बनाया और आयत के आख़िर में وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ फ़रमा कर इशारा फ़रमा दिया कि अल्लाह ज़बरदस्त हैं उन के हुक्म के ख़िलाफ़ मत करो और हिक्मत वाले हैं कि तमाम अह़काम में तुम्हारी मस्लह़तें रखी हैं, चाहे तुम्हारी समझ में आएँ या न आएँ।

241 وَلِلْمُطَلَّقٰتِ مَتَاعٌۢ بِالْمَعْرُوْفِ حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِيْنَ

अल्लाह तआला फ़रमाता है وَلِلْمُطَلَّقٰتِ مَتَاعٌۢ بِالْمَعْرُوْفِ इब्ने जरीर ने इब्ने ज़ैद से नक़्ल किया है कि जब यह आयतें وَمَتِّعُوْهُنَّ عَلَى الْمُوْسِعِ قَدَرُهٗ وَعَلَى الْمُقْتِرِ قَدَرُهٗ नाज़िल हुई, तो एक शख़्स बोला कि अगर उस ने भलाई की तो मैं भी ऐसा करूँगा और अगर भलाई देखने में न आई तो मैं यह सुलूक नहीं करूँगा। इस पर अल्लाह तआला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई, कि सब तलाक़ दी हुई औ़रतों के लिए कुछ फ़ायदा पहुँचाना मुक़र्रर हुआ है। **(तफ़्सीर इब्ने अ़ब्बास)**

इस आयत में तलाक़ दी हुई औ़रतों के 'मताअ़' यानी उन को नफ़ा पहुँचाने का बयान है। जिस में इर्शाद होता है-

'तलाक़' पाई हुई औ़रतों को फ़ायदा पहुँचाने का हुक्म इस रुकूअ़ के शुरु की आयात में भी आ चुका है, मगर वहाँ सिर्फ़ दो तरह़ की तलाक़ पाई हुई औ़रतों के लिए एह़काम थे।

एक वह कि जिन का न 'महेर' मुक़र्रर हुआ हो न उन से कुरबत (सम्भोग) की नौबत आई हो, उन के बारे में शौहर को हुक्म हुआ था कि 'तलाक़' देने से 'महेर' कुछ वाजिब नहीं मगर शौहर अपने पास से तलाक़ पाई हुई को कुछ दे दे, कम से कम यही कि एक जोड़ा कपड़े का अपनी ह़ैसियत और वुस्अ़त के मुवाफ़िक़।

दूसरे यह कि वह तलाक़शुदा कि जिस का 'महेर' निकाह़ के वक़्त मुक़र्रर हुआ था, मगर ख़िल्वत (तन्हाई) व कुरबत (सम्भोग) की नौबत नहीं आई और तलाक़ हो गई तो ऐसी सूरत में शौहर मुक़र्रर किये हुए 'महेर' का आधा अदा करे।

यहाँ आयत में उन 'तलाक़' वाली औ़रत को फ़ायदा पहुँचाने का हुक्म है जिन को 'ख़िल्वत या कुरबत' (सम्भोग) के बाद तलाक़ दी जाए सो उन में जिस का 'महेर' मुक़र्रर किया गया हो, इस का फ़ायदा पहुँचाना यह है कि पूरा 'महेर' देना चाहिए और जिस का 'महेर' निकाह़ के समय तय न हुआ हो तो मर्द पर 'महेर मिस्ल' वाजिब है यानी जो उस औ़रत के ख़ानदान में महेर रायज है।

242 كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُوْنَ

निकाह़ के हुक्म तलाक़, महेर, इद्दत आदि का बयान पिछली आयतों में हुआ। उन पर ग़ौर करने से मालूम होता है कि इन हुक्मों में अल्लाह तआला ने ताकीदी अल्फ़ाज़ इस्तेमाल फ़रमाए हैं। जैसे- وَاتَّقُوا اللّٰهَ (अल्लाह तआला से डरते रहो) تِلْكَ حُدُوْدُ اللّٰهِ (यह अल्लाह का क़ानून है) فَلَا تَعْتَدُوْهَا (सो तुम उन से बाहर मत निकलना) وَلَا تَتَّخِذُوْٓا اٰيٰتِ اللّٰهِ هُزُوًا (अल्लाह के अह़कामात को लहू-लअ़िब मत समझो) هُمُ الظّٰلِمُوْنَ और فَقَدْ ظَلَمَ نَفْسَهٗ (यानी जो ख़िलाफ़वर्ज़ी करेंगे वह अपना ही नुक़सान और अपने ही ऊपर ज़ुल्म करेंगे) فَاحْذَرُوْهُ (अल्लाह तआला से डरते रहो।)

फिर उन्हीं अह़काम के बयान में यह भी फ़रमाया है कि-

وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ यानी अल्लाह तआ़ला सब सुनते और जानते हैं। عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ज़बरदस्त हिक्मत वाले हैं। بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ यानी हर चीज़ को ख़ूब जानते हैं।

تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ यानी तुम्हारे कामों को ख़ूब देख रहे हैं।

تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرٌ यानी तुम्हारे सब कामों की ख़बर रखते हैं।

यह इर्शादात इस बात पर दलील हैं कि यह सब अह़काम शरीअ़त में मक़्सूद और वाजिब हैं, बतौर मश्वरे के नहीं हैं कि जिन में तब्दील करने या अ़मल न करने का हम में से किसी को ह़क़ हो या कोई अख़्तियार रखता हो।

आयत नं० 243 से 248 तक

أَلَمْ تَرَ إِلَى الَّذِينَ خَرَجُوا مِن دِيَارِهِمْ وَهُمْ أُلُوفٌ حَذَرَ الْمَوْتِ فَقَالَ لَهُمُ اللَّهُ مُوتُوا ثُمَّ أَحْيَاهُمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ لَذُو
فَضْلٍ عَلَى النَّاسِ وَلَٰكِنَّ أَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَشْكُرُونَ ۝ وَقَاتِلُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝ مَّن ذَا الَّذِي
يُقْرِضُ اللَّهَ قَرْضًا حَسَنًا فَيُضَاعِفَهُ لَهُ أَضْعَافًا كَثِيرَةً ۚ وَاللَّهُ يَقْبِضُ وَيَبْسُطُ وَإِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ۝ أَلَمْ تَرَ إِلَى الْمَلَإِ مِن
بَنِي إِسْرَائِيلَ مِن بَعْدِ مُوسَىٰ إِذْ قَالُوا لِنَبِيٍّ لَّهُمُ ابْعَثْ لَنَا مَلِكًا نُّقَاتِلْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ ۖ قَالَ هَلْ عَسَيْتُمْ إِن كُتِبَ
عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ أَلَّا تُقَاتِلُوا ۖ قَالُوا وَمَا لَنَا أَلَّا نُقَاتِلَ فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَقَدْ أُخْرِجْنَا مِن دِيَارِنَا وَأَبْنَائِنَا ۖ فَلَمَّا كُتِبَ عَلَيْهِمُ
الْقِتَالُ تَوَلَّوْا إِلَّا قَلِيلًا مِّنْهُمْ ۗ وَاللَّهُ عَلِيمٌ بِالظَّالِمِينَ ۝ وَقَالَ لَهُمْ نَبِيُّهُمْ إِنَّ اللَّهَ قَدْ بَعَثَ لَكُمْ طَالُوتَ مَلِكًا ۚ قَالُوا
أَنَّىٰ يَكُونُ لَهُ الْمُلْكُ عَلَيْنَا وَنَحْنُ أَحَقُّ بِالْمُلْكِ مِنْهُ وَلَمْ يُؤْتَ سَعَةً مِّنَ الْمَالِ ۚ قَالَ إِنَّ اللَّهَ اصْطَفَاهُ عَلَيْكُمْ وَزَادَهُ
بَسْطَةً فِي الْعِلْمِ وَالْجِسْمِ ۖ وَاللَّهُ يُؤْتِي مُلْكَهُ مَن يَشَاءُ ۚ وَاللَّهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ ۝ وَقَالَ لَهُمْ نَبِيُّهُمْ إِنَّ آيَةَ مُلْكِهِ أَن
يَأْتِيَكُمُ التَّابُوتُ فِيهِ سَكِينَةٌ مِّن رَّبِّكُمْ وَبَقِيَّةٌ مِّمَّا تَرَكَ آلُ مُوسَىٰ وَآلُ هَارُونَ تَحْمِلُهُ الْمَلَائِكَةُ ۚ إِنَّ فِي ذَٰلِكَ
لَآيَةً لَّكُمْ إِن كُنتُم مُّؤْمِنِينَ ۝

अनुवाद-

(243) क्या तुमने उन लोगों को नहीं देखा! जो हज़ारों की संख्या में होने पर भी, मौत के डर से अपने घर बार छोड़ कर निकल गये थे, तो अल्लाह ने उनसे कहा,'' मर जाओ,'' फिर 'उसने' उन्हें जिला दिया, कि अल्लाह लोगों पर बड़ा फ़ज़्ल (कृपा) करने वाला है, लेकिन अक्सर लोग शुक्रगुज़ार नहीं होते। (244) और अल्लाह की राह में युद्ध (क़िताल) करो, और जान लो कि अल्लाह बड़ा सुनने वाला, जानने वाला है। (245) कौन है जो अल्लाह को खुशदिली से (क़र्ज़ हसना) क़र्ज़ दे? फिर अल्लाह उसे बढ़ाकर उसके लिए कई गुना कर दे? और अल्लाह तंगी और कुशादगी (ग़रीबी अमीरी) भी देता है, और उसी की ओर तुम सबको लौट कर जाना है। (246) क्या तुमने मूसा के बाद बनी इस्राईल के सरदारों को नहीं देखा? जबकि उन्होंने अपने नबी से कहा, ''हमारे लिए एक बादशाह नियुक्त कर दीजिए ताकि हम अल्लाह की राह में युद्ध करें।'' (नबी ने) कहा, ''कहीं ऐसा तो नहीं कि अगर तुम पर क़िताल (युद्ध) अनिवार्य कर दिया जाए, तो तुम युद्ध न करो, वह कहने लगे, ''हमारे लिए कौन सा ऐसा उज़्र (रुकावट) हो सकता है! कि हम अल्लाह की राह में न लड़ें, जबकि हम अपने घरों से तो निकाले और बाल बच्चों से अलग किये ही जा चुके हैं।'' लेकिन जब उन पर युद्ध अनिवार्य कर दिया गया, तो उनमें से थोड़े लोगों के सिवा, (सब) फिर गये और अल्लाह ज़ालिमों को भली भांति जानता है; (247) और नबी ने उनसे कहा, ''अल्लाह ने तुम्हारे लिए तालूत को बादशाह (सम्राट) नियुक्त किया है,'' वे बोले, ''उसकी बादशाही हम पर कैसे हो सकती है, जबकि हम उसके मुक़ाबले में बादशाही के ज़्यादा हक़दार हैं और जबकि उसे तो माल से भी ऐसी अमीरी नसीब नहीं,'' (नबी ने) कहा, ''अल्लाह ने तुम्हारे मुक़ाबले में उसी को चुना है, और 'उसने' उसे इल्म और शारीरिक क्षमता में कुशादगी दी है; और अल्लाह अपना मुल्क (राज्य) जिसे चाहता है देता है, और अल्लाह बड़ी वुसअ़त वाला (समाई वाला), जानने वाला है; (248) और उनसे उनके नबी ने कहा, ''उस (तालूत) के बादशाहत की निशानी यह

है, कि तुम्हारे पास एक सन्दूक़ आएगा जिसको फ़रिश्ते उठाए हुए होंगे, उसमें तुम्हारे रब की ओर से तसल्ली की चीज़ होगी और कुछ और चीज़ें भी होंगी जिसे मूसा और हारून छोड़ गये थे, बेशक इस में तुम्हारे लिए बड़ी निशानियाँ हैं, अगर तुम ईमान वाले हो"।

आयत नं० 243 से 248 तक की व्याख्या

243 اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ خَرَجُوْا مِنْ دِيَارِهِمْ وَ هُمْ اُلُوْفٌ حَذَرَ الْمَوْتِ فَقَالَ لَهُمُ اللّٰهُ مُوْتُوْا
ثُمَّ اَحْيَاهُمْ اِنَّ اللّٰهَ لَذُوْ فَضْلٍ عَلَى النَّاسِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَشْكُرُوْنَ

इस में 'बनी इस्राईल' के एक वाक़िये का ज़िक्र करके मुसलमानों को जिहाद की तर्ग़ीब दिलाई गई है, 'बनी इस्राईल' के एक इलाक़े में ताऊन (Plague) फैल गया, तो वहाँ के रहने वाले अपने घरबार छोड़ कर मौत के डर से भाग गये, लेकिन भागकर वह मौत से न बच सके और अल्लाह ने उन सब पर मौत तारी कर दी, फिर उस ज़माने के नबी की दुआ से अल्लाह ने उन पर करम फ़रमाया और उन्हें ज़िन्दा कर दिया।

यह भी हो सकता है कि वह लोग किसी दुश्मन के डर से निकल भागे हों, इसलिए अल्लाह तआला ने उस के बाद जिहाद की तर्ग़ीब दिलाई है और फिर इस बात का ज़िक्र किया कि 'बनी इस्राईल' ने अपने नबी से दरख़्वास्त की कि वह उन के लिए एक बादशाह मुक़र्रर कर दें ताकि उस की क़यादत (रहनुमाई) में उस दुश्मन से जिहाद करें जिस ने उन्हें उन के घरों से निकाल दिया है।

दोनों ही सूरतों में, आयत में जिहाद की तर्ग़ीब दिलाई गई है और फ़रार की राह अख़्तियार करने से डराया गया है कि उस के ज़रिये आदमी मौत से नहीं बच सकता।

244 وَقَاتِلُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَاعْلَمُوْا اَنَّ اللّٰهَ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ

इन दोनों आयतों में अल्लाह तआला ने माल और बदन (जिस्म) के ज़रिये जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह की तर्ग़ीब दिलाई है, इसलिए कि जिहाद में दोनों ही चीज़ों की ज़रूरत पड़ती है और वही क़िताल 'जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह' होगा, जो अल्लाह के दीन को सरबुलन्द करने के लिए हो। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया है, "जो क़िताल (जिहाद) इसलिए हो कि अल्लाह का कलिमा ऊँचा हो, वही फ़ी सबीलिल्लाह होगा"। (मुत्तफ़क़ अ़लैहि)

245 مَنْ ذَا الَّذِيْ يُقْرِضُ اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا فَيُضٰعِفَهٗ لَهٗٓ اَضْعَافًا كَثِيْرَةً وَاللّٰهُ يَقْبِضُ
وَيَبْصُۜطُ وَاِلَيْهِ تُرْجَعُوْنَ

अल्लाह तआला के इस क़ौल को مَنْ ذَا الَّذِيْ يُقْرِضُ اللّٰهَ इब्ने ह़ब्बान ने अपनी सह़ीह़ में और इब्ने अबी ह़ातिम ने ह़ज़रत इब्ने उ़मर (रज़ि०) से रिवायत नक़्ल की है कि जब यह आयते करीमा مَثَلُ الَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ यानी सात सौ तक सवाब की ज़्यादती वाली नाज़िल हुई, तो रसूल (सल्ल०)

ने दुआ फ़रमाई कि ऐ रब! मेरी उम्मत को और ज़्यादा सवाब दीजिए। इस पर यह आयते करीमा مَنْ ذَا الَّذِي يُقْرِضُ اللَّهَ नाज़िल हुई यानी जो शख़्स अल्लाह की राह में अच्छी नियत के साथ ख़र्च करे तो अल्लाह तआ़ला उसे बढ़ा कर और ज़्यादा कर देता है।

इस आयत में अल्लाह तआ़ला की राह में ख़र्च करने की तर्ग़ीब दिलाई गई है। "क़र्ज़ ह़सना" से मुराद अल्लाह की राह में ख़र्च करना है, कुछ लोगों ने कहा है कि अहल व अ़याल (घरवालों पर) ख़र्च करना भी हो सकता है।

246 أَلَمْ تَرَ إِلَى الْمَلَإِ مِن بَنِي إِسْرَائِيلَ مِن بَعْدِ مُوسَىٰ إِذْ قَالُوا لِنَبِيٍّ لَّهُمُ ابْعَثْ لَنَا مَلِكًا نُّقَاتِلْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ ۖ قَالَ هَلْ عَسَيْتُمْ إِن كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ أَلَّا تُقَاتِلُوا ۖ قَالُوا وَمَا لَنَا أَلَّا نُقَاتِلَ فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَقَدْ أُخْرِجْنَا مِن دِيَارِنَا وَأَبْنَائِنَا ۖ فَلَمَّا كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقِتَالُ تَوَلَّوْا إِلَّا قَلِيلًا مِّنْهُمْ ۗ وَاللَّهُ عَلِيمٌ بِالظَّالِمِينَ ۝

'अ़मालका' का क़ब्ज़ा-

'बनी इस्राईल' के लोग ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) के बाद एक ज़माने तक तौहीद (एकेश्वरवाद) पर क़ायम रहे, फिर कुछ ज़माने के बाद तौह़ीद की राह से भटक गये और बुतों की पूजा शुरु कर दी, तो अल्लाह तआ़ला ने उन के ऊपर 'अ़मालक़ा' को मुसल्लत कर दिया। जिन्होंने उन की ज़मीन पर क़ब्ज़ा कर लिया, उन की बहुत बड़ी तअ़दाद को क़त्ल किया और बहुतों को गिरफ़्तार कर लिया और उस ताबूत को उन से छीन लिया जिस में वह अह़काम थे जो अल्लाह तआ़ला ने ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) को कोहेतूर पर दिये थे। उस में तौरात का नुस्ख़ा और ह़ज़रत मूसा व हारून और दूसरे अम्बिया, बनी इस्राईल के आसार थे। कहा जाता है कि उस में ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) की लाठी भी थी।

'बनी इस्राईल' जब अपने दुश्मनों से जंग के लिए जाते तो उस ताबूत को अपने आगे रखते थे जिस से उन को सुकून मिलता था और वह यह समझते थे कि इससे फ़तेह़ नसीब होती है।

'अ़मालक़ा' ने वह ताबूत (मूर्ति) भी छीन लिया, उस के बाद ज़िल्लत व रुसवाई उन की क़िस्मत बनी रही। यहाँ तक कि उन में 'सुमव्विल' नबी पैदा हुए और उन्होंने तौह़ीद की तरफ़ बुलाया, तो उन लोगों ने कहा कि हमारे लिए एक बादशाह मुक़र्रर कर दीजिए ताकि हम लोग उस की क़ियादत (रहनुमाई) में 'अ़मालक़ा' से जिहाद करें और अपनी ज़मीन, ताबूत और तौरेत वग़ैरह उन से दोबारा वापस लें।

तालूत और जालूत-

आयत नं० 246 से लेकर आयत नं० 251 तक उसी अ़हद 'बनी इस्राईल' का ज़िक्र है। सुमव्विल नबी ने जिस नौजवान को उन का बादशाह मुक़र्रर किया उस का नाम 'तालूत' था, वह 'बनी इस्राईल' के उस ख़ानदान से नहीं था जिस में अब तक बादशाहत चली आ रही थी, लेकिन वह एक ताक़तवर जिस्म वाला ख़ूबसूरत नौजवान था, जिसे अल्लाह ने इ़ल्म व दूर अन्देशी से नवाज़ा था, और 'जालूत' अ़मालक़ा की फ़ौज में एक मशहूर पहलवान और उस का कमान्डर था जिस पर 'अ़मालक़ा' को बड़ा नाज़ था।

इस वाक़िये के ज़िक्र से मक़्सूद मुसलमानों को 'जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह' पर उभारना है कि बादशाह 'तालूत' जब जंग के लिए निकला तो जिन लोगों ने सब्र व इस्तिक़ामत (जमना) से काम लिया, उन को अल्लाह ने दुनिया व आख़िरत में इ़ज़्ज़त दी और जिन्होंने बुज़ुदिली दिखाई और राहे फ़रार अख़्तियार किया, उन की दुनिया ख़राब हो गई और आख़िरत में भी ज़िल्लत का सामना करना पड़ेगा, ताकि हमारे दर्मियान का इख़्तिलाफ़ ख़त्म हो जाए और सब लोग उस की इताअ़त (अनुसरण) पर सहमत हो जाएँ। 'सुमव्विल नबी' डरे कि शायद यह उन का केवल ज़बानी दावा है और वह 'जिहाद फ़ी सबील्लिाह' न कर सकेंगे, तो उन्होंने अ़ज़्म (दृढ़ निश्चय) का इज़्हार किया कि हम अपना वतन वापस लेने के लिए ज़रूर जिहाद करेंगे।

247 وَقَالَ لَهُمْ نَبِيُّهُمْ إِنَّ اللَّهَ قَدْ بَعَثَ لَكُمْ طَالُوتَ مَلِكًا ۚ قَالُوا أَنَّىٰ يَكُونُ لَهُ الْمُلْكُ عَلَيْنَا وَنَحْنُ أَحَقُّ بِالْمُلْكِ
مِنْهُ وَلَمْ يُؤْتَ سَعَةً مِّنَ الْمَالِ ۚ قَالَ إِنَّ اللَّهَ اصْطَفَاهُ عَلَيْكُمْ وَزَادَهُ بَسْطَةً فِي الْعِلْمِ وَالْجِسْمِ ۖ
وَاللَّهُ يُؤْتِي مُلْكَهُ مَن يَشَاءُ ۚ وَاللَّهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ

'सुमव्विल' ने जब 'तालूत' को उन का बादशाह मुक़र्रर कर दिया, तो उन्होंने हैरत का इज़्हार किया और कहा कि ख़ानदान व ज़रूरत के एतिबार से इस से ज़्यादा हक़्दार लोग मौजूद हैं, फिर उसे आप ने क्यों हमारा बादशाह बनाया है? तो उन्होंने जवाब दिया कि उसे अल्लाह ने बादशाह बनाया है, इसलिए कि वह इ़ल्म और क़ुव्वते जिस्म में दूसरों से बढ़ा हुआ है और इसलिए भी कि बादशाहत के लिए माल की अधिकता शर्त नहीं और न यह शर्त है कि वह पहले से शाही ख़ानदान का हो। अल्लाह जिसे चाहता है अपनी हुकूमत दे देता है।

248 وَقَالَ لَهُمْ نَبِيُّهُمْ إِنَّ آيَةَ مُلْكِهِ أَن يَأْتِيَكُمُ التَّابُوتُ فِيهِ سَكِينَةٌ مِّن رَّبِّكُمْ وَبَقِيَّةٌ مِّمَّا تَرَكَ آلُ
مُوسَىٰ وَآلُ هَارُونَ تَحْمِلُهُ الْمَلَائِكَةُ ۚ إِنَّ فِي ذَٰلِكَ لَآيَةً لَّكُمْ إِن كُنتُم مُّؤْمِنِينَ

फिर उन्होंने कहा कि देखो 'तालूत' को अल्लाह की तरफ़ से बादशाह नियुक्त किये जाने की निशानी यह होगी कि वह तुम्हारा ग़ुमशुदा ताबूत वापस ले आएगा। इस तरह़ देखते ही देखते वह ताबूत फ़रिश्तों के ज़रिये तालूत के पास आ गया और उन्होंने उसे अपना बादशाह तस्लीम कर लिया।

(तफ़्सील के लिए देखें सूरः अनूआम-121)

आयत नं० 249 से 252 तक

فَلَمَّا فَصَلَ طَالُوتُ بِالْجُنُودِ قَالَ إِنَّ اللَّهَ مُبْتَلِيكُم بِنَهَرٍ فَمَن شَرِبَ مِنْهُ فَلَيْسَ مِنِّي وَمَن لَّمْ يَطْعَمْهُ فَإِنَّهُ مِنِّي
إِلَّا مَنِ اغْتَرَفَ غُرْفَةً بِيَدِهِ فَشَرِبُوا مِنْهُ إِلَّا قَلِيلًا مِّنْهُمْ فَلَمَّا جَاوَزَهُ هُوَ وَالَّذِينَ آمَنُوا مَعَهُ قَالُوا لَا طَاقَةَ لَنَا
الْيَوْمَ بِجَالُوتَ وَجُنُودِهِ قَالَ الَّذِينَ يَظُنُّونَ أَنَّهُم مُّلَاقُو اللَّهِ كَم مِّن فِئَةٍ قَلِيلَةٍ غَلَبَتْ فِئَةً كَثِيرَةً بِإِذْنِ اللَّهِ وَاللَّهُ
مَعَ الصَّابِرِينَ ﴿٢٤٩﴾ وَلَمَّا بَرَزُوا لِجَالُوتَ وَجُنُودِهِ قَالُوا رَبَّنَا أَفْرِغْ عَلَيْنَا صَبْرًا وَثَبِّتْ أَقْدَامَنَا وَانصُرْنَا عَلَى الْقَوْمِ
الْكَافِرِينَ ﴿٢٥٠﴾ فَهَزَمُوهُم بِإِذْنِ اللَّهِ وَقَتَلَ دَاوُودُ جَالُوتَ وَآتَاهُ اللَّهُ الْمُلْكَ وَالْحِكْمَةَ وَعَلَّمَهُ مِمَّا يَشَاءُ وَلَوْلَا
دَفْعُ اللَّهِ النَّاسَ بَعْضَهُم بِبَعْضٍ لَّفَسَدَتِ الْأَرْضُ وَلَٰكِنَّ اللَّهَ ذُو فَضْلٍ عَلَى الْعَالَمِينَ ﴿٢٥١﴾ تِلْكَ آيَاتُ اللَّهِ نَتْلُوهَا عَلَيْكَ
بِالْحَقِّ وَإِنَّكَ لَمِنَ الْمُرْسَلِينَ ﴿٢٥٢﴾

अनुवाद-

(249) फिर जब तालूत सेनाएँ लेकर चला तो उसने कहा ''अल्लाह निश्चित रूप से एक दरिया (नदी) के ज़रिये तुम्हारा इम्तिहान लेने वाला है; तो जो व्यक्ति उसमें से पानी पी लेगा वह मेरा नहीं है; और जो न पिएगा वह मेरा है, हाँ अगर कोई हाथ से चुल्लू भर पानी ले ले'' फिर उनमें से थोड़े लोगों के सिवा सभी ने उसका पानी पी लिया; फिर जब तालूत और ईमान वाले, जो उसके साथ थे नदी पार कर गये तो कहने लगे, ''आज हममें जालूत और उसकी सेनाओं का मुक़ाबला करने की शक्ति नहीं है,'' इस पर उन लोगों ने जो समझते थे, कि उन्हें अल्लाह से मिलना है, कहा, ''कितनी बार एक छोटी सी टुकड़ी ने अल्लाह के हुक्म से एक बड़े गिरोह पर विजय पाई है, और अल्लाह तो सब्र करने (जमने) वालों के साथ है,'' (250) और जब वे लोग जालूत और उसकी सेनाओं के मुकाबले पर आए तो कहा, ''ऐ हमारे रब! हम को सब्र दे और हमारे क़दम जमा दे और काफ़िरों पर हमारी मदद फ़रमा, (251) तो अल्लाह के हुक्म से, उन्होंने पराजित कर दिया; और दाऊद ने जालूत को क़त्ल कर दिया; और अल्लाह ने उसे (दाऊद को) बादशाहत और हिकमत प्रदान की, और जो कुछ चाहा उन्हें सिखाया; और अगर अल्लाह लोगों को एक दूसरे से हटाता न रहता तो धरती फ़साद से भर जाती, लेकिन अल्लाह तो दुनिया वालों पर बड़ा मेहरबान है। (252) ये अल्लाह की आयतें हैं, हम आप को (हक़्) सच्चाई के साथ पढ़ कर सुनाते हैं, और (ऐ मुहम्मद!) बेशक आप रसूलों में से हैं।

आयत नं० 249 से 252 तक की व्याख्या

249-250

فَلَمَّا فَصَلَ طَالُوتُ بِالْجُنُودِ قَالَ إِنَّ اللَّهَ مُبْتَلِيكُم بِنَهَرٍ فَمَن شَرِبَ مِنْهُ فَلَيْسَ
مِنِّي وَمَن لَّمْ يَطْعَمْهُ فَإِنَّهُ مِنِّي إِلَّا مَنِ اغْتَرَفَ غُرْفَةً بِيَدِهِ فَشَرِبُوا مِنْهُ إِلَّا قَلِيلًا
مِّنْهُمْ فَلَمَّا جَاوَزَهُ هُوَ وَالَّذِينَ آمَنُوا مَعَهُ قَالُوا لَا طَاقَةَ لَنَا الْيَوْمَ بِجَالُوتَ وَجُنُودِهِ
قَالَ الَّذِينَ يَظُنُّونَ أَنَّهُم مُّلَاقُو اللَّهِ كَم مِّن فِئَةٍ قَلِيلَةٍ غَلَبَتْ فِئَةً كَثِيرَةً بِإِذْنِ اللَّهِ

وَاللّٰهُ مَعَ الصّٰبِرِیْنَ ۝ وَلَمَّا بَرَزُوْا لِجَالُوْتَ وَجُنُوْدِهٖ قَالُوْا رَبَّنَآ اَفْرِغْ عَلَیْنَا صَبْرًا وَّثَبِّتْ اَقْدَامَنَا
وَانْصُرْنَا عَلَی الْقَوْمِ الْکٰفِرِیْنَ ۝

जब 'तालूत' की क़यादत में 'बनी इस्राईल' 'अ़मालक़ा' से जिहाद करने के लिए चले तो तालूत ने कहा कि अभी एक नहर आएगी, यह नहर 'उर्दुन' और 'फ़िलिस्तीन' के दर्मियान थी और अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से तुम्हारे सब्र का इम्तिहान यह है कि शिद्दते प्यास के बावजूद तुम्हें इस का पानी नहीं पीना है, जो कोई पी लेगा वह हमारी फ़ौज से अलग हो जाएगा और जो एक चुल्लू से ज़्यादा नहीं पियेगा वह हमारे साथ आगे बढ़ेगा। इस आज़्माइश में उन में के अक्सर लोग पूरे न उतरे, सिर्फ़ थोड़े लोगों ने सब्र से काम लिया।

'ह़ज़रत बरा बिन आ़ज़िब (रज़ि०)' रिवायत करते हैं कि यह वही तअ़दाद थी जो अस्ह़ाबे बद्र (जंगे बद्र के सहाबियों) की थी। **(बुख़ारी)**

'इब्ने अ़ब्बास' (रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा) कहते हैं कि जिस ने एक चुल्लू पी लिया वह सैराब (तृप्त) हो गया और जिस ने ख़ूब पिया वह सैराब न हुआ। जब सब ईमान वाले नहर पार कर गये, तो उन में से बाज़ कमज़ोर यक़ीन वाले लोगों ने कहा, "आज हम जालूत और उस की फ़ौज से जंग नहीं कर सकते", तो उन के कमज़ोर ईमान वाले उ़लमा ने उन की हिम्मत बढ़ाई जिन्हें मालूम था कि अल्लाह का वादा बरहक़ (सत्य) है और फ़तेह़ (विजय) व नुस्रत (मदद) अल्लाह की तरफ़ से आती है, उस का सम्बन्ध तअ़दाद (संख्या) से नहीं होता है और कहा, "कभी-कभी थोड़ी तअ़दाद फ़ौज अल्लाह के हुक्म से ज़्यादा तअ़दाद वाली फ़ौज पर ग़ालिब आ जाती है।"

इस पर उन की हिम्मत बढ़ी और उन्होंने जालूत की फ़ौज से जंग की और ह़ज़रत दाऊद (अ़लै०) ने (जो बाद में तालूत की फ़ौज में आकर शामिल हो गये थे और जो अभी नबी और बादशाह नहीं हुए थे) जालूत को क़त्ल कर दिया और बनी इस्राईल को खुली फ़तेह़ ह़ासिल हुई।

251 فَهَزَمُوْهُمْ بِاِذْنِ اللّٰهِ ۙ۟ وَقَتَلَ دَاوٗدُ جَالُوْتَ وَاٰتٰىهُ اللّٰهُ الْمُلْكَ وَالْحِكْمَةَ وَعَلَّمَهٗ مِمَّا یَشَآءُ ؕ
وَلَوْلَا دَفْعُ اللّٰهِ النَّاسَ بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ ۙ لَّفَسَدَتِ الْاَرْضُ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ ذُوْ فَضْلٍ عَلَی الْعٰلَمِیْنَ ۝

इस के बाद अल्लाह तआ़ला ने 'जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह' का फ़ायदा बयान किया, कि अगर अल्लाह तआ़ला मुजाहिदीन के ज़रिये कुफ़्फ़ार व फुज्जार और अहले शर (बुराई) व फ़साद को मार न भगाये तो वह ज़मीन में फ़साद फैलाएँ, लेकिन अल्लाह ने अपने फ़ज़्ल से जिहाद को वाजिब क़रार दिया है ताकि अहले ख़ैर (समाज का कल्याण चाहने वाले) का ग़ल्बा (प्रभुत्व) हो और अल्लाह का दीन धरती पर जारी व सारी हो।

252 تِلْكَ اٰیٰتُ اللّٰهِ نَتْلُوْهَا عَلَیْكَ بِالْحَقِّ ؕ وَاِنَّكَ لَمِنَ الْمُرْسَلِیْنَ ۝

बनी इस्राईल के इस वाक़िये की तफ़्सील बयान करने के बाद, अल्लाह तआ़ला ने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से फ़रमाया कि यह निशानियाँ हम आप के लिए बयान कर रहे हैं, जो सच्ची हैं और आप

के रसूल होने की खुली दलील हैं, इसलिए कि आप (सल्ल०) को बज़रिये वह्य इस वाक़िये की ख़बर दी जिस का आप (सल्ल०) को पहले से कोई इल्म न था, इस वाक़िये में उम्मते मुस्लिमा के लिए बहुत सी नसीहतें हैं। जैसे-

1- जिहाद 'फ़ी सबीलिल्लाह' के बग़ैर दीन, वतन और जान व माल की हिफ़ाज़त नहीं हो सकती।

2- मुजाहिदीन (जिहादियों) का अन्जाम हमेशा ही अच्छा होता है।

3- मुसलमानों की क़यादत (रहनुमाई) के लिए ऐसे लोगों को सत्ता में आना चाहिए जो इस के अहल (योग्य) हों और अहलियत में ख़ासतौर पर दो चीज़ों का एतिबार होता है, इल्म और कुव्वते जिस्म।

4- क़ायद (शासक) को अपनी फ़ौज पर नज़र रखनी चाहिए कि जो जंग करने का अहल न हो उसे रोक दे।

5- अगर दुश्मन की कसरत या किसी और वजह से मुजाहिदीन की सफ़ों (क़तारों) में नाउम्मीदी फैलने लगे तो उन की हिम्मत बढ़ानी चाहिए और कुव्वते ईमानी (ईमान की ताक़त) को ह़रकत में लाने की कोशिश करनी चाहिए।

(खण्ड-3)
आयत नं० 253 से 258 तक

*تِلْكَ الرُّسُلُ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلَىٰ بَعْضٍ ۘ مِّنْهُم مَّن كَلَّمَ اللَّهُ ۖ وَرَفَعَ بَعْضَهُمْ دَرَجَاتٍ ۚ وَآتَيْنَا عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ الْبَيِّنَاتِ
وَأَيَّدْنَاهُ بِرُوحِ الْقُدُسِ ۗ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ مَا اقْتَتَلَ الَّذِينَ مِن بَعْدِهِم مِّن بَعْدِ مَا جَاءَتْهُمُ الْبَيِّنَاتُ وَلَٰكِنِ اخْتَلَفُوا فَمِنْهُم
مَّنْ آمَنَ وَمِنْهُم مَّن كَفَرَ ۚ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ مَا اقْتَتَلُوا وَلَٰكِنَّ اللَّهَ يَفْعَلُ مَا يُرِيدُ ﴿٢٥٣﴾ يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا أَنفِقُوا مِمَّا رَزَقْنَاكُم
مِّن قَبْلِ أَن يَأْتِيَ يَوْمٌ لَّا بَيْعٌ فِيهِ وَلَا خُلَّةٌ وَلَا شَفَاعَةٌ ۗ وَالْكَافِرُونَ هُمُ الظَّالِمُونَ ﴿٢٥٤﴾ اللَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّومُ ۚ
لَا تَأْخُذُهُ سِنَةٌ وَلَا نَوْمٌ ۚ لَّهُ مَا فِي السَّمَاوَاتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ ۗ مَن ذَا الَّذِي يَشْفَعُ عِندَهُ إِلَّا بِإِذْنِهِ ۚ يَعْلَمُ مَا بَيْنَ
أَيْدِيهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ ۖ وَلَا يُحِيطُونَ بِشَيْءٍ مِّنْ عِلْمِهِ إِلَّا بِمَا شَاءَ ۚ وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ ۖ وَلَا يَئُودُهُ
حِفْظُهُمَا ۚ وَهُوَ الْعَلِيُّ الْعَظِيمُ ﴿٢٥٥﴾ لَا إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ ۖ قَد تَّبَيَّنَ الرُّشْدُ مِنَ الْغَيِّ ۚ فَمَن يَكْفُرْ بِالطَّاغُوتِ وَيُؤْمِن بِاللَّهِ
فَقَدِ اسْتَمْسَكَ بِالْعُرْوَةِ الْوُثْقَىٰ لَا انفِصَامَ لَهَا ۗ وَاللَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٥٦﴾ اللَّهُ وَلِيُّ الَّذِينَ آمَنُوا يُخْرِجُهُم مِّنَ الظُّلُمَاتِ إِلَى
النُّورِ ۖ وَالَّذِينَ كَفَرُوا أَوْلِيَاؤُهُمُ الطَّاغُوتُ يُخْرِجُونَهُم مِّنَ النُّورِ إِلَى الظُّلُمَاتِ ۗ أُولَٰئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ ۖ هُمْ فِيهَا
خَالِدُونَ ﴿٢٥٧﴾ أَلَمْ تَرَ إِلَى الَّذِي حَاجَّ إِبْرَاهِيمَ فِي رَبِّهِ أَنْ آتَاهُ اللَّهُ الْمُلْكَ إِذْ قَالَ إِبْرَاهِيمُ رَبِّيَ الَّذِي يُحْيِي وَيُمِيتُ قَالَ
أَنَا أُحْيِي وَأُمِيتُ ۖ قَالَ إِبْرَاهِيمُ فَإِنَّ اللَّهَ يَأْتِي بِالشَّمْسِ مِنَ الْمَشْرِقِ فَأْتِ بِهَا مِنَ الْمَغْرِبِ فَبُهِتَ الَّذِي كَفَرَ ۗ وَاللَّهُ لَا
يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِمِينَ ﴿٢٥٨﴾

अनुवाद-

(253) इन रसूलों में से 'हमने' कुछ को कुछ पर फ़ज़ीलत (श्रेष्ठता) दी है, कुछ ऐसे हैं जिनसे अल्लाह ने कलाम (बातचीत) किया है और उनमें से कुछ के दर्जे बुलन्द किये; और मरयम के बेटे ईसा को हमने खुले हुए चमत्कार दिये, और 'हमने' उनको रूहुल कुदुस (जिब्रईल) के ज़रिये ताईद (समर्थन) किया; और अगर अल्लाह चाहता तो उनके बाद के लोग आपस में खून न बहाते; इसके बाद कि उनके पास खुली निशानियां आ चुकी थीं लेकिन (लोगों ने) आपस में विरोध किया, फिर कुछ तो उनमें से ईमान लाए और कुछ कुफ़्र (इन्कार) ही करते रहे; और अगर अल्लाह चाहता तो ये लोग आपस में खून न बहाते, लेकिन अल्लाह जो चाहता है, करता है। (254) ऐ ईमान वालो! जो कुछ (रोज़ी) हम ने तुम्हें दे रखा है उसमें से ख़र्च करो, इससे पहले कि वह दिन आ जाए जिस दिन न कोई तिजारत (क्रय-विक्रय) काम आएगी और न दोस्ती, और न सिफ़ारिश और काफ़िर लोग (सच्चाई के इन्कारी) तो ज़ालिम हैं। (255) अल्लाह (वह है कि) उसके सिवा कोई इबादत (उपासना) के योग्य नहीं वह ज़िन्दा और हमेशा रहने वाला (चिरन्तर) है, 'उसे' न ऊंघ आती है न नींद, 'उसी' का है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ धरती में है, कौन ऐसा है जो 'उसके' सामने बिना 'उसकी' इजाज़त के सिफ़ारिश कर सके, जो कुछ लोगों के सामने है और जो कुछ

उनके पीछे हो चुका (दृश्य और अदृश्य) 'उसको' मालूम है, और लोग उस इल्म में से कुछ भी क़ाबू नहीं पा सकते (हावी नहीं हो सकते) सिवाय उसके कि जितना 'वह' चाहे, 'उसकी' कुर्सी (प्रभुत्व) आसमानों और ज़मीन को व्याप्त है, और उनकी हिफ़ाज़त 'उसके' लिए कुछ भी मुश्किल नहीं; और 'वह' बड़ा अज़्मत वाला (महा महिमावान) है; (256) धर्म के विषय में कोई ज़बर्दस्ती नहीं, हिदायत तो गुमराही से साफ़-साफ़ खुल चुकी है तो अब जो सरकश (शैतान) को ठुकरा दे और अल्लाह पर ईमान लाए, तो उसने ऐसा मज़बूत सहारा थाम लिया जो कभी टूटने वाला नहीं, और अल्लाह खूब सुनने वाला, जानने वाला है। (257) अल्लाह उन लोगों का दोस्त (संरक्षक) है जो ईमान लाए कि उनको अंधेरे से निकाल कर रोशनी की ओर लाता है, और जो काफ़िर (इन्कारी) हैं, उनके दोस्त शैतान हैं, कि जो उनको रोशनी से निकाल कर अंधेरे की ओर ले जाते हैं, यही लोग जहन्नमी हैं उसमें वे हमेशा रहेंगे। (258) क्या तुम ने उस व्यक्ति को देखा नहीं? जिसने इब्राहीम से उसके 'रब' के सिलसिले में हुज्जत (बहस) किया था इस वजह से कि अल्लाह ने उसको बादशाहत दे रखी थी, जबकि इब्राहीम ने उससे कहा, ''मेरा रब तो 'वही' है जो जिलाता और मारता है'', उसने कहा, ''मैं भी तो जिलाता और मारता हूँ'' इब्राहीम ने कहा, ''अच्छा तो अल्लाह सूर्य को पूरब से लाता है, तो तू उसे पश्चिम से ले आ, इस पर वह काफ़िर (इन्कारी) चकित रह गया, और अल्लाह ज़ालिमों को सीधी राह नहीं दिखाता।

आयत नं० 253 से 258 तक की व्याख्या

*

253 تِلْكَ الرُّسُلُ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلَىٰ بَعْضٍ ۘ مِّنْهُم مَّن كَلَّمَ اللَّهُ ۖ وَرَفَعَ بَعْضَهُمْ دَرَجَاتٍ ۚ وَآتَيْنَا
عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ الْبَيِّنَاتِ وَأَيَّدْنَاهُ بِرُوحِ الْقُدُسِ ۗ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ مَا اقْتَتَلَ الَّذِينَ مِن بَعْدِهِم
مِّن بَعْدِ مَا جَاءَتْهُمُ الْبَيِّنَاتُ وَلَٰكِنِ اخْتَلَفُوا فَمِنْهُم مَّنْ آمَنَ وَمِنْهُم مَّن كَفَرَ ۚ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ
مَا اقْتَتَلُوا وَلَٰكِنَّ اللَّهَ يَفْعَلُ مَا يُرِيدُ ۝

अल्लाह तआला ने इस आयत में ख़बर दी है कि अम्बिया व रसूलों के दर्मियान फ़ज़ायल (प्रधानता) व सिफ़ात (गुणों) में अन्तर रहा है। बाज़ अम्बिया को अल्लाह ने कोई ऐसी फ़ज़ीलत दी जो दूसरों को नहीं मिली, हज़रत इब्राहीम (अलै०) को अल्लाह ने अपना ख़लील (दोस्त) बनाया, हज़रत मूसा से बग़ैर किसी माध्यम के बात की और रसूलुल्लाह (सल्ल०) को इन्सानों में सबसे अफ़्ज़ल बनाया। कहा जाता है कि अल्लाह ने आप को एक हज़ार से ज़्यादा निशानियाँ दी थीं और सब से बड़ा मोअजिज़ह (Miracle) क़ुर्आन करीम था, जो तन्हा तमाम अम्बिया पर फ़ौक़ियत (श्रेष्ठता) हासिल करने के लिए काफ़ी था और हज़रत ईसा बिन मरयम को दूसरे मोअजिज़ात दिये, जिन के ज़रिये अल्लाह के हुक्म से अंधे को बीनाई (रौशनी) और बरस (कोढ़) वाले को शिफ़ा मिलती थी, मुर्दों को ज़िन्दा करते थे और जब गोद ही में थे तो लोगों से बात की और अल्लाह ने रुहुल् क़ुदुस के ज़रिये उन की तस्दीक़ (समर्थन) की, यानी जिब्रईल अमीन के ज़रिये या उस मुक़द्दस रुह के ज़रिये जो अल्लाह ने उन में फूंकी थी।

अम्बिया-ए-किराम के कमाल, इज़्ज़त व सम्मान और उन के साथ भेजी गई निशानियों को देखकर

होना तो यह चाहिए था कि सारे इन्सान उन पर ईमान ले आते, लेकिन ऐसा न हुआ और अक्सर व बेशतर लोग सीधी राह से हट गये और एक दूसरे को क़त्ल करने लगे, हालांकि अल्लाह चाहता तो सब को एक राहे हिदायत पर डाल देता, लेकिन अल्लाह ने हिक्मत के तहेत दुनिया को उपलब्धियों से जोड़ दिया है।

नोट- आयत से मालूम हुआ कि नबी करीम (सल्ल०) को अल्लाह तआ़ला ने तमाम रसूलों से अफ़ज़ल बनाया है और आप (सल्ल०) की ह़दीस कि "मैं औलादे आदम का सरदार हूँ" से भी यही साबित होती है, इसलिए सह़ीहै़न में ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) की ह़दीस यानी "मुझे दीगर (दूसरे) अम्बिया पर फ़ौक़ियत न दो" आप (सल्ल०) की तरफ़ से इन्किसारी समझी जाएगी।

ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "किसी नबी को किसी दूसरे नबी पर फ़ज़ीलत (श्रेष्ठता) न दो।" **(बुख़ारी व मुस्लिम)**

254 يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا أَنْفِقُوا مِمَّا رَزَقْنَاكُمْ مِنْ قَبْلِ أَنْ يَأْتِيَ يَوْمٌ لَا بَيْعٌ فِيهِ وَلَا خُلَّةٌ وَلَا شَفَاعَةٌ ۗ
وَالْكَافِرُونَ هُمُ الظَّالِمُونَ ۝

इस आयत में मोमिनों को अल्लाह की राह में ख़र्च करने की तर्ग़ीब दी गई है। किसी ने इस से मतलब ज़कात लिया है, किसी ने राहे जिहाद में ख़र्च करना मुराद लिया है और किसी ने हर क़िस्म के फ़र्ज़ और नफ़्ल ख़र्च को शामिल किया है। आयत में इस तरफ़ भी इशारा है कि बन्दा मोमिन इस दुनिया में जो कुछ भी अल्लाह की राह में ख़र्च करेगा, उसे क़ियामत के दिन अपने नाम-ए-आ़माल में पाएगा। जिस दिन आदमी का न माल काम आएगा, न कोई दोस्त और न कोई सिफ़ारिशी और उस दिन काफ़िरों की सख़्त पकड़ होगी।

255 اللَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّومُ ۚ لَا تَأْخُذُهُ سِنَةٌ وَلَا نَوْمٌ ۚ لَهُ مَا فِي السَّمَاوَاتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ ۗ مَنْ ذَا الَّذِي
يَشْفَعُ عِنْدَهُ إِلَّا بِإِذْنِهِ ۚ يَعْلَمُ مَا بَيْنَ أَيْدِيهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ ۖ وَلَا يُحِيطُونَ بِشَيْءٍ مِنْ عِلْمِهِ إِلَّا
بِمَا شَاءَ ۚ وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ ۖ وَلَا يَئُودُهُ حِفْظُهُمَا ۚ وَهُوَ الْعَلِيُّ الْعَظِيمُ ۝

इस आयते मुबारका जिस का लक़ब (Title) 'आयतुल् कुर्सी' और जिस को ह़दीस में 'आ़ज़म आयत किताबुल्लाह' फ़रमाया है। इस में अल्लाह तआ़ला अपनी तौह़ीद ज़ाती व कमालाते सिफ़ात (Attributes) और अपनी अ़ज़्मते शान का ज़िक्र फ़रमाते हैं और अपनी तौह़ीद बयान फ़रमाते हैं।

1- पहला शब्द-

यह है اللَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ यह शब्द वही मतलब और माने रखता है जो कलिमा **'लाइलाहा इल्लल्लाहु'** के मतलब व मआ़नी हैं, अल्लाह के सिवा कोई मअ़बूद (उपास्य) नहीं। इस कलिमे में अल्लाह तआ़ला की तौह़ीद का इक़रार है। जिस का मतलब यह है कि अल्लाह तआ़ला के सिवा कोई ऐसी हस्ती नहीं जो अ़िबादत के क़ाबिल हो क्योंकि वही हमारा और सब का ख़ालिक व मालिक है। वही पालने वाला,

रोज़ी देने वाला, मारने वाला और जिलाने वाला है, बीमारी व तन्दुरुस्ती, अमीरी व ग़रीबी और हर तरह का बनाव-बिगाड़ नफ़ा व नुक़्सान सिर्फ़ उसी के क़ब्ज़-ए-क़ुदरत में है और उस के सिवा ज़मीन व आसमान में जो हस्तियाँ हैं चाहे वह इन्सान हों या फ़रिश्ते सब उस के बन्दे और उस के पैदा किये हुए हैं। उस की ख़ुदाई में कोई उस का शरीक व साझीदार नहीं और न उस के हुक्मों में उलट-पलट का किसी को अख़्तियार है और न उसके कामों में किसी को दख़्ल देने की मजाल है।

वही और सिर्फ़ वही इस लायक़ है कि उस की अ़िबादत की जाए, उसी से लौ लगाई जाए, मुश्किलों, मुसीबतों और अपनी तमाम ह़ाजतों (ज़रूरतों) में उसी से इल्तिजा और दुआ़ की जाए और जब वही ह़क़ीक़ी मालिकुल् मुल्क और अह़कमुल ह़ाकिमीन (सारे संसार का पालनहार) है तो ज़रूरी है कि उस के हर हुक्म को माना जाए और पूरी वफ़ादारी के साथ उस के हुक्मों पर चला जाए और उस के हुक्म के मुक़ाबले में किसी दूसरे का कोई हुक्म हरगिज़ न माना जाए।

जब हम ने जान लिया और मान लिया कि बस अल्लाह ही एक अ़िबादत व बन्दग़ी के लायक़ है और हम सिर्फ़ उसी के बन्दे हैं तो चाहिए कि हमारा अ़मल भी उसी के मुताबिक़ हो और लोग हमें देख कर समझ लिया करें कि यह सिर्फ़ अल्लाह के बन्दे हैं जो अल्लाह के हुक्मों पर चलते हैं और अल्लाह ही के लिए जीते और मरते हैं।

2- दूसरा शब्द-

اَلْحَيُّ الْقَيُّوْمُ लफ़्ज़ ह़य्य के माने अ़रबी ज़बान में ज़िन्दग़ी के हैं। अस्मा-ए-इलाहिया (अल्लाह के नामों) से यह अल्फ़ाज़ लाकर, यह बतलाना मक़्सूद है कि वह हमेशा ज़िन्दा और बाक़ी रहने वाला है, उस को मौत कभी नहीं आ सकती। यानी ज़िन्दग़ी की सिफ़त उस की ज़ाती सिफ़त है। न कभी मौत उस पर पहले तारी हुई और न आइन्दा कभी होगी, वह हमेशा से है और हमेशा रहेगा।

शब्द क़य्यूम के माने हैं थामने वाला, संभालने वाला, यानी ऐसी हस्ती जो न सिर्फ़ अपनी ज़ात से क़ायम है बल्कि दूसरों के क़याम और बाक़ी रहने का सबब (कारण) भी है और तमाम क़ायनात (Universe) के निज़ाम (System) को संभाले हुए قَيُّوْمٌ अल्लाह तआ़ला की सिफ़ाते ख़ास्सा (खास गुण) है। जिस में कोई दूसरी मख़्लूक़ शरीक नहीं, इसलिए किसी इन्सान को क़य्यूम कहना जायज़ नहीं।

जिन का नाम 'अ़ब्दुल क़य्यूम' हो उन को पूरा नाम लेकर पुकारना चाहिए। केवल क़य्यूम कह कर पुकारना जायज़ नहीं और इस तरह कहने वाला गुनाहगार होता है। अल्लाह तआ़ला के अस्मा-ए-हुस्ना, सिफ़ात में اَلْحَيُّ الْقَيُّوْمُ का मजमूआ बहुत से सल्फ़ सालिहीन के नज़्दीक 'इस्मे आ़ज़म' है। ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि ग़ज़्व-ए-बद्र में मैंने एक वक़्त यह चाहा कि रसूल (सल्ल०) को देखूँ कि आप क्या कर रहे हैं, पहुँचा और देखा कि आप सज्दे में हैं और बार-बार **'या ह़य्यु या क़य्यूम, या ह़य्यु या क़य्यूम'** कह रहे हैं।

बाज़ मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) जब मुर्दा को ज़िन्दा करने का इरादा फ़रमाते तो **'या ह़य्यु या क़य्यूम'** पढ़ कर दुआ़ करते और मुर्दा से कहते **'क़ुम बिइज़्निल्लाह'** तो मुर्दा उसी वक़्त

ज़िन्दा हो जाता।

3- तीसरा शब्द-

لَا تَاْخُذُهٗ سِنَةٌ وَّلَا نَوْمٌ न उस को ऊँघ आती है और न नींद यानी पैदा करने वाला ऊँघ और नींद सब से बरी है। ऊँघ और नींद से ह़यात (ज़िन्दग़ी) में नक़्स (कमी) आता है, इसलिए कि नींद मौत की बहन है और अल्लाह तआ़ला मौत से पाक है। इस शब्द से अल्लाह तआ़ला का पाक और बरी होना साबित होता है और यह कि वह ऐसा ह़य्य क़य्यूम है कि भूल-चूक, ग़फ़्लत, सुस्ती, थकान आदि से पाक और साफ़ है।

4- चौथा शब्द-

لَهٗ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ यानी आसमानों और ज़मीन और तमाम कायनात का वही पैदा करने वाला है। सब उसी के ताबेअ़ (अधीन) हैं और उसी की क़ुद्रत में हैं, वह मालिक व मुख़्तार हैं, जिस तरह चाहे उन में तसर्रुफ़ फ़रमाए। यह शब्द अल्लाह तआ़ला की सिफ़त मालकियत को साबित करता है कि आसमानों और ज़मीनों का मालिक ह़क़ीक़ी वही है, वह तमाम मख़्लूक़ात से बेनियाज़ (निस्पृह) है।

5- पाँचवा शब्द-

مَنْ ذَا الَّذِيْ يَشْفَعُ عِنْدَهٗٓ اِلَّا بِاِذْنِهٖ यानी ऐसा कौन है जो अल्लाह तआ़ला के पास सिफ़ारिश कर सके बिना उसकी इजाज़त के। यानी वह हर चीज़ पर अख़्तियार रखता है, मालिकुल् मुल्क है। किसी की मजाल नहीं कि उस के सामने उसकी इजाज़त के बग़ैर गुनाहगारों या मुजरिमों की निजात के लिए सिफ़ारिश कर सके। अगर अम्बिया व औलिया और अल्लाह तआ़ला के मक़्बूल बन्दे किसी की सिफ़ारिश और शफ़ाअ़त करेंगे तो अल्लाह तआ़ला के हुक्म और उस की इजाज़त से ऐसा करेंगे वरना बग़ैर इजाज़त किसी को दम मारने की हिम्मत न होगी। बस इस शब्द से अल्लाह तआ़ला की ह़ाकिमियत और जलाल व किबरियाई को ज़ाहिर करना मक़्सूद है कि उसके दरबार में किसी की मजाल नहीं कि बग़ैर उसकी इजाज़त के ज़बान खोल सके।

जब अम्बिया और फ़रिश्ते अल्लाह की इजाज़त के बिना शफ़ाअ़त (सिफ़ारिश) न करेंगे तो फिर वह बुत जिनकी कुफ़्फ़ार पूजा करते हैं और जिन के बारे में ख़याल करते हैं कि वह अल्लाह के यहाँ उन के लिए सिफ़ारिश करेंगे, कितना मूर्ख वाला विचार है।

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, मैं अ़र्श के नीचे आऊँगा और सज्दे में गिर जाऊँगा तो अल्लाह मुझे उसी ह़ाल में छोड़ देगा जितनी देर चाहेगा, फिर मुझसे कहेगा कि अपना सर उठाओ और कहो, सुना जाएगा और शफ़ाअ़त करो, क़ुबूल की जाएगी। **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

मगर यह शफ़ाअ़त अहले तौह़ीद (एकेश्वरवादी) के लिए होगी, मुश्रिकीन के लिए नहीं। ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से पूछा कि वह कौन ख़ुशक़िस्मत होगा जिसको आप की

शफ़ाअ़त नसीब होगी? तो आप ने फ़रमाया कि जिसने **'लाइलाहा इल्लल्लाह'** पूरे ख़ुलूस दिल के साथ कहा होगा। **(बुख़ारी)**

मालूम हुआ कि यह शफ़ाअ़त तौहीद वालों के लिए सिर्फ़ होगी।

6- छठा शब्द-

يَعْلَمُ مَا بَيْنَ أَيْدِيهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ अल्लाह तआ़ला जानता है उन के तमाम ह़ाज़िर व ग़ायब, गुज़िश्ता व आइन्दा, आगे व पीछे के ह़ालात और वाक़िआ़त को यानी अल्लाह तआ़ला के नज़्दीक भूत, भविष्य और वर्तमान सब बराबर हैं। उस का इ़ल्म तमाम क़ायनात को समेटे हुए है, चाहे हज़ारों साल पहले कभी वाक़िआ़त हुए हों या मौजूदा ज़माने में हों या आइन्दा कभी हों। वह सब का इल्म रखने वाला है। यानी इस में अल्लाह तआ़ला के इ़ल्म को बयान फ़रमाया गया है कि उस का इ़ल्म मख़्लूक़ात के तमाम ह़ालात को समेटे हुए है।

7- सातवाँ शब्द-

وَلَا يُحِيطُونَ بِشَيْءٍ مِّنْ عِلْمِهِ إِلَّا بِمَا شَاءَ इन्सान और तमाम मख़्लूक़ात (श्रृष्टियाँ) अल्लाह के इ़ल्म के किसी ह़िस्से का अह़ाता नहीं कर सकते, मगर अल्लाह तआ़ला ही ख़ुद जिस को जितना इ़ल्म अ़ता करना चाहें उतना ही उस को इ़ल्म हो सकता है। यानी इस शब्द में यह बतलाया गया है कि तमाम कायनात के ज़र्रह-ज़र्रह का इ़ल्म सिर्फ़ अल्लाह की खुसूसी सिफ़त है। कोई दूसरी मख़्लूक़ इस में शरीक नहीं, जिस तरह़ मख़्लूक़ात का वजूद ख़ुदा का दिया हुआ है उसी तरह़ मख़्लूक़ात का इ़ल्म भी ख़ुदावन्दी देन है। बन्दे सिर्फ़ उतना ही जान सकते हैं जितना अल्लाह तआ़ला चाहे। कुछ मुफ़स्सिरीन ने इस शब्द का मतलब यह भी लिखा है कि अल्लाह तआ़ला की ज़ात व सिफ़ात का इ़ल्म बन्दों और दूसरी मख़्लूक़ात को उतना ही है जितना कि ख़ुद अल्लाह तआ़ला ने रसूलों और फ़रिश्तों के ज़रिये से अ़ता फ़रमा दिया, इस से ज़्यादा उसकी ज़ात और सिफ़ाते कामिला (तमाम गुणों) का किसी को इ़ल्म नहीं।

(तफ़्सील के लिए देखें सूरः मरयम आयत नं० 64 व सूरः बक़रः आयत नं० 32)

8- आठवाँ शब्द-

وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ उस की कुर्सी इतनी बड़ी है कि उसने सब आसमानों और ज़मीन को अपने अन्दर ले रखा है।

'कुर्सी' की तफ़्सीर और माने में मुफ़स्सिरीन का इख़्तिलाफ़ है। ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि 'कुर्सी' से मुराद 'इ़ल्म' है यानी उस का इ़ल्म तमाम आसमानों और ज़मीनों का इन्तिज़ाम दुरुस्त रखे हुए है। कुछ मुफ़स्सिरीन ने कुर्सी के माने क़ुद्रत व अ़ज़्मत बयान किये हैं। यानी उसकी क़ुद्रते कामिला और अ़ज़्मत तमाम आसमानों और ज़मीनों का इन्तिज़ाम दुरुस्त रखे हुए है। कुछ ने ज़ाहिरी माने मुराद लिए हैं और लिखा है कि कुर्सी एक जिस्म है, अ़र्श से छोटा और आसमान से बड़ा।

एक रिवायत में ह़ज़रत अबू ज़र (रज़ि०) से रिवायत है कि उन्होंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से कुर्सी

के बारे में पूछा। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "ऐ अबूज़र! सातों आसमान और ज़मीन कुर्सी के सामने ऐसे हैं, जैसे- एक गोल दायरा यानी छल्ला एक बड़े मैदान में पड़ा हुआ हो और अ़र्श उस कुर्सी से इतना बड़ा है जैसे वह मैदान इस छल्ले से बड़ा है।"

उ़लम-ए-मुहक्क़िक़ीन ने लिखा है कि अल्लाह तआ़ला तो बैठने-उठने से पाक है इसलिए कुर्सी और तख़्त पर बैठने से पाक और बुलन्द है। यह शब्द बतौरे इस्तिआ़रात (संज्ञा) के उस की ज़ात के लिए कुर्आने करीम में इस्तेमाल हुए हैं उन पर बिला कैफ़ियत (हा़लत) और ह़क़ीक़त जाने हुए ही ईमान रखना ज़रूरी है। यानी इस शब्द में यह बतलाया गया है कि अल्लाह तआ़ला की हा़किमियत व मालिकियत आसमानों और ज़मीनों से भी बुलन्द है, जहाँ तक इन्सान का वहम और ख़याल भी नहीं पहुँच सकता। ख़ुलासा यह है कि कुर्आन जो शब्द बोलता है उस पर हमारा ईमान है, मगर उस की कैफ़ियत हम को मालूम नहीं। इसलिए उस की कैफ़ियत न बयान की जाए, न किसी मख़्लूक़ से तश्बीह़ दी जाए।

9- नवाँ शब्द-

وَلَا يَئُودُهُ حِفْظُهُمَا अल्लाह तआ़ला के लिए उन दोनों यानी आसमानों और ज़मीन की हिफ़ाज़त और उन के नज़्म को क़ायम रखना कुछ दुश्वार नहीं, बल्कि आसान है। यानी इस शब्द में यह बतला दिया गया है कि अल्लाह तआ़ला की सिफ़ते क़ुद्रत नुक़्सान और कमज़ोरी से बिलकुल पाक और साफ़ है।

10- दस्वाँ और आख़िरी शब्द-

وَهُوَ الْعَلِيُّ الْعَظِيمُ और वह आ़लीशान व अ़ज़ीमुश्शान है। यानी अल्लाह तआ़ला हर चीज़ से आ़ली मर्तबा और रफ़ीउ़श्शान है। या यह माने कि अल्लाह तआ़ला अपनी सल्तनत, हुकूमत और ग़ल्बे के लिहाज़ से बहुत बुलन्द है या एक माने यह भी हो सकते हैं कि अल्लाह तआ़ला की सिफ़ात कोई कितना ही बयान करे, लेकिन ह़क़ीक़त की तह तक नहीं पहुँच सकता, क्योंकि वह मख़्लूक़ की पहुँच से बुलन्द है।

आयतुल् कुर्सी की फ़ज़ीलत-

- 'मुस्लिम शरीफ़' में ह़ज़रत उबई बिन कअ़ब (रज़ि०) से रिवायत है, सहा़बा-ए-किराम में ह़ज़रत उबई बिन कअ़ब कुर्आन मजीद के बड़े हा़फ़िज़ और आ़लिम थे। **अबुल् मुन्ज़िर** उन की कुन्नियत (उपनाम) है। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया **अबुल् मुन्ज़िर** क्या तुम को मालूम है कि किताबुल्लाह की कौन सी आयत-ए-आज़म तुम्हारे साथ है? मैंने अ़र्ज़ किया कि अल्लाह और उस का रसूल ही ख़ूब जानता है। आप ने फिर इर्शाद फ़रमाया कि 'उबई' जानते हो कि कुर्आन पाक की कौन सी आयत-ए-आज़म यानी सब से बुज़ुर्ग आयत तुम्हारे साथ है। मैंने अ़र्ज़ किया اللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّوْمُ यानी पूरी 'आयतुल् कुर्सी।' ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने ख़ुश होकर मेरा सीना थपथपाया और फ़रमाया कि तुम को इ़ल्म मुबारक हो 'ऐ अबुल् मुन्ज़िर।'
- एक दूसरी रिवायत में ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) को लकड़ी

के इस मेम्बर पर यह कहते हुए सुना है कि जो शख़्स हर नमाज़ के बाद 'आयतुल् कुर्सी' पढ़े तो उस को मौत के सिवा कोई चीज़ जन्नत में जाने से नहीं रोक सकती और जो शख़्स आयतल कुर्सी सोते वक़्त पढ़े अल्लाह तआ़ला उस के और उसके पड़ोसी के जितने मकानात इस मकान के गिर्द हों सब को अम्न में रखता है। **(मिश्कात, बैहक़ी)**

- एक रिवायत में हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से मरवी है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया कि सूरः बक़रः में एक आयत है जो तमाम कुर्आन के आयतों की सरदार है, वह आयतुल् कुर्सी है। जिस घर में पढ़ी जाती है शैतान उस से निकल जाता है।
- हज़रत उ़मर फ़ारूक़ (रज़ि०) के इस सवाल पर कि सारे कुर्आन में सब से ज़्यादा बुज़ुर्ग आयत कौन सी है। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) ने कहा मुझे ख़ूब मालूम है, "मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से सुना है कि वह आयतुल कुर्सी है।"

इस आयते मुबारका में दस वाक्य हैं। इस आयत की अहमियत व फ़ज़ीलत की वजह से हर-हर वाक्य की तशरीह़ व तफ़्सीर अलग-अलग बयान की जाती है।

अबी उमामा (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जो हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद आयतुल् कुर्सी पढ़ेगा उसे जन्नत से कोई चीज़ रोकने वाली नहीं है, मगर मौत।" **(नसई)**

नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया "सात आसमानों की ह़ैसियत कुर्सी के मुक़ाबिले में सिर्फ़ इतनी ही है जितना कि किसी ख़ाली ज़मीन में पड़ी अंगूठी की हो, जबकि अ़र्श की फ़ज़ीलत कुर्सी पर वैसी है जैसी ख़ाली ज़मीन की फ़ज़ीलत इस अंगूठी पर है।" **(सिलूसिलतुल् अह़ादीस अल् सह़ीह़, ह़दीसः 109)**

हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से मरवी है कि नबी करीम (सल्ल०) ने मुझे ज़काते रमज़ान (सद्क़-ए-फ़ित्र) की निगरानी पर मुक़र्रर किया तो मेरे पास एक शख़्स आया और उसने आते ही ग़ल्ले में से मुट्ठी भर कर लेना शुरु किया तो मैंने उसे पकड़ लिया और कहा, "मैं तुम्हें अल्लाह के रसूल के पास ले जाऊँगा (छोड़ूँगा नहीं।") फिर पूरा क़िस्सा बयान किया तो उस ने कहा (ऐ अबूहुरैरा!) जब तुम सोने के लिए अपने बिस्तर पर जाओ तो आयतुल् कुर्सी पढ़ लिया करो तो सुबह़ होने तक अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से तुम पर एक निगेहबान (फ़रिश्ता) मुक़र्रर रहेगा जो तुम्हारी ह़िफ़ाज़त करेगा और शैतान सुबह़ होने तक क़रीब न फटकने पाएगा। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "वह बड़ा झूठा है मगर यह बात उस ने सच्ची कही, वह शैतान था।" **(सह़ीह़ बुख़ारी, फ़ज़ायले कुर्आन, बाब 10, ह़दीस 5010)**

खुलासा यह है कि इस आयते मुबारका के शब्दों में अल्लाह तआ़ला की ज़ात व सिफ़ात के कमालात बयान हुए हैं, जिन को जानने और समझने के बाद हर अ़क्ल रखने वाला इन्सान यही कहने पर मजबूर है कि हर इज़्ज़त व अ़ज़्मत और हर बुलन्दी व बरतरी का मालिक अल्लाह तआ़ला की पाक ज़ात है। अब जबकि सिफ़ाते इलाहिया (Attributes of Allah) का बयान इस तरह़ ज़िक्र फ़रमा दिया गया कि एकेश्वरवाद को कुबूल करने पर हर अ़क़्लमन्द मजबूर है और ह़क़ व बातिल और नूर व ज़ुल्मत (अधकार) का फ़र्क़ वाज़ेह कर दिया गया, तो अब हुज्जत पूरी हो चुकी और कुबूले ह़क़ में कोई गुन्जाइश

बाक़ी न रही। इसलिए किसी पर जब्र व ज़बरदस्ती नहीं, जो चाहे दीने हक़ को कुबूल करे जो चाहे न कुबूल करे। इसी को अगली आयत में फ़रमाया गया है।

256 لَآ إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ ۖ قَدْ تَّبَيَّنَ الرُّشْدُ مِنَ الْغَيِّ ۚ فَمَنْ يَّكْفُرْ بِالطَّاغُوتِ وَيُؤْمِنْ بِاللّٰهِ فَقَدِ
اسْتَمْسَكَ بِالْعُرْوَةِ الْوُثْقٰى ۚ لَا انْفِصَامَ لَهَا ۗ وَاللّٰهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝

इस्लाम कुबूल करवाने के लिए ज़बरदस्ती नहीं-

पिछली आयत जो आयतुल् कुर्सी के नाम से मशहूर है। उस में अल्लाह तआ़ला की वह्दानियत (यकता) कुद्रत, इल्म व अ़ज़्मत को इस तरह़ बयान फ़रमाया गया है कि हर अ़क्लमन्द तौह़ीद ख़ुदावन्दी के मानने पर मजबूर है। इस तरह़ अल्लाह तआ़ला की तौह़ीद को मानना और उसकी इताअ़त करना और तमाम अह़कामे ख़ुदावन्दी को कुबूल करना हर इन्सान के लिए ज़रूरी व लाज़मी हुआ। इस से यह भी साबित हुआ कि अल्लाह तआ़ला अगर कुफ़्फ़ार को ईमान के लिए मजबूर करते तो वह ऐसा भी कर सकते थे, इसलिए कि अल्लाह तआ़ला को उन पर पूरी कुद्रत (सामर्थ्य) है और ऐसा करना हक़ भी था क्योंकि अल्लाह तआ़ला सब के ख़ालिक़, राज़िक़ व मालिक हैं और मालिक को अपने मिल्क (अधिकार) में तसर्रुफ़ (ख़र्च) का हक़ है। मगर चूंकि यह ख़बर अल्लाह तआ़ला की ह़िक्मत के ख़िलाफ़ थी, इसलिए कुफ़्फ़ार को ईमान लाने पर मजबूर नहीं किया गया बल्कि साफ़ एलान फ़रमा दिया गया कि हमारी तरफ़ से दीने हक़ की कुबूलियत में कोई ज़बरदस्ती नहीं, बल्कि हर एक को अख़्तियार दिया गया है कि वह अपने अख़्तियार को ईमान लाने के काम में लाकर तौह़ीद व रिसालत को कुबूल करे या अपने अख़्तियार को कुफ़्र व शिर्क के लिए इस्तेमाल करे, क्योंकि हिदायत गुमराही से बिल्कुल अलग होकर ज़ाहिर कर दी गई है, इसलिए किसी जब्र की ज़रुरत नहीं। अगर कोई अपने अख़्तियार से गुमराही अपनाएगा तो ख़ुद अपने को बर्बाद करेगा और जब वह ख़ुद जानबूझकर अपने को तबाही में डाल रहा है तो किसी को क्या ज़रूरत कि वह उसे मजबूर करे कि तू ऐसा न कर।

धर्म में ज़बरदस्ती नहीं-

इस आयत لَآ إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ के शाने नुज़ूल के सिलसिले में एक रिवायत यह है कि इस्लाम से पहले मदीना की मुश्रिका औ़रतें जब उन्हें औलाद न होती तो नज़्र मानती थीं कि अगर हमारे यहाँ औलाद हुई तो हम उसे यहूद के सुपुर्द कर देंगे क्योंकि इस्लाम से पहले मदीना में यहूद अहले किताब समझे जाते थे और बुत परस्त मुश्रिकीन उन के मज़हब को बेहतर समझते थे। इस तरह़ उन के बहुत से बच्चे यहूदियों के पास थे।

जब मदीना में इस्लाम आया और यह लोग मुसलमान होकर अन्सार मदीना बने तो बाज़ अन्सार ने रसूल (सल्ल०) से अ़र्ज़ किया कि हम ने अपनी औलाद को यहूदी मज़हब पर पहले इस वास्ते कर दिया था कि यहूदी मज़हब हमारे मज़हब से बेहतर था। हम बुत परस्त थे वह अहले किताब थे अब

जब अल्लाह तआ़ला ने हम को दीने इस्लाम अ़ता फ़रमा दिया तो अब हम अपनी औलाद को मुसलमान होने पर मजबूर करेंगे। उस वक़्त यह आयत नाज़िल हुई कि जब्र और ज़बरदस्ती मुसलमान बनाने में न की जाए।

एक दूसरी रिवायत इस के शाने नुज़ूल में यह भी है कि एक अन्सारी थे, जो ख़ुद तो मुसलमान हो गये थे, उन के दो लड़के ईसाई थे। उन्होंने नबी करीम अ़लैहिस्सलातु वस्सलामु की ख़िद्मत में आकर अ़र्ज़ किया कि मुझे इजाज़त दी जाए कि इन लड़कों को जबरन मुसलमान बना लूँ। उस वक़्त यह आयत नाज़िल हुई और रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने ज़बरदस्ती मुसलमान बनाने की इजाज़त न दी।

यहाँ आयत में इस्लाम को मज़बूती से पकड़ने वाले की मिसाल और तश्बीह ऐसे शख़्स से दी गई है जो किसी मज़बूत रस्सी का ह़ल्क़ा (छल्ला) हाथ में मज़बूत थाम कर गिरने और हलाक होने से मह़फ़ूज़ रहता है। इसी तरह इस्लाम को मज़बूत पकड़ने वाला हलाकत व आख़िरत के नुक़्सान से मह़फ़ूज़ रहता है और जिस तरह़ ऐसी रस्सी के टूट कर गिरने से ख़तरा नहीं, उसी तरह़ इस्लाम में किसी क़िस्म की हलाकत व नुक़्सान नहीं है। हाँ, कोई रस्सी ही छोड़ दे तो फिर हर वक़्त ही गिरने का ख़तरा है यानी इस्लाम ही को छोड़ दे तो फिर हलाकत और नुक़्सान ही है।

इस आयत से साफ़ ज़ाहिर हुआ कि इस्लाम हर शख़्स को दीन के बारे में अख़्तियार (अधिकार) देता है। इस्लाम क़ुबूल करने के लिए किसी को मजबूर नहीं करता। हाँ, अपने मानने वाले और दीन की तब्लीग़ व प्रचार को ज़रूरी (वाजिब) क़रार देता है, लेकिन इस की इजाज़त हरगिज़ नहीं देता कि किसी को ज़बरदस्ती जब्र व इक्राह के साथ इस्लाम में दाख़िल किया जाए और इस्लाम क़ुबूल करने पर मजबूर किया जाए।

तारीख़-ए-इस्लाम इस ह़क़ीक़त पर गवाह है कि मुसलमानों ने कभी अपने पड़ोसी बल्कि मह़कूम रिआ़या (प्रजा) और ग़ुलाम को भी इस्लाम ज़बरदस्ती क़ुबूल करने पर मजबूर नहीं किया।

ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) का एक ग़ुलाम नस्रानी था, आप उस पर इस्लाम पेश करते वह इन्कार करता। आप कह देते ख़ैर तेरी मर्ज़ी। इस्लाम जब्र से रोकता है, मगर एक बात यहाँ यह भी ज़ेहन में रखनी चाहिए कि इस्लाम में जब्र व इक्राह न होने से यह मुराद हरगिज़ नहीं कि एक शख़्स जो इस्लाम क़ुबूल कर ले वह इस्लाम को क़ुबूल करने के बाद आज़ाद रहे कि इस्लाम का जो हुक्म चाहे माने और जिस हुक्म को चाहे न माने। जब एक बार अपने अख़्तियार और ख़ुशी और चाहत की वजह से इस्लाम को क़ुबूल कर लिया तो अब इस्लाम के तमाम हुक्मों को मानना होगा। अब आज़ादी और अख़्तियार का सवाल बाक़ी नहीं रहता। आज़ादी सिर्फ़ दीन के क़ुबूल करने या क़ुबूल न करने तक थी, लेकिन क़ुबूल करने के बाद अ़मल में आज़ादी नहीं। देखिए सरकारी नौकरी हर एक पर क़ुबूल करना अगरचे ज़रूरी और लाज़मी नहीं, लेकिन जब मुलाज़िमत क़ुबूल कर ली, तो फिर तमाम क़वानीन मुलाज़िमत की पाबन्दी लाज़मी और ज़रूरी हो जाती है, वरना मुजरिम होगा और सजा के क़ाबिल समझा जाएगा। इसी तरह़ क़ुबूले दीन में ज़बरदस्ती नहीं, लेकिन जब कोई इस्लाम तस्लीम कर चुका तो अब उस को एह़काम को

मानने में आज़ाद नहीं रखा जाएगा बल्कि जिस पाबन्दी को बअख़्तियार ख़ुद उस ने अपने ऊपर लागू किया है उस की अदाएगी और पाबन्दी का उस से मुताल्बा (Demand) किया जाएगा और यह जब्र नहीं बल्कि यह एक अच्छे और बेहतर नज़्म (System) की दलील है।

एतिराज़-

इस आयत لَآ إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ को देखते हुए बाज़ 'कम समझ ग़ैर मुस्लिम' एतिराज़ करते हैं कि इस आयत से मालूम होता है कि दीन में ज़बरदस्ती नहीं। हालांकि इस्लाम में जिहाद व क़िताल की तअ़लीम है तो अगर ज़रा समझ से काम लिया जाए और इस्लामी अह़काम में ग़ौर किया जाए तो यह एतिराज़ निहायत बकवास साबित हो, इसलिए कि इस्लाम में जिहाद और जंग व क़िताल की तअ़लीम लोगों को क़ुबूले ईमान पर मजबूर करने के लिए नहीं है बल्कि जंग व जिहाद की इजाज़त ज़ुल्म व तशद्दुद और फ़साद को रोकने के लिए दी गई है क्योंकि कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन भी ज़ुल्म के ज़रिये अपना एतिक़ाद (आस्था) ज़बरदस्ती दूसरों के सर थोपना चाहते हैं।

क़ुर्आन ने इसी ज़बरदस्ती के ख़िलाफ़ तलवार उठाने का हुक्म दिया था। फिर जिस बात के ख़िलाफ़ उस ने जंग का हुक्म दिया है वह ख़ुद उसी को कैसे कर सकता है। जिहाद के साथ जिज़्या की तअ़लीम ख़ुद इस बात की दलील है कि इस्लाम ने ग़ैर मुस्लिमों के लिए रास्ता तंग नहीं किया और उस को क़ुबूल-ए-इस्लाम पर मजबूर नहीं किया बल्कि उस को आज़ादी से इस का मौक़ा दिया है कि अगर वह चाहे तो बग़ैर इस्लाम क़ुबूल किये अपनी जान व माल और अपना मज़हब जिज़्या देकर मह़फ़ूज़ रख सकता है। जिहाद की नौबत और तलवार उठाने का मौक़ा तो इस्लाम में तीसरे नम्बर पर आता है।

पहले आज़ादी से इस्लाम के समझने का मौक़ा दिया जाएगा, उस के बाद इस्लाम के ग़ल्बे (प्रभुत्व) को तस्लीम (मानना) कराना होगा जिसको मानने के बाद जिज़्या देना होगा। इन दोनों को ठुकराने के बाद तलवार पेश की जाएगी जिस का ज़िम्मेदार वह ख़ुद है। बस मुख़ालिफ़ीन और ग़ैर मुस्लिमों का यह एतिराज़ कि इस्लाम तलवार के ज़ोर से फैलाया बिल्कुल बेह़क़ीक़त और उसूले इस्लाम के ख़िलाफ़ है।

इस आयत और जिहाद की आयतों के दर्मियान कोई टकराव नहीं क्योंकि जिहाद इसलिए नहीं फ़र्ज़ किया गया कि लोगों को दीने इस्लाम में दाख़िल होने पर मजबूर किया जाए। जैसा कि पहले ज़िक्र हो चुका है कि जिस के दिल पर मुहर लगा दी गई हो, उसे मजबूर करने पर भी कोई फ़ायदा नहीं होगा।

मुजाहिदीने इस्लाम ने जब कभी कोई इलाक़ा फ़तेह़ किया तो वहाँ के लोगों को इस्लाम क़ुबूल करने पर मजबूर नहीं किया बल्कि उन्हें अख़्तियार दिया कि अगर वह चाहें तो अपने दीन पर रहे और जिज़्या दें और इस्लामी हुकूमत उनको रक्षा देगी।

इस आयत में बताया गया है कि दीन में जब्र व इक्राह नहीं, कि ज़बरदस्ती इस्लाम क़ुबूल कराया जाए क्योंकि ह़क़ व बातिल और हिदायत व गुमराही में साफ़ अन्तर बता दिया गया है। अब आगे हिदायत और गुमराही के नतीजे का इज़्हार फ़रमाया गया है। काफ़िर जो गुमराही को अपनाने वाला है, उस की मज़म्मत (रद्द) फ़रमाई गई है और मोमिन जो हिदायत का क़ुबूल करने वाला है उस की तअ़रीफ़ फ़रमाई गई है।

257 اَللّٰهُ وَلِيُّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ۙ يُخْرِجُهُمْ مِّنَ الظُّلُمٰتِ اِلَى النُّوْرِ ۬ؕ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا اَوْلِيٰٓـئُهُمُ الطَّاغُوْتُ ۙ
يُخْرِجُوْنَهُمْ مِّنَ النُّوْرِ اِلَى الظُّلُمٰتِ ؕ اُولٰٓـئِكَ اَصْحٰبُ النَّارِ ۚ هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ۝

इस का सम्बन्ध पिछली आयत से है। पिछली आयत बुनियाद है और यह आयत उस का नतीजा है, कि जो लोग अपने ईमान में सच्चे होते हैं, अ़मल सालेह़ (नेक अ़मल) करते हैं और ईमान के ख़िलाफ़ तमाम कामों से बचते हैं तो अल्लाह तआ़ला उन्हें अपना वली और दोस्त बना लेता है, उन्हें कुफ़्र और शक व शुब्हा के अंधेरियों से निकाल कर खुले और वाज़ेह़ ह़क़ (स्पष्ट, सत्य) के रास्ते पर डाल देता है और जो अहले कुफ़्र होते हैं, उन के दोस्त शयातीन और आइम्मा कुफ़्र होते हैं, वह कुफ़्र व इल्ह़ाद (Communism) को ख़ुशनुमा बनाकर उन के सामने पेश करते हैं और राहे ह़क़ से उन्हें अलग करके कुफ़्र व ज़लालत की राह पर डाल देता है।

यहाँ अल्लाह तआ़ला ने कलिमा "नूर" को वाह़िद (एकवचन) और "ज़ुलूमात" को जमा (बहुवचन) इस्तेमाल किया है। इसलिए कि ह़क़ हमेशा और हर ज़माने में एक रहा है और कुफ़्र की मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) क़िस्में और बहुत सी शक्लें रही हैं। जैसा कि अल्लाह ने फ़रमाया,

وَاَنَّ هٰذَا صِرَاطِيْ مُسْتَقِيْمًا فَاتَّبِعُوْهُ ۚ وَلَا تَتَّبِعُوا السُّبُلَ فَتَفَرَّقَ بِكُمْ عَنْ سَبِيْلِهٖ ؕ ذٰلِكُمْ وَصّٰىكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ۝

"और यह दीन मेरा रास्ता है जो मुस्तक़ीम (सीधा) है, सो इस राह पर चलो और दूसरी राहों पर मत चलो, कि वह राहें तुम को अल्लाह की राह से हटा देंगी, इस का तुम को अल्लाह तआ़ला ने ताकीदी हुक्म दिया है ताकि तुम एह़तियात रखो।" **(अल् अन्आ़म-153)**

258 اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْ حَآجَّ اِبْرٰهٖمَ فِيْ رَبِّهٖٓ اَنْ اٰتٰىهُ اللّٰهُ الْمُلْكَ ۘ اِذْ قَالَ اِبْرٰهٖمُ رَبِّيَ الَّذِيْ
يُحْيٖ وَيُمِيْتُ ۙ قَالَ اَنَا اُحْيٖ وَاُمِيْتُ ؕ قَالَ اِبْرٰهٖمُ فَاِنَّ اللّٰهَ يَاْتِيْ بِالشَّمْسِ مِنَ الْمَشْرِقِ
فَاْتِ بِهَا مِنَ الْمَغْرِبِ فَبُهِتَ الَّذِيْ كَفَرَ ؕ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۝

वह 'बाबुल' का बादशाह 'नमरूद बिन कनूआ़न' था, जिस ने इब्राहीम (अ़लै०) से कहा कि कौन है तुम्हारा रब जिस की तरफ़ हमें बुलाते हो? और वह इस कुफ़्र व सरकशी पर इसलिए तुल गया था, कि एक मुद्दत तक बादशाहत करने की वजह से ग़ुरूर (घमंड) में मुब्तिला हो गया था और शैतान ने उस के दिमाग़ में यह ख़याल बैठा दिया था कि वही रब्बुल् आ़लमीन (ब्रहम्माण्ड का पालनहार) है। इसीलिए इब्राहीम (अ़लै०) ने जब इस के जवाब में कहा कि मेरा रब वह है जो ज़िन्दा करता है और मारता है, तो इस दिल के अंधे ने कहा कि मैं भी तो ज़िन्दा करता और मारता हूँ।

इब्ने अ़ब्बास (रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा) की रिवायत है कि उस ने इसी मजलिस में दो क़ैदी मँगाए, एक को क़त्ल कर दिया और दूसरे को छोड़ दिया। ह़ालांकि इब्राहीम (अ़लै०) का मक़्सद वाज़ेह़ था कि अल्लाह तआ़ला इन्सानों को पैदा करता है और फिर उन्हें उ़म्र की आख़िरी मन्ज़िल तक ले जाता है, लेकिन जब यह बात उसे समझ में न आई, तो इब्राहीम (अ़लै०) ने कहा कि अल्लाह तआ़ला सूरज को पूरब से निकालता है तू उसे पश्चिम से निकाल कर दिखा, तो वह दंग और आजिज़ रह गया।

आयत नं० 259 से 266 तक

أَوْ كَالَّذِي مَرَّ عَلَىٰ قَرْيَةٍ وَهِيَ خَاوِيَةٌ عَلَىٰ عُرُوشِهَا قَالَ أَنَّىٰ يُحْيِي هَٰذِهِ اللَّهُ بَعْدَ مَوْتِهَا ۖ فَأَمَاتَهُ اللَّهُ مِائَةَ عَامٍ ثُمَّ بَعَثَهُ ۖ
قَالَ كَمْ لَبِثْتَ ۖ قَالَ لَبِثْتُ يَوْمًا أَوْ بَعْضَ يَوْمٍ ۖ قَالَ بَل لَّبِثْتَ مِائَةَ عَامٍ فَانظُرْ إِلَىٰ طَعَامِكَ وَشَرَابِكَ لَمْ يَتَسَنَّهْ ۖ وَانظُرْ
إِلَىٰ حِمَارِكَ وَلِنَجْعَلَكَ آيَةً لِّلنَّاسِ ۖ وَانظُرْ إِلَى الْعِظَامِ كَيْفَ نُنشِزُهَا ثُمَّ نَكْسُوهَا لَحْمًا ۚ فَلَمَّا تَبَيَّنَ لَهُ قَالَ أَعْلَمُ أَنَّ
اللَّهَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿٢٥٩﴾ وَإِذْ قَالَ إِبْرَاهِيمُ رَبِّ أَرِنِي كَيْفَ تُحْيِي الْمَوْتَىٰ ۖ قَالَ أَوَلَمْ تُؤْمِن ۖ قَالَ بَلَىٰ وَلَٰكِن لِّيَطْمَئِنَّ
قَلْبِي ۖ قَالَ فَخُذْ أَرْبَعَةً مِّنَ الطَّيْرِ فَصُرْهُنَّ إِلَيْكَ ثُمَّ اجْعَلْ عَلَىٰ كُلِّ جَبَلٍ مِّنْهُنَّ جُزْءًا ثُمَّ ادْعُهُنَّ يَأْتِينَكَ سَعْيًا ۚ
وَاعْلَمْ أَنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٢٦٠﴾ مَّثَلُ الَّذِينَ يُنفِقُونَ أَمْوَالَهُمْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ كَمَثَلِ حَبَّةٍ أَنبَتَتْ سَبْعَ سَنَابِلَ فِي كُلِّ سُنبُلَةٍ
مِّائَةُ حَبَّةٍ ۗ وَاللَّهُ يُضَاعِفُ لِمَن يَشَاءُ ۗ وَاللَّهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٦١﴾ الَّذِينَ يُنفِقُونَ أَمْوَالَهُمْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ ثُمَّ لَا يُتْبِعُونَ مَا أَنفَقُوا مَنًّا
وَلَا أَذًى ۙ لَّهُمْ أَجْرُهُمْ عِندَ رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٢٦٢﴾ قَوْلٌ مَّعْرُوفٌ وَمَغْفِرَةٌ خَيْرٌ مِّن صَدَقَةٍ
يَتْبَعُهَا أَذًى ۗ وَاللَّهُ غَنِيٌّ حَلِيمٌ ﴿٢٦٣﴾ يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تُبْطِلُوا صَدَقَاتِكُم بِالْمَنِّ وَالْأَذَىٰ كَالَّذِي يُنفِقُ مَالَهُ رِئَاءَ
النَّاسِ وَلَا يُؤْمِنُ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ ۖ فَمَثَلُهُ كَمَثَلِ صَفْوَانٍ عَلَيْهِ تُرَابٌ فَأَصَابَهُ وَابِلٌ فَتَرَكَهُ صَلْدًا ۖ لَّا يَقْدِرُونَ عَلَىٰ
شَيْءٍ مِّمَّا كَسَبُوا ۗ وَاللَّهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكَافِرِينَ ﴿٢٦٤﴾ وَمَثَلُ الَّذِينَ يُنفِقُونَ أَمْوَالَهُمُ ابْتِغَاءَ مَرْضَاتِ اللَّهِ وَتَثْبِيتًا مِّنْ أَنفُسِهِمْ
كَمَثَلِ جَنَّةٍ بِرَبْوَةٍ أَصَابَهَا وَابِلٌ فَآتَتْ أُكُلَهَا ضِعْفَيْنِ فَإِن لَّمْ يُصِبْهَا وَابِلٌ فَطَلٌّ ۗ وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ﴿٢٦٥﴾ أَيَوَدُّ
أَحَدُكُمْ أَن تَكُونَ لَهُ جَنَّةٌ مِّن نَّخِيلٍ وَأَعْنَابٍ تَجْرِي مِن تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ لَهُ فِيهَا مِن كُلِّ الثَّمَرَاتِ وَأَصَابَهُ الْكِبَرُ وَلَهُ
ذُرِّيَّةٌ ضُعَفَاءُ فَأَصَابَهَا إِعْصَارٌ فِيهِ نَارٌ فَاحْتَرَقَتْ ۗ كَذَٰلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ لَكُمُ الْآيَاتِ لَعَلَّكُمْ تَتَفَكَّرُونَ ﴿٢٦٦﴾

अनुवाद-

(259) या उस जैसे व्यक्ति को (नहीं देखा,) जिसका एक ऐसी बस्ती पर से गुज़र हुआ, जो अपनी छतों के बल गिरी हुई थी, उसने कहा, ''अल्लाह इसको मरने के बाद कैसे जिलायेगा'' तो अल्लाह ने उसे सौ वर्ष तक मुर्दा रखा फिर उसे उठा खड़ा किया, कहा, ''तू कितनी अवधि तक इस हालत में रहा, उसने कहा, मैं एक दिन या दिन का कुछ हिस्सा रहा, कहा, (नहीं) बल्कि तू सौ वर्ष रहा है, अब अपने खाने और पीने की चीज़ों को देख ले, उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, और अपने गधे को भी देख और यह इसलिए कह रहे हैं ताकि हम तुझे लोगों के लिए निशानी बना दें, और हड्डियों को देख, कि किस प्रकार हम जोड़ देते हैं फिर उन पर माँस चढ़ाते हैं तो जब यह हक़ीक़त उस पर खुल गई तो वह पुकार उठा मैं जानता हूँ कि अल्लाह को हर चीज़ पर क़ुदरत (सामर्थ्य) है''। (260) और (याद करो) जब इब्राहीम ने कहा, ''ऐ मेरे रब! मुझे दिखा दे कि 'तू' मुर्दो को किस तरह जिलाएगा?'' कहा, ''क्या आपको यक़ीन नहीं है?'' (उन्होंने) कहा, ''क्यों नहीं, लेकिन (मैं देखना चाहता हूँ) ताकि दिल को इत्मिनान हो जाए,'' कहा, ''अच्छा चार परिन्दे लें, फिर उन्हें अपने साथ हिला-मिला लें, फिर उनका एक-एक टुकड़ा हर एक पहाड़ पर रखवा दें, फिर उनको बुलाएँ तो वे आप के पास दौड़ते चले आएँगे और जान लें कि अल्लाह बड़ी ताक़त वाला (प्रभुत्वशाली), हिकमत वाला है।'' (261) जो लोग अपना माल अल्लाह की राह में ख़र्च करते हैं, उन (के माल) की मिसाल उन दानें की

तरह है जिससे सात बालें उगें और हर एक बाली में सौ-सौ दानें हों और अल्लाह जिस (के माल) में चाहता है ज़्यादा करता है 'वह' बड़ी वुसअ़त (समाई) वाला, (सब कुछ) जानने वाला है। (262) जो लोग अपना माल अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करते हैं उसके बाद न उस ख़र्च का (किसी पर) एहसान रखते हैं, और न (किसी को) तकलीफ़ देते हैं, उनका बदला उनके 'रब' के पास है, और (क़ियामत के दिन) न उनको कुछ डर होगा, और न वे ग़मगीन होंगे। (263) एक भली बात कहना और माफ़ी से काम लेना, उस सदक़े से बेहतर है जिसके देने के बाद तकलीफ़ दी जाए, और अल्लाह बड़ा ग़नी (निस्पृह) सहनशील है। (264) ऐ ईमान वालो! अपने सदक़े को एहसान जताकर और तकलीफ़ दे कर, उस व्यक्ति की तरह बर्बाद न कर दो, जो लोगों को दिखाने के लिए अपना माल ख़र्च करता, और अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान नहीं रखता, तो उस की हालत उस चट्टान जैसी है जिस पर कुछ मिट्टी पड़ी हो फिर उस पर ज़ोर की बारिश हो, तो वह उसे बिल्कुल साफ़ कर दे, इसी तरह ये लोग अपने आ़माल का कुछ भी बदला हासिल नहीं कर सकेंगे, और अल्लाह ऐसे नाशुक्रों को हिदायत नहीं दिया करता। (265) और उन लोगों की मिसाल जो अपना माल अल्लाह को राज़ी करने, और अपने आप में मज़बूती पैदा करने की इच्छा से खर्च करते रहते हैं, (उनकी हालत) एक बाग़ की तरह है, जो किसी अच्छी उपजाऊ भूमि पर हो, और उस पर घंघोर बारिश हो, तो उसमें सौ गुना फल आएँ, और अगर ज़ोरदार बारिश उस पर न भी हो तो हल्की फ़ुहार ही सही, और तुम जो कुछ करते हो अल्लाह उसे खूब देख रहा है। (266) क्या तुम में से कोई यह पसंद करता है कि उसका एक बाग़ खजूरों और अंगूरों का हो, जिसके नीचे नहरें बह रही हों, उसमें हर तरह के फल हों, उसे बुढ़ापा आ पकड़े, और उसके नन्हें-नन्हें बच्चे भी हों तो (यकायक) उस बाग़ पर आग का भरा हुआ बगोला (बवंडर) चले और वह जल जाए, इस तरह अल्लाह अपनी निशानियों को खोल-खोल कर बयान करता है ताकि तुम सोच-विचार से काम लो।

आयत नं० 259 से 266 तक की व्याख्या

259 أَوْ كَالَّذِي مَرَّ عَلَىٰ قَرْيَةٍ وَهِيَ خَاوِيَةٌ عَلَىٰ عُرُوشِهَا ۚ قَالَ أَنَّىٰ يُحْيِي هَٰذِهِ اللَّهُ بَعْدَ مَوْتِهَا ۖ فَأَمَاتَهُ اللَّهُ
مِائَةَ عَامٍ ثُمَّ بَعَثَهُ ۖ قَالَ كَمْ لَبِثْتَ ۖ قَالَ لَبِثْتُ يَوْمًا أَوْ بَعْضَ يَوْمٍ ۖ قَالَ بَل لَّبِثْتَ مِائَةَ عَامٍ فَانظُرْ
إِلَىٰ طَعَامِكَ وَشَرَابِكَ لَمْ يَتَسَنَّهْ ۖ وَانظُرْ إِلَىٰ حِمَارِكَ وَلِنَجْعَلَكَ آيَةً لِّلنَّاسِ ۖ وَانظُرْ إِلَى الْعِظَامِ
كَيْفَ نُنشِزُهَا ثُمَّ نَكْسُوهَا لَحْمًا ۚ فَلَمَّا تَبَيَّنَ لَهُ قَالَ أَعْلَمُ أَنَّ اللَّهَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने मौत के बाद उठाए जाने की एक अ़ज़ीम दलील बड़ा प्रमाण पेश की है, जिस का हर आदमी क़ियामत के दिन से पहले इसी दुनिया में समझ सकता है और इस दलील को अल्लाह तआ़ला ने जिस आदमी के जिस्म पर किया, उस के बारे में कई क़ौल (कथन) हैं।

एक क़ौल यह है कि वह उ़ज़ैर (अ़लै०) थे, किसी ने कहा वह ख़िज्र (अ़लै०) थे। मुजाहिद का क़ौल है कि वह बनी इस्राईल का एक व्यक्ति था। इसलिए कि वाक़िये के संदर्भ से पता चलता है कि वह आदमी अल्लाह की उस कुद्रत में शुब्हा करता था कि वह मुर्दों को ज़िन्दा करेगा। इसलिए अनुमान यही है कि

वह नबी न था, बल्कि एक आ़लिम इन्सान था जिसे मरने के बाद उठाए जाने में शुब्हा था।

वह व्यक्ति एक ऐसी बस्ती से गुज़रा जो मुकम्मल तौर पर उलट-पुलट हो चुकी थी और उस के रहने वाले सभी लोग मर चुके थे उस के ज़ेहन में यह बात आई कि उन लोगों को अल्लाह अब कैसे ज़िन्दा कर सकता है? तो अल्लाह तआ़ला ने उस के और दूसरे लोगों के ह़ाल पर रह़म करते हुए उसे सौ साल के लिए मुर्दा बना दिया, उस का गधा भी मर गया और उस के पास खाने-पीने की जो चीज़ें थीं वह सब उसी तरह़ बाक़ी रहीं, उन में कोई तब्दीली न आई, जब अल्लाह ने उसे दोबारा ज़िन्दा किया तो उस से पूछा कि कितने दिन तुम इस ह़ाल में बाक़ी रहे? उस ने कहा कि एक दिन या उस से भी कम। तब अल्लाह तआ़ला ने उसे बाज़ अम्बिया के ज़रिये ख़बर दी कि वह सौ साल मुर्दा रहा है, फिर अल्लाह ने उस से कहा कि तुम अपने खाने-पीने की चीज़ें देखो, वह ख़राब नहीं हुई हैं और अपने गधे को देखो, उस के चिथड़े हो चुके हैं और उस की हड्डियाँ सड़ गई हैं, उस के बाद अल्लाह ने उस की आँखों के सामने उस के गधे को ज़िन्दा किया, तो बोल उठा कि मुझे यक़ीन हो गया कि अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है और यक़ीनन हर व्यक्ति बशर को क़ियामत के दिन ज़िन्दा करेगा।

260 وَإِذْ قَالَ إِبْرَٰهِـۧمُ رَبِّ أَرِنِى كَيْفَ تُحْىِ ٱلْمَوْتَىٰ ۖ قَالَ أَوَلَمْ تُؤْمِن ۖ قَالَ بَلَىٰ وَلَٰكِن لِّيَطْمَئِنَّ
قَلْبِى ۖ قَالَ فَخُذْ أَرْبَعَةً مِّنَ ٱلطَّيْرِ فَصُرْهُنَّ إِلَيْكَ ثُمَّ ٱجْعَلْ عَلَىٰ كُلِّ جَبَلٍ مِّنْهُنَّ جُزْءًا
ثُمَّ ٱدْعُهُنَّ يَأْتِينَكَ سَعْيًا ۚ وَٱعْلَمْ أَنَّ ٱللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٢٦٠﴾

मरने के बाद दोबारा उठाये जाने की दलील-

यह मरने के बाद उठाये जाने की दूसरी अ़ज़ीम दलील है, जिस को अल्लाह तआ़ला ने ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) के हाथों किया। ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने अल्लाह से सवाल किया कि ऐ अल्लाह! मैं इन आँखों से देखना चाहता हूँ कि तू मुर्दों को कैसे ज़िन्दा करता है? अल्लाह तआ़ला ने कहा कि क्या इस ह़क़ीक़त पर तुम्हारा ईमान नहीं है? ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने कहा कि ऐ रब! मेरा ईमान है कि तू मुर्दों को ज़िन्दा करेगा और उन्हें नेकी व बदी का बदला देगा, लेकिन इस ह़क़ीक़त के बारे में 'ऐ़नुल यक़ीन' का दर्जा ह़ासिल करना चाहता हूँ तो अल्लाह ने उन की दुआ़ क़ुबूल कर ली और कहा कि "चार चिड़ियों को ज़ब्ह़ करके उन के गोश्त को एक साथ मिला दो और उन्हें मुख़्तलिफ़ पहाड़ों पर डाल दो, फिर उन्हें बुलाओ वह तुम्हारे पास उड़ती चली आएँगी।" ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने ऐसा ही किया और वह सब उड़ती हुई उन के पास आ गईं।

जम्हूर अहले इ़ल्म का ख़याल है कि ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) को इस के बारे में शुब्हा नहीं था कि अल्लाह मुर्दों को ज़िन्दा करने पर क़ादिर नहीं है, बल्कि उन का मक़्सूद यह था कि क़ुद्‌रते इलाहिया का मुज़ाहिरा अपनी आँखों से देखकर मज़ीद दिल को सुकून और यक़ीन ह़ासिल करें, जैसे कि नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया है, कि "कोई ख़बर आँखों से देख लेने की जैसी नहीं है।" **(मुस्नद अह़मद)**

261 مَثَلُ الَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ كَمَثَلِ حَبَّةٍ اَنْۢبَتَتْ سَبْعَ سَنَابِلَ فِيْ كُلِّ سُنْۢبُلَةٍ مِّائَةُ حَبَّةٍ ؕ وَاللّٰهُ يُضٰعِفُ لِمَنْ يَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۝

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने अपनी राह में ख़र्च करने की तर्ग़ीब दिलाई है और यहाँ **"फ़ी सबीलिल्लाह"** से मुराद हर वह रास्ता है जो अल्लाह तक पहुँचाए। जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह, मुसलमानों के लिए नफ़ा बख़्श (देने वाला) आ़माल, मुफ़ीद उ़लूम की नश्र व इशाअ़त (प्रकाशन) और फ़ुक़रा व मसाकीन पर ख़र्च करना अल्लाह की राह में ख़र्च करना है और इन नेकियों को अल्लाह तआ़ला बढ़ा देता है। सह़ीह़ैन में ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) की रिवायत है, रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कि इब्ने आदम के नेक काम को अल्लाह तआ़ला बढ़ाता है। एक नेकी दस गुना से लेकर सात सौ गुना तक बढ़ती है।

इब्ने मसऊद (रज़ि०) की रिवायत है कि एक आदमी एक ऊँट लेकर रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास आया और कहा कि इसे मैं अल्लाह की राह में दे रहा हूँ, तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि इस के बदले तुम्हें क़ियामत के दिन अल्लाह सात सौ ऊँटनियाँ देगा। **(अह़मद, मुस्लिम, नसई, ह़ाकिम)**

फ़रमाने रसूल (सल्ल०) है अल्लाह तआ़ला सिर्फ़ पाक माल क़ुबूल करता है। जिस ने अपने पाक माल से एक खजूर के बराबर सद्क़ः किया और अल्लाह तआ़ला उसे अपने हाथ में ले लेता है और उस की यूँ नशोनुमा (निगरानी) फ़रमाता है, जैसे तुम अपने बछड़े की नशोनुमा करते हो। यहाँ तक कि वह खजूर पहाड़ के बराबर हो जाती है। **(बुख़ारी)**

262 اَلَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ثُمَّ لَا يُتْبِعُوْنَ مَآ اَنْفَقُوْا مَنًّا وَّلَآ اَذًى ۙ لَّهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ ۚ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने यह ख़बर दी है कि अगर (अल्लाह की राह में ख़र्च) सिर्फ़ अल्लाह की रज़ा के लिए हो और ख़र्च करने वाले ज़रूरतमन्दों को देने के बाद एह़सान न जताएँ और न दूसरों से उस का ज़िक्र करके उस आदमी को तक्लीफ़ पहुँचाए जिस पर ख़र्च किया है, तो अल्लाह तआ़ला उन को ख़ास बदला अ़ता फ़रमाएगा और न उन्हें ख़ौफ़ होगा न ग़म। **(मुस्लिम)**

263 قَوْلٌ مَّعْرُوْفٌ وَّمَغْفِرَةٌ خَيْرٌ مِّنْ صَدَقَةٍ يَّتْبَعُهَآ اَذًى ؕ وَاللّٰهُ غَنِيٌّ حَلِيْمٌ ۝

इसी लिए अल्लाह ने इस के बाद फ़रमाया कि अगर आदमी सायल (माँगने वाला) को कुछ न दे सके तो अच्छे अन्दाज़ में मअ़ज़रत (क्षमा चाह ले) कर दे और अगर सायल किसी बात के ज़रिये तक्लीफ़ पहुँचाए तो उसे दरगुज़र (Avoid) कर दे। यह ऐसे सद्क़े व ख़ैरात से कहीं बेहतर है, जिस के बाद ज़रूरतमन्द को तक्लीफ़ पहुँचाए, एह़सान जताये और लोगों से बयान करता फिरे कि मैंने फ़लाँ आदमी को सद्क़ा दिया है।

सह़ीह़ मुस्लिम में अबूज़र ग़िफ़ारी (रज़ि०) की रिवायत है, रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन अल्लाह तआ़ला तीन आदमी से न बात करेगा और न उन की तरफ़ देखेगा और न

उन्हें पाक करेगा और उन के लिए दर्दनाक अ़ज़ाब होगा (वह वह होगा) एह़सान जताने वाला, अपनी लूंगी या पायजामा टख्ने से नीचे पहनने वाला और अपना सामाने तिजारत झूठी क़सम के ज़रिये बेचने वाला। **(मुस्लिम)**

ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि फ़रमाने रसूल (सल्ल०) है, अच्छी बात भी सद्क़ः है। **(बुख़ारी व मुस्लिम)**

264 يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُبْطِلُوْا صَدَقٰتِكُمْ بِالْمَنِّ وَالْاَذٰى ۙ كَالَّذِيْ يُنْفِقُ مَالَهٗ رِئَاۗءَ النَّاسِ وَلَا
يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۭ فَمَثَلُهٗ كَمَثَلِ صَفْوَانٍ عَلَيْهِ تُرَابٌ فَاَصَابَهٗ وَابِلٌ فَتَرَكَهٗ صَلْدًا ۭ
لَا يَقْدِرُوْنَ عَلٰي شَيْءٍ مِّمَّا كَسَبُوْا ۭ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكٰفِرِيْنَ ۝

इस आयत में और इस के बाद आने वाली दोनों आयतों में अल्लाह तआ़ला ने माल ख़र्च करने वालों की तीन क़िस्में बताई हैं फिर उन की तीन मिसालें बयान की हैं।

पहली क़िस्म-

पहली क़िस्म उन लोगों की है जो सिर्फ़ लोगों को दिखावे के लिए माल ख़र्च करते हैं, अल्लाह पर उन का ईमान नहीं होता और न उन की नियत सवाब की होती है, उन का दिल सख़्त और चिकने पत्थर की तरह़ होता है, जिस पर मिट्टी जमा होती है। देखने वाला समझता है कि जब बारिश होगी तो उस में पौधे उगेंगे, लेकिन जब बारिश होती है तो मिट्टी धुल जाती है और सख़्त पत्थर बाक़ी रह जाता है। यह मिसाल उस आदमी के दिल की है जो लोगों को दिखावे के लिए ख़र्च करता है, जो ईमान से दूर और सख़्त दिल होता है, न अल्लाह की याद से नर्म होता है और न उस के ख़ौफ़ से उस में ख़ुशूअ़ व ख़ुज़ूअ़ (लगन से) पैदा होता है।

265 وَمَثَلُ الَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمُ ابْتِغَاۗءَ مَرْضَاتِ اللّٰهِ وَتَثْبِيْتًا مِّنْ اَنْفُسِهِمْ كَمَثَلِ جَنَّةٍۢ بِرَبْوَةٍ
اَصَابَهَا وَابِلٌ فَاٰتَتْ اُكُلَهَا ضِعْفَيْنِ ۚ فَاِنْ لَّمْ يُصِبْهَا وَابِلٌ فَطَلٌّ ۭ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ ۝

दूसरी क़िस्म-

दूसरी क़िस्म उन लोगों की है जो अल्लाह की रज़ा के लिए सच्चे दिल से ख़र्च करते हैं, उन की मिसाल बुलन्द और ऊँची जगह पर पाये जाने वाले उस बाग़ की है, जो हवा और सूरज की गर्मी से फ़ायदा उठाते हैं, और वहाँ पानी भी ख़ूब पाया जाता है। इसलिए पैदावार दो गुनी होती है और अगर पानी उसे सैराब नहीं कर पाता तो शबनम (ओस) ही से सैराबी हो जाती है इसलिए कि उस बाग़ की मिट्टी इतनी अच्छी होती है कि वही शबनम इस बाग़ के दरख़्तों के बढ़ने और लहलहाने के लिए काफ़ी हो जाती है।

266 اَيَوَدُّ اَحَدُكُمْ اَنْ تَكُوْنَ لَهٗ جَنَّةٌ مِّنْ نَّخِيْلٍ وَّاَعْنَابٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ۙ لَهٗ فِيْهَا
مِنْ كُلِّ الثَّمَرٰتِ ۙ وَاَصَابَهُ الْكِبَرُ وَلَهٗ ذُرِّيَّةٌ ضُعَفَاۗءُ ښ فَاَصَابَهَآ اِعْصَارٌ فِيْهِ نَارٌ فَاحْتَرَقَتْ ۭ

كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ الْاٰيٰتِ لَعَلَّكُمْ تَتَفَكَّرُوْنَ ﴿۲۶۶﴾

तीसरी क़िस्म-

तीसरी क़िस्म उन लोगों की है जो ख़र्च तो करते हैं अल्लाह के लिए, लेकिन उस के बाद एह़सान जताते हैं और लोगों को बता-बता कर साह़िबे ह़ाजत (ज़रूरतमन्द) को तक्लीफ़ पहुँचाते हैं और इस तरह़ अपना अ़मल ज़ाया (बेकार) कर देते हैं। ऐसे लोगों की मिसाल उस आदमी की तरह है जिस के पास खजूरों और अंगूरों का बाग़ हो जिस के नीचे नहरें जारी हों और जिस में हर क़िस्म के फल हों और बाग़ वाला बूढ़ा हो चुका हो और उस के पास छोटे-छोटे बच्चे हों, अचानक एक सख़्त आँधी आये और उसमें आग के अंगारे हों और उस बाग़ को जला दें और बाग़ वाले को कुछ भी हाथ न आये।

दुनिया में नेक आ़माल करने वाले इन्हीं तीनों क़िस्मों में से एक क़िस्म के होते हैं। मुसलमान को चाहिए कि अपनी नियत का मुह़ासिबा (ह़िसाब) करता रहे और हर मुम्किन कोशिश करे कि उस का हर नेक अ़मल सिर्फ़ अल्लाह की रज़ा (ख़ुशी) के लिए हो, ताकि आख़िरत में ज़िल्लत व रुसवाई और ख़सारे (नुक़सान) का मुँह न देखना पड़े।

ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) से रिवायत है कि एक मालदार शख़्स की मिसाल ऐसी है जो अल्लाह की इताअ़त (फ़रमाँबरदारी) में अ़मल करता रहता है। फिर अल्लाह शैतान को उस पर ग़ालिब कर देता है तो वह गुनाहों में मसरूफ़ (व्यस्त) हो जाता है और उसके नेक आ़माल वग़ैरह सब फ़ना (ख़त्म) हो जाते हैं। **(बुख़ारी)**

आयत नं० 267 से 274 तक

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اَنْفِقُوْا مِنْ طَيِّبٰتِ مَا كَسَبْتُمْ وَمِمَّاۤ اَخْرَجْنَا لَكُمْ مِّنَ الْاَرْضِ ۪ وَلَا تَيَمَّمُوا الْخَبِيْثَ مِنْهُ تُنْفِقُوْنَ وَلَسْتُمْ
بِاٰخِذِيْهِ اِلَّاۤ اَنْ تُغْمِضُوْا فِيْهِ ؕ وَاعْلَمُوْۤا اَنَّ اللّٰهَ غَنِىٌّ حَمِيْدٌ ۝ اَلشَّيْطٰنُ يَعِدُكُمُ الْفَقْرَ وَيَاْمُرُكُمْ بِالْفَحْشَآءِ ۚ وَاللّٰهُ يَعِدُكُمْ
مَّغْفِرَةً مِّنْهُ وَفَضْلًا ؕ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۝ يُّؤْتِى الْحِكْمَةَ مَنْ يَّشَآءُ ۚ وَمَنْ يُّؤْتَ الْحِكْمَةَ فَقَدْ اُوْتِىَ خَيْرًا كَثِيْرًا ؕ وَمَا
يَذَّكَّرُ اِلَّاۤ اُولُوا الْاَلْبَابِ ۝ وَمَاۤ اَنْفَقْتُمْ مِّنْ نَّفَقَةٍ اَوْ نَذَرْتُمْ مِّنْ نَّذْرٍ فَاِنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُهٗ ؕ وَمَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ
اَنْصَارٍ ۝ اِنْ تُبْدُوا الصَّدَقٰتِ فَنِعِمَّا هِىَ ۚ وَاِنْ تُخْفُوْهَا وَتُؤْتُوْهَا الْفُقَرَآءَ فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ؕ وَيُكَفِّرُ عَنْكُمْ مِّنْ سَيِّاٰتِكُمْ ؕ
وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرٌ ۝ لَيْسَ عَلَيْكَ هُدٰىهُمْ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يَهْدِىْ مَنْ يَّشَآءُ ؕ وَمَا تُنْفِقُوْا مِنْ خَيْرٍ فَلِاَنْفُسِكُمْ ؕ وَمَا
تُنْفِقُوْنَ اِلَّا ابْتِغَآءَ وَجْهِ اللّٰهِ ؕ وَمَا تُنْفِقُوْا مِنْ خَيْرٍ يُّوَفَّ اِلَيْكُمْ وَاَنْتُمْ لَا تُظْلَمُوْنَ ۝ لِلْفُقَرَآءِ الَّذِيْنَ اُحْصِرُوْا فِىْ
سَبِيْلِ اللّٰهِ لَا يَسْتَطِيْعُوْنَ ضَرْبًا فِى الْاَرْضِ ؗ يَحْسَبُهُمُ الْجَاهِلُ اَغْنِيَآءَ مِنَ التَّعَفُّفِ ۚ تَعْرِفُهُمْ بِسِيْمٰهُمْ ۚ لَا يَسْـَٔلُوْنَ النَّاسَ
اِلْحَافًا ؕ وَمَا تُنْفِقُوْا مِنْ خَيْرٍ فَاِنَّ اللّٰهَ بِهٖ عَلِيْمٌ ۝ اَلَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ بِالَّيْلِ وَالنَّهَارِ سِرًّا وَّعَلَانِيَةً فَلَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ
رَبِّهِمْ ۚ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝

अनुवाद-

(267) ऐ ईमान वालो! अपनी कमाई को पाक और अच्छी चीज़ों में खर्च करो और उन चीज़ों में से भी, जो हमने ज़मीन से तुम्हारे लिए निकाली हैं, और ख़राब चीज़ों के देने का इरादा भी न करना, और तुम खुद भी (दिये जाने पर) उनको न लोगे, मगर यह कि आँखें ही बन्द कर लो, और जान लो कि, अल्लाह बेपरवाह (निस्पृह) हम्द के लायक़ (प्रशंसनीय) है। (268) शैतान तुम्हें मुहताजी से डराता है, और बेशर्मी के कामों में उभारता है, जबकि अल्लाह अपनी ओर से माफ़ी और रहम (कृपा) का, तुम से वादा करता है और अल्लाह बड़ी वुसअ़त (समाई) वाला, खूब जानने वाला है। (269) 'वह' जिसे चाहता है हिक़मत अता करता है, और जिसे हिक़मत अता हो गई, बेशक उसको बड़ी नेअ़मत मिल गई, और नसीहत तो वही लोग कु़बूल करते हैं, जो अक़्लमंद हैं। (270) और तुम जो कुछ ख़र्च करते हो, या जो भी नज़र (मन्नत) मानते हो अल्लाह उसे जानता है, और ज़ालिमों का कोई मदद्गार नहीं। (271) अगर तुम खुले रूप में सदक़े दो तो यह अच्छा है, और अगर छिपाकर मुहताजों को दो, तो यह तुम्हारे लिए और बेहतर है, और (वह) तुम्हारे गुनाहों को भी दूर कर देगा, और अल्लाह को तुम्हारे कामों की खूब ख़बर है। (272) (ऐ मुहम्मद!) उन लोगों की हिदायत (सत्य मार्ग) के आप ज़िम्मेदार नहीं हैं बल्कि अल्लाह ही जिसको चाहता है हिदायत देता है, और तुम जो कुछ माल में से ख़र्च करोगे, तो अपने ही लिए, और तुम अल्लाह ही को राज़ी करने के लिए ख़र्च करते हो, और तुम माल में से जो कुछ ख़र्च करते हो (सब) तुम को पूरा-पूरा लौटा दिया जाएगा, और तुम पर कोई जुल्म न होगा। (273) यह उन मुहताजों के लिए है, जो अल्लाह के रास्ते में घिर गये हैं, मुल्क में कहीं चल फिर नहीं सकते, और माँगने में शर्म करते हैं, यहाँ तक कि न माँगने की वजह से अन्जान आदमी उनको मालदार ख़याल करता है, और तुम उन्हें उनके लक्षण से पहचान सकते हो, वे लिपट कर लोगों से नहीं माँगते, और जो माल भी तुम ख़र्च करोगे, अल्लाह उस को खूब जानने वाला है। (274) जो लोग अपना माल रात

और दिन छिपे और खुले ख़र्च करते रहते हैं, तो उन का बदला उनके रब के पास है, और न उनके लिए कोई डर है, और न वह ग़मगीन होंगे।

आयत नं० 267 से 274 तक की व्याख्या

267 يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا أَنْفِقُوا مِنْ طَيِّبَاتِ مَا كَسَبْتُمْ وَمِمَّا أَخْرَجْنَا لَكُمْ مِنَ الْأَرْضِ ۖ وَلَا تَيَمَّمُوا
الْخَبِيثَ مِنْهُ تُنْفِقُونَ وَلَسْتُمْ بِآخِذِيهِ إِلَّا أَنْ تُغْمِضُوا فِيهِ ۚ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ غَنِيٌّ حَمِيدٌ ۝

अल्लाह तआ़ला ने बन्दों को हुक्म दिया है कि वह अल्लाह की राह में अपना बेहतरीन माल ख़र्च करें, चाहे वह माल बज़रिये तिजारत हा़सिल हुआ हो, या खेतों से हा़सिल शुदा ग़ल्ला हो, क्योंकि ईमान का यही तक़ाज़ा है। इसीलिए अल्लाह तआ़ला ने दूसरी जगह फ़रमाया–

"कि जब तक तुम पसंदीदा चीज़ को अल्लाह की राह में ख़र्च न करोगे तो हरगिज़ भलाई न पाओगे।"

रद्दी और गला सड़ा माल अल्लाह की राह में नहीं देना चाहिए। इसलिए कि अल्लाह तय्यब और पाक है, उम्दह और अच्छा माल ही क़ुबूल करता है। इसीलिए अल्लाह ने फ़रमाया कि ख़राब माल अल्लाह की राह में ख़र्च न करो, हा़लांकि ख़ुद तुम्हारा हा़ल यह है कि अगर कोई तुम्हारा क़र्ज़ चुकाने के लिए माल दे तो तुम उसे आसानी से क़ुबूल न करोगे, आँखें बन्द करके सिर्फ़ जबरन ही क़ुबूल करोगे।

"बराअ़ बिन आ़ज़िब (रज़ि०) से रिवायत है कि यह आयत अन्सार के बारे में नाज़िल हुई थी। खजूर पकने के ज़माने में लोग मस्जिदे नबवी में दो रस्सी से खजूर के गुच्छे लटका देते, ताकि ग़रीब मुहाजिरीन खाया करें। कुछ लोग इन गुच्छों में रद्दी खजूरों के गुच्छे मिला देते थे और समझते थे कि ऐसा करना जायज़ है। अल्लाह तआ़ला ने उन को तम्बीह फ़रमाई कि ऐसा करना जायज़ नहीं है।"

(तिर्मिज़ी, इब्ने माजा, हा़किम, बैहक़ी)

कुछ लोगों ने कहा है कि इस से मुरादे माले ह़राम है, कि अल्लाह की राह में ह़राम माल न ख़र्च करो। हा़फ़िज़ इब्ने कसीर (रह़०) कहते हैं कि पहला क़ौल ही सह़ी है। **(तफ़्सील के लिए देखें आले इमरान-92)**

यानी अल्लाह की राह में न ह़राम माल ख़र्च करो और न ही रद्दी माल।

ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला पाक है और सिर्फ़ पाक ही क़ुबूल करता है।" **(मुस्लिम)**

ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) फ़रमाते हैं, "हर रोज़ दो फ़रिश्ते उतरते हैं। एक कहता है, ऐ अल्लाह! ख़र्च करने वाले को नेअ़मुल् बदल (बदले की नेअ़मत) अ़ता फ़रमा और दूसरा कहता है, ऐ अल्लाह! गिन-गिन कर रखने वाले का माल बर्बाद कर दे।" **(बुख़ारी)**

ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं, "ऐ इब्ने आदम ख़र्च कर, मैं तुझ पर ख़र्च करूँगा।" **(बुख़ारी)**

268 الشَّيْطٰنُ يَعِدُكُمُ الْفَقْرَ وَيَأْمُرُكُمْ بِالْفَحْشَآءِ ۚ وَاللّٰهُ يَعِدُكُمْ مَّغْفِرَةً مِّنْهُ وَفَضْلًا ۗ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۝

इस आयते करीमा में अल्लाह तआ़ला ने यह ह़क़ीक़त वाज़ेह की है कि मुसलमान दो दअ़वत देने वालों के दर्मियान होता है। एक अल्लाह का दाअ़ी होता है जो उसे भलाई की तरफ़ बुलाता है और भलाई, सवाब और ख़र्च किये हुए माल के नेअ़मुल् बदल का वादा करता है और दूसरा शैतान का दाअ़ी होता है, जो उसे कन्जूसी पर उक्साता है और मोह़ताजी से डराता है तो जो कोई अल्लाह की पुकार पर लब्बैक कहता है और उस की दी हुई रोज़ी में से उस की राह में ख़र्च करता है, अल्लाह उसे गुनाहों की मग़्फ़िरत और हर मक़्सद के ह़ासिल होने की ख़ुशख़बरी देता है और जो कोई शैतान की बात मान कर अल्लाह की राह में ख़र्च नहीं करता, वह अपने लिए जहन्नम की राह हमवार (तैयार) करता है।

269 يُّؤْتِي الْحِكْمَةَ مَنْ يَّشَآءُ ۚ وَمَنْ يُّؤْتَ الْحِكْمَةَ فَقَدْ اُوْتِيَ خَيْرًا كَثِيْرًا ۗ وَمَا يَذَّكَّرُ اِلَّآ اُولُوا الْاَلْبَابِ ۝

सद्क़ात व ख़ैरात और अल्लाह की राह में ख़र्च करने वालों के अमवाल, अज्र व सवाब का ज़िक्र हो चुका, तो अब एक ऐसी नेअ़मत का ज़िक्र हो रहा है, जो उन सब से अफ़्ज़ल है और वह है "ह़िक्मत"। इसीलिए इस के बाद अल्लाह ने फ़रमाया कि जिसे अल्लाह ने ह़िक्मत दे दी उसे ख़ैरे कसीर (बड़ी भलाई) से नवाज़ दिया। इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा के नज़्दीक "ह़िक्मत" से मुराद 'फ़हम-ए-क़ुर्आन' है।

'मुजाहिद' कहते हैं कि इस से मुराद फ़िक़ः और क़ुर्आन है। इमाम मालिक के नज़्दीक "ह़िक्मत" फ़िक़ः फ़िद्दीन और ऐसी चीज़ को कहते हैं जिसे अल्लाह अपने फ़ज़्ल व करम से दिलों में डाल देता है। इस आयत में इशारा है कि जो शैतान के वादों के धोके में नहीं आता और अल्लाह के वादों पर यक़ीन रखता है, ह़क़ीक़त में अल्लाह तआ़ला ही उसे ह़िक्मत जैसी दौलत से नवाज़ देता है। ह़िक्मत का तक़ाज़ा यह है कि आदमी अल्लाह की राह में पाकीज़ा माल ख़र्च करे।

ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) रिवायत करते हैं, मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) को कहते हुए सुना है कि ह़सद (ईर्ष्या) दो चीज़ों में जायज़ है। अल्लाह ने एक आदमी को माल दिया जिसे वह राहे ह़क़ में ख़ूब ख़र्च करता है और दूसरा वह आदमी जिसे अल्लाह ने ह़िक्मत दी तो उस के मुताबिक़ वह लोगों के दर्मियान फ़ैसले करता है और उन्हें इस की तअ़लीम देता है। **(मुस्नद अह़मद, बुख़ारी, मुस्लिम)**

270 وَمَآ اَنْفَقْتُمْ مِّنْ نَّفَقَةٍ اَوْ نَذَرْتُمْ مِّنْ نَّذْرٍ فَاِنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُهٗ ۗ وَمَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ اَنْصَارٍ ۝

अल्लाह के रास्ते में ख़र्च-

अल्लाह की राह में लोग जो कुछ ख़र्च करते हैं, सद्क़ः करते हैं, या नज़्राना पेश करते हैं अल्लाह उन्हें ख़ूब जानता है और इस इ़ल्म का नतीजा यह है कि अल्लाह उन्हें उन आ़माल का अच्छा बदला अ़ता फ़रमाएगा और यह कि किसी का एक ज़र्रा के बराबर भी अ़मल ज़ाया नहीं होगा और जो कुछ

ज़ालिम लोग उन पर वाजिब किये हुए हुक़ूक़ को अदा नहीं करते या हराम काम करते हैं, अल्लाह का अ़ज़ाब उन्हें पकड़ लेगा और कोई उनका मददगार नहीं होगा।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने हमें नज़र मानने से मना फ़रमाया है और फ़रमाया है कि नज़र अल्लाह की तक़्दीर से कुछ भी नहीं बदल सकती। अलबत्ता इस तरह बख़ील (कंजूस) से कुछ माल निकाल लिया जाता है। **(बुख़ारी)**

271 إِن تُبْدُوا الصَّدَقَاتِ فَنِعِمَّا هِيَ ۖ وَإِن تُخْفُوهَا وَتُؤْتُوهَا الْفُقَرَاءَ فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ وَيُكَفِّرُ عَنكُم مِّن
سَيِّئَاتِكُمْ ۗ وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرٌ ﴿٢٧١﴾

आयत के इस हिस्से में इस बात की दलील दी गई है कि सद्क़ः को छुपाना अफ़्ज़ल है ताकि रियाकारी (दिखावा) का शुब्हा न रहे। लेकिन अगर ज़ाहिर करने में कोई दीनी मस्लहत हो, जैसे नियत यह हो कि ख़ैर के कामों में दूसरे लोग इस की पैरवी (Follow) करें तो ज़ाहिर करना ही अफ़्ज़ल होगा। इसलिए जम्हूर मुफ़स्सिरीन की राय है कि छुपाने की अफ़्ज़लियत नफ़्ली सद्क़े के साथ ख़ास है। फ़र्ज़ सद्क़ात व ज़कात में ज़ाहिर करना ही अफ़्ज़ल है।

सहीहैन में हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि सात क़िस्म के लोगों को अल्लाह तआ़ला क़ियामत के दिन अपने अ़र्श के साये में जगह देगा, जिस दिन और कोई साया न होगा। उन में एक वह आदमी होगा जिस ने सद्क़ः दे कर छिपाया, यहाँ तक कि उस के बाएँ हाथ ने न जाना कि दाएँ हाथ ने क्या ख़र्च किया।

272 لَّيْسَ عَلَيْكَ هُدَاهُمْ وَلَٰكِنَّ اللَّهَ يَهْدِي مَن يَشَاءُ ۗ وَمَا تُنفِقُوا مِنْ خَيْرٍ فَلِأَنفُسِكُمْ ۚ وَمَا تُنفِقُونَ
إِلَّا ابْتِغَاءَ وَجْهِ اللَّهِ ۚ وَمَا تُنفِقُوا مِنْ خَيْرٍ يُوَفَّ إِلَيْكُمْ وَأَنتُمْ لَا تُظْلَمُونَ ﴿٢٧٢﴾

इस से मक़्सूद मोमिनों को अल्लाह के हुक्मों की इताअ़त पर उभारना और उन्हें यह बताना है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) लोगों को राहे रास्त पर चलाने के मुकल्लफ़ (पाबन्द) नहीं हैं। यह तो अल्लाह का काम है, रसूलुल्लाह (सल्ल०) का काम तो लोगों को सिर्फ़ रास्ता बता देना है।

और जो अल्लाह की राह में ख़र्च करेगा, क़ियामत के दिन उस का हक़ीक़ी फ़ायदा उसी को पहुँचेगा, इसलिए मुहताजों पर इस का एहसान न जताए और नियत इस से सिर्फ़ अल्लाह की रज़ा रखें और अल्लाह सद्क़ात व ख़ैरात का सवाब कई गुना ज़्यादा देता है। अल्लाह तआ़ला न किसी की नेकियों को कम करता है और न किसी के गुनाहों को ज़्यादा करता है।

इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है शुरु में मुसलमान अपने ग़ैर मुस्लिम रिश्तेदारों के साथ हुस्ने सुलूक को ऐ़ब जानते थे, उन्होंने इस बारे में पूछा तो उन्हें इस आयत के ज़रिये इजाज़त दे दी गई। **(नसई)**

273 لِلْفُقَرَاءِ الَّذِينَ أُحْصِرُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ لَا يَسْتَطِيعُونَ ضَرْبًا فِي الْأَرْضِ يَحْسَبُهُمُ الْجَاهِلُ أَغْنِيَاءَ مِنَ
التَّعَفُّفِ تَعْرِفُهُم بِسِيمَاهُمْ لَا يَسْأَلُونَ النَّاسَ إِلْحَافًا ۗ وَمَا تُنفِقُوا مِنْ خَيْرٍ فَإِنَّ اللَّهَ بِهِ عَلِيمٌ ﴿٢٧٣﴾

लोगों से सवाल करना-

अल्लाह तआ़ला ने माल वालों को हुक्म दिया है कि वह अपना माल उन फ़क़ीरों और मुह़ताजों पर ख़र्च करें जिन्होंने अल्लाह की राह में जिहाद करने के लिए या दिन रात उस की बन्दगी करने के लिए अपनी ज़िन्दगी वक्फ़ कर रखी है।

इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा फ़रमाते हैं कि यहाँ मुराद अस्हाबे सुफ़्फ़ा हैं। ह़ाफ़िज़ इब्ने कसीर ने इन से मुराद वह तमाम मुहाजिरीन लिए हैं जो मदीना मुनव्वरह में आकर क़ियाम किये थे और तिजारत व माल के ह़ासिल करने के अस्बाब उन से ख़त्म हो चुके थे।

नोट- इस आयते करीमा में मोमिनीन मुहाजिरीन की यह सिफ़त बताई गई है कि वह अपनी ज़रूरत व ह़ाजत के बावजूद लोगों से ज़िल्लत के साथ नहीं माँगते। इस्लाम ने शिद्दते ज़रुरत के वक़्त सवाल करने को जायज़ क़रार दिया है और बग़ैर ज़रूरत सवाल करने की बड़ी मज़म्मत की है।

बुख़ारी और मुस्लिम में इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "एक आदमी हमेशा माँगता रहेगा, यहाँ तक कि जब क़ियामत का दिन आएगा तो उस के चेहरे पर गोश्त का एक टुकड़ा भी न होगा।"

इस तरह़ और भी ह़दीसें हैं जिन में लोगों से सवाल करने की बड़ी मनाही आई है। इमाम मुस्लिम ने ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत की है, रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जो शख़्स अपना माल बढ़ाने के लिए लोगों से माँगता है वह जहन्नम की आग माँगता है।"

ह़ज़रत सौबान (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि मुझ से रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया,

"कौन है जो मुझे यह ज़मानत दे कि कभी किसी से सवाल न करेगा। मैं उसे जन्नत की ज़मानत देता हूँ।" मैंने कहा मैं इस बात की ज़मानत देता हूँ। **(नसई)**

ह़ज़रत अबू सई़द ख़ुद्‌री (रज़ि०) कहते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जो शख़्स सवाल से बचेगा, अल्लाह भी उसे बचा लेगा। जो कोई (दुनिया से) बेपरवाई करेगा, अल्लाह उसे बेपरवाह कर देगा। जो कोई कोशिश से सब्र करेगा अल्लाह उसे सब्र देगा और सब्र से बेहतर और किसी को कोई नेअ़मत नहीं मिली।" **(बुख़ारी)**

ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मिस्कीन वह नहीं जो कि दो खजूरें लेता रहता है या एक या दो लुक़्मे लेता रहता है, मगर मिस्कीन वह है जो सफ़ेदपोशी में रहता है।" **(मुस्लिम)**

274 اَلَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ بِالَّيْلِ وَالنَّهَارِ سِرًّا وَّعَلَانِيَةً فَلَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ ۚ وَلَا خَوْفٌ
عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝

अल्लाह की रज़ा के लिए माल ख़र्च करने वालों की तअ़रीफ़ की गई है और आयत में रात को दिन पर और पोशीदा को एलानिया पर, करने से मक़्सूद इस बात की तरफ़ इशारा करना है कि छुपे तौर पर

देना अफ़्ज़ल है। घरवालों पर ख़र्च करना भी इस में शामिल है।

सहीहैन में रिवायत है, रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने सअ़्द बिन वक़ास (रज़ि०) से फ़रमाया कि, “रज़ा-ए-इलाही के लिए तुम जो भी ख़र्च करोगे, उस से अल्लाह के नज़्दीक तुम्हारा मक़ाम बुलन्द होगा, यहाँ तक कि वह लुक़्मा जो तुम अपनी बीवी के मुँह में डालोगे।”

नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया, “सात ऐसे शख़्स हैं, जिन को अल्लाह तआ़ला उस दिन अपना साया अ़ता फ़रमाएगा जिस दिन उस के साये के सिवा कोई साया न होगा।

1- आ़दिल (इन्साफ़ पसन्द) बादशाह।

2- वह नौजवान जो अल्लाह की अ़िबादत में जवान हुआ।

3- ऐसा शख़्स जिस का दिल मस्जिद में लगा रहे (यानी उन में आने-जाने के लिए बेक़रार रहे।)

4- वह दो मर्द जो आपस में सिर्फ़ अल्लाह के लिए मुहब्बत करते हों (और यही ग़र्ज़ उन की मक़्सूद मतलूब हो) और उसी (बुनियाद) पर इकट्ठे हों और उसी पर जुदा हों।

5- और ऐसा इन्सान जिस को किसी मालदार, ख़ूबसूरत औ़रत ने (बुरे काम के लिए) दअ़्वत दी तो उस ने कहा कि “मैं अल्लाह से डरता हूँ”।

6- ऐसा इन्सान जिस ने किसी चीज़ का सद्क़ः दिया और उस को ऐसे पोशीदा अन्दाज़ में दिया कि उस के बाएँ हाथ को यह भी इ़ल्म न हो कि उस के दाएँ हाथ ने क्या ख़ैरात की है।

7- ऐसा शख़्स जिस ने तन्हाई की हा़लत में अल्लाह को याद किया तो (अल्लाह के ख़ौफ़ से) उस की आँखों में आँसू आ गये”। **(सही़ह़ बुख़ारी, अल् ज़कात, बाब 16, ह़दीस 1423)**

आयत नं० 275 से 282 तक

الَّذِيْنَ يَاْكُلُوْنَ الرِّبٰوا لَا يَقُوْمُوْنَ اِلَّا كَمَا يَقُوْمُ الَّذِيْ يَتَخَبَّطُهُ الشَّيْطٰنُ مِنَ الْمَسِّ ۚ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوْٓا اِنَّمَا الْبَيْعُ مِثْلُ
الرِّبٰوا ۘ وَاَحَلَّ اللّٰهُ الْبَيْعَ وَحَرَّمَ الرِّبٰوا ۚ فَمَنْ جَآءَهٗ مَوْعِظَةٌ مِّنْ رَّبِّهٖ فَانْتَهٰى فَلَهٗ مَا سَلَفَ ۚ وَاَمْرُهٗٓ اِلَى اللّٰهِ ۚ وَمَنْ عَادَ
فَاُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ النَّارِ ۚ هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ۝ يَمْحَقُ اللّٰهُ الرِّبٰوا وَيُرْبِي الصَّدَقٰتِ ۚ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ كُلَّ كَفَّارٍ اَثِيْمٍ ۝ اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا
وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ لَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ ۚ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ
اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَذَرُوْا مَا بَقِيَ مِنَ الرِّبٰوٓا اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۝ فَاِنْ لَّمْ تَفْعَلُوْا فَاْذَنُوْا بِحَرْبٍ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ۚ وَاِنْ تُبْتُمْ
فَلَكُمْ رُءُوْسُ اَمْوَالِكُمْ ۚ لَا تَظْلِمُوْنَ وَلَا تُظْلَمُوْنَ ۝ وَاِنْ كَانَ ذُوْ عُسْرَةٍ فَنَظِرَةٌ اِلٰى مَيْسَرَةٍ ۚ وَاَنْ تَصَدَّقُوْا خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ
كُنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝ وَاتَّقُوْا يَوْمًا تُرْجَعُوْنَ فِيْهِ اِلَى اللّٰهِ ۗ ثُمَّ تُوَفّٰى كُلُّ نَفْسٍ مَّا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ ۝ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ
اٰمَنُوْٓا اِذَا تَدَايَنْتُمْ بِدَيْنٍ اِلٰٓى اَجَلٍ مُّسَمًّى فَاكْتُبُوْهُ ۚ وَلْيَكْتُبْ بَّيْنَكُمْ كَاتِبٌ ۢ بِالْعَدْلِ ۚ وَلَا يَاْبَ كَاتِبٌ اَنْ يَّكْتُبَ كَمَا
يَكْتُبَ كَمَا عَلَّمَهُ اللّٰهُ فَلْيَكْتُبْ ۚ وَلْيُمْلِلِ الَّذِيْ عَلَيْهِ الْحَقُّ وَلْيَتَّقِ اللّٰهَ رَبَّهٗ وَلَا يَبْخَسْ مِنْهُ شَيْـًٔا ۚ فَاِنْ كَانَ الَّذِيْ عَلَيْهِ الْحَقُّ
سَفِيْهًا اَوْ ضَعِيْفًا اَوْ لَا يَسْتَطِيْعُ اَنْ يُّمِلَّ هُوَ فَلْيُمْلِلْ وَلِيُّهٗ بِالْعَدْلِ ۚ وَاسْتَشْهِدُوْا شَهِيْدَيْنِ مِنْ رِّجَالِكُمْ ۚ فَاِنْ لَّمْ يَكُوْنَا
رَجُلَيْنِ فَرَجُلٌ وَّامْرَاَتٰنِ مِمَّنْ تَرْضَوْنَ مِنَ الشُّهَدَآءِ اَنْ تَضِلَّ اِحْدٰىهُمَا فَتُذَكِّرَ اِحْدٰىهُمَا الْاُخْرٰى ۚ وَلَا يَاْبَ الشُّهَدَآءُ اِذَا مَا دُعُوْا ۚ
وَلَا تَسْـَٔمُوْٓا اَنْ تَكْتُبُوْهُ صَغِيْرًا اَوْ كَبِيْرًا اِلٰٓى اَجَلِهٖ ۚ ذٰلِكُمْ اَقْسَطُ عِنْدَ اللّٰهِ وَاَقْوَمُ لِلشَّهَادَةِ وَاَدْنٰٓى اَلَّا تَرْتَابُوْٓا اِلَّآ اَنْ تَكُوْنَ
تِجَارَةً حَاضِرَةً تُدِيْرُوْنَهَا بَيْنَكُمْ فَلَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَلَّا تَكْتُبُوْهَا ۚ وَاَشْهِدُوْٓا اِذَا تَبَايَعْتُمْ ۚ وَلَا يُضَآرَّ كَاتِبٌ وَّلَا
شَهِيْدٌ ۚ وَاِنْ تَفْعَلُوْا فَاِنَّهٗ فُسُوْقٌ ۢ بِكُمْ ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۚ وَيُعَلِّمُكُمُ اللّٰهُ ۚ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ۝

अनुवाद–

(275) जो लोग ब्याज खाते रहते हैं वे लोग (क़ब्रों से) खड़े न हो सकेंगे मगर जिस तरह़ वह व्यक्ति उठता है, जिसे शैतान ने छूकर बावला कर दिया हो। यह (सज़ा) इसलिए होगी, कि वे कहते हैं कि व्यापार भी तो वैसा ही है जैसे ब्याज (लेना), जबकि अल्लाह ने व्यापार को ह़लाल और ब्याज को हराम किया है, अतः जिस व्यक्ति को उसके रब की ओर से नसीह़त पहुँची और वह बाज़ आ गया, तो जो कुछ पहले हो चुका वह उस का हो चुका, और उसका मामला अल्लाह के हवाले रहा, और जिसने फिर यही काम किया, तो यही लोग दोज़ख़ वाले हैं, उसमें वे हमेशा पड़े रहेंगे। (276) अल्लाह ब्याज को मिटाता है, और सदक़े को बढ़ाता है, और अल्लाह किसी नाशुक्रे गुनहगार को पसंद नहीं करता। (277) जो लोग ईमान लाए और नेक अ़मल करते रहे, और नमाज़ की पाबन्दी की और ज़कात देते रहे, उनका बदला उनके रब के पास है न उन पर कोई डर होगा, और न वह ग़मगीन होंगे। (278) ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो और जो कुछ ब्याज बाक़ी रह गया है उसे छोड़ दो, अगर तुम ईमान वाले हो। (279) फिर अगर तुम ने ऐसा न किया तो ख़बरदार हो जाओ, जंग के लिए अल्लाह और उसके रसूल की ओर से, और अगर तुम तौबः कर लो तो मूल-धन तुम्हारा ही है, न तुम (किसी पर) जुल्म करो, और न तुम पर जुल्म किया जाए। (280) और अगर (क़र्ज़ लेने वाला) तंगी में हो तो (उसे फ़राख़ी या) हाथ खुलने तक मुहलत दो; और अगर सदक़ा

कर दो (अर्थात मूलधन भी न लो) तो यह तुम्हारे लिए बेहतर है, बशर्ते कि समझो। (281) और उस दिन से डरते रहो, जबकि तुम अल्लाह की ओर लौटाए जाओगे, फिर हर व्यक्ति को जो कुछ उसने कमाया था, पूरा-पूरा बदला मिल जाएगा, और उन पर ज़ुल्म (अन्याय) न होगा। (282) ऐ ईमान वालो! जब क़र्ज़ (ऋण) का मामला किसी निश्चित अवधि के लिए करो तो उसे लिख लिया करो, और लिखने वाला तुम्हारे बीच इंसाफ़ से लिखे, और लिखने वाला लिखने से इन्कार न करे, जिस तरह़ अल्लाह ने उसे सिखाया है, (उसी तरह वह दूसरों के लिए लिखने के काम आए,) और बोल कर वह व्यक्ति लिखाए जिसके ज़िम्मे ह़क़ की अदायगी हो, और चाहिए कि वह अपने रब, अल्लाह से डरता रहे, और उसमें से कुछ भी कम न करे फिर अगर वह व्यक्ति जिसके ज़िम्में ह़क़ की अदायगी हो, वह कमसमझ या कमज़ोर हो, या वह बोल कर न लिख सकता हो तो उसके संरक्षक को चाहिए कि वह इंसाफ के साथ बोल कर लिखवा दे, और अपने में से दो मर्दो (पुरूषों) को गवाह बना लिया करो, और अगर दो मर्द न हों, तो एक मर्द और दो औ़रतें, जिन्हें तुम गवाही के लिए पसंद करो, कि अगर एक भूल जाए तो दूसरी उसे याद दिला दे, और गवाहों को जब बुलाया जाए, तो आने से इन्कार न करें, और क़र्ज़ चाहे थोड़ा हो या बहुत एक निश्चित (अवधि तक) के लिए हो, तो उसे लिखने में सुस्ती न करो, यह बात अल्लाह के नज़दीक बहुत ही मुन्सिफ़ाना (न्यायोचित) है, और गवाही के लिए भी यही तरीक़ा बेहतर है, और इससे बहुत उम्मीद है कि तुम किसी संदेह में न पड़ोगे, हाँ अगर कोई सौदा नक़्द हो जिसका लेन-देन तुम आपस में कर रहे हो, तो उसके न लिखने में, तुम पर कोई दोष नहीं, और जब आपस में ख़रीद-फ़रोख़्त का मामला करो तो, उस समय भी गवाह कर लिया करो, और न किसी लिखने वाले को नुक़्सान पहुँचाया जाए, और न किसी गवाह को, और अगर ऐसा करोगे तो यह तुम्हारे लिए गुनाह की बात होगी, और अल्लाह से डरते रहो अल्लाह तुम्हें सिखाता है, और अल्लाह हर चीज़ का खूब जानने वाला है।

आयत नं० 275 से 282 तक की व्याख्या

275 ٱلَّذِينَ يَأْكُلُونَ ٱلرِّبَوٰا۟ لَا يَقُومُونَ إِلَّا كَمَا يَقُومُ ٱلَّذِى يَتَخَبَّطُهُ ٱلشَّيْطَـٰنُ مِنَ ٱلْمَسِّ ۚ ذَٰلِكَ بِأَنَّهُمْ
قَالُوٓا۟ إِنَّمَا ٱلْبَيْعُ مِثْلُ ٱلرِّبَوٰا۟ ۗ وَأَحَلَّ ٱللَّهُ ٱلْبَيْعَ وَحَرَّمَ ٱلرِّبَوٰا۟ ۚ فَمَن جَآءَهُۥ مَوْعِظَةٌ مِّن رَّبِّهِۦ فَٱنتَهَىٰ فَلَهُۥ
مَا سَلَفَ وَأَمْرُهُۥٓ إِلَى ٱللَّهِ ۖ وَمَنْ عَادَ فَأُو۟لَـٰٓئِكَ أَصْحَـٰبُ ٱلنَّارِ ۖ هُمْ فِيهَا خَـٰلِدُونَ ۝

अल्लाह की राह में ख़र्च करने वालों के ह़ालात उन के लिए अज्रे अ़ज़ीम के वादों और उन के गुनाहों की माफ़ी का ज़िक्र हो चुका, तो अब सूद और लोगों का माल ह़राम तरीक़ों से खाने वालों का ज़िक्र हो रहा है और उन के बुरे अन्जाम का बयान हो रहा है जिन का सामना क़ियामत में करना पड़ेगा। जिस तरह वह लोग दुनिया में माले ह़राम के ह़ासिल करने में पागल बन गये थे, बरज़ख़ (मरने के बाद से क़ियामत तक का समय) में और रोज़े क़ियामत में अपनी क़ब्रों से इस तरह उठेंगे जैसे उन्हें शैतानी असर की वजह से जुनून हो गया हो और यह सज़ा उन्हें इसलिए मिलेगी कि वह कहते थे कि बैअ़ (ख़रीद फ़रोख़्त) रिबा (सूद) की तरह है और इस तरह़ ह़लाल व ह़राम को एक जैसा बनाते थे और सूद को ह़लाल क़रार देते थे।

'रिबा' (सूद) के ह़राम होने के पहले जो माल सूद खाने वाले ने लिया था, उसे लौटाना ज़रूरी क़रार नहीं दिया गया, लेकिन जो शख़्स उस के बाद सूद को ह़लाल क़रार देगा उस का ठिकाना जहन्नम होगा, इसलिए कि उस ने उनसे कुर्आनी अह़काम का इन्कार किया और अल्लाह की ह़राम की हुई चीज़ को ह़लाल बनाया।

सूद की क़िस्में-

(رِبَا) "सूद" जिस की दो बड़ी क़िस्में हैं। १- (رِبَا النَّسِيْئَةِ) रिबन्नसीयः २- (رِبَا الْفَضْلِ) रिबल्फ़ज़्ल

"रिबा" के लग्वी मअ़ने "ज़्यादती और इज़ाफ़े" के हैं।

शरअ़न "रिबा" यह है कि कुछ मुद्दत के लिए किसी को एक सौ रूपये इस शर्त पर देना कि वापसी पर एक सौ पचास या एक सौ पच्चीस रूपये देने होंगे, यह पच्चीस या पचास रूपये ज़्यादह जो इस मुद्दत के बदले में हैं वह सूद है उसे (رِبَا النَّسِيْئَةِ) 'रिबन्नसीयः' कहते हैं।

(رِبَا الْفَضْلِ) रिबल्फ़ज़्ल उस सूद को कहते हैं जो छः चीज़ों में कमी-बेशी, नक़्द या उधार की वजह से होता है। (जिस की तफ़्सील ह़दीस में है) जैसे- गेहूँ का तबादला गेहूँ से करना हो तो फ़रमाया गया है कि एक तो बराबर-बराबर हो दूसरा हाथों हाथ हो, अगर इस में कमी-बेशी होगी या एक नक़्द और दूसरी उधार हों या दोनों ही उधार तब भी सूद है।

नोट- सूद की मज़म्मत और उसके दीनी और दुनियवी नुक़्सानात में बहुत सी अह़ादीस आई हैं। 'ह़ाकिम' और 'बैहक़ी' ने अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) से रिवायत की है, "नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया कि सूद के तिहत्तर (७३) दरवाज़े हैं, उस का सब से हल्का गुनाह यह है कि जैसे कोई आदमी अपनी माँ के साथ ज़िना (नाजायज़ सम्भोग) करे।"

सूद की शक्लें-

अह़ादीस में सूद की दो शक्ल हैं।

1- रब्बुल् फ़ज़्ल- यानी एक चीज़ को दूसरे के मुक़ाबले में ज़्यादा देकर ख़रीद व फ़रोख़्त करना और फ़ुक़्हा ने इस के क़ायदे में यह बताया है कि हर वह दो चीज़ें जिन में "नाप, वज़न और ख़ुराक" तीनों सिफ़ात में से दो पाई जाएँगी उन का आपस में ख़रीद व फ़रोख़्त किसी एक को ज़्यादा करके जायज़ नहीं। जिन चीज़ों में यह तीनों सिफ़ात होंगी, या दोनों की जिन्स (Gender) मुख़्तलिफ़ (भिन्न) होगी, तो फिर किसी एक की ज़्यादती सूद नहीं होगी और अगर दोनों की जिन्स एक हो, लेकिन तीनों सिफ़ात में से सिर्फ़ एक सिफ़त पाई जाए तो एक क़ौल यह है कि किसी की ज़्यादती सूद नहीं होगी, लेकिन बेहतर यही है कि इस सूरत में भी ज़्यादती सूद होगी।

इस की दलील उ़बादह बिन सामित (रज़ि०) की मरफ़ूअ़ ह़दीस है जिसे इमाम अह़मद और मुस्लिम ने रिवायत की है कि 'सोना' सोने के बदले, 'चाँदी' चाँदी के बदले, 'गेहूँ' 'गेहूँ' के बदले, 'जौ'

जौ के बदले और 'नमक' नमक के बदले, बराबर और नक़्द बेचना जायज़ है। यानी किसी एक को ज़्यादा करके बेचना जायज़ नहीं, इसलिए कि दोनों की जिन्स एक है और तीनों सिफ़ात में से दो या एक सिफ़त दोनों में पाई जाती है।

२- दूसरी क़िस्म इस की एक सूरत ज़माने जाहिलियत में यह थी कि जब क़र्ज़ की मुद्दत पूरी हो जाती, तो क़र्ज़ वाला क़र्ज़दार से कहता कि क़र्ज़ अदा करोगे या सूद दोगे? अगर क़र्ज़ अदा न करता तो क़र्ज़ देने वाला माल की मिक़्दार बढ़ा देता है और क़र्ज़ की मुद्दत भी बढ़ा देता, सूद की शक्ल तो इत्तिफ़ाक़ी तौर से ह़राम है।

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने ख़रीद व फ़रोख़्त की बाज़ क़िस्मों को सिर्फ़ इसलिए नाजायज़ क़रार दिया है, ताकि सूद के पोशीदा (छिपे हुए) दरवाज़ों को बन्द कर दिया जाए और उ़लम-ए-इस्लाम ने भी हर ज़माने में ऐसी तमाम सूरतों को मना कर दिया जिस से सूद के दरवाज़े नज़र आए। इसलिए कि सूद इस्लाम की नज़र में बहुत बड़ा गुनाह और बद्तरीन इज्तिमाई (सामूहिक) जुर्म है। मुसलमानों को चाहिए कि सूद की उन तमाम शक्लों से बचें जिन में सूद का शुब्हा भी पाया जाता हो।

कुर्आन की शिक्षा यह है कि लेन-देन और व्यापार और बुरा मामला करना अर्थात कुव्यवहार किसी के साथ भी जायज़ नहीं चाहे वह मुस्लिम हो या ग़ैर मुस्लिम और सूदखोरी सबसे बड़ा कुव्यावहार है। इसलिए काफ़िरों का माल भी सूद की राह से हड़प लेने का कोई औचित्य नहीं है, जो लोग वर्तमान अर्थव्यवस्था एवं आर्थिक नीति से प्रभावित हैं वे कुर्आन के रिबा (सूद का स्पष्टीकरण इस तरह़ करते हैं कि इस से मुराद सिर्फ़ वह सूद है जो ग़रीबों और मोहताजों को अपनी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दिये जाने वाले कर्ज़ों पर लिया जाए।) रही बात व्यापारिक कर्ज़ पर सूद न लेने की तो न इस का चलन प्राचीन काल में था और न कुर्आन ने इस की मनाही की है, लेकिन वास्तविकता यह है कि यह दोनों बातें ग़लत हैं। कारोबारी कर्ज़ों का रिवाज प्राचीन काल से चला आ रहा है।

(देखिये इन्साइक्लोपीडिया आफ़ रेलिजन्स ऐण्ड एथिक्स Vol 12 Page 555)

रहा कुर्आन से इसकी मनाही तो कुर्आन ने बिना किसी रिआ़यत के सर्वसाधारण के लिए रिबा (सूद) को ह़राम ठहराया है जिसमें हर तरह़ का सूद शामिल है चाहे वह मोह़ताजों से लिया जाए या बड़े-बड़े व्यापारियों से। चाहे उसकी प्रतिशत दरें मामूली हों या ज़्यादा और चाहे वह Interest की परिभाषा में आता हो या Usury की।

शैतान की छूत से मुराद शैतान के वे प्रभाव हैं जो सूदख़ोर के दिल व दिमाग़ पर पड़ते हैं, जिसके नतीजे में उस पर लक्ष्मी पूजा अथवा धन की गुलामी का भूत ऐसा सवार हो जाता हैं कि उसकी ह़ालत बावलों, पागलों की सी हो कर रह जाती है। वह धन बटोरने की चिन्ता में दीवाना हो जाता है और इस बात का उसे एह़सास नहीं होता कि वह सूद के माध्यम से ग़रीबों का ख़ून चूस रहा है और नैतिकता एवं सहानुभूति की भावनाओं को कुचल रहा है साथ ही साथ समाज की आर्थिक एवं वित्तीय दशा को तबाह व बर्बाद कर देने वाले कुप्रभाव डाल रहा है। जो लोग माल के जुनून में लिप्त हो जाते हैं वे क़ियामत

के दिन जब उठेंगे तो जो ख़ून वे चूसते रहे हैं वह उन के मस्तिष्क को पीड़ित किये होगा और यह देखेगा कि सूद पर सूद का जो चक्कर वे दुनिया में चलाते रहे वह इस लोक में घाटे दर घाटे का कारण बन गया है, उन का हाल दीवानों और पाग़लों का सा होगा।

सूद को बैअ़ (व्यवसाय) जैसा समझने वाले और उसके ह़राम होने पर एतिराज़ करने वाले वर्तमान दौर के अर्थशास्त्री (Economics) ही नहीं बल्कि ऐसे "बुद्धिजीवी" भी मौजूद थे, ह़ालांकि सूद और बैअ़ (व्यापार) दोनों की दशा एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न है और इन के बीच बहुत बड़ा खुला फ़र्क़ है। यही कारण है कि सूद को समाज के लिए लअ़नत क़रार देने वाले प्राचीन युग में भी मौजूद रहे और अब भी मौजूद हैं। अतः अरस्तू ने सूद की कड़ी निन्दा करते हुए कहा था,

Money does not Breed."

(Ency. of social Sciences vol VIII P.131)

अर्थात "रुपया रुपये को जन्म नहीं देता" और वर्तमान युग के सोशलिस्ट सूद को ग़रीब और मज़दूर वर्ग के ह़क़ में अन्याय और अत्याचार बताते हैं:-

"By Interest, then the socialist claims the rich are made richer and the poor poorer and the stability of the social organism is disturbed the evil that Melamchton had feared."

(Ency, of R.E. Vol 12 P. 554)

"सोशलिस्टों का दावा है कि सूद अमीर को और अमीर तथा ग़रीब को और ग़रीब बनाता है और इस का असर सामाजिक व्यवस्था की दृढ़ता एवं स्थिरता पर पड़ता है। यह वह ख़राबी है जिसकी आशंका मेलेमच्थन ने अनुभव की थी।"

Usury has come to mean exorbitant interest but the legitimacy of interest is still debated. The early attacks on usury were motivated by the church's sympathy with the oppressed poor. The latest attacks finds its strength in the plea that interest is an unjust tax on labouring classes. (Do P. 554)

यूज़री (Usury) का मतलब हुआ भारी सूद लेकिन सूद की वैधता अब भी बहस का विषय बना हुआ है। पहले इस पर एतिराज़ का कारण चर्च द्वारा मज़लूम ग़रीब के साथ हमदर्दी था और अब ताज़ा एतिराज़ इस बुनियाद पर किया जा रहा है कि सूद (Interest) मज़दूर वर्ग पर एक अन्याय पूर्ण टैक्स है।"

Interest is the unpaid wage of the labourer", (Do P. 554)

"सूद मज़दूर की अभुक्त मज़दूरी है।"

सूद के ह़राम ठहराए जाने के कारण संक्षेप में निम्न हैं।

(A) सूद वह लाभांश है जो क़र्ज़ देने वाला पूंजीपति पूंजी के इस्तेमाल पर क़र्ज़दार से वसूल करता है।

"Interest is its primary meaning is the payment for the use of money."

(Ency of S.S. Vol VIII P. 131)

इस से बिल्कुल स्पष्ट है कि सूदी व्यवहार कोई बैअ़ या व्यापार (Trade) नहीं है क्योंकि इस में न कोई चीज़ ख़रीदी जाती है और न बेची जाती है बल्कि पूंजी मात्र इस्तेमाल करने के लिए दी जाती

है। यह किराया भी नहीं है क्योंकि जो चीज़ किराये (Rent) पर ली जाती है वह वास्तव में बाक़ी रहती है और इस्तेमाल करने के बाद ठीक वही चीज़ लौटा दी जाती है। किन्तु सूदी लेन-देन में क़र्ज़दार पूंजी को ख़र्च कर चुका होता है और जब वापस करता है तो मालिक की दी हुई ठीक वही पूंजी वापस नहीं करता बल्कि दूसरी रक़म वापस करता है अतः इस को किराया कहना भी सही नहीं। इस से सूदी लेन देन की यह हक़ीक़त बेनक़ाब हो जाती है कि सूद सामान्य एवं साधारण अर्थों में न तो क्रय-विक्रय का मामला है और न किराये का तो मुनाफ़ा किस चीज़ का लिया जाता है? यही से इस का ग़लत होना स्पष्ट है।

(B) व्यापार में लाभ की भी संभावनाएँ होती हैं और हानि की भी इस लिए इस में आदमी को ख़तरा (Risk) मोल लेना पड़ता है। किन्तु सूदखोर को कोई खतरा (Risk) मोल लेना नहीं पड़ता क्योंकि मूलधन के साथ लाभांश की प्राप्ति उस के लिए निश्चित होती है।

(C) व्यापार में आदमी को अपनी मानसिक और शारीरिक शक्ति को ख़र्च करना पड़ता है किन्तु सूदी कारोबार में उसे कुछ किये बग़ैर निर्धारित और निश्चित रूप से लाभ प्राप्त होता है इसलिए इन्सान मेहनत से जी चुराने और सूद पर रुपया लगाने एवं चलाने की आसान राह अपनाने लगता है। यह सूरत नैतिक और आर्थिक दोनों दृष्टि से ग़लत और हानिकारक है।

इस के अ़लावा यह एक हक़ीक़त है कि सूदखोर के बारे में कर्ज़दार का विचार अच्छा नहीं होता। वह सूद को अपने ऊपर ज़्यादती ही समझता है जो इस बात का घातक है कि मानव स्वभाव सूद से घृणा करती है और इसे बुरा समझती है जब कि एक व्यापारी अथवा व्यवसायी के बारे में जो उचित लाभांश पर चीज़ों को बेचता है। किसी ग़रीब से ग़रीब आदमी का भी यह विचार नहीं बनता। कुल मिलाकर सूद, ग़रीब का ख़ून चूस लेने (Blood Sucking) और पूंजीपति वर्ग का निर्धन वर्ग से अवैध लाभ उठाने अर्थात शोषण करने (Exploitation) का नाम है। व्यापार की उन्नति के लिए जो सूदी कर्ज़ दिये जाते हैं उसका बोझ भी निश्चित रूप से ग़रीबों पर ही पड़ता है इसलिए कि एक व्यापारी और एक कारखानेदार वस्तुओं का मूल्य निर्धारित करते समय जो सूद अदा करता है उस सूद का हिसाब लगाकर मूल्य निर्धारित करता है।

स्पष्ट है कि वस्तुओं का मूल्य सूद की दर के हिसाब से उसे अधिक निर्धारित करना पड़ता है और इस अधिक मूल्य का बोझ अधिकतर ग़रीब वर्ग पर ही पड़ता है।

276 يَمْحَقُ اللّٰهُ الرِّبٰوا وَيُرْبِي الصَّدَقٰتِ ۗ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ كُلَّ كَفَّارٍ اَثِيْمٍ ۝

अल्लाह तआ़ला सूद के माल से बरकत छीन लेता है और सद्क़ात से बढ़ाता है, इसलिए कि रोज़ी का मालिक तो अल्लाह है और उस के पास जो कुछ है वह उस की इताअ़त (आज्ञा पालन) करके ही ह़ासिल किया जा सकता है और यह कि सूदख़ोर का माल ज़ाहिर में तो बढ़ता है लेकिन उस की बरकत उस से छीन ली जाती है, दुनिया में उस का सुकून छिन जाता है, औलाद नालायक़ हो जाती है, क़िस्म-क़िस्म की परेशानियों में वह घिरा रहता है और आख़िरत में तो आग का अ़ज़ाब उस का इन्तिज़ार

ही कर रहा है।

277 اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ لَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ ۚ وَلَا خَوْفٌ
عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝

रिबा (सूद) की आयतों के बीच इस आयत को लाने का मक़्सद यह बयान करना है कि सूदी कारोबार से बचाने की अहम वजह ईमान बिल्लाह (अल्लाह पर ईमान) और उस के हुक़ूक़ की अदाएगी है।

278 يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَذَرُوْا مَا بَقِيَ مِنَ الرِّبٰوٓا اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۝

इस आयत में मुसलमानों को पूरी तरह़ से हुक्म दिया गया है कि क़र्ज़दारों पर सूद की जो रक़म रह गई है अब न ली जाए, ईमान का यही तक़ाज़ा है क्योंकि सूद और ईमान दोनों एक साथ जमा नहीं हो सकते।

279 فَاِنْ لَّمْ تَفْعَلُوْا فَاْذَنُوْا بِحَرْبٍ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ۚ وَاِنْ تُبْتُمْ فَلَكُمْ رُءُوْسُ اَمْوَالِكُمْ ۚ لَا تَظْلِمُوْنَ
وَلَا تُظْلَمُوْنَ ۝

सूद लेना अल्लाह और रसूल के ख़िलाफ़ जंग है और जिस की जंग अल्लाह और उस के रसूल से ठन जाए वह कब कामियाब हो पाएगा? सूदी कारोबार से तौबः करने के बाद सिर्फ़ अस्ल माल लेना जायज़ होगा।

280 وَاِنْ كَانَ ذُوْ عُسْرَةٍ فَنَظِرَةٌ اِلٰى مَيْسَرَةٍ ۚ وَاَنْ تَصَدَّقُوْا خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝

और अगर क़र्ज़दार ग़रीब है, उस के पास क़र्ज़ की अदाएगी के लिए पैसे नहीं तो उसे मोहलत देनी चाहिए।

281 وَاتَّقُوْا يَوْمًا تُرْجَعُوْنَ فِيْهِ اِلَى اللّٰهِ ۗ ثُمَّ تُوَفّٰى كُلُّ نَفْسٍ مَّا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ ۝

और अगर क़र्ज़ देने वाला तंगदस्त (ग़रीब) क़र्ज़दार को माफ़ कर दे तो यह उस के लिए बेहतर है क्योंकि वह आख़िरत में इस का अच्छा बदला पाएगा।

282 يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اِذَا تَدَايَنْتُمْ بِدَيْنٍ اِلٰۤى اَجَلٍ مُّسَمًّى فَاكْتُبُوْهُ ۚ وَلْيَكْتُبْ بَّيْنَكُمْ كَاتِبٌ
بِالْعَدْلِ ۪ وَلَا يَاْبَ كَاتِبٌ اَنْ يَّكْتُبَ كَمَا عَلَّمَهُ اللّٰهُ فَلْيَكْتُبْ ۚ وَلْيُمْلِلِ الَّذِيْ عَلَيْهِ الْحَقُّ وَلْيَتَّقِ
اللّٰهَ رَبَّهٗ وَلَا يَبْخَسْ مِنْهُ شَيْـًٔا ۚ فَاِنْ كَانَ الَّذِيْ عَلَيْهِ الْحَقُّ سَفِيْهًا اَوْ ضَعِيْفًا اَوْ لَا يَسْتَطِيْعُ اَنْ
يُّمِلَّ هُوَ فَلْيُمْلِلْ وَلِيُّهٗ بِالْعَدْلِ ۚ وَاسْتَشْهِدُوْا شَهِيْدَيْنِ مِنْ رِّجَالِكُمْ ۚ فَاِنْ لَّمْ يَكُوْنَا رَجُلَيْنِ
فَرَجُلٌ وَّامْرَاَتٰنِ مِمَّنْ تَرْضَوْنَ مِنَ الشُّهَدَآءِ اَنْ تَضِلَّ اِحْدٰىهُمَا فَتُذَكِّرَ اِحْدٰىهُمَا الْاُخْرٰى ۚ وَلَا يَاْبَ
الشُّهَدَآءُ اِذَا مَا دُعُوْا ۚ وَلَا تَسْـَٔمُوْۤا اَنْ تَكْتُبُوْهُ صَغِيْرًا اَوْ كَبِيْرًا اِلٰۤى اَجَلِهٖ ۚ ذٰلِكُمْ اَقْسَطُ عِنْدَ اللّٰهِ وَاَقْوَمُ
لِلشَّهَادَةِ وَاَدْنٰۤى اَلَّا تَرْتَابُوْۤا اِلَّاۤ اَنْ تَكُوْنَ تِجَارَةً حَاضِرَةً تُدِيْرُوْنَهَا بَيْنَكُمْ فَلَيْسَ

عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ أَلَّا تَكْتُبُوهَا ۗ وَأَشْهِدُوٓا إِذَا تَبَايَعْتُمْ ۚ وَلَا يُضَآرَّ كَاتِبٌ وَلَا شَهِيدٌ ۚ وَإِن تَفْعَلُوا
فَإِنَّهُۥ فُسُوقٌۢ بِكُمْ ۗ وَاتَّقُوا اللَّهَ ۖ وَيُعَلِّمُكُمُ اللَّهُ ۗ وَاللَّهُ بِكُلِّ شَىْءٍ عَلِيمٌ ﴿٢٨٢﴾

क़र्ज़ का लेन-देन-

सूदी कारोबार के बाद आपस में बज़रिये क़र्ज़ लेन-देन का बयान हो रहा है, ताकि लोग अपनी माली ज़रूरतें जायज़ और शरीअ़त के तरीक़ों से पूरी करें। यह क़ुर्आन करीम की सब से लम्बी आयत है और इब्ने जरीर तबरी ने सअ़ीद बिन अल् मुसय्यिब से रिवायत की है कि यह आयत अ़र्श से नाज़िल होने वाली आख़िरी आयत थी। इस में अल्लाह तआ़ला ने अपने मोमिन बन्दों को तअ़लीम दी है कि जब वह बज़रिये क़र्ज़ लेन देन करें तो उसे लिख लिया करें, इसलिए कि क़र्ज़ की मिक़्दार उस की अदाएगी का वक़्त और गवाहियों को रिकार्ड में लाने का इस से बेहतर कोई ज़रिया नहीं है।

"हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा फ़रमाते हैं कि मैं गवाही देता हूँ कि ज़मानत पर लिया गया क़र्ज़ जिस की मुद्दत मालूम हो ह़लाल है और अल्लाह तआ़ला ने इसकी इजाज़त दी है। फिर यह आयत पढ़ी।" **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

क़र्ज़ के ज़रिये लेन-देन को लिखने का हुक्म इसलिए दिया गया है ताकि कोई इस का इन्कार न कर सके, या भूल न जाए। इस आयत से यह बात सामने आती हैं।

1- क़र्ज़ के ज़रिये लेन-देन जायज़ है।
2- क़र्ज़ों के तमाम लेन-देन में मुद्दत की शर्त ज़रूरी है।
3- अल्लाह तआ़ला ने क़र्ज़ों को लिख लेने का हुक्म दिया है।
4- लिखने वाला अ़द्ल व इन्साफ़ के साथ लिखे और दोस्ती या दुश्मनी से मुतास्सिर (प्रभावित) न हो।
5- यह ज़रुरी है कि लिखने वाला इन्साफ़ के नियमों को जानता हो और ख़ुद भी सिफ़ते इन्साफ़ के साथ हो।
6- लिखने वाले की तह़रीर में क़र्ज़दार का एतिराफ़ (Acceptance) होता है और अगर वह दूसरा पक्ष कम अ़क़्ली, जुनून, गूंगापन, या अ़दमे कुदरत की वजह से ऊपर लोगों के हुक़ूक़ अच्छी तरह अदा नहीं कर सकता, तो उस के वकील की बात उस की बात के क़ायम मक़ाम (समान) होगी।
7- क़र्ज़दार जब लोगों के हुक़ूक़ लिखने वाले से लिखाए तो अल्लाह से डरे और उन के हुक़ूक़ और शर्तों में कमी या ज़्यादती न करे।
8- ख़रीद व फ़रोख़्त में गवाह मुक़र्रर (तय) करना ज़रुरी है।
9- गवाह दो मर्द, या एक मर्द और दो औ़रतें होंगी।
10- गवाही यक़ीनी बात पर हो, शक पर नहीं।
11- जब गवाह की ज़रुरत पड़े तो उसे इन्कार नहीं करना चाहिए।
12- लिखने वाला और गवाह को किसी के नुक़्सान का ज़रिया नहीं बनना चाहिए। इसी तरह़ क़र्ज़ देने

वाले को भी लिखने वाला और गवाह के नुक़्सान का ज़रिया न बनना चाहिए।

एक मर्द के मुक़ाबिले में दो औ़रतों की गवाही ज़रूरी क़रार देने में औ़रतों के अपमान का कोई पहलू नहीं है बल्कि इस का कारण क़ुर्आन के बयान के अनुसार यह है कि गवाही के मामले में औ़रतों से ग़लती हो जाने की संभावना है और सच्चाई यह है कि औ़रतें व्यापारिक और कारोबारी दुनिया से कम और घरेलू मामलों से अधिक संबंध रखती हैं। इस लिए मामलों में कठिन परिश्रम करने की क्षमता उन में कम होती है और इस कारण उन के दुविधा (confusion) में पड़ने की अधिक संभावना होती है। इसके अलावा औ़रतों में भावनाओं का बहाव उनकी मामले को समझने की शक्ति को प्रभावित करता है। आधुनिक मनोविज्ञान से भी इसकी ताईद और अनुमोदन होता है। इस सिल्सिले में मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी ने अपनी अंग्रेज़ी तफ़्सीर में मनोविज्ञान के विद्वानों की किताबों के जो उदाहरण (Quotation) पेश किये हैं उन में से कुछ निम्नलिखित हैं।

In women deception is almost psychological. (Havelock Ellis: Man and woman P. 196)

"औ़रतों का दुविधा (धोखे) में पड़ना क़रीब-क़रीब मनोवैज्ञानिक है।"

"We are again forced to admit that a woman is not in a position to judge objectively being influenced by her emotion." (Baver opcit, i.p. 289)

औ़रतों की इस मानसिकता को ध्यान में रखते हुए इस्लाम ने अपने शहादत (गवाही) के क़ानून में यह सावधानी से परिपूर्ण तरीक़ा स्वीकार किया है कि अगर मर्दों में से दो गवाह न मिलें तो एक मर्द और दो औ़रतों को गवाह बना लिया जाए ताकि अगर एक औ़रत मामले को ठीक से न समझ सकी हो या घटित मामले को ठीक तौर से बयान न कर पा रही हो तो दूसरी औ़रत उसे दुरुस्त कर दे।

आयत नं० 283 से 286 तक

وَاِنْ كُنْتُمْ عَلٰى سَفَرٍ وَّلَمْ تَجِدُوْا كَاتِبًا فَرِهٰنٌ مَّقْبُوْضَةٌ ؕ فَاِنْ اَمِنَ بَعْضُكُمْ بَعْضًا فَلْيُؤَدِّ الَّذِى اؤْتُمِنَ اَمَانَتَهٗ وَلْيَتَّقِ
اللّٰهَ رَبَّهٗ ؕ وَلَا تَكْتُمُوا الشَّهَادَةَ ؕ وَمَنْ يَّكْتُمْهَا فَاِنَّهٗۤ اٰثِمٌ قَلْبُهٗ ؕ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ عَلِيْمٌ ۝ لِلّٰهِ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الْاَرْضِ ؕ
وَاِنْ تُبْدُوْا مَا فِىْۤ اَنْفُسِكُمْ اَوْ تُخْفُوْهُ يُحَاسِبْكُمْ بِهِ اللّٰهُ ؕ فَيَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَآءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ يَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ
قَدِيْرٌ ۝ اٰمَنَ الرَّسُوْلُ بِمَاۤ اُنْزِلَ اِلَيْهِ مِنْ رَّبِّهٖ وَالْمُؤْمِنُوْنَ ؕ كُلٌّ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَمَلٰٓئِكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ ۟ لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ
اَحَدٍ مِّنْ رُّسُلِهٖ ۟ وَقَالُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا ۫ غُفْرَانَكَ رَبَّنَا وَاِلَيْكَ الْمَصِيْرُ ۝ لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا ؕ لَهَا مَا كَسَبَتْ
وَعَلَيْهَا مَا اكْتَسَبَتْ ؕ رَبَّنَا لَا تُؤَاخِذْنَاۤ اِنْ نَّسِيْنَاۤ اَوْ اَخْطَاْنَا ۚ رَبَّنَا وَلَا تَحْمِلْ عَلَيْنَاۤ اِصْرًا كَمَا حَمَلْتَهٗ عَلَى الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِنَا ۚ
رَبَّنَا وَلَا تُحَمِّلْنَا مَا لَا طَاقَةَ لَنَا بِهٖ ۚ وَاعْفُ عَنَّا ۥ وَاغْفِرْ لَنَا ۥ وَارْحَمْنَا ۥ اَنْتَ مَوْلٰىنَا فَانْصُرْنَا عَلَى الْقَوْمِ الْكٰفِرِيْنَ ۝

अनुवाद-

(283) और अगर तुम सफ़र में हो, और किसी लिखने वाले को न पा सको, तो रेहन (गिरवी) रखने की चीज़ें ही क़ब्ज़े में दे दिया करो, फिर अगर तुम एक-दूसरे पर भरोसा करो, तो जिस पर भरोसा किया जाए, उसे चाहिए कि वह यह सच कर दिखाए, कि वह भरोसेमन्द है; और अल्लाह से, जो उस का रब है, डरता रहे, और गवाही को न छिपाओ जो छिपायेगा उसका दिल गुनाहगार है, और तुम जो कुछ करते हो अल्लाह उसे खूब जानता है। (284) अल्लाह ही का है, जो कुछ आसमानों में है, और जो कुछ ज़मीन में है और जो कुछ तुम्हारे मन में है, अगर तुम उसे ज़ाहिर कर दो, या छिपाये रखो, तो अल्लाह तुम से उसका हिसाब (ज़रूर) लेगा, फिर 'वह' जिसे चाहे माफ़ कर दे और जिसे चाहे अ़ज़ाब़ दे, और अल्लाह हर चीज़ पर कुदरत (सामर्थ्य) रखने वाला है। (285) रसूल (मुहम्मद) उस (किताब) पर ईमान लाए जो उनके रब की ओर से उन पर उतारा गया और ईमान वाले भी, सब अल्लाह पर, और उसके फ़रिश्तों पर, और उसकी किताबों पर, और उसके रसूलों पर ईमान लाये। (और कहते हैं) 'हम' उसके रसूलों में से किसी में कुछ अन्तर नहीं करते,'' और उनका कहना है ''हमने सुना और माना, ऐ 'हमारे' रब! हम 'तुझ' ही से माफ़ी चाहते हैं और तेरी ही ओर (हम सब को) लौटकर जाना है।'' (286) अल्लाह किसी व्यक्ति पर उसकी शक्ति से ज़्यादा बोझ नहीं डालता, उसे वही मिलेगा जो उसने कमाया है, और वह भुगतेगा (भी) वही जो उसने किया है- ''ऐ हमारे रब! अगर हमसे भूल चूक हो जाए तो हमारी पकड़ न कर, ऐ हमारे रब! हम पर ऐसा बोझ न डाल जैसा कि 'तूने' हमसे पहले के लोगों पर डाला था, ऐ हमारे रब! हमसे वह बोझ न उठवा जिस की हममें ताक़त नहीं, और हमें माफ़ कर, और हम को बख़्श दे, और हम पर रहम कर, 'तू ही' हमारा संरक्षक (काम बनाने वाला) है, अतः काफ़िरों (इन्कारियों) पर हमारी मदद (विजय) फरमा।''

आयत नं० 283 से 286 तक की व्याख्या

283 وَاِنْ كُنْتُمْ عَلٰى سَفَرٍ وَّلَمْ تَجِدُوْا كَاتِبًا فَرِهٰنٌ مَّقْبُوْضَةٌ ؕ فَاِنْ اَمِنَ بَعْضُكُمْ بَعْضًا فَلْيُؤَدِّ الَّذِى

اؤْتُمِنَ اَمَانَتَهٗ وَلْيَتَّقِ اللّٰهَ رَبَّهٗ ؕ وَلَا تَكْتُمُوا الشَّهَادَةَ ؕ وَمَنْ يَّكْتُمْهَا فَاِنَّهٗۤ اٰثِمٌ قَلْبُهٗ ؕ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ عَلِيْمٌ ۝

गिरवी या रेहन रखना–

अगर आदमी सफ़र में हो और क़र्ज़ का मामला करने की नौबत आ जाए और लिखने के लिए काग़ज़ क़लम मौजूद न हो तो ऐसी सूरत में क़र्ज़ लेने वाला कोई चीज़ क़र्ज़ देने वाले के पास गिरवी रख दे। गिरवी इस बात का सुबूत हो कि गिरवी रखने वाले के ज़िम्मे उस आदमी का हक़ है जिस के पास गिरवी मौजूद है। मालूम हुआ कि गिरवी की चीज़ों और ज़मानतों के ज़रिये लोगों के हुक़ूक़ की हिफ़ाज़त होती है और लड़ाई व झगड़े के दरवाज़े बन्द हो जाते हैं। यह भी मालूम हुआ कि गिरवी हमेशा साहिबे हक़ के क़ब्ज़े में रहना चाहिए और यह बात तहरीर में आ जानी चाहिए। अगर गिरवी रखने वाले और गिरवी देने वाले के दर्मियान कर्ज़ के कमी ज़्यादती में इख़्तिलाफ़ (Controversy) हो जाए तो वहाँ बात साहिबे हक़ की ही मानी जाएगी, इसलिए कि रेहन उस के साथ (बतौरे ज़मानत) मौजूद है।

(रेहन) का मतलब "गिरवी रखना" है। हदीस में भी इस का जवाज़ (जायज़ होना) साबित है। हज़रत आइशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत है कि नबी करीम ने एक यहूदी से अनाज ख़रीदा और अपनी ज़िरह उस के पास उस वक़्त तक गिरवी रखी। **(सहीह बुख़ारी, अलू रहन, बाबः 2 हदीसः 2509)**

अगर गिरवी रखी हुई चीज़ ऐसी है जिससे नफ़ा होता हो तो उस नफ़ा का हक़्दार मालिक होगा। हाँ, अगर उस पर कुछ खर्च होता है तो उस से वह अपना खर्च वसूल कर सकता है बाकी नफ़ा मालिक को अदा करना ज़रूरी है।

हज़रत नोअ़मान बिन बशीर (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूल (सल्ल०) ने सहाबा-ए-किराम (रज़ि०) को ख़बरदार करते हुए फ़रमाया, "सुन लो जिस्म में गोश्त का एक टुकड़ा ऐसा है कि जब वह दुरुस्त हो तो सारा जिस्म दुरुस्त होता है और वह बिगड़ जाए तो सारा जिस्म बिगड़ जाता है। याद रखो वह टुकड़ा इन्सान का दिल है।" **(बुख़ारी)**

284 لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ؕ وَاِنْ تُبْدُوْا مَا فِيْۤ اَنْفُسِكُمْ اَوْ تُخْفُوْهُ يُحَاسِبْكُمْ بِهِ اللّٰهُ ؕ
فَيَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَآءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ يَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने ख़बर दी है कि वह बन्दों के तमाम हालात को और उन के दिलों की ज़ाहिर और छुपी तमाम बातों को जानता है और उसका हिसाब लेगा और वह जिसे चाहे माफ़ कर देगा और जिसे चाहे अ़ज़ाब देगा।

इमाम अहमद, मुस्लिम, नसई वग़ैरह ने इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा से रिवायत की है कि जब यह आयत नाज़िल हुई तो सहाबा-ए-किराम बहुत परेशान हुए, रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने उन से फ़रमाया, "तुम लोग कहो कि ऐ हमारे रब! हम ने सुना और इताअ़त (आज्ञा पालन) व बन्दगी के लिए झुक गये।" तो अल्लाह ने उन के दिलों को ईमान से भर दिया और अगली आयत नाज़िल हुई, لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا और यह बात इस पर आकर रुकी कि बन्दा उसी क़ौल और अ़मल (कथनी

और करनी) का ज़िम्मेदार है जिस को उस ने किया है और इस से पहले वाली आयत मन्सूख़ (निरस्त) कर दी गई। जैसा कि इमाम बुख़ारी ने रिवायत की है कि आयत وَإِنْ تُبْدُوا مَا فِيْ أَنْفُسِكُمْ أَوْ تُخْفُوهُ इस के बाद वाली आयत के ज़रिये मन्सूख़ (निरस्त) हो चुकी है।

यही क़ौल अ़ली इब्ने मसऊद, शअ़बी, इक्रमा, सअ़ीद बिन जुबैर और क़तादा का भी है।

लेकिन 'इब्ने जरीर' ने ह़सन बसरी (रह़०) का क़ौल नक़्ल किया है कि यह आयत मन्सूख़ नहीं है बल्कि मोहकम हुक्म में है और इब्ने जरीर ने इसी क़ौल को अपनाया है और दलील यह पेश की है कि मुम्किन है अल्लाह तआ़ला ह़िसाब लेने के बाद माफ़ कर दे, जैसा कि सह़ीह़ैन की रिवायत से साबित होता है कि, अल्लाह तआ़ला क़ियामत के दिन जब अपने एक बन्दे से उस के कान के क़रीब जाकर उस के गुनाहों का एतिराफ़ करवा लेंगे, तो कहेगा कि मैंने दुनिया में तुम्हारी पर्दापोशी की थी और आज तुम्हें माफ़ करता हूँ।

कुछ दूसरे ह़ज़रात जो इस आयत के मन्सूख़ (निरस्त) होने के क़ायल नहीं हैं वह कहते हैं कि जिन अह़ादीस में यह आया है कि बन्दे के दिल में जो कुछ गुज़रता है, जब तक अपने क़ौल व अ़मल के ज़रिये उस की तस्दीक़ नहीं करेगा, अल्लाह उसे माफ़ नहीं करेगा। तो इस से मुराद वह बुरे ख़यालात हैं जो बन्दे के दिल में गुज़रते हैं और जिन के गुज़रने का वह इरादा नहीं करता और यहाँ इस आयत से मुराद पुख़्ता इरादा है। अल्लाह तआ़ला बन्दे का इस पर ह़िसाब किताब करेगा क्योंकि ऐसी नियत उस के अ़मल में दाख़िल है जिस का ज़िक्र अगली आयत में आ रहा है।

285 آمَنَ الرَّسُولُ بِمَا أُنْزِلَ إِلَيْهِ مِنْ رَبِّهِ وَالْمُؤْمِنُونَ ۚ كُلٌّ آمَنَ بِاللَّهِ وَمَلَائِكَتِهِ وَكُتُبِهِ وَرُسُلِهِ
لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ أَحَدٍ مِنْ رُسُلِهِ ۚ وَقَالُوا سَمِعْنَا وَأَطَعْنَا ۖ غُفْرَانَكَ رَبَّنَا وَإِلَيْكَ الْمَصِيرُ

यह सूरः बकरः की आख़िरी दो आयतें हैं। इन की तफ़्सीर व तशरीह़ से पहले इन की फ़ज़ीलत जो सह़ीह़ ह़दीसों में रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाई है वह बयान की जाती है।

1- सह़ीह़ बुख़ारी में है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जिस शख़्स ने रात को यह दोनों आयतें पढ़ लीं तो यह उस के लिए काफ़ी हैं।"
2- ह़ज़रत इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) की रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला ने दो आयतें जन्नत के ख़ज़ाने में से नाज़िल फ़रमाई हैं, जिस को तमाम मख़्लूक़ (सारे प्राणियों) की पैदाइश से दो हज़ार साल पहले ख़ुद रह़मान ने लिख दिया था। जो शख़्स इन को अ़िशा की नमाज़ के बाद पढ़ ले तो वह उस के लिए (क़यामुल लैल) यानी तहज्जुद के क़ायम मक़ाम हो जाती हैं।"
3- एक ह़दीस में रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला ने सूरः बक़रः को इन दो आयात पर ख़त्म फ़रमाया है जो मुझे उस ख़ज़ाने ख़ास से अ़ता फ़रमाई हैं जो अ़र्श के नीचे है। इसलिए तुम ख़ासतौर से इन आयतों को सीखो और अपनी औ़रतों और बच्चों को सिखाओ।"
4- ह़ज़रत उ़मर फ़ारूक़ और ह़ज़रत अ़ली (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) ने फ़रमाया, "हमारा यह ख़याल है कि

कोई आदमी जिस को कुछ भी अ़क़्ल हो वह सूरः बक़रः की इन दोनों आयतों को पढ़े बग़ैर न सोएगा।"

5- सूरः बक़रः की यह आख़िरी दो आयात ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को मेअ़राज में बिला वास्ता (डाइरेक्ट) अ़ता हुईं। ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) को मेअ़राज में तीन चीज़ें अ़ता हुईं। पाँच नमाज़ें, सूरः बक़रः की आख़िरी दो आयात और हर मोमिन की बख़्शिश।

6- ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि जो कोई नमाज़ अ़िशा के बाद सूरः बक़रः की आख़िरी दो आयात पढ़े, उसे तमाम रात अ़िबादत का सवाब मिलता है। **(दुर्रे मन्सूर)**

ह़दीस की मोअ़तबर और मुस्तनद किताबों में इन दो आयात के बड़े-बड़े फ़ज़ायल ज़िक्र हुए हैं।

وَاِنْ تُبْدُوْا مَا فِيْٓ اَنْفُسِكُمْ اَوْ تُخْفُوْهُ يُحَاسِبْكُمْ بِهِ اللّٰهُ ۭ

फ़रमाया गया जो कुछ तुम्हारे दिलों में है तुम उस को ज़ाहिर करो या छिपाओ, हर ह़ाल में अल्लाह तआ़ला तुम से इस का ह़िसाब लेंगे तो सह़ाबा-ए-किराम (रज़ि०) इन शब्दों से यह समझ कर कि इन्सान के दिल में बिना सोचे अगर कोई ख़याल आ जाएगा तो उस का भी ह़िसाब होगा घबरा उठे और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ख़िद्मत में ह़ाज़िर हुए और अ़र्ज़ किया, "या रसूलल्लाह (सल्ल०) यह हुक्म बहुत मुश्किल है जानबूझकर गुनाह करने से तो बच सकते हैं मगर अपने आप दिल में आने वाले ख़याल से और ग़ैर अख़्तियारी वस्वसों (बिना सोचे दिल में आने वाले ख़याल) से बचना बहुत मुश्किल है। अगर हर ख़याल जो दिल में आये उस पर ह़िसाब होगा तो अ़ज़ाब से निजात पाना बहुत मुश्किल है।"

नबी करीम (सल्ल०) ने सुनकर फ़रमाया कि तुम बनी इस्राईल की तरह इन्कार मत करो और दिल व जान से उस के हुक्म को क़ुबूल कर लो। अहले किताब की तरह़ وَقَالُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا मत कहो बल्कि وَقَالُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا غُفْرَانَكَ رَبَّنَا وَاِلَيْكَ الْمَصِيْرُ कहो (यानी ऐ हमारे परवरदिग़ार! हम ने आप का हुक्म सुना और उस की इताअ़त की। ऐ हमारे परवरदिग़ार! अगर हुक्म की तअ़मील में हम से कोई कोताही या कमी हुई हो तो उस को माफ़ फ़रमा दीजिए और हमारा सब का लौटना आप ही की तरफ़ है।) ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने इस की कोई तफ़्सीर नहीं फ़रमाई बल्कि सह़ाबा को अदब की तअ़लीम फ़रमाई। सह़ाबा-ए-किराम ने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के हुक्म के मुताबिक़ ऐसा ही किया।

अल्लाह तआ़ला को सह़ाबा की यह बात पसन्द आई और यह सूरः बक़रः की आख़िरी दो आयत नाज़िल फ़रमाई जिन में पहले सह़ाबा की तअ़रीफ़ फ़रमाई गई और फिर जो शक व शुब्हा सह़ाबा को पेश आया था उस का जवाब ज़िक्र फ़रमाया कि जो चीज़ बन्दे की ताक़त और अख़्तियार से बाहर है बन्दा उस का मुकल्लफ़ (बाध्य) नहीं। लिहाज़ा दिल में जो गुनाह का ख़याल और ख़तूरा आ जाए तो उस पर कोई पकड़ नहीं जब तक खुद अपने अख़्तियार और इरादा से उस पर अ़मल न करे या ज़बान से न कहे। अतः इन आख़िरी आयतों में से पहली आयत जिस में सह़ाबा की तअ़रीफ़ फ़रमाई गई इर्शाद होता हैः-

"यक़ीन रखते हैं रसूलुल्लाह (सल्ल०) उस चीज़ के ह़क़ होने का जो उन के पास उन के रब की तरफ़ से नाज़िल (अवतरित) की गई हैं यानी क़ुर्आन और दूसरे मोमिनीन भी इस

का यक़ीन रखते हैं। जिस की तफ़्सील यह है कि सब के सब अ़क़ीदा रखते हैं अल्लाह के साथ कि वह मौजूद है और एक है और ज़ात व सिफ़ात में कामिल है और बेमिस्ल व बेनज़ीर है और अ़क़ीदा रखते हैं उस के फ़रिश्तों के साथ कि वह मौजूद हैं और गुनाहों से पाक हैं और मुख़्तलिफ़ कामों पर लगे हैं और अ़क़ीदा रखते हैं उस के सब पैग़म्बरों के साथ कि वह अल्लाह के पैग़म्बर हैं और सच्चे हैं और पैग़म्बरों पर उन का अ़क़ीदा रखना इस तौर पर है कि यह कहते हैं कि हम उस के पैग़म्बरों में से किसी में फ़र्क़ नहीं करते कि किसी को पैग़म्बर समझें और किसी को न समझें और उन सब ने यूं कहा कि हम ने आप का इर्शाद सुना और उस को ख़ुशी से माना। हम आप की बख़्शिश चाहते हैं ऐ हमारे परवरदिग़ार! और आप ही की तरफ़ हम सब को लौटना है।”

यहाँ जो तरीक़ा अख़्तियार किया गया कि पहले हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के ईमान का ज़िक्र फ़रमाया तो उ़लमा ने लिखा है कि मक़्सद तो यहाँ पर तअ़रीफ़ मोमिनीन की थी, लेकिन उन की तअ़रीफ़ के लिए उन के साथ रसूलुल्लाह (सल्ल०) को भी शामिल कर दिया जिस में इशारा इस तरफ़ हो गया कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) के ईमान का मुकम्मल होना तो बिलाशुब्हा यक़ीनी है। इसी तरह़ सह़ाबा का ईमान भी कामिल होने की वजह से कामिल है कि ईमान रसूल (सल्ल०) के ज़िक्र में इस का ज़िक्र किया जाए चाहे दोनो का कामिल होना एक मर्तबः मे न हो। सह़ाबा का मुकम्मल है तो रसूल (सल्ल०) का अकमल (सर्व सम्पूर्ण) यानी बहुत ही कामिल है।

फिर दूसरी बात जिस पर सह़ाबा-ए-किराम की तअ़रीफ़ फ़रमाई और बतलाया कि पिछली उम्मतों की तरह़ यह ऐसा न करेंगे कि अल्लाह के रसूलों में अन्तर करें कि कुछ को नबी मानें और कुछ को न मानें। जैसा कि यहूद ने ह़ज़रत मूसा (अ़लै०) को नबी माना और ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) को न माना, जैसा-नसारा ने ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) को नबी माना लेकिन आख़िरी नबी मुह़म्मदुर्रसूलुल्लाह (सल्ल०) को अल्लाह का रसूल न माना, लेकिन सह़ाबा की यह तअ़रीफ़ फ़रमाई गई कि यह अल्लाह के रसूलों का इन्कार नहीं करते।

फिर तीसरी बात जिस पर सह़ाबा-ए-किराम की तअ़रीफ़ फ़रमाई गई कि वह रसूलुल्लाह (सल्ल०) के इर्शाद के अनुसार अ़मल करते हैं وَقَالُوا سَمِعْنَا وَأَطَعْنَا غُفْرَانَكَ رَبَّنَا وَإِلَيْكَ الْمَصِيرُ ۝ “कहना था यानी हम ने हुक्म सुना और ख़ुशी से माना हम आप की बख़्शिश चाहते हैं और ऐ हमारे परवरदिग़ार! और आप की तरफ़ लौटना है।”

इस के बाद आख़िरी आयत में एक ख़ास अन्दाज़ से सह़ाबा-ए-किराम का वह शुब्हा और सन्देह दूर किया गया जो وَإِن تُبْدُوا مَا فِي أَنفُسِكُمْ أَوْ تُخْفُوهُ يُحَاسِبْكُم بِهِ اللَّهُ ۖ से उन के दिलों में पैदा हुआ था कि दिल में जो ग़ैर अख़्तियारी तौर पर ख़याल और वस्वसा आये अगर उन पर भी ह़िसाब हुआ तो अ़ज़ाब से कैसे बचेंगे।

286 لَا يُكَلِّفُ اللَّهُ نَفْسًا إِلَّا وُسْعَهَا ۚ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَعَلَيْهَا مَا اكْتَسَبَتْ ۗ رَبَّنَا لَا تُؤَاخِذْنَا إِن

نَّسِيْنَآ اَوْ اَخْطَاْنَا ۚ رَبَّنَا وَلَا تَحْمِلْ عَلَيْنَآ اِصْرًا كَمَا حَمَلْتَهٗ عَلَى الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِنَا ۚ رَبَّنَا وَلَا
تُحَمِّلْنَا مَا لَا طَاقَةَ لَنَا بِهٖ ۚ وَاعْفُ عَنَّا ۗ وَاغْفِرْ لَنَا ۗ وَارْحَمْنَا ۗ اَنْتَ مَوْلٰىنَا فَانْصُرْنَا عَلَى
الْقَوْمِ الْكٰفِرِيْنَ ۝

इर्शाद होता है لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا ۚ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَعَلَيْهَا مَا اكْتَسَبَتْ ۚ यानी हम ने जो पिछली आयत में कहा है कि दिल की छुपी बातों पर भी ह़िसाब होगा, इस से मुराद अपने आप आने वाले ख़याल नहीं बल्कि वह चीज़ें जो अख़्तियारी हैं। क्योंकि अल्लाह तआ़ला किसी शख़्स को इस बात का मुकल्लफ़ (पाबन्द) नहीं बनाता, मगर उस का जो उस की ताक़त व अख़्तियार में हो उस का सवाब भी उसी तरह़ होता है अगर कोई काम अपने आप करेगा तो उस पर अ़ज़ाब भी होगा मगर जो उसकी ताक़त से बाहर है उस का मुकल्लफ़ नहीं बनाया गया।

इस आयत से सह़ाबा-ए-किराम को इत्मिनान हो गया कि ग़ैर अख़्तियारी ख़यालात का न ह़िसाब-किताब और न उन पर अ़ज़ाब होगा और ह़दीस से इस की तस्दीक़ हो गई कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, अल्लाह तआ़ला ने मेरी उम्मत को उन बातों से दरगुज़र फ़रमाया है जो दिल में ख़यालात पैदा हों जब तक अ़मल न करे या ज़बान से न कहे।

ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि जब यह आयत नाज़िल हुई तो सह़ाबा-ए-किराम (रज़ि०) पर गिराँ हुई। सह़ाबा (रज़ि०) आप (सल्ल०) के पास आये, फिर घुटनों के बल बैठे और कहा कि अल्लाह तआ़ला ने हम पर यह आयत नाज़िल फ़रमाई है और हम इस की ताक़त नहीं रखते।

आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "क्या तुम चाहते हो कि ऐसे कहो जैसा कि तुम से पहले अहले किताब ने कहा। हम ने सुन लिया और नाफ़रमानी की?" बल्कि कहो-

وَقَالُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا ۗ غُفْرَانَكَ رَبَّنَا وَاِلَيْكَ الْمَصِيْرُ

बस जब उन्होंने ऐसे ही किया तो अल्लाह तआ़ला ने उसे मन्सूख़ कर के यह आयत नाज़िल फ़रमाई لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا ۚ **(बुख़ारी)**

फ़ज़ीलत-

ह़ज़रत अबू मसऊद अल् बदरी (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया "जिस ने सूरः बक़रः की आख़िरी दो आयतें रात को पढ़ीं तो वह उस के लिए (रात की अ़िबादत से) काफ़ी हैं।"

(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् मग़ाज़ी, बाब 12, ह़दीस 4008)

ह़ज़रत अबू ज़र (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, मेरी उम्मत से ख़ता व निस्यान यानी भूल-चूक और मजबूरी माफ़ कर दी गई है। **(इब्ने माजा)**

ख़ुलासा (सारांश) यह है कि ग़लत अ़क़ीदे, बुरे अख़्लाक़, गुनाह का पक्का इरादा, उन पर तो अ़ज़ाब या मुवाख़ज़ा (पकड़) होगा लेकिन ग़ैर अख़्तियारी तौर पर दिल में वस्वसे के आने पर पकड़ व गुनाह नहीं।

सूरः के पूरा होने पर मोमिनों को एक ख़ास दुआ़ सिखाई कि मुसलमानों को इस तरह़ दुआ़ करनी चाहिए।

رَبَّنَا لَا تُؤَاخِذْنَآ إِنْ نَّسِيْنَآ أَوْ أَخْطَأْنَا ۚ رَبَّنَا وَلَا تَحْمِلْ عَلَيْنَآ إِصْرًا كَمَا حَمَلْتَهٗ عَلَى الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِنَا ۚ رَبَّنَا وَلَا تُحَمِّلْنَا
مَا لَا طَاقَةَ لَنَا بِهٖ ۚ وَاعْفُ عَنَّا ۗ وَاغْفِرْ لَنَا ۗ وَارْحَمْنَا ۗ أَنْتَ مَوْلٰىنَا فَانْصُرْنَا عَلَى الْقَوْمِ الْكٰفِرِيْنَ ۝

यानी ऐ हमारे रब! हमारी पकड़ न फ़रमाइए अगर भूल चूक हो जाए। ऐ हमारे रब! और हमारी यह भी दरख़्वास्त है कि हम पर कोई सख़्त हुक्म न भेजिये जैसे हम से पहले लोगों पर आप ने भेजे थे। ऐ हमारे रब! और हम यह भी दरख़्वास्त करते हैं कि हम पर कोई ऐसी तक्लीफ़ का दुनिया व आख़िरत में बोझ न डालिये जिस को हम बर्दाश्त न कर सकें और दरगुज़र कीजिए हम से और माफ़ कर दीजिये हम को और रह़म कीजिए हम पर।

आप हमारे पालनहार हैं और पालनहार तरफ़दार होता है सो आप हमको काफ़िरों पर ग़ालिब कीजिए। यानी सूरः के ख़त्म पर अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को यह दुआ़ सिखलाई कि अपनी ग़ल्तियों को पेशेनज़र रखकर इस तरह़ दुआ़ माँगा करो कि ऐ हमारे परवरदिगार! तेरा ह़क़ हम से कहाँ अदा हो सकता है, भूल-चूक साथ लगी हुई है इसलिए तुझ ही से यह दरख़्वास्त करते हैं कि अगर हम तेरे किसी हुक्म को भूल जाएँ और भूले से उस पर अ़मल न कर सकें या किसी भूल-चूक कोताही की बिना पर चूक जाएँ और ठीक अ़मल करने में ग़लती कर जाएँ तो ऐ अल्लाह! हमारी भूल-चूक पर मुवाख़ज़ा (पकड़) न फ़रमाइएगा। ऐ परवरदिग़ार! हमारे सरों पर हुक्मों का बोझ न रखिये जैसा कि आप ने हम से पहले लोगों पर रखा था। ऐ हमारे परवरदिग़ार! हमारे सरों पर वह बोझ जिस के उठाने की हम में ताक़त न हो मत रखिये और हमारी ताक़त व कुव्वत से बढ़ कर हम को मुसीबतों और बलाओं में मुब्तिला न फ़रमाइएगा

यहाँ पहले लोगों से मुराद बनी इस्राईल हैं। बनी इस्राईल जब भूल-चूक से भी कोई गुनाह कर बैठते तो फ़ौरन कोई सज़ा मिल जाती और खाने-पीने की कोई ह़लाल चीज़ ह़राम कर दी जाती और अगर जानबूझकर गुनाह करते तो ऐसे गुनाह की तौबः सिवाय अपनी जान दे देने के कोई और सूरत न थी। जानबूझकर किये हुए गुनाह की सज़ा सिर्फ़ क़त्ल थी मगर यह अल्लाह का करम है कि मुह़म्मदुर्रसूलुल्लाह (सल्ल०) इस उम्मत पर तौबः का आसान तरीक़ा बताया गया और हर गुनाह की माफ़ी का दरवाज़ा खुला रखा।

बनी इस्राईल के लिए अह़काम बहुत सख़्त थे, जानबूझकर गुनाह की सज़ा क़त्ल थी। ज़कात में चौथाई माल देने का हुक्म था। अगर कपड़े पर कहीं नजासत (नापाकी) लग जाती तो धोने से पाक नहीं होती थी बल्कि उतनी जगह को काट देने का हुक्म था। अल्लाह तआ़ला ने किसी ह़िक्मत और मस्लह़त से पहली उम्मतों के मुतकब्बिरीन (घमंडी) और सरकशों पर सख़्त एह़काम उतारते थे।

आगे दुआ़ की तअ़लीम यह फ़रमाई गई कि ऐ हमारे परवरदिगार! चूंकि नाक़ाबिले बर्दाश्त मुसीबतों के उतरने का ज़रिया भी हमारे ही गुनाह हैं इसलिए तुझ से दरख़्वास्त करते हैं कि हमारे गुनाहों को माफ़

फ़रमा और हमारी पर्दापोशी (छिपाना) फ़रमा। दुनिया व आख़िरत की ज़िल्लत से हमको बचा और माफ़ी के बाद आप से दरख़्वास्त करते हैं कि हम पर मेहरबानी और एह़सान फ़रमा। आप ही हमारे आक़ा और वली और दोस्त हैं और हम आप के ग़ुलाम, नामलेवा और आशिक़ हैं। बस आप हमारी अपने दुश्मनों के मुक़ाबिले में ख़ास मदद कीजिए और काफ़िर क़ौम के मुक़ाबिले में हम को फ़तेह़ व मदद अ़ता फ़रमाइए। काफ़िरों की क़ौम आप की और आप के दीन की और आप के पैग़म्बरों की और आप के दोस्तों की दुश्मन है और मौला व आक़ा अपने ग़ुलामों का मददगार होता है लिहाज़ा आप से यह दरख़्वास्त है कि अपने दोस्तों की दुश्मनों के मुक़ाबिले में मदद फ़रमाइए ताकि बे-खटके तेरी अ़िबादत और बन्दग़ी कर सकें और बिला किसी डर के तेरे क़ानून को जारी कर सकें।

ह़दीस में आता है कि अल्लाह तआ़ला ने यह सब दुआ़एँ क़ुबूल फ़रमाई और इस का इज़्हार रसूलुल्लाह (सल्ल०) के ज़रिये कर दिया। यह अल्लाह का बेइन्तिहा शुक्र व एह़सान है कि आप ने हम को ऐसी उम्मत में पैदा फ़रमाया।

इस तरह़ सूरः का ख़ात्मा माफ़ी, मग़्फ़िरत और रह़मत की दरख़्वास्त पर ईमान व तक़्वा के साथ काफ़िरों की क़ौम पर फ़तेह़ व नुस्रत और दीनी व दुनियवी कामियाबी की तलब पर फ़रमाया गया और जिस तरह़ सूरः की इब्तिदा ईमान की तह़क़ीक़ और मुत्तक़ीन की फ़ज़ीलत से हुई थी उस की इन्तिहा भी इसी मज़मून पर हुई।

सूरः बक़रः जो क़ुर्आन करीम की दूसरी और सब से बड़ी सूरः है जिस में 286 आयतें, 40 रुकूआ़त थे।

अल्लाह तआ़ला हमारे दिलो में क़ुर्आन की बातों का अ़मल करने का शौक़ अ़ता फ़रमाए और इस का पढ़ना सुनना हम सब के लिए निजात, मग़्फ़िरत व रह़मत का ज़रिया बनाये। **आमीन**

(भाग–3)

(सूरः नं. 3)

सूरः आले इमरान

(आयत नं० 1 से 37 तक)

सूरः आले इम्रान का संक्षिप्त परिचय

● पहला रुकूअ-

सूरः की शुरुआ़त तौह़ीद के बयान से फ़रमाई गई है और उस के बाद क़ुर्आन करीम की सच्चाई का ज़िक्र फ़रमाया गया है कि यह किताब अल्लाह की आख़िरी किताब है, जो पिछली आसमानी किताबों की तस्दीक़ करती है। फिर बतलाया गया है कि क़ुर्आन करीम की कुछ आयात 'मुह़कमात' हैं और कुछ 'मुतशाबिहात'। आयाते 'मुह़कमात' यानी जिन में साफ़-साफ़ हुक्म बयान किया गया है उन पर अ़मल करने की हिदायत की गई है और 'मुतशाबिहात' जिन के मतलब व माने और मुराद साफ़ नहीं है, उन का सह़ीह़ मतलब यक़ीनी तौर पर अल्लाह तआ़ला ही जानते हैं उन के पीछे पड़ने की मुमानिअ़त (मनाही) फ़रमाई गई। फिर 'रासिख़ीन फ़िल् इ़ल्म' यानी जो लोग इ़ल्म में पुख़्ता हैं उन का ज़िक्र फ़रमाया गया है कि उन की दुआ़ अल्लाह तआ़ला से हिदायत और रह़मते इलाही की रहती है।

क़ियामत के दिन काफ़िरों की ह़ालत-

● **दूसरे रुकूअ़** में बतलाया गया है कि क़ियामत के दिन काफ़िरों के न औलाद काम आएगी और न माल, न उन को कोई जहन्नम के अ़ज़ाब से बचा सकेगा। फिर बताया गया है कि इन्सान का दिल बीवी, बच्चे, सोने चाँदी सवारियाँ, चौपाये और खेतियों की तरफ़ मायल रहता है, लेकिन यह चीज़ें केवल दुनियवी ज़िन्दग़ी का सामान हैं, अस्ल ठिकाना तो अल्लाह ही के पास है और वह ठिकाना जन्नत है जिस में मोमिन हमेशा राह़त व आराम से रहेंगे और वहाँ सब से बड़ी नेअ़मत अल्लाह तआ़ला की रज़ा (ख़ुशी) होगी। फिर बतलाया गया कि अल्लाह के नज़्दीक पसन्दीदा दीन सिर्फ़ इस्लाम है और इस्लाम ही हिदायत का रास्ता है।

यहूद की बद् किरदारियाँ-

● **तीसरे रुकूअ़** में यहूद की चन्द बद् आ़मालियाँ (बुरे अ़मल) और बुरे किरदार बयान किये गये हैं कि वह अपने अम्बिया (अ़लै०) को और उन उ़लमा-ए-ह़क़ को क़त्ल कर दिया करते थे जो उन को सह़ी दीन पेश करते थे और बाप-दादा के दीन को पेश नहीं करते थे। ऐसे लोगों की सज़ा बयान की गई है कि उन के आ़माल सब बेकार हो गये। दुनिया व आख़िरत में उन को अल्लाह की सज़ा और अ़ज़ाब से कोई बचा नहीं सकता। फिर यहूद के इस बातिल ख़याल को रद्द फ़रमाया गया है कि अगर हम जहन्नम में गये तो सिर्फ़ गिनती के चन्द दिन रहेंगे। क़ुर्आन ने बताया कि उन का यह दावा सिर्फ़ फ़रेब (धोखा) और मनगढ़त है, क़ियामत में सब जमा कर लिए जाएँगे और हर शख़्स को जो उस ने दुनिया में किया था उस का पूरा-पूरा बदला दिया जाएगा। फिर अल्लाह की क़ुद्रत और मालिकियत का ज़िक्र फ़रमाया गया कि वही तमाम धरती का ह़क़ीक़ी मालिक है वह जिस को चाहता है हुकूमत अ़ता फ़रमाता है और

जिस से चाहता है छीन लेता है। ज़माने की बागडोर उसी के क़ुदरत में है और वह जिस को चाहता है बेहिसाब रोज़ी अ़ता फ़रमाता है। किसी को उस के सामने ज़बान खोलने की हिम्मत नहीं। फिर अहले ईमान को हिदायत फ़रमाई गई है कि जब कुफ़्फ़ार की सरकशी की यह हालत है कि वह किसी तरह़ अल्लाह तआ़ला की इताअ़त और क़ुबूले ह़क़ पर राज़ी नहीं तो अहले ईमान को चाहिए कि वह उन कुफ़्फ़ार को अपना दोस्त न बनाएँ और जो कोई ऐसा करेगा उस का अल्लाह से कोई वास्ता नहीं। हाँ, जबकि कुफ़्फ़ार से नुक़्सान का अन्देशा न हो तो उस सूरत में दोस्ती की इजाज़त है, मगर दिली राज़ देने की इजाज़त नहीं।

कामियाबी का राज़-

● **चौथे रुकूअ़** में बताया गया है कि कामियाबी का राज़ अल्लाह और उस के रसूल (सल्ल०) की फ़रमाँबरदारी में है। जो लोग अल्लाह से मुह़ब्बत का दावा करते हैं उन के लिए रसूल (सल्ल०) की फ़रमाँबरदारी ज़रूरी है और जो अल्लाह और रसूल की इताअ़त से मुँह फेरे तो अल्लाह को उन से कोई मुह़ब्बत नहीं, क्योंकि अल्लाह इन्कार करने वालों से मुह़ब्बत नहीं करता। इस के बाद ह़ज़रत आदम (अ़लै०), ह़ज़रत नूह़ (अ़लै०) आले इब्राहीम और आले इमरान का ज़िक्र फ़रमाया कि अल्लाह ने उन सब बुज़ुर्गों को फ़ज़ीलत अ़ता फ़रमाई। फिर ह़ज़रत मरयम की वालिदा का ज़िक्र है कि उन्होंने अपनी औलाद को अल्लाह के नज़र करने की दुआ़ की थी। फिर ह़ज़रत मरयम जब पैदा हुईं तो उन को अल्लाह की अ़िबादत के लिए ख़ास कर दिया और ह़ज़रत ज़करिया (अ़लै०) उन के सरपरस्त बने। फिर ह़ज़रत ज़करिया (अ़लै०) की दुआ़ का ज़िक्र है कि उन की ज़ौजा (बीवी) बाँझ थीं और खुद ह़ज़रत ज़करिया (अ़लै०) बूढ़े हो चुके थे, उन के कोई औलाद न थी, मगर अल्लाह तआ़ला ने ह़ज़रत ज़करिया (अ़लै०) की दुआ़ क़ुबूल फ़रमाई और ह़ज़रत यह़या (अ़लै०) के विलादत (पैदाईश) की बशारत (ख़ुशख़बरी) दी।

ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) का ज़िक्र-

● **पाँचवे रुकूअ़** में ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) की पैदाइश का ज़िक्र है कि जब फ़रिश्तों ने 'ह़ज़रत मरयम' (अ़लै०) को ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) के पैदाइश की बशारत दी तो ह़ज़रत मरयम ने इस पर बड़ी ह़ैरत का इज़्हार किया, "ऐ मेरे परवरदिगार! मेरे लड़का किस तरह़ होगा, मुझे तो किसी मर्द ने हाथ तक नहीं लगाया।" इस के जवाब में अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया, "बस यूँ ही होगा, अल्लाह तआ़ला को अस्बाब की ज़रूरत नहीं वह बग़ैर अस्बाब के भी जो चाहें कर सकते हैं, सिर्फ़ अल्लाह के हुक्म की ज़रूरत है।" साथ ही ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) को अल्लाह के रसूल होने, आसमानी किताब दिये जाने और साह़िबे मोअ़जिज़ात (चमत्कारों वाला) होने की बशारत दी गई और बतलाया गया कि वह तमाम बनी इस्राईल की तरफ़ से अल्लाह के रसूल बनाकर भेजे जाएँगे। चुनाँचे ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) इसी शान के साथ बग़ैर बाप के ह़ज़रत मरयम के पेट से पैदा हुए और फिर नुबूव्वत व रिसालत से सरफ़राज़ फ़रमाए

गये। आप ने बनी इस्राईल को अल्लाह की अ़िबादत की तरफ़ बुलाया और अपने इत्तिबअ़ (पैरवी) का हुक्म दिया जिस पर बनी इस्राईल ने आप की मुख़ालिफ़त (विरोध) की, आग भड़क उठी और आप को तक्लीफ़ देने लगे, यहाँ तक कि मुख़ालिफ़ीन (विरोधी) आप के क़त्ल की तद्‌बीरें (Planning) करने लगे।

ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) का आसमान पर उठाया जाना–

● **छठे रुकूअ़** में अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) को इत्मिनान दिलाया गया है कि ऐ ईसा! तुम कुछ ग़म न करो यह यहूद तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते और तुम्हें क़त्ल नहीं कर सकते और बचाने की यह तद्‌बीर होगी कि तुम को अपनी तरफ़ आसमान पर उठा लूँगा। इस तरह़ उन नापाक काफ़िरों से तुम को पाक कर दूँगा और फिर क़ियामत के दिन जब सब की वापसी अल्लाह की तरफ़ होगी तो उन तमाम आपसी इख़्तिलाफ़ात का अ़मली फ़ैसला कर दिया जाएगा, जिस की तफ़्सील यह है कि जो काफ़िर हैं उन को सख़्त अ़ज़ाब दिया जाएगा और जो लोग ईमान व नेक अ़मल वाले हैं उन को पूरा सवाब और मुआ़वज़ा (बदला) दिया जाएगा, यहाँ तक तो ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) के मुख़ालिफ़ीन यानी यहूद की ग़लती को ज़ाहिर फ़रमाया गया। आगे मुवाफ़िक़ीन यानी नसारा ने जो ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) के बारे में ग़लती ज़ाहिर की और बतलाया गया कि ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) की ह़ालत अल्लाह के नज़्दीक आदम (अ़लै०) जैसी है कि अल्लाह तआ़ला ने उन को मिट्टी से पैदा किया और इन्सान बनाया। जिस तरह़ आदम (अ़लै०) बिना माँ-बाप के पैदा हुए वह न अल्लाह हुए न अल्लाह के बेटे उसी तरह़ ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) बिना बाप के पैदा होने से, अल्लाह के बेटे या अल्लाह नहीं हो सकते, बल्कि वह अल्लाह के बन्दे ही हैं। अल्लाह ने अपने हुक्म से उन्हें पैदा किया फिर आख़ीर में बताया गया कि यह क़िस्से और वाक़िआ़त बिल्कुल सच्चे हैं और मअ़बूद तो सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला ही की ज़ात है।

यहूद व नसारा को तौह़ीद की दअ़वत–

● **सातवें रुकूअ** में अहले किताब यानी यहूद व नसारा को सह़ीह़ तौह़ीद (एकेश्वरवाद) की दअ़वत दी गई। जो ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) को अपने दीन और मज़हब पर बतला कर अहले इस्लाम से हुज्जत करते थे और कहते थे कि 'ह़ज़रत इब्राहीम' (अ़लै०) यहूदी थे और 'नसारा' कहते कि ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ईसाई थे। यहाँ उस को रद्द फ़रमाया गया है कि ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) न यहूदी थे न नसरानी और न मुश्रिक बल्कि उन का दीन 'इस्लाम' था और वह साह़िबे इस्लाम थे। आख़ीर में अहले किताब को ख़िताब करके तम्बीह की गई, कि तुम क्यों ह़क़ को बातिल के साथ मिलाते हो और क्यों ह़क़ को छिपाते हो, ह़ालांकि तुम ह़क़ीक़त को जानते भी हो।

यहूद की नापाक कोशिशें–

● **आठवें रुकूअ** में यहूद की उस नापाक कोशिश का ज़िक्र है जो उन्होंने इस्लाम को मिटाने के लिए और इस्लाम की तरफ़ से बद्‌गुमानी (भ्रान्तियाँ) पैदा करने के लिए की थी कि एक ख़ुफ़िया गिरोह

तैयार किया जिस को यह हिदायत दी कि वह पहले एलानिया (खुले तौर पर) इस्लाम क़ुबूल करें, फिर इस्लाम को छोड़ कर मुरतद (फिर जाना) हो जाएँ। इस तरह़ जगह-जगह लोगों में यह बात फैलाएँ कि हम पहले इस्लाम लाए और फिर हम ने इस्लाम में यह ख़राबियाँ देखीं इसलिए हम ने इस दीन को छोड़ दिया।

अल्लाह तआ़ला ने यहूद की इस नापाक साज़िश से मुसलमानों को बाख़बर कर दिया ताकि कोई इस साज़िश का शिकार न हो सके। फिर यहूद की एक दूसरी बुरी नियत का ज़िक्र फ़रमाया कि उन में ऐसे बद् दियानत और घपला करने वाले लोग भी हैं जिन पर भरोसा करके अगर कोई अमानत उन के पास रख दे तो उस को हज़्म करने की कोशिश करते हैं और कहते हैं कि ग़ैर यहूद का माल खा जाना हमारे लिए ह़लाल और तय्यिब (पाक) है।

क़ियामत में इस पर हम से कोई मुवाख़िज़ा (पकड़) न होगा। अल्लाह तआ़ला ने उन के इस क़ौल को रद्द फ़रमाया कि यह लोग झूठे हैं और यह खुद भी समझते हैं कि ख़यानत करने वाले पर मुवाख़िज़ा क्यों नहीं होगा, इसलिए इस बद् दियानती की सज़ा उन्हें मिलेगी और क़ियामत के दिन उन को दर्दनाक अ़ज़ाब होगा। आगे इन्हीं यहूद की एक और ह़रकत का ज़िक्र फ़रमाया गया कि वह तौरेत में तह़रीफ़ (संशोधन) करते रहते हैं और ह़क़ को छिपाने के लिए तौरेत को बिगाड़ कर पढ़ते हैं कि सुनने वाला यह ख़याल करे कि यह तौरेत पढ़ रहे हैं, ह़ालांकि वह शब्द अलग होते थे। इस तरह़ वह अल्लाह तआ़ला पर जानबूझ कर झूठ बोलते थे और वह जानते थे कि हम झूठ बोलते हैं।

यहूदियों की चालें और इस्लाम का ग़ल्बा-

● **नवें रुकूअ़** में यहूद के उन बातों की तर्दीद (रद्द) है जिस को उन्होंने अम्बिया की तरफ़ मन्सूब करके अपनी मज़हबी किताबों के अन्दर शामिल कर दिया था और उन किताबों के ज़रिये यह बताना चाहते थे कि नबी या फ़रिश्ते की हैसियत मअ़बूद (इ़बादत के लायक़) की सी है। चुनांचे इस रुकूअ़ में पूरा क़ानून बताया गया है कि ऐसी कोई तअ़लीम जो अल्लाह के सिवा किसी और की बन्दगी और परस्तिश सिखलाती हो, हरगिज़ किसी नबी की तअ़लीम नहीं हो सकती। तमाम अम्बिया ने तो अपने-अपने ज़माने में इसी दीन-ए-इस्लाम की दअ़वत दी है और इसीलिए अहले इस्लाम सारे अम्बिया पर ईमान रखते हैं और उन सारी किताबों को अल्लाह की ओर से मानते हैं जो अम्बिया पर नाज़िल हुईं। यह फ़र्क़ नहीं करते कि किसी को मानें और किसी को न मानें कि ऐसा करना कुफ़्र है।

फिर बतलाया गया है कि इस्लाम के सिवा अल्लाह के यहाँ कोई दीन क़ुबूल नहीं। फिर जो इस्लाम लाकर इस से फिर जाते हैं यानी मुरतद्दीन (इस्लाम से फिरने वाले) उन के मुतअ़ल्लिक़ बताया गया है कि उन लोगों पर अल्लाह की लअ़नत है फ़रिश्तों की और लोगों की भी, और वह हमेशा इस लअ़नत में गिरफ़्तार रहेंगे, कभी उस से निजात न होगी न उन से कभी अ़ज़ाब हल्का किया जाएगा, न अ़ज़ाब से कभी मोहलत दी जाएगी, मगर हाँ, जिन्होंने इस इरतिदाद (इस्लाम से फिरना) के बाद भी तौबः कर ली और अपनी ह़ालत की इस्लाह़ (सुधार) कर ली और पक्के सच्चे मुसलमान बन गये तो वह बेशक

बख़्श दिये जाएँगे क्योंकि अल्लाह तआ़ला 'गफ़ूरुर्रहीम' हैं और जिन्होंने तौबः न की और कुफ़्र ही की ह़ालत में मर गये तो फिर उन के निजात की कोई सूरत नहीं। वह ज़मीन भर सोना देकर अ़ज़ाब से बचना चाहें तब भी बदला में नहीं लिया जाएगा और उन का कोई मददगार भी न होगा कि उन को अ़ज़ाब से बचा ले।

अल्लाह की राह में ख़र्च-

● **दस्वें रुकूअ़** में ईमान की बरकत से अल्लाह की राह में ख़र्च का सवाब बतला कर यहूद के एतिराज़ को जो वह इस्लाम और अहले इस्लाम पर करते थे उस का जवाब दिया गया है। यहूद दावा करते थे कि ऊँट का गोश्त और दूध अल्लाह ने ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) पर ह़राम किया था और मुसलमानों पर एतिराज़ करते कि तुम इब्राहीम (अ़लै०) की इत्तिबअ़ करने वाले होकर ऊँट का गोश्त क्यों खाते हो और उस का दूध क्यों पीते हो। इस का जवाब देते हुए ह़क़ीक़ते ह़ाल को ज़ाहिर किया गया है कि यह चीज़ें ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) पर ह़राम न थीं, बल्कि ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) के पोते ह़ज़रत याक़ूब (अ़लै०) ने उस को एक ख़ास वजह से अपने नफ़्स पर ह़राम कर लिया था फिर वह उन की औलाद में भी ह़राम चला आया।

ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) के ज़िक्र के साथ उन के बनाये हुए कअ़बः का ज़िक्र फ़रमाया गया और उस घर की अ़ज़्मत व फ़ज़ीलत को बयान फ़रमाया गया और लोगों पर उस के घर का तवाफ़ यानी ह़ज जो वहाँ पहुँचने की इस्तिताअ़त (सामर्थ्य) रखते हों लाज़िम किया गया। आख़ीर में मुसलमानों को अहले किताब के फ़ित्नों (चालों) से बचने की हिदायत की गई और तम्बीह की गई कि अगर तुम उन यहूद व नसारा का कहना मानोगे तो वह तुम्हें मोमिन होने के बाद दोबारा कुफ़्र व गुमराही की तरफ़ पलटा देंगे और अब अहले इस्लाम के लिए ग़लतफ़हमी की कोई गुन्जाइश नहीं, बस तुम अल्लाह को मज़बूती के साथ पकड़े रहो और जो कोई अल्लाह को पकड़े रहेगा और उस के दीन से न हटेगा बस वही हिदायत और सिराते मुस्तक़ीम पर है।

अहले ईमान को हिदायत-

● **ग्यारहवें रुकूअ़** में अहले ईमान को ख़िताब करके अहम हिदायात व तअ़लीमात दी गई हैं जिन में-

● पहली हिदायत तक़्वा और ख़ौफ़े ख़ुदावन्दी की दी गई ताकि कोई बात अल्लाह तआ़ला की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ न हो।

● दूसरी हिदायात यह दी गई कि ऐ मुसलमानों! तुम सिवाय इस्लाम के और किसी ह़ालत पर मत मरना।

● तीसरी हिदायत यह दी गई कि तुम सब मिलकर अल्लाह की रस्सी यानी अल्लाह के दीन को

मज़बूती से थामे रहो।

● चौथी हिदायत यह दी गई कि ख़्वाहिशाते नफ़्सानी (Materialistic Desires) की इत्तिबअ़ करके आपस में मुन्तशिर (बिखर) न हो और आपस में मतभेद मत करो।

● पाँचवी हिदायत यह दी गई कि अल्लाह की नेअ़मतों को जो तुम पर हैं याद कर के उस के शुक्रगुज़ार बन्दे बने रहो और इस्लाम अल्लाह की वह नेअ़मत है जिस ने दुश्मनों को दोस्त बना दिया और अ़रब के दुश्मन क़बीलों को भाई-भाई कर दिया और आपस में उल्फ़त व मुहब्बत पैदा कर दी।

● छठी हिदायत यह दी गई कि मुसलमानों में एक जमाअ़त ऐसी ज़रूर होना चाहिए कि जो 'अम्र बिल् मअ़रूफ़ और नहि अनिल् मुन्कर' (अच्छाई का हुक्म और बुरे कामों से रोकने) के पाबन्द हों यानी दूसरों को तब्लीग़-ए-दीन, इस्लाम के प्रचार और तअ़लीम-ए-सुन्नत व कुर्आन के ज़रिये नेकी की तरफ़ बुलाया करें, अच्छी बातों का हुक्म करते रहा करें और बुरी बातों से रोकते रहा करें।

● सातवीं हिदायत यह दी गई कि तुम ख़्वाहिशात-ए-नफ़्सानी की वजह से आपस में इख़्तिलाफ़ मत करना और दीन में मतभेद मत करना।

दीन की दअ़वत और तब्लीग़ की ज़िम्मेदारी-

● **बारहवें रुकूअ़** में अहले इस्लाम को याद दिलाया गया है कि अब दुनिया के अन्दर उम्मत, उम्मते मुस्लिमा है और यह शराफ़त व फ़ज़ीलत इस उम्मत को इस वजह से मिली है कि उन पर दीन की दअ़वत व तब्लीग़ की ज़िम्मेदारी डाल दी गई है। इसलिए इस उम्मत का फ़रीज़ा 'अम्र बिल् मअ़रूफ़' और 'नहि अनिल् मुन्कर' (अच्छाई का हुक्म और बुराई से रोकना) होना चाहिए। यानी लोगों को अच्छी बात बतलाना और बुरी बातों और बुरे कामों से रोकना और मना करना। फिर अहले किताब का ज़िक्र किया गया है कि उन के लिए बेहतर यही होता कि यह ईमान व इस्लाम ले आते लेकिन उन में की अक्सरियत (Majority) ने ज़िद व हठधर्मी से काम लिया और नाफ़रमानी पर जमे रहे जिस से यह ग़ज़ब-ए-इलाही (अल्लाह के ग़ुस्से) के हक़दार हुए, लेकिन कुछ अहले किताब ऐसे भी हैं जिन्होंने तक़्वा और परहेज़गारी को अख़्तियार किया। अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर सही तरीक़े से सच्चा ईमान ले आये और अल्लाह की इताअ़त व फ़रमाँबरदारी में ख़ुद भी लग गये और दूसरों को भी अच्छी और नेक बातों की तल्क़ीन करने लगे और बुरी बातों से मना करने लगे। ऐसे सालेह़ (नेक) लोगों को पूरा-पूरा अज्र व सवाब अ़ता किये जाने की बशारत (ख़ुशख़बरी) दी गई और जो लोग कुफ़्र पर जमे रहे उन का अन्जाम बतलाया गया कि वह हमेशा-हमेश जहन्नम में पड़े रहेंगे।

इस के बाद मुसलमानों को हुक्म दिया गया कि तुम अहले इस्लाम को छोड़ कर ग़ैर मुस्लिमों से ख़ुसूसी तअ़ल्लुक़ात और दोस्ती मत रखो, इसलिए कि यह ग़ैर मुस्लिम तुम्हारे और तुम्हारे दीन के सख़्त दुश्मन हैं। तुम्हारे साथ फ़साद करने में कोई कमी नहीं रखते और तुम्हारे नुक़्सान के हमेशा चाहत में रहते हैं। तुम को अगर कोई नागवार ह़ालत पेश आती है तो वह उन के ख़ुशी का ज़रिया होती है और

अगर कोई अच्छी ह़ालत पेश आती है तो वह उन के लिए रंज का ज़रिया होती है, लेकिन अगर मुसलमानों ने सब्र व तक़्वा अख़्तियार किया तो कुफ़्फ़ार की चालें कोई नुक़्सान न पहुँचा सकेंगी, क्योंकि अल्लाह तआ़ला उन के आ़माल पर निगरानी रखते हैं।

ग़ज़्व-ए-बद्र का ज़िक्र-

● **तेरहवें रुकूअ़** में ग़ज़्व-ए-बद्र और अल्लाह तआ़ला की नुस्रत व मदद का ज़िक्र किया गया है कि कुफ़्फ़ार के मुक़ाबिले में अहले ईमान बहुत थोड़े और बिना साज़ो सामान के थे, लेकिन उन का जमाव और तक़्वा की बदौलत ग़ैब से उन की ताईद हुई और मलायका (फ़रिशतों) की फ़ौज मुसलमानों की मदद को नाज़िल की गई और मोमिनों को दिली सुकून अ़ता किया गया और इस ह़क़ीक़त को बतलाया गया कि फ़तेह़ व शिकस्त सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से है यानी यह सबक़ दिया गया कि जो दीन की राह में सब्र व तक़्वा अख़्तियार करेंगे अल्लाह तआ़ला उनकी मदद फ़रमाएगा।

ईमान वालों की सिफ़ात-

● **चौदहवें रुकूअ़** में अहले ईमान को उन चीज़ों से बाख़बर किया गया जो इन्सान को अल्लाह से ग़ाफ़िल करती हैं और बतलाया गया कि उन में से बुरी चीज़ दुनिया परस्ती और माल व दौलत की मुह़ब्बत है। माल व दौलत की लालच का तक़ाज़ा यह होता है कि आदमी का दिल हमदर्दी के जज़्बे से ख़ाली हो जाता है। इस सिल्सिले की सब से बड़ी चीज़ 'सूद्ख़ोरी' है जिस की मुमानिअ़त फ़रमाई गई, अल्लाह और रसूल की इताअ़त का हुक्म दिया गया और तक़्वा अख़्तियार करने का शौक़ व हिदायत फ़रमाया। फिर मुत्तक़ीन (नेक लोगों) के कुछ अहम सिफ़ात बयान फ़रमाये गये और उनको मग़्फ़िरत और नेअ़मुल बदल (अच्छे बदले) की बशारत सुनाई गई और फिर उनको नसीह़त के लिए पिछली क़ौमों की याद दिलाई गई कि जिन क़ौमों ने अल्लाह की नाफ़रमानी की और उस के रसूल को झुठलाया तो उनको दुनिया ही में कैसा अन्जामे बद् देखना पड़ा। फिर मुसलमानों को जो ग़ज़्व-ए-उ़हद में रंज और नुक़्सान पहुँचा था उस पर तसल्ली दी गई कि तुम इस वक़्ती शिकस्त पर हिम्मत मत हारो और रंज मत करो और वादा किया गया कि ऐ मुसलमानो! काफ़िरों पर तुम ही ग़ालिब रहोगे बशर्ते कि तुम पूरे मोमिन रहो और ईमानी तक़ाज़ों को पूरा करते रहो। फिर इस ग़ज़्व-ए-उ़हद में मुसलमानों को जो नुक़्सान पहुँचा उसकी ह़िक्मतें ज़ाहिर फ़रमाई गईं। इस तरह़ मुसलमानों को तसल्ली दी गई कि तुम को शिकस्त का ग़म न करना चाहिए और कमज़ोरी न दिखलाना चाहिए बल्कि दीन की नुस्रत (मदद) में लग जाना चाहिए।

जंगे उ़ह़द-

● **पन्द्रहवें रुकूअ़** में बतलाया गया कि जंगे उ़हद के मौक़े पर जब कुफ़्फ़ार ने यह अफ़वाह उड़ा दी कि नऊज़ुबिल्लाह रसूलुल्लाह (सल्ल०) को शहीद कर दिया गया तो इस ख़बर को सुनकर मुसलमानों के रहे सहे होश भी उड़ गये और कुछ के पैर मैदान से उखड़ गये और कुछ मुनाफ़िक़ीन

तो दीन से फ़िरने की सोचने लगे। इसलिए मुसलमानों को समझाया गया कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) बहरहाल अल्लाह के रसूल ही तो हैं जो लोगों को अल्लाह का हुक्म पहुँचाते हैं और बन्दों को अल्लाह का फ़रमाँबरदार (पैरवी करने वाला) बनाते हैं। वह ख़ुद तो मअ़बूद (उपास्य) नहीं कि उनकी वफ़ात से दीन ही ख़त्म हो जाए। आप से पहले भी बहुत से अल्लाह के रसूल हो चुके हैं और उन्हें इस दुनिया में मौत भी आई है तो क्या उन की मौत से दीन ख़त्म हो गया था? नहीं। तो इसी तरह़ अगर रसूलुल्लाह (सल्ल०) भी इन्तिक़ाल फ़रमा जाएँ या बिलफ़र्ज़ आप शहीद ही हो जाएँ तो क्या तुम दीन-ए-इस्लाम से उल्टे पांव लौट जाओगे और इस्लाम पर चलना छोड़ दोगे?

यानी यहाँ यह सबक़ दिया गया है कि मुसलमान रसूल-ए-अकरम (सल्ल०) की ग़ैर मौजूदगी में आप की हुई शरीअ़त पर क़ायम रहें और क़ुर्आन मजीद जो आप अमानत के तौर पर उम्मत में छोड़ गये हैं और अपना जो नमूना उम्मत को दे दिये गये हैं उन पर भी पूरी इस्तिक़ामत (Determination) के साथ क़ायम रहें।

फिर मज़ीद मुसलमानों को बतलाया गया कि अल्लाह की राह में जंग व जिहाद तुम से कोई नया मुतालूबा (Demand) नहीं और न तुम्हारे दीन की मदद करना कोई नई बात है बल्कि पहले कितने नबी हो चुके हैं जिन के साथ उनकी उम्मत के अल्लाह वालों ने दुश्मनाने दीन और कुफ़्फ़ार से जंग की और वह उन आज़माइशों से जो अल्लाह की राह में उन पर आईं, कम हिम्मत और कमज़ोर हुए और न कुफ़्फ़ार से दबे बल्कि वह अल्लाह की तरफ़ रुजूअ़ हुए अर्थात सम्बन्ध मज़बूत किया। अपने परवरदिग़ार से अपने गुनाहों की मग़्फ़िरत तलब की और साबित क़दमी की जो दरख़्वास्त की और कुफ़्फ़ार पर ग़ल्बा और फ़तेह़ की दुआ़ की जिस के नतीजे में अल्लाह तआ़ला ने उन्हें दुनिया का मुल्क व माल अ़ता किया और आख़िरत में भी बेहतरीन बदला अ़ता फ़रमाएगा, बस तुम को भी उन की पैरवी करनी चाहिए और मुनाफ़िक़ों के बहकाने में न आना चाहिए।

अल्लाह की मदद-

- **सोलहवें रुकूअ़** में भी ईमान वालों को समझाया गया कि देखो तुम इन काफ़िरों और मुनाफ़िक़ों का कहना मानोगे तो यह लोग तुम्हें उल्टे पांव कुफ़्र की तरफ़ लौटा देंगे और फिर तुम दीन व दुनिया के नुक़्सान में पड़ जाओगे। इसलिए न इनकी बात सुनो और न इनका कहना मानो और अल्लाह को अपना मददगार समझो वह बेहतरीन मदद करने वाला है और जब तुम अल्लाह ही को अपना वकील व कारसाज़ (काम बनाने वाला) समझोगे तो अल्लाह तआ़ला कुफ़्फ़ार के दिलों पर तुम्हारा रोअ़ब डाल देंगे।

ग़ज़्व-ए-उ़हद में अल्लाह तआ़ला ने अपना वादा कुफ़्फ़ार पर फ़तेह़ का पूरा कर दिखाया और कुफ़्फ़ार को मुसलमानों ने क़त्ल करना शुरु किया यहाँ तक कि कुफ़्फ़ार में भगदड़ मच गई लेकिन रसूलुल्लाह (सल्ल०) के हुक्म से ग़फ़्लत बरतने और आपस में इख़्तिलाफ़ (मतभेद) करने की वजह से

फ़तेह़ शिकस्त में बदल गई।

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने तीरान्दाज़ों की एक जमाअ़त को एक पहाड़ी पर तैनात किया था और हुक्म दिया था कि वह अपनी जगह को न छोड़ें, मगर मुसलमानों की फ़तेह़ होती देखकर उन तीरन्दाज़ों की अक्सरियत (Majority) अपने अमीर के हुक्म के ख़िलाफ़ पहाड़ से नीचे माले ग़नीमत जमा करने के लिए उतर आई और मुश्रिकीन ने यह मोर्चा ख़ाली देखकर उस पहाड़ी पर से हमला कर दिया तो मुसलमानों को सख़्त मुसीबत का सामना करना पड़ा और यह वक़्त मुसलमानों के लिए ईमान की कसौटी का था। ग़म पर ग़म पड़ रहे थे फिर मुसलमानों पर अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल हुआ कि उनकी इस ग़ल्ती को माफ़ फ़रमाया। फिर ठीक मैदाने जंग में जब कि मुजाहिदीन ग़म से निढ़ाल और ज़ख़्मों से चूर थे उन पर अल्लाह तआ़ला ने ऊँघ नाज़िल की, जिस से उन का सारा ग़म ख़त्म हो गया, दिल से दुश्मनों का ख़ौफ़ व हिरास निकल गया और चैन व सुकून की ह़ालत नसीब हो गई। फिर मुनाफ़िक़ीन के इस ख़याल की तर्दीद (रद्द) की गई जो कहते थे कि अगर हम मदीना में रहकर जंग करते तो इस तरह़ मैदाने जंग में क़त्ल न होते। उन को बतलाया गया कि क़िस्मत का लिखा टल नहीं सकता जिन के लिए क़त्ल मुक़द्दर हो चुका था उन के लिए इस से बचना मुम्किन नहीं। आख़ीर में फिर मुसलमानों को इत्मिनान दिलाया गया कि इस जंग में जो कुछ हुआ अल्लाह को इस से आज़्माइश मन्ज़ूर थी और जो कोताही मुसलमानों से हो गई थी अल्लाह तआ़ला ने उसकी माफ़ी दे दी।

मुनाफ़िक़ों का धोखा-

● **सत्रहवें रुकूअ़** में फिर अहले ईमान को ख़िताब करके हिदायत की गई कि तुम मुनाफ़िक़ीन की तक्लीफ़ों से बचे रहना, जो कहते हैं कि अगर हमारे पास होते और जंग के लिए न जाते तो वह न मरते और न क़त्ल किये जाते। मुनाफ़िक़ीन के इस क़ौल की तर्दीद में बतलाया गया है कि मौत व ह़यात तो अल्लाह के हाथ में है, जंग व जिहाद में जाने से कोई न मर सकता है और न जाने से ज़िन्दा रह सकता है और अगर बिल्फ़र्ज़ तुम अल्लाह की राह में मारे भी गये तो तुम्हारा कुछ नुक़्सान नहीं बल्कि फ़ायदा ही है क्योंकि इस शहादत से तुम्हारे गुनाह माफ़ होंगे। तुम पर अल्लाह की रह़मत होगी और अल्लाह की मग़्फ़िरत व रह़मत उन सब चीज़ों से बेहतर है जिन से लोग ज़िन्दा रहकर जमा करते हैं।

फिर रसूलुल्लाह (सल्ल०) के नर्म और रह़मदिल होने की तअ़रीफ़ की गई और मुसलमानों से जो कोताही इस ग़ज़्व-ए-उ़हद में हो गई थी उस को माफ़ कर देने और उन के लिए अल्लाह तआ़ला से इस्तिग़्फ़ार (माफ़ी) फ़रमा देने को कहा गया, फिर मुसलमानों को बतलाया गया कि कामियाबी और फ़तेह़ अल्लाह तआ़ला की मदद पर है। अगर वह तुम्हारी मदद फ़रमाएँ तो फिर कोई तुम पर ग़ालिब नहीं आ सकता और अगर वह तुम्हारी मदद न करें तो कौन है जो तुम्हारी मदद कर सके, लिहाज़ा मुसलमानों को अल्लाह तआ़ला की इताअ़त अख़्तियार करके उसकी मदद को ह़ासिल करना चाहिए और मुसलमानों को सिर्फ़ अल्लाह पर भरोसा करना चाहिए। अपनी कमज़ोरी और दुश्मन की ताक़त का ख़याल न करना

चाहिए। फिर जिहाद के सिलसिले में चन्द हिदायात दी गईं और बतलाया गया कि अल्लाह की रज़ामन्दी चाहने वाला और अल्लाह के ग़ज़ब का हक़्दार दोनों बराबर नहीं। फिर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की बेअ़सत मुसलमानों पर अल्लाह तआ़ला का एक बड़ा एहसान बतलाया गया जिस की मुसलमानों को क़द्र करनी चाहिए और आप की तअ़लीमात पर अ़मल करके तक़र्रुब (नज़्दीकी) हासिल करना चाहिए। फिर गज़्व-ए-उहद के सिलसिले में मुसलमानों को तसल्ली दी गई और अल्लाह के रास्ते में शहीद होने वालों का मर्तबः बताया गया।

अल्लाह के रास्ते में ख़र्च-

● **अट्ठारहवें रुकूअ़** में फिर मोमिनीन का ज़िक्र फ़रमाया गया कि जो अभी जंगे उहद से वापस ही हुए थे और ताज़ा ज़ख़्म खाये हुए थे कि फिर कुफ़्फ़ार के तआ़क़ुब (पीछा करने) के लिए रसूलुल्लाह (सल्ल०) की दअ़वते जिहाद को कुबूल करके तैयार हो गये और जब मुख़्बिरों (ख़बर पहुँचाने वाले) ने उन को डराया कि कुफ़्फ़ार ने तुम्हारे मुक़ाबले के लिए बड़ा लश्कर और सामान जमा कर रखा है अब उन से मुक़ाबला की जुर्रत न करो तो इस बात ने बजाय इस के कि वह ख़ौफ़ज़दह (डरते) होते उन का ईमान और बढ़ गया और उन्होंने कहा कि हमको कुफ़्फ़ार की ताक़त की परवाह नहीं, हमें अल्लाह काफ़ी है। बस इस मदद का यह असर हुआ कि अल्लाह तआ़ला ने उन्हें अपने फ़ज़्ल व नेअ़मत से नवाज़ा और आइन्दा के लिए भी मुसलमानों को चेतावनी की गई कि तुम कुफ़्फ़ार से न डरना बल्कि अल्लाह तआ़ला ही से डरते रहना कि उस के किसी हुक्म की मुख़ालिफ़त या नाफ़रमानी न हो।

इस के बाद हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को तसल्ली दी गई कि यह कुफ़्फ़ार व मुनाफ़िक़ीन अल्लाह का कुछ नहीं बिगाड़ सकते। इसलिए आप इन की बातों और शरारतों से मुतास्सिर (Effected) न हों फिर उन कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन को दुनिया में तुरन्त गिरिफ़्त और सज़ा न दिये जाने की हिक्मत और राज़ बतलाया गया कि उनको कुदरत ने ढ़ील और मोहलत दे रखी है ताकि यह अपनी बद् आ़मालियों में, इज़ाफ़ा और तरक़्क़ी करें और फिर इन को इकट्ठा सज़ा दी जाए। फिर जिहाद में चूंकि माल व दौलत की ज़रूरत होती है इसलिए कंजूसी की मज़म्मत (निन्दा) फ़रमाई गई और बतलाया गया कि जो अपना माल अल्लाह की राह में अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ ख़र्च नहीं करते क़ियामत को यही माल साँप बनाकर उन के गले में डाला जाएगा और वह इस कंजूसी की सज़ा भुगतेंगे।

यहूदे मदीना की शरारतों का ज़िक्र-

● **उन्नीस्वें रुकूअ़** में फिर अहले किताब यहूदे मदीना की शरारतों का ज़िक्र फ़रमाया गया और उन गुस्ताख़ और सरकश इन्सानों को जहन्नम के अ़ज़ाब की वअ़ीद सुनाई गई कि जिन्होंने अम्बिया तक को बिलावजह क़त्ल करने से नहीं डरे। फिर यहूद जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की रिसालत व नुबूव्वत को तस्लीम न करने के लिए जो हीला व बहाना पेश करते थे उस पर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को तसल्ली फ़रमाई गई कि यह आप के साथ कोई नई बात नहीं। बहरहाल मरना सब को है, क़ियामत में

हर एक को पूरा बदला उस के किये हुए का मिल जाएगा बस उस रोज़ जो जहन्नम से दूर रहा और जन्नत में दाख़िल किया गया वही पूरा कामियाब हुआ। आख़ीर में फिर मुसलमानों को सब्र व तक़्वा की तल्क़ीन फ़रमाई गई।

अल्लाह के क़ुद्रत की निशानियाँ-

● **बीस्वें यानी आख़िरी रुकूअ़** में बतलाया गया कि इस क़ायनात में फैली हुई बेशुमार निशानियाँ हैं कि जिन को देखने और उन में ग़ौर व फ़िक्र करने के बाद कोई अ़क्लमन्द अल्लाह की क़ुद्रत व हिक्मत, उसके अकेला होने का इन्कार नहीं कर सकता। इसलिए जो साहिबे अ़क्ल (अ़क्ल वाले) हैं उन की यह शान होती है कि वह अपने परवरदिगार को खड़े-बैठे-लेटे हर हाल में याद करते हैं कि दुनिया को बेकार और बेमक़्सद नहीं पैदा किया। यक़ीनन इस अ़जीब व ग़रीब दुनिया का सिल्सिला किसी अ़ज़ीम नतीजा और मक़्सद पर ख़त्म होगा।

यानी यहाँ से उन का ज़ेहन आख़िरत की तरफ़ जाता है जो मौजूदा ज़िन्दगी का आख़िरी और क़ुद्रती नतीजा है और वह अपने रब से दरख़्वास्त व दुआ़ करने लगते हैं कि, ऐ हमारे रब! हमें अन्जाम में दोज़ख़ के अ़ज़ाब और रुसवाई से बचाइए और हमारे गुनाहों को माफ़ फ़रमा कर हमारी बुराईयों को दूर कर दीजिए और हमें अपने नेक बन्दों में शामिल करके मौत दीजिए और उन्हीं के साथ हमारा हश्र व नश्र फ़रमाइए ताकि आख़िरत की वह नेअ़मतें जिन का आप ने अपने नेक बन्दों को अ़ता करने का वादा फ़रमाया है हम को भी हासिल हो जाए। बस जब उन्होंने अल्लाह तआ़ला से यह दुआ़एँ कीं तो अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से क़ुबूलियत-ए-दुआ़ का इत्मिनान दिलाया गया और ख़ुदाई क़ानून बयान फ़रमाया गया कि अल्लाह तआ़ला किसी की मेहनत को ज़ाया नहीं करते तो जिन लोगों ने अल्लाह की राह में घर बार छोड़ा, कुफ़्फ़ार से जंग व जिहाद किया और इस में शहीद तक हो गये उन की ज़रूर तमाम ख़ताएँ माफ़ कर दी जाएँगी और उनको जन्नत के बाग़ात में दाख़िल किया जाएगा, जहाँ उन को अल्लाह की दी हुई हर नेअ़मत हासिल होगी।

सूरः के ख़त्म पर मुसलमानों को एक नसीहत फ़रमाई गई कि अगर तुम दुनिया व आख़िरत में कामियाब होना चाहते हो तो दुनिया में हालात पर सब्र करो, सख़्तियाँ सह कर भी हर हाल में अल्लाह की फ़रमाँबरदारी पर जमे रहो और नाफ़रमानी से बचते रहो, दुश्मन के मुक़ाबले में मज़बूती और साबित क़दमी दिखाओ, इस्लाम और दीन की हिफ़ाज़त में लगे रहो और हर वक़्त हर हाल में हर काम में अल्लाह से डरते रहो कि उस की नाफ़रमानी न हो। अगर ऐसा कर लिया तो मुसलमानों के लिए कामियाबी ही कामियाबी है और इसी नसीहत पर सूरः को ख़त्म फ़रमाया गया।

आयत नं० 1 से 9 तक

الٓمّٓ ۝ اللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْحَیُّ الْقَیُّوْمُ ۝ نَزَّلَ عَلَیْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِّمَا بَیْنَ یَدَیْهِ وَ اَنْزَلَ التَّوْرٰىةَ وَ الْاِنْجِیْلَ ۝
مِنْ قَبْلُ هُدًى لِّلنَّاسِ وَ اَنْزَلَ الْفُرْقَانَ ؕ اِنَّ الَّذِیْنَ كَفَرُوْا بِاٰیٰتِ اللّٰهِ لَهُمْ عَذَابٌ شَدِیْدٌ ؕ وَ اللّٰهُ عَزِیْزٌ ذُو انْتِقَامٍ ۝ اِنَّ اللّٰهَ لَا یَخْفٰى
عَلَیْهِ شَیْءٌ فِی الْاَرْضِ وَ لَا فِی السَّمَآءِ ۝ هُوَ الَّذِیْ یُصَوِّرُكُمْ فِی الْاَرْحَامِ كَیْفَ یَشَآءُ ؕ لَاۤ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْعَزِیْزُ الْحَكِیْمُ ۝ هُوَ
الَّذِیْۤ اَنْزَلَ عَلَیْكَ الْكِتٰبَ مِنْهُ اٰیٰتٌ مُّحْكَمٰتٌ هُنَّ اُمُّ الْكِتٰبِ وَ اُخَرُ مُتَشٰبِهٰتٌ ؕ فَاَمَّا الَّذِیْنَ فِیْ قُلُوْبِهِمْ زَیْغٌ فَیَتَّبِعُوْنَ مَا
تَشَابَهَ مِنْهُ ابْتِغَآءَ الْفِتْنَةِ وَ ابْتِغَآءَ تَاْوِیْلِهٖ ۚ وَ مَا یَعْلَمُ تَاْوِیْلَهٗۤ اِلَّا اللّٰهُ ۘ وَ الرّٰسِخُوْنَ فِی الْعِلْمِ یَقُوْلُوْنَ اٰمَنَّا بِهٖ ۙ كُلٌّ مِّنْ عِنْدِ
رَبِّنَا ۚ وَ مَا یَذَّكَّرُ اِلَّاۤ اُولُوا الْاَلْبَابِ ۝ رَبَّنَا لَا تُزِغْ قُلُوْبَنَا بَعْدَ اِذْ هَدَیْتَنَا وَ هَبْ لَنَا مِنْ لَّدُنْكَ رَحْمَةً ۚ اِنَّكَ اَنْتَ
الْوَهَّابُ ۝ رَبَّنَاۤ اِنَّكَ جَامِعُ النَّاسِ لِیَوْمٍ لَّا رَیْبَ فِیْهِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ لَا یُخْلِفُ الْمِیْعَادَ ۝

अनुवाद-

① अलिफ़- लाम- मीम-। ② अल्लाह (वह है कि) उसके सिवा कोई इबादत के लायक़ नहीं, 'वह' ज़िन्दा, हमेशा रहने वाला है; ③ 'उसने' आप पर सच्ची किताब उतारी, जो अपने से पहले की (किताबों की) तस्दीक़ (पुष्टि) करती है, और उसी ने तौरात और इंजील उतारी; ④ इससे पहले लोगों की हिदायत (मार्ग दर्शन) के लिए फ़ुर्क़ान (हक़ व बातिल को अलग-अलग करने वाला) उतारा, जिन लोगों ने अल्लाह की आयतों का इन्कार किया, उनके लिए सख़्त अज़ाब है; और अल्लाह ज़बरदस्त, बदला लेने वाला है। ⑤ अल्लाह से कोई चीज़, न ज़मीन में छिपी है, और न आसमान में। ⑥ 'वही' तो है जो रहम (गर्भाशय) में जैसा चाहता है तुम्हारी सूरतें बनाता है,'उस' ताक़त वाले (प्रभुत्वशाली) हिकमत वाले के सिवा कोई इबादत के लायक़ नहीं। ⑦ 'वही' है जिसने तुम पर किताब उतारी, जिसकी कुछ आयतें मुह्कम (सुदृढ़) हैं, वही किताब तो असल (मूल) है- और दूसरी मुतशाबेह (मिलती-जुलती) हैं, तो वह लोग जिनके दिलों मे टेढ़ है, वे मुतशाबेह (संदिग्ध) की पैरवी करते हैं, ताकि फ़ित्ने फैलाएँ, (ग़लत) मतलब बयान कर के, जबकि असली मतलब अल्लाह के सिवा कोई नहीं जानता, और जो लोग इल्म में पक्के होते हैं, वे कहते हैं, "हम तो इस पर ईमान लाए ये सभी हमारे रब की ओर से है, और नसीहत तो अक़्लमंद ही क़ुबूल करते हैं"। ⑧ (ऐ) हमारे रब! जब 'तू' हमें सीधे रास्ते पर लगा चुका है तो इसके बाद हमारे दिलों में टेढ़ न पैदा कर, और हमें अपने पास से रह़मत (दयालुता) अ़ता कर, बेशक 'तू' ही' बड़ा दाता है। ⑨ (ऐ) हमारे रब! 'तू' लोगों को एक दिन इकट्ठा करने वाला है, जिसमें कोई संदेह नहीं, बेशक अल्लाह अपने वादा के खिलाफ़ नहीं करता।

आयत नं० 1 से 9 तक की व्याख्या

1-2 الٓمّٓ ۝ اللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْحَیُّ الْقَیُّوْمُ ۝

अल्ह़म्दु लिल्लाह अब क़ुर्आन की तीसरी सूरः 'आले इ़मरान' का बयान शुरु हो रहा है। जिस की तफ़्सीर से पहले सूरः की वजह तस्मिया अर्थात नामकरण, फ़ज़ीलत, मक़ाम व सबबे नुज़ूल (नुज़ूल की

वजह) ख़ुलास-ए-मज़ामीन (Summary) तअ़दाद आयात व रुकूआ़त वग़ैरह बयान किये जाते हैं।

नाम की वजह-

इस सूरत के चौथे रुकूअ़ में आले इम्रान का ज़िक्र आया है। 'इम्रान' ह़ज़रत मूसा व ह़ज़रत हारून अ़लैहिमुस्सलाम के वालिद का नाम था और 'इम्रान' ह़ज़रत 'मरयम' के वालिद का भी नाम था और इन दोनों इम्रानों के दर्मियान लगभग 1800 साल का फ़ासला है। उ़लमा का इख़्तिलाफ़ है कि यहाँ इस सूरः में 'इम्रान' से कौन से 'इम्रान' मुराद हैं। कुछ के नज़्दीक 'ह़ज़रत मूसा व हारून अ़लैहिमुस्सलाम' के वालिद मुराद हैं और कुछ के नज़्दीक 'ह़ज़रत मरयम' के वालिद मुराद हैं। बहरहाल चूंकि सूरः में आले इम्रान का ज़िक्र आया है इसलिए निशानी के तौर पर सूरः का नाम "आले इम्रान" हुआ। इस सूरः का नाम 'मुजाद्ला' भी है इसलिए कि यह सूरः 'ह़ज़रत ईसा' (अ़लै०) की उलूहियत के मुजाद्ले (सफ़ाई पेश करने) और मुबाह़िसे (Dialouge) के बारे में नाज़िल हुई जैसा कि शाने नुज़ूल से मालूम हो जाएगा।

फ़ज़ीलत-

'सूरः बक़रः' और 'सूरः आले इम्रान' का नाम कुर्आन की दो रौशन सूरतों में आता है। अब कुर्आन करीम की सूरतें तो सारी ही रौशन हैं, मगर उ़लमा ने लिखा है कि शायद 'सूरः बक़रः' और 'सूरः आले इम्रान' के मज़ामीन एक दूसरे से मिलते-जुलते हैं, इसलिए इन दोनों सूरतों का नाम **'ज़हरावैन'** रखा गया हो और अह़ादीस में आया है कि "क़ियामत के दिन 'सूरः बक़रः' और 'आले इम्रान' के पढ़ने वाले को एक नूर अ़ता किया जाएगा।"

ह़ज़रत अबू उमामा (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "दो जगमगाने वाली सूरतें यानी 'सूरः बक़रः' और 'सूरः आले इम्रान' पढ़ा करो। यह क़ियामत के दिन बादलों या परिन्दों की तरह़ आएँगी और पढ़ने वालों के लिए लड़ेंगी।" **(मुस्लिम)**

शाने नुज़ूल- (सूरः नाज़िल होने के समय की ह़ालत)

पिछली 'सूरः बक़रः' में ख़ासतौर पर 'बनी इस्राईल' यानी 'यहूद' से ख़िताब था। इस सूरः में ख़िताब 'ईसाइयों' यानी 'नसारा' की तरफ़ है। इस सूरः के इब्तिदाई ह़िस्से यानी 83 आयात के नुज़ूल का यह वाक़िआ़ बयान किया गया है कि 'नजरान' के ईसाईयों की एक जमाअ़त जिन की तअ़दाद लगभग 60 के क़रीब थी, मदीना मुनव्वरह में रसूलुल्लाह (सल्ल०) से मज़हबी बह़स व मुनाज़िरह (Debate) के लिए आई। 'नजरान' यमन के इलाक़े में एक जगह का नाम है। उस वक़्त यहाँ ईसाइयों की आबादी थी और यह शहर ईसाइयों का इल्मी मरकज़ (Education Centre) था। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की नुबूव्वत व रिसालत की ख़बर जब इन जगहों पर पहुँची तो नजरान के ईसाइयों का एक वफ़्द (Delegate) रसूलुल्लाह (सल्ल०) की ख़िद्मत में मदीना मुनव्वरह पहुँचा। इन 60 लोगों के जत्थे में 14 आदमी

ख़ासतौर पर बड़े सम्मानित लोग और सरदार थे जिन में तीन बहुत बड़ी हैसियत वाले उस वक़्त के मशहूर ईसाइयों के अगुवा और मार्गदर्शक थे।

इनमें एक अमीर और सरदार 'अ़ब्दुल मसीह़ आ़क़िब' था, जो दौलत और सरदारी के अ़लावा बड़ा होशियार और राय देने वाला था। दूसरा उस का वज़ीर और मुशीर 'ईहम' था, जो तद्बीर (योजनाएँ बनाने) के लिहाज़ से मशहूर था। तीसरा उन का सब से बड़ा मज़हबी आ़लिम और पादरी 'अबू ह़ारिसा बिन अ़ल्क़मा' था जिस की 'रोम' के बादशाह बड़ी इ़ज़्ज़त करते थे। जब यह मदीना मुनव्वरह ह़ाज़िर हुए तो ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) के बारे में बातचीत शुरु हुई, बातचीत करने वाले यही तीन थे जो ह़ज़रत मसीह़ को मअ़बूद मानने के क़ायल थे और ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) को अल्लाह का बेटा कहते थे। उन लोगों ने ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) की उलूहियत (एकेश्वरवाद) के दलील में यूँ कहा-

ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) के विषय में दलील-

(1) ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) मुर्दों को ज़िन्दा करते थे।
(2) बीमारों को अच्छा करते थे।
(3) ग़ैब (छुपी बात) की बाते बताते थे।
(4) मिट्टी के परिन्दे बनाकर उन में फूंक मारते तो वह ज़िन्दा हो जाते थे।

ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) के (नऊज़ुबिल्लाह) अल्लाह का बेटा होने पर दलील-

(1) वह बिना बाप के पैदा हुए जिस से मालूम हुआ कि वह अल्लाह के बेटे हैं।
(2) ह़ज़रत ईसा चन्द दिन के थे तो कलाम किया। उन से किसी ने छोटी उम्र अर्थात पैदा होते ही कलाम नहीं किया, यह भी अल्लाह के बेटे होने की दलील है।

और मस्ला तस्लीस यानी 'ह़ज़रत ईसा' के सालिसु सलासा (तीन ख़ुदाओं में से एक) होने पर यह दलील दिया कि ख़ुदा जगह-जगह यह कहता है कि हम ने यह काम किया, हम ने यह हुक्म दिया हम ने यह पैदा किया, हम ने यह किया। यह तमाम बहुवचन के शब्द हैं और बहुवचन का पहला दर्जा तीन है। इस से मालूम हुआ कि अल्लाह तन्हा नहीं है और उस के साथ 'ईसा' और 'मरयम' भी हैं वरना वह यूँ कहता कि मैंने यह किया, मैंने यह हुक्म दिया मैंने पैदा किया, मैंने मुक़द्दर किया।

यह उस गिरोह की दलीलें थीं जिनके जवाब में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने उन से इर्शाद फ़रमाया-

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का जवाब-

(1) क्या तुम को मालूम नहीं कि बेटा बाप के हमशक्ल होता है? उस गिरोह ने कहा क्यों नहीं।
(2) फिर आप ने इर्शाद फ़रमाया कि तुम को मालूम है कि अल्लाह तआ़ला ज़िन्दा है। कभी भी उस को मौत नहीं आ सकती और ईसा (अ़लै०) को ज़रूर मौत आने वाली है। उन्होंने इक़रार किया कि बेशक यह सह़ी है।

यहाँ हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के जवाब में यह बात क़ाबिले ग़ौर है कि आप ने नसारा के इल्ज़ाम के लिए यह नहीं फ़रमाया कि तुम्हारे अक़ीदे के मुताबिक़ तो ईसा (अ़लै०) को मौत आ चुकी है क्योंकि नसारा के अ़क़ीदे के मुताबिक़ हज़रत ईसा (अ़लै०) को सूली पर चढ़ा दिया गया और मक़्तूल होकर मर चुके हैं क्योंकि यह अ़क़ीदा बातिल (झूठा) है और ख़िलाफ़े वाक़िआ़ है। क़ुर्आन पाक और हदीसे नबवी (सल्ल०) में तफ़्सील से मौजूद है कि हज़रत ईसा (अ़लै०) न क़त्ल हुए और न सलीब (Cross) पर लट्काए गये बल्कि ज़िन्दा आसमान पर उठाये गये हैं और क़ियामत के क़रीब दज्जाल के क़त्ल के लिए आसमान से नाज़िल होंगे और फिर कुछ दिनों के बाद वफ़ात (मृत्यु) पाएँगे और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के बगल में जहाँ एक क़ब्र की जगह अब तक खाली है वहाँ दफ़्न होंगे, तो नबी करीम (सल्ल०) की ज़बान मुबारक से वही कलिमा निकला कि हज़रत ईसा (अ़लै०) को ज़रूर मौत और फ़ना आने वाली है।

(3) फिर आप ने फ़रमाया क्या तुम को मालूम नहीं कि अल्लाह तआ़ला ही हर चीज़ को थामने वाले और उस की सुरक्षा, निगरानी और रोज़ी देने वाले हैं। उन्होंने कहा-बेशक। फिर आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि बतलाओ कि क्या ईसा (अ़लै०) भी उन में से किसी चीज़ के मालिक व क़ादिर थे, यानी क्या हज़रत ईसा (अ़लै०) ने भी मख़्लूक़ात को पैदा किया है और क्या अपनी क़ुद्रत व ताक़त से मख़्लूक़ को हमेशा के लिए पैदा किया है? उन्होंने कहा नहीं।

(4) फिर आप ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने हज़रत ईसा (अ़लै०) की शक्ल व सूरत अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ उन की वालिदा के पेट में बनाई।

(5) क्या तुम्हें मालूम नहीं कि अल्लाह तआ़ला न खाता है, न पीता है, न पाख़ाना पेशाब करता है। उन्होंने कहा बेशक।

(6) फिर आप ने फ़रमाया, "क्या तुम्हें मालूम नहीं कि हज़रत ईसा (अ़लै०) की वालिदा ने उन को उसी तरह पेट में रखा जिस तरह एक औ़रत अपने बच्चे को पेट में रखती है और फिर उस को जनती है। उसी तरह हज़रत ईसा (अ़लै०) पैदा हुए और बच्चों की तरह उन को ग़िज़ा (खाना) दी गई। फिर बड़े हुए, वह खाते थे, पीते थे और पेशाब पाखाना करते थे, उन्होंने इक़रार किया कि बेशक सही है।"

(7) आख़ीर में आप ने इर्शाद फ़रमाया कि जब तुम को इन सब बातों का इक़रार है तो बताओ कि ऐसा होते हुए हज़रत ईसा 'अल्लाह' कैसे हुए जैसा तुम्हारा मानना है।

तो हक़ीक़त में आप के इन बातों से उन लोगों ने हक़ को ख़ूब पहचान लिया मगर जानबूझ कर इन्कार किया और यह बात सुनकर ख़ामोश हो गये। रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया कि अगर अब भी तुम को मेरे रिसालत में कुछ सन्देह बाक़ी है तो आओ हम और तुम अपनी औलाद को लेकर बाहर मैदान में निकलें और अल्लाह से दुआ़ करें कि झूठे पर अल्लाह की मार हो।

ईसाई यह सुनकर कहने लगे कि हम इस का जवाब मश्वरे के बाद देंगे। अतः मश्वरे के बाद इस पर राज़ी न हुए और 'नजरान' वापस चले गये। इसी दौरान सूरः आले इम्रान की शुरु से 83 आयातें नाज़िल हुईं।

इस वाक़िये में नजरान के नसारा से जो बातचीत हुई उस से यह नतीजा निकाला जा सकता है।

(1) एक यह कि ईसाइयों की वह दलीलें जो आज करते हैं, नई नहीं बल्कि उन के पहले के लोग भी यही बक्वास करते थे, जैसा कि 'नजरान' के वफ़्द की बातचीत से ज़ाहिर है।

(2) दूसरे यह कि अहले इस्लाम के पास हमेशा से नसारा की बक्वास दलीलों के जवाब मौजूद हैं, जैसा कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की बातों से मालूम होता है।

(3) तीसरे यह कि ईसाइयों को जवाब देने के लिए इस की कोई ज़रूरत नहीं कि हज़रत ईसा (अ़लै०) के मोअ़जिज़ात (चमत्कारों) का इन्कार किया जाए और उन को मुर्दा माना जाए। जैसा कि इस वफ़्द नजरान के मुनाज़िरह (तर्क) में उन तमाम वाक़िआ़त को मान कर उन को जवाब दिये गये हैं। यह तो सूरत के शाने नुज़ूल से मुतअ़ल्लिक़ बयान हुआ।

नोट- तर्तीब क़ुर्आनी के लिहाज़ से क़ुर्आन पाक की यह तीसरी सूरत है, मगर उतरने के क्रम में इस का शुमार 97 लिखा है यानी 96 सूरतें इस से पहले नाज़िल हो चुकी थीं और 17 सूरतें इसके बाद नाज़िल हुईं। यह सूरत मदनी है और इस में 200 आयात, 20 रुकूआ़त, 3542 कलिमात और 15326 हुरूफ़ होना बयान हुए हैं।

व्याख्या

الٓمّٓ ۝

हुरूफ़ मकत्तआ़त-

الٓمّٓ यह 'हुरूफ़ मक़त्तआ़त' (अलग-अलग अक्षर) में से हैं। इस का तफ़्सीली बयान पिछली सूरः बक़रः के शुरु में गुज़र चुका है जिस का खुलासा यही है कि यह 'हुरूफ़ मुक़त्तआ़त' अल्लाह की ख़ास निशानियों में से एक निशानी है, जिस का इल्म अल्लाह तआ़ला ने किसी को नहीं दिया। हाँ, हो सकता है कि रसूल (सल्ल०) को इस का इल्म बतौर एक राज़ के दिया गया हो। इसीलिए रसूलुल्लाह (सल्ल०) से इन हुरूफ़ की तफ़्सीर में सराहत (विस्तार) नहीं। इन हुरूफ़ के मुतअ़ल्लिक़ यही अ़क़ीदा रखना चाहिए कि यह कलामे इलाही हैं और यह अल्लाह तआ़ला के इस्रार (राज़) में से हैं।

اللَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّومُ ۝

इर्शाद है اللَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّومُ यानी अल्लाह तआ़ला ऐसे हैं कि उन के सिवा कोई क़ाबिले अ़िबादत नहीं, वह ज़िन्दा हैं, सब चीज़ों के संभालने वाले हैं। इस की तफ़्सीर व तशरीह़ पूरी तरह सूरः बक़रः की आयतुल्कुर्सी में की गई है। यहाँ इस सूरः के इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने ईसाइयों के

अ़क़ीदे का ज़िक्र फ़रमाया, जिन के तीन अ़क़ीदे यह थे।

ईसाइयों के तीन अ़क़ीदे-

1- तस्लियत यानी अल्लाह, ईसा और 'रूहुल् क़ुदुस' तीनों मिलकर ख़ुदा बनते हैं।
2- मसीह़ ख़ुदा है, वह इन्सान की शक्ल में आये थे।
3- मसीह़ ख़ुदा का बेटा है। (मआ़ज़ल्लाहि)

आजकल के अधिकतर ईसाई सिवाय चन्द फ़िर्क़ों के यही अ़क़ीदा रखते हैं। इस आयत ने इन तीनों अक़ीदों को झूठा साबित कर दिया। اللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ से पहला अ़क़ीदा झूठा हो गया।

फिर الْحَيُّ الْقَيُّوْمُ के इर्शाद से दूसरे और तीसरे अ़क़ीदे को ग़लत कर दिया गया क्योंकि ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) ह़ज़रत मरयम से पैदा हुए यानी वह अपनी पैदाइश में माँ के मुह़ताज हुए और ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) को फ़ना है तो वह क़य्यूम नहीं हो सकते। इसलिए वह अल्लाह कैसे हो सकते हैं। अल्लाह तआ़ला ने अपनी सिफ़त حَيٌّ और قَيُّوْمٌ बतला कर दलील अ़क़्ली की तरफ़ इशारा कर दिया कि जो ख़ुद अपनी ह़िफ़ाज़त और परवरिश में दूसरों का मुह़ताज हो, वह उलूहियत की इ़ज़्ज़त कैसे पा सकता है! क्योंकि बन्दगी और अ़िबादत उसी के सामने किया जा सकता है जिस को आख़िरी दर्जे की आख़िरी इ़ज़्ज़त नसीब हो और आख़िरी दर्जे की इ़ज़्ज़त उसी को ह़ासिल हो सकती है जिस में आख़िरी दर्जा कमाल हो और हर नुक़्स और ऐ़ब से पाक हो।

लेकिन ज़िन्दगी और मौत में दूसरों का मुह़ताज होना यह एक कमज़ोरी है, जो इ़ज़्ज़त के ख़िलाफ़ है। इसलिए नाक़िस ज़ात उलूहियत की आख़िरी दर्जे की इ़ज़्ज़त के ख़िलाफ़ है। इसलिए नाक़िस ज़ात उलूहियत के इ़ज़्ज़त की ह़क़्दार कैसे हो सकती है। बस इस आयत में तौह़ीद की अ़क़्ली दलील ज़िक्र फ़रमा कर मअ़बूदाने बातिला (झूठे ख़ुदा) के मअ़बूद न होने की अ़क़्ली दलील दी गई और जिस सिल्सिले में यह आयत नाज़िल हुई उस मुनासिबत से नसारा के अ़क़ीदे उलूहियत ईसा और बेटे ईसा और मस्ला तस्लीस (Trinity) को साफ़ रद्द और बातिल फ़रमाया गया।

3 نَزَّلَ عَلَيْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ وَ اَنْزَلَ التَّوْرٰىةَ وَ الْاِنْجِيْلَ ۝

किताबों का मतलब-

यहाँ "किताब" से मुराद क़ुर्आने करीम है, जिस में कोई शक व शुब्हा नहीं। क़ुर्आन अगली किताबों की तस्दीक़ करता है। "तौरेत" इबरानी शब्द है, जिस के माने "शरीअ़त" के हैं और "इन्जील" यूनानी शब्द है, जिस के माने "ख़ुशख़बरी" के हैं। यह दोनों किताबें क़ौमे मूसा और क़ौमें ईसा की हिदायत के लिए नाज़िल हुई थीं। जो क़ुर्आन के उतरने के बाद दोनों मन्सूख़ (निरस्त) हो गईं। उम्मते मुह़म्मदिया इस मन्सूख़ (निरस्त) शरीअ़तों की पाबन्द नहीं।

"फ़ुरक़ान" से मुराद तमाम आसमानी किताबें हैं, इसलिए कि सभी ह़क़ व बातिल (सत्य और

असत्य) के दर्मियान फ़र्क़ करती हैं या सिर्फ़ क़ुर्आन मुराद है, जो ह़क़ व बातिल (सत्य और असत्य) के दर्मियान फ़र्क़ करता है या उस ह़क़ व बातिल (सत्य और असत्य) में फ़र्क़ करता है जिस में यहूद व नसारा इख़्तिलाफ़ करते हैं। إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا आयत का मक़्सद क़ुर्आने करीम पर ईमान लाने की तर्ग़ीब और इन्कार करने की सूरत में अल्लाह के अ़ज़ाब से ख़ौफ़ दिलाना है।

ह़ज़रत अबू सल्मा (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तुम अहले किताब की न तस्दीक़ करो न तक्ज़ीब।" **(अबू दाऊद)**

4 مِنْ قَبْلُ هُدًى لِّلنَّاسِ وَأَنْزَلَ الْفُرْقَانَ ۗ إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا بِآيَاتِ اللَّهِ لَهُمْ عَذَابٌ شَدِيدٌ ۗ وَاللَّهُ عَزِيزٌ ذُو انْتِقَامٍ ۝

इससे पहले लोगों की हिदायत (मार्ग दर्शन) के लिए फ़ुर्क़ान (ह़क़ व बातिल को अलग-अलग करने वाला) उतारा, जिन लोगों ने अल्लाह की आयतों का इन्कार किया, उनके लिए सख़्त अ़ज़ाब है; और अल्लाह ज़बरदस्त बदला लेने वाला है।

5 إِنَّ اللَّهَ لَا يَخْفَىٰ عَلَيْهِ شَيْءٌ فِي الْأَرْضِ وَلَا فِي السَّمَاءِ ۝

अल्लाह तआ़ला लोगों के ईमान व कुफ़्र से बाख़बर है और हर एक को उस के ईमान या कुफ़्र का बदला ज़रूर देगा।

6 هُوَ الَّذِي يُصَوِّرُكُمْ فِي الْأَرْحَامِ كَيْفَ يَشَاءُ ۚ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ۝

अल्लाह तआ़ला मर्द व औ़रत, ख़ूबसूरत व बद्सूरत, नेक व बद्बख़्त (बुरे) जैसा चाहता है रह़म (गर्भ) में पैदा करता है। इशारा है इस तरफ़ कि ईसा बिन मरियम दूसरे तमाम इन्सानों की तरह़ अल्लाह की मख़्लूक़ और उसके बन्दे थे, अल्लाह ने उन्हें भी मरयम के रह़म (गर्भ) में जैसा चाहा बनाया, तो फिर वह "अल्लाह" कैसे हो सकते हैं? जैसा कि नसारा का बातिल (झूठा) अ़क़ीदा है।

7 هُوَ الَّذِي أَنْزَلَ عَلَيْكَ الْكِتَابَ مِنْهُ آيَاتٌ مُحْكَمَاتٌ هُنَّ أُمُّ الْكِتَابِ وَأُخَرُ مُتَشَابِهَاتٌ ۖ فَأَمَّا الَّذِينَ
فِي قُلُوبِهِمْ زَيْغٌ فَيَتَّبِعُونَ مَا تَشَابَهَ مِنْهُ ابْتِغَاءَ الْفِتْنَةِ وَابْتِغَاءَ تَأْوِيلِهِ ۗ وَمَا يَعْلَمُ تَأْوِيلَهُ إِلَّا اللَّهُ ۗ
وَالرَّاسِخُونَ فِي الْعِلْمِ يَقُولُونَ آمَنَّا بِهِ كُلٌّ مِنْ عِنْدِ رَبِّنَا ۗ وَمَا يَذَّكَّرُ إِلَّا أُولُو الْأَلْبَابِ ۝

मुह़कमात और मुतशाबिहात का मतलब

इस आयत में इर्शाद फ़रमाया कि क़ुर्आन मजीद में बहुत सी आयतें 'मुह़कमात' (आदेश वाली) हैं और बहुत सी आयतें 'मुतशाबिहात' (एक दूसरे से मिलती) हैं और कुछ आयातों में तमाम आयतों को मुह़कम (आदेश वाली) बताया है। जैसा कि सूरः हूद में फ़रमाया كِتَابٌ أُحْكِمَتْ آيَاتُهُ और कुछ जगह पूरे क़ुर्आन को 'मुतशाबेह' फ़रमाया। जैसा कि सूरः ज़ुमर में फ़रमाया اللَّهُ نَزَّلَ أَحْسَنَ الْحَدِيثِ كِتَابًا مُتَشَابِهًا مَثَانِيَ इन जगहों में 'मुह़कम' और 'मुतशाबिह' का वह माने मुराद नहीं है जो सूरः आले इमरान की इस आयत में मुराद है।

पूरा क़ुर्आन 'मुह़कम' इस एतिबार से है कि वह सारा ह़क़ है, शाब्दिक और आर्थिक एतिबार से बिल्कुल सही है, किसी भी जगह किसी तरह का इस में शक नहीं है, इस के अल्फ़ाज़ और माने सब ही मुह़कम मज़बूत और तर्तीब से हैं और जहाँ पूरे क़ुर्आन को 'मुतशाबेह' फ़रमाया वहाँ यह मुराद है कि क़ुर्आन मजीद की आयात आपस में मुतशाबेह हैं उस के मआ़नी हुस्न और ख़ूबी में, ह़क़ और सच होने में एक दूसरे से मिलते-जुलते हैं।

यहाँ (सूरः आले इमरान में) मुह़कमात से वह आयतें मुराद हैं जिन का मतलब बिल्कुल ज़ाहिर (स्पष्ट) है। यह आयात उम्मुल् किताब यानी बुनियादी उसूल हैं जिन के मआ़नी व मफ़ाहिम में कोई शक नहीं, इन में अच्छाई और बुराई के अह़काम हैं जो बिल्कुल साफ़ हैं। इन के जानने और समझने में कोई मुश्किल नहीं।

अगर किसी आयत में कोई चीज़ साफ़ समझ में न आती हो तो उस के मफ़्हूम को भी उन्हीं मुह़कमात यानी बुनियादी उसूल की तरफ़ लौटा दिया जाता है। दूसरे क़िस्म की आयतें यानी मुतशाबिहात से वह आयात हैं जिन में कहने वाले का मक़्सद हमें मालूम नहीं। इन आयतों को मुतशाबिहात कहा जाता है।

ह़ज़रत आ़ईशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा कहती हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जब तुम ऐसे लोगों को देखो जो मुतशाबिहात के पीछे पड़ते हैं तो समझ लो कि अल्लाह तआ़ला ने क़ुर्आन मजीद में उन्हीं लोगों का ज़िक्र किया है, सो उन से बचो"। **(बुख़ारी)**

रासिख़ीन फ़िल् इल्म (गूढ़ ज्ञान) का तरीक़ा-

'रासिख़ीना फ़िल् इल्म' यह है कि जो माने आयाते मोह़कमात के ख़िलाफ़ पड़ें उस का इन्कार किया जाए और बात करने वाले की मुराद वह समझी जाए जो आयाते मोह़कमात के ख़िलाफ़ न हो और कोई ऐसी तावील (सन्दर्भ) सही न समझी जाए जो आयाते 'मुह़कमात' के ख़िलाफ़ हों। आयाते मुतशाबिहात का सही मतलब वही तस्लीम किया जाए जो अल्लाह के नज़्दीक है यह आसान रास्ता है। बहुत से लोग इन का मतलब समझने की कोशिश करते हैं और समझ नहीं पाते, चूंकि उन के दिलों में टेढ़ापन है इसलिए आयाते मोह़कमात के स्पष्ट बयानात को छोड़कर मुतशाबिहात के मआ़नी समझने और कुरेदने में लग जाते हैं और फ़ित्ना (Controversy) के लिए उन के दो मतलब निकालते हैं जो उनकी ख़्वाहिशों और इच्छाओं के अनुसार हों। चाहे उन की यह तावील आयाते क़ुर्आनिया मोह़कमात के ख़िलाफ़ ही हो।

बहुत से वह लोग जो ह़दीस के इन्कारी होते हैं वह क़ुर्आन के भी इन्कारी बन जाते हैं क्योंकि वह लोग मुतशाबिहात के पीछे लगते हैं और उन के दिल के टेढ़ेपन की वजह से वह क़ुर्आन पाक से दूर हो जाते हैं। क़ुर्आन में है الرَّحْمٰنُ عَلَى الْعَرْشِ اسْتَوٰى और يَوْمَ يُكْشَفُ عَنْ سَاقٍ और وَجَآءَ رَبُّكَ وَالْمَلَكُ صَفًّا صَفًّا और يَدُ اللّٰهِ فَوْقَ اَيْدِيْهِمْ ۚ

'रासिख़ीना फ़िल् इल्म' इन सब पर ईमान लाते हैं और समझते हैं उन के मानी और मतलब को मानते हैं और कहते हैं कि उन का जो मतलब अल्लाह के नज़्दीक है वही हमारे नज़्दीक है। इसी को

फ़रमाया وَالرّٰسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ يَقُوْلُوْنَ اٰمَنَّا بِهٖ ۙ كُلٌّ مِّنْ عِنْدِ رَبِّنَا कि जो लोग इल्म में पुख़्ता हैं वह कहते हैं कि हम उस पर ईमान लाए यह सब हमारे रब की तरफ़ से है।

जो लोग क़ुर्आन की तअ़लीमात का मरकज़ आयाते मोहकमात को मानते हैं और मुतशाबिहात के बारे में अपने इल्म की ग़ल्ती का एतिराफ़ करते हैं और उन के हक़ीक़ी माने को अल्लाह के सुपुर्द करते हुए यूँ कह कर आगे बढ़ जाते हैं कि उन का जो मफ़्हूम अल्लाह के नज़्दीक है हम उसे तस्लीम करते हैं, उस पर हमारा ईमान है।

जब इमाम मालिक (रह़०) से "اِسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ" के बारे में मालूम किया गया तो उन्होंने फ़रमाया-

المعنى معلوم والكيف مجهول والايمان به واجب والسوال عنه بدعة: {माने मालूम हैं और कैफ़ियत मजहूल (ना मालूम) है, उस पर ईमान लाना वाजिब है और (उस के) माने के बारे में सवाल करना बिद्अ़त (दीन में कोई नई बात निकलना) है} वह अल्लाह हर कमी, ऐब और जिस्म से पाक है और जो कुछ आयत में बयान हुआ है उस पर ईमान लाना वाजिब है ताकि मुतशाबिहात के उस मतलब पर भी ईमान हो जाए जो अल्लाह के नज़्दीक हैं।

बहुत से लोग मुतशाबिहात के ज़ाहिरी माने लेते हैं और لَيْسَ كَمِثْلِهٖ شَيْءٌ को भूल जाते हैं।

ह़ज़रत आइशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा फ़रमाती हैं, "रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया कि जब तुम ऐसे लोगों को देखो जो 'मुतशाबिहात' की खोज में लगे हुए हों तो उन से परहेज़ करो क्योंकि यही लोग हैं जिन का अल्लाह तआ़ला ने ज़िक्र किया है, लिहाज़ा उन से परहेज़ करो"।

(सही़ बुख़ारी भाग 2,पेज नं० 652)

"اى ذكرهم فى قوله فَاَمَّا الَّذِيْنَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ زَيْغٌ فَيَتَّبِعُوْنَ مَا تَشَابَهَ مِنْهُ ابْتِغَاءَ الْفِتْنَةِ وَابْتِغَاءَ تَاْوِيْلِهٖ

कुछ उ़लमा ने फ़रमाया है कि मुतशाबिहात अहले इल्म की आज़्माइश के लिए हैं, जिन का रिसर्च और तलाश का मिज़ाज होता है और उन की आज़्माइश इस में है कि बस रुक जाएँ आगे न बढ़ें और जिन लोगों को इल्म का शौक़ नहीं उन की आज़्माइश इस में है कि उन को समझाकर इल्म पर लगाया जाए और आयाते मोह़कमात के समझने और पढ़ने-पढ़ाने पर आमादा किया जाए।

8 رَبَّنَا لَا تُزِغْ قُلُوْبَنَا بَعْدَ اِذْ هَدَيْتَنَا وَهَبْ لَنَا مِنْ لَّدُنْكَ رَحْمَةً ۚ اِنَّكَ اَنْتَ الْوَهَّابُ ۝

रासिख़ीन फ़िल् इल्म की दुआ़

इन दोनों आयतों में उन लोगों की दुआ़ नक़्ल फ़रमाई है जिन्हें रुसूख़ फ़िल् इल्म ह़ासिल है। वह यूँ दुआ़ करते हैं कि ऐ हमारे रब! आप ने हम को हिदायत फ़रमाई है। हम को हिदायत पर ही रखिये हमारे दिलों में टेढ़ापन पैदा न फ़रमाइए। जो लोग दिलों की कजी की वजह से मुतशाबिहात के पीछे पड़ते हैं, हमें उन में से न कीजिए और अपने पास से हमें बड़ी रह़मत अ़ता फ़रमाइए। यह आ़म रह़मत

हमें दुनिया में भी ह़ासिल हो और आख़िरत में भी ह़ासिल हो। हमारा ईमान मुह़कमात पर भी रहे और मुतशाबिहात पर भी रहे।

ह़क़ीक़त में यह दुआ़ बहुत अहम है और यह दुआ़ बराबर करते रहना चाहिए। बहुत से लोगों ने हिदायत अख़्तियार करने के बाद गुमराही अख़्तियार कर ली और फ़ित्ना में पड़कर ईमान खो बैठे और हिदायत से दूर हो गये।

सह़ीह़ मुस्लिम में है, रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया कि बेशक बनी आदम के दिल सब के सब अल्लाह के क़ब्ज़े में है वह जैसे चाहे फेर दे। फिर आप ने यह दुआ़ की-

(يَا مُقَلِّبَ الْقُلُوبِ ثَبِّتْ قَلْبِى عَلٰى دِينِك) (कि ऐ दिलों को उलट फेर करने वाले! मेरे दिल को तू अपने दीन पर क़ायम रख।)

9 رَبَّنَآ اِنَّكَ جَامِعُ النَّاسِ لِيَوْمٍ لَّا رَيْبَ فِيْهِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُخْلِفُ الْمِيْعَادَ ۝

रासिख़ीन फ़िल् इ़ल्म की दूसरी दुआ़ यह नक़्ल फ़रमाई कि ऐ हमारे रब! आप सब लोगों को ऐसे दिन में जमा फ़रमाएँगे जिस में कोई शक नहीं है आप ने इस का वादा फ़रमाया है जो सच्चा वादा है क़ियामत का दिन ज़रूर आएगा और तमाम लोग उस में जमा होंगे।

आयत नं० 10 से 18 तक

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا لَنْ تُغْنِيَ عَنْهُمْ أَمْوَالُهُمْ وَلَا أَوْلَادُهُمْ مِنَ اللَّهِ شَيْئًا ۖ وَأُولَٰئِكَ هُمْ وَقُودُ النَّارِ ۝ كَدَأْبِ آلِ فِرْعَوْنَ
وَالَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۚ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا فَأَخَذَهُمُ اللَّهُ بِذُنُوبِهِمْ ۗ وَاللَّهُ شَدِيدُ الْعِقَابِ ۝ قُلْ لِلَّذِينَ كَفَرُوا سَتُغْلَبُونَ
وَتُحْشَرُونَ إِلَىٰ جَهَنَّمَ ۚ وَبِئْسَ الْمِهَادُ ۝ قَدْ كَانَ لَكُمْ آيَةٌ فِي فِئَتَيْنِ الْتَقَتَا ۖ فِئَةٌ تُقَاتِلُ فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَأُخْرَىٰ
كَافِرَةٌ يَرَوْنَهُمْ مِثْلَيْهِمْ رَأْيَ الْعَيْنِ ۚ وَاللَّهُ يُؤَيِّدُ بِنَصْرِهِ مَنْ يَشَاءُ ۗ إِنَّ فِي ذَٰلِكَ لَعِبْرَةً لِأُولِي الْأَبْصَارِ ۝ زُيِّنَ لِلنَّاسِ حُبُّ
الشَّهَوَاتِ مِنَ النِّسَاءِ وَالْبَنِينَ وَالْقَنَاطِيرِ الْمُقَنْطَرَةِ مِنَ الذَّهَبِ وَالْفِضَّةِ وَالْخَيْلِ الْمُسَوَّمَةِ وَالْأَنْعَامِ وَالْحَرْثِ ۗ
ذَٰلِكَ مَتَاعُ الْحَيَاةِ الدُّنْيَا ۖ وَاللَّهُ عِنْدَهُ حُسْنُ الْمَآبِ ۝ قُلْ أَؤُنَبِّئُكُمْ بِخَيْرٍ مِنْ ذَٰلِكُمْ ۚ لِلَّذِينَ اتَّقَوْا عِنْدَ رَبِّهِمْ
جَنَّاتٌ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا وَأَزْوَاجٌ مُطَهَّرَةٌ وَرِضْوَانٌ مِنَ اللَّهِ ۗ وَاللَّهُ بَصِيرٌ بِالْعِبَادِ ۝ الَّذِينَ
يَقُولُونَ رَبَّنَا إِنَّنَا آمَنَّا فَاغْفِرْ لَنَا ذُنُوبَنَا وَقِنَا عَذَابَ النَّارِ ۝ الصَّابِرِينَ وَالصَّادِقِينَ وَالْقَانِتِينَ وَالْمُنْفِقِينَ وَالْمُسْتَغْفِرِينَ
بِالْأَسْحَارِ ۝ شَهِدَ اللَّهُ أَنَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ وَالْمَلَائِكَةُ وَأُولُو الْعِلْمِ قَائِمًا بِالْقِسْطِ ۚ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ۝

अनुवाद-

(10) जिन लोगों ने कुफ़्र (इन्कार) किया न उनके माल अल्लाह (के अ़ज़ाब) से उनको बचा सकेंगे और
न उनकी औलाद कुछ काम आएगी और यही लोग आग के ईंधन होंगे। (11) इनका ह़ाल भी फिरऔ़न
के लोगों और उनसे पहले के लोगों का सा होगा जिन्होंने हमारी आयतों को झुठलाया था, तो अल्लाह ने उन्हें
उनके गुनाहों की वजह से पकड़ लिया था, और अल्लाह सख़्त सज़ा देने वाला है। (12) (ऐ मुह़म्मद) काफ़िरों
(इन्कारियों) से कह दीजिए, ''जल्द ही तुम पराजित किये जाओगे, और जहन्नम की ओर इकट्ठे किये जाओगे,
और वह बुरा ठिकाना है,।'' (13) तुम्हारे लिए एक निशानी (उन) दो गिरोहों में है, जो (बद्र की लड़ाई में)
एक दूसरे से भिड़ गये, एक गिरोह (उसमें मुसलमानों का था जो) अल्लाह की राह में लड़ रहा था, और
दूसरा गिरोह (काफ़िरों का था वह) उनको अपनी आखों से देख रहा था कि वे उनसे दुगने हैं, और अल्लाह
अपनी मदद से जिसे चाहता है शक्ति प्रदान करता है, जो बसारत (खुली आँखों) वाले हैं उनके लिए इसमें
बड़ा सबक़ है। (14) लोगों के लिए ज़ीनत (शोभायमान) कर दी गई है, उनके ख्वाहिशों की मुह़ब्बत, औ़रतों
से हो या बेटों से, या ढ़ेर लगे हुए सोने और चाँदी से या निशान लगे हुए घोड़ों से, या मवेशियों से, (यह
सब भली मालूम होती है) या खेती बाड़ी से, यह सब दुनियावी ज़िन्दगी के सामान हैं, और अच्छा ठिकाना
तो अल्लाह ही के पास है। (15) कह दीजिए, ''क्या मैं तुम्हें ऐसी चीज़ की ख़बर दूँ, जो इनसे बेहतर हो,
उन लोगों के लिए जो परहेज़गार हैं, उनके लिए रब के पास बाग़ हैं, जिनके नीचे नहरें बह रही हैं, उसमें
वे हमेशा रहेंगे, और पाक-साफ बीवियाँ (पत्नियाँ) होंगी, और अल्लाह की रज़ामन्दी (प्राप्त) होगी, और अल्लाह
अपने बन्दों को देखने वाला है।'' (16) (यह वह लोग हैं) जो कहते रहते हैं कि (ऐ) हमारे रब! हम ईमान
ले आए,सो हमारे गुनाह माफ़ कर दे, और हमें दोज़ख की आग से बचा; (17) यह लोग सब्र (धैर्य) से काम
लेते हैं, और सच बोलते हैं, और अ़िबादत में लगे रहते हैं, और (अल्लाह की राह में) खर्च करते हैं, और
सह़र (भोर) में गुनाहों की माफ़ी माँगा करते हैं। (18) अल्लाह तो इसकी गवाही देता है कि उसके सिवा

कोई इबादत के लायक़ नहीं, और फ़रिश्ते और इल्म वाले लोग जो इन्साफ़ पर क़ायम हैं, वह भी (गवाही देते हैं कि) उस प्रभुत्वशाली हिक्मत वाले अल्लाह के सिवा कोई अ़िबादत के लायक़ नहीं।

आयत नं० 10 से 18 तक की व्याख्या

10 إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا لَن تُغْنِيَ عَنْهُمْ أَمْوَالُهُمْ وَلَا أَوْلَادُهُم مِّنَ اللَّهِ شَيْئًا ۖ وَأُولَٰئِكَ هُمْ وَقُودُ النَّارِ ۝

इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि जब आप (सल्ल०) बद्र की जंग से लौटे तो आप ने यहूद को बनू कैनक़ाअ़ के बाज़ार में इकट्ठा कर के कहा, “ऐ यहूद! इस्लाम क़बूल कर लो, इस से पहले कि तुम्हारी भी अल्लाह की ओर से वैसी पिटाई हो जैसी क़ुरैश की हो चुकी हो” वह कहने लगे, “ऐ मुह़म्मद! क़ुरैश के लोगों की पिटाई कर के किसी धोके में न रहना, वह तो जाहिल और उजड थे, लड़ाई करना जानते न थे, हम से मुक़ाबिला होगा तो समझ में आ जाएगा।” तो अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई। (अबू दाऊद)

मोमिन व काफ़िर का ह़ाल-

क़ुर्आन करीम का यह आ़म दस्तूर है कि ईमान के साथ कुफ़्र का, मोमिनीन के साथ कुफ़्फ़ार का, नूर (रौशनी) के साथ ज़ुल्मत (अंधेरे) का, हिदायत के साथ गुमराही का ज़िक्र फ़रमाया जाता है क्योंकि हर चीज़ अपने अपोज़िट से पहचानी जाती है। ज़ाहिर के एतिबार से तो यहाँ आयत में सारे काफ़िर चाहे वह अहले किताब यहूद व नसारा हों या मुश्रिकीन, मजूस, बुत परस्त मुराद हों जिन का अन्जाम बतलाया गया कि उन को कोई चीज़ दुनिया और आख़िरत में अल्लाह की सज़ा और गिरफ़्त से नहीं बचा सकती और जब अल्लाह का अ़ज़ाब आ पहुँचेगा तो उस वक़्त उन काफ़िरों का माल व दौलत और औलाद व मदद करने वाले कुछ काम न आएँगे।

जिस तरह़ पहले के काफ़िरों को और मुश्रिकीन को उन के कुफ़्र व शिर्क की सज़ा मिली थी उसी तरह़ मौजूदा कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन को भी सज़ा मिलेगी और साथ ही जो अल्लाह और उस के रसूल के दुश्मन हैं यह अहले इस्लाम से शिकस्त खाकर गिर जाएँगे और दुनिया में सज़ा पाने के बाद आख़िरत में भी उन्हें जहन्नम की आग में झोंक दिया जाएगा या कुछ मुफ़स्सिरीन (व्याख्याकारों) का कहना है कि इन आयतों में असली ख़िताब “नजरान” के नसारा से है जो ईसाईयों की सब से बड़ी अहम जमाअ़त थी वह मदीना मुनव्वरह में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के पास ह़ाज़िर हुई और मज़हबी मसायल में भी रसूलुल्लाह (सल्ल०) से बातचीत की थी।

इसलिए यह आयतें उन्हीं नजरान के, नसारा के बारे में नाज़िल हुईं जिन पर दलायल से ह़क़ खुल चुका था, मगर माल व दौलत की लालच और इ़ज़्ज़त व शोहरत छिन जाने के ख़ौफ़ से वह क़ुबूले ह़क़ और क़ुबूले हिदायत से दूर रहे इसलिए उन के लिए यह आयतें नाज़िल हुईं और अल्लाह तआ़ला ने इन

आयतों में उन्हीं लोगों की तरफ़ इशारा फ़रमाया है, कि जिस माल की लालच में तुम ने इस्लाम और ईमान को छोड़ा है वह क़ियामत के दिन कुछ काम न आएगा और जिन बादशाहों की इ़ज़्ज़त व इक्राम पर तुम को भरोसा है वह जल्द मुसलमानों के हाथ से मग़लूब (हार जाएँगे) होंगे। इस तरह़ दुनिया में भी तुम्हें सज़ा मिलेगी और आख़िरत में भी जहन्नम में डाले जाओगे।

नजरान के ईसाई गिरोह का क़िस्सा 'मुह़म्मद बिन इस्ह़ाक़' की सीरत में तफ़्सील से नक़्ल किया गया है जिस में यह लिखा है कि इस गिरोह में ईसाइयों का सब से बड़ा पादरी और आ़लिम (विद्वान) अबू ह़ारिसा बिन अ़ल्क़मा जब 'बक़्सद' से मदीना रवाना हुआ तो ख़च्चर पर सवार था। यकायक खच्चर को ठोकर लगी और अबू ह़ारिसा गिरा तो उसका भाई जो उस के साथ था खच्चर से गिरा और उसकी ज़बान से निकला कि हलाक हो वह शख़्स जिस के पास हम जा रहे हैं और उस ने मआ़ज़ल्लह ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ओर इशारा किया तो इस पर 'अबू ह़ारसा' पादरी ने कहा नहीं, बल्कि तू हलाक हो। क्या तू ऐसे शख़्स की शान में अपशब्द कहता है जो रसूलों में से है। बेशक आप वही नबी हैं जिन की ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) ने भविष्यवाणी की थी और जिन का ज़िक्र तौरेत में है और अल्लाह की क़सम यह वही नबी हैं जिन के आख़ीर ज़माने में आने का हम सब इन्तिज़ार कर रहे हैं।

इस पर अबू ह़ारिसा के भाई ने कहा कि जब तुम को उन की नुबूव्वत व रिसालत का इस दर्जे इ़ल्म व यक़ीन है तो फिर उन पर ईमान लाने से क्या चीज़ रोकती है? तो 'अबू ह़ारिसा' पादरी ने जवाब दिया कि हम ईमान इस लिए नहीं लाते कि उन ईसाई बादशाहों ने जो बेशुमार माल व ख़ज़ाना हम को दे रखा है और हमारी इ़ज़्ज़त व सम्मान करते हैं अगर हम ईमान ले आये और इस्लाम क़ुबूल कर लिया तो यह सब हम से छीन लेंगे। इस बातचीत का असर उस पादरी के भाई के दिल पर यह हुआ कि उस ने क़सम खाई कि जब तक मैं मदीना पहुँच कर ईमान न ले आऊँगा उस वक़्त तक चैन से न बैठूँगा, फिर यह एक तेज़ ऊँटनी पर सवार होकर सबसे पहले मदीना मुनव्वरह पहुँचा और मुसलमान हो गया। दूसरा गिरोह बाद में मदीना पहुँचा और उसने माल व दौलत एज़ाज़ व इक्राम की लालच की वजह से क़ुबूले ह़क़ से इन्कार कर दिया।

11-12 كَدَأْبِ آلِ فِرْعَوْنَ ۙ وَالَّذِينَ مِن قَبْلِهِمْ ۚ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا فَأَخَذَهُمُ اللَّهُ بِذُنُوبِهِمْ ۗ وَاللَّهُ شَدِيدُ الْعِقَابِ ۝
قُل لِّلَّذِينَ كَفَرُوا سَتُغْلَبُونَ وَتُحْشَرُونَ إِلَىٰ جَهَنَّمَ ۚ وَبِئْسَ الْمِهَادُ ۝

क़ियामत में कोई चीज़ काम न आएगी-

इस आयत से मालूम हुआ कि क़ियामत के दिन काफ़िरों की वह माली और जानी और ख़ानदानी ताक़त जो दुनिया में उन को ह़ासिल है अल्लाह के अ़ज़ाब के मुक़ाबले में कुछ काम न आएगी, माल और औलाद क़ियामत में कामियाब न होने की दो सूरतें हो सकती हैं।

एक यह कि अल्लाह की मेहरबानी के बजाय सिर्फ़ माल और औलाद काफ़ी हो जाती दूसरे यह कि माल और औलाद अल्लाह के मुक़ाबिल होकर अ़ज़ाब से बचा लेते। आयत में इन दोनों सूरतों का इन्कार

किया गया है। फिर यहाँ एक पेशीनगोई (भविष्यवाणी) की जाती है और निहायत खुला हुआ और वाज़ेह (स्पष्ट) एलान करने का नबी करीम (सल्ल०) को इर्शाद हो रहा है कि आप उन काफ़िर यहूद व नसारा और मुश्रिकीने अ़रब से कह दीजिए कि जल्द ही मग़लूब (पराजित) किये जाओगे।

यहाँ कुफ़्फ़ार को यह नहीं कहा गया कि जंग में तुम को शिकस्त होगी बल्कि जंग में शिकस्त हो या जिलावतनी (देश त्याग) की ज़िल्लत हो या किसी क़िस्म की और मग़लूबियत हो सब का आ़मतौर पर यह एलान कर दिया गया और यह एलान मुकम्मल (पूरा) हुआ। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की ज़िन्दगी में अल्लाह और उस के रसूल के दुश्मन मग़लूब (पराजित) हुए, अ़रब कुफ़्र से पाक हो गया। कुछ यहूद व नसारा ने जिज़्या (कर) दिया, कुछ क़त्ल किये गये और कुछ को मदीना छोड़कर मुल्क शाम को जिलावतन होना पड़ा।

कुछ मुफ़स्सिरीन (व्याख्याकारों) ने यह भी लिखा है कि यहाँ जिन कुफ़्फ़ार के मुतअ़ल्लिक़ जल्द ही मग़लूब (पराजित) होने का एलान किया गया है उस के मुख़ातब (सम्बोधन) उस वक़्त के यहूद-ए-मदीना हैं। लिखा है कि जब हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) जंगे बद्र से कुफ़्फ़ार को शिकस्त देने के बाद वापस आये तो मदीना में यहूद को जमा करके आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि ऐ यहूद! तुम इस्लाम क़ुबूल कर लो वरना कुरैश की तरह तुम को तक्लीफ़ उठानी पड़ेगी तो यहूद ने गुस्तख़ाना जवाब दिया कि कुरैश तो नातजुर्बेकार (Unexperienced) और जंग से नावाक़िफ़ थे उन को शिकस्त देकर हमारे ऊपर यह ख़याल न करना, हम से लड़ोगे तो मालूम होगा कि हम कितने बहादुर हैं। उन के इस दावे के जवाब में यह आयत قُلْ لِّلَّذِيْنَ كَفَرُوْا سَتُغْلَبُوْنَ وَتُحْشَرُوْنَ اِلٰى جَهَنَّمَ ؕ وَبِئْسَ الْمِهَادُ नाज़िल हुई और रसूलुल्लाह (सल्ल०) को अल्लाह ने हुक्म दिया कि आप उन काफ़िर यहूदियों से कह दीजिए कि घबराओ नहीं, जल्द ही तुम मग़लूब (पराजित) होगे और तुम को तक्लीफ़ उठानी पड़ेगी और सिर्फ़ दुनियावी ज़िल्लत और मग़लूबियत (शिकस्त) ही तुम को नसीब न होगी बल्कि तुम को दौलते ईमान आख़िर तक नसीब न होगी और क़ियामत में जहन्नम में जाना पड़ेगा। फिर यहाँ कुफ़्र के पराजित होने की ख़बर दी गई है।

13 قَدْ كَانَ لَكُمْ اٰيَةٌ فِيْ فِئَتَيْنِ الْتَقَتَا ؕ فِئَةٌ تُقَاتِلُ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَاُخْرٰى كَافِرَةٌ يَّرَوْنَهُمْ مِّثْلَيْهِمْ
رَاْيَ الْعَيْنِ ؕ وَاللّٰهُ يُؤَيِّدُ بِنَصْرِهٖ مَنْ يَّشَآءُ ؕ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَعِبْرَةً لِّاُولِي الْاَبْصَارِ ۝

ईमान वालों को ग़ल्बा-

पिछली आयत में पेशीनगोई की गई थी कि कुफ़्फ़ार को जिन से मुराद उस वक़्त के मुश्रिकीने अ़रब और यहूदे मदीना थे, बावजूद क़ुव्वत व ताक़त और माल व दौलत और शान व शौकत के मुसलमानों से मग़लूब (शिकस्त) हुए। इस एलान और पेशीनगोई से काफ़िर व मुसलमान हर शख़्स के दिल में यह बात पैदा हो सकती थी कि कुफ़्फ़ार के पास दौलत व ताक़त है, मुसलमान ग़रीब व मुफ़्लिस हैं न उन के पास ताक़त है, न दौलत, न सामाने जंग फिर यह कमज़ोर लोग किस तरह इतनी बड़ी संख्या और बड़े गिरोह पर ग़ालिब आ सकते हैं। इस ख़याल को झूठा करने के लिए बतौर दलील और मिसाल के

जंगे बद्र का वाक़िआ़ और ह़ालात को इस आयत में बयान किया गया है, जिस में मुसलमानों की संख्या बहुत कम थी, बे सरो-सामान थे और कुफ़्फ़ार की जमाअ़त बहुत बड़ी थी। क़ुव्वत और सामान भी उन के पास ज़्यादा था, लेकिन इस के बावजूद अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को कामियाब फ़रमाया, काफ़िर मारे गये और कुछ गिरफ़्तार हुए।

जंगे बद्र का वाक़िया-

जंगे बद्र का वाक़िया यह है कि जब रसूलुल्लाह (सल्ल०) मक्का से हिजरत फ़रमा कर मदीना तशरीफ़ ले आये तब भी कुफ़्फ़ार का सितम ख़त्म न हुआ। तरह़-तरह़ से मुसलमानों को तंग करने की कोशिश की जाती रहीं। कभी मदीना के यहूद को उकसा कर मुसलमानों के ख़िलाफ़ उभारा जाता कभी मुसलमानों की तब्लीग़ में तरह़-तरह़ की रुकावटें पैदा की जातीं। जो लोग मुसलमान होकर मदीना आना चाहते उन्हें तरह़-तरह़ की तक्लीफ़ें दी जातीं। मुसलमान सब्र व बर्दाश्त करते रहते यहाँ तक कि मुसलमानों को जिहाद का हुक्म मिल गया तो अब मुसलमानों ने भी कुफ़्र का ज़ोर तोड़ना चाहा और ऐसी तद्बीरें करनी चाहीं कि इस्लाम को क़ुव्वत और ग़ल्बा और कुफ़्र को ज़िल्लत व शिकस्त हो।

मदीना मुनव्वरह से लगभग 80 मील के फ़ासले पर एक आबादी बद्र के नाम से थी। यह अ़ज़ीमुश्शान ग़ज़्व-ए-बद्र इसी सरज़मीन पर हुआ था। कुफ़्फ़ार क़ुरैश की ताक़त का ज़रिया उन की मुल्क शाम की तिजारत थी, इसलिए ज़रूरत थी कि उन की ताक़त तोड़ने के लिए इस सिल्सिले को बन्द किया जाए।

एक मर्तबः क़ुरैश का एक बहुत बड़ा तिजारती क़ाफ़िला मुल्क शाम से आ रहा था। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को इस की ख़बर मिली तो 12 रमज़ानुल् मुबारक 2 हि० को 313 सह़ाबा मुहाजिरीन व अन्सार की एक जमाअ़त जिस में 77 मुहाजिर और 236 अन्सार थे साथ लेकर मुक़ाबिला के लिए ख़ुद रसूलुल्लाह (सल्ल०) तशरीफ़ ले गये। उधर क़ुरैशी क़ाफ़िला के सरदार को इस की ख़बर हो गई, इसलिए क़ाफ़िले ने उस रास्ते को छोड़कर दूसरा रास्ता अख़्तियार कर लिया और साथ ही एक सवार को मक्के की तरफ़ दौड़ा दिया कि क़ुरैश अपनी पूरी ताक़त के साथ मौक़े पर पहुँचें और अपने तिजारती क़ाफ़िले की ह़िफ़ाज़त करें। क़ुरैश पहले ही से मुसलमानों के ख़िलाफ़ मन्सूबे (षडयन्त्र) बना रहे थे, इस ख़बर को मक्का में पहुँचना था कि फ़ौरन लगभग एक हज़ार नौजवानों का एक लश्कर जिसमें सात सौ ऊँट और सौ घोड़े थे इसमें क़ुरैश के बड़े-बड़े सरदार सब शरीक थे, मुसलमानों के मुक़ाबले के लिए रवाना हो गये। रसूलुल्लाह (सल्ल०) को जब इस की ख़बर मिली तो आप ने सह़ाबा से मश्वरह फ़रमाया। तमाम सह़ाबा ने अपनी जान व माल को पेश करने का वादा किया, फिर आप (सल्ल०) ने मुसलमानों को आगे बढ़ने का हुक्म फ़रमा दिया।

बद्र के क़रीब पहुँचने पर मालूम हुआ कि अबू सुफ़्यान जो तिजारती गिरोह का सरदार था, वह अपने गिरोह को लेकर निकल गया और क़ुरैश का एक बड़ा लश्कर उसी मैदाने बद्र के दूसरे किनारे पर

आ पहुँचा। तिजारती गिरोह के निकल जाने के बाद भी अबूजेहल ने क़ुरैश को यही मश्वरह दिया कि अब मुसलमानों से जंग को न रोका जाए।

इस तरह मैदाने बद्र में एक तरफ़ एक हज़ार अस्लहा से लैस कुफ़्फ़ार का लश्कर था, दूसरी तरफ़ 313 बे-सरो सामान ईमान वालों लश्कर यानी सहाबा की जमाअ़त थी, जिन के पास सिर्फ़ थोड़े से ऊँट, घोड़े जिरहें (कवच) और कुछ डंडे थे। 17 रमज़ान 2 हि० को बद्र में घमासान की लड़ाई शुरु हुई। उधर रसूलुल्लाह (सल्ल०) सज्दे में सर रखे हुए मदद की दुआ माँग रहे थे। अल्लाह तआ़ला ने मलायका (फ़रिश्तों) की फ़ौज मुसलमानों की मदद के लिए भेज दी और अल्लाह तआ़ला की मदद मुसलमानों को पहुँची और बेसरो सामान जमाअ़त का एक मज़बूत जमाअ़त के मुक़ाबले में फ़तेह़ व कामियाबी नसीब हुई। कुफ़्फ़ार के बड़े-बड़े 70 सरदार मारे गये और बहुत से क़ैद किये गये। मुसलमानों में से 14 शहीद हुए जिन में 6 मुहाजिरीन और 8 अन्सार थे। **(रज़ियल्लाहु तआ़ला अन्हुम)**

कामियाबी का दारोमदार-

कामियाबी और फ़तेह़मन्दी ज़ाहिरी क़ुव्वत पर मुन्ह़सिर (Depend) नहीं यानी कामियाबी का दारोमदार अक्सरियत पर नहीं बल्कि फ़तेह़ व कामियाबी अल्लाह की मदद के साथ है। अल्लाह अपनी मदद जिसको चाहता है देता है और जब अल्लाह तआ़ला अपने दीन को ग़ालिब करना चाहते हैं तो कुफ़्फ़ार की ताक़त उस को रोक नहीं सकती। यानी इस आयत में ईमान व इस्लाम की तरफ़ मायल होने और ग़ैबी क़ुव्वत पर भरोसा करने की तर्ग़ीब दी जा रही है और काफ़िरों को सबक़ दिया जा रहा है कि वह कुफ़्र से बाज़ आएँ और अपनी ज़ाहिरी ताक़त के बलबूते पर घमण्ड न करें, ख़ुदाई ताक़त का कोई मुक़ाबिला नहीं कर सकता। हाँ, अगर ख़ुद मुसलमान अपनी नासमझी से अल्लाह को नाराज़ करके उस की मदद को रोक दें तो दूसरी बात है।

इस आयत से जंगे बद्र में शरीक होने वाले सहाबा-ए-किराम (रज़ियल्लाहु तआ़ला अन्हुम) की भी बहुत बड़ी फ़ज़ीलत साबित होती है क्योंकि यहाँ आयत में उन के लिए अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया है- فِئَةٌ تُقَاتِلُ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ यानी वह एक ऐसी जमाअ़त थी जो केवल अल्लाह के रास्ते में अल्लाह के दीन के लिए लड़ रही थी। अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से यह उन के 'इख़्लास' और 'ईमान' की निशानी है। अह़ादीस में नबी करीम (सल्ल०) ने भी बद्र के सह़ाबा की फ़ज़ीलत को ज़ाहिर फ़रमाया है।

ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) से रिवायत है कि एक मौक़े पर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) से फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला ने अहले बद्र की तरफ़ नज़र फ़रमाई और यह कहा, जन्नत तुम्हारे लिए वाजिब हो चुकी।"

ह़ज़रत जाबिर (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जो शख़्स बद्र में हाज़िर हुआ वह हरगिज़ जहन्नम में न जाएगा।"

बुख़ारी शरीफ़ की एक ह़दीस है, ह़ज़रत रिफ़ाआ़ बिन राफ़ेअ़ (रज़ि०) से रिवायत है कि एक मर्तबः

जिब्राईल (अ़लै०) नबी करीम (सल्ल०) के पास आये और पूछा “आप (सल्ल०) बद्र में शरीक होने वालों को क्या मर्तबः देते हैं यानी आप के ख़याल में अहले बद्र का क्या मर्तबः है?” रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया, “हम उनको मुसलमानों में से बेहतर और अफ़ज़ल समझते हैं या आप ने इसी क़िस्म का कोई और जवाब दिया।” हज़रत जिब्राईल (अ़लै०) ने कहा, “बद्र में जो फ़रिश्ते हाज़िर हुए थे हम भी उन को ऐसा ही ख़याल करते हैं यानी सब फ़रिश्तों में अफ़ज़ल।” **(बुख़ारी)**

हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, “अल्लाह तआ़ला जब आधी या एक तिहाई रात गुज़र जाती है तो आसमाने दुनिया पर नुज़ूल फ़रमाते हैं और फ़रमाते हैं कि कौन मुझ से दुआ़ करता है कि मैं उसकी दुआ़ कुबूल करूँ? कौन मुझ से माँगता है कि मैं उसे अ़ता करूँ? कौन मुझ से गुनाहों की माफ़ी चाहता है कि मैं उसके गुनाहों को बख़्श दूँ।” **(मुस्लिम)**

नसीहत-

बद्र का यह वाक़िआ़ सुनाकर अ़क़्ल रखने वालों को दअ़वत दी गई है और इस में यहूदे मदीना की तरफ़ भी ख़ुसूसी इशारा हो गया कि ऐ यहूद मदीना! तुम इस वाक़िये बद्र से सबक़ हासिल करो और अब भी मौक़ा है कि इन्कार से बाज़ आ जाओ और इस्लाम कुबूल कर लो क्योंकि जैसा पिछली आयात के सिल्सिले में बयान हो चुका है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने गज़्व-ए-बद्र से वापसी पर मदीना के यहूद को जमा करके फ़रमाया था कि अल्लाह से डरो और ऐसी मुसीबत से पहले, जैसी कुरैश पर बद्र में नाज़िल हुई कहीं तुम पर भी आ जाए इसलिए तुम इस्लाम कुबूल कर लो। तुम जानते हो कि मैं अल्लाह का सच्चा नबी हूँ। तुम ने अपनी किताबों में मेरे गुण लिखे हुए देखे हैं तो यहूद ने जवाब दिया था कि आप ने कुरैश के चन्द बेवक़ूफ़ों को मार भगाया, वह तो जंग के तौर-तरीक़े से नावाक़िफ़ थे। अगर कभी हम से मुक़ाबला हुआ तो मालूम हो जाएगा कि लड़ने वाले ऐसे होते हैं।

यह कुफ़्फ़ार दुनियावी माल व दौलत और दुनियावी साज़ो सामान के नशे में चूर होने की वजह से हक़ को कुबूल नहीं करते थे। इसलिए आगे दुनियावी माल व दौलत, लज़्ज़त और ऐ़श व इ़शरत का फ़ानी होना बतलाया जाता है और आख़िरत की अ़ज़ीमुश्शान नेअ़मतों का ज़िक्र किया जाता है, जो आख़िरत में अहले ईमान वालों को नसीब होंगी।

14 زُيِّنَ لِلنَّاسِ حُبُّ الشَّهَوٰتِ مِنَ النِّسَآءِ وَالْبَنِيْنَ وَالْقَنَاطِيْرِ الْمُقَنْطَرَةِ مِنَ الذَّهَبِ وَالْفِضَّةِ وَالْخَيْلِ
الْمُسَوَّمَةِ وَالْاَنْعَامِ وَالْحَرْثِ ۭ ذٰلِكَ مَتَاعُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۚ وَاللّٰهُ عِنْدَهٗ حُسْنُ الْمَاٰبِ ۝

ग़ैबी ताक़त पर यक़ीन-

पिछली आयत में वाक़िये बद्र का ज़िक्र फ़रमा कर आख़ीर में बतलाया गया था कि इस वाक़िये बद्र में आँख वालों के लिए बड़ी नसीहत है कि किस तरह एक कमज़ोर और बेसरो सामान जमाअ़त एक पूरी कुव्वत और शौकत वाले गिरोह पर ग़ालिब आ गई और वजह इस की यह थी कि अल्लाह की मदद

अहले इस्लाम के साथ थी, जिस से मुख़ालिफ़ीने इस्लाम और इस्लाम के न मानने वालों को नसीहत लेनी चाहिए और चाहिए कि अपने माल व दौलत और दुनियावी इज़्ज़त और ऐश के गुरूर को छोड़कर उस जमाअत में दाख़िल हो जाएँ जिस के साथ अल्लाह की मदद है और यह माल व दौलत का नशा और ऐश व इश्रत का सामान और दुनियवी लज़्ज़त सब बेकार और ख़त्म होने वाली हैं और आलमे आख़िरत की अज़ीमुश्शान नेअमतों के मुक़ाबिले में यह कुछ भी नहीं। इसलिए आगे इस आयत में दुनिया की लज़्ज़तों की हिक़ारत (तुच्छयता) को बयान फ़रमाया जाता है। इस में इशारा नजरान वालों की तरफ़ भी हो गया जिन को माल व जाह और दौलत की मुहब्बत ने हक़ के मानने से बाज़ रखा और नसारा का सब से बड़ा पादरी अबू हारिस बावजूद इक़रार के माल व दौलत की मुहब्बत ने ईमान व हिदायत की लाजवाब दौलत से महरूम कर दिया।

इस आयत में है, "अक्सर लोगों को पसंदीदा चीज़ों की मुहब्बत ख़ुशनुमा मालूम होती है। जैसे-औरतें, बेटे, सोने-चाँदी के लगे हुए ढ़ेर, निशान लगे हुए घोड़े या दूसरे मवेशी और खेती, लेकिन यह सब दुनियावी ज़िन्दगी के इस्तेमाल की चीज़ें हैं और नेक अन्जाम की ख़ूबी तो अल्लाह तआला ही के पास है जो मौत के बाद काम आएगी।"

दुनिया की मुहब्बतें-

यहाँ आयत में दुनिया की चन्द अहम महबूब चीज़ों का नाम लेकर बतलाया गया है कि दुनिया में रहने वाले लोगों के लिए ख़्वाहिशाते नफ़्स के हासिल करने की मुहब्बत, फ़ित्री तौर पर दिलचस्पी की वजह और दिल को खींचने वाली बना दी गई है। इसलिए बहुत से लोग ख़्वाहिशात में फ़ंस कर अल्लाह से बेख़बर हो जाते और आख़िरत को भुला बैठते हैं। जिन चीज़ों का नाम इस जगह लिया गया है वह आमतौर पर इन्सानी चाहत व मुहब्बत का मुख्य बिन्दु हैं और इन में सबसे पहले औरतों का ज़िक्र किया गया है क्योंकि दुनियावी लज़्ज़तों और शहवतों का यह दरिया है। दुनिया में मर्दों को औरतों से ज़्यादा किसी चीज़ की मुहब्बत नहीं होती। इसी वजह से हदीस शरीफ़ में रसूलुल्लाह (सल्ल०) का इर्शाद है, "मेरे बाद मर्दों के लिए औरतों से बढ़कर कोई फ़ित्ना नहीं जो मर्दों के लिए नुक़्सानदेह हो।"

दूसरे दर्जे में बेटों की मुहब्बत है, लोग यही ख़्वाहिश करते हैं कि हमारे बेटे हों, जो वक़्त पर हमारे मददगार हो सकें और हमारे जानशीन (उत्तराधिकारी) बन सकें। इस के बाद तीसरे दर्जे में सोने और चाँदी के जमा किये हुए ख़ज़ानों की मुहब्बत है, जिस को इन्सान अपनी तमाम ख़्वाहिशात और लज़्ज़ात के हासिल करने का ज़रिया और वसीला मानता है। इसलिए सोने चाँदी से भी दिली लगाव और मुहब्बत होती है फिर उस के बाद आराम व आसाईश, ऐश के दिखावे की ज़रूरत पड़ती है तो चौथे दर्जे में ख़ूबसूरत और अच्छे घोड़ो और सवारियों की मुहब्बत है कि जो सफ़र और सैर व तफ़रीह का ज़रिया हैं और ज़ाहिरी शान व शौकत और इज़्ज़त व वजाहत और फ़ख़्र का सबब हैं। फिर पाँचवे दर्जे में चौपायों और जानवरों की मुहब्बत है यानी ऊँट, गाय, भैंस, भेड़ और बकरी की मुहब्बत है जो इन्सान के रोज़ी

का ज़रिया हैं। गोश्त और दूध की ग़िज़ा उन्हीं से मिलती है और ऊन, खाल और चमड़ा भी उन्हीं चौपायों से हासिल होता है, जिस से तरह-तरह की इन्सानी ज़रूरतों की चीज़ें बनती हैं। जैसे- शाल, कम्बल, चादर, जूते वग़ैरह।

छठे दर्जे में खेती की मुहब्बत है, जिस पर इन्सान की ज़िन्दगी का दारोमदार है। खेती व काश्त अगरचे ज़रूरत के लिहाज़ से सब से पहले है, लेकिन शहवत व लज़्ज़त के लिहाज़ से सब से आख़िर में है। इसलिए इस को सब से आख़ीर में ज़िक्र फ़रमाया तो यह सब चीज़ें इन्सान को दुनिया में तबीयत के अनुसार पसंदीदा हैं और अक्सर लोग उन की मुहब्बत में हद से ज़्यादा गिरफ़्तार हो जाते हैं और उन की ज़ाहिरी रौनक़ पर खुश होकर अल्लाह को और आख़िरत को भुला बैठते हैं।

इस में शक नहीं कि अल्लाह तआला ने इन चीज़ों की मुहब्बत फ़ित्री (Naturally) तौर पर इन्सानों के दिलों में डाल दी है और इस फ़ज़्ले खुदावन्दी में भी हज़ारों हिक्मतें हैं और सब से बड़ी हिक्मत जो खुद क़ुर्आन करीम में बतलाई गई वह यह है कि इन चीज़ों की मुहब्बत फ़ित्री तौर पर इन्सान के दिल में पैदा करके उस का इम्तिहान लिया जाए कि कौन इन चीज़ों की मुहब्बत में मुब्तिला होकर आख़िरत को भुला बैठता है, अल्लाह से और उसके हुक्मों से ग़ाफ़िल हो जाता है और कौन इन चीज़ों की असली हक़ीक़त और इन के फ़ानी होने को समझकर आख़िरत की दुरुस्ती के काम में लगा रहता है और इन चीज़ों को अपने मालिक को खुश करने का ज़रिया बनाता है।

ज़िन्दगी का मक़्सद-

इस बयान का मक़्सद यह है कि यह दुनिया बहुत ज़्यादा दिल लगाने के लायक़ नहीं। इन्हें मक़्सदे ज़िन्दगी न बना लिया जाए बल्कि इस्लामी शरीअ़त के मुताबिक़ इन को जमा करे और आख़िरत की कामियाबी का ज़रिया बनाये। यह दुनिया खुद भी फ़ना होने वाली है और इस के सारे सामान भी फ़ानी हैं दुनिया से उठ जाने के साथ ही इन से सम्बन्ध टूट जाता है इसलिए इन को सही जगह पर रखकर इन से आख़िरत का सामान करना चाहिए क्योंकि अस्ल ठिकाना इन्सान का वहीं है और जो रूहानी व जिस्मानी लज़्ज़तें अल्लाह के पास हैं, उनके मुक़ाबले में यह फ़ानी ऐ़श कुछ भी नहीं, लिहाज़ा इन्सान को इस बेहक़ीक़त चीज़ पर आकर्षित न होना चाहिए कि हक़ीक़ी और ग़ैरफ़ानी (न ख़त्म होने वाली) नेअ़मतों से हाथ धो बैठे। वह लाज़वाल (हमेशा बाक़ी रहने वाली) और हक़ीक़ी नेअ़मतें क्या हैं? उन के मुस्तहिक़ कौन लोग हैं और उन के हासिल करने का क्या तरीक़ा है? यह अगली आयात में ज़िक्र फ़रमाया गया है।

15 قُلْ أَؤُنَبِّئُكُمْ بِخَيْرٍ مِّنْ ذَٰلِكُمْ ۚ لِلَّذِينَ اتَّقَوْا عِندَ رَبِّهِمْ جَنَّٰتٌ تَجْرِي مِن تَحْتِهَا الْأَنْهَٰرُ
خَٰلِدِينَ فِيهَا وَأَزْوَٰجٌ مُّطَهَّرَةٌ وَرِضْوَٰنٌ مِّنَ اللَّهِ ۗ وَاللَّهُ بَصِيرٌ بِالْعِبَادِ ۝

जन्नत की नेअ़मतें-

क़ियामत के दिन का ज़िक्र होने के बाद अब उस की तफ़्सील बयान हो रही है, ताकि मोमिनीन उस को हासिल करने के लिए आगे बढ़ें। जन्नत में शहद, दूध, शराब और पानी वग़ैरह की नहरें जारी होंगी

और ऐसी नेअ़मते होंगी जिन्हें न किसी आँख ने देखा न किसी कान ने सुना और न किसी इन्सान के दिल में इसका ख़याल आया होगा।

"पाकीज़ह बीवी" से मुराद ऐसी बीवियाँ हैं जो हर तरह़ की नजासत और ग़न्दग़ी से पाक होंगी। "अल्लाह तआ़ला की ख़ुशनूदी" से मुराद अल्लाह की ऐसी रज़ा है जिस के बाद अल्लाह कभी भी जन्नतियों से नाराज़ न होगा। जैसा कि बुख़ारी व मुस्लिम ने ह़ज़रत अबू सईद ख़ुद्री (रज़ि०) से रिवायत है।

"रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला अहले जन्नती से पूछेगा क्या तुम लोग ख़ुश हो गये? तो जन्नती कहेंगे कि हम क्यों न ख़ुश हों, तूने तो हमें वह कुछ दिया है जो किसी को भी नहीं दिया तो अल्लाह तआ़ला कहेगा कि मैं तुम्हें इस से भी अफ़ज़ल चीज़ अपनी रज़ामन्दी देता हूँ, ऐसी रज़ामन्दी जिस के बाद तुम से मैं कभी नाराज़ न हूँगा। ऐ अल्लाह! मैं तुझ से जन्नतुल् फ़िरदौस की दुआ़ करता हूँ और जहन्नम की आग से पनाह चाहता हूँ।" **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

16 اَلَّذِيْنَ يَقُوْلُوْنَ رَبَّنَآ اِنَّنَآ اٰمَنَّا فَاغْفِرْلَنَا ذُنُوْبَنَا وَقِنَا عَذَابَ النَّارِ ﴿١٦﴾

इस में उन परहेज़गारों की सिफ़त बयान की गई है, जो अल्लाह की जन्नत और उस की नेअ़मतों के ह़क़्दार बने। इस में दलील है कि दुआ़ करने वाला अपनी नेकियों का ज़िक्र करके दुआ़ करे और इस की ताईद (पुष्टि) सह़ीह़ैन "अस्ह़ाबे ग़ार" वाली ह़दीस से होती है, जिस में आया है कि उन तीनों ने जो ग़ार में घिर गये थे अपनी-अपनी नेकियों को वसीला बना कर दुआ़ की थी और अल्लाह ने पत्थर को ग़ार के दहाने से हटा कर उन की जान बचा दी थी।

17 اَلصّٰبِرِيْنَ وَالصّٰدِقِيْنَ وَالْقٰنِتِيْنَ وَالْمُنْفِقِيْنَ وَالْمُسْتَغْفِرِيْنَ بِالْاَسْحَارِ ﴿١٧﴾

इस में परहेज़गारों की सिफ़ात बयान की गई है وَالْمُسْتَغْفِرِيْنَ بِالْاَسْحَارِ में अस्तग़फ़ार की फ़ज़ीलत बयान की गई है। सह़ीह़ैन और अह़ादीस की दूसरी किताबों में कई सह़ाबा-ए-किराम से मरवी है।

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, "हर रात जब रात का एक तिहाई ह़िस्सा बाक़ी रह जाता है तो अल्लाह तआ़ला आसमाने दुनिया की तरफ़ नुज़ूल फ़रमाता है और कहता है कि कोई मांगने वाला है जिसे मैं दूँ, कोई दुआ़ करने वाला है जिस की दुआ़ क़ुबूल करूँ, कोई मग़्फ़िरत चाहने वाला है जिसे मैं माफ़ कर दूँ?" **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

मुस्लिम शरीफ़ की एक रिवायत में है कि अल्लाह तआ़ला अपने दोनों हाथों को फैलाता है और कहता है कि कौन क़र्ज़ देगा ऐसे को जो फ़क़ीर नहीं और ज़ालिम नहीं। एक और रिवायत में है कि तुलूअ़ फ़ज्र तक ऐसा ही रहता है। **(मुस्लिम)**

18 شَهِدَ اللّٰهُ اَنَّهٗ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۙ وَالْمَلٰٓئِكَةُ وَاُولُوا الْعِلْمِ قَآئِمًاۢ بِالْقِسْطِ ۭ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ﴿١٨﴾

यह अल्लाह और उस के फ़रिश्तों की ज़बानी एक शहादत है, यानी अल्लाह की तौह़ीद की शहादत और इस बात की शहादत कि अ़द्ल व इन्साफ़ और एतिदाल (संतुलन) उस की सिफ़त है। इस आयत

में अहले इ़ल्म की भी बहुत बड़ी फ़ज़ीलत बयान की गई है कि अल्लाह ने तौह़ीद (एकेश्वरवाद) की शहादत के लिए उन्हें ख़ास कर दिया, उन की शहादत को अपनी और फ़रिश्तों की शहादत के साथ जोड़ दिया और उसे तौह़ीद की बहुत बड़ी दलील क़रार दिया और मख़्लूक़ के लिए उन की शहादत को क़ुबूल करना वाजिब क़रार दिया। मुफ़स्सिरीन के नज़्दीक यहाँ अहले इ़ल्म से मुराद क़ुर्आन व सुन्नत का इ़ल्म रखने वाले हैं।

आयत नं० 19 से 27 तक

إِنَّ الدِّينَ عِندَ اللَّهِ الْإِسْلَامُ ۗ وَمَا اخْتَلَفَ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ إِلَّا مِن بَعْدِ مَا جَاءَهُمُ الْعِلْمُ بَغْيًا بَيْنَهُمْ ۗ وَمَن يَكْفُرْ
بِآيَاتِ اللَّهِ فَإِنَّ اللَّهَ سَرِيعُ الْحِسَابِ ﴿١٩﴾ فَإِنْ حَاجُّوكَ فَقُلْ أَسْلَمْتُ وَجْهِيَ لِلَّهِ وَمَنِ اتَّبَعَنِ ۗ وَقُل لِّلَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ
وَالْأُمِّيِّينَ أَأَسْلَمْتُمْ ۚ فَإِنْ أَسْلَمُوا فَقَدِ اهْتَدَوا ۖ وَّإِن تَوَلَّوْا فَإِنَّمَا عَلَيْكَ الْبَلَاغُ ۗ وَاللَّهُ بَصِيرٌ بِالْعِبَادِ ﴿٢٠﴾ إِنَّ الَّذِينَ
يَكْفُرُونَ بِآيَاتِ اللَّهِ وَيَقْتُلُونَ النَّبِيِّينَ بِغَيْرِ حَقٍّ وَيَقْتُلُونَ الَّذِينَ يَأْمُرُونَ بِالْقِسْطِ مِنَ النَّاسِ فَبَشِّرْهُم بِعَذَابٍ أَلِيمٍ ﴿٢١﴾
أُولَٰئِكَ الَّذِينَ حَبِطَتْ أَعْمَالُهُمْ فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ وَمَا لَهُم مِّن نَّاصِرِينَ ﴿٢٢﴾ أَلَمْ تَرَ إِلَى الَّذِينَ أُوتُوا نَصِيبًا مِّنَ الْكِتَابِ يُدْعَوْنَ إِلَىٰ
كِتَابِ اللَّهِ لِيَحْكُمَ بَيْنَهُمْ ثُمَّ يَتَوَلَّىٰ فَرِيقٌ مِّنْهُمْ وَهُم مُّعْرِضُونَ ﴿٢٣﴾ ذَٰلِكَ بِأَنَّهُمْ قَالُوا لَن تَمَسَّنَا النَّارُ إِلَّا أَيَّامًا
مَّعْدُودَاتٍ ۖ وَغَرَّهُمْ فِي دِينِهِم مَّا كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿٢٤﴾ فَكَيْفَ إِذَا جَمَعْنَاهُمْ لِيَوْمٍ لَّا رَيْبَ فِيهِ وَوُفِّيَتْ كُلُّ نَفْسٍ مَّا
كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ﴿٢٥﴾ قُلِ اللَّهُمَّ مَالِكَ الْمُلْكِ تُؤْتِي الْمُلْكَ مَن تَشَاءُ وَتَنزِعُ الْمُلْكَ مِمَّن تَشَاءُ وَتُعِزُّ مَن تَشَاءُ
وَتُذِلُّ مَن تَشَاءُ ۖ بِيَدِكَ الْخَيْرُ ۖ إِنَّكَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿٢٦﴾ تُولِجُ اللَّيْلَ فِي النَّهَارِ وَتُولِجُ النَّهَارَ فِي اللَّيْلِ ۖ وَتُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ
الْمَيِّتِ وَتُخْرِجُ الْمَيِّتَ مِنَ الْحَيِّ ۖ وَتَرْزُقُ مَن تَشَاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٢٧﴾

अनुवाद-

(19) दीन (धर्म) तो अल्लाह के नज़दीक़ इस्लाम ही है, जिन्हें किताब दी गई थी,(अह्ले किताब) उन्होंने जो (उस दीन से) इख़्तिलाफ़ (विभेद) किया, तो इल्म ह़ासिल होने के बाद आपस की ज़िद से किया, और जो व्यक्ति अल्लाह की आयतों का इन्कार करेगा, तो अल्लाह भी जल्द हिसाब लेने वाला है; (20) फिर अगर यह लोग आप से हुज्जत (झगड़ा) करें, तो कह दीजिए, ''मैंने और मेरे जो पैरू (अनुयायी) हैं, अपने आपको अल्लाह के हवाले कर दिया है।'' और अह्ले किताब (जिन्हें किताब मिली थी) और उम्मीयों (जिनके पास किताब नहीं) से कह दीजिए ''क्या तुम भी इस्लाम क़ुबूल करते हो?'' तो अगर यह इस्लाम क़ुबूल कर लें तो बेशक सीधा मार्ग पा लें, और अगर मुँह मोड़े रहें, तो आप के ज़िम्मे केवल (संदेश) पहुँचा देना है, और अल्लाह (अपने) बन्दों को खूब देख रहा है। (21) बेशक जो लोग अल्लाह की आयतों का इन्कार करते हैं, और नबियों को नाह़क़ क़त्ल करते हैं, और उन लोगों को भी क़त्ल कर देते हैं, जो न्याय का हुक्म देते हैं, तो उन्हें दुःख देने वाले अ़ज़ाब की खुशख़बरी सुना दीजिए। (22) ये ऐसे लोग हैं जिनके आ़माल दुनिया और आख़िरत दोनों में बर्बाद हुए और उन का कोई मदद्गार न होगा। (23) क्या आपने उन लोगों को नहीं देखा! जिन्हें किताब (तौरेत) दी गई थी; उन्हें अल्लाह की किताब की ओर बुलाया जाता है, ताकि वह उनके बीच फ़ैसला करें; फिर भी उनका एक गिरोह बेरूख़ी करता हुआ मुँह फेर लेता है; (24) यह इसलिए कि वे कहते हैं: ''आग हमें नहीं छू सकती, हाँ, कुछ गिने-चुने दिनों की बात और है।'' और उनकी मन गढ़त बातों ने, जो वे गढ़ते रहे हैं, उन्हें धोखे में डाल रखा है; (25) फिर क्या हाल होगा, जब 'हम' उन्हें उस दिन इकट्ठा करेंगे, जिसके आने में कोई संदेह नहीं और हर नफ़्स (इन्सान) को, जो कुछ उसने कमाया होगा, पूरा-पूरा बदला मिल जाएगा, और उन पर कुछ भी जुल्म न किया जाएगा। (26) कह दीजिए, ''(ऐ

अल्लाह) तमाम मुल्कों के मालिक! 'तू' जिसे चाहे हुकूमत दे, और 'तू' जिससे चाहे हुकूमत छीन ले, और 'तू' जिसे चाहे इज़्ज़त दे, और 'तू' जिसे चाहे ज़िल्लत दे, 'तेरे' ही हाथ में भलाई है, बेशक 'तू' ही हर चीज़ पर क़ादिर (सामर्थ्यवान) है।" (27) 'तू' रात को दिन में पिरोता है, और दिन को रात में पिरोता है, और 'तू' बेजान से जानदार को निकालता है, और 'तू' जानदार से बेजान को निकालता है, और 'तू' जिसे चाहता है बेहिसाब रोज़ी देता है।

आयत नं० 19 से 27 तक की व्याख्या

19 إِنَّ الدِّينَ عِندَ اللَّهِ الْإِسْلَامُ ۗ وَمَا اخْتَلَفَ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ إِلَّا مِن بَعْدِ مَا جَاءَهُمُ الْعِلْمُ
بَغْيًا بَيْنَهُمْ ۗ وَمَن يَكْفُرْ بِآيَاتِ اللَّهِ فَإِنَّ اللَّهَ سَرِيعُ الْحِسَابِ ﴿١٩﴾

इस्लाम के अ़लावा कोई दीन पसन्द नहीं-

अल्लाह तआ़ला के नज़्दीक "इस्लाम" के अ़लावा और कोई दीन क़ाबिले कुबूल नहीं। सभी नबी यही दीन लेकर आये और उन के ज़माने के लोगों के लिए इसी की पैरवी लाज़िम हुई, यहाँ तक कि नबी करीम (सल्ल०) तशरीफ़ लाए। आप (सल्ल०) के आने के बाद अगर कोई शख़्स किसी दूसरे दीन की पैरवी करते हुए मरेगा तो उस की मौत कुफ़्र पर होगी। रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया,

"उस ज़ात की क़सम जिस के हाथ में मेरी जान है, इस उम्मत का कोई भी आदमी जो मेरे बारे में सुनेगा चाहे वह यहूदी हो या नसरानी, वह दीने इस्लाम पर ईमान नहीं लाएगा वह जहन्नमी होगा।" **(मुस्लिम)**

आप (सल्ल०) ने यह भी फ़रमाया, "मैं सुर्ख़ और काले तमाम लोगों की तरफ़ भेजा गया हूँ।" **(मुस्लिम)**

और यह भी फ़रमाया, "हर नबी एक ख़ास क़ौम के लिए भेजा जाता था और मैं तमाम लोगों के लिए भेजा गया हूँ।" **(बुख़ारी)**

अल्लाह ने इन्सानों को पैदा करने के बाद यूँ ही छोड़ नहीं दिया बल्कि जिस तरह कोई कम्पनी किसी वस्तु को ढ़ालती या बनाती है, तो उस वस्तु के प्रयोग करने का तरीक़ा भी बताती है, ठीक इसी प्रकार जिस अल्लाह ने इन्सान को पैदा किया है उसी ने इसके अंगों के प्रयोग का तरीक़ा भी बताया है। उसी के हुक्मों के अनुसार अंगों के प्रयोग करने का नाम ईश्वरीय धर्म है जिसे वह अपने नबियों, रसूलों या संदेशवाहकों के ज़रिये तमाम इन्सानों को उनकी भाषा में भेजता रहा, जिसे पवित्र क़ुर्आन के सूरः नह़ल में इस प्रकार बताया गया है।

وَلَقَدْ بَعَثْنَا فِي كُلِّ أُمَّةٍ رَّسُولًا

अनुवाद-

"और हमने हर गिरोह या हर क़ौम में रसूल भेजे"। **(सूरः नह़ल आयत नं० 36)**

इस आयत से पूरी तरह स्पष्ट हो जाता है कि अल्लाह ने हर क़ौम और हर क्षेत्र में अपने रसूल

भेजे जो ईश्वरीय धर्म (इस्लाम) की शिक्षाएँ विभिन्न भाषाओं में देते रहे।

धर्मों के नाम

दुनिया में जितने भी धर्म हैं उनमें से हर एक का नाम या तो किसी विशेष व्यक्ति के नाम पर रखा गया है या उस जाति के नाम पर जिसमें वह पैदा हुआ जैसे-

'ईसाई धर्म' का नाम 'हज़रत ईसा (अ़लै०)' से सम्बन्धित है। बुद्ध धर्म का नाम "महात्मा बुद्ध" के नाम से है। इसी तरह़ 'ज़र्दुश्ती धर्म' ज़र्दुशत के नाम से है और यहूदी धर्म एक विशेष क़बीले में पैदा हुआ जिसका नाम यहूदा था।

ऊपर दिये गये धर्मों के उल्लेख के आधार पर लोगों ने मुसलमानों को भी एक जाति समझ लिया है और इस्लाम को केवल उन का धर्म मान लिया है, जबकि ऐसा नहीं है।

इस्लाम की विशेषता यह है कि वह किसी व्यक्ति या जाति के नाम पर नहीं है इसलिए कि यह समस्त मानव जाति और पूरे संसार का एक प्राकृतिक धर्म और स्वभाविक जीवन सिद्धान्त है, इसका उद्देश्य इस्लाम के नाम से सिद्ध होता है।

इसलिए कि इस्लाम का अर्थ बताता है कि न इसका सम्बन्ध किसी विशेष व्यक्ति से है न किसी विशेष जाति से और न किसी विशेष देश से बल्कि जो इस्लाम के सिद्धान्तों को मानता हो और उसके अनुसार चलता हो वह मुसलमान है और जो उसके सिद्धान्तों को नहीं मानता और उसके आदेशों के अनुसार नहीं चलता वह मुसलमान नहीं है चाहे वह किसी वंश या देश का हो।

इस्लाम का शाब्दिक अर्थ

इस्लाम अ़रबी भाषा का शब्द है जिसका धातु (मूल) 'स-ल-म' है और अ़रबी व्याकरण के अनुसार इस धातु से उत्पन्न होने वाले शब्द 'इस्लाम' एवं 'तस्लीम' हैं, जबकि इस धातु के अक्षरों से बने एक शब्द "सिल्म" का शाब्दिक अर्थ "अमन" (शांति) भी है। फिर 'सलाम' और 'सलामत' के शब्द भी हमारी भाषा में सलामती के अर्थ में प्रयुक्त एवं प्रचलित हैं। स्वयं 'इस्लाम' शब्द का अर्थ अपने आपको ईश्वर के प्रति समर्पित कर देना, उसके आगे सिर झुका देना तथा उसकी आज्ञा पालन और भक्ति करना है।

इस प्रकार इस्लाम का शाब्दिक अर्थ होता है सुपुर्दगी (आत्मसमर्पण SURRENDER) या अपने आप को बिना किसी शर्त अल्लाह के हवाले कर देना अर्थात अल्लाह की शिक्षा और उसके हुक्मों के अनुसार ज़िन्दगी गुज़ारना।

इस्लाम का पारिभाषिक अर्थ

इस्लाम का पारिभाषिक अर्थ होता है, अल्लाह और उसकी ओर से आई हुई शिक्षा को मान लेना और पूरी ज़िन्दगी में उसके हुक्मों की पाबन्दी करते हुए उसका बन्दा बन जाना अर्थात उसी की इ़बादत

करना और उसके बताये हुए नियमों के अनुसार ज़िन्दगी गुज़ारना।

इस्लाम धर्म के संस्थापक-

पवित्र कुर्आन में इस्लाम के विषय में कहा गया है-

اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِيْ وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنًا

(सूरः माइदा, आयत नं० 3)

अनुवाद-

"आज के दिन तुम्हारे धर्म को मैंने पूरा कर दिया और मैंने तुम पर अपनी कृपा पूरी कर दी, और मैंने तुम्हारे लिए इस्लाम धर्म को पसंद किया।"

ऊपर की पंक्तियों से ज़ाहिर होता है कि यहाँ इस्लाम धर्म हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर पूरा हो रहा है, जिसका संस्थापक कोई और है।

कुछ इतिहासकारों ने लिखा है कि इस्लाम के संस्थापक हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) हैं जबकि ऐसा नहीं, हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) कोई नया धर्म लेकर नहीं आये थे बल्कि उन्होंने पहले ईशदूतों पर अवतरित पुस्तकों की तस्दीक़ (पुष्टि) करते हुए पवित्र कुर्आन को मानव जीवन का एक विधान दिया, इसलिए इस्लाम धर्म के मूल संस्थापक तो अल्लाह तआला हैं और दुनिया में इस्लाम की शुरुआत करने वाले हज़रत आदम (अ़लै०) थे जिनका धर्म इस्लाम था, उसके बाद हज़रत इब्राहीम (अ़लै०) ने जिस दीन की ओर बुलाया वह भी इस्लाम धर्म ही था। इसी तरह नूह़, मूसा, ईसा (अ़लै०) सभी इस्लाम के ही अनुयाई थे, परन्तु इस्लाम शब्द को अपनी भाषा के अनुसार लोगों को बताते थे जिस के मूल सिद्धान्त समान थे।

जब हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) अ़रब देश के मक्का शहर में पैदा हुए तो वहाँ की भाषा अ़रबी थी, इसलिए उन्होंने अ़रबी ही में शब्द इस्लाम प्रयोग किया जिसे कुर्आन ने इस तरह बयान किया है।

اِنَّ الدِّيْنَ عِنْدَ اللّٰهِ الْاِسْلَامُ

अनुवाद- अल्लाह के नज़्दीक धर्म केवल इस्लाम है। (सूरः आले इमरान आयत नं० 19)

ऊपर की पंक्तियों से यह स्पष्ट हो जाता है कि अल्लाह के नज़्दीक केवल इस्लाम धर्म है तो जो सबसे पहले व्यक्ति आया होगा उसे इस्लाम ही शिक्षा दी गई होगी, इसलिए इस्लाम धर्म के संस्थापक हज़रत आदम (अ़लै०) हुए और ऊपर की आयत के अनुसार इस्लाम को क़ियामत तक पूर्ण रूप देने वाले हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) हुए।

पूरा संसार अल्लाह का है और सारे इन्सान अल्लाह के हैं ईश्वरीय धर्म पूरे संसार और सारे इन्सानों का धर्म है, अतः इस्लाम धर्म सारे इन्सानों का धर्म है।

इसलिए कि दुनिया की हर चीज़ अल्लाह के तय किये हुए नियम का पालन कर रही हैं। सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र सब उन नियमों का पालन कर रहे हैं जो अल्लाह ने उनके लिए तय किये हैं। पेड़ पौधे,

नक्षत्र, पशु-पक्षी सब ईश्वरीय नियमों का पालन कर रहे हैं। उन्हें अल्लाह ने जिस काम पर नियुक्त किया है वह उसका अंजाम दे रहा है और इस्लाम का भी अर्थ होता है अपने मालिक की फ़रमाँबरदारी करना। मालूम हुआ कि दुनिया की तमाम चीज़ें अपनी-अपनी क्षमता के अनुसार इस्लाम को अपनाये हुए हैं।

परन्तु जिन्न और इन्सान जिन्हें अल्लाह तआ़ला ने समझ के साथ-साथ ईश्वरीय शिक्षा भी देता रहा उनमें से बहुत से ऐसे हैं जो अल्लाह की नाफ़रमानी करते हैं, यह बड़े नाइन्साफ़ी की बात है, पैदा उसने किया पालनहार वह है, जीवन साधन उसने दिये और इन्सान अपने को उसका आज्ञाकारी तथा भक्त न माने या उसके साथ किसी और की पूजा उपासना करे। यह बात न्याय के ख़िलाफ़ है।

अल्लाह का पसंदीदा धर्म

अल्लाह तआ़ला ने सूरः माइदः (आयत नं० 3) में जहाँ दीन को मुकम्मल और अपनी नेअ़मत को पूरा करने की ख़ुशख़बरी सुनाई, वहीं यह भी फ़रमाया, मैंने इस्लाम ही को तुम्हारे लिए दीन के तौर पर पसंद फ़रमाया और उसको तुम्हारी रहनुमाई और तुम्हारे अ़मल के लिए चुन लिया।

इसी तरह क़ुर्आन के सूरः आले इमरान (आयत नं० 19) में अल्लाह तआ़ला ने खुले तौर पर फ़रमाया, अल्लाह के यहाँ पसंदीदा दीन केवल इस्लाम है। चूंकि अल्लाह तआ़ला का पसंदीदा दीन केवल इस्लाम है इसलिए अल्लाह तआ़ला के यहाँ कामियाबी निजात और क़ुबूलियत का एतिबार (भरोसा) इसी पर होगा जिसे क़ुर्आन के सूरः आले इमरान के पचींसवीं आयत में बताया गया है कि उसके यहाँ इस्लाम के सिवा कोई भी दीन व तरीक़ा क़ुबूल नहीं किया जाएगा।

मुस्लिम का अर्थ और उसकी व्याख्या

'मुस्लिम' का अर्थ-

"जो अपने आप को बिना किसी शर्त के अल्लाह के ह़वाले कर दे, उसे 'मुस्लिम' कहते हैं।"

पारिभाषिक अर्थ- अल्लाह पर आस्था रखते हुए ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को अन्तिम महाईशदूत (आख़िरी रसूल) मानना और उन पर अवतरित पवित्र क़ुर्आन को अन्तिम विधान मानते हुए उसी के अनुसार जीवनयापन करना। जो भी ऐसा करे उसे 'मुस्लिम' कहते हैं।

दुनिया की हर चीज़ 'मुस्लिम'-

'मुस्लिम' का अर्थ होता है अपने पैदा करने वाले की फ़रमाँबरदारी करना। इस प्रकार देखा जाए तो दुनिया की हर चीज़ मुस्लिम है। जैसे- पूरी दुनिया को अल्लाह ही ने पैदा किया, वही इस दुनिया का मालिक है, दुनिया की हर चीज़ काम में लगी हुई है, जिस काम के लिए अल्लाह ने उसे बनाया है हर एक के लिए उस मालिक ने कुछ नियम बना दिये हैं, जिनसे बाल बराबर हटना किसी के बस में नहीं है।

पानी के बहने, भाप बन कर उड़ने और ठंड पाकर जम जाने के जो नियम बना दिये गये हैं, वह उनसे बाहर नहीं जा सकते। सूरज, चाँद और तारों के लिए जो नियम हैं धरती से पौधों के ऊगने और उनके बढ़ने और उनके पालने के लिए उनके रब ने जो नियम बना दिये हैं उनके ख़िलाफ़ नहीं कर सकते।

इसी तरह हर चीज़ के लिए एक नियम है, जो उनको छोड़ कर अपनी मर्ज़ी से कुछ नहीं कर सकते, सब अपने पैदा करने वाले के अधीन हैं, सब उसके हुक्मों पर चलने के लिए मजबूर हैं। इस तरह हम यह कह सकते हैं कि दुनिया की हर चीज़ मुस्लिम है अर्थात अपने मालिक के अधीन (मुस्लिम) है।

इसी तरह़ इन्सान भी इस दुनिया का एक भाग है उसको भी अल्लाह ने पैदा किया उसके पैदा होने ज़िन्दा रहने और मरने का भी एक क़ानून है। इन्सान इसी क़ानून के अनुसार बढ़ता है पलता है और मर जाता है।

इसका सांस लेना उसी अल्लाह के बनाये हुए क़ानून के अनुसार है। इसका दिल, इसके हाथ-पैर, इसकी आँखें और इसके कान, सब उसी के क़ानून के अनुसार काम करते हैं। इन्सान के यह बस में नहीं कि वह आँखों से सुनने का काम ले सके या कानों से देखने का काम ले सके अल्लाह ने आँख से देखने के लिए जो क़ानून बना दिये हैं इन्सान उसको तोड़ नहीं सकता है, कि वह सांस लिए बिना ज़िन्दा रह जाए, या हवा के बदले पानी में मछलियों की तरह रहना शुरू कर दे।

इस तरह हम देखते हैं कि इन्सान अपने जीवन के एक बहुत बड़े भाग में अल्लाह के बनाए हुए क़ानून के अधीन है या यह कि वह भी दुनिया की दूसरी चीज़ों की तरह़ प्राकृतिक रुप में मुस्लिम है। परन्तु अपने आचरण का दुरुपयोग से इन्कारी (काफ़िर) बन जाता है।

इन्सान और दूसरी चीज़ों में अन्तर-

अल्लाह ने इन्सान को बुद्धि दी है सोचने और समझने की ताक़त दी है और बहुत सी बातों में यह अख़्तियार (Option) दिया है कि चाहे वह माने और चाहे न माने, चाहे अल्लाह के रास्ते पर चले, चाहे न चले वह अल्लाह की दी हुई शक्तियों से अच्छा काम भी ले सकता है और उन्हें बुरे कामों में भी लगा सकता है, चाहे तो अच्छी बातें कह सकता है और चाहे तो बुरी बातें कह सकता है। इसी तरह आँख, कान, हाथ-पैर से वह भले काम भी कर सकता है और बुरे काम भी कर सकता है।

इन्सान 'मुस्लिम' रहे या इन्कार करे-

अर्थात जीवन के इस भाग में अल्लाह ने यह आज़ादी दी है कि वह चाहे उसका मुस्लिम बन कर रहे चाहे मुस्लिम बनने से इन्कार कर दे। इस तरह इन्सान का पैदा होना और ज़िन्दा रहना तो उसी क़ानून के अनुसार होता है जिसे अल्लाह ने बना दिया है वह चाहे या न चाहे उसे अल्लाह के बनाये हुए नियमों के अधीन ही हो कर रहना पड़ता है अर्थात वह मुस्लिम ही पैदा होता है और जहाँ तक उसका अधिकार नहीं है वह मुस्लिम ही रहने पर मजबूर है, परन्तु पैदा होने के बाद जब उसके माता-पिता उसको अल्लाह के हुक्मों पर चलने का रास्ता बताते हैं और वह अपनी बुद्धि से काम लेकर यह फ़ैसला

करता है कि अब वह जीवन के उन कामों में भी जिनमें उसे कुछ अधिकार दिया गया है उनमें भी वह अल्लाह ही के हुक्मों के अनुसार चले तो वह मुस्लिम हो जाता है।

इसी तरह वह लोग भी जिनके माता-पिता तो उन्हें यह रास्ता नहीं बताते मगर वह बड़े होने के बाद हर बात को आँखें खोलकर देखते हैं और अपनी बुद्धि से काम लेते हैं और यह फ़ैसला कर लेते हैं कि जीवन का वही रास्ता ठीक है जिसमें अपने पैदा करने वाले के हुक्मों पर चला जाए और उसके बताये हुए तरीक़े पर ज़िन्दगी गुज़ारी जाए, तो यह लोग भी पूरे मुस्लिम होते हैं परन्तु जो लोग अल्लाह के बताये हुए रास्ते पर चलना पसंद नहीं करते और क़ानून को छोड़कर अपना जीवन किसी और तरीक़े पर बिताते हैं वे मुस्लिम नहीं।

वास्तव में मुस्लिम कौन है

किसी मुसलमान घर में पैदा हो जाने से कोई मुसलमान नहीं होता, बल्कि मुस्लिम की जो परिभाषा ऊपर बताई जा चुकी है कि मुस्लिम वह है "जो अपने आप को बिना किसी शर्त अल्लाह के हवाले कर दे" वही मुस्लिम होगा। न कि जैसा- मशहूर है कि ख़त्ना कराने वाला, गोश्त खाने वाला मुसलमान होता है ऐसा नहीं है।

कुछ लोग ऐसे होते हैं कि अपने मन की इच्छाओं के दास बन जाते हैं, बुरे कामों में पड़ जाते हैं और फिर उन्हें अल्लाह के रास्ते की रोशनी दिखाई ही नहीं देती और कुछ लोग ऐसे होते हैं जिन के मन में अपने बाप-दादों के चलन और अपने घरेलू रस्म व रिवाज की ऐसी मुहब्बत बैठ जाती है कि वे उसके ख़िलाफ़ कोई बात सुनने के लिए तैयार नहीं होते, कुछ लोगों को ज़ात-पात का पक्ष और बाप-दादा के मज़हब की अन्धी मुहब्बत सही बात सोचने नहीं देती और वे किसी बात पर विचार करने और बुद्धि से काम लेने के क़ाबिल ही नहीं रहते ऐसे लोग वास्तव में मुस्लिम नहीं हो सकते।

अल्लाह की मर्ज़ी क्या है?

सोचने की बात यह है कि मनुष्य को यह कौन बताये कि वह किस रास्ते पर चले और कौन सा रास्ता उचित है और किस रास्ते पर चल कर वह अपने मालिक को राज़ी कर सकता है।

अगर हर मनुष्य अपने से तय कर ले कि अल्लाह की यही मर्ज़ी है तो हर मनुष्य एक अलग ही बात तय कर लेगा फिर मनुष्य को यह बात कौन बताये कि उसके मालिक की मर्ज़ी क्या है, वह किन बातों को पसंद करता है और किन को नापसंद, तो उत्तर मिलेगा कि अल्लाह ही को बताना चाहिए कि उसकी मर्ज़ी क्या है। उसकी मर्ज़ी मालूम होगी उसके द्वारा भेजे गये ज्ञान से, तो हम देखें कि इस समय पूरे विश्व में ईश्वरीय ज्ञान के नाम से कौन-कौन से ग्रन्थ मौजूद हैं और कौन-कौन अपने वास्तविक रूप में हैं, कौन नहीं हैं। तमाम शोध के बाद मेरे अनुसार इस समय पूरे विश्व में क़ुर्आन के अतिरिक्त अपने वास्तविक रूप में कोई ग्रंथ मौजूद नहीं, इस तरह़ यह स्पष्ट हो जाता है कि क़ुर्आन ईश्वरीय ग्रन्थ

है तो अब गोया अल्लाह की मर्ज़ी को मालूम करने का हमें साधन मिल गया। अतः जो इस के अनुसार चलेगा वह अपने मालिक की मर्ज़ी के अनुसार चलेगा और जो इसके विपरीत चलेगा वह अल्लाह की इच्छा के विपरीत चलेगा और वह मान्य न होगा।

सबसे पहले इन्सान का धर्म-

सबसे पहले इन्सान ह़ज़रत आदम (अ़लै०) हैं जिसका उल्लेख पुराण, बाइबिल व अन्य धार्मिक किताबों में मौजूद है। उनको अल्लाह ने अपनी बातें बता दीं थीं जिसे ह़ज़रत आ़दम (अ़लै०) ने अपने बेटों को बताई।

जब इन्सान ने धरती पर रहना शुरु किया तो उसे यह बात मालूम हुई कि मेरा रब अल्लाह है और मुझे उसी के हुक्मों पर चलना है।

कुछ दिनों बाद मनुष्य इन बातों को भूलता गया तो अल्लाह ने ह़ज़रत नूह़ (अ़लै०) को भेजा, उन्होंने फिर वह सारी भूली हुई बातें मनुष्य को सिखाईं और बताईं। जिससे मनुष्य फिर अंधेरे से उजाले में आ गया।

समय बीतता गया और इन्सान इन सब बातों को भूल गया तो अल्लाह अपनी मेहरबानी से अपने ख़ास बन्दे भेजता रहा जो लोगों को अल्लाह की मर्ज़ी का रास्ता दिखाते। जो अल्लाह के रसूल, पैग़म्बर और नबी कहलाते हैं।

रसूल हर जगह आये-

अल्लाह के रसूल समय-समय पर पैदा होते रहे और अल्लाह के बन्दों को अल्लाह की मर्ज़ी का रास्ता दिखाते रहे। जिन लोगों ने रसूलों का कहना माना और अल्लाह को अपना मालिक मान कर उसके हुक्मों पर चले वह सब मुस्लिम थे। ये रसूल हर ज़माने में आते रहे। हर देश में अल्लाह तआ़ला ने अपने रसूल भेजे और अपने बन्दों को अपनी मर्ज़ी का रास्ता दिखाया। ये सब रसूल सच्चे थे और उन्होंने जिस रास्ते की तरफ़ लोगों को बुलाया वह सच्चा रास्ता था, इसी को इस्लाम कहते है।

अल्लाह के आख़िरी रसूल (ईशदूत)

मनुष्य जब तक इस क़ाबिल न हो गया कि वह अल्लाह के भेजे हुए दीन को सारी दुनिया में लेकर जा सके और जब तक यह डर बाक़ी रहा कि मनुष्य अल्लाह की बताई हुई बातों को खो देगा, अल्लाह तआ़ला बराबर अपने रसूल भेजता रहा और इन्सान को बार-बार अपना दीन बताता रहा।

परन्तु जब मनुष्य इस क़ाबिल हो गया कि वह अल्लाह के रसूल की बताई हुई बातों को लेकर सारी दुनिया में जा सके और दुनिया के सब लोगों को अल्लाह का दीन पहुँचा सके तो अल्लाह ने अपने सबसे आख़िरी रसूल ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को पैदा किया। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने अल्लाह के दीन

को लोगों के सामने पेश किया और उन्हें वह सारी बातें बता दीं जिन पर चलकर वह अल्लाह को ख़ुश कर सकते थे और वह भी बता दीं, जिन पर चलना अल्लाह को पसंद नहीं था।

अल्लाह के आख़िरी रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) अब से क़रीब डेढ़ हज़ार साल पहले अ़रब देश के एक नगर मक्का में पैदा हुए। जब चालीस साल के हो गये तो अल्लाह ने आपको अपना रसूल बनाया। आपके पास अल्लाह के फ़रिश्ते जिनका नाम हज़रत जिब्रईल (अ़लैहिस्सलाम) है आने लगे और अल्लाह की बताई हुई बातें आपको बताने लगें, जिसे क़ुर्आन शरीफ़ कहते हैं। यह सब अल्लाह की तरफ़ से उतरी हुई बातें हैं। इनमें किसी इन्सान की कही हुई कोई बात नहीं है। इसलिए क़ुर्आन शरीफ़ को अल्लाह की किताब कहते हैं।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से पहले-

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से पहले भी अल्लाह के बहुत से रसूल (सन्देष्टा) आये और उन्होंने लोगों को अल्लाह का वही दीन सिखाया जिसे इस्लाम कहते हैं। ये सब रसूल सच्चे थे और इनका लाया हुआ दीन भी सच्चा था, लेकिन जब लोगों ने दीन को भुला दिया, उसमें अपनी तरफ़ से बहुत सी बातें घटा-बढ़ा दीं तो अल्लाह कोई रसूल को भेजता जो इस्लाम ही को लोगों के सामने पेश किया।

अब भी कुछ धर्म पाये जाते हैं जो अपना सम्बन्ध अल्लाह के किसी न किसी रसूल से बताते हैं। हज़रत मूसा (अ़लै०) और हज़रत ईसा (अ़लै०) के मानने वाले यहूदी और ईसाई अब भी मौजूद हैं। परन्तु अब उनके लिए यह बात ठीक नहीं है कि वह अपने पुराने धर्म से ही चिमटे रहें। इसके कई कारण हैं-

पहली बात तो यह है कि इनमें से किसी के पास अल्लाह की उतारी हुई किताब अपने अस्ली रूप में मौजूद नहीं है। इनके पास जो आसमानी किताबें हैं उनमें बहुत सी बातें बढ़ा दी गई हैं और बहुत सी कम हो गई हैं। इसलिए अब यह नहीं कहा जा सकता कि इन किताबों में जो कुछ लिखा है वह सब का सब अल्लाह की तरफ़ से लाया हुआ है।

दूसरी बात यह है कि जब अल्लाह ने अपना दीन पूरी तरह और आख़िरी शक्ल में भेज दिया तो अब किसी के लिए यह बात कहना ठीक नहीं है कि वह तो उसी अपनी पुरानी बात पर जमा रहेगा और उन हुक्मों को नहीं मानेगा जो अब उसी मालिक की ओर से आईं हैं। अल्लाह की मर्ज़ी का रास्ता एक ही हो सकता है और वह एक ही है, जिसे हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने दुनिया के तमाम इन्सानों के सामने पेश किया।

रसूल इन्सान थे-

अल्लाह ने इन्सानों को सीधा रास्ता दिखाने के लिए सदा अपने रसूल भेजे। यह सब रसूल इन्सान ही थे, इनमें से कोई अल्लाह (परमेश्वर) का अवतार नहीं था। ख़ुदा कभी इन्सान या किसी और रूप में धरती पर नहीं आया। जिन लोगों को विष्णु का अवतार कहा जाता है वह सब मनुष्य ही थे। यह लोगों की भूल है कि उन्होंने उसको ईश्वर माना। अल्लाह तो बस एक ही है। उसका कोई रूप नहीं न वह

किसी रूप को धारण करता है।

अल्लाह की ओर से एक ही धर्म आया-

अल्लाह की ओर से भेजा हुआ दीन सदा से एक ही रहा। इसी धर्म को अल्लाह के हर नबी ने अपनी भाषा के अनुसार पेश किया और यही सबसे आख़िर में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने लोगों को सिखाया। हर नबी के मानने वाले मुस्लिम ही थे परन्तु अब केवल वही लोग मुस्लिम हैं जो अल्लाह के आख़िरी नबी और उनके बताये हुए दीन को मानते हैं। यह एक सीधी सी बात है परन्तु बहुत से चालाक लोगों ने इस बात को तोड़-मरोड़ कर पेश करना शुरु कर दिया है। वे कहते हैं कि सब धर्म सच्चे हैं, आदमी जिस धर्म पर चाहे चले वह ख़ुदा तक पहुँच सकता है। यह तो ईश्वर तक जाने के लिए अलग-अलग रास्ते हैं। जो जिस रास्ते पर चाहे चले, सब ठीक है यह बात बिल्कुल ग़लत है।

सैकड़ों धर्म-

आजकल दुनिया में सैकड़ों मज़हब पाये जाते हैं। यह बात तो ठीक है कि इन मज़हबों में कुछ न कुछ बातें ऐसी मिल जाती हैं जो हर मज़हब में पाई जाती हैं। झूठ बोलना, चोरी करना, बुरे काम करना हर मज़हब में पाप बताया गया है और हर मज़हब ने सच बोलने, दूसरे के काम आने और अच्छे काम करने की आज्ञा दी है, परन्तु इस बात का फ़ैसला कर देना कि सब मज़हब सच्चे हैं, ठीक नहीं। यह बात ठीक है कि आज कल जो मज़हब पाये जाते हैं इनमें से कुछ ऐसे मज़हब भी हैं जिनको किसी न किसी समय में अल्लाह के किसी रसूल ने ही सिखाया था, परन्तु अब यह सब मज़हब जिस रूप में पाये जाते हैं उस रूप में इन सब को सच्चा मानना बड़ी भूल है।

सारे धर्म सच्चे-

यह कहना कि सारे धर्म सच्चे हैं हर धर्म पर चलकर इन्सान ईश्वर की मर्ज़ी हासिल कर सकता है, हरगिज़ ठीक नहीं है। इन बातों में से कोई एक ही सच्चा हो सकता है, आप कभी यह नहीं मान सकते कि एक चीज़ एक ही समय में काली भी हो और सफ़ेद भी, चमकदार भी हो और अन्धेरी भी। आप कहेंगे कि दोनों बातें सच नहीं हो सकती या तो वह चीज़ सफ़ेद होगी या काली चमकदार होगी या अन्धेरी। इसी प्रकार यह बात बिल्कुल ग़लत है कि सब मज़हब सच्चे हैं।

सच्चा तो इनमें कोई एक ही होगा। यह बात दूसरी है कि किसी का दिल न माने और वह इस्लाम को सच्चा मज़हब न समझे। उसकी बुद्धि जिस मज़हब को सच्चा समझे वह उसे सच्चा माने, परन्तु यह बड़ी ग़लती है कि एक साथ सबको सच्चा कहा जाए। हमने जहाँ तक विचार किया है यही समझते हैं कि अल्लाह की मर्ज़ी हासिल करने के लिए और उसको ख़ुश करने के लिए बस वही तरीक़ा सच्चा है जो इस्लाम ने बताया है। इस्लाम के सिवा जितने तरीक़े हैं वे सब ग़लत हैं और हमें विश्वास है कि जो कोई भी खुले दिल से अपनी बुद्धि से काम लेकर बात को समझना चाहेगा वह भी यही बात मानने के

लिए मजबूर होगा जो हमने मानी है।

धर्म में ज़बरदस्ती नहीं

यहाँ यह बात भली-भाँति समझ लेनी चाहिए कि सारे धर्मों में केवल इस्लाम धर्म को ही सच्चा मानने का यह मतलब कदापि नहीं है कि अब इस्लाम धर्म के मानने वाले दूसरों से बैर रखें और उनसे लड़ें। अल्लाह-तआ़ला ने साफ़-साफ़ फ़रमाया है कि धर्म के मामले में कभी ज़बरदस्ती नहीं की जा सकती, अल्लाह ने हर मनुष्य को यह अधिकार दिया है कि वह अपनी बुद्धि से काम लेकर जिस रास्ते को ठीक समझे उस पर चले।

मुसलमान का काम यह नहीं है कि वह **किसी को ज़बरदस्ती किसी के धर्म** से हटाकर दूसरे धर्म पर लाए, न मुसलमान का काम यह है कि वह दूसरे मज़हब वालों के मज़हब को बुरा कहकर दूसरों का दिल दुखाये। कुर्आन शरीफ़ में अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि,

"जो लोग अल्लाह को छोड़कर दूसरों को उपास्य मानते हैं और उनको पुकारते हैं तुम उनके देवताओं को बुरा न कहो।" (सूरः अन्‌आ़म रुकूअ़ ३)

अल्लाह की मर्ज़ी का रास्ता-

मुसलमान के लिए अल्लाह का हुक्म यही है कि सबसे पहले तो अपने जीवन को इस्लाम का नमूना बनाये और इसके साथ-साथ अल्लाह के दूसरे बन्दों के सामने अल्लाह का दीन प्यार और मुहब्बत के साथ पेश करे।

अल्लाह का दीन सारे इन्सानों के लिए उतरा है। इसलिए मुसलमानों को हुक्म दिया गया है कि वे इस दीन को दूसरे लोगों के सामने पेश करें। उनको ख़ुदा की मर्ज़ी का रास्ता दिखाएँ और ग़लत रास्तों पर चलने से बचाएँ।

परन्तु इस पूरे काम में किसी को ज़बरदस्ती कोई बात मनवाने की कोशिश करना या किसी को उसके धर्म से हटाने के लिए मजबूर करना जायज़ नहीं है। इस्लाम नें इस से रोका है, यह काम अल्लाह का है कि वह एक दिन सब लोगों को अपने सामने जमा करेगा और जिन लोगों ने अपनी मूर्खता या हठधर्मी के कारण अल्लाह के भेजे हुए सच्चे धर्म को नहीं माना वह उनको दण्ड देगा सबको उसी के सामने हाज़िर होना है और वह हर एक के मन का हाल जानता है।

20 فَإِنْ حَاجُّوكَ فَقُلْ أَسْلَمْتُ وَجْهِيَ لِلَّهِ وَمَنِ اتَّبَعَنِ ۗ وَقُلْ لِلَّذِينَ أُوتُوا الْكِتٰبَ وَالْأُمِّيِّينَ أَأَسْلَمْتُمْ ۚ
فَإِنْ أَسْلَمُوا فَقَدِ اهْتَدَوْا ۖ وَإِنْ تَوَلَّوْا فَإِنَّمَا عَلَيْكَ الْبَلٰغُ ۗ وَاللَّهُ بَصِيرٌ بِالْعِبَادِ ۝

इस्लाम और रसूलुल्लाह (सल्ल०) की सच्चाई साबित हो जाने के बावजूद भी अगर अहले किताब कुफ़्र व हठधर्मी की राह अख़्तियार करते हैं, तो आप कह दीजिए कि मैंने तो अपना ज़ाहिर व बातिन

(छुपा हुआ) अल्लाह के सामने झुका दिया है और यही ह़ाल मेरी पैरवी करने वाले मुसलमानों का भी है। अहले किताब और ग़ैर अहले किताब सब से कह दीजिए कि अगर तुम इस्लाम ले आओगे तो सिराते मुस्तक़ीम (सीधे रास्ते) पर हो जाओगे और अगर मुँह मोड़ोगे तो मेरा काम सिर्फ़ पैग़ाम पहुँचा देना है और ह़िसाब तो तुम्हें अल्लाह को देना होगा।

21 إِنَّ الَّذِينَ يَكْفُرُونَ بِآيَاتِ اللَّهِ وَيَقْتُلُونَ النَّبِيِّينَ بِغَيْرِ حَقٍّ وَيَقْتُلُونَ الَّذِينَ يَأْمُرُونَ بِالْقِسْطِ
مِنَ النَّاسِ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ أَلِيمٍ ﴿٢١﴾

यहाँ भी मुराद यहूद क़ौम हैं, जिन्होंने 'ह़ज़रत ज़करिया (अ़लै०)' और उन के बेटे 'ह़ज़रत यह़्या (अ़लै०)' को क़त्ल किया और उन का खुद गुमान है कि उन्होंने 'ह़ज़रत ईसा (अ़लै०)' को क़त्ल किया था और चूंकि रसूलुल्लाह (सल्ल०) के ज़माने में यहूद अपने बाप दादाओं की करतूतों से राज़ी थे, इसलिए उन की निस्बत उन की तरफ़ करना सही़ हुआ।

'इमाम ह़ाकिम' ने लिखा है, इस आयत में दलील इस बात की है कि दाअ़ी को जान का ख़त्रा होगा उसके बावजूद लोगों को भलाई की दअ़वत देता रहेगा।

22 أُولَٰئِكَ الَّذِينَ حَبِطَتْ أَعْمَالُهُمْ فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ وَمَا لَهُمْ مِنْ نَاصِرِينَ ﴿٢٢﴾

दुनिया में उन के आ़माल इस तरह़ ज़ाया हुए कि अल्लाह ने उन की मज़म्मत (निन्दा) की, ज़िल्लत व रुस्वाई का सामना करना पड़ा, क़त्ल किये गये, उन की औ़रतें और बच्चे क़ैदी और ग़ुलाम बना लिए गये, उन के अमवाल (माल) बतौरे ग़नीमत मुसलमानों में तक़्सीम (बाँट) कर दिये गये और आख़िरत में भी अल्लाह तआ़ला उन को दर्दनाक अ़ज़ाब देगा।

23 أَلَمْ تَرَ إِلَى الَّذِينَ أُوتُوا نَصِيبًا مِنَ الْكِتَابِ يُدْعَوْنَ إِلَىٰ كِتَابِ اللَّهِ لِيَحْكُمَ بَيْنَهُمْ ثُمَّ يَتَوَلَّىٰ فَرِيقٌ
مِنْهُمْ وَهُمْ مُعْرِضُونَ ﴿٢٣﴾

"किताब" से मुराद तौरेत और "उसका एक ह़िस्सा दिया गया।" इस से मुराद उ़लमा-ए-यहूद हैं और "किताबुल्लाह" से मुराद कुर्आने करीम है। कुछ मुफ़स्सिरीन ने "किताबुल्लाह" से भी मुराद तौरेत लिया है और कहा है कि आयत में इशारा एक ख़ास वाक़िये की तरफ़ है, जिस का ख़ुलासा यह है कि मदीना के यहूद अपने दो ज़ानी (ज़िनाकार) मर्द और औ़रत को रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास ले गये, तो आप (सल्ल०) ने रज्म (पत्थर मार-मार के मार डालना) का हुक्म दिया, लेकिन उन्होंने इन्कार कर दिया और कहा कि हमारी किताब (यानी तौरेत) में तो सिर्फ़ मुँह काला करना है। फिर तौरेत मँगाई गई तो उस में रज्म (पत्थर मार-मार के मार डालना) का ज़िक्र मिला। चुनाँचे उन दोनों को रज्म (पत्थर मार-मार के मार डालना) कर दिया गया, इस पर यहूद नाराज़ हुए तो यह आयत नाज़िल हुई।

नोट- जब किसी शख़्स को अल्लाह की किताब और उस में मौजूद शरीअ़त को बताया जाए तो उसे क़ुबूल करना चाहिए। शादीशुदा ज़ानी को रज्म (पत्थर मार-मार कर मार डालना) करने के लिए उस का

मुसलमान होना शर्त नहीं है।

24-25 ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوْا لَنْ تَمَسَّنَا النَّارُ اِلَّآ اَيَّامًا مَّعْدُوْدٰتٍ ۪ وَغَرَّهُمْ فِيْ دِيْنِهِمْ مَّا كَانُوْا يَفْتَرُوْنَ
فَكَيْفَ اِذَا جَمَعْنٰهُمْ لِيَوْمٍ لَّا رَيْبَ فِيْهِ ۣ وَوُفِّيَتْ كُلُّ نَفْسٍ مَّا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ ۝

यहूदियों ने क़ुर्आन करीम और रसूलुल्लाह (सल्ल०) से दो वजह से इन्कार किया। एक तो उन का यह गुमान (ख़याल) झूठा था कि जहन्नम की आग उन्हें चन्द ही दिन अपनी लपेट में लेगी, जिस का उन्होंने मनमाना क़ानून बना लिया था और दूसरे यह कि अल्लाह की आयात को झुठलाने की वजह से शैतान ने उन के बुरे आ़माल को उन की नज़रों में अच्छा बना कर पेश किया और वह धोके में आ गये और समझ बैठे कि वह ह़क़ पर हैं।

यह ह़क़ का इन्कार करने की वजह से अल्लाह की तरफ़ से एक सज़ा थी। ऐसे लोगों को क़ियामत के दिन मालूम हो जाएगा जिस दिन किसी पर कोई ज़ुल्म नहीं किया जाएगा, इन्साफ़ के साथ बदला दिया जाएगा। इस का तसव्वुर (Imagination) इन्सान इस दुनिया में नहीं कर सकता।

26 قُلِ اللّٰهُمَّ مٰلِكَ الْمُلْكِ تُؤْتِي الْمُلْكَ مَنْ تَشَاۗءُ وَتَنْزِعُ الْمُلْكَ مِمَّنْ تَشَاۗءُ ۡ وَتُعِزُّ مَنْ تَشَاۗءُ
وَتُذِلُّ مَنْ تَشَاۗءُ ۭ بِيَدِكَ الْخَيْرُ ۭ اِنَّكَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝

दुआ़ का तरीक़ा-

अल्लाह तआ़ला ने नबी करीम (सल्ल०) को दुआ़ का तरीक़ा सिखलाया और तस्बीह़ व तम्ह़ीद की तअ़लीम दी। अल्लाह तआ़ला मालिके कुल (हर चीज़ का मालिक) और मालिके ह़क़ीक़ी (सच्चा मालिक) है। अपने मुल्क में जैसे चाहता है करता है, जिसे चाहता है अ़ज़ाब या सवाब देता है, कोई उस का शरीक नहीं और न कोई उसे रोक सकता है, वह जिसे चाहता है बादशाह बना देता है, इसलिए कि ह़क़ीक़ी बादशाहत उसी के साथ ख़ास है और दूसरों की बादशाहत वक़्ती है। उसी के हाथ में इ़ज़्ज़त व ज़िल्लत है और उसी के हाथ में तमाम भलाइयाँ हैं। इब्ने अ़ब्बास (रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा) कहते हैं कि आयत में "मिल्क" से मुराद "नुबूव्वत" है।

ह़ाफ़िज़ इब्ने कसीर (रह़०) कहते हैं, आयत में इस बात की तरफ़ इशारा है कि अल्लाह तआ़ला ने नबी करीम (सल्ल०) और उम्मते मुस्लिमा पर एह़सान करके नुबूव्वत बनी इस्राईल से नबी करीम (सल्ल०) की तरफ़ फेर दी और उन के दीन को तमाम दीनों पर ग़ालिब कर के पूरी दुनिया में फैला दिया, इसलिए मुसलमानों को इस बड़ी नेअ़मत का शुक्रिया अदा करते रहना चाहिए। **(इब्ने कसीर)**

नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह से बढ़कर कोई ग़ैरतमन्द नहीं है और इसी वजह से उस ने बेह़याई के काम (जैसे- ज़िना वग़ैरह) ह़राम किये हैं और अल्लाह से बढ़कर कोई ऐसा नहीं है जिस की तअ़रीफ़ की जाए (यानी अल्लाह इस बात को बहुत पसन्द करता है कि उस की तअ़रीफ़ की जाए।" **(सह़ीह़ बुख़ारी, अल् तौह़ीद, बाब 15, ह़दीस 7403)**

27 تُولِجُ اللَّيْلَ فِي النَّهَارِ وَتُولِجُ النَّهَارَ فِي اللَّيْلِ ۖ وَتُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَتُخْرِجُ الْمَيِّتَ مِنَ الْحَيِّ ۖ
وَتَرْزُقُ مَن تَشَاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ۝

वह रात और दिन को एक दूसरे में दाख़िल करता है यानी एक को दूसरे के पीछे लाकर या कमी व ज़्यादती के ज़रिये और ज़िन्दे से मुर्दे को और मुर्दे को ज़िन्दे से पैदा करता है। कुछ मुफ़स्सिरीन के अनुसार मोमिन को काफ़िर से और काफ़िर को मोमिन से निकालता है और वह जिसे चाहता है बे-हिसाब रोज़ी देता है।

आयत नं० 28 से 37 तक

لَا يَتَّخِذِ الْمُؤْمِنُونَ الْكٰفِرِينَ أَوْلِيَآءَ مِن دُونِ الْمُؤْمِنِينَ ۖ وَمَن يَفْعَلْ ذٰلِكَ فَلَيْسَ مِنَ اللّٰهِ فِى شَىْءٍ إِلَّآ أَن تَتَّقُوا مِنْهُمْ
تُقٰىةً ۗ وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهُۥ ۗ وَإِلَى اللّٰهِ الْمَصِيرُ ۝ قُلْ إِن تُخْفُوا مَا فِى صُدُورِكُمْ أَوْ تُبْدُوهُ يَعْلَمْهُ اللّٰهُ ۗ وَيَعْلَمُ مَا فِى السَّمٰوٰتِ
وَمَا فِى الْأَرْضِ ۗ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ قَدِيرٌ ۝ يَوْمَ تَجِدُ كُلُّ نَفْسٍ مَّا عَمِلَتْ مِنْ خَيْرٍ مُّحْضَرًا ۛ وَمَا عَمِلَتْ مِن سُوٓءٍ ۛ
تَوَدُّ لَوْ أَنَّ بَيْنَهَا وَبَيْنَهُۥٓ أَمَدًۢا بَعِيدًا ۗ وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهُۥ ۗ وَاللّٰهُ رَءُوفٌۢ بِالْعِبَادِ ۝ قُلْ إِن كُنتُمْ تُحِبُّونَ اللّٰهَ فَاتَّبِعُونِى يُحْبِبْكُمُ
اللّٰهُ وَيَغْفِرْ لَكُمْ ذُنُوبَكُمْ ۗ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝ قُلْ أَطِيعُوا اللّٰهَ وَالرَّسُولَ ۖ فَإِن تَوَلَّوْا فَإِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْكٰفِرِينَ ۝ إِنَّ
اللّٰهَ اصْطَفٰىٓ ءَادَمَ وَنُوحًا وَءَالَ إِبْرٰهِيمَ وَءَالَ عِمْرٰنَ عَلَى الْعٰلَمِينَ ۝ ذُرِّيَّةًۢ بَعْضُهَا مِنۢ بَعْضٍ ۗ وَاللّٰهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝ إِذْ قَالَتِ
امْرَأَتُ عِمْرٰنَ رَبِّ إِنِّى نَذَرْتُ لَكَ مَا فِى بَطْنِى مُحَرَّرًا فَتَقَبَّلْ مِنِّىٓ ۖ إِنَّكَ أَنتَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ۝ فَلَمَّا وَضَعَتْهَا قَالَتْ
رَبِّ إِنِّى وَضَعْتُهَآ أُنثٰى وَاللّٰهُ أَعْلَمُ بِمَا وَضَعَتْ وَلَيْسَ الذَّكَرُ كَالْأُنثٰى ۖ وَإِنِّى سَمَّيْتُهَا مَرْيَمَ وَإِنِّىٓ أُعِيذُهَا بِكَ وَذُرِّيَّتَهَا
مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيمِ ۝ فَتَقَبَّلَهَا رَبُّهَا بِقَبُولٍ حَسَنٍ وَأَنۢبَتَهَا نَبَاتًا حَسَنًا وَكَفَّلَهَا زَكَرِيَّا ۖ كُلَّمَا دَخَلَ عَلَيْهَا زَكَرِيَّا
الْمِحْرَابَ وَجَدَ عِندَهَا رِزْقًا ۖ قَالَ يٰمَرْيَمُ أَنّٰى لَكِ هٰذَا ۖ قَالَتْ هُوَ مِنْ عِندِ اللّٰهِ ۖ إِنَّ اللّٰهَ يَرْزُقُ مَن يَشَآءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ۝

अनुवाद-

(28) ईमान वालों को चाहिए, कि वे ईमान वालों के सिवा काफ़िरों (इन्कार करने वालों) को दोस्त (राज़दार) न बनाएँ; और जो ऐसा करेगा, उससे अल्लाह का कोई सम्बन्ध नहीं, हाँ, अगर इस तरीक़े से तुम उन (की बुराई) से बचाव की शक्ल निकालो, (तो हरज नहीं) और अल्लाह तुम को अपने से डराता है, और अल्लाह ही की ओर (तुम को) लौट कर जाना है। (29) कह दीजिए, ''जो कुछ तुम्हारे सीनों में है, तुम उसे छिपाओ या ज़ाहिर करो, अल्लाह उसे जानता है; और अल्लाह उसे भी जानता है, जो कुछ आसमानों में है, और जो कुछ ज़मीन में है, और अल्लाह हर चीज़ पर क़ुदरत (सामर्थ्य) रखता है।'' (30) जिस दिन हर व्यक्ति अपनी की हुई भलाई, और अपनी की हुई बुराई को सामने पायेगा, तो वह तमन्ना करेगा कि काश! उसके और इस दिन के बीच बहुत दूर का फ़ासला होता, और अल्लाह तुम को अपने (ग़ज़ब) से डराता है, और अल्लाह अपने बन्दों पर बड़ा शफ़क़त करने वाला (अर्थात करूणामय) है। (31) कह दीजिए, ''अगर तुम अल्लाह से मुहब्बत रखते हो, तो तुम मेरी पैरवी (अनुसरण) करो, अल्लाह भी तुम को चाहने लगेगा, और तुम्हारे गुनाह माफ़ कर देगा, और अल्लाह बड़ा माफ़ करने वाला, रहम वाला है'' (32) कह दीजिए, ''अल्लाह और उसके रसूल का हुक्म मानो,'' इस पर भी अगर वह मुँह मोड़ें, तो अल्लाह भी काफ़िरों (इन्कारियों) से मुहब्बत नहीं करता। (33) अल्लाह ने आदम और नूह और इब्राहीम की औलाद, और इमरान की औलाद को, पूरे आ़लम (संसार) के लोगों में चुन लिया था; (34) इनमें एक दूसरे की औलाद थे, और अल्लाह खूब सुनने वाला, जानने वाला है। (35) (और वह वक़्त याद करो) जब इमरान की बीवी (पत्नी) ने कहा, ''ऐ मेरे रब! जो (बच्चा) मेरे रहम (गर्भ) में है, मैं उसको 'तेरे' लिए नज़र (भेंट) देती हूँ, उसे दुनिया के कामों से आज़ाद रखूँगी, 'तू' उसे मेरी ओर से क़ुबूल कर, 'तू' तो खूब सुनने, जानने वाला है;'' (36)

फिर जब उनके यहाँ (बच्ची) पैदा हुई तो बोलीं, "ऐ मेरे रब! मेरे तो लड़की पैदा हुई है।" और अल्लाह तो खूब जानता था कि उसके क्या पैदा हुई है? और लड़का (उस) लड़की जैसा नहीं हो सकता "और मैने उस लड़की का नाम मरयम रखा है, और मैं उसे और उसकी औलाद को शैतान मर्दूद से (सुरक्षित रखने के लिए) तेरी हिफ़ाज़त में देती हूँ।" (37) फिर उनके रब ने उनको पसंदीदगी के साथ कुबूल किया, और उन्हें अच्छी तरह परवरिश किया, और उनका सरपरस्त (संरक्षक) ज़करिया को बना दिया, जब कभी ज़करिया उनके पास मेहराब (अ़िबादतगाह) में जाते, तो उनके पास कुछ खाने (पीने) की चीज़ पाते, (एक बार) बोले मरयम यह (चीज़ें) कहाँ से तुझे मिल जाती हैं, वह बोलीं यह अल्लाह की ओर से आ जाती हैं, बेशक अल्लाह जिसको चाहता है बेहिसाब रिज़्क़ देता है।

आयत नं० 20 से 37 तक की व्याख्या

28 لَا يَتَّخِذِ الْمُؤْمِنُونَ الْكٰفِرِينَ أَوْلِيَآءَ مِن دُونِ الْمُؤْمِنِينَ ۚ وَمَن يَفْعَلْ ذٰلِكَ فَلَيْسَ مِنَ اللّٰهِ فِي شَيْءٍ
إِلَّآ أَن تَتَّقُوا مِنْهُمْ تُقٰىةً ۗ وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهُ ۗ وَإِلَى اللّٰهِ الْمَصِيرُ ﴿٢٨﴾

काफ़िरों को राज़दार तो नहीं लेकिन नुक़्सान भी नहीं पहुँचाया जाएगा-

अल्लाह तआ़ला ने मोमिनों को इस बात से मना किया है कि वह मोमिनों के बजाय काफ़िरों (इन्कारियों) को अपना दोस्त (राज़दार) बनाएँ, इसलिए कि मोमिनों का वली (दोस्त) अल्लाह है और मोमिनीन आपस में एक दूसरे के वली और दोस्त हैं। क़ुर्आन करीम में इस तरह़ की कई आयतें आई हैं। अल्लाह के लिए मुह़ब्बत और अल्लाह के लिए बुग़्ज़ व अ़दावत ईमान के उसूलों में से एक है, इसीलिए अल्लाह ने फ़रमाया कि जो कोई भी काफ़िरों (इन्कारियों) को अपना दोस्त बनाएगा (चाहे नाम जो हो) अल्लाह उस से बरी है और उस का अल्लाह से कोई सम्बन्ध नहीं है। हाँ, अगर इस तरीक़े से तुम उन (की बुराई) से बचाव की शक्ल निकाल लो (तो ह़र्ज नहीं।)

कुछ लोग बाज़ क़ुर्आनी आयात और बाज़ अह़ादीस के ह़क़ीक़ी मानों पर ग़ौर किये और समझे बिना किसी शब्द को लेकर यह ग़लत फ़हमी फैलाने लगते हैं कि इस्लाम ग़ैर मुस्लिमों के ख़िलाफ़ तअ़स्सुब से काम लेता है। ख़ासतौर पर क़ुर्आन की इन आयतों को मिसाल के तौर पर पेश किया जाता है जिन में ग़ैर मुस्लिमों से दोस्ती न करने पर ज़ोर दिया गया है।

मोमिनों को छोड़कर दोस्ती

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

يٰٓأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَتَّخِذُوا الْكٰفِرِينَ
أَوْلِيَآءَ مِن دُونِ الْمُؤْمِنِينَ ۚ أَتُرِيدُونَ أَن
تَجْعَلُوا لِلّٰهِ عَلَيْكُمْ سُلْطٰنًا مُّبِينًا ﴿١٤٤﴾

"ऐ ईमान वालो!" मोमिनों को छोड़ कर काफ़िरों (इन्कारियों) को दोस्त मत बनाओ; क्या तुम चाहते हो कि अपने ऊपर अल्लाह की खुली दलील (स्पष्ट तर्क) जुटाओ? **(सूरः अन्निसा आयत नं० 144)**

इ़ज़्ज़त का देने वाला अल्लाह

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है,

بَشِّرِ الْمُنٰفِقِيْنَ بِاَنَّ لَهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ۙ

“मुनाफ़िक़ों (कप्टाचारियों) को खुशख़बरी सुना दीजिए ‘‘कि उनके लिए दुःख देने वाला अ़ज़ाब है’’

الَّذِيْنَ يَتَّخِذُوْنَ الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ اَيَبْتَغُوْنَ عِنْدَھُمُ الْعِزَّةَ فَاِنَّ الْعِزَّةَ لِلّٰهِ جَمِيْعًا ۝ (सूरः निसा 138–139)

जो ईमान वालों को छोड़ कर काफ़िरों को अपना दोस्त (राज़दार) बनाते हैं, क्या यह उनके पास इ़ज़्ज़त तलाश रहे हैं? इ़ज़्ज़त तो सारी की सारी अल्लाह ही के लिए है।”

युद्ध के आदेश के बाद सतर्कता

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है,

يٰٓاَيُّھَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الْيَھُوْدَ وَالنَّصٰرٰٓى اَوْلِيَاۗءَ ۘ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَاۗءُ بَعْضٍ ۭ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاِنَّهٗ مِنْهُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۝

ऐ ईमान वालो! तुम यहूद और नसारा (ईसाइयों) को अपना दोस्त न बनाओ, ये आपस में एक-दूसरे के दोस्त हैं, और जो व्यक्ति उन्हें अपना दोस्त बनाएगा, वह उन्हीं लोगों में से होगा, बेशक अल्लाह ज़ालिमों को हिदायत नहीं देता;

فَتَرَى الَّذِيْنَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ يُّسَارِعُوْنَ فِيْهِمْ يَقُوْلُوْنَ نَخْشٰٓى اَنْ تُصِيْبَنَا دَاۗىِٕرَةٌ ۭ فَعَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّاْتِيَ بِالْفَتْحِ اَوْ اَمْرٍ مِّنْ عِنْدِهٖ فَيُصْبِحُوْا عَلٰي مَآ اَسَرُّوْا فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ نٰدِمِيْنَ ۝ (सूरः अल् माइदः 51–52)

तो तुम देखते हो कि जिन लोगों के दिलों में रोग है, वह उनमें दौड़-दौड़ कर मिल जाते हैं; कहते हैं, ‘‘हमें डर है कि हम कहीं किसी मुसीबत में न पड़ जाएँ,’’ तो उम्मीद है कि अल्लाह जल्द ही फ़त्ह़ (विजय) दे या अपनी ओर से कोई हुक्म दे, तो यह लोग जो कुछ अपने जी में छिपाये हुए हैं, उस पर शर्मिन्दा होंगे;

बिना भेद-भाव सत्य के साथ

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है,

يٰٓاَيُّھَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوْٓا اٰبَاۗءَكُمْ وَاِخْوَانَكُمْ اَوْلِيَاۗءَ اِنِ اسْتَحَبُّوا الْكُفْرَ عَلَي الْاِيْمَانِ ۭ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝ (सूरः अत्तौबः 23)

ऐ ईमान वालो! अगर तुम्हारे (माँ) बाप और (बहन) भाई ईमान के मुकाबले में कुफ़्र को पसंद करें, तो उनसे दोस्ती (राजदार) न रखो, और तुममें से जो उन से दोस्ती रखेगा तो ऐसे ही लोग ज़ालिम हैं।

ज़ुल्म की मुख़ालिफ़त

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

لَا تَجِدُ قَوْمًا يُّؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ يُوَاۗدُّوْنَ

“तुम उन लोगों को ऐसा कभी नहीं पाओगे, जो अल्लाह और

مَنْ حَادَّ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَلَوْ كَانُوْٓا اٰبَآءَهُمْ اَوْ اَبْنَآءَهُمْ
اَوْ اِخْوَانَهُمْ اَوْ عَشِيْرَتَهُمْ ۭ
(सूरः अलू मुजादलाः 22)

अन्तिम दिन (क़ियामत) पर ईमान रखते हैं, कि वे उन लोगों से मुहब्बत करते हों जिन्होंने अल्लाह और उसके रसूल का विरोध किया हो, चाहे वे उनके बाप या बेटे, या भाई, या उनके खानदान के लोग हों;"

इस आयत में मुशिरकीन के साथ दोस्ती (अर्थात भेदी बनाने) की मुमानिअ़त (मनाही) इसलिए की गई है कि कुफ़्फ़ार मुशिरकीन ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) और मोमिनीन को उन के वतन से जानबूझकर निकाला था।

दोस्ती उन से नहीं जो ज़ालिम हैं

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है,

اِنَّمَا يَنْهٰىكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِيْنَ قٰتَلُوْكُمْ فِي الدِّيْنِ
وَاَخْرَجُوْكُمْ مِّنْ دِيَارِكُمْ وَظٰهَرُوْا عَلٰٓي
اِخْرَاجِكُمْ اَنْ تَوَلَّوْهُمْ ۚ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ فَاُولٰۗىِٕكَ
هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝ (सूरः मुम्तहिना-9)

अल्लाह तो तुम्हें केवल उन्हीं लोगों से दोस्ती करने से रोकता है, जिन्होंने दीन के मामले में तुमसे जंग की, और तुम को तुम्हारे अपने घरों से निकाला और तुम्हारे निकालने में औरों की मदद की, और जो लोग उनसे दोस्ती करेंगे, वही ज़ालिम हैं।

इस तरह की आयात से कुछ लोग यह मतलब निकालने की कोशिश करते हैं कि इस्लाम ने ग़ैर मुस्लिमों के साथ सम्बन्ध न रखने और नफ़रत व नापसंदीदगी की दअ़वत दी है चाहे यह ग़ैर मुस्लिम उन के साथ रहने वाले और उन के साथ मुख़्लिस ही क्यों न हों, लेकिन जो भी इस तरह की आयतों पर गहराई से ग़ौर करेगा और इन आयतों के नाज़िल होने के कारणों पर ग़ौर करेगा उस पर यह बात साफ़ हो जाएगी।

क़ुर्आन की हर आयत के नाज़िल होने के समय को भी ध्यान में रखना अनिवार्य होता है कि यह बात किस भाव में कही गई है। जब तक यह मालूम न होगी, उस वक़्त तक किसी आयत का सही अनुवाद समझना आसान नहीं होता। जैसा कि हम पहले बता चुके हैं।

अम्न पसन्द ग़ैर मुस्लिमों से दूरी नहीं-

ऊपर की इन आयतों में भी अल्लाह तआ़ला ने जिस दोस्ती(भेदी बनाने) से मना किया है वह उन लोगों के साथ है जिन्होंने अल्लाह और उस के रसूल से दुश्मनी मोल ली और मुसलमानों को तक्लीफ़ पहुँचाते रहे, अम्न पसन्द ग़ैर मुस्लिमों के साथ नहीं। जैसा कि नीचे दी गई आयतों से स्पष्ट होता है।

अल्लाह और रसूल के दुश्मन

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

لَا تَجِدُ قَوْمًا يُّؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ يُوَاۗدُّوْنَ
مَنْ حَاۗدَّ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ (सूरः मुजादद्दला 22)

"तुम उन लोगों को ऐसा कभी नहीं पाओगे, जो अल्लाह और अन्तिम दिन (क़ियामत) पर ईमान रखते हैं, कि वे उन लोगों से

मुहब्बत करते हों जिन्होंने अल्लाह और उसके रसूल का विरोध किया हो,”

ज़ाहिर है कि अल्लाह और उस के रसूल (सल्ल०) के साथ दुश्मनी का मतलब केवल उन्हें न मानना नहीं है बल्कि उन के साथ विरोध करना है, उन की राह में रुकावट डालना और उस के मानने वालों को कष्ट पहुँचाना है।

ग़ैर मुस्लिमों के साथ इन्साफ़ का हुक्म

अल्लाह तआला फ़रमाता है-

لَا يَنْهٰىكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِيْنَ لَمْ يُقَاتِلُوْكُمْ فِي الدِّيْنِ وَلَمْ يُخْرِجُوْكُمْ مِّنْ دِيَارِكُمْ اَنْ تَبَرُّوْهُمْ وَتُقْسِطُوْٓا اِلَيْهِمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُقْسِطِيْنَ (सूरः मुम्तहिना-8)

“अल्लाह तुम्हारे साथ अच्छा व्यवहार और इन्साफ़ करने से नहीं रोकता, जिन्होंने दीन के मामले में तुम से जंग नहीं की, और न तुम्हें तुम्हारे घरों से निकाला, अल्लाह इन्साफ़ करने वालों को पसंद करता है।”

केवल जंग करने वालों से दुश्मनी

अल्लाह तआला फ़रमाता है-

اِنَّمَا يَنْهٰىكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِيْنَ قٰتَلُوْكُمْ فِي الدِّيْنِ وَاَخْرَجُوْكُمْ مِّنْ دِيَارِكُمْ وَظٰهَرُوْا عَلٰٓي اِخْرَاجِكُمْ اَنْ تَوَلَّوْهُمْ ۚ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ (सूरः मुम्तहिना-9)

अल्लाह तो तुम्हें केवल उन्हीं लोगों से दोस्ती करने से रोकता है, जिन्होंने दीन के मामले में तुमसे जंग की, और तुम को तुम्हारे अपने घरों से निकाला और तुम्हारे निकालने में औरों की मदद की, और जो लोग उनसे दोस्ती करेंगे, वही ज़ालिम हैं।

ऊपर की आयतों का सम्बन्ध मक्का निवासियों से है जो मदीने पर आक्रमण कर रहे थे और युद्ध की स्थिति उत्पन्न हो चुकी थी जो मुसलमान मक्का त्याग करके मदीना चले आये थे उनमें से कुछ के सम्बन्धी मक्का में रह गये थे, मदीने के ऐसे ही मुसलमानों के सम्बन्ध में यह आयत है जिसकी व्याख्या इस प्रकार है।

“चूंकि अब निर्णय का समय आ गया है इसलिए इस्लाम के अनुयाईयों को सम्बोधित करके कहा गया है कि वह कार्यरत हो जाएँ और दुर्बलता न दिखाएँ। इस सन्दर्भ में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अपने व्यक्तिगत सम्बन्धों को सामूहिक सम्बन्धों पर प्रधानता न दें तथा शत्रुओं को अपना सहायक और मित्र न बनाएँ।

युद्ध क्षेत्र गर्म हो चुका है, मित्र और शत्रु की दो पंक्तियां अलग-अलग खड़ी हो गई हैं। अतः हर व्यक्ति के लिए आवश्यक है कि अपने लिए कोई पंक्ति का चुनाव कर ले और जिसे ग्रहण कर ले उसका हो रहे, यह न हो कि एक का होकर दूसरे से भी गुप्त सम्बन्ध रखे।

पवित्र क़ुर्आन की आयतों का उद्देश्य

पवित्र क़ुर्आन में जिहाद की या ग़ैर मुस्लिमों से दोस्ती न करने की जितनी आयतें, आदेश और जितनी आज्ञाएँ हैं, वह सब उन्हीं बहुदेव वादियों, ग़ैर मुस्लिमों से सम्बन्धित हैं जो इस्लाम के शत्रु हों, इस्लाम के प्रसार में बाधक हों और इस्लाम को समाप्त कर देना चाहते हों।

ऊपर की इन आयतों पर आक्षेप किया जाता है, परन्तु इनको इस परिस्थिति में रखकर मान्य पाठक देखें, जिसमें यह उतरीं और न्याय करें कि क्या कोई आदेश या आज्ञा भी ऐसे शत्रुओं के प्रति अनुचित है?

क़ुर्आन का आदेश तमाम इन्सानों के हित में

कुछ संस्थाओं और लोगों ने यह झूठा प्रचार किया है और निरन्तर किये जा रहे हैं कि क़ुर्आन ग़ैर-मुस्लिमों को सहन नहीं करता, उन्हें मार डालने और जड़ से ख़त्म कर देने की शिक्षा देता है।

ज़मीन पर फ़साद न मचाओ

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ لَا تُفْسِدُوا فِي الْأَرْضِ

अनुवाद-

"ज़मीन (मुल्क) में फ़साद न मचाओ।" (सूरः बकरः-11)

अल्लाह फ़साद करने वालों को पसंद नहीं करता

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَابْتَغِ فِيمَا آتَاكَ اللَّهُ الدَّارَ الْآخِرَةَ وَلَا تَنْسَ نَصِيبَكَ مِنَ الدُّنْيَا وَأَحْسِنْ كَمَا أَحْسَنَ

اللَّهُ إِلَيْكَ وَلَا تَبْغِ الْفَسَادَ فِي الْأَرْضِ إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ الْمُفْسِدِينَ

अनुवाद-

"और जो कुछ अल्लाह ने तुझे दिया है, उसके ज़रिये आख़िरत का घर बना, और दुनिया में से अपना हिस्सा न भूल, और भलाई कर, जैसा कि अल्लाह ने तेरे साथ भलाई की है; और धरती में फ़साद पर न तुल, क्योंकि अल्लाह फ़साद करने वालों को पसंद नहीं करता।" (सूरः क़सस-77)

ज़मीन में फ़साद न फैलाओ

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَيَا قَوْمِ أَوْفُوا الْمِكْيَالَ وَالْمِيزَانَ بِالْقِسْطِ وَلَا تَبْخَسُوا النَّاسَ أَشْيَاءَهُمْ وَلَا تَعْثَوْا فِي

الْاَرْضِ مُفْسِدِيْنَ ﴿٨٥﴾

अनुवाद-

"ऐ मेरी क़ौम ! इन्साफ़ के साथ नाप और तौल को पूरा किया करो, और लोगों को उनकी चीज़ें कम न दिया करो, और जमीन में फ़साद न फैलाते फिरो;" (सूरः हूद- 85)

न ज़मीन पर बड़ाई न फ़साद

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

تِلْكَ الدَّارُ الْاٰخِرَةُ نَجْعَلُهَا لِلَّذِيْنَ لَا يُرِيْدُوْنَ عُلُوًّا فِى الْاَرْضِ وَلَا فَسَادًا ؕ وَالْعَاقِبَةُ
لِلْمُتَّقِيْنَ ﴿٨٣﴾

अनुवाद-

आख़िरत का घर 'हम' उन लोगों के लिए ख़ास कर देंगे जो न तो ज़मीन पर अपनी बड़ाई चाहते हैं और न फ़साद। और परहेज़गारों का आख़िरी अंजाम भला है। (सूरः क़सस-83)

दुश्मनों से न्याय और इन्साफ़ करने का आदेश

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَآءَ بِالْقِسْطِ ؗ وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰٓى
اَلَّا تَعْدِلُوْا ؕ اِعْدِلُوْا ۫ هُوَ اَقْرَبُ لِلتَّقْوٰى ؗ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ خَبِيْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ﴿٨﴾

अनुवाद-

ऐ ईमान वालो! अल्लाह के लिए इन्साफ़ की गवाही देने के लिए खड़े हो जाया करो और लोगों की दुश्मनी तुमको इस बात पर तैयार न करे कि इन्साफ छोड़ दो; इन्साफ किया करो, यही परहेज़गारी की बात है; और अल्लाह से डरते रहो, बेशक जो कुछ तुम करते हो, अल्लाह उसकी ख़ूब ख़बर रखता है। (सूरः माइदा-8)

बुराई को अच्छे ढंग से दूर करो

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَلَا تَسْتَوِى الْحَسَنَةُ وَلَا السَّيِّئَةُ ؕ اِدْفَعْ بِالَّتِىْ هِىَ اَحْسَنُ فَاِذَا الَّذِىْ بَيْنَكَ وَبَيْنَهٗ عَدَاوَةٌ
كَاَنَّهٗ وَلِىٌّ حَمِيْمٌ ﴿٣٤﴾

अनुवाद-

और भलाई और बुराई बराबर नहीं हो सकती, तुम बुराई को उस तरह दूर करो जो सब से बेहतर हो, उस सूरत में तुम देखोगे कि तुम्हारे और जिस (व्यक्ति) के बीच दुश्मनी थी, गोया वह गहरा दोस्त बन गया है; (सूरः हामीम-34)

भले कामों में ग़ैर मुस्लिमों के साथ सहयोग

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحِلُّوْا شَعَآئِرَ اللّٰهِ وَلَا الشَّهْرَ الْحَرَامَ وَلَا الْهَدْيَ وَلَا الْقَلَآئِدَ وَلَآ
آٰمِّيْنَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ يَبْتَغُوْنَ فَضْلًا مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرِضْوَانًا ۭ وَاِذَا حَلَلْتُمْ فَاصْطَادُوْا ۭ وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ
شَنَاٰنُ قَوْمٍ اَنْ صَدُّوْكُمْ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اَنْ تَعْتَدُوْا ۘ وَتَعَاوَنُوْا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى ۠ وَلَا تَعَاوَنُوْا
عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ۠ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝

अनुवाद-

ऐ ईमान वालो! अल्लाह की निशानियों की बेहुर्मती (अनादर) न करना; न अदब वाले महीने (अर्थात रजब, ज़ीक़अ़दः, ज़िल्हिज्जः, और मुहर्रम) की न क़ुर्बानी के जानवरों की, और न उन जानवरों की जिनकी गर्दनों में पट्टे पड़े हों, और न उन लोगों की जो अपने रब के फ़ज़्ल और उसकी खुशनूदी की चाह में इज़्ज़त वाले घर (कअ़बः) को जा रहे हों, और जब एहराम की हालत से बाहर हो जाओ तो शिकार करो, और ऐसा न हो कि एक गिरोह की दुश्मनी, जिसने तुम्हारे लिए इज्ज़त वाले घर का रास्ता बन्द कर दिया था, तुम्हें इस बात पर उभार दे कि तुम उन पर ज़्यादती करने लगो; और नेकी और परहेज़गारी के कामों में एक-दूसरे की मदद किया करो; और गुनाह और ज़ुल्म की बातों में मदद न किया करो, और अल्लाह से डरते रहो, कुछ शक नहीं कि अल्लाह का अ़ज़ाब बहुत सख़्त है। **(सूरः माइदा-2)**

किसी एक इन्सान को क़त्ल करना जैसे तमाम इन्सानों को क़त्ल करना है

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

مِنْ اَجْلِ ذٰلِكَ ۛ كَتَبْنَا عَلٰي بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ اَنَّهٗ مَنْ قَتَلَ نَفْسًۢا بِغَيْرِ نَفْسٍ اَوْ فَسَادٍ فِي
الْاَرْضِ فَكَاَنَّمَا قَتَلَ النَّاسَ جَمِيْعًا ۭ وَمَنْ اَحْيَاهَا فَكَاَنَّمَآ اَحْيَا النَّاسَ جَمِيْعًا ۭ وَلَقَدْ
جَاۗءَتْهُمْ رُسُلُنَا بِالْبَيِّنٰتِ ۡ ثُمَّ اِنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ بَعْدَ ذٰلِكَ فِي الْاَرْضِ لَمُسْرِفُوْنَ ۝

अनुवाद-

"इसी वजह से हमने बनी इस्राईल के लिए लिख दिया था कि जिसने किसी व्यक्ति को, किसी के खून का बदला लेने या धरती में फसाद फैलाने के अलावा किसी और वजह से क़त्ल कर डाला, तो मानों उसने सारे ही इन्सानों को क़त्ल कर दिया और जिसने उसे ज़िन्दगी दिया, 'उसने मानो सारे इन्सानों को ही जिन्दगी दिया, और उन लोगों के पास 'हमारे' रसूल खुली दलीलें ला चुके हैं, फिर भी उनमें बहुत से लोग ज़मीन में ज़्यादती करने वाले ही हैं।"

(सूरः माइदा-32)

व्याख्या-

कुर्आन ने हमेशा के लिए यह नियम बना दिया है कि किसी भी इन्सान को चाहे उसका सम्बन्ध किसी धर्म या समुदाय से हो मृत्युदंड नहीं दिया जा सकता। हाँ, कुछ ख़ास लोगों के साथ ऐसा जिनके पूरे गवाहों के साथ जुर्म साबित हो गया जैसे-

"एक हत्यारे को मृत्युदंड दिया जा सकता है। दूसरे उस व्यक्ति को मृत्युदंड दिया जा सकता है जो समाज या देश की शान्ति और सुरक्षा भंग करने पर तुला हो और उसने धरती में तबाही मचा रखी हो और उसको ख़त्म करने के अलावा कोई दूसरा रास्ता न हो।"

कुर्आन की इस आयत में यह भी स्पष्ट रूप से बता दिया गया है कि किसी व्यक्ति की अकारण और अन्यायपूर्ण हत्या एक व्यक्ति की हत्या नहीं, बल्कि वह सम्पूर्ण मानव-जाति की हत्या करने जैसी है। इसी प्रकार किसी व्यक्ति के प्राण बचाना सम्पूर्ण मानव-जाति के प्राणों की रक्षा करना है।

कुर्आन में तो जगह-जगह यह बात कही गई है कि इस दुनिया में इन्सान को सोच-विचार एवं कार्य की स्वतंत्रता देकर परीक्षा के लिए भेजा गया है और बलपूर्वक किसी विशेष धारणा को अपनाने पर विवश नहीं किया गया है। इस दुनिया (कर्म-क्षेत्र) में वह जो भी नीति अपनाएगा मृत्यु के बाद आने वाले पारलौकिक जीवन में उसके अनुसार वह इनआम या सज़ा पाएगा। शक्ति या तलवार के द्वारा किसी को अपनी धारणा अपनाने पर विवश करने की शिक्षा और आदेश अगर कुर्आन देता तो फिर इस दशा में परीक्षा का वह उद्देश्य ही समाप्त हो जाता जिसका उल्लेख कुर्आन में बार-बार किया गया है।

भलाई के कामों में एक दूसरे से आगे बढ़ो

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَأَنزَلْنَا إِلَيْكَ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ الْكِتَابِ وَمُهَيْمِنًا عَلَيْهِ
فَاحْكُم بَيْنَهُم بِمَا أَنزَلَ اللَّهُ وَلَا تَتَّبِعْ أَهْوَاءَهُمْ عَمَّا جَاءَكَ مِنَ الْحَقِّ لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنكُمْ
شِرْعَةً وَمِنْهَاجًا وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ لَجَعَلَكُمْ أُمَّةً وَاحِدَةً وَلَٰكِن لِّيَبْلُوَكُمْ فِي مَا آتَاكُمْ فَاسْتَبِقُوا
الْخَيْرَاتِ إِلَى اللَّهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيعًا فَيُنَبِّئُكُم بِمَا كُنتُمْ فِيهِ تَخْتَلِفُونَ ۝

अनुवाद-

और 'हमने' आप की ओर यह किताब ह़क़ के साथ उतारी है, जो उस किताब की तस्दीक़ करती है जो इसके पहले से मौजूद है और जो उसकी मुह़ाफ़िज़ (संरक्षक) है; और उनके बीच मामलों में आप वही फ़ैसला कीजिए जो अल्लाह ने उतारा है; और जो हक़ तुम्हारे पास आ चुका है उसे छोड़ कर उनकी इच्छाओं के पीछे न चलिएगा, 'हमने' तुममें से हर एक के लिए एक दस्तूर और एक तरीक़ा मुक़र्रर किया है, और अगर अल्लाह चाहता तो तुम सब को एक ही उम्मत (समुदाय) बना देता; लेकिन जो

कुछ 'उसने' तुम्हें (हुक्म) दिया है उसमें वह तुम्हारा इम्तिहान लेना चाहता है, तो तुम भलाई के कामों में एक-दूसरे से आगे बढो; तुम सब को अल्लाह ही की ओर लौट कर जाना है, फिर 'वह' तुम्हें बता देगा, जिसमें तुम इख़्तिलाफ़ करते थे; **(सूरः माइदा- 48)**

दुनिया इम्तिहान हाल है

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

فَلَعَلَّكَ بَاخِعٌ نَّفْسَكَ عَلٰٓى اٰثَارِهِمْ اِنْ لَّمْ يُؤْمِنُوْا بِهٰذَا الْحَدِيْثِ اَسَفًا ۝
اِنَّا جَعَلْنَا مَا عَلَى الْاَرْضِ زِيْنَةً لَّهَا لِنَبْلُوَهُمْ اَيُّهُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا ۝

अनुवाद-

"तो शायद, आप उनके पीछे अगर वह ईमान न लाएँ, तो अफ़सोस के मारे (क्या) अपनी जान दे देंगे। जो चीज़ ज़मीन पर है उसको 'हमने' उसके लिए ज़ीनत (शोभा) बनाया ताकि लोगों को आज़माएं, कि उनमें बेहतर अ़मल करने वाला कौन है?" **(सूरः कहफ़-6-7)**

अच्छा अ़मल किसका

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

تَبٰرَكَ الَّذِيْ بِيَدِهِ الْمُلْكُ ۡ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرُ ۝ اِلَّذِيْ خَلَقَ الْمَوْتَ وَالْحَيٰوةَ لِيَبْلُوَكُمْ
اَيُّكُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا ۭ وَهُوَ الْعَزِيْزُ الْغَفُوْرُ ۝

अनुवाद-

"बड़ी बरकत वाला है, जिसके हाथ में सारी बादशाही है, और 'वह' हर चीज़ पर क़ादिर है; 'जिसने' पैदा किया मौत और ज़िन्दगी को, ताकि तुम्हें आज़माए, कि तुम में से कौन अच्छा अ़मल करने वाला है? और 'वह' बड़ी ताक़त वाला, माफ़ करने वाला है।"

(सूरः मुल्क- 1-2)

इसी विषय की बहुत-सी आयतें क़ुर्आन में मौजूद हैं, जिनमें इस तथ्य का पता चलता है कि इन्सान को इस दुनिया में चिन्तन और कर्म की स्वतंत्रता देकर उसकी परीक्षा ली जा रही है। इन शिक्षाओं के होते हुए यह निष्कर्ष कैसे निकाला जा सकता है कि किसी को तलवार या शक्ति के ज़ोर से एक ही धारणा ग्रहण करने पर विवश करने का आदेश क़ुर्आन देता है।

जिन लोगों से युद्ध करने की बात क़ुर्आन में कही गई है वह उनके ग़ैर-मुस्लिम होने के कारण नहीं, बल्कि इस कारण कही गई है कि वे इस्लाम और उसके अनुयायियों पर घोर अत्याचार करते थे, उन्हें ख़त्म करने के लिए साज़िशें करते थे, मुसलमानों पर खुद बढ़-चढ़ कर हमले करते थे, और मुसलमानों को इस्लाम पर अ़मल करने से रोकते थे, जिसके कुछ विवरण ऊपर दिये जा चुके हैं।

देवताओं को बुरा न कहो

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَلَا تَسُبُّوا الَّذِينَ يَدْعُونَ مِن دُونِ اللَّهِ فَيَسُبُّوا اللَّهَ عَدْوًا بِغَيْرِ عِلْمٍ كَذَٰلِكَ زَيَّنَّا لِكُلِّ أُمَّةٍ عَمَلَهُمْ ثُمَّ
إِلَىٰ رَبِّهِم مَّرْجِعُهُمْ فَيُنَبِّئُهُم بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ۝

अनुवाद-

और जिन लोगों को यह मुश्रिक अल्लाह के सिवा पुकारते हैं, उनको बुरा न कहना! यह भी कहीं अल्लाह को बेअदबी से बिना समझे-बूझे बुरा न कह बैठें; इस तरह 'हमने' हर फ़िर्क़े (गिरोह) के आ़माल (उनकी नज़रों में) अच्छे कर दिखाए हैं, फिर उनको अपने रब की ओर लौट कर जाना है, तब 'वह' उनको बताएगा कि वे क्या-क्या किया करते थे?

(सूरः अनूआ़म-108)

इन्सानी अधिकार

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

إِنَّا هَدَيْنَاهُ السَّبِيلَ إِمَّا شَاكِرًا وَإِمَّا كَفُورًا۝

अनुवाद-

'हमने' और उसे राह दिखाया, तो वह (चाहे) शुक्रगुज़ार हो या नाशुक्रा हो। **(सूरः दह्र-3)**

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

قُلْ يَا أَيُّهَا الْكَافِرُونَ۝ لَا أَعْبُدُ مَا تَعْبُدُونَ۝ وَلَا أَنتُمْ عَابِدُونَ مَا أَعْبُدُ۝ وَلَا أَنَا عَابِدٌ مَّا عَبَدتُّمْ۝
وَلَا أَنتُمْ عَابِدُونَ مَا أَعْبُدُ۝ لَكُمْ دِينُكُمْ وَلِيَ دِينِ۝

अनुवाद-

कह दीजिए, "ऐ काफ़िरों (दीन का इन्कार करने वालो), न मैं उनकी अ़िबादत (उपासना) करता हूँ, जिन (देवी, देवताओं) की तुम अ़िबादत करते हो, और न तुम 'उस' (अल्लाह) की अ़िबादत करने वाले हो, जिसकी अ़िबादत मैं करता हूँ। और न मैं उनकी अ़िबादत करने वाला हूँ, जिनकी अ़िबादत तुम करते हो। और न तुम 'उसकी' अ़िबादत करने वाले हो जिसकी अ़िबादत मैं करता हूँ। तुम अपने दीन पर, मैं अपने दीन पर!" (अर्थात तुमको तुम्हारे कर्मों का बदला मिलेगा और मुझ को मेरे कर्मों का बदला मिलेगा)। **(सूरः काफ़िरून-1-6)**

क़ुर्आन की यह सूरः उस समय की है जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) लोगों को एक ईश्वर की उपासना और बन्दग़ी की ओर बुलाकर थक गये और लोगों ने मानने से इन्कार कर दिया और उनसे कोई उम्मीद भी बाक़ी नहीं रह गई थी कि वे एक अल्लाह की उपासना के लिए तैयार होंगे। इन

परिस्थितियों में ईशदूत के मुख से एलान कराया गया और इन्कार करने वालों से कह दिया गया कि अगर तुम अपनी नीति पर अडिग रहना चाहते हो तो रहो।

उपर्युक्त कुर्आनी शिक्षाएँ मनुष्य की धार्मिक स्वतंत्रता का खुला एलान हैं। जो धर्म और जो किताब यह एलान खुद करती हो उसके बारे में यह दुष्प्रचार करना कि उसकी यह शिक्षा है कि " जो उस पर ईमान न लाए तो उसे क़त्ल कर दिया जाए," कितना बड़ा अत्याचार व अन्याय है।

कुर्आन के नैतिकतापूर्ण आदेश

इस्लामी क़ानून की रूपरेखा में ग़ैर मुस्लिमों के साथ बर्ताव के मामले में इस्लाम अत्यन्त सहिष्णुता की शिक्षा देता है। इस सम्बन्ध में कुर्आन की शिक्षाएँ अत्यन्त सहानुभूति सहिष्णुता, उदारता और विशाल हृदयता पर आधारित हैं। जीवन के सही एवं ग़लत रास्तों की हक़ीक़त स्पष्ट होने के बावजूद घोषित किया जाता है-

لَآ إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ

"धर्म के विषय में कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं है।" (सूरः बकरः-256)

अपशब्द तक नहीं-

यहाँ तक कि बहुदेववादी ईश्वर के अतिरिक्त जिन देवताओं की पूजा करते हैं उन्हें अपशब्द कहने से भी मना किया जाता है-

وَلَا تَسُبُّوا الَّذِينَ يَدْعُونَ مِن دُونِ اللَّهِ

"और जिन लोगों को यह मुश्रिक अल्लाह के सिवा पुकारते हैं, उनको बुरा न कहना!"

(सूरः अनूआम 108)

एकता

फिर किताबवाले अर्थात् यहूदियों और ईसाईयों से अपील की जाती है कि वे मुसलमानों के साथ एक ऐसी बात पर सहमत हो जाएँ जो सबके विश्वास में समान है।

قُلْ يَٰٓأَهْلَ الْكِتَٰبِ تَعَالَوْا إِلَىٰ كَلِمَةٍ سَوَآءٍ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ أَلَّا نَعْبُدَ إِلَّا اللَّهَ وَلَا نُشْرِكَ بِهِۦ شَيْـًٔا
وَلَا يَتَّخِذَ بَعْضُنَا بَعْضًا أَرْبَابًا مِّن دُونِ اللَّهِ

"**कह दीजिए, "ऐ अहले किताब! ऐसी बात की ओर आ जाओ, जो हमारे और तुम्हारे बीच समान है वह यह कि हम सिवाय अल्लाह के और किसी की इबादत न करें और न उसका किसी को साझीदार ठहराएँ और न हममें से कोई किसी को अल्लाह के सिवा रब बनाए,"** (सूरः आले इमरान-64)

नेकी के कामों में सहयोग

सब से बढ़कर यह कि मुसलमानों के विरुद्ध विधर्मियों की अत्यन्त धार्मिक दुश्मनी और उनके द्वारा इबादत में प्रतिरोध के बावजूद मुसलमानों को निर्देश दिया जाता है कि वे दूसरों की शत्रुता से उत्तेजित होकर न्याय-मार्ग न छोड़ें। लोगों के हर प्रकार के विरोधों के बीच भी नेकी के कामों में उनके साथ सहयोग करें और बुरी बातों में किसी के साथ सहयोग न करें-

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحِلُّوْا شَعَآئِرَ اللّٰهِ وَلَا الشَّهْرَ الْحَرَامَ وَلَا الْهَدْيَ وَلَا الْقَلَآئِدَ
وَلَآ اٰمِّيْنَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ يَبْتَغُوْنَ فَضْلًا مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرِضْوَانًا ۚ وَاِذَا حَلَلْتُمْ فَاصْطَادُوْا ۚ
وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ اَنْ صَدُّوْكُمْ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اَنْ تَعْتَدُوْا ۘ وَتَعَاوَنُوْا عَلَى الْبِرِّ
وَالتَّقْوٰى ۪ وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ۪ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝

"ऐ इमान वालो! अल्लाह की निशानियों की बेहुर्मती (अनादर) न करना; न अदब वाले महीने (अर्थात रजब, ज़ीकअ़दः ज़िल्हिज्ज; और मुहर्रम) की न कुर्बानी के जानवरों की, और न उन जानवरों की जिनकी गर्दनों में पट्टे पड़े हों, और न उन लोगों की जो अपने रब के फ़ज़्ल और उसकी ख़ुशनूदी की चाह में इ़ज़्ज़त वाले घर (कअ़बः) को जा रहे हों, और जब एह़राम की ह़ालत से बाहर हो जाओ तो शिकार करो, और ऐसा न हो कि एक गिरोह की दुश्मनी, जिसने तुम्हारे लिए इ़ज़्ज़त वाले घर का रास्ता बन्द कर दिया था, तुम्हें इस बात पर उभार दे कि तुम उन पर ज़्यादती करने लगो; और नेकी और परहेज़गारी के कामों में एक-दूसरे की मदद किया करो; और गुनाह और ज़ुल्म की बातों में मदद न किया करो, अल्लाह से डरते रहो, कुछ शक नहीं कि अल्लाह का अ़ज़ाब बहुत सख़्त है।" (सूरः माइदा-2)

धर्म का प्रचार

धर्म का प्रचार भी हिक्मत (सूझ-बूझ) के साथ करने की ताकीद की गई है-

اُدْعُ اِلٰى سَبِيْلِ رَبِّكَ بِالْحِكْمَةِ وَالْمَوْعِظَةِ الْحَسَنَةِ وَجَادِلْهُمْ بِالَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ ۭ

"लोगों को अपने 'रब' की राह की ओर बुलाइए, हिक्मत से और अच्छी नसीह़त से, और उनके साथ नसीह़त कीजिए तो अच्छे तरीक़े से," (सूरः नहल-125)

आरोपो का जवाब

अनुचित आक्षेपों और आरोपों का जवाब भी सहनशीलता और क्षमा एवं शुभचिन्तन से देने का

महत्व बताया गया है।

وَلَا تَسْتَوِي الْحَسَنَةُ وَلَا السَّيِّئَةُ ۚ ادْفَعْ بِالَّتِي هِيَ أَحْسَنُ فَإِذَا الَّذِي بَيْنَكَ وَبَيْنَهُ عَدَاوَةٌ كَأَنَّهُ وَلِيٌّ حَمِيمٌ ۝

“और भलाई और बुराई बराबर नहीं हो सकती, तुम बुराई को उस तरह दूर करो जो सब से बेहतर हो, उस सूरत में तुम देखोगे कि तुम्हारे और जिस (व्यक्ति) के बीच दुश्मनी थी, गोया वह गहरा दोस्त बन गया है;”

(सूर-ए-हामीम् सज्दः-34)

विधर्मियों के साथ अच्छा बर्ताव

संधि और मैत्री चाहने वाले विद्यर्मियों एवं मुशिरकों के साथ सामान्यतः अच्छे बर्ताव की अनुमति एवं महत्व है-

لَا يَنْهَاكُمُ اللَّهُ عَنِ الَّذِينَ لَمْ يُقَاتِلُوكُمْ فِي الدِّينِ وَلَمْ يُخْرِجُوكُم مِّن دِيَارِكُمْ أَن تَبَرُّوهُمْ
وَتُقْسِطُوا إِلَيْهِمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُقْسِطِينَ ۝

“अल्लाह तुम्हें इस बात से नहीं रोकता कि तुम उन लोगों के साथ नेकी और इंसाफ़ का बर्ताव करो, जिन्होंने धर्म के मामले में तुमसे युद्ध नहीं किया है और तुम्हें तुम्हारे घरों से नहीं निकाला। अल्लाह इंसाफ़ करने वालों को पसन्द करता है।” (सूरः मुम्तिह्ना-8)

ग़ैर मुस्लिमों की दो क़िस्में

ग़ैर मुस्लिमों की दो क़िस्में हुईं एक वह जो मुसलमानों के साथ अम्न के साथ रहते थे उन्होंने दीन की वजह से न उन के साथ जंग की और न मुसलमानों को उन के घरों से निकाला। ऐसे लोगों के साथ नेकी व भलाई का सुलूक करना मुसलमानों पर उन का ह़क़ है।

दूसरे वह जिन्होंने मुसलमानों के साथ दुश्मनी व अ़दावत का तरीक़ा अपनाया उन से जंग की और मुसलमानों को उन के घरों से निकाला और उन के ख़िलाफ़ हर मुहिम में शरीक रहे उन्हीं लोगों के साथ दोस्ती मना की गई है। जैसे मुशिरकीने मक्का जिन के हाथों मुसलमानों ने बेपनाह तक्लीफ़ें झेलीं।

अहले किताब से शादी

इस्लाम ने मुसलमान मर्दों को अहले किताब के यहाँ शादी करने की इजाज़त दी है ज़ाहिर है इज्दिवाजी ज़िन्दग़ी (Married Life) बग़ैर मुहब्बत और ज़ेहनी व नफ़्सियाती सुकून व इत्मिनान के क़ायम नहीं रह सकती जैसा कि ख़ुद क़ुर्आन करीम में है।

ऊपर की मुख्य आयतों पर आक्षेप

ऊपर दी गई सूरः माइदा 51 नं० की आयत पर कुछ लोग बहुत आक्षेप करते हैं, परन्तु अपने शास्त्र को भूल जाते हैं जैसे-

يَاأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَتَّخِذُوا الْيَهُودَ وَالنَّصَارَىٰ أَوْلِيَاءَ

"ऐ ईमान वालो! तुम यहूद और नसारा (ईसाईयों) को अपना दोस्त न बनाओ।" **(सूरः माइदा आयत 51)**

यह आयत भी शत्रुओं के विषय में है परन्तु कुछ लोगों ने इन आयतों के सम्बन्ध में इस तरह भ्रष्ट प्रचार किया है-

आक्षेप-

"अब अल्लाह मियाँ के इन आदेशों पर मुसलमान लोग चलें तो संसार से अलग पड़ जाएँ और यह अलग रहना उनको क्या से क्या कर देगा? मुसलमानों के सब कारोबार ठप पड़ जाएँगे, सब लोगों से बैर बढ़ जाएगा............इन आदेशों के बदले में ग़ैर मुस्लिम भी वही नीति अपनाएँ जो क़ुर्आन मजीद ने मुसलमानों को बताई है, तो मुसलमानों को प्रिय लगेगी।"

खण्डन-

(1) जैसा कि हम बताते आ रहे हैं कि इस प्रकार के सब आदेश धर्म भेद के कारण सभी 'यहूदियों', 'ईसाईयों' और 'ग़ैर मुस्लिमों' के विषय में नहीं है। उपरोक्त आयत भी शत्रु 'यहूदियों' 'ईसाइयों' और मक्का निवासियों के विषय में नहीं है इसलिए लोगों ने इन आयतों को लेकर आरोप लगाया है।

(2) न अल्लाह मियाँ ने मुसलमानों को सब ग़ैर मुस्लिमों से शत्रुता रखने और लड़ते रहने का आदेश दिया है और न मुसलमान धर्म भेद के कारण सबसे लड़े और न लड़ते हैं। कुछ लोगों ने द्वेषपूर्ण प्रचार करके हिन्दू मुसलमानों के बीच कटुता उत्पन्न करने का दुष्ट प्रयास किया है।

आक्षेप-

"यह आदेश यदि रसूल (सल्ल०) के समय के लिए ही थे तो ठीक थे, सम्भव है उस समय ऐसी ही परिस्थिति रही हो कि ऐसे आदेश देने पड़े, परन्तु आजकल की परिस्थिति में इस सभ्यतापूर्ण वातावरण में क्या उपयोगी है? यह अशान्ति कारक द्वेष प्रसारक आदेश क्या धार्मिक पुस्तकों में शोभा देते हैं?"

खण्डन-

क्यों शोभा नहीं देते? क्या इस सभ्यतापूर्ण वातावरण में असभ्य, दुष्ट तथा अत्याचारी नहीं है? हम बराबर सिद्ध करते आ रहे हैं कि यह सब आदेश दुष्टों तथा अत्याचारियों के विषय में है। अब स्वयं देखिए शास्त्र क्या बताते हैं-

"दुष्ट, दुराचारी, दस्यु जनता को पीड़ित करने वाले राक्षसों से लड़ा जाए तो यह जनहित में है जैसा कि गीता में श्रीकृष्ण भगवान कहते हैं-

परित्राणाय साधूनाम् विनाशाय च दृष्कृताम्।

"सज्जन और दुर्जन प्रत्येक मत जाति और देश में होते हैं।"

यह है पवित्र क़ुर्आन की सत्यता का प्रमाण, जो बात हम आरम्भ से बताते आ रहे हैं। यहाँ स्वयं स्वीकार करना पड़ा कि दुष्टों और दुराचारियों के विषय में वही आदेश है जो पवित्र क़ुर्आन ने दिया है, क़ुर्आन की यह आयतें दुष्टों और दुराचारियों ही के विषय में है! लोगों ने तो अपनी अज्ञानता से उसे सब ग़ैर मुस्लिमों के विषय में समझ लिया है या जानते बूझते भ्रष्ट प्रचार किया है, जो वास्तव में दुराचार ही है।

क़ुर्आन के आदेश

हमें कुछ लोगों की बुद्धि पर दया आती है उनके अनुसार इस सभ्यतापूर्ण वातावरण में धार्मिक पुस्तकों से वह आदेश निकाल देने चाहिए जो दुष्टों और दुराचारियों से सम्बन्धित है। पवित्र क़ुर्आन के विरोध के आवेग में उनकी बुद्धि इतनी भ्रष्ट हो गई कि उन्होंने इतना भी विचार न किया कि दुष्टों और दुराचारियों से सम्बन्धित वेदों में भी मन्त्र हैं, मनुस्मृति और गीता में भी श्लोक हैं। क्या वेदों से यह मन्त्र और मनुस्मृति से यह श्लोक निकाल चुके हैं?

वास्तव में पारिवारिक एवं सामाजिक नियम कुछ होता है और सामाजिक नियम कुछ, तनिक भी बुद्धि हो और उद्देश्य भ्रष्ट प्रचार करके लोगों की बुद्धि भ्रष्ट करना न होता तो दृष्टिगत आयत के नीचे ऊपर की आयतों को देख लेते, उनको मालूम हो जाता कि इस आयत का सम्बन्ध विचार विभिन्नता से नहीं बल्कि सामरिक नियम से है।

शत्रुओं से मित्रता-

जब धर्म और अधर्म में संघर्ष हो रहा हो तब जो बाप भाई या बेटे शत्रुओं से मित्रता का सम्बन्ध रखते हों वह विश्वास के पात्र कैसे हो सकते हैं? धर्म का सम्बन्ध तो ईश्वर और परलोक जीवन से होता है। क्या भारत का राजनैतिक और सामाजिक नियम शत्रु से मित्रता का सम्बन्ध रखने वाले बाप, भाई, बेटे से सम्बन्ध रखने की अनुमति देता है? देखिए वेद क्या कहते है-

वेदों के अनुसार दोस्ती

"ऐ इन्द्र! हमको वीरातापूर्ण प्रतिभा प्रदान कर, अभ्यासपूर्ण तथा प्रति दिन उन्नति होने वाली शक्ति के साथ जो युद्ध सामग्री प्राप्त करती है, तेरी सहायता से हम युद्ध शत्रु पर विजयी हों। ऐ वीर! हम तेरी सहायता से दोनों प्रकार के शत्रुओं की हत्या करके समृद्धशाली हो, वह बड़े धन के साथ।" (ऋग्वेद 6:19:7–13)

देखा मान्य पाठकों ने अपने और पराये दोनों प्रकार के शत्रुओं को पराजित करने और उन पर विजय प्राप्त करके समृद्धशाली होने की प्रार्थना की गई है।

मनुस्मृति के अनुसार दोस्ती

शत्रुओं से मित्रता रखने वाले विषय में मनुस्मृति का एक श्लोक भी देख लीजिए-

"जो दुष्ट मित्र छुपे-छुपे शत्रु की सेवा करता हो तथा जो नौकर पहले मालिक से रूठ कर दूसरे की सेवा करने चला गया हो पीछे आया हो उनसे बहुत ही सावधान रहे। यह प्रबल शत्रु हुआ करते हैं।" (7:176)

आगे देखिए, श्रीकृष्णजी ईश्वर के अवतार माने जाते हैं, महाभारत के युद्ध में उनका आचरण क्या रहा है? हम श्रीमद्भागवत गीता से इसका वर्णन उपस्थित कर रहे हैं-

श्रीमद्भागवत गीता

"दोनों ओर की सेनायें रणक्षेत्र में आमने सामने खड़ी हो गईं तो अर्जुन ने धृतराष्ट्र के बेटों को देखकर कृष्णजी से कहा-

मेरे रथ को दोनों सेनाओं के बीच में खड़ा कर दीजिए ताकि मैं देख लूँ कि इस युद्ध में मुझे किन लोगों से लड़ना है। दुर्योधन की ओर से जो राजा लड़ने आये है मैं उनको भी देखना चाहता हूँ।

श्री कृष्ण जी और अर्जुन

श्री कृष्णजी ने अर्जुन के रथ को दोनों सेनाओं के बीच में खड़ा कर दिया। अर्जुन ने विपक्षी सेना में द्रोणाचार्य और भीष्म को देखा और दोनों ही सेनाओं में देखा, पिता के भाईयों को, आचार्यो को, मामाओं को, पुत्रो को, पौत्रों को तथा मित्रों को श्वसुरों और सहृदयों को, इस प्रकार सब सम्बन्धियों और मित्रों को देखकर अर्जुन ने अत्यन्त करुणा तथा शोक के साथ कहा-

अर्जुन की उदारता

"हे कृष्ण! युद्ध की इच्छा से खड़े स्वजन समुदाय को देखकर मेरे अंग शिथिल हुए जाते हैं और मुख सूखा जाता है, मेरे शरीर में कम्पन तथा रोमांच हो रहा है, हाथ से धनुष छूटा जा रहा है।"

हे कृष्ण! मैं विजय नहीं चाहता, राज्य और सुखों को भी नहीं चहता, हमें राज्य से क्या प्रयोजन, भोगों और जीवन से भी क्या प्रयोजन? क्योंकि हमें जिनके लिए राज्य भोग सुखादि की इच्छा है वे ही सब धन और जीवन की आशा को त्याग कर युद्ध में खड़े हैं। जो गुरुजन, ताऊ, चाचे, लड़के, दादा, मामा, श्वसुर, पोते, साले तथा और भी सम्बन्धी लोग हैं। इसलिए मुझे मारने पर भी अथवा तीन लोक के राज्य के लिए भी मैं इन सबको मारना नहीं चाहता, पृथ्वी की तो बात ही क्या है अपने बांघव धृतराष्ट्र के पुत्रों

को भी मारना हमारे लिए योग्य नहीं है क्योंकि अपने कुटुम्ब को मारकर हम कैसे सुखी होंगे?

यह लोभ से भ्रष्ट चित्त के नाश कृत दोष और मित्रों के साथ विरोध करने के पाप को नहीं देखते परन्तु कुल को नाश करने के दोष को जानने वाले हम लोगों को इस पाप से बचाने के लिए क्यों न विचार करना चाहिए? क्योंकि कुल के नाश होने से सनातन कुल धर्म नष्ट हो जाते हैं धर्म के नाश होने से सम्पूर्ण कुल को पाप भी दबा लेता है पाप के अधिक बढ़ जाने से कुल की स्त्रियाँ दूषित हो जाती हैं और स्त्रियों के दूषित हो जाने से वर्णसंकर उत्पन्न हो जाता है।

अहो शोक है कि हमलोग बुद्धिमान होकर भी महान पाप करने को तैयार हैं। राज्य और सुख के लिए अपने कुल को मारने के लिए बेचैन हैं। यदि मुझ शस्त्र रहित सामना न करने वाले को शस्त्रधारी धृतराष्ट्र पुत्र मारें तो वह मरना भी मेरे लिए अति कल्याणकारी होगा।"

(भगवद्गीता अध्याय 1, श्लोक 21 से 46 तक)

श्री कृष्ण जी का उत्तर

देखा आपने अर्जुन का उद्गार, उनकी सहायता, उदारता तथा त्याग भाव, परन्तु श्री कृष्णजी पर उनकी किसी बात का प्रभाव नहीं हुआ, उन्होंने किस प्रकार अर्जुन को युद्ध के लिए प्रवृत किया, अब श्री कृष्णजी का उत्तर सुनिए-

"हे पार्थ! अपने आप प्राप्त हुए और खुले हुए स्वर्ग के द्वार स्वरूप इस प्रकार के युद्ध को भाग्यवान क्षत्री लोग ही पाते हैं और यदि तू इस धर्मयुक्त संसार को नहीं करेगा तो स्वधर्म और कीर्ति को खोकर पाप को प्राप्त होगा और सब लोग तेरी बहुत ज़माने तक रहने वाली अपकीर्ति को भी कथन करेंगे। और वह अपकीर्ति माननीय पुरुष के लिए मरने से भी अधिक बुरी होगी, और तेरे बैरी लोग तेरे सामर्थ्य की निन्दा करते हुए बहुत से न कहने योग्य वचनों को कहेंगे फिर इसमें अधिक दुःख क्या होगा? इस लिए युद्ध करना तेरे लिए सब प्रकार से अच्छा है क्योंकि या तू मर कर स्वर्ग प्राप्त होगा अथवा जीत कर पृथ्वी को भोगेगा। इसलिए हे अर्जुन! युद्ध के लिए निश्चय वाला होकर खड़ा हो।"

(श्रीमद्गीता, अध्याय 2, श्लोक 32 से 37 तक)

अर्जुन के उत्तर में श्री कृष्णजी ने कहा

"हे अर्जुन! मैं लोकों का नाश करने वाला बढ़ा हुआ महाकाल हूँ, इस समय इन लोगों को नष्ट करने के लिए प्रवृत्त हुआ हूँ। इसलिए जो प्रतिपक्षियों की सेना में स्थित हुए योद्धा लोग हैं वह सब तेरे बिना नहीं रहेंगे। अर्थात् तेरे युद्ध न करने से भी उन सबका नाश हो जाएगा। अतः तू खड़ा हो और यश को प्राप्त कर तथा शत्रुओं को जीत कर धन्धान्य से सम्पन्न राज्य को भोग और यह सब शूर वीर पहले ही से मेरे द्वारा मारे हुए हैं। **(अध्याय 11, श्लोक 32)**

ऐसे ही कितने साहसजनक और लोभप्रद उपदेश करके कृष्णजी ने अर्जुन को अपने ही कुल-कुटुम्ब

जनों से लड़ा दिया। फलस्वरूप लाखों व्यक्ति मारे गये, कुल का नाश हो गया भारत की शक्ति नष्ट हो गई।

यह है धार्मिक इतिहास! इसको विचार में न रखते हुए पवित्र कुर्आन पर आक्षेप कितना अन्यायपूर्ण है?

अल्लाह तआ़ला पवित्र कुर्आन में फ़रमाता है

अनुवाद-

ऐ लोगो! 'हमने' तुमको एक ही मर्द और एक ही औ़रत से पैदा किया और तुम्हें बिरादरियों और क़बीलों का रूप दिया, ताकि तुम एक-दूसरे को पहचानो; अल्लाह के नज़दीक़ तुममें सबसे इज़्ज़त वाला वह है, जो तुममें सबसे ज़्यादा मुत्तक़ी (परहेज़गार) हो, बेशक अल्लाह जानने वाला, ख़बर रखने वाला है। **(सूरः हुजरात-13)**

अर्थात खुदा की क़सम, जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है कोई बन्दा (मनुष्य) वास्तविक रूप से विश्वासधारी (मुसलमान) न होगा जब तक वह अपने भाई अर्थात अन्य मनुष्य के लिए भी वही न चाहे जो स्वयं अपने लिए चाहता है।

एक और आयत पर आक्षेप

ऐ मुसलमानों! मुश्रिक निरे गन्दे हैं, अतः वह कअ़बे की मस्जिद के पास न आने पाएँ।

आक्षेप-

"हम तो अब तक हिन्दू पंडे पुजारियों को ही कोसते थे कि यह अपने मन्दिरों में सबको क्यों नहीं जाने देता, परन्तु अल्लाह तो इनसे बढ़कर छूत मानने वाला है।"

मानव प्रेम की वास्तविकता-

पवित्र कुर्आन पर तो युद्ध हत्या लूट मार के बड़े-बड़े दोष लगाए हैं और वेदों के प्रति दिखाया है कि वह सारे मनुष्यों से प्रेम करने की शिक्षा देते हैं। यह दस्यु आर्यों के शत्रु कौन हिंसक प्रणाली है? उनको मनुष्य तो नहीं होना चाहिए। परन्तु स्वामी दयानन्दजी तो हमें बताते हैं कि आर्यवर्त के अतिरिक्त दूसरे सभी देशों के मनुष्य दस्यु हैं और अपनी ओर से नहीं वेद शास्त्र ही द्वारा बताते हैं, देखिए-

ऋग्वेद में-

(ऐ प्रकाशमान अग्नि!) तू आर्यों और दस्युओं के बीच भेद कर जो विधर्मी हैं उनको दण्ड दे... ......। **(ऋग्वेद 1: 51: 7)**

"ऐ दस्युओं के प्रति सबसे अधिक विनाश करने वाली (अग्नि) तुझको पाथ्या ने जलाया है तू हर

युद्ध में धन सामग्री प्राप्त करती है।" (यजुर्वेद 11: 34)

ऐ इन्द्र! ख़ज़ानों के खज़ान्ची! हमने धनकोषों की इच्छा से तेरा सीधा हाथ थाम लिया है, क्योंकि हम तुझको जानते हैं। ऐ वीर! पशुओं के स्वामी! हमको भारी दिव्य धन दौलत प्रदान कर, विख्यात ऋषियों के साथ हमारे शत्रुओं को पराजित करके हमे भारी प्रकाशमय धन दौलत प्रदान कर। सच्चे इन्द्र! दुर्गों को नष्ट करके दस्युओं का वध करके हमको प्रकाशमान माल धन प्रदान कर। (4–3:47:10)

विजानी ह्यर्यान्ये च दस्य वो बर्हिष्मते रन्धया शासद व्रतान्।

(ऋ० म० 1। सू० 51। मं० 7)

इस मन्त्र का अर्थ स्वामी दयानन्दजी ने यह किया है-

"आर्य नाम धार्मिक विद्वान आप्त पुरुषों का और इनसे विपरीत जनों का नाम दस्यु अर्थात डाकू, दुष्ट अधार्मिक और अविद्वमान है।"

म्लेच्छ वाचश्चार्य वाचः सर्वेते दस्यवः स्मत। (मनु० 10 । 45)

म्लेच्छ देशस्तवतः परः। (मनु० 2 । 23)

मनुस्मृति के यह वाक्य देकर स्वामी दयानन्द जी ने लिखा है-

जो आर्यवर्त देश से भिन्न विदेश हैं वे दस्यु देश हैं और म्लेच्छ देश कहलाते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि आर्यवर्त से भिन्न पूरब देश से लेकर ईशान उत्तर वायव्य और पश्चिम देशों में रहने वालों का नाम दस्यु और म्लेच्छ तथा असुर है और दक्षिण तथा आग्नेय दिशाओं में आर्यवर्त देश से भिन्न में रहने वाले मनुष्यों का नाम राक्षस था। ('सत्यार्थ प्रकाश' समुल्लास 7)

यह है धर्म की मानव समता तथा मानव प्रेम की वास्तविकता।

आर्यवर्त से भिन्न विदेशी

आर्यवर्त के अतिरिक्त सारे देशों के मनुष्य डाकू और दुष्ट हैं अधार्मिक और अविद्वान हैं, म्लेच्छ और असुर तथा राक्षस हैं।

यह स्थिति तो है आर्य धर्म में उन मनुष्यों की जो आर्यवर्त के बाहर संसार के देशों में बसते हैं चाहे वह धर्मात्मा हों ईश्वर भक्त हों विद्वान हों सदाचारी हों दार्शनिक हों साधु सन्त हों।

भविष्य पुराण के अनुसार म्लेच्छ

भविष्य पुराण में हज़रत आदम हव्वा उनकी सन्तान के ईशदूतों अन्तिम ईशदूत हज़रत मुहम्मद का वर्णन लगभग है। इन सबको भी म्लेच्छा ही कहा गया है।

1- ब्राह्मण को चाहिए कि शूद्र को कोई युक्ति न बनाए, शूद्र को उच्छिष्ट और हवों का शेषांश न देवे। उसे धर्म और व्रत करने का भी उपदेश न करें, यदि ब्राह्मण उसे धर्म का उपदेश तथा व्रत का आदेश करता है तो उस शूद्र के साथ वह असंवृत नामक घोर नरक में जाता है। (अध्याय 4, श्लोक 70। 71)

(2) मरे हुए शूद्र को नगर के दक्षिण द्वार से वैश्य को पश्चिम, क्षत्रिय को उत्तर तथा बाह्मण को पूर्व द्वार से श्मशान में ले जाना चाहिए। **(अध्याय 5, श्लोक 92)**

(3) स्वजनों में रहते हुए मृतक ब्राह्मण को शूद्र से न उठवाए क्योंकि शूद्र से छू जाने पर दूषित हो जाने के कारण मृतक का वह दह्म शरीर स्वर्गनिमित्तक नहीं हो सकता। **(अध्याय 5 श्लोक 104)**

(4) ईश्वर ने सब शूद्र के लिए केवल एक ही कर्म बतलाया है और वह यह है कि उन तीनों वर्गों (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) की ईर्ष्यारहित होकर सेवा करें। **(अ० 1, श्लोक 91)**

(5) शूद्र यदि ब्राह्मण आदि द्विजातियों का नाम तथा जाति कहता हुआ बुरी बात कहे तो जलती हुई दस अंगुल की लौह श्लाका उसके मुँह में डाले। **(अध्याय 7, श्लोक 272)**

(6) कोई आवश्यक काम आ पड़ने पर शूद्र का धन ब्रह्मण बे रोक टोक ले सकता है, कारण कि उसका निजी धन कुछ भी नहीं है, सब धन उसके प्रभु का है। **(अध्याय 7, श्लोक 417)**

(7) सदा चण्डाल और श्वपच गाँव के बाहर रहें, काँसे पीतल का बर्तन न रखकर मिट्टी के बर्तन रखें, कुत्ते और गद्हे यही उनके धन हैं। मुर्दों को शरीर से उतारे हुए वस्त्र ही उनके पहनने के वस्त्र हैं। टूटे-फूटे मिट्टी के बर्तनों में भोजन करें लोहे का गहना पहनें, नित एक ही स्थान में जाएँ, यही उनका धर्म है। **(अ० 10, श्लोक 51-52)**

यह है इस्लाम पर कुछ आक्षेप करने वालों की मानव प्रतिष्ठा तथा मानव प्रेम की शिक्षा! भ्रष्ट प्रचार करते हुए लोगों को याद नहीं रहता कि उनका शास्त्र अपने ही समाज के एक वर्ग के विषय में क्या शिक्षा देता है। आर्य समाज वर्ण-व्यवस्था को जंग से नहीं कर्म से मानता है, परन्तु वर्ण-व्यवस्था को मानता तो है।

इस्लामी समानता

इसके विपरीत इस्लाम में न कोई वर्ण भेद है और न कोई वर्ग भेद, सब मुसलमान समान हैं, सबका धार्मिक और सामाजिक नियम समान है सबके अधिकार समान हैं, सब क़ुर्आन और ह़दीस की शिक्षा प्राप्त करते हैं, सब मस्जिद में समान रूप से नमाज़ पढ़ते हैं, एक साथ बैठकर खाते हैं, सब समान रूप से स्वतंत्र है कि जो उद्योग और धन्धा चाहें, किसी पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं। यह है ईश्वरीय धर्म।

ग़ैर मुस्लिमों के साथ ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की सन्धियाँ

इस्लामी हुकूमत में ग़ैर मुस्लिमों के साथ जो सन्धियाँ हुईं उससे अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि इस्लाम कितना मानवतापूण धर्म है।

ग़ैर मुस्लिमों से सन्धियाँ

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और उनके उत्तराधिकारियों के समय में ग़ैर मुस्लिमों से बहुत सी सन्धियाँ

हुईं और उनके लिए प्रतिज्ञा पत्र लिखे गये हम उनके धार्मिक स्वतंत्रता सम्बन्धी अंश उपस्थित कर रहे हैं।

माह दीनदार के निवासियों को जो प्रतिज्ञा पत्र लिखा गया उसमें था कि-

"न उनका धर्म बदला जाएगा और न उनके धार्मिक कार्यों में हस्तक्षेप किया जाएगा।"

जुर्जान निवासियों के प्रतिज्ञा पत्र में था-

"उनके प्राण, धन, धर्म, शास्त्र सबके लिए सुरक्षा है, उनकी किसी चीज़ में परिवर्तन न किया जाएगा।"

लूक़ाफ़ और आज़र बाईजान निवासियों के प्रतिज्ञा पत्र में था-

"ग़ैर मुस्लिमों के प्राण, धन, धर्म और शास्त्र सबके लिए रक्षा हैं-

(यह अंश अल्लामा शिब्ली नोमानी (रह़०) की पुस्तक "अलूफ़ारुक़" से उद्धत किये गये हैं-)ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) की उपस्थिति में ईलिया (शाम) के निवासियों को जो प्रतिज्ञा पत्र लिखा गया उसमें है-

"यह वह सुरक्षा है जो ईश्वर के दास और मुसलमानों के अधिकारी (ख़लीफ़ा) उमर ने ईलिया निवासियों को दी। यह सुरक्षा उनके प्राण, धन, उपासना, गृह, सलीब, स्वस्थ्य, रोगी तथा उनके समस्त सह धर्मियों के लिए है। वह इस प्रकार कि न उनके उपासनागृहों में निवास किया जाएगा न उनको ढाया जाएगा, न उनके अहाते को किसी प्रकार की हानि पहुँचाई जाएगी और न उनके सलीबों और माल में कोई कमी की जाएगी और न उनके धर्म के सम्बन्ध में उन पर कोई दबाव डाला जाएगा।"

मिस्र की विजय

यह कुछ विशेष उदारता नहीं है। धार्मिक स्वतन्त्रता और धार्मिक रक्षा इस्लामी शासन की स्थायी नीति थी जो पवित्र क़ुर्आन के इस आदेश पर आधारित थी- **लाइक्राह फ़िद्दीन** (धर्म के विषय में कोई ज़ोर दबाव नहीं)।

ह़ज़रत उ़मर के शासन काल में मिस्र विजित हुआ युद्ध में बहुत से सैनिक बन्दी बने, मिस्र के विजेता ह़ज़रत अ़म्र बिन अ़ास ने ह़ज़रत उ़मर से लिख कर पूछा कि बन्दियों के सम्बन्ध में क्या किया जाए? ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने उत्तर में लिखा कि बन्दियों को इसका अधिकार दे दिया जाए कि वह चाहें तो इस्लाम ग्रहण कर लें और चाहें तो जिज़्या देना स्वीकार करेके अपने धर्म पर रहें।

एक दास-

ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) का एक दास ईसाई था एक बार उन्होंने दास से मुसलमान हो जाने का प्रस्ताव किया उसने अस्वीकार कर दिया। ह़ज़रत उ़मर का शासन, ईरान, शाम और मिस्र तक फैला हुआ था परन्तु आप ने उसका उत्तर सुन कर कहा- **'लाइक्राह फ़िद्दीन'** (धर्म के विषय में कोई ज़बरदस्ती नहीं) इतना ही नहीं आप उससे अप्रसन्न भी नहीं हुए। अपने प्रलोक गमन के समय दास को गले लगाया और उसे स्वतंत्र कर दिया।

शाम के अंताकिया नगर का याक़ूबी सम्प्रदाय का 'पीटरयार्कमीकाईल' लिखता है कि जब ख़ुदा ने रूमियों का उत्पात देखा कि वह जहाँ कहीं अधिकार पाते हैं हमारे गिरजाओं को अशुद्ध कर देते हैं और हम पर अत्याचार करते हैं तो उसने प्रवेश में इस्माईल की संतान (मुसलमानों को नियुक्त किया कि वह) हमें रूमियों से मुक्ति दिलाएँ।

एक नस्तूरी 'उस्कुफ़' (धर्म नेता) कहता है कि "अ़रब मुसलमान ईसाईयों के मज़हब से नहीं लड़ते, वह हमारे पादरियों और मज़हबी बुज़ुर्गों का सम्मान तथा हमारे मज़हब की रक्षा करते हैं वह बड़े उदार हैं।"

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के तीसरे उत्तराधिकारी ह़ज़रत उ़स्मान के शासन काल में (Gesujah) जो मरू का पीटरयार्क था उसने ईरान के लार्ड बिशप साईमन को लिखा कि-

अ़रब जिनको ख़ुदा ने इस समय देशों की बादशाहत दी है। ईसाई मज़हब पर आक्रमण नहीं करते बल्कि उसके विपरीत वह हमारे मज़हब की सहायता करते हैं और हमारे गिर्जाओं और ख़ानक़ाहों को अनुदान करते हैं। **(हुक़ूक़े ज़िम्मीयीन, शिब्ली)**

महत्वपूर्ण विभाग युद्ध-

डा० ई० ए० क्रासवेल इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध विद्वान और लेखक हैं वह अपने एक लेख में लिखते हैं-

"मानव जीवन का एक महत्वपूर्ण विभाग युद्ध भी है और जीवन के इस क्षेत्र में नैतिक आदर्श को स्थापित रखना कठिन हो जाता है। परन्तु इस्लाम ने मानव जीवन के इस क्षेत्र में भी केवल उच्चकोटि की नैतिक शिक्षा ही उपस्थित नहीं की है बल्कि व्यवहारिक रूप में भी मुसलमान इस आदर्श को सम्मुख रखते रहे हैं।

ऐसे युद्ध में भी नैतिकता एवं मानवता के सीमोल्लंघन से कठोरता के साथ मनाही कर दी है और केवल उन्हीं लोगों पर हथियार उठाने की अनुमति दी है जो मुसलमानों से लड़ें और पराजित होने के बाद भी हथियार डालने से इन्कार कर दें। इसी के साथ उसने जीविका सम्बन्धी सामग्री को नष्ट करने की भी सर्वथा मनाही कर दी है।

युद्ध के विषय में संसार की कोई जाति नैतिकता का इतना ऊँचा आदर्श प्रस्तुत नहीं कर सकती जितना इस्लाम ने प्रस्तुत किया है।

सारांश यह है कि इस्लाम को जिस ओर से भी देखा जाए वह उच्चकोटि की नैतिक शिक्षा का संग्रह सिद्ध होता है। उसकी शिक्षा का सबसे बड़ा गुण यह है कि उससे मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम दोनों समान रूप से लाभान्वित हो सकते हैं।"

जुर्जान निवासियों से प्रतिज्ञा पत्र

"उनके प्राण, धर्म, धन इत्यादि की सुरक्षा की जाएगी और कोई चीज़ परिवर्तित नहीं की जाएगी।"

इसी प्रकार 'आज़रबाईजान' निवासियों के प्रतिज्ञा पत्र में था-

“ग़ैर मुस्लिमों की जान, माल, धर्म और शास्त्र सबके लिए रक्षा है।” **(मौलाना शिबली नोमानी)**

इसी प्रकार पहले ख़लीफ़ा हज़रत अबूबक्र (रज़ि०) ने भी जब शाम की ओर फ़ौज भेजी तो उस के नाम यह फ़रमान जारी किया कि “शत्रुओं से मुआ़हदों (सन्धियों) में झूठ या धोखा न हो, हर मामले में ईमानदारी रखो ताकि तुम्हारी सत्यता और उदारता सिद्ध हो जाए अपने वादों और अपनी बातों की पाबन्दी करो धर्म प्रचारकों और सन्यासियों के सुकून में बाधा न डालो और उनके घरों को न गिराओ।
(तबरी भाग 2)

इस फ़रमान के विषय में प्रसिद्ध अंग्रेज़ (Bosworth Smith) लिखते हैं “अबूबक्र ने शाम में अपनी फ़ौजों को आदेश दिये कि न तो लोगों के चेहरे बिगाड़ें न बूढ़ों, औ़रतों, और बच्चों को क़त्ल करें, न फलदार पेड़ों को काटें और न उनके जानवरों को मारें।” (Islam and Civilisation)

शाम के साथ प्रतिज्ञा

दूसरे ख़लीफ़ा हज़रत उ़मर (रज़ि०) के शासन काल में जो प्रतिज्ञा पत्र ईलिया (शाम) निवासियों को लिखा वह इस प्रकार है।

“यह वह सुरक्षा है जो अल्लाह के बन्दे और मुसलानों के अधिकारी (ख़लीफ़ा) उ़मर ने ईलिया निवासियों को दी। यह सुरक्षा उनके प्राण, धन उपासना गृह, सलीब स्वास्थ्य, रोगी तथा उनके समस्त सहधर्मियों के लिए है वह इस प्रकार कि न उनके उपासना गृहों में निवास किया जाए न उनको ढाया जाए न उनके अहाते को किसी प्रकार की हानि पहुँचाई जाए और न उनके सलीबों और माल में कोई कमी की जाएँ और न उनके धर्म के सम्बन्ध में उन पर कोई दबाव डाला जाए।” **(‘अलूफ़ारूक’ शिब्ली नोमानी)**

इस्लाम के विषय में जो भ्रम और सन्देह था वह इन प्रमाणों से भली भांति सिद्ध हो गया कि इस्लाम में ज़बरदस्ती मुसलमान बनाने की कहीं अनुमति नहीं है, परन्तु मानव जीवन का क्रासवेल के अनुसार “युद्ध एक महत्वपूर्ण विभाग है।” जिसे इस्लाम ने मानव जीवन के इस क्षेत्र में भी केवल उच्चकोटि की नैतिक शिक्षा ही नहीं बल्कि सद्व्यवहार की भावना के साथ अनुमति दी है। जिसमें आक्रमणात्मक युद्ध की हर अवस्था को निषिद्ध ठहराया है और जो हज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के जीवन की घटनाएँ इस शान्ति प्रियता का समर्थन करती हैं। जैसे-

सुलह़ हुदैबिया

हुदैबिया की सन्धि के अवसर पर शत्रुओं (मक्का निवासियों) ने बड़ी कड़ी शर्त रखीं जिसे मुसलमानों को स्वीकार करते हुए हिचकिचाहट मह़सूस हो रही थी परन्तु रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने झगड़े को समाप्त करने के लिए सन्धि कर ली जिस पर सारे मुसलमान भी राज़ी हो गये।

फ़तेह़ मक्का

इसी प्रकार फ़तेह़ मक्का के अवसर पर जब आप (सल्ल०) अपनी सेना के साथ मक्का वापस गये

तो आपने हुक्म दिया कि यथा सम्भव कम से कम रक्त पात हो इसलिए आप की सेना किसी प्रकार की हिंसा या युद्ध के बिना मक्के में प्रविष्ट हो गई, यह वही नगर था जहाँ से आप अत्यन्त अत्याचार सहन कर के निकाले गये थे, किन्तु फिर भी आप को शांति और दया का इतना ध्यान था कि स्वयं आप ने फ़रमाया आज तो रह़मत (दया) का दिन है। इसी दया के कारण आप ने फ़रमाया, जो अबू सुफ़यान (उस समय तक के कट्टर विरोधी) के घर में दाख़िल हो जाएगा उस से हम जंग नहीं करेंगे, इतना सुनते ही ह़ज़रत अबूसुफ़ियान और तमाम विरोधियों के दिल में यह बात उत्पन्न हो गई हम इनका विरोध करते हैं और यह हम पर दया करते जा रहे हैं। इसलिए यह निः सन्देह अल्लाह के ईशदूत हैं यह सब देखकर मक्का निवासियों ने तुरन्त इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया।

इस्लाम की तलूवार-

यह है वास्तव में इस्लाम धर्म की तलूवार, सद्व्यवहार और अच्छे आचरण जिससे इस्लाम विश्वव्यापी रूप में फैलता गया न कि रक्तपात से, यहाँ प्रश्न उठ सकता है कि फिर इतनी लड़ाइयाँ क्यों हुईं, निः सन्देह आपने प्रत्येक लड़ाई रक्षात्मक, शान्तिप्रिय और निर्दोष लोगों को हिंसा और अत्याचार से बचाने के लिए ही की। जो आप के आदेशों से स्पष्ट होता है कि अपनी सेना को रणक्षेत्र में जाते समय यह आदेश देते।

इस्लामी शासन में ग़ैर मुस्लिमों के अधिकार

इस्लामी समाज में रहने वाले दूसरे मज़ाहिब के मानने वालों को इस्लाम ख़त्म नहीं करना चाहता बल्कि नेकी व रह़मदिली और इन्साफ़ की मज़बूत बुनियादों पर मुसलमानों और ग़ैर मुस्लिम शहरियों के दर्मियान सम्बन्ध करवाता है। इन बुनियादों को इन्सानियत ने न इस्लाम से पहले कभी जाना और न इस्लाम के बाद, आज मज़हब, क़ौम और रंग की बुनियादों पर तंग नज़री और अनानियत परस्ती व ख़ुदग़र्ज़ी का दौर दौरा नज़र आता है और इन्सानियत परेशानियों का शिकार है।

ग़ैर मुस्लिमों के साथ सम्बन्ध

इस्लाम ने ग़ैर मुस्लिमों के साथ सम्बन्ध की बुनियाद नेकी व इन्साफ़ परस्ती पर रखी है और यह सारी दुनिया के ग़ैर मुस्लिमों के साथ है जो ग़ैर मुस्लिम दारुस्सलाम यानी मुसलमानों के देश में रहते हैं उन के ख़ास हुक़ूक़ हैं जिन्हें ज़िम्मी या अहले ज़िम्मा कहा जाता है।

दारुस्लाम में ज़िम्मियों के साथ मामले का पहला उसूल यह है कि चन्द बातों को छोड़कर उन के हुक़ूक़ वही होते हैं जो मुसलमानों के होते हैं इसी लिए उन की ज़िम्मेदारियाँ भी वैसी ही होती हैं।

इस्लामी समाज की हिमायत-

इन हुक़ूक़ में सब से पहला ह़क़ यह है कि उन्हें इस्लामी देश और इस्लामी समाज की पूरी ह़िमायत

व हिफ़ाज़त हासिल हो जिस में हर प्रकार के ज़ुल्म व सितम से हिफ़ाज़त शामिल है ताकि वह पूरे अम्न व सुकून के साथ ज़िन्दगी गुज़ार सकें।

बाहरी आक्रमण से सुरक्षा उसी तरह उन का हक़ है जिस तरह मुसलमानों का। इमाम या जो भी मुसलमानों का अधिकारी हो उस के लिए अपनी शरअ़ी हैसियत और फ़ौजी ताक़त की बिना पर यह ज़रूरी होगा कि वह ज़िम्मियों की हिफ़ाज़त करे। जैसे-

"इमाम के लिए ज़रूरी है कि वह ज़िम्मियों की हिफ़ाज़त करे, जो उन्हें तक्लीफ़ पहुँचाए उसकी रोकथाम करे, क़ैद व बन्द में हों तो उन्हें आज़ाद कराये और जो उन को तक्लीफ़ दे, उसे पीछे ढ़केल दे चाहे पूरे मुल्क में एक ही ज़िम्मी क्यों न हो। क्योंकि ज़िम्मियों के बारे में इस्लाम के अह़काम नाफ़िज़ हो चुके हैं और उन के साथ मुआ़हिदा हमेशा के लिए होता है इसलिए मुसलमानों की तरह़ उन के हुक़ूक़ भी वाजिब हैं।" **(मतालिब भाग-2, 602-603)**

इमाम कराफ़ी मालिकी अपनी किताब 'अल्फ़िरक़' में इमाम इब्ने ह़ज़्म ज़ाहिरी का क़ौल उन की किताब "मरातिबुल् इजमाअ़" से नक़्ल करते हैं-

"अगर अहले ह़र्ब हमारे मुल्क में किसी ज़िम्मी को पकड़ने आएँ तो हमारे ऊपर वाजिब होगा कि हम पूरी ताक़त के साथ उन से जंग के लिए निकल पड़ें और उस ज़िम्मी की हिफ़ाज़त के लिए जिस की ज़िम्मेदारी अल्लाह व रसूल (सल्ल०) ने ले रखी है अपनी जान दे दें, क्योंकि उस के बग़ैर ज़िम्मी को उन के सुपुर्द कर देना ज़िम्मेदारी के मुआ़हिदे से पहलू बचाना समझा जाएगा और इस पर उम्मत का इजमअ़ (सहमति) है।" **(अल्फ़िरक़ भाग 3, 14-15)**

अ़ल्लामा कराफ़ी ने इस पर लिखा है कि "जिस मुआ़हिदे के ज़ाया होने से बचाने के लिए जान व माल तक क़ुर्बान कर देना पड़े यक़ीनन उस की ज़बरदस्त अहमियत है।"

"इमाम बुख़ारी ने अबू वलीद का क़ौल नक़्ल किया है कि हम लोग कुछ क़ौमों के सामने बनावटी मुस्कुराहट का इज़्हार करते थे, ह़ालांकि हमारे दिल उन पर लअ़नत भेजते थे।" **(बुख़ारी)**

इस के बाद अल्लाह ने फ़रमाया कि अल्लाह तुम्हें डराता है, देखो! उस के अह़काम की मुख़ालिफ़त और उस के दुश्मनों से दोस्ती करके उसे नाराज़ न करो।

29 قل إن تخفوا ما في صدوركم أو تبدوه يعلمه الله ويعلم ما في السموت وما في الأرض
والله على كل شيء قدير

अल्लाह की ओर से बन्दों को तम्बीह की जा रही है कि वह अल्लाह से डरते रहें और ऐसे आ़माल न करें जिन से उस ने मना किया है और जो उस की नाराज़गी का सबब बनें और बन्दा इस यक़ीन के साथ दुनिया में रहे कि अल्लाह से कोई बात भी छुपी नहीं, वह दिलों के भेद को जानता है, चाहे बन्दा उसे ज़ाहिर करे या छिपाये, वह आसमान व ज़मीन की तमाम चीज़ों को जानता है। ज़मीनों, पहाड़ों और समुन्द्रों का एक ज़र्रह या उस से भी कोई छोटी चीज़ अल्लाह से छुपी हुई नहीं और जब कोई चीज़ छुपी

नहीं तो अगर कोई शख़्स छुपे तौर पर काफ़िरों से दोस्ती रखे या नबी करीम (सल्ल०) को झुठलाए या कुफ़्र करे, तो अल्लाह तआ़ला से यह बातें कैसे छिपी रह सकती हैं?

30 يَوْمَ تَجِدُ كُلُّ نَفْسٍ مَّا عَمِلَتْ مِنْ خَيْرٍ مُّحْضَرًا ۚ وَمَا عَمِلَتْ مِن سُوٓءٍ ۚ تَوَدُّ لَوْ أَنَّ بَيْنَهَا وَبَيْنَهُۥٓ أَمَدًۢا بَعِيدًا ۗ وَيُحَذِّرُكُمُ ٱللَّهُ نَفْسَهُۥ ۗ وَٱللَّهُ رَءُوفٌۢ بِٱلْعِبَادِ ۝

अगर अल्लाह तआ़ला दुनिया में किसी को ढ़ील देता है तो इस से कोई यह न समझ ले कि अल्लाह तआ़ला से उस के आ़माल छिपे हैं बल्कि उस के आ़माल क़ियामत के दिन ज़ाहिर कर दिये जाएँगे, जिस दिन हर आदमी अपने नेक कामों को सामने पाएगा और जब अपने गुनाहों को अपने सामने देखेगा तो तमन्ना करेगा कि, काश उस के और उन गुनाहों के दर्मियान ऐसी दूरी होती है जिस के बाद कोई दूरी नहीं हो सकती।

31 قُلْ إِن كُنتُمْ تُحِبُّونَ ٱللَّهَ فَٱتَّبِعُونِى يُحْبِبْكُمُ ٱللَّهُ وَيَغْفِرْ لَكُمْ ذُنُوبَكُمْ ۗ وَٱللَّهُ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝

ह़ाफ़िज़ इब्ने कसीर (रह़०) लिखते हैं कि यह आयते करीमा उन तमाम लोगों के ख़िलाफ़ दलील है जो अल्लाह की मुह़ब्बत का दावा करते हैं और तरीक़-ए-मुह़म्मदिया पर नहीं चलते। जब तक आदमी तमाम चीज़ों में शरीअ़त की पाबन्दी नहीं करता, वह अल्लाह से मुह़ब्बत के दावे में झूठा है।

बुख़ारी मुस्लिम ने ह़ज़रत आ़इशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत की है, "जिस ने कोई ऐसा अ़मल किया जिस का हम ने हुक्म नहीं दिया तो वह अ़मल मरदूद (रद्द) होगा।" **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

32 قُلْ أَطِيعُوا۟ ٱللَّهَ وَٱلرَّسُولَ ۖ فَإِن تَوَلَّوْا۟ فَإِنَّ ٱللَّهَ لَا يُحِبُّ ٱلْكَٰفِرِينَ ۝

यह आयत दलील है कि तरीक़-ए-मुह़म्मदी की मुख़ालिफ़त (विरोध) कुफ़्र है। इसलिए कि अल्लाह ने फ़रमाया, "अगर उन्होंने मुँह मोड़ा तो अल्लाह तआ़ला काफ़िरों को पसन्द नहीं करता।" मालूम हुआ कि तरीक़-ए-मुह़म्मदी से मुँह मोड़ने वाला काफ़िर होता है।

33 إِنَّ ٱللَّهَ ٱصْطَفَىٰٓ ءَادَمَ وَنُوحًا وَءَالَ إِبْرَٰهِيمَ وَءَالَ عِمْرَٰنَ عَلَى ٱلْعَٰلَمِينَ ۝

अल्लाह तआ़ला ने ह़ज़रत आदम और ह़ज़रत नूह़ (अ़लै०) को नुबूव्वत के लिए चुन लिया और आले इब्राहीम और आले इमरान को तमाम आ़लम के मुक़ाबले में चुन लिया, आले इब्राहीम में नबी करीम (सल्ल०) हैं, इसलिए कि वह औलादे इब्राहीम से थे। उ़लमा ने लिखा है कि यहाँ ह़क़ीक़त में यह बयान करना मक़्सूद है कि नबी करीम (सल्ल०) के नाम की सराह़त इमामुल् अम्बिया (नबियों के इमाम) होने की वजह से ज़रूरी न रही। आले इमरान से मुराद मरयम और उन के बेटे ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) हैं।

ह़ाफ़िज़ स्योती ने अपनी किताब में लिखा है कि यह आयत इस बात की दलील है कि अम्बिया मलायका (फ़रिश्तों) से अफ़ज़ल हैं। इसलिए कि आ़लमीन में फ़रिश्ते भी दाख़िल हैं और अल्लाह ने अम्बिया को आ़लमीन पर फ़ज़ीलत दी है। इस के बाद अल्लाह ने बताया कि यह ख़ैर व बरकत उन की नस्लों में जारी रही, मर्दों में भी और औ़रतों में भी।

34 ذُرِّيَّةً بَعْضُهَا مِنْ بَعْضٍ ۗ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ۝

इनमें एक दूसरे की औलाद थे और अल्लाह खूब सुनने वाला, जानने वाला है।

35 إِذْ قَالَتِ امْرَاَتُ عِمْرٰنَ رَبِّ إِنِّيْ نَذَرْتُ لَكَ مَا فِيْ بَطْنِيْ مُحَرَّرًا فَتَقَبَّلْ مِنِّيْ ۚ إِنَّكَ أَنْتَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۝

मरयम की माँ-

'मुहम्मद बिन इस्हाक़' कहते हैं कि 'इमरान' की बीवी यानी 'मरयम (अ़लै०)' की माँ को ह़मल क़रार नहीं पाता था, उन्होंने दुआ़ की, "ऐ अल्लाह! मुझे बेटा अ़ता कर। अल्लाह ने उन की दुआ़ क़ुबूल कर ली।" जब ह़मल क़रार पा गया तो उन्होंने नज़र मानी कि बच्चे को अ़िबादत और बैतुल् मुक़द्दस की ख़िद्मत के लिए बिल्कुल वक्फ़ कर दूँगी। जब विलादत (पैदाइश) हो गई तो उन्होंने कहा, "ऐ मेरे रब! यह तो बच्ची हो गई और मैंने तो सोचा था कि बच्चा होगा जो बैतुल मुक़द्दस की ख़िद्मत करेगा।" और अल्लाह को तो मालूम ही था कि उन्होंने क्या जना। अल्लाह ने कहा, "वह बच्चा जिस की उन्होंने ख़्वाहिश की थी ताक़त, सब्र व तह़म्मुल (बर्दाशत) और मस्जिदे अक़्सा की ख़िद्मत में उस बच्ची की तरह़ न होता जो पैदा हुई है।"

उम्मे मरयम ने इस बच्ची का नाम मरयम रख दिया, मुफ़स्सिरीन ने लिखा है कि मरयम के माने उन की ज़बान में "अ़िबादत करने वाली और रब की ख़ादिमा" के है। उस के बाद उम्मे मरयम ने दुआ़ की, "ऐ अल्लाह! मैं इस बच्ची को और इस की औलाद (यानी ईसा अ़लै०) को तेरी पनाह में देती हूँ।" चुनाँचे अल्लाह ने उन की दुआ़ क़ुबूल फ़रमा ली।

'बुख़ारी व मुस्लिम' ने ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत की है कि जब कोई बच्चा पैदा होता है तो शैतान उसे "मस" करता है यानी उस पर अपना असर डालता है तो बच्चा चीखने लगता है, लेकिन मरयम और उन के बेटे ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) शैतान के "मस" से मह़फ़ूज़ रहे, उस के बाद ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) ने कहा कि अगर चाहो तो यह आयत पढ़ो-

وَإِنِّيْ سَمَّيْتُهَا مَرْيَمَ وَإِنِّيْ أُعِيْذُهَا بِكَ وَذُرِّيَّتَهَا مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ

नोट- यह आयत दलील है कि माँ अपने बच्चे के लिए किसी ख़ैर के काम के लिए मन्नत मान सकती है। इसीलिए 'उम्मे मरयम' ने कहा, "ऐ मेरे रब! मैं अपने ह़मल (गर्भ) को तेरे लिए वक़्फ़ करती हूँ।" आयत से यह भी मालूम होता है कि आदमी को चाहिए कि जब अल्लाह से औलाद मांगे तो उम्मे मरयम की तरह़ अच्छी औलाद की नियत करे और उस के लिए अ़मले सालेह़ की ख़्वाहिश करे।

'ह़ाफ़िज़ स्योती' ने लिखा है, "यह आयत दलील है कि बच्चे का नाम पैदाइश के दिन रखना जायज़ है, सातवें दिन की ही बात सह़ी नहीं। आयत से यह भी मालूम होता है कि माँ अपने बच्चे का नाम रख सकती है, यह काम बाप ही के साथ ख़ास नहीं है।"

36 فَلَمَّا وَضَعَتْهَا قَالَتْ رَبِّ إِنِّيْ وَضَعْتُهَآ أُنْثٰى ۗ وَاللّٰهُ أَعْلَمُ بِمَا وَضَعَتْ ۗ وَلَيْسَ الذَّكَرُ كَالْأُنْثٰى ۚ وَإِنِّيْ سَمَّيْتُهَا

مَرْيَمَ وَإِنِّي أُعِيذُهَا بِكَ وَذُرِّيَّتَهَا مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ ۝

मरयम की पैदाइश-

फिर जब उनके यहाँ बच्ची पैदा हुई तो बोलीं, ''ऐ मेरे रब! मेरे तो लड़की पैदा हुई है।'' और अल्लाह तो खूब जानता था कि उसके क्या पैदा हुई है? और लड़का (उस) लड़की जैसा नहीं हो सकता ''और मैने उस लड़की का नाम 'मरयम' रखा है और मैं उसे और उसकी औलाद को शैतान मरदूद से (सुरक्षित रखने के लिए) 'तेरी' हिफ़ाज़त में देती हूँ।''

37 فَتَقَبَّلَهَا رَبُّهَا بِقَبُولٍ حَسَنٍ وَأَنْبَتَهَا نَبَاتًا حَسَنًا وَكَفَّلَهَا زَكَرِيَّا ۖ كُلَّمَا دَخَلَ عَلَيْهَا زَكَرِيَّا الْمِحْرَابَ وَجَدَ عِنْدَهَا رِزْقًا ۖ قَالَ يَا مَرْيَمُ أَنَّىٰ لَكِ هَٰذَا ۖ قَالَتْ هُوَ مِنْ عِنْدِ اللَّهِ ۖ إِنَّ اللَّهَ يَرْزُقُ مَنْ يَشَاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ۝

उम्मे मरयम की मन्नत-

मरयम की माँ ने बेटे की नियत की थी ताकि बैतुल् मुक़द्दस की ख़ूब ख़िद्मत करे। जब बच्ची हुई तो उन्हें एक तरह़ की मायूसी हुई। चुनाँचे अल्लाह ने उन का दिल रखा और उन की मन्नत क़ुबूल कर ली और फिर वह लड़की ऐसी हुई कि नेक व परहेज़गार और दीनी मक़ासिद के हुसूल में हज़ारों लड़को पर फ़ज़ीलत (वरीयता) कर गई। इसी बात को अल्लाह तआला ने इस आयत में बयान फ़रमाया है कि अल्लाह ने उन की मन्नत क़ुबूल कर ली और उस लड़की को ऐसा क़ुबूल किया कि बहुत से औलिया अल्लाह से आगे बढ़ गई और फिर अल्लाह ने उन की देखभाल ज़करिया के ज़िम्मे कर दी, जो उन के ख़ालू थे। दूसरी आयत में इसी की तरफ़ इशारा है إِذْ يُلْقُونَ أَقْلَامَهُمْ أَيُّهُمْ يَكْفُلُ مَرْيَمَ "जब वह लोग अपने क़लम (नहर में) बतौर क़ुरअ़ अन्दाज़ी कर रहे थे कि मरयम की किफ़ालत (पालन पोषण) कौन करे।" **(सूरः आले इमरान-44)**

मुफ़स्सिरीन (व्याख्याकार) ने लिखा है कि जब भी ज़करिया (अ़लै०) उन के पास जाते तो सर्दी के मौसम के फल मौसमे गर्मा में और गर्मा का सर्दी में पाते थे। आयत में इशारा है कि मरयम (अ़लैहिमुस्सलाम) दिन रात अ़िबादत में लगी रहती थीं और मेहराब से सिर्फ़ इन्सानी ज़रुरत के लिए निकलती थीं।

नोट- इस आयत में दलील है कि अल्लाह के दोस्तों से करामात होते हैं। इस की तस्दीक़ ह़ज़रत खुबैब बिन अ़दी अन्सारी (रज़ि०) के वाक़िये से भी होती है, जिन्हें मक्का मुकर्रमा में काफ़िरों ने शहीद कर दिया था और जिन के पास क़ैद के ज़माने में अंगूर के गुच्छे मिला करते थे। **(सह़ीहुल् बुख़ारी किताबुल् जिहाद)**

अल्लाह का दोस्त वही होगा जो शरीअ़त का पाबन्द, क़ुर्आन व सुन्नत पर अ़मल करने वाला और बिद्आ़त व ख़ुराफ़ात से हज़ारों कोस दूर होगा और जिस के बारे में क़ुर्आन व सुन्नत इस बात की गवाही दें कि उसका अ़क़ीदा सह़ीह़ और दीने ख़ालिस के साथ तमाम शरीयते इस्लामिया का पाबन्द है। मुश्रिक, बिद्अ़ती, क़ुर्आन व सुन्नत से दूर और नेक काम में कोताह कभी भी अल्लाह का वली नहीं हो सकता और ऐसे लोगों से जो चमत्कार होता है वह जादू और शैतानी अ़मल का नतीजा होता है। मुसलमानों को ऐसे लोगों से होशियार रहना चाहिए।

प्रस्तावना

प्रख्यात विद्वान एवं श्रेष्ठ विचारक ह़ज़रत मौलाना सय्यद मुह़म्मद राबेअ़ ह़सनी नदवी मद्दज़िल्लहुल्आ़ली के क़लम से-

'नाज़िम,' दारुल् उलूम, नदवतुल् उलमा, लखनऊ, व 'अध्यक्ष,' मुस्लिम पर्सनल ला बोर्ड (इण्डिया)

बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम

दीन-ए-इस्लाम को अल्लाह तआ़ला ने इन्सानों के लिए पसंदीदा दीन क़रार दिया है और फ़रमाया है कि अल्लाह तआ़ला इसी को क़ुबूल करेगा, इसके अ़लावा को क़ुबूल न करेगा। इन्सानों के मिजाज़ और आने वाले ज़मानों में जो अन्तर हो सकता है इस दीन में उसकी रिआ़यत भी रख दी है और ख़ास तौर पर यह दौर जो छठी सदी ई० के वक़्त से शुरु हुआ और इ़ल्म की उस्अ़त और तमद्दुनी तरक़्क़ी का दौर बना और यह दुनिया के तरक़्क़ी पज़ीर ह़ालात और इन्सानी नस्लों और क़ौमों की खुसूसियात के लिहाज़ से अहम तब्दीलियों का दौर है और इसकी यह खुसूसियत दुनिया के इख़्तिताम तक क़ायम रहने वाली है, उस दीने इस्लाम में इस दौर की इस खुसूसियात की रिआ़यत रखी गई है।

इसी बात की रिआ़यत में इस दीन को आख़िर और मुकम्मल दीन, और इस दीन को बयान करने वाली आसमानी किताब, क़ुर्आन मजीद को आसमानी किताबों में आख़री और मुकम्मल किताब बताया गया है। इस तरह अब जिस शख़्स को भी मरने के बाद की ज़िन्दगी में कामियाबी और राह़त ह़ासिल करना है उसको इस दीन पर अ़मल करना और उसकी आसमानी किताब की रहनुमाई में ज़िन्दगी गुज़ारना है और इसके लिए हर शख़्स को उस दीन को जानने और इस किताब से रहनुमाई ह़ासिल करने की लाज़मी ज़रूरत है।

यह किताब (क़ुर्आन) चूँकि अ़रबी में है इसलिए अ़रबी के लिए इससे फ़ायदा उठाने में ज़बान के मसले में रुकावट नहीं, लेकिन जो लोग अ़रबी नहीं जानते और उनको अ़रबी सीखने का मौक़ा भी नहीं है। उनके लिए यह काम इस किताब के तर्जुमे व तफ़्सीर के ज़रिये अन्जाम पा सकता है। इस तरह़ इस किताब का तर्जुमः ऐसी ज़बान में होना ज़रूरी है जिस के ज़रिये लोग क़ुर्आन मजीद से रहनुमाई ह़ासिल करने की ज़रूरत मह़सूस करते हों, इसके साथ-साथ वह लोग जो इस दीन, और इस किताब की अह़मियत और ज़रूरत को अभी तस्लीम न कर सकें हों, और मुसलमान न हों, उनके लिए इस दीन से वाक़फ़ियत और इस किताब का मुतालअ़, इस ह़ैसियत से मुफ़ीद है कि उनको इस्लाम और क़ुर्आन की ह़क़ीक़त और खुसूसियत और उनकी तालीमात का इ़ल्म हो सके, और किसी बात का इल्म होना,

और उसकी अस्ल ह़क़ीक़त से वाक़िफ़ होना, नावाक़िफ़ होने से बेहतर होता है, और हर उस शख़्स के लिए जो अ़क़्ल की सिफ़त और इ़ल्म की खुसूसियत रखता हो, ज़रूरी होता है कि वह अपनी वाक़्फ़ियत में इज़ाफ़ा करे।

हमारे इस मुल्क में जहाँ ग़ैर मुस्लिम भाइयों की कसरत है, और उनके दर्मियान हमारे मुसलमान भाई अपनी इस्लामी इ़बादत और मामलात के साथ रहते हैं, हमारे ग़ैर मुस्लिम भाइयों के लिए अपने पड़ोसी मुसलमान भाइयों के दीन और उनके मज़हबी किताब से वाक़्फ़ियत ह़ासिल करना, एक इन्सानी सिफ़त और आपसी तअ़ल्लुक़ात का तक़ाज़ा है, चूँकि इस मुल्क की अक्सरियत हिन्दी ज़बान को जानती और इस्तेमाल करती है इस लिए बहुत से अह्ले इ़ल्म ह़ज़रात ने क़ुर्आन मजीद को हिन्दी ज़बान में पेश करने की ज़रूरत समझी और यह काम अन्जाम दिया।

उन्हीं ह़ज़रात में हमारे अज़ीज़ "मौलवी मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी साहब" भी हैं जो एक फ़ाज़िल शख़्स और अ़रबी व हिन्दी दोनों से अच्छी वाक्फियत रखने वाले हैं, मेरे सामने इस वक़्त इन्हीं का हिन्दी तर्जुमः व तफ़्सीर क़ुर्आन है जिसको इन्होंने बड़ी मेहनत व क़ाबिलियत से तैयार किया है।

उम्मीद है कि सारे मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम भाई जो हिन्दी ज़बान ही के ज़रिये, ज़्यादा बेहतर समझ सकते हैं, इस तर्जुमे व तफ़्सीर से सही फ़ायदा उठाएँगे। मुसलमान ह़ज़रात तो अ़मल करने के लिए और उसकी रहनुमाई में अपनी ज़िन्दगी संवारने के लिए और ग़ैर मुस्लिम भाई इस्लाम और क़ुर्आन की सही ह़क़ीक़त और तालीमात से वाक्फियत ह़ासिल करने के लिए। मेरी दुआ है कि यह तफ़्सीर मुफ़ीद और कामियाब साबित हो।

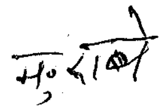

मुह़म्मद राबेअ़ ह़सनी नदवी
नाज़िम, नदवतुल् उलमा, लखनऊ
22–10–2013
27 ज़िल्ह़िज्जः 1434 हिज्री

सन्देश

इस्लामी जगत के प्रख्यात विद्वान ह़ज़रत मौलाना मुफ़्ती अबुल् क़ासिम नोअ़मानी क़ासमी मद्दज़िल्लहुल्आ़ली के क़लम से-

मुहतमिम, दारुल उलूम देवबन्द यू०पी० (अल् हिन्द)

बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम

जनाब 'मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर साह़ब फ़ारुक़ी नदवी' का हिन्दी तर्जुमः क़ुर्आन पाक देखने का मौक़ा मिला। यह ह़क़ीक़त है कि इस वक़्त मुसमलान नौजवानों का बहुत बड़ा तब्क़ा ऐसा है जो उर्दू ज़बान से नाबलद है, जबकि इस्लामी उ़लूम व फ़ुनून और दीनी मालूमात का सारा ज़ख़ीरा अ़रबी, फ़ारसी और उर्दू ज़बानों में मह़फ़ूज़ है।

मुत्तह़िदह हिन्दुस्तान में तफ़्सीर व ह़दीस, फ़िक़ः व फ़तावा, अख़्लाक़ व मुआ़शिरत और तारीख़ व फ़ल्सफ़े, ग़र्ज़ हर मौज़ूअ़ पर उ़ल्मा-ए-किराम और अरबाबे क़लम ने ख़ूब-ख़ूब किताबें मुरत्तब फ़रमाईं हैं और अहले ज़बान उस से इस्तिफ़ादह भी करते हैं।

लेकिन जो लोग सिर्फ़ हिन्दी ज़बान से वाक़िफ़ हैं उन के लिए इन किताबों से इस्तिाफ़दह की एक ही सूरत है कि बराहे रास्त हिन्दी ज़बान में किताबें भी लिखी जाएँ या उर्दू किताबों को हिन्दी में मुन्तक़िल किया जाए। इसी ज़रुरत के तह़त जनाब मौलाना 'मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी' ने "क़ुर्आन का पैग़ाम" के नाम से हिन्दी में तर्जुमः क़ुर्आन पाक की यह ख़िद्मत अन्जाम दी है।

हिन्दी जानने वालों को इस तर्जुमे से फ़ायदा उठाना आसान हो जाए, इस के लिए मुफ़्ती साह़ब ने कई बातों का ख़याल रखा है, जिस का ज़िक्र तर्जुमे के शुरु में कर दिया है और मुल्क के मुतअ़द्दिद अकाबिर अहले इ़ल्म ने गहरी नज़र से तर्जुमः को देखकर अपनी पसन्दीदगी का इज़्हार भी किया है, इसलिए उम्मीद है कि यह तर्जुमः न सिर्फ़ हिन्दीदाँ मुसलमानों के लिए; बल्कि उन बिरादराने वतन के लिए भी "क़ुर्आन के पैग़ाम" को समझने में मदद देगा, जो संजीदा और इन्साफ़ पसन्द हैं और क़ुर्आन पाक के पैग़ाम को समझना चाहते हैं। अल्लाह तआ़ला इन की ख़िद्मत को क़ुबूल फ़रमाए और मज़ीद दीनी ख़िद्मत की तौफ़ीक़ बख़्शे।

नोट- ह़वाला नं० 3426

अबुल क़ासिम नोअ़मानी ग़ुफ़िरा-लहु
दारुल् उ़लूम देवबन्द
17 जमादिल् ऊला 1435 हिज्री
19 मार्च 2014 ई०

सन्देश

इस्लामी जगत के प्रख्यात विद्वान ह़ज़्रत मौलाना मुह़म्मद सालिम क़ास्मी मद्‌दज़िल्लहुल् आ़ली के क़लम से-

मोहतमिम, "दारुल् उलूम वक़्फ़", देवबन्द व उपाध्यक्ष मुस्लिम पर्सनल ला बोर्ड इण्डिया

हिन्दी ज़बान में एक क़ाबिले एतिमाद तफ़्सीर-ए-क़ुर्आन

क़ुर्आन करीम इस दुनिया में वह वाह़िद किताब है जो ह़क़ीक़ी तौर पर कलामुल्लाह के नाम से मौसूम होने की ह़क़्दार है, इसलिए बक़िया कुतुब मुनज़्ज़िला यानी तौरेत, इन्जील, ज़बूर और दीगर सह़ायफ़ बसूरत कुतुब अम्बिया-ए-किराम को अ़ता फ़रमाई गईं, लेकिन क़ुर्आन करीम वह वाह़िद और अव्वलीन किताब है जिस का ह़क़ तआ़ला रब्बुल् इ़ज़्ज़त ने अपनी शान यकताई के साथ तकल्लुम फ़रमाया। नबी करीम (सल्ल०) ने क़ुर्आन करीम की इस मुन्फ़रिद और बेमिसाल ख़ुसूसियत का इस जामेअ़ तअ़बीर में इज़्हार फ़रमाया कि (इस क़ुर्आन करीम के इ़ल्मी व इ़रफ़ानी अ़जायबात व नवादिर न कभी ख़त्म होने वाले हैं और न बकस्रत पढ़े जाने के बावजूद यह किताब पुरानी पड़ने वाली है।)

"क़ुर्आन करीम" का वाह़िद और मुन्फ़रिद, इख़्तिसास व इम्तियाज़ यह है कि वह "कलामुल्लाह" है किताबुल्लाह नहीं है, इस के अ़लावा दीगर सह़ायफ़ अम्बिया-ए-किराम (अ़लै०) कुतुबुल्लाह हैं, कलामुल्लाह नहीं हैं। कलाम के लिए ज़रुरी है कि मुतकल्लिम ने उस को तकल्लुम किया हो, क़ुर्आन करीम के अ़लावा किसी किताब का न अल्लाह रब्बुल इ़ज़्ज़त ने तकल्लुम किया और न तकल्लुम पर दाल कोई सीग़ा उन कुतुब के लिए इस्तेमाल किया गया है, बख़िलाफ़ क़ुर्आन करीम के कि तकल्लुम के तमाम सीग़े ह़क़ तआ़ला ने अपनी ज़ात बाबरकात के लिए इस्तेमाल फ़रमाये हैं।

लफ़्ज़ "ह़िफ़्ज़" आयते करीमा तह़फ़्फ़ुज़ के साथ उस ह़िफ़्ज़ पर भी दाल है कि जो तकल्लुम से ही मुतह़क़्क़क़ होता है और इस मअ़ना में लफ़्ज़ ह़िफ़्ज़ का इस्तेमाल नादिर नहीं बल्कि कसीर है, क्योंकि ह़िफ़्ज़ के मअ़ना सिर्फ़ याददाश्त से बग़ैर देखे तकल्लुम के हैं और उन मआ़नी पर कलामुल्लाह की मुतअ़द्दिद आयात शाहिद हैं। जैसे-

या या

यानी ह़क़ तआ़ला की ज़ात वरा उल्वरा है कि सिर्फ़ बग़ैर देखे ही तकल्लुम पर दलालत नहीं करता, बल्कि ह़क़ तआ़ला का तकल्लुम अल्फ़ाज़ व आवाज़ जैसे मोह़दिसात से भी मुनज़्ज़ह है।

क़ुर्आन करीम ने सिर्फ़ तेईस (23) साल की मुख़्तसर तरीन मुद्दत में एक जाहिल तरीन और तहज़ीब व तमद्दुन की अब्जद तक से नावाक़िफ़ क़ौम अ़रब को इ़ल्म-ए-अ़ज़ीम से क़ौमी इ़ज़्ज़त और फ़िक्र सलीम

से तमुद्दुनी रफ़अ़त की दौलत से मालामाल कर दिया।

यह क़ुर्आन करीम ही था जिस ने अ़रबों को इस मक़ाम पर पहुँचा दिया कि तख़्त शाही उन के क़दमों तले आ गये और ताजेशाही को क़ुद्रत ने उन के सर की ज़ीनत बना दिया। आज मुवर्रिख़ का क़लम अ़रबों को, सल्जूक़ को, ख़िल्ज को, तुग़्लक और तुर्क को, अगर ख़िराजे अ़क़ीदत व तह़सीन पेश कर रहा है तो उन की यह तमामतर इ़ज़्ज़त व अ़ज़्मत क़ुर्आनी हिदायत के सामने सरे तस्लीम ख़म कर देने का मुबारक समुरह है वरना इस से पहले गोशा गुमानी में पड़े हुए उन इ़ज़्ज़त तब्क़ात के नामों तक से भी दुनिया नाआशना थी।

क़ुर्आन करीम ही इस कायनात में वह वाह़िद व मुस्तनद ख़ुदाई किताब है जिस ने रंग व नस्ल और क़ौम व वतन के बेमअ़ना अफ़्कार व नज़रियात को नेस्तवनाबूद करके इ़ज़्ज़त मन्दाना आ़लमग़ीर फ़िक्र-ए-इन्सानियत मरह़मत फ़रमाया।

इन्सानी ज़िन्दग़ी के हर जुज़्व व कुल पर मुह़ीत क़ुर्आन करीम की बाअ़ज़्मत व हमागीर रहनुमाई इन्फ़िरादी और इज्तिमाई ज़िन्दग़ी का सालिहाना शुऊर ताअ़ात व अ़िबादात की ज़रूरत व ह़लावत मामलात में दियानत, क़राबतों में सिलह़ रह़मी, ख़ानदानी अ़ज़्मतों की बरक़रारी, कस्ब मआ़श में ऊलुलुअ़ज़्मी, तिजारत में अमानत दाराना उसूल की पास्दारी, तमुद्दनी तरक़्क़ी के लिए सनअ़त व तिजारत की ज़रूरत व अहमियत तमद्दुनी इर्तिक़ा के लिए अ़क़ीदत व इ़बादत की अहमियत, इ़स्लाल व क़िसस-ए-क़ुर्आनी से इ़ब्रत व नसीह़त और आ़लमग़ीर इन्सानी उख़ूव्वत-ए-तअ़लीम व तअ़ल्लुम की ज़बरदस्त तश्वीक़, पेश आमदह ह़वादिस व सानिह़ात में अल्लाह रब्बुल् इ़ज़्ज़त पर एतिमाद, नागवार वाक़िआ़त से ख़ुशगवार नतायज की तख़्लीक़, मराह़िले ज़िन्दग़ी बचपन, जवानी और बुढ़ापे से ह़ुस्न अन्जाम की रहनुमाई, अपने दौर की जिद्दत आमेजियों में क़ुर्आनी एतिदाल की बरक़रारी का सलीक़ा वग़ैरह, यह वह लवाज़िम ह़यात हैं कि जिन के लिए क़ुर्आन करीम की पेशकर्दा इन्सानी क़द्रें और उन से अ़सरी तक़ाज़ों के मुताबिक़ दअ़वते इस्लाम के मुवस्सिर तरीक़ों का इस्तिख़राज जब ही मुम्किन है कि जब क़ुर्आन करीम की हादियाना तअ़लीमात व हिदायात इ़ल्म में आ जाएँ।

पेशे नज़र तफ़्सीर "क़ुर्आन का पैग़ाम, "तफ़्सीर फ़ारूक़ी" बज़बान हिन्दी और इन के ज़रिये दअ़वत "मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी" ने इ़ल्मी ज़ौक़-ए-सलीम, वक़ीअ़ दीनी सलाह़ियत, वसीअ़ मुतअ़ला और उ़लूमे क़ुर्आनी से इस्तिफ़ादह की राह अ़वाम व ख़वास के लिए खोल दी है।

उम्मीद है कि यह तफ़्सीर मुवल्लिफ़ीन, मुसन्निफ़ीन, मुह़क़्क़िक़ीन, मुक़र्रिरीन और मुदर्रिसीन के लिए एक इ़ल्मी तोह़फ़ा समीनः साबित होगी। ह़क़ तआ़ला मौसूफ़ की इस क़ुर्आनी तफ़्सीरी ख़िद्मत को क़ुबूलियत व मक़्बूलियत से नवाज़े और ज़ादे आख़िरत फ़रमाए।

(मौलाना) मुह़म्मद सालिम क़ासमी (साह़ब)
मोहतमिम दारुल उलूम वक़्फ़ देवबन्द
30-01-2014

सन्देश

विश्व प्रख्यात विद्वान ह़ज़रत मौलाना सय्यद अरशद मद्नी मद्दज़िल्लहुल् आ़ली के क़लम से-

उस्ताज़ ह़दीस, दारुल उ़लूम, देवबन्द व अध्यक्ष- जमअ़ीयतुल् उ़लम-ए-हिन्द (भारत)

أحمده وأصلى على رسوله الكريم

आक़ा-ए-नामदार ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की खुसूसियात में से यह भी है कि आप (सल्ल०) किसी ख़ास क़ौम के लिए नहीं; बल्कि पूरे आ़लम (संसार) के लिए रह़मत बनाये गये हैं, जिस तरह़ आप (सल्ल०) की ज़ात तमाम आ़लम के लिए है उसी तरह़ आप (सल्ल०) की लाई हुई शरीअ़त और किताब यानी कुर्आन करीम भी तमाम आ़लम के लिए हिदायत है, यह किसी ख़ास क़ौम के लिए मख़्सूस नहीं है। यही वजह है कि दुनिया की हर क़ौम से जिन लोगों के लिए अल्लाह की ओर से हिदायत मुक़द्दर थी उन्होंने कुर्आन को और इस की हिदायत (उपदेशी) को अपनाया और दीन व दुनिया की सआ़दत के ह़क़्दार हुए, कुर्आन और साह़िबे कुर्आन का यह एजाज़ ही कहा जाएगा कि जज़ीरतुल् अ़रब के आस-पास एशिया और अफ़्रीक़ा की एक बहुत बडी संख्या ऐसी है जिस ने कुर्आन को इस तरह़ अपनाया कि अपनी और अपने बाप-दादों की भाषा को अक्सर लोगों ने छोड़ दिया और कुर्आन की भाषा को अपनी भाषा बना लिया।

चूँकि कुर्आन केवल शब्दों ही का नाम नहीं, बल्कि शब्द व अर्थ दोनों के मिलने का नाम है, यानी फ़रिश्ता जिस तरह़ कुर्आन के शब्द रसूलुल्लाह के पास लाता था, उसी तरह़ इन शब्दों के अर्थ यानी मुरादे खुदावन्दी भी लेकर आता था, इसलिए यह एक इस्लामी उसूल बन गया कि इन अल्फ़ाज़ में कोई बदलाव नहीं हो सकता और न ही रसूलुल्लाह (सल्ल०) के बाद कोई शख़्स अपनी तरफ़ से उस के अर्थ को अलग कर सकता है, चुनाँचे सारी दुनिया के मुसलमान कुर्आन को पढ़ते हैं तो उसी तरह़ पढ़ते हैं जिस तरह़ वह चौदह सौ साल पहले उतरा था और जिस तरह़ उस को रसूलुल्लाह (सल्ल०) पढ़ते थे, अल्बत्ता उस का तर्जुमः (अनुवाद) किया जा सकता है और इस की तफ़्सीर (व्याख्या) को अपने शब्दों और अपनी भाषा में बयान किया जा सकता है।

इसी वजह से हमारे हिन्दुस्तान के उ़ल्मा ने ज़रूरत पड़ने पर कुर्आनी उ़लूम को अ़रबी भाषा से फ़ारसी भाषा में किया और जब फ़ारसी भाषा का चलन ख़त्म होने लगा तो कुर्आनी उ़लूम को उर्दू भाषा में किया गया।

अब जबकि हिन्दी भाषा हमारे मुल्क की सरकारी भाषा है और उम्मत का एक बहुत बड़ा तब्क़ा उर्दू से दूर है। इस बात की सख़्त ज़रुरत है कि इस्लामी उ़लूम को हिन्दी भाषा में भी किया जाए।

यह बात क़ाबिले क़द्र है कि मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी साहब ने इस ज़रुरत को महसूस किया और हज़रत थानवी (रह०) के तर्जुमे को सामने रखते हुए हिन्दी भाषा में क़ुर्आन शरीफ़ का तर्जुमः व तफ़्सीर किया है, अगरचे यह फ़क़ीर अपनी मस्रूफ़ियत की वजह से इसको एक-एक शब्द नहीं देख सका, लेकिन हज़रत थानवी (रह०) के तर्जुमे को बुनियाद बनाना इस तर्जुमे व तफ़्सीर की सिक़ाहत (प्रमाण) के लिए काफ़ी है।

मेरी यह दुआ है कि अल्लाह इस ख़िद्मत को क़ुबूलियत से नवाज़े और ज़्यादा से ज़्यादा मुफ़ीद बनाए। (आमीन)

अरशद मद्नी

सदर, जमीअ़तुल् उ़ल्मा-ए-हिन्द

15 रजब 1435 हिज्री

15 मई 2014 ई०

सन्देश

प्रख़्यात विद्वान हज़रत मौलाना मुहम्मद सईदी मज़ाहिरी दामत बरकातहुम के क़लम से-

नाज़िम व मुतवल्ली मदरसा मज़ाहिरुल् उलूम (वक़्फ़) सहारनपुर (यू०पी०) इण्डिया

बिस्मिल्लाहिर्रह़्मानिर्रह़ीम

أحمدهُ وأصلىٰ عَلىٰ رسولهِ الكريم اما بعد لَقَدْ جَاءَ كُمْ مِّنَ اللهِ نُوْرٌ وَّكِتَابٌ مُّبِيْنٌ (المائدة)

इस्लाम एक मुकम्मल दीन, मुस्तक़िल तहज़ीब है, इस की शानदार तअ़लीमात व हिदायत में दिलों को मोह लेने वाली तासीर, आँखों को ख़ीरह कर देने वाली तस्वीर और नूर-ए-बसीरत से महरूम लोगों के लिए बसारत का तमाम सामान मौजूद है, खुद हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा (सल्ल०) का वजूद, उन की तअ़लीमात व हिदायत उन का किरदार व गुफ़्तार (स्वभाव) और उन का उस्व-ए-हस्ना ही अल्लाह तआ़ला का तमाम इन्सानों के लिए सरापा लुत्फ़ व करम और फ़ज़्ल व मेहरबानी थी, फिर इस पर मज़ीद करम यह फ़रमाया कि अपनी किताब हिदायत से नवाज़ा, जो इब्ने आदम के लिए बाइसे निजात और अब्दी (हमेशा के लिए) सआ़दत है।

समय के गुज़रने के साथ ख़ैरुल् कुरून के इन्सानी सोच व फ़िक्र में शैतानी मिलावट और शैतानी बन्दों के ज़रिये फैलाई जाने वाली बद्गुमानियों की वजह से आज इस कलामे हिदायत की तरवीज और इस के इफ़्हाम व तफ़्हीम की ज़रुरत मज़ीद बढ़ जाती है।

शुक्र की बात है कि इस सिल्सिले में उ़ल्मा-ए-दीन क़ाबिले क़द्र ख़िद्मात अन्जाम दे रहे हैं और इस के बेहतरीन नतीजे व अस्रात साहिबान-ए-बसीरत बचश्म खुद महसूस कर रहे हैं।

हिन्दुस्तान एक एशियाई मुल्क है, जहाँ दीगर ज़बानों के अ़लावा हिन्दी भी बोली लिखी और पढ़ी पढ़ाई जाती है, गोया ज़बान अ़रबी, उर्दू और अंग्रेज़ी के मुक़ाबिले में निहायत महदूद हल्क़े में इस्तेमाल होती है, लेकिन दीन का दर्द रखने वाले हज़रात ने इस से पहलू तही नहीं की, कुर्आनी तअ़लीमात से आगाह व रुशनास कराने के लिए मुख़्तलिफ़ अन्दाज़ में तर्जुमे किये गये और कुर्आन के पैग़ामात को कुर्आनी तक़ाज़ों के मुताबिक़ आ़म व ताम करने की कोशिशें की गईं और अल्हम्दुलिल्लाह इस के बेहतरीन नतायज सामने आए।

मुझे यह मालूम होकर खुशी हुई कि दारुल् उलूम नद्वतुल् उल्मा लखनऊ के एक आलिमे दीन 'जनाब मौलाना मुफ्ती मुहम्मद सरवर फारुकी नदवी' गैर मुस्लिमों में दअवत व तब्लीग के लिए कोशाँ और फ़िक्रमन्द हैं, इस सिल्सिले में उन्होंने मुख़्तलिफ़ किताबें और किताब्चे भी मुरत्तब व शाया किये हैं।

इसी तरह उन्होंने कुर्आन करीम के दअवती उस्लूब को मद्देनजर रखते हुए हिन्दी ज़बान में “तफ़्सीर फ़ारुकी” के नाम से बाबरकत सिल्सिला शुरु किया है, जिस की जिल्द अव्वल मेरे पास बग़र्ज़ तक़्रीज़ पहुँची है।

मैं अपनी मस्रुफ़ियत और हिन्दी ज़बान से वाक़्फ़ियत न होने की वजह से इस किताब का मुतअला करने से माज़ूर हूँ, लेकिन हिन्दी जबान से वाकिफ़ बाज़ उल्मा ने मौलाना मौसूफ़ की इस किताब की इफ़ादियत और अहमियत और इब्तिदाई मरहले में दअवते दीन के इफ़्हाम और उस की तफ़्हीम के लिए इन के इस मुस्बत कदम की तअरीफ़ व तहसीन की है।

अल्लाह तआला मौलान-ए-मोहरत की इस कोशिश व काविश को शर्फ़ कुबूल और मक़ामे कुबूलियत अता फ़रमाए- وما ذٰلک علی اللہ بعزیز

अल् अ़ब्द

नाज़िम व मुतवल्ली मदरसा मज़ाहिरुल् उ़लूम (वक़्फ़) सहारनपुर
15 रबीउलव्वल 1435 हि०
06 फ़रवरी 2014 ई०

भूमिका

प्रख्यात विद्वान तथा श्रेष्ठ साहित्यकार ह़ज़रत मौलाना सई़दुर्रह़मान आज़्मी नदवी मद्दज़िल्लहुलुआ़ली के क़लम से-

<u>'चान्सलर'</u>, इन्टीग्रल यूनिवर्सिटी व 'प्रधानाचार्य' और 'सम्पादक' अल्बअ़सुल इस्लामी (अ़रबी मासिक पत्रिका) दारुल् उलूम, नदवतुल उलमा, लखनऊ (यू० पी० इण्डिया)

बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम

अल्ह़म्दुलिल्लाहि रब्बिल्आ़लमीन वस्सलातु वस्सलामु अ़ला सय्यिदिल्मुर्सलीन व इमामिल् मुत्तक़ीन व अ़ला मन तबिअ़हुम बिइहसानि इला यौमिद्दीन

अम्मा बअ़द!

क़ुर्आन करीम अल्लाह का कलाम (ईशवाणी) है, यह रहती दुनिया तक इन्सानी ज़िन्दगी की भरपूर रहनुमाई करता रहेगा और क़ायनात, ज़िन्दगी और इन्सान सब के लिए हमेश-हमेश रौशनी का मनार (ज्ञान का प्रतीक) बन कर क़ायम रहेगा और ज़िन्दगी के तमाम मसायल (समस्याओं) का हर ज़मान व मकान (काल व स्थान) में फ़ित्री (स्वभाविक) ह़ल पेश करता रहेगा, ज़माना चाहे जितना बदल जाये, इल्म चाहे जितना तरक़्क़ी कर ले, साइंस व टेक्नालाजी के मैदान में इन्सान चाहे कितना ही आगे बढ़ जाये, तरह़-तरह़ के हैरत अंगेज़ दरयाफ़्तों (अन्वेषणों)से इल्म का सीना कितना ही मअ़मूर (परिपूर्ण) हो जाये मगर अल्लाह के कलाम की रहनुमाई पूरी ताक़त के साथ अपना मुअ़जिज़ः (चमत्कार) दिखाती रहेगी, तारीख़ अपने हैरत अंगेज़ सफ्ह़ात में इज़ाफ़ा करती रहेगी, ज़मीन का सम्बन्ध आसमान से गहरा व मज़बूत होता जाएगा, ईमान व यक़ीन (आस्था) अपने क़ायदाना क़िरदार तमाम तारीक़ी गोशों को रौशन करते रहेंगे, इन्सान के अन्दर रौशनी की तलाश में शदीद इस्रार का जज़्बा पैदा होता रहेगा और कोई माद्दी ताक़त इसको तलाश सुब्ह़ रौशन से रोकने में कामियाब न हो सकेगी, यह वह ह़क़ीक़तें हैं। जो रसूल (सल्ल०) की अ़मली सीरत (जीवनी) में पूरी तरह़ मौजूद हैं।

क़ुर्आन करीम अपनी बेपनाह वुस्अ़त (विशालता) के लिहाज़ से रौशनी दर रौशनी का एक बह्र मौव्वाज (अथाह समुद्र) है, उसी के रहनुमा दाइमी वसूलों (प्राकृतिक नियमों) पर नौअ़े बनी इन्सान (इन्सानी बिरादरी) का वजूद क़ाइम है, इसलिए हमारी सबसे पहली ज़रूरत यह है कि हम इस किताबे जावेदाँ से मुकम्मल तौर पर फ़ायदा उठाने के लिए इसके मअ़ना व मतलब (अर्थ व व्याख्या) को समझने उसके ह़क़ायक, और बारीकियों पर ग़ौर करने और ज़िन्दगी के माज़ी, ह़ाल, मुस्तक़बिल (भूत, वर्तमान, भविष्य) को समझने और उसको रौशन करने की राह में अपना इल्मी सफ़र शुरू करें, और सबसे पहले

इस किताबे अज़ीम के मआ़नी व मफ़ाहीम का इदराक (गूढ़ ज्ञान) ह़ासिल करने के लिए उसकी आयतों के तर्जुमः पर ग़ौर करें और देखें कि कामियाब ज़िन्दगी के लिए कितना ज़रूरी और नागुज़ीर है।

यूँ तो इस किताबे अज़ीज़ के बहुत सी ज़बानों में तर्जुमें हो चुके हैं, और लोगों नें बक़द्रे ज़र्फ़ (अपनी योग्यता के अनुसार) उनसे फ़ायदा भी उठाया है, हमारे इस मुल्क में हिन्दी ज़बान में क़ुर्आन करीम के तर्जुमे मुख़्तलिफ़ इदारों और शख़्सियात की तरफ़ से शाअे (प्रकाशित) हो कर मक़्बूल हो चुके हैं।

"लेकिन अभी तक किसी ऐसे आ़लिमे दीन की तरफ़ से जिसको हिन्दी ज़बान पर पूरी तरह़ उबूर ह़ासिल हो और वह अ़रबी ज़बान की रुह़ को समझ कर हिन्दी ज़बान में मुन्तक़िल करने की भरपूर सलाह़ियत (योग्यता) रखता हो, कोई काम न हो सका था"।

हमें इस बात का एतिराफ़ करने में निहायत ख़ुशी हो रही है कि हमारे ह़लक़-ए-नद्वतुल् उ़लमा की तरफ़ से यहाँ के आ़लिमे दीन 'मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी' जो अ़रबी, उर्दू, हिन्दी के माहिर मायानाज़ अदीब (साहित्यकार) आ़लिम और सह़ाफ़ी (पत्रकार) क़ुर्आन करीम का हिन्दी ज़बान में एक निहायत ही क़ाबिले उसूक और अ़रबी ज़बान की रूह़ से क़रीब तर हिन्दी तर्जुमः व तफ़्सीर पेश कर रहे हैं इस तर्जुमः व तफ़्सीर की चन्द ख़ुसूसियात पेश की जा रही हैं।

तर्जुमः की ख़ुसूसियात-

1- इससे क़ब्ल चन्द उर्दू के तर्जुमें हिन्दी रस्मुलुख़त (लिपि) में तब्दील किये गये लेकिन उनमें बअ़ज़ लोगों ने ख़ालिस उर्दू ज़बान का इस्तेमाल किया जिससे हिन्दीदाँ या ग़ैर मुस्लिम बिल्कुल नावाक़िफ़ हैं, और बअ़ज़ लोगों ने सख़्त हिन्दी का इस्तेमाल किया, जिस की वजह से मुसलमानों के लिए बिल्कुल नाक़ाबिले फ़हम हो गया, इसकी वजह मेरे नज़्दीक यह है कि अगर मुतर्जिम अ़रबीदाँ या आ़लिमे दीन जो तमाम इस्तिलाह़ात (पारिभाषिक शब्दों) से वाक़िफ़ होता, तो तर्जुमः का सह़ी फ़ायदा हिन्दादाँ तबक़ः को निहायत अच्छे और अ़मली अन्दाज़ में पहुँचता, और इसका बुनियादी मक़्सद पूरा होता, इसलिए ज़रूरत थी कि ऐसा तर्जुमः व तफ़्सीर जो अस्ल अ़रबी से क़रीबतर और अल्फ़ाज़ दर्मियानी, यानी न सख़्त हिन्दी हों, और न सख़्त उर्दू, तो इसमें इन्होंने दोनों की रिआ़यत की है।

2- इस की ज़बान (भाषा) में उन्हीं अल्फ़ाज़ का इस्तिमाल हुआ है जो क़ुर्आनी हैं और समाज में भी इस्तेमाल होते हैं। जैसे 'ज़ालिम' उर्दू का लफ़्ज़ है लेकिन आ़म फ़हम है जबकि हिन्दी में उसको 'अत्याचारी' कहते हैं, इस तरह़ 'क़रीब' बमअ़ना 'समीप' लेकिन क़रीब सभी लोग समझते हैं इस लिए इसी को इस्तेमाल किया है।

3- इसी तरह़ वह अल्फ़ाज़ जो मुसलमानों के यहाँ कस्रत से इस्तेमाल होते हैं। जैसे- रह़मत, मग़्फ़िरत, रह़मान, रह़ीम वग़ैरह लेकिन हिन्दू भाई बिल्कुल ना वाक़िफ़ होते हैं। तो ऐसे अल्फ़ाज़ की तशरीह़ ब्रेकेट में कर दी गई है।

4- इसी तरह़ उन अल्फ़ाज़ से एहतियात की गई है जिसके माने पहले कुछ थे और अब वही अल्फ़ाज़ दूसरे अर्थ में इस्तिमाल होने लगे हैं।

5- इस के तर्जुमः में अस्ल क़ुर्आन के अल्फ़ाज़ को सामने रखा गया है ताकि माने अस्ल अ़रबी से क़रीब हो।

6- इसी तरह़ इस्तिलाह़ी तर्जुमः के साथ लफ़्ज़ी रिआयत भी की गई है, जिसकी वजह से यह कोशिश हर ह़ल्क़े के लिए मुफ़ीद व मक़्बूल बन गई है, ख्वाह वह अअ़्ला तअ़्लीम यफ़्ता तबक़े से तअ़ल्लुक़ रखता हो या अ़ाम लोगों से मुतअ़ल्लिक़ हो।

तफ़्सीर की ख़ुसूसियत-

यह तफ़्सीर ख़ासतौर पर अ़ाम मुस्लिम व ग़ैर मुस्लिम मर्दों, औ़रतों और तल्बा व तालिबात **(Students)** के लिए तैयार की गई है। इसलिए ऐसे शब्द जो अ़वाम की समझ से बाहर हों अख़्तियार नहीं किये गये और कोशिश इस तरह़ की गई है कि दर्स के तौर पर रोज़ाना एक-एक सबक़ पढ़ा जा सके। तफ़्सीर व तशरीह़ में मोअ़तबर उ़लम-ए-मोह़क़्क़ीन और सल्फ़ व सालिह़ीन की तफ़ासीर **(Authentic लोगों)** से ही इस्तिफ़ादा किया गया है

१- यह सूरः फ़ातिह़ा से लेकर मुकम्मल पाँच पारों की तफ़्सीर है।

२- यह पाँच पारों की तफ़्सीर मुस्लिम व ग़ैर मुस्लिम मर्दों और औ़रतों को सामने रखते हुए आम भाषा में लिखी गई है ताकि कम पढ़े लिखे भी फ़ायदा उठा सकें।

३- तफ़्सीर में ह़दीस और मोअ़तबर **(Authentic)** उलमा की तफ़्सीरों से फ़ायदा उठाया गया है।

४- इस में रोज़ (प्रतिदिन) पढ़ने के ह़िसाब से लगभग दस-दस आयतों का तर्जुमः फिर हर आयत की अलग-अलग तफ़्सीर बयान की गई है।

५- इस में पहले पूरी सूरः का खुलासा (संक्षेप) और उसके विषय, फिर लगभग दस-दस आयतों का तर्जुमः उसके बाद हर आयत की अलग-अलग तफ़्सीर जिसमें सबसे पहले उस आयत का शाने नुज़ूल (नाज़िल होने के वक़्त की ह़ालत) फिर उस आयत से सम्बन्धित ह़दीस और मोअ़तबर उ़लमा की तफ़्सीर की रौशनी में तफ़्सीर, फिर मसायल, एह़काम और उस आयत से सम्बन्धित नई साइंसी तह़क़ीक़ और ग़ैर मुस्लिमों की तरफ़ से होने वाले सवालों का बेहतर तरीक़े से जवाब के साथ उस से मुतअ़ल्लिक़ फ़ज़ायल जो सह़ी ह़दीसों से साबित है ज़िक्र किया गया है।

इन तमाम खुसूसियात की बिना पर जनाब "मौलाना मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी साह़ब" का यह इल्मी तोह़फ़ा उनकी यह इल्मी काविश हमारे इस मुल्क के हिन्दीदाँ तब्क़े के लिए ख़ास तौर पर बेइन्तिहा ज़रूरी और मुफ़ीद है। दुआ़ है कि अल्लाह तआ़ला मौलाना की ख़िद्मते क़ुर्आन से मुतअ़ल्लिक तमाम कोशिशों को क़बूलियते आ़म से सरफ़राज़ फ़रमाए और अपने शायाने शान जज़ा-ए-ख़ैर से नवाज़े।

आमीन-

सईदुर्रह़मान आ़ज़मी नदवी

'चान्सलर' *इन्टीग्रल यूनिवर्सिटी,* प्रधानाचार्य व
'सम्पादक'-अल्बासुल् इस्लामी
नदवतुल उलमा, लखनऊ
19 रबीउस्सानी 1430 हि०, मुताबिक़ 16-4-2009 ई०

सन्देश

प्रख़्यात इस्लामी विश्व विद्वान हज़रत मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रहमानी मद्दज़िल्लहुल आली के क़लम से-

नाज़िम अल् मअ़हदुल् आली इस्लामी हैदराबाद व जनरल सेक्रेट्री इस्लामिक फ़िक़ः अकेडमी, इण्डिया व सेकेट्री आल इण्डिया मुस्लिम पर्सनल ला बोर्ड

अल्लाह तआ़ला ने हर क़ौम में उस की हिदायत के लिए उन्हीं की ज़बान में समझाने वाले पैग़म्बर भेजे हैं, ताकि वह अल्लाह के पैग़ाम और उस की रहनुमाई को पूरे तौर पर समझ सकें: وما ارسلنا من رسول الا بلسان قومه लेकिन इस्लाम एक आफ़ाक़ी मज़हब है, जो जुग़राफ़ियाई (भौगोलिक) और लिसानी हुदूद (भाषाई सीमा) में महदूद (सीमित) नहीं, बल्कि सारे आ़लम और हर ज़बान बोलने वालों के लिए यकसाँ क़ाबिले इत्तिबअ़ है, चुनाँचे आख़िरी रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर नाज़िल होने वाली किताब क़ुर्आन मजीद भी अगरचे मख़्सूस ख़ित्ते (विशेष भूभाग) में नाज़िल होने की वजह से अ़रबी ज़बान में है, मगर उस का पैग़ाम सारी इन्सानियत के लिए आ़म है। इसी सन्दर्भ में अम्बिया के वारिसीन व तर्जुमान उ़ल्मा-ए-किराम अपने-अपने इलाक़ों की भाषा में क़ुर्आन पाक के तर्जुमे और उसकी तफ़्सीर करते रहे हैं, चुनाँचे दुनिया की लगभग 18 सौ भाषाओं में क़ुर्आन के पैग़ाम को मुन्तक़िल (अनुदित) किया जा चुका है और अब भी यह सिल्सिला जारी है।

हमारे मुल्क की सरकारी भाषा और बिरादराने वतन में बोली जाने वाली भाषा और राब्ते का काम करने वाली भाषा “हिन्दी” है, इस भाषा में भी क़ुर्आन पाक के बहुत से तर्जुमे शाया हो चुके हैं, मगर क़ुर्आन को एक पैग़ाम की शक्ल में, दअ़वती उस्लूब और आसान अन्दाज़ में पेश करने की ज़रुरत थी, चुनाँचे मुहिब्बी फ़िल्लाह जनाब ‘मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी’ (सदर जमअ़ीयत पयामे अम्न, लखनऊ) ने इसी अन्दाज़ में क़ुर्आन पाक के तर्जुमे व तश्रीह की कामियाब कोशिश की है।

इस तफ़्सीर में सब से पहले “सूरः का तआ़र्रुफ़” के उ़न्वान (शीर्षक) से हर रुकूअ़ का खुलासा पेश किया है, फिर आयतों के तर्जुमे और हर आयत के मुतअ़ल्लिक़ तफ़्सीर, अस्बाबे नुज़ूल, फ़ज़ीलत, ज़रुरी मसायल और आयत के पैग़ाम को बयान किया गया है। तफ़्सीर के दौरान हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ीअ़ साहब (रह०) की “मआ़रिफ़ुल् क़ुर्आन” के अ़लावा अस्लाफ़ की मुतअ़द्दिद कुतुब तफ़्सीर से इस्तिफ़ादा किया गया है और हस्बे ज़रुरत अ़क़्ल व साइंस की रौशनी में बाज़ इश्कालात के जवाब भी दिये गये हैं। एक ख़ास बात इस तफ़्सीर की यह है कि हर आयतों के अलग-अलग नम्बर डाल कर आयतों की तश्रीह की गई है, ताकि लोग थोड़ा-थोड़ा वक़्त निकाल कर आसानी के साथ फ़ायदा उठा सकें और तल्बा व तालिबात भी अलग-अलग सबक़ के तौर पर इसे पढ़ सकें।

मुअल्लिफ़ को अल्लाह तआ़ला ने दअ़वती शुऊ़र से नवाज़ा है और इस सिल्सिले में उन की ख़िद्मात बहुत वक़ीअ़ हैं, चुनाँचे इस तर्जुमे व तफ़्सीर में भी ग़ैर मुस्लिम भाईयों की नफ़्सियात का लिहाज़ रखा गया है, इस से पहले इस की चार जिल्द शाया हो चुकी हैं, अब यह तक्मील के मरह़ले में है और इस की पाँचवीं जिल्द पाठकों के हाथों में है।

दुआ़ है कि मुअल्लिफ़ (संकलनकर्ता) की यह ख़िद्मत इन्दल्लाह और इन्दन्नास मक़्बूल हो, बन्दग़ाने ख़ुदा के लिए हिदायत का ज़रिया बने और मुअल्लिफ़ (संकलनकर्ता) के लिए ज़ख़ीर-ए-आख़िरत साबित हो। والله هو المرفق وهو المستعان

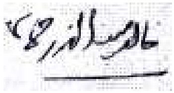

24 मुहर्रमुल् ह़राम 1434 हिज्री
18 नवम्बर 2014 ई०

ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रह़मानी
(नाज़िम, अल् मअ़हदुल आ़ली अल इस्लामी, हैदराबाद,
जनरल सेक्रेट्रीः इस्लामिक फ़िक़ः अकेडमी, इन्डिया)

सन्देश
हज़रत मौलाना सय्यद वाज़ेह रशीद हसनी नदवी मद्दज़िल्लहुलआली के क़लम से-

प्रधान सम्पादक 'अर्राइद' व मुदीर कुल्लियतुल्लुगा, दारुल उलूम, नदवतुल उलमा, लखनऊ)

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

क़ुर्आन करीम किताबे हिदायत है, और हिदायत इसका बुनियादी विषय है, इसके साथ-साथ इसमें अच्छी ज़िन्दगी के वसूल में इन्सानियत की फ़लाह है, जिस में समाज के सारे अफ़राद, और सारे समाजों की भालाई बयान की गई हैं, इन्सानी अख़लाक़ की आला क़दरें और काइनात के बारे में और तबिअ़ते इन्सानी, तख़्लीक़े इन्सानी की मालूमात हैं, जो अहले इल्म और दानिश के लिए इल्मी तहक़ीक़ात में गैर मामूली तरक़्क़ी के बावजूद इन्किशाफ़ात की हैसियत रखती हैं, वह जिस तरह ईमानवालों के लिए मुफ़ीद है उसी तरह वह दूसरे हल्क़ों के लिए जो हक़ीक़त और इल्म और ज़िन्दगी के बेहतर तरीक़ो को जानना चाहते हैं, मालूमात है, और जो जिस गोशा से मुतालअ़ (अध्यन) करता है उसके इल्म में इज़ाफ़ा होता है।

यह किताब जो हर तहरीफ़ और इन्सानी दख़ल से महफ़ूज़, आसमानी किताब है, और इस लिहाज़ से मुन्फ़रिद किताब है, हर मुतालअ़ करने वाले को अपनी तरफ़ खींचती है यहाँ तक कि मुख़ालिफ़ ज़ेहन रखने वालों को भी प्रभावित करती है, इसलिए मुश्रिकीने मक्का इसको सुनने से रोकते थे, इसके बावजूद जिस को ख़ुलूस की तलाश होती है वह उसका मुतालअ़ करते हैं।

इस्लाम और क़ुर्आन के बारे में इस्लाम दुश्मन हलक़ों की तरफ़ से हर दौर में ग़लतफ़हमी फैलायी गयी, लेकिन जिन लोगों ने इसका मुतालअ़ किया उनके ज़ेहनों से ग़लतफ़हमी बड़ी हद तक दूर हुई, बाज़ लोगों ने ख़ास तौर पर यूरोप ने मुख़ालिफ़ ज़ेहन से पढ़ा मगर उनको क़ुर्आन करीम ने, अपनी तरफ़ खींच लिया, और वह उसके आसमानी किताब होने के क़ायल हो गये।

मौजूदा दौर में इस्लाम और क़ुर्आन के ख़िलाफ बड़े ज़ोर से ग़लत प्रोपगेण्डा किया जा रहा है, इस प्रोपगेण्डा की वज़ह से भी, और हक़ीक़त की तलाश में भी क़ुर्आन करीम के मुतालअ़ का रूझान पैदा हुआ; मग़रिबी ज़बान में क़ुर्आन करीम के तर्जुमों की मांग बढ़ी, इस तरह़ हिन्दुस्तान में कई हिन्दी तर्जुमों की मांग भी बढ़ी।

उर्दू में बहुत से अहले इल्म के तर्जुमें मौजूद हैं, जिनमें मौलाना फतेह मो० साहब का तर्जुमः बहुत आसान और अ़रबी से करीब है, इसलिए बहुत मक़बूल है। <u>हिन्दी में जो तर्जुमः किये गये वह आ़म तौर पर उर्दू तर्जुमे सामने रखकर किये गये, जिनमें मौलाना मौदूदी और मौलाना अब्दुल करीम पारीख साह़ब का तर्जुमः है।</u>

"मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारूक़ी साहब" जो आलिमे दीन होने के साथ-साथ हिन्दी के भी सनद याफ़्ता आलिम हैं, इन्होने ज़रुरत महसूस की कि इन तर्जुमों को सामने रखकर एक तर्जुमः किया जाय जो हिन्दी ज़ेहन के लिए ज़्यादा क़ाबिले फ़हम हो, इसलिए कि बहुत सी इस्लामी तअबीरात तर्जुमों में इस्तिमाल हुई हैं, वह हिन्दुओं के लिए या सिर्फ़ हिन्दी जानने वालों के लिए क़ाबिले फ़हम नहीं होतीं, इन्होंने उन अल्फ़ाज़ की हिन्दी शरह कर दी है ताकि ग़ैर मुस्लिम ज़ेहन आसानी से समझ सके- जैसे मग्फ़िरत, रहमत, जज़ा, एक़ाब, एताब, यक़ीन, रसूल, पैग़म्बर वगैरह-वगैरह, यह ग़ैर मुस्लिमों के लिए क़ुर्आन के माने को बयान करने की कोशिश है बुनियाद मौलाना फ़तेह मुहम्मद साहब का तर्जुमः है। "मौलाना सरवर साहब" बहुत सी हिन्दी किताबों के मुसन्निफ़ हैं, और इससे पहले बहुत सी किताबों के तर्जुमे भी कर चुके हैं और अब तफ़्सीर का काम भी पूरा कर चुके हैं। अल्लाह तआला इस कोशिश को क़बूल फ़रमाए और इसको क़ुर्आन फ़हमी का ज़रिया बनाए और हिदायत के मिलने का उनवान बनाए।

वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
5 रबीउस्सानी 1425 हि०

सन्देश

हज़रत मौलाना अब्दुल् क़ादिर साहब नदवी मज़ाहिरी मद्दज़िल्लहुल्आली के क़लम से-

नायब मोहतमिम व उस्ताज़ दारुल उलूम नदवतुल् उलमा, लखनऊ,

बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम

क़ुर्आन मजीद अल्लाह की ऐसी किताब है, जो तमाम इन्सानों के लिए रहती दुनिया तक, ज़िन्दगी के हर शोअ़बे में बेहतरीन रहनुमाई के लिए, अल्लाह की तरफ़ से उतारी गयी, गोया यह परवरदिगार-ए-आ़लम का पूरी इन्सानियत के नाम एक अबदी पैग़ाम है लिहाज़ा इसको हर इन्सान तक पहुंचना चाहिए ताकि वह इससे फ़ायदा उठाकर अपनी ज़िन्दगी को हर मरहला में अच्छी तरह गुज़ार सके।

एक तरफ़ क़ुर्आन करीम की यह हैसियत है तो दूसरी तरफ़ उससे ना वाक़फ़ियत और दूरी का यह आ़लम है कि ग़ैर तो ग़ैर अपने भी उसके पैग़ाम से ना वाक़िफ़ हैं।

जब तक आ़म मुसलमानों में उर्दू से वाक़फ़ियत रही, तो फिर भी बात ग़नीमत थी कि उर्दू किताबों के वास्ता से भी बहरहाल कुछ वाक़फ़ियत हो जाती थी मगर तक़्सीमे मुल्क के बाद तो आहिस्ता-आहिस्ता उर्दू से इतनी दूरी होती चली गई कि अ़वाम तो अ़वाम ख़्वास नौजवान नस्ल, चाहे घरेलू माहौल की वजह से, कुछ उर्दू बोल ले मगर लिखने पढ़ने से बिल्कुल ना बलद हो गयी।

लिहाज़ा ज़रूरत थी कि क़ुर्आन पाक का तर्जुमः ऐसी ज़बान में किया जाये जिसको नई नस्ल जानती है, यानी मुल्की ज़बान हिन्दी में, हाँ हिन्दी में कुछ तर्जुमें ज़रूर हैं मगर वह आ़मतौर से ऐसे लोगों के किये हुए हैं जो आ़लिम न होने की वज़ह से उर्दू तर्जुमे को अस्ल मदार बनाने पर मजबूर थे लिहाज़ा ऐसे हिन्दी, तर्जुमे का तर्जुमा कहे जाने के ज्यादा लाएक़ हैं गोया वह कुरान के तर्जुमे के तर्जुमे हैं।

हमारे अज़ीज़े गिरामी 'मुफ़्ती मौलवी मुहम्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी साहब' ने जो नदवा से सनद याफ़्ता होने के साथ हिन्दी से भी वाक़िफ़ हैं, वाक़िफ़ ही नहीं बल्कि मुसल्सल इस तरह के कामों में लगे रहने की वज़ह से अ़वाम में समझी जाने वाली हिन्दी जो हिन्दुस्तानी ज़बान है उससे भी वाक़िफ़ हैं इन्होंने इस काम को अपने ज़िम्मे लिया है और एक हद तक उसको पाये तकमील तक पहुंचा कर एक हिस्सा शाए भी किया और अब पूरे क़ुर्आन का तर्जुमः शाए करने जा रहे हैं जिस पर वह मुबारकबाद के मुस्तहिक़ हैं।

क़ुर्आन पाक का तर्जुमः आसान बात नहीं न उसके लिए सिर्फ़ ज़बान दानी काफ़ी है बल्कि और भी बहुत कुछ इल्म व तजुर्बः ज़रूरी है लिहाज़ा तमाम तर कोशिशों के बावजूद कहीं लग़ज़िश हो गई हो तो उसके लिए वह हर तरह के मुफ़ीद मश्वरह के लिए फ़राख़ दिल हैं।

इन जुमला उमूर के पेशेनज़र यह हम सब अहले इस्लाम की तरफ़ से हिम्मत अफ़ज़ाई और शुक्रिया और दुआ़ओं के मुस्ताहिक़ हैं "जज़ा हुमुल्लाहु खैरन जज़ा."

10 रबीउस्सानी 1425 हिजूरी

अब्दुल क़ादिर नदवी
पट्टन, गुजरात

सन्देश
मुफ़स्सिरे क़ुर्आन हज़रत मौलाना मुफ़्ती फ़ुज़ैलुर्रहमान हिलाल उस्मानी मद्‌दज़िल्लहुल् आली के क़लम से-

रुक्न तासीसी (फ़ाउन्ड मेम्बर) आल इण्डिया मुस्लिम पर्सनल ला बोर्ड व सदर-दारुस्सलाम इस्लामी मर्कज़, मलियर कोटला पंजाब, अल् हिन्द

نَحْمَدُهٗ وَنُصَلّی عَلٰی رسولِهِ الکریم

क़ुर्आन करीम अल्लाह का आख़िरी पैग़ाम और आलमे इन्सानी के लिए मुकम्मल हिदायतनामा है। अल्लाह तबारक व तआला की अता की हुई नेअमतों में यह बेमिसाल और लाज़वाल नेअमत है। अल्लाह के आख़िरी रसूल ख़ातिमुन्नबीय्यीन हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा (सल्ल०) जिन पर अल्लाह की यह किताब नाज़िल हुई, उन्होंने अपने क़ौल व अमल से किताबे इलाही के पैग़ाम को पूरी तरह स्पष्ट कर दिया। बिलाशुब्हा क़ुर्आन व सुन्नत आलिमे इन्सानियत का क़ीमती सरमाया हैं।

हम इस पर शुक्र व मुसर्रत का इज़्हार करने में कोई तकल्लुफ़ महसूस नहीं करते कि उम्मते मुस्लिमा ने क़ुर्आन करीम की इशाअत और उस के इफ़्हाम व तफ़्हीम को हर दौर में अपने लिए सरमाया सआदत समझा है। न सिर्फ़ इस के मफ़्हूम और मआनी व मतालिब को हर ज़बान में पहुँचाने की कोशिश की है, बल्कि क़ुर्आन मजीद में जिन-जिन मक़ामात और चीज़ों का ज़िक्र आया है उन पर मुस्तक़िल किताबें लिखी हैं। आज अल्हम्दुलिल्लाह दुनिया की तमाम ज़बानों में क़ुर्आन मजीद के तर्जुमे और उस की तफ़्सीरें मौजूद हैं और यह सिलसिला बराबर जारी है।

हिन्दी ज़बान हमारे मुल्क हिन्दुस्तान की सरकारी ज़बान है और एक बहुत बड़ी तअदाद है जो इस ज़बान को समझती और लिखती है। हिन्दी में कई तफ़्सीरें और तर्जुमे मौजूद हैं, मगर हमारे मोहतरम "मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी" ने हिन्दी ज़बान में क़ुर्आन मजीद के तर्जुमे और तफ़्सीर की जो ख़िद्मत अन्जाम दी है वह कई एतिबार से बड़ी मुन्फ़रिद और मुम्ताज़ है। यह तफ़्सीर पाँच जिल्दों में मुकम्मल हुई है, पहली जिल्द में हम सब के मोहतरम व मख़्दूम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली नदवी नव्वरल्लाहु मर्क़दहु का पेशे लफ़्ज़ इस तफ़्सीर की ज़ीनत है।

क़ाबिले इत्मिनान बात यह है कि हमारे बहुत से उल्मा-ए-किराम जैसे मौलाना मुहम्मद राबेअ हसनी नदवी और मौलाना सईदुर्रहमान आज़मी नदवी इस इल्मी ख़िद्मत की सरपरस्ती करते रहे हैं। इस के अलावा मौलाना मुहम्मद सालिम क़ासमी मद्‌दज़िल्लहुल आली मोहतमिम वक़्फ़ दारुल् उलूम देवबन्द और 'मौलाना सय्यद अरशद मदनी' उस्ताज़ हदीस दारुल् उलूम देवबन्द ने भी अपने तअस्सुरात का इज़्हार किया है।

यह नाचीज़ मोहतरम मौलाना मुहम्मद सरवर साहब को इस अज़ीम ख़िद्मत पर दिली मुबारकबाद पेश करते हुए उम्मीद रखता हूँ कि इन्शाअल्लाह उन की इस ख़िद्मत से हिन्दी जानने वाले तब्क़े को ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा पहुँचेगा।

अल्लाह तआ़ला से दुआ़ है कि मौलाना की यह ख़िद्मत शर्फ़ क़ुबूलियत हा़सिल करे।

(मुफ़्ती) फ़ुज़ैलुर्रह़मान हिलाल उ़स्मानी
मलेरकोटला (पंजाब)
4 शाबान 1435 हि०
3 जून 2014 ई०

सन्देश

दाअ़ी-ए-इस्लाम ह़ज़रत मौलाना सय्यद अब्दुल्लाह ह़सनी नदवी (रह़०) के क़लम से-

भूतपूर्व सहसम्पादक 'अर्राइद' व उस्ताज़े ह़दीस, दारुल् उलूम नदवतुल उलमा, (लखनऊ)

बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम

कु़र्आन इन्सानियत की हिदायत (रहनुमाई) की आख़री और वाह़िद किताब है। जिसके बिना कोई भी इन्सान हिदायत के रास्ता पर नहीं आ सकता। अल्लाह ने यूँ तो बहुत से हिदायत नामे भेजे और उन से बहुत से लोगों को हिदायत का रास्ता मिला, लेकिन उसको लोगों ने बदल डाला, और कुछ का कुछ कर दिया, जिसका एतिराफ़ उनके मानने वाले ख़ुद करते हैं, इस लिए यह ज़रूरत क़ियामत तक बाक़ी रहेगी कि कु़र्आन मजीद के तर्जुमे दुनिया भर की ज़बानों में किये जाते रहें, ताकि तमाम दुनिया के सामने रौशनी आ जाए।

अल्ह़मदुलिल्लाह, यह सिल्सिला अर्सा से जारी है, हमारा मुल्क जिसमें बसने वालों की तअ़दाद एक अ़रब से आगे जा रही है, के लिए जितने तर्जुमों की ज़रूरत थी उसमें बहुत कोताही होती रही, पहले तो तर्जुमे का अ़मल भी बहुत देर से ह़ज़रत ह़कीम शाह वलीउल्लाह साह़ब के ज़रिये बाक़ाइदा शुरू हुआ फिर तो एक सिल्सिला शुरू हो गया। लेकिन वह तमाम तर्जुमे उर्दूदाँ या फ़ारसीदाँ ह़ज़रत के लिए थे, हमारे मुल्क की सब से ज़्यादा बोली जाने वाली हिन्दी ज़बान जो सरकारी ज़बान भी है। हिन्दी में तर्जुमें की बहुत कमी थी, अगर तर्जुमें कुछ हुए भी तो उन में कु़र्आनी तर्जुमें के आदाब का पूरा लिहाज अक्सर तर्जुमे करने वालों ने नहीं रखा, ज़रूरत थी कि कोई अच्छा हिन्दीदाँ जो अ़रबी से भी वाकिफ़ हो इस काम को अन्जाम देता, और वह अस्ल में किसी उर्दू तर्जुमे को सामने रख कर हिन्दी का जामा पहनाता।

बड़ी ख़ुशी की बात है कि 'दारुल उलूम नदवतुल उलमा' के फ़ाज़िल 'मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी साह़ब नदवी' ने मौलाना फ़तेह़ मुह़म्मद ख़ाँ साह़ब जालन्धरी के तर्जुमे को सामने रखते हुए हिन्दी में तर्जुमानी की कोशिश की है, फ़तेह़ मुह़म्मद ख़ाँ साह़ब का तर्जुमः मुफ़क्किरे इस्लाम हज़रत मौलाना सय्यद अबुल ह़सन अ़ली नदवी (रह़०) को बहुत पसन्द था और इसकी तअ़रीफ़ किया करते थे, जो इसके मुस्तनद और मोअ़तबर होने के लिए काफ़ी है, अल्लाह तआ़ला इस तर्जुमानी व तफ़्सीर को क़बूल फ़रमाये और तमाम गुमराह लोगों के लिए इसको हिदायत का ज़रिया बनाये।

अब्दुल्लाह ह़सनी नदवी

15 रजब 1419 हि०

सन्देश

हज़रत मौलाना शम्सुल हक़ साहब नदवी मद्दज़िल्लहुल्आली

(प्रधान सम्पादक, तअमीर-ए-हयात व उस्ताज़ दारुल् उ़लूम, नद्वतुल उ़ल्मा, लखनऊ)

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्आलमीन वस्सलातु वस्सलामु अ़ला रसूलिहिल्करीम ख़ातिमुन्नबीय्यीन मुहम्मद बिन अ़ब्दिल्लाहि अस्सादिकुल अमीन व अ़ला अहलि बैतिही व अस्हाबिही अज्मईन।

निहायत ख़ुशी व मसर्रत की बात है कि हमारे क़ाबिले क़द्र नदवी फ़ाज़िल "मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी" ने मुल्क के मौजूदा माहौल में जिसमें बिरादराने वतन के अ़लावा ख़ुद हमारे अपने मुस्लिम नौजवान, मुल्क की आज़ादी के बाद सरकारी स्कूलों का निसाब बदल जाने और हिन्दी ज़बान के रिवाज पा जाने की वजह से सरकारी काम और तमामतर लिखा-पढ़ी का काम भी हिन्दी में होने की वजह से हिन्दी ही पढ़ते हैं, चूंकि उनकी निगाहों के सामने मुलाज़िमत होती है, इसलिए उर्दू का नज़्म होने के बावजूद उसको नहीं पढ़ते, जिसका नतीजा यह है कि वह अपने दीन व अ़क़ीदा की बुनियादी चीज़ों से भी नावाक़िफ़ होते हैं; बल्कि उनका ज़ेहन हिन्दी ज़बान में पढ़ने की वजह से ग़ैर शुऊरी तौर पर उन चीज़ों को कुबूल करने लगता है, जो हमारी इम्तियाज़ी तहज़ीब व सक़ाफ़ते दीन व अ़क़ीदा के बिल्कुल ख़िलाफ़ होती हैं।

इसलिए कि हर ज़बान व अदब का यह तबई और फ़ित्री तक़ाज़ा है कि उस ज़बान के लिखने बोलने वालों का जो अ़क़ीदा, रस्म व रिवाज और आदाब व तस्लीम के जो तौर तरीक़े होते हैं, उस ज़बान पर उनकी छाप होती है और वह अपने पढ़ने वालों पर अपना असर डालते हैं, लिहाज़ा इसकी शदीद ज़रुरत है कि अब इस्लामी उलूम को भी इस ज़बान में मुन्तक़िल किया जाए इसलिए कि इसके बग़ैर न तो ख़ुद हमारी नई नस्ल अपनी दीनी मिल्ली ख़ुसूसियात को जान पहचान सकती है और न ही हम अपने बिरदराने वतन को इस्लाम के उस पैग़ामे अब्दी से रुशनास करा सकते हैं जो तमाम इन्सानों के लिए है और हक़ीक़त यह है कि सदियाँ गुज़र गईं और हम अपने साथ रहने बसने वाले ग़ैर मुस्लिम भाईयों को ज़िन्दगी के उन हक़ाएक़ से मुतआ़रफ़ नहीं करा सके, जिन पर इन्सानियत की फ़लाह़ और कामियाबी का इन्हिसार है।

क्या यह बात क़रीने क़यास नहीं कि कल क़ियामत के दिन हमारे यह भाई हम पर यह दावा करेंगे, कि ऐ आ़क़ा! हमारी क्या ख़ता है जिन लोगों को यह दौलत मिली थी और जिसको यह ख़ैर-ए-उम्मत का ताज पहनाकर कहा गया था, कि तुमको लोगों में इसलिए बरपा किया गया है कि "तुम भलाई का हुक्म देते हो और बुराई से रोकते हो"। उन्होंने हमें इससे बेख़बर रखा वह दुनिया की दूसरी क़ौमों की तरह दुनियावी ही चीज़ों को सामने रखकर अपना क़ौमी इम्तियाज़ ज़ाहिर करने में लड़ते और उलझते रहे,

हमको ह़क़ीक़त से बेख़बर रखा, उनको उस वक़्त भी ख़याल न आया जब अख़्लाक़ व शराफ़त से आरी बेहयाई और फ़ुह़शकारी के आदी लोग अपनी मन-मानी ज़िन्दगी ह़क़ाएक़े इस्लाम के रुकावट बनने के डर से, उनके ख़िलाफ़ दहशतगर्दी और इन्सानी दुश्मनी का प्रोपगण्डा करते रहे।

यही वजह थी कि वह नबी-ए-रह़मत वह रह़मते आ़लम जो पूरी इन्सानियत के लिए मब्ऊ़स फ़रमाये गये थे, अपनी ज़बान अ़रबी होने के बावजूद और उनकी ज़बान में कलाम-ए-रब्बानी नाज़िल होने के बावजूद अपने सह़ाबा को दूसरी क़ौमों की ज़बान सिखाकर उनमें इस पैग़ाम-ए-रह़मत को पहुँचाने के लिए भेजा है।

हमें निहायत ख़ुशी व मसर्रत है कि नद्‌वतुल उ़ल्मा जिसकी बुनियाद ही इस पर पड़ी थी कि हालात के रुख़ और माहौल को सामने रखकर काम किया जाए और उसके फ़ाज़िलों को वक़्त की ज़बान में बात करने का सलीक़ा सिखाया जाए ताकि वह दीन की ख़िद्‌मत का ह़क़ अदा कर सकें। इसके एक फ़ाज़िल मौलाना मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी ने अच्छी आसान हिन्दी ज़बान में क़ुर्आन करीम का तर्जुमः कर दिया है जो हमारी नई नस्ल के लिए ज़रुरी है और बिरादराने वतन तक, जिसकी रौशनी पहुँचाने का भी ज़रिया है। मौसूफ़ ने तर्जुमः में अ़रबी उर्दू के तमाम मुफ़स्सिरीन ख़ासतौर से "फ़तेह़ मुह़म्मद ख़ाँ साह़ब" और "मौलाना अशरफ़ अली थानवी" (रह़०) के तर्जुमः को सामने रखकर काम किया है जो दिलकश भी है और आ़म फ़हम भी।

हमारी दुआ़ है कि अल्लाह तआ़ला इससे ज़्यादा फ़ायदा पहुँचाए।

आमीन या रब्बल् आ़लमीन

शम्सुल ह़क़ नदवी
नद्‌वतुल उ़ल्मा, लखनऊ
5 रबीउस्सानी 1425 हि०

सन्देश

हज़रत मौलाना मुहम्मद ज़करिया नदवी मद्दज़िल्लहुल् आली के क़लम से-

(उस्ताज़ हदीस व अमीद कुल्लियतुश्शरीआ, दारुल् उलूम नद्वतुल उलमा, लखनऊ)

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल् आलमीन वस्सलातु वस्सलाम अला रसूलिहिल् करीम, अम्मा बअद।

अल्लाह तआला ने मोहतरम "मुफ़्ती मुहम्मद सरवर साहब फ़ारुक़ी" को बहुत सी दीनी किताबें उर्दू, हिन्दी ज़बान में लिखने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाई है और इनको मुसलमानों और ग़ैर मुस्लिमों में बहुत कुबूलियत से भी नवाज़ा है। नीज़ बहुत लोगों की सही रहनुमाई और हिदायत का ज़रिया भी बनाया है, ख़ुसूसन इनकी दर्जनों हिन्दी किताबों ने बहुत अहम दअवती काम किया है और ग़ैर मुस्लिमों में दीन की दअवत के मैदान में वह बहुत मुफ़ीदकार आमद और नतीजाख़ेज़ रही हैं। इन की हिन्दी किताबों में क़ुर्आन मजीद का तर्जुमः और तफ़्सीर ख़ासतौर पर बहुत अहम है। तर्जुमः क़ुर्आन हिन्दी के तो कई एडीशन चन्द सालों में शाया हो चुके हैं जो इस तर्जुमे के मुफ़ीद व मक़्बूल होने की दलील हैं।

इसी तरह हिन्दी तफ़्सीर जिसका यह भाग आप के हाथ में है।

अल्लाह ने इनकी हिन्दी से वाक़्फ़ियत को इनके लिए इतना मुफ़ीद बना दिया है जिस का अन्दाज़ा करना इनकी किताबों और हिन्दी तर्जुमः क़ुर्आन पाक और हिन्दी "तफ़्सीर फ़ारूक़ी" को पढ़े बग़ैर मुश्किल है। क़ुर्आन मजीद की तफ़्सीर व तर्जुमः का काम ख़ासतौर से हिन्दी में बहुत मुश्किल है। हिन्दी पढ़ने वालों के मज़हब ज़ौक़ व मिज़ाज को सामने रखते हुए यह काम करना जितना ज़रूरी है उतना ही मुश्किल है लेकिन बस तौफ़ीक़ की ज़रूरत है जिस ने मौलाना से इतना बड़ा काम ले लिया है। इनकी हिन्दी "तफ़्सीर फ़ारूक़ी" का अन्दाज़ कुछ इस तरह हैः-

पहले पूरी सूरत का ख़ुलासा शुरु में लिख देते हैं, फिर हर आयत का ख़ुलासा व मतलब फिर दस आयतों का ख़ुलासा अलग लिखते हैं। तफ़्सीर में उमूमन मुतअद्दिद तफ़्सीर मुफ़स्सिरीन की तफ़ासीर ही हैं जिसे हिन्दी में मुन्तक़िल करते हैं। इसके अलावा आयात के मतालिब की वज़ाहत के लिए रसूलुल्लाह (सल्ल०) की अहादीस भी नक़्ल करते हैं, जहाँ फ़िक़्ही मसायल की ज़रूर हुई है वहाँ फ़िक़्ही मसायल भी आसान और आम फ़हम हिन्दी ज़बान में लिखा है। क़ुर्आन और क़ुर्आन के मज़ामीन के सिलसिले में कहीं कहीं बाज़ हक़ीक़त पसन्द ग़ैर मुस्लिमों की राय भी ज़िक्र की हैं।

मजमूई तौर पर इनका यह अमली काम बहुत मुफ़ीद है और इसके बहुत अच्छे नतीजे सुनने में आये हैं। अल्लाह तआला मुफ़्ती साहब की उम्र और काम में बरकत अता फ़रमाये और इनकी मेहनत और कोशिशों को मज़ीद बार आवर करे।

इन्शाअल्लाह इस का अस्ल फ़ायदा तो रोज़े महशर ही में नज़र आएगा।

मुहम्मद ज़करिया

उस्ताज़, दारुल् उलूम, नद्वतुल् उलमा, लखनऊ

17 दिसम्बर 2013, 13 सफ़र 1335 हिज्री

सन्देश

हज़रत मौलाना मुफ़्ती अ़तीक़ अह़मद क़ासमी मद्दज़िल्लहुल् आ़ली के क़लम से-

(उस्ताज़, दारुल् उलूम नद्वतुल उ़लमा, लखनऊ व नाज़िम मअ़हदुश्शारिआ़, लखनऊ)

बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम

अल्लाह तआ़ला ने इन्सानों की हिदायत के लिए अम्बिया-ए-किराम भेजे और किताबें नाज़िल फ़रमाईं। नुबूव्वत की आख़िरी कड़ी ख़ातिमुन्नबीय्यीन ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) हैं और आख़िरी आसमानी किताब क़ुर्आन करीम है, जो ह़ज़रत जिब्रईल अमीन के ज़रिये रसूल-ए-अकरम (सल्ल०) पर उतारी गई। क़ुर्आन पाक अल्लाह तआ़ला का आख़िरी पैग़ाम है जो दुनिया के लिए भेजा गया, इन्सान की भलाई और निजात इसी में है कि क़ुर्आन करीम को पढ़े, समझे और उस पर अ़मल करे। उम्मते मुस्लिमा जो आख़िरी शरीअ़त और आख़िरी किताब की ह़ामिल है उस की ज़िम्मेदारी है कि क़ुर्आन व सुन्नत के पैग़ाम को सारे इन्सानों तक पहुँचाए। तौह़ीद की तब्लीग़ व इशाअ़त करे, लोगों को जहन्नम से बचाये और जन्नत के रास्ते पर ले जाने की कोशिश करे।

इस बात की सख़्त ज़रूरत है कि दुनिया की हर ज़बान में क़ुर्आन पाक के तर्जुमे और तफ़्सीरें लिखी जाएँ ताकि क़ुर्आन की तअ़लीमात और पैग़ाम ग़ैर मुस्लिमों और मुसलमानों तक पहुँचें और हिदायत की रौशनी में दुनिया चमक उठे।

हिन्दी ज़बान भी दुनिया की अहम तरीन ज़बानों में है, इस के बोलने और समझने वाले एक अरब के क़रीब हैं। हिन्दुस्तान के बहुत बड़े इलाक़े में कई सूबों में इस की पकड़ मज़बूत है, मुसलमानों की नई नस्ल इसी ज़बान को बोलती और समझती है, इसलिए इस बात की सख़्त ज़रूरत है कि क़ुर्आन पाक के तर्जुमे और तफ़्सीरें हिन्दी में की जाएँ, इस्लामी लिट्रेचर इस ज़बान में तैयार किया जाए और फैलाया जाए। इस काम की तरफ़ मुख़्तलिफ़ अफ़राद और जमाअ़तों ने कुछ तवज्जोह दी है, लेकिन काम का दायरा अभी बहुत तंग है, इसे बहुत उस्अ़त देने की ज़रूरत है।

हिन्दी ज़बान में इस्लामियात पर काम करने वालों में एक मोअ़तबर नाम जनाब 'मौलाना मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी' का है, जो दारुल उलूम नद्वतुल उ़लमा के होनहार फ़ाज़िल और हिन्दी ज़बान में बहुत सी किताबों के मुसन्निफ़ हैं, मुतवाज़ेअ़, मिलनसार और धुन के पक्के हैं, इन्होंने क़ुर्आन करीम का हिन्दी तर्जुमः किया है जिस के मुतअ़द्दिद एडीशन शाया कर चुके हैं। हिन्दी ज़बान में क़ुर्आन करीम की तफ़्सीर भी शाया कर रहे हैं, जिस की चार जिल्दें पहले शाया हो चुकी हैं।

अल्लाह तआ़ला से दुआ़ है कि मौलाना मौसूफ़ की यह दीनी ख़िद्मात अल्लाह की बारगाह में मक़्बूलियत ह़ासिल करें और बन्दगाने ख़ुदा को इन से ज़्यादा से ज़्यादा नफ़ा पहुँचे।

अ़तीक़ अ़हमद क़ासमी

उस्ताद दारुल् उलूम नद्वतुल उ़लमा लखनऊ

26-12-2013

सन्देश

हज़रत मौलाना मुहम्मद ख़ालिद साहब ग़ाज़ीपुरी नदवी के क़लम से-

उस्ताज़, हदीस, दारुल् उलूम नद्वतुल् उ़ल्मा, लखनऊ व
सदर- जमअ़यीतुल् मआ़रिफ़ लखनऊ।

इस जहान रंग वबू का ख़ालिक़ व मालिक अल्लाह तआ़ला है और जो जिस चीज़ का बनाने वाला होता है, वही उस की हक़ीक़त और मिज़ाज व तबीअ़त से ज़्यादह वाक़िफ़ होता है और उसकी फ़लाह व बहबूद और कामियाबी व कामरानी की जो तद्बीरें वह सोच सकता है और कोई नहीं सोच सकता और अल्लाह जो अरहमुर्राहिमीन है, अ़लीम व ख़बीर है और जो चाहे करने पर क़ुद्रत रखता है, ज़ाहिर है वह आ़लम के कामियाबी की जो भी शक्ल अपनाएगा वह शफ़्क़त व मेहरबानी से पुर ही होगा, चुनाँचे उस मालिक ने इन्सान को अ़क़्ल जैसी अ़ज़ीम दौलत से नवाज़ कर, इस आ़लम में अपनी ख़िलाफ़त से सरफ़राज़ किया और इल्म का ताज इस के सर पर सजा कर मस्जूद मलायका बनाया, मगर यह भी एक हक़ीक़त है कि केवल अ़क़्ल इन्सान की सही रहनुमाई नहीं कर सकती, बल्कि उस के लिए वह्य रब्बानी और तअ़लीमाते नबवी की सख़्त ज़रुरत है।

अल्लाह तआ़ला ने शुरु से ही इस का नज़्म किया और अपने नेक बन्दों को वह्य व इल्हाम के ज़रिये इन्सानियत की मुशिफ़िक़ाना रहनुमाई की, चुनाँचे मुख़्तलिफ़ अम्बिया व रुसुल को सुहुफ़े समाविया और कुतुबे रब्बानिया से सरफ़राज़ किया गया, जिन क़ौमों ने उनकी रहनुमाई को अपना कर अपने ख़ालिक़ व मालिक की मअ़रिफ़त हासिल की और उसी की रौशनी में अपनी ज़िन्दग़ी के पेचीदा मसायल की गुथ्थियाँ सुलझाईं तो वह इस दुनिया में भी कामियाब व बामुराद हुए और आख़िरत में भी कामियाब होंगे।

जैसे-जैसे इन्सानियत अ़क़्ली, समाजी मुआशरती और सियासी एतिबार से तरक़्क़ी करती रही वैसे-वैसे अल्लाह रब्बुल् इ़ज़्ज़त ऊलुल् अ़ज़्म पैग़म्बरों को जामेअ़ शरीअ़त के साथ मब्अूस फ़रमाता रहा, आख़िर में जबकि इन्सानियत अपने उ़रूज की तरफ़ बढ़ रही थी, मगर मिश्काते नुबूव्वत से महरूम होकर नफ़्स व शैतान की इताअ़त कर के तबाही व बर्बादी का शिकार हो रही थी, हिदायते रब्बानी से महरूम होने की वजह से अपने मक़ाम व मर्तबः को फ़रामोश कर चुकी थी और हैवानियत दरिन्दग़ी की सारी हदें पार कर चुकी थीं, ऐसे हालात में ज़रुरत थी कि एक ऐसे पैग़म्बर की बेअ़सत हो, जो सारे आ़लम की मुश्फ़िक़ाना और मुख़्लिसाना रहनुमाई कर सके, लिहाज़ा अल्लाह रब्बुल् इ़ज़्ज़त ने इस के लिए आक़ा-ए-नामदार अहमद-ए-मुज्तबा मुहम्मद-ए-मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इन्तिख़ाब किया और यह एलान कर के “वमा अरसलनाका इल्ला रहमतल् लिल्आ़लमीन” आप (सल्ल०) को सारे आ़लम के लिए नबी बनाया और आप की लाई हुई शरीअ़त को क़ियामत तक आने वाली सारी इन्सानियत के

लिए रहनुमा किताब क़रार दिया। तारीख़ गवाह है कि जिन क़ौमों ने इस से फ़ायदा उठाया और इसको आख़िरी किताब मान कर इसकी रहनुमाई में चले, कामियाबी व कामरानी ने उन के क़दम चूमे और ज़िल्लत व ख़्वारी के दलदल से निकल कर इ़ज़्ज़त व सरबुलन्दी के उरुज तक पहुँचे और अल्लाह रब्बुल् इ़ज़्ज़त की तरफ़ से भी उन को रज़ियल्लाहु अ़न्हुम वरज़ु अ़न्हु की बशारत सुनाई गई।

हिन्दुस्तान जैसे अ़ज़ीम व क़दीम तरीन मुल्क में भी इस शमअ़ हिदायत की रौशनी सदियों पहले फैली और यह कुर्आन करीम की रौशनी से मुनव्वर हुआ, मगर चूंकि कुर्आन अपने अव्वलीन मुख़ातिबीन की रिआ़यत में अ़रबी ज़बान में नाज़िल हुआ इसलिए इस से इस्तिफ़ादह दूसरों के लिए आसान न था, लिहाज़ा उ़ल्मा-ए-रब्बानीयीन ने नियाबत-ए-रसूल का फ़रीज़ा अन्जाम देते हुए उस के मआ़नी व मआ़रिफ़ को यहाँ की भाषाओं में मुन्तक़िल करने की कामियाब कोशिश की।

वक़्त व हालात की तब्दीली के साथ-साथ इस मुल्क की ज़बान व मिज़ाज में भी तब्दीली वाक़ेअ़ हुई, चुनाँचे अब यहाँ की एक बड़ी संख्या हिन्दी भाषा बोलती, समझती और लिखती पढ़ती है, अल्ह़म्दु लिल्लाह हमारे उ़ल्मा-ए-किराम ने इस ज़बान में कुर्आन ह़कीम के उ़लूम व मआ़रिफ़ को मुन्तक़िल करने की ह़स्बे इस्तिताअ़त कोशिश की और दीन की एक अहम ज़रुरत किसी ह़द तक पूरी हुई, मगर फिर भी एक ऐसी तफ़्सीर की ज़रुरत शिद्दत से मह़सूस हो रही थी जो आसान हिन्दी ज़बान में मौजूदा ज़माने की नई नस्ल को अपील कर सके और बिरादराने वतन के ज़ेहन व दिमाग़ में पैदा होने वाले शुकूक व शुब्हात का इज़ाला कर सके, उस में उ़ल्मा-ए-सलफ़ के तरीक़े की रिआ़यत भी हो और नये उस्लूब के मुताबिक़ उसको मुरत्तब भी किया गया हो, अल्लाह का लाख-लाख एहसान व करम है कि इस अहम ज़रुरत को पूरा करने के लिए हमारे फ़ाज़िल 'मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी' ने एक मुकम्मल तफ़्सीर बज़बान हिन्दी में बड़ी मेहनत व लगन से तैयार की है और हिन्दुस्तानी माहौल को सामने रखते हुए सलफ़-ए-सालिहीन के तरीक़े को पेशे नज़र रखते हुए हिन्दुस्तानी लोगों की ख़िद्मत में एक नादिर व नायाब कुर्आनी तोह़फा पेश किया है।

बारगाहे इलाही में दुआ़ करता हूँ कि अल्लाह तआ़ला इस कुर्आनी ख़िद्मत को कुबूलियते आ़म से नवाज़े और फ़ाज़िल व मुरत्तिब को मज़ीद तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए। आमीन या रब्बल् आ़लमीन

मुह़म्मद ख़ालिद नदवी, ग़ाज़ीपुरी
दारुल उलूम नदवतुल उ़ल्मा, लखनऊ
27 ज़िलुह़िज्जः 1435 हि०
23–10–2014

सन्देश

हज़रत मौलाना मुफ़्ती नियाज़ अहमद नदवी मद्‌दज़िल्लहुल् आली के क़लम से-

(उस्ताज़ हदीस व फ़िक़ः व वकील कुल्लियतुश्शरिअः अर्थात सदर मुफ़्ती दारुल् उलूम नद्‌वतुल् उलमा, लखनऊ)

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

क़ुर्आन करीम अल्लाह तआला का कलाम है, जिसे अल्लाह तआला ने अपने ख़ास फ़रिश्ते के ज़रिये वह्य की सूरत में रसूलुल्लाह (सल्ल०) पर नाज़िल किया। यह पूरी कायनात के लिए अल्लाह की उतारी हुई आख़िरी किताब-ए-हिदायत है। इस के नुज़ूल का मक़्सद यह है कि अल्लाह के बन्दे इसको पढ़ें, इस के मतलब पर ग़ौर करें और अहकाम पर अमल करें। इस में ज़िक्र किये हुए क़िस्से से सबक़ व इबरत हासिल करें और अपने दीनी व दुनियावी मामले में इस से रहनुमाई हासिल करें।

क़ुर्आन शरीफ़ के रस्मुल्ख़त को कुछ लोगों ने अपनी ज़बान यानी हिन्दी या इंग्लिश में लिखा है, जिस से क़ुर्आनी रस्मुल्ख़त जो क़ुर्आन का एक रुक्न है छूट जाता है और तहरीफ़ रस्मी लाज़िम आती है, जिस से बचना ज़रूरी है। जैसे بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ 'को हिन्दी हुरूफ़ में लिखा जाए तो लफ़्ज़ अल्लाह, लफ़्ज़ रहमान और लफ़्ज़ रहीम की शुरुआत के दो हुरूफ़ (अक्षर) अलिफ़, लाम लिखने में नहीं आएँगे, जो इस तरह "बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम" लिखा जाएगा।

इस तरह "बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम" में कई हुरूफ़ की कमी आ जाती है तो ग़ौर फ़रमाएँ पूरा क़ुर्आन शरीफ़ हिन्दी में लिखा जाएगा तो कितने हुरूफ़ कम हो जाएँगे, हालाँकि मआनी की तरह हुरूफ़ भी क़ुर्आन होने में शामिल है। इस के अलावा हक़ीक़त यह है कि क़ुर्आनी रस्मुल् ख़त क़यासी नहीं है, बल्कि तौफ़ीक़ी और समाई है।

हज़रत सिद्दीक़े अक्बर (रज़ि०) के दौर-ए-ख़िलाफ़त में तय हुआ कि जो आयतें और सूरतें लिखी हुई मुख़्तलिफ़ हज़रात के पास हैं उन सब को किताबी सूरत में एक जगह जमा कर दिया जाए तो कातिबे वह्य 'हज़रत ज़ैद बिन साबित' (रज़ि०) ने बड़ी एहतियात और पूरी तवज्जोह से अस्ली रस्मुल् ख़त जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के इर्शाद के मुताबिक़ आप (सल्ल०) की मौजूदगी में लिखा गया था पूरा जमा किया।

इस के बाद जब हज़रत उस्मान (रज़ि०) ने क़ुर्आन लिखवाया तो कातिबे अल् वह्य 'हज़रत ज़ैद बिन साबित' को यह अज़ीमुश्शान ख़िद्‌मत सुपुर्द की, जबकि लगभग पचास हज़ार सहाबा (रज़ि०) मौजूद थे, लिहाज़ा इस मुस्हफ़-ए-उस्मानी के रस्मुल्ख़त के ख़िलाफ़ करना जायज़ नहीं है। चारो आइम्मा (रह०)

इस रस्मुल्ख़त को ज़रूरी मानते हैं। अल्लाह तआ़ला का इर्शाद है "इन्ना नह़नु नज़्ज़ल्नज़् ज़िक्रा वइन्ना लहु लह़ाफ़िज़ून" "हम ही ने कु़र्आन नाज़िल फ़रमाया और हम ही इसके निगेहबान हैं"।

सूरः ह़िज्र में कु़र्आनी अल्फ़ाज़ की ह़िफ़ाज़त का वादा है, बल्कि अल्फ़ाज़ मआ़नी और रस्मुल्ख़त सब ही की ह़िफ़ाज़त का वादा और पेशीनगोई है, लिहाज़ा इसके ख़िलाफ़ करना जायज़ नहीं। मआ़नी और उ़लूम-ए-कु़र्आन की ह़िफ़ाज़त में उ़ल्मा-ए-दीन की एक लम्बी फ़ेहरिस्त है, जिस में अल्फ़ाज़ इ़बारत और तर्ज़ अदा के ह़िफ़ाज़त की ख़िद्मत हैं इसलिए रस्मुल्ख़त की ह़िफ़ाज़त हम पर लाज़िम है।

यह ह़क़ीक़त है कि अ़रीब में ह़ और हिन्दी में ह में फ़र्क़ है, हिन्दी में (ह़) नहीं है। अ़रबी में 'क़ाफ़' और 'काफ़' में फ़र्क़ है लेकिन हिन्दी में नहीं है। अ़रबी में हम्ज़ा और ऐ़न अलग-अलग हैं लेकिन हिन्दी में नहीं है। अ़रबी में त और तो में फ़र्क़ है, लेकिन हिन्दी में नहीं है। अ़रबी में सीन और स्वाद और से में फ़र्क़ है, लेकिन हिन्दी में नहीं।

मतलब यह है कि अ़रबी में जिस तरह़ ह और ह़, क़ाफ़ और काफ़, ऐ़न और हम्ज़ा, त, और सीन, स्वाद- स और ज़ाल-ज़्वाद-ज़ के रस्मुल्ख़त और अदायगी में फ़र्क़ है, यह फ़र्क़ और इम्तियाज़ हिन्दी में नहीं है। अगर अ़लामतें मुक़र्रर भी की जाएँ फिर भी नाक़िस रहेंगी। जिस में लिखने और रस्मुल्ख़त की तह़रीफ़ के साथ-साथ अदायगी में नुमायाँ फ़र्क़ ज़ाहिर होगा। जिस से पचासों ग़ल्तियाँ होंगी और ग़लत तलफ़्फ़ुज़ से ह़ुरूफ़ में तब्दीली आने की वजह से मतलब भी बदल जाएगा और सवाब की जगह़ अ़ज़ाब और रह़मत की जगह लअ़नत का ह़क़्दार होगा। जैसा कि मशहूर फ़रमान है कि "बहुत से कु़र्आन की तिलावत करने वाले ऐसे हैं जिन पर कु़र्आन लअ़नत करता है"।

'ह़ज़रत इमाम इब्ने जौज़ी' (रह़०) लिखते हैं कि बेशक जिस तरह़ उम्मत के लिए मतलब कु़र्आनी का समझना और उस के ह़ुदूद को क़ायम रखना अ़िबादत है, उसी तरह़ सह़ी पढ़ना और ह़ुरूफ़ को तरीक़े के मुताबिक़ ठीक-ठीक अदा करना भी अ़िबादत है।

कु़र्आन शरीफ़ का बिना किसी उस्ताद के अ़रबी रस्मुल्ख़त में ही सह़ी पढ़ना दुश्वार है तो हिन्दी रस्मुल्ख़त में किस तरह़ सह़ी पढ़ा जा सकता है? इस से बेहतर तो यह है कि जो सूरतें ज़बानी सह़ी याद हों वही पढ़ा करे मगर हिन्दी में ग़लत न पढ़े, क्योंकि ग़लत पढ़ना ह़राम है। इत्क़ान, दुर्रेमुख़्तार, शामी, फ़तावा इब्ने तैमिया, शरह़ जज़्री, मुल्ला अ़ली क़ारी (रह़०) ने इस की तस्दीक़ की है।

इस तरह़ कु़र्आन का किसी दूसरी ज़बान में रस्मुल्ख़त बदले बिना कु़र्आन के साथ उसका अनुवाद या तफ़्सीर लिखने और दअ़वत की ग़र्ज़ से इन्सानों तक पहुँचाने की उल्मा ने इजाज़त ही नहीं बल्कि ज़रूरत क़रार दिया है। इसलिए कि कु़र्आन दुनिया में सब से ज़्यादा पढ़ी जाने वाली किताब है। कु़र्आन के तर्जुमे व तफ़ासीर का काम हर दौर में उ़लमा ने एक ज़रूरत और अपने लिए सआ़दत समझ कर किया है।

"मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारुकी साहब" जो उलूम-ए-शरीआ़ में माहिर, नदवे के होनहार फ़ाज़िल जिन की कु़र्आनी उलूम पर अच्छी निगाह है। यह हिन्दू मज़हबी किताबों से भी वाक़्फ़ियत रखते

हैं और हिन्दू भाईयों के दर्मियान खासतौर से हिन्दी जबान को जरिया बना कर दअवत का काम कर रहे हैं। इससे पहले इनका हिन्दी तर्जुमः कुर्आन का पैग़ाम नाम से कई एडीशन छप चुके हैं जो इनके मक्बूलियत की दलील है।

इनके क़लम से 180 से ज़ायद दअवती किताबें भी मन्ज़रे आम पर आ चुकी हैं। अब इन्होंने जो तफ़्सीर का काम शुरु किया है और माशाअल्लाह इस के चार भाग भी छप चुके हैं, यह पाँचवाँ भाग है। चूँकि मैं इन्हें लगभग पन्द्रह बीस साल से दअवत के कामों में मशगूल देख रहा हूँ जो एक अच्छी फ़िक्र के हामिल हैं और अल्लाह तआला इनके इसी जज़्बे की वजह से इन से बहुत से काम ले रहा है, जिसमें मदारिस, मकातिब और नौजवानों की तर्बियत भी शामिल है।

अल्लाह तआला इनकी इस तफ़्सीर को कुबूल फ़रमाकर तमाम इन्सानियत की हिदायत का ज़रिया बनाये और उम्मीद है कि हिन्दी जानने वालों के लिए यह तफ़ासीर मराजेअ की हैसियत रखेगी। अल्लाह तआला इस्तिफ़ादे की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये।

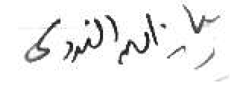

मुफ़्ती नियाज़ अहमद नदवी

उस्ताज़ हदीस व फ़िक़ः व वकील कुल्लितुश्शरीअः

दारुल् उलूम, नद्वतुल् उ़लमा, लखनऊ

21/09/2014

25 ज़िल्हिज्जः 1435 हिज्री

सन्देश
हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहीबुल्लाह क़ासमी मद्दज़िल्लहुल् आली के क़लम से

(मुबल्लिग़ मदरसः रहमानिया, दरभंगा, बिहार)

कुर्आन मजीद पूरी इन्सानियत की रहनुमाई के लिए ऐसा हिदायतनामा है जिससे क़ियामत तक इल्म के स्रोत निकलते रहेंगे और क़ियामत तक कुर्आन से फ़ायदा उठाने की नई-नई शक्लें सामने आती रहेंगी। इस ज़माने में मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से कुर्आन की ख़िद्मत और इससे फ़ायदा उठाने का सिलसिला जारी है।

कुर्आन से सम्बन्ध रखने वाले उ़लमा और साहिबे इल्म नये-नये तरीक़ों से कुर्आन की ख़िद्मत कर रहे हैं, जिसे आसान ज़ुबान में लोगों के सामने पेश करने की कोशिश करते हैं। बेशक कुर्आन पाक अ़रबी ज़बान में नाज़िल हुआ और अ़रब अहले ज़बान होने की वजह से आ़मतौर से इसका मतलब बआसानी समझ लेते थे और उसकी सच्चाई के क़ायल हो जाते थे, लेकिन इसके बावजूद सहाब-ए-किराम की एक जमाअ़त बराबर रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास कुर्आन की तअ़लीम हासिल करती रहती थी।

हज़रत उ़मर फ़ारूक़ (रज़ि०) ने कई साल में सूरः बक़रः पढ़ी और उनके लड़के हज़रत अ़ब्दुल्लाह ने 8 साल में इस सूरः को ख़त्म किया।

इसीलिए उ़लमा ने कुर्आन पर ग़ौर फ़िक्र के बाद कुर्आन फ़हमी के लिए कुछ बातें ज़रूरी बताईं जिनसे हट कर कुर्आन की तफ़्सीर की जाए तो वह तफ़्सीर बिर्राय होगी जिसकी हदीस में मज़म्मत आई है।

अल्लाह का फ़ज़्ल है कि कुर्आन करीम से इस उम्मत का रिश्ता बहुत मज़बूत है। जिसकी यह निशानी है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) के ज़माने से लेकर आज तक कुर्आन की तफ़्सीर बराबर लिखी जाती रही, लेकिन ज़रुरत इस बात की थी कि हिन्दी में एक ऐसी तफ़्सीर हो जो किसी ऐसे आलिमे दीन की तरफ से हो जो अरबी और हिन्दी से यकसाँ वाकिफ़ हों। हमें इस बात का एतिराफ करने में खुशी हो रही है कि "मुफ्ती मुहम्मद सरवर फारूकी नदवी साहब" एक आलिमी इदारे दारुल् उलूम नद्वतुल् उ़लमा से फारिग़ होने के साथ संस्कृत और हिन्दी ज़बान से वाकिफ हैं। जो बराबर तमाम इन्सानों को जहन्नम से निकाल कर जन्नत में ले जाने का काम करते हैं, जिसके लिए उन्होंने बड़ी तअ़दाद में इस्लामी लिट्रेचर तैयार किया है, जो एक सहाफ़ी और जमअीयत पयामे अम्न के सदर हैं। इनके तर्जुमः व तफ़्सीर की खुसूसियत इस तरह हैः-

तफ़्सीर की ख़ुसूसियत-

(1) यह तफ़्सीर ख़ासतौर पर आ़म मुस्लिम व ग़ैर मुस्लिम मर्दों, औ़रतों और तल्बा व तालिबात (STUDENTS) के लिए तैयार की गई है। इसलिए ऐसे शब्द जो अ़वाम की समझ से बाहर हों नहीं

अपनाये गये हैं। तफ़्सीर व तशरीह़ में मोअ़तबर उ़लम-ए-मोहक़्क़ीन और सल्फ़ व सालिह़ीन की तफ़्सीरों से ही फ़ायदा उठाया गया है ।

2- इसी तरह़ इस्तिलाह़ी तर्जुमः के साथ लफ़्ज़ी रिआ़यत भी की गई है, जिसकी वजह से यह कोशिश हर ह़ल्क़े के लिए मुफ़ीद व मक़्बूल बन गई है, ख्वाह वह अअ़ला तअ़लीम यफ़्ता तबक़े से तअ़ल्लुक़ रखता हो या आ़म लोगों से मुतअ़ल्लिक़ हो।

3- यह तफ़्सीर मुस्लिम व ग़ैर मुस्लिम मर्दों और औ़रतों को सामने रखते हुए आम भाषा में लिखी गई है ताकि कम पढ़े लिखे भी फ़ायदा उठा सकें।

4- इस में रोज़ (प्रतिदिन) पढ़ने के ह़िसाब से लगभग दस-दस आयतों का तर्जुमः फिर हर आयत की अलग-अलग तफ़्सीर (व्याख्या) बयान की गई है।

5- इस में पहले पूरी सूरः का खुलासा (संक्षेप) और उसके विषय, फिर लगभग दस-दस आयतों का तर्जुमः उसके बाद हर आयत की अलग-अलग तफ़्सीर जिसमें सबसे पहले उस आयत का शाने नुज़ूल (नाज़िल होने के वक़्त की ह़ालत) फिर उस आयत से सम्बन्धित ह़दीस और मोअ़तबर उ़लमा की तफ़्सीर की रौशनी में तफ़्सीर, फिर मसायल, एह़काम और उस आयत से सम्बन्धित नई साइंसी तह़क़ीक़ और ग़ैर मुस्लिमों की तरफ़ से होने वाले सवालों का बेहतर तरीक़े से जवाब के साथ उस से मुतअ़ल्लिक़ फ़ज़ायल जो सही ह़दीसों से साबित है ज़िक्र किया गया है।

इन तमाम खुसूसियत की बिना पर जनाब "मौलाना मुफ़्ती सरवर फ़ारूकी नदवी" ने खासतौर से इस मुल्क के हिन्दी तब्क़े वालों की तरफ़ से शुक्रिया के मुस्तहिक़ हैं, जिन्होंने इन्सानी हिदायत का एक बड़ा तोहफ़ा तैयार किया है। अल्लाह तआ़ला इनकी इस ख़िद्मते क़ुर्आन को क़ुबूल फ़रमा कर आने वाली इन्सानियत की हिदायत का ज़रिया बनाये।

मुहीबुल्लाह क़ासमी

मुबल्लिग़ मदरसः रह़मानिया दरभंगा, बिहार

2 रबीउलव्वल 1433 हिज्री

सन्देश

मोह़तरम जनाब अन्सार अह़मद सिद्दीक़ी साह़ब के क़लम से

अध्यक्ष हिन्दी विभाग इस्लामिया डिग्री कालेज, इन्दौर, एम०पी०

बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम

यही क़ुर्आन मजीद है जिसने अ़रब के बद्दुओं, खानाबदोशों को जिन पर दुनिया का ध्यान भी इधर न जाता था, कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया-

खुद न थे जो राह पर औरों के हादी बन गए,
क्या नज़र थी जिसने मुर्दो को मसीहा कर दिया।

हम अगर ग़नी हैं तो इसी क़ुर्आन मजीद के ख़ज़ाने की वजह से, बड़े-बड़े बादशाहों, सरमायादारों और दौलतमंदों को देने के लिए अगर कोई चीज़ है जो बढ़ा सकती है, दुनिया बदल सकती है, किस्मत चमका सकती है, वह क़ुर्आन मजीद का एजाज़ है, क़ुर्आन मजीद की फ़िक्र है। हम अगर दौलतमंद हैं तो वह इसी क़ुर्आन मजीद के ख़ज़ाने से, क़ुर्आन मजीद के पढ़ने से कुछ मोती हाथ लग जाएँ तो यह हमारी खुशक़िस्मती है।

अ़रब के सह़ाबा ने क़ैसर व किसरा के ताज को पैरों से रौंदा और उन के तख़्त व सल्तनत पर ऐसे बैठे जैसे बोरिये पर बैठते हैं, यह क़ुर्आन की ही देन है। क़ुर्आन से हटकर संसार के किसी मनुष्य को कामियाबी नहीं मिल सकती, यह भी क़ुर्आन का चैलेंज है।

क़ुर्आन शरीफ़ की व्याख्या करने का प्रयास बड़े-बड़े फ़लास्फ़रों, बुद्धिजीवियों ने अपने-अपने अनुसार हर युग में किया, अनेक भाषाओं में भी किया और अभी भी प्रयास जारी हैं और जब तक संसार रहेगा यह कोशिश जारी रहेगी।

हमारे लिए बड़े गर्व एवं प्रसन्नता की बात है कि हमारे प्रिय मित्र जनाब 'मुफ्ती मुहम्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी' साह़ब ने हिन्दी भाषा में क़ुर्आन का अनुवाद और व्याख्या करने का बहुत महान प्रयास किया है। अल्लाह तआ़ला इन के इस प्रयास को सफ़ल बनाये यह हमारी दिली दुआ है और मुझे आशा ही नहीं बल्कि विश्वास है कि हिन्दी जगत में सब लोग लाभ उठाएँगे।

अन्सार अह़मद सिद्दीक़ी
2 रजब 1419 हि०

Writer at a glance

Mufti Muhammad Sarwar Farooqui Nadwi (*Aacharya*)

Name	:	**Muhammad Sarwar Muhammad Sarwar Farooqui S/o. Mohd Haneef Farooqui S/o. Abdul Qayyum Farooqui S/o. Mahmood Ali Farooqui S/o. Ramzan Ali Farooqui S/o. Imam Baksh Farooqui S/o. Khairat Ali Farooqui S/o. Nisar Ahmad S/o. Muhammad Ali S/o. Athar Ali S/o. Abdul Hafeez S/o. Jalaluddin S/o. Mohd Suleman S/o. Allauddin S/o. Mohd Ishaq S/o. Nabiullah S/o. Khwaja Bakarullah S/o. Abdullah Yamni S/o. Abdul Aziz Yamni S/o. Salim S/o. Abdullah S/o. Sayyedna Umar Farooque Raziallahu Anhu.**

Educational Background.

Basic	:	Intermediate,
Higher Education	:	**M.A.**
Arabic	:	**Almiat, Fazeelat & Iftah,** (Darul-Uloom- Nadwatul Ulama Lucknow (U.P.) India.
Islamic Tadreebi Course	:	**Jamia Islamiya** **Madina Munawarah** (Saudi Arabia).
Urdu	:	**Adeeb Kamil & Mua'llim**
Sanskrit	:	**Shastri, Acharya**
Computer skill	:	**P.G.D.C.A**
Major Research	:	Qur'an and Fiqah, Darul-Uloom Nadwatul-Ulama, Lucknow, U.P. (India)

Present Posts

President	:	***Jamiat Payam-e-Amn,*** (Educational Society) lucknow, U.P. (India)
Rafiq Ilmi	:	***Majlis Tahqeeqat (Islamic Research) Darul Uloom Nadwatul Ulama,* Lucknow,** U.P. (India)
Director	:	***Markaz- ul-Tawheed Al-Islami*** lucknow, U.P. (India)
Managing Director	:	**Jamia Dar-e-Arqam,** Fatehpur, Haswa, U.P. (India)
Manager	:	**Jamia Dar-e-Arqam** (Educational Society) Allahabad (India)
Chairman	:	**Arqum Model School,** Lucknow, U.P. (India) .
General Secretary	:	***All India, Jamiat Darul-Aml*** lucknow, U.P. (India)
Manager	:	***Universal Peace Foundation*** lucknow, U.P. (India)

(मुफ़स्सिरे क़ुर्आन) मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारूक़ी साहब नदवी द्वारा लिखित अहम हिन्दी पुस्तकें

नाम	मूल्य
1. क़ुर्आन का पैग़ाम (क़ुर्आन मजीद का आसान हिन्दी अनुवाद) (साइज़ 20x30/8)	300 रू.
2. क़ुर्आन का पैग़ाम (क़ुर्आन मजीद का आसान हिन्दी अनुवाद) (साइज़ 20x30/16)	110 रू.
3. क़ुर्आन का पैग़ाम (क़ुर्आन मजीद का आसान हिन्दी अनुवाद) (साइज़-20x30/32)	100 रू.
4. क़ुर्आन का पैग़ाम (पारा अम्म अनुवाद और व्याख्या)	180 रू.
5. तफ़्सीर फ़ारूक़ी {भाग-1} (क़ुर्आन मजीद की हिन्दी तफ़्सीर पारा नं० 1 से 5 तक)	400 रू.
6. तफ़्सीर फ़ारूक़ी {भाग-2} (क़ुर्आन मजीद की हिन्दी तफ़्सीर पारा नं० 5 से 10 तक)	400 रू.
7. तफ़्सीर फ़ारूक़ी {भाग-3} (क़ुर्आन मजीद की हिन्दी तफ़्सीर पारा नं० 10 से 18 तक)	400 रू.
8. तफ़्सीर फ़ारूक़ी {भाग-4} (क़ुर्आन मजीद की हिन्दी तफ़्सीर पारा नं० 19 से 25 तक)	400 रू.
9. तफ़्सीर फ़ारूक़ी {भाग-5} (क़ुर्आन मजीद की हिन्दी तफ़्सीर पारा नं० 26 से 30 तक)	400 रू.
तफ़्सीर फ़ारूक़ी (मुकम्मल सेट) (भाग 1 से 5 तक)	2000 रू
10. इस्लाम धर्म क्या है? (क़ुबूले ह़क़ के बाद इस्लामी कोर्स) कई भागो में	250 रू.
11. जिहाद, आतंकवाद और इस्लाम	180 रू.
12. हिन्दी पत्रकारिता और मीडिया लेखन	80 रू.
13. अन्तिम सन्देष्टा कहाँ, कब और कौन (Hard bound)	150 रू.
14. अन्तिम सन्देष्टा कहाँ, कब और कौन (Paper back)	120 रू.
15. जन्नत के ह़ालात और जन्नती (क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)	100 रू.
16. कुफ़्र और शिर्क की ह़क़ीक़त (क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)	90 रू.
17. रसूलुल्लाह (सल्ल०) का हुलिया मुबारक और आप (सल्ल०) की सुन्नतें	80 रू.
18. ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की प्रमाणित जीवनी	200 रू.
19. अल्लाह के अधिकार और बन्दों के अधिकार (क़ुर्आन व ह़दीस की रौशनी में)	200 रू.
20. रसूलुल्लाह (सल्ल०) की बातें (अअ़माले ह़स्ना की रौशनी में)	50 रू.
21. सह़ाबा का इस्लाम और उसके बाद	60 रू.
22. इस्लामी शासन और शासक ऐतिह़ासिक दृष्टि से	100 रू.
23. अज़ान क्या है?	30 रू.
24. आओ नमाज़ की ओर	40 रू.
25. रोज़ः का हुक्म और उसके मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)	40 रू.
26. ह़ज और उ़मरा का आसान तरीक़ा (क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)	30 रू.
27. ज़कात का हुक्म और उसके मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)	40 रू.
28. उ़मरह का आसान तरीक़ा (क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)	25 रू.
29. आपके सवालों का आसान ह़ल (भाग एक)	70 रू.
30. झाड़, फूँक, जादू, टोना और तअ़वीज़,गंडे (शरीअ़त की रोशनी में)	40 रू.
31. इस्लाम की बुनियादी मालूमात (सवाल व जवाब की रोशनी में)	50 रू.
32. रसूलुल्लाह (सल्ल०) की सीरत (सवाल व जवाब की रोशनी में)	40 रू.
33. रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की पाकीज़ह ज़िन्दगी	40 रू.

नाम	मूल्य
34. बीवी-शौहर की ज़िम्मेदारियाँ (शरीअ़त की रोशनी में)	40 रू.
35. आधुनिक हिन्दी व्याकरण और मीडिया लेखन	160 रू.
36. सूर-ए- फ़ातिहा की तफ़्सीर	30 रू.
37. तौह़ीद की ह़क़ीक़त (क़ुर्आन व सुन्नत की रोश्नी में)	40 रू.
38. पवित्र क़ुर्आन का सन्देश इन्सानी दुनिया के नाम	30 रू.
39. इस्लाम धर्म तलूवार से फैला या सदाचार से	60 रू.
40. ग़ैर मुस्लिमों के साथ व्यवहार (ऐतिहासिक दृष्टि से)	60 रू.
41. ग़ैर मुस्लिमों से सम्बन्ध और धार्मिक आज़ादी	60 रू.
42. इस्लामी विरासत की तक़्सीम एक नज़र में	20 रू.
43. मीरास की तक़्सीम	30 रू.
44. लाइलाहा इल्लल्लाहु की गवाही	40 रू.
45. मोबाईल से सम्बन्धित मसायल (शरीअ़त की रोशनी में)	20 रू.
46. अल्लाह के प्यारे नबी (सल्ल०) एक नज़र में	20 रू.
47. सृष्टि का सृष्टा कौन?	30 रू.
48. प्राकृतिक नियम, ईशदूतों का धर्म और परलोक विश्वास	40 रू.
49. इस्लाम?	10 रू.

(मुफ़स्सिरे क़ुर्आन) मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी साह़ब नदवी द्वारा लिखित उर्दू पुस्तकें

50. मआ़नी क़ुर्आनुल् करीम (लफ़्ज़ी तर्तीब के एतिबार से रवाँ उर्दू तर्जुमः)	500 रू.
51. आख़िरी रसूल कहाँ, कब और कौन?	140 रू.
52. ग़ैर मुस्लिमों से तअ़ल्लुक़ात और मज़हबी आज़ादी	40 रू.
53. इस्लाम में जिज़्या, ख़िराज और ज़िम्मियों के अख़्तियारात	40 रू.
54. क़ुर्आन के मिसाली नमूने और लाज़वाल मोअ़जिज़ा	40 रू.
55. क़ुर्आन में इन्सान का मक़ाम और उस का अअ़ला मक़्सद	40 रू.
56. अ़ामाल को बातिल करने वाली चीज़ें और नियत की अहमियत	40 रू.
57. इस्लामी क़ानूने विरासत और मीरास की तक़्सीम	40 रू.
58. उम्मते मुह़म्मदिया की इ़ज़्ज़त का मेअ़यार और बनी इस्राईल	40 रू.
59. कायनात के अ़जायबात और इन्सान का अल्लाह से तअ़ल्लुक़	40 रू.
60 ग़ैर मुस्लिमों से दोस्ती या दुश्मनी (एतिराज़ के तनाज़ुर में)	50 रू.
61. इस्लाम के ख़िलाफ़ इल्ज़ामात और उस की दअ़वत का असर	50 रू.
62. इस्लाम में ग़ैर मुस्लिमों के ह़ुक़ूक़	50 रू.
63. हिन्दू धर्म, फ़िर्क़े तन्ज़ीमें और इदारों का तआ़रूफ़	90 रू.
64. ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का ज़िक्र और मूर्तिपूजा की मुमानियत वेदों की दुनिया में।	40 रू.
65. बौद्ध धर्म और इस्लाम	40 रू.

नाम	मूल्य
66. कलिमा-ए-तय्यबः की ह़क़ीक़त और उस के तक़ाज़े	80 रू.
67. ग़ैर मुस्लिमों में तरीक-ए-दअ़वत उस्लूबे अंबिया की रोशनी में	70 रू.
68. अल्लाह तआ़ला का तआ़र्रुफ़ और कलिम-ए-शहादत के फ़ज़ायल	70 रू.
69. क़ियामत तक के फ़ित्ने (रसूलुल्लाह (सल्ल०) की पेशीनगोई की रोशनी में)	70 रू.
70. तलाक़ का इस्लामी तरीक़ा (क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)	40 रू.
71. अल्लाह की तरफ़ से रिज़्क़ की तक़्सीम और कमज़ोर तब्क़े की किफ़ालत	50 रू.
72. क़ुर्आन के मुताबिक़ दौलत का इस्तेमाल	70 रू.
73. ज़कात और मसारिफ़े ज़कात (क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)	40 रू.
74. रसलुल्लाह (सल्ल०) की सीरत (मुस्तनद कुतुबे सीरत की रोश्नी में)	40 रू.
75. रसूलुल्लाह (सल्ल०) की सीरत के अनमोल मोती (सवाल व जवाब की रोशनी में)	30 रू.
76. रसूलुल्लाह (सल्ल०) का हुलिया मुबारक और आप (सल्ल०) की सुन्नतें	100 रू.
77. जन्नत के ह़ालात और जन्नत की नेअ़मतों का ज़िक्र	80 रू.
78. कुफ़्र व शिर्क की ह़क़ीक़त (क़ुर्आन व सुन्नत की रोश्नी में)	80 रू.
79. कुफ़्र शिर्क और फ़िस्क़ का ज़िक्र और सह़ाबा से मुतअ़ल्लिक़ अ़क़ीदा	80 रू.
80. क़ुर्आन के मुताबिक़ दअ़वत और इस्लामी जिहाद (क़ुर्आन व ह़दीस की रोश्नी में)	60 रू.
81. ज़बरदस्ती इस्लाम क़ुबूल करवाने की मुमानिअ़त	60 रू.
82. दाढ़ी की अहमियत (शरीअ़त की रोशनी में)	40 रू.
83. मदारिसे इस्लामिया के निसाब का तारीख़ी जायज़ा	40 रू.
84. रोज़ः, तरावीह़, सद्क़ः और एतिकाफ़ के एह़काम व मसायल	40 रू.
85. ह़ज और उ़मरा का मुकम्मल तरीक़ा (शरीअ़त की रोशनी में)	40 रू.
86. मुसाफ़िर और सफ़र के मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.
87. काग़ज़ी नोट और बैअ़ की ह़क़ीक़त	40 रू.
88. इस्लामी क्विज़ (सवाल व जवाब की रोशनी में)	50 रू.
89. तफ़्सीर का बुनियादी मअ़ख़ज़	30 रू.
90. हिन्दुस्तान में क़ुर्आन के तर्जुमे की शुरुआ़त और चन्द तफ़ासीर का तआ़र्रुफ़	30 रू.
91. इस्लाम में तिजारत का तरीक़ा (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	120 रू.
92. इस्लामी मआ़शियात का तक़ाबुली जायज़ा	30 रू.
93. इस्लाम का ज़रई निज़ाम	40 रू.
94. दौलत की पैदाईश और अतियाते क़ुदरत	40 रू.
95. मुसलमानों के फ़िर्क़े और उनके अ़क़ायद	80 रू.
96. इस्लाम में औ़रत का मक़ाम	50 रू.
97. तअ़द्दुदे इज़्दिवाज और इस्लाम (मज़ाहिब आ़लिम की रौशनी में)	60 रू.
98. ह़राम, ह़लाल और मुबाह चीज़ें	30 रू.
99. ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की सिफ़ात (अह़ादीस की रौशनी में)	30 रू.
100. जहन्नम के ह़ालात और जहन्नमी (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	60 रू.
101. मुस्तनद मस्नून दुआ़एँ	20 रू.

नाम	मूल्य
102. इस्लाम की दअ़वत का असर इन्सानी दुनिया पर	50 रू.
103. क़ुर्आनी आयात और इस्लामी मुआ़शरा	30 रू.
104. आ़माल सालिहा़ (भाग-1)	100 रू.
105. आ़माल सालिहा़ (भाग-2)	100 रू.
106. अल्लाह तआ़ला का तआ़र्रुफ़ और कलिम-ए-शहादत के फ़ज़ायल	100 रू.
107. रसूलुल्लाह (सल्ल०) की करीमाना अख़्लाक़ और आप (सल्ल०) की सीरत	100 रू.
108. आख़िरत का अ़क़ीदा (क़ुर्आन व ह़दीस की रौशनी में)	50 रू.
109. इख़्लास की फ़ज़ीलत (क़ुर्आन व ह़दीस की रौशनी में)	50 रू.
110. दअ़वत की ज़िम्मेदारी (क़ुर्आन व ह़दीस की रौशनी में)	50 रू.
111. ईदैन व क़ुर्बानी के मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	90 रू.
112. ख़ातिमुन्नबीईन (क़ुर्आन व ह़दीस की रौशनी में)	150 रू.
113. जिन्नात और शैतान का ज़िक्र (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	80 रू.
114. नबियों की जीवनी (क़ुर्आन व ह़दीस की रौशनी में)	100 रू.
115. ईमानियात, अ़क़ायद और नज़र से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	60 रू.
116. इ़ल्म से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.
117. तहारत से मुतअ़ल्लिक मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.
118. ह़िफ़ाज़ते क़ुर्आन से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.
119. नमाज़ व जमाअ़त से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	60 रू.
120. ई़दैन व जुमअ़ से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	50 रू.
121. तरावीह़ व एतिकाफ़ से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	50 रू.
122. सफ़र और सद्क़-ए-फ़ित्र से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	60 रू.
123. क़ुर्बानी से मुतअल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	60 रू.
124. तलाक़ व इद्दत और नफ़्क़ा से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	80 रू.
125. निकाह से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	60 रू.
126. ह़िबा व जहेज़ से मुतअ़ल्लिक मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.
127. वक़्फ़ से मुतअ़ल्लिक मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.
128. मस्जिद से मुतअ़ल्लिक मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	80 रू.
129. तिजारत की मुख़्तलिफ़ क़िस्मों से मुतअ़ल्लिक मसायल(क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.
130. वसीयत व मीरास से मुतअ़ल्लिक मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.
131. अज़ान व इक़ामत से मुतअ़ल्लिक मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.
132. तर्बियत, रज़ाअ़त व अ़क़ीक़ा से मुतअ़ल्लिक मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	80 रू.
133. ज़कात से मुतअ़ल्लिक मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	80 रू.
134. ह़ज से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.
135. इमामत से मुतअ़ल्लिक मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.
136. क़िरत से मुतअल्लिक मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.
137. सज्द-ए-तिलावत से मुतअ़ल्लिक मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.

नाम	मूल्य
138. इस्लामी पर्दा (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	80 रू.
139. मीरास से मुतअ़ल्लिक मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	40 रू.
140. मुह़र्रम की ह़क़ीक़त और आ़शूरा के वाक़िआ़त	25 रू.
141. ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और जज़ीरे अ़रब	50 रू.
142. ग़ैर अ़रबी रस्मुलख़त (फ़ॉन्ट) में क़ुर्आन की इशाअ़त	12 रू.

(मुफ़स्सिरे क़ुर्आन) मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी साह़ब नदवी की अ़रबी पुस्तकें

143. मन्ज़तुल मराह फ़ी ज़ौइल इस्लाम वल्अद्यान वल्हज़ारात अल्मुख़्तलह	60 रू.
144. अल् इन्सान फ़ी ज़ौइल क़ुर्आन वल् सुन्नह	40 रू.
145. ग़ज़्च-ए-हुनैन व तायफ़ फ़ी ज़ौविल् क़ुर्आन वल् सुन्नह	120 रू.
146. अस्बाब तह़बतुल् अअ़्माल वल् हमियतुल् निया फ़ी ज़ौइल क़ुर्आन वल् सुन्नह	120 रू.
147. अल् फ़ितन अल् वाक़िअ़ः इला क़ियामः अल् साअ़ह फ़ी ज़ौइल अह़ादीस अल् शरीफ़ा	100 रू.
148. अल् नबी अल् ख़ातिम मन, मता, वआईन फ़ी ज़ौइल कुतुब अल् हिन्दूसिया वसी वल् दियानात	150 रू.
149. अल्हिन्दूसिया मुबादिओहा व अक़ाइदोहा, मुनज्ज़िमातुहा व अहदाफ़ुहा	140 रू.
150. अहमयतुल् दअ़वह वल् तब्लीग़ फ़ी ज़ौइल क़ुर्आन वल् सुन्नह	100 रू.
151. ज़िक्र मुह़म्मदिन (सल्ल०) फ़िल् वेद	80 रू.
152. नब्ज़ह अ़न सिफ़ातु रसूलिल्लाहि सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम	80 रू.

(मुफ़स्सिरे क़ुर्आन) मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी साह़ब नदवी की अंग्रेज़ी पुस्तकें

153. मुह़म्मद दी लास्ट प्रोफ़ेट अन्डर दी शेड ऑफ़ वेद, उपनिषद ऐण्ड पुराण	40 रू.
154. मुह़म्मद (सल्ल०) एण्ड स्टेटस आफ़ वरशिप	30 रू.
155. बेसिक टीचिंग आफ़ इस्लाम	80 रू.
156. दी स्वॉड आफ़ इस्लाम	40 रू.
157. अज़ान, ए कालिंग फ़ार ह्यिूमेनिटी	40 रू.
158. इस्लाम?	10 रू.

(मुफ़स्सिरे क़ुर्आन) मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी साह़ब नदवी की अनुवाद की हुई पुस्तकें

159. मुन्तख़ब अह़ादीस (लेखक- ह़ज़रत मौलाना मुह़म्मद यूसुफ़ कान्धलवी रह०)	60 रू.
160. क़ादियानियत नुबूवते मुह़म्मदी के ख़िलाफ बग़ावत (लेखक- इमामे ह़रम अब्दुल्लाह बिन अस्सुबय्यिल)	40 रू.
161. दारे अरक़म का एह़सान इन्सानी दुनिया पर (लेखक-ह़ज़रत मौलाना सैय्यद अबुल ह़सन अ़ली ह़सनी नदवी रह़०)	30 रू.
162. मानवता आज भी उसी चौखट की मुहताज़ है (लेखक- मौलाना मुह़म्मद ह़सनी रह़०)	30 रू.
163. रमज़ान का तोह़फ़ा (लेखक- मौलाना मुह़म्मद राबेअ़ ह़सनी नदवी)	20 रू.
164. यक्साँ सिविल कोड और महिलाओं के अधिकार (लेखक- मौलाना मुह़म्मद राबेअ़ ह़सनी नदवी)	20 रू.
165. मालिक व मख़्लूक़ श्रेष्ठ कौन? (विचारक- मुहम्मद मुस्तफ़ा क़ादरी) (तस्ह़ीह़ व तर्तीब- मु० मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी)	30 रू.
166. यतीमों की किफ़ालत (लेखक-मुहम्मद आमिर सिद्दीक़ी नदवी)	30 रू.

नाम	भाषा	मूल्य
(मुफ़स्सिरे क़ुर्आन) मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी साहब द्वारा लिखित दीगर पुस्तकें		
167. दो मआशरती मसॉयल	उर्दू	80 रू.
168. तफ़्सीर फ़ारुक़ी (जिल्द शशुम)	हिन्दी	500 रू.
169. तफ़्सीर फ़ारुक़ी (जिल्द हफ़्तुम)	// //	500 रू.
170. तफ़्सीर फ़ारुक़ी (जिल्द हश्तुम)	// //	500 रू.
171. तारीख़ुल् इस्लाम	उर्दू	500 रू.
172. क़ससुल् अम्बिया	// //	500 रू.
173. मजमुआ़ अहादीस (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	200 रू.
174. दुआ़ के आदाब (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	20 रू.
175. इस्लाम के अ़दालती फ़ैसले (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
176. सीरत सहाबा	// //	200 रू.
177. क़ुर्बानी से मुतअ़ल्लिक़ मसॉयल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	500 रू.
178. तहारत से मुतअ़ल्लिक़ मसॉयल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	50 रू.
179. इल्म से मुतअ़ल्लिक मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	50 रू.
180. ईमानियात, अ़क़ायद और नज़र से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	50 रू.
181. ईदैन व जुमअ़ः से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
182. मदारिस से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	30 रू.
183. हिबा व जहेज़ से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	30 रू.
184. सूद से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	30 रू.
185. सफ़र और सद्क़ः फ़ित्र से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	30 रू.
186. तलाक़ व इद्दत और नफ़्क़ा से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
187. नमाज़ व जमाअ़त से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	50 रू.
188. निकाह़ से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
189. ज़कात से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	50 रू.
190. ह़ज से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
191. इमामत से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	50 रू.
192. क़िराअत से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
193. तिजारत की मुख़्तलिफ़ क़िस्मों से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	50 रू.
194. वसीयत व मीरास से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
195. अज़ान व इक़ामत से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	50 रू.
196. तर्बियत, रज़ाअत व अ़क़ीक़ा से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
197. अ़लामात क़ियामत (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	80 रू.
198. सज्दः से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
199. वक़्फ़ से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
200. मस्जिद से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.

नाम	भाषा	मूल्य
201. इल्म व उ़ल्मा से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	उर्दू	40 रू.
202. तक़्लीद व इज्तिहादी की शरई ह़ैसियत (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	50 रू.
203. सज्दः सहू से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	50 रू.
204. बिद्अ़त की नहूसत से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	50 रू.
205. किरायेदारी से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	50 रू.
206. कारोबार में शिर्कत से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
207. मीरास से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
208. सुन्नत व नवाफ़िल से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
209. इस्लाह़ मुआ़शरह से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
210. औ़रतों के मख़्सूस मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
211. इन्सानी अअ़ज़ा से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
212. मय्यत से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	40 रू.
213. रमज़ान,रोज़ः और तरावीह़ से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	60 रू.
214. एतिकाफ़ से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	30 रू.
215. ज़मीन से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	50 रू.
216. रवय्यतुल हिलाल से मुतअ़ल्लिक़ मसायल (क़ुर्आन व सुन्नत की रौशनी में)	// //	30 रू.

इस्लाम धर्म

तलवार से फैला या सदाचार से

?

प्रस्तुत पुस्तक में इस्लाम की परिभाषा, काफ़िर का अर्थ, इस्लाम पर लगाये गये आरोप, कुर्आन के अनुसार इस्लाम के प्रचार का तरीक़ा, ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के समय में इस्लाम के फैलने का माध्यम, अ़रब में इस्लाम के फैलने का कारण, यमन में, नजरान में, बहरैन में, उमान में और हिन्दुस्तान में फैलने के माध्यमों का विस्तारपूर्वक वर्णन करते हुए ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के युद्ध के पूर्व की दशा का वर्णन करने के बाद विश्व प्रसिद्ध विद्वानों के विचारों को स्पष्ट किया गया है।

मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी (आचार्य)

प्रकाशक
जमीअ़त पयामे अम्न, टैगोर मार्ग, डालीगंज, लखनऊ-२०

रसूलुल्लाह(सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का हुलिया मुबारक
और
आप(सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सुन्नतें

इसमें हुज़ूर (सल्ल०) का हुलिया मुबारक और आप (सल्ल०) के खाने, पीने, सोने, जागने कपड़ा पहनने, कंघा करने, तेल लगाने, नाख़ून काटने, इस्तिंजा करने, जूता पहनने, अंगूठी पहनने, मस्जिद और घर में दाख़िल होने, बाज़ार जाने, गुफ़्तगू करने, वुज़ू, ग़ुस्ल, अज़ान, नमाज़, दुआ, रमज़ान, ईदैन, सफ़र, सलाम, निकाह, मय्यित और उससे मुतअ़ल्लिक़ सुन्नतों से लेकर आप (सल्ल०) के अख़लाक़ व आ़दात का तफ़्सील से ज़िक्र है।

मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी

प्रकाशक-

मकतबः पयामे अम्न

नदवा रोड, डालीगंज, लखनऊ,२० (यू०पी०) इण्डिया

महत्वपूर्ण लेख